श्री विजयलक्ष्मीसूरि विरचित

श्री

उपदेश प्रासाद भाषांतर

विभाग ४ थो.

स्थंभ १५-१६-१७-१८-१९

(व्याख्यान २११ थी २८५)

जिनपूजा, दान, शियळ, विवेक, व्रतपालन, सत्संग, अंतरंग शत्रुओ, लेश्या, पांच कारण, नव नियाणा, नव निन्हवो, दश प्रत्याख्यान, चार कषाय, कषायपिंड, मिथ्यात्व, पर्वोनी कथाओ अने ज्ञानाचारादि आचारोनुं स्वरूप, रहस्य, दृष्टांतो विगेरे.

जैनबंधुओने खास उपयोगी होवाथी संस्कृत गद्यपद्यात्मक ग्रंथनुं शुद्ध गुर्जरगिरामां भाषांतर करावी तपासी शोधीने

प्रसिद्ध कर्त्ता

श्री जैन धर्म प्रसारक सभा.

भावनगर.

विक्रम संवत १९६५. वीर संवत् २४३५. शाके १८३१

मुंबइ "जगदीश्वर" प्रेस तथा भावनगर "आनंद" प्रेसमां छाप्युं.

थता हता. आ चरित्र खास वांचवा लायक छे. व्याख्यान २१ए मां विजय शेठ ने विजया राणीनी जेवाज थयेला बीजा महा पुरुष—अपूर्व ब्रह्मचारी जिनदास ने सौभाग्यदेवीनुं टुंकुं चरित्र आपेलुं छे के जे दंपतीने जमाडवानुं फळ लाख साधर्मी बंधुने जमाडवा जेटलुं श्री गुरु महाराजाए कहेलुं छे. व्याख्यान २२० मां कपिल केवळीनुं चरित्र खास लोभवृद्धिने अंगे वांचवा योग्य छे. व्याख्यान २२४ मां थावच्चापुत्र, शुकाचार्य ने सेलकाचार्यनुं चरित्र छे, तेमां थावच्चापुत्र आचार्य ने शुक परिव्राजकनो संवाद खास वांचवा लायक छे. व्याख्यान २२ए थी २३२ ना चार व्याख्यान पांच कारणोनी सिद्धिना संबंधनां छे. ए जरुर वांचवा योग्य छे. ए वांचवाथी कर्म, उद्यम के भावीभाव विगेरेनो एकांत पक्ष निरास पामी कोइ पण कार्य पांच कारणो वडेज सिद्ध थाय छे, एम हृदयमां उसी शके छे. व्याख्यान २३३ मां विद्वानोनी वाणीनो विलास वांचवा लायक छे. तेनी अंदर निर्गुणी पुरुष तुच्छ उपमाने पण योग्य नथी एम सिद्ध कर्युं छे. व्याख्यान २३०–३ए–४० मां ७ मा ० मा ने ए मा ए त्रण निह्नवो (गोष्ठामाहिल्ल, दिगंबर ने ढुंढकमति) नां चरित्रो उत्पत्ति विगेरे छे. उपरांत व्याख्यान २६२–२६३–२६० ने २६ए मां ३ जा, ६ ठा, ५ मा ने ४ था निह्नवनां चरित्रो छे. ते दरेक वांचवा लायक छे. फक्त पहेला ने बीजा निह्नवनी कथाज आनी अंदर नथी. साते निह्नवनां नाम विगेरे व्याख्यान २६२ मां आपेलां छे. व्याख्यान २४१ थी २४५ चार कषायो उपर छे. तेनी अंदर ते ते कषायोथी दुःख पामेला अमरदत्त ने मित्रानंद, बाहुबलि, अषाढभूति अने सागर श्रेष्ठी तथा सुभूम चक्रीनां दृष्टांतो छे. व्याख्यान २४६–४७ ने ४३मां क्रोधपिंड, मानपिंड, मायापिंड ने लोभपिंड मुनिने अग्राह्य छे एम सिद्ध करी तेनी उपरनां दृष्टांतो आपेलां छे. व्याख्यान २४६ मामां छ प्रकारना स्त्रीने आधीन पुरुषोनुं स्वरूप बतावबामां आव्युं छे, ते वांचवा लायक छे. व्याख्यान २४० ने २४ए दश प्रकारनां प्रत्याख्यान संबंधी छे. ते प्रत्याख्याननी शुद्धिना इच्छक बंधुओए खास वांचवा लायक छे. व्याख्यान २५३ मां मिथ्यात्वना तमाम भेदोनुं स्पष्टिकरण करेलुं छे. मिथ्यात्वने विषवत् समजी तेने तजवा इच्छनारे आ स्वरूप खास ध्यानमां राखवा लायक छे. व्याख्यान २५६ माथी ज्ञानाचारादि आचारोनुं स्वरूप शरु करवामां आव्युं छे. पाछळना बंने स्थंभ (३० व्याख्यान) ते संबंधीज छे. तेमां पण हजु ज्ञानाचार, दर्शनाचार ने चारित्राचारनुं स्वरूप पूर्ण आवेलुं छे, तपाचारनुं तो अधुरुं छे, ते हवे पछीना विभागमां आवनार छे, अ-

श्रीउपदेशप्रासाद भाषांतर भाग ४ थो.

स्थंभ १५ थी १९ ना

व्याख्यान २११ थी २८५ सुधीनी

अनुक्रमणिका.

स्थंभ १५ मो.

स्थंभ १६ मो.

स्थंभ १९ मो.

व्याख्यान २७१ मुं.

व्याख्यान २७२ मुं.

व्याख्यान २७३ मुं.

व्याख्यान २७४ मुं.

व्याख्यान २७५ मुं.

व्याख्यान २७६ मुं.

व्याख्यान २७७ मुं.

व्याख्यान २७८ मुं.

व्याख्यान २७९ मुं.

व्याख्यान २८० मुं.

व्याख्यान २८१ मुं.

व्याख्यान २८२ मुं.

व्याख्यान २८३ मुं.

व्याख्यान २८४ मुं.

व्याख्यान २८५ मुं.

१९ मो स्थंभ संपूर्ण.

किम्मत रा. २).

श्री उपदेश प्रासाद भाषांतर.

भाग ४ थो.

स्थंभ १९ मो.

व्याख्यान २११ मुं.

(जुहारनुं स्वरूप.)

" बेसते वर्षे परस्पर जुहार करवाना रिवाजनी उत्पत्ति. "

अन्योऽन्यं जनजोत्कारा भवंति प्रतिपत्प्रगे ।
तत्स्वरूपं तदा पृष्टं पुनर्जगाद साधुपः ॥ १ ॥

भावार्थ—पडवाने दिवसे प्रातःकाले लोको परस्पर जुहार करे छे, तेनुं स्वरूप राजाए पूछ्युं एटले गुरु महाराज फरीने बोल्या के–

हे संप्रति राजा ! परस्पर जुहार करवामां एक हेतु ए छे के **गौतम गणधरने** अमावास्या (दीवाळी) नी रात्रिना प्रांत भागे केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी प्रभाते नवा राजानी जेम तेने सर्व गणधरोए आवीने वांद्या, तेथी प्रणामनो विधि शरु थयो. हवे बीजो हेतु सांभळोः– पूर्वे अवंती नगरीमां धर्म नामे राजा हतो. तेने नमूचि नामनो प्रधान हतो. एक दिवस ते नगरीमां **मुनिसुव्रतस्वामीना** शिष्य श्रीसुव्रतसूरि पधार्या. तेने वंदन करवा माटे नमुचि प्रधानने साथे लइने श्री धर्मराजा त्यां गयो. देशना समये ते सचीवे आ प्रमाणे वाद कर्यो के "आ सकळ विश्व स्वप्न जेवुं छे, जीव नाश पामवाथी सर्व नाश पोमे छे, जीव कांइ परलोकमां गति पामतो नथी अर्थात् जीव ते पंचभूतना पिंडनुंज नाम छे,अने परलोक नथी." आ प्रमाणे पोताना मतने स्थापन करता सचीवने सूरिना शिष्ये जीती लीधो. त्यार पछी क्रोधने वश थइने रात्रिने वखते हाथमां तरवार लइने ते निर्दय सचीव ते मुनिने हणवानी इच्छाथी तेनी पासे गयो. ते वखत शासनदेवीए तेने स्तंभित कर्यो; जाणे चित्रमां आळेख्यो होय तेवी स्थितिमां प्रातःकाळे राजा विगेरेए तेने जोयो. पछी शासनदेवीने अने गुरुने खमावीने राजाए तेने मुक्त कराव्यो. पौर लोकोए तेने घणो धिक्कार्यो, तेथी लज्जा पामीने ते नगरमांथी नीकळी नमुचि भमतो भमतो हस्तिनापुर गयो. ते नगरमां **पद्मोत्तर** नामे राजा हतो. तेने उत्तम शियळथी

शोभित ज्वाळादेवी नामे पट्टराणी हती. तेओने **विष्णुकुमार** अने **महापद्म** नामे बे पुत्रो हता. राजाए विष्णुकुमारने राज्यपद आप्युं, अने नाना पुत्रने यौवराज्यपद आप्युं.

अन्यदा नमुचि प्रधाने पोतानी कळाकुशळता युवराजने देखाडी, तेथी हर्ष पामीने तेणे नमुचिने पोतानुं प्रधानपद आप्युं. एक वखत ते नमुचिए **सिंहरथ** नामना मोटा योद्धाने जीत्यो, तेथी संतोष पामेला युवराजे तेने वरदान आप्युं. नमुचिए ते वरदानने थापण रूप रखाव्युं. एक दिवसे ज्वाळादेवीए हर्षथी रथ यात्रा करवानी इच्छावडे सुवर्ण अने रत्नोथी शोभित जैनरथ कराव्यो, ते वखते तेनी शोके इर्ष्याथी ब्रह्मरथ कराव्यो. पछी ते बंने रथो रस्तामां परस्पर सामा मळ्या. ते बंनेनो वादविवाद थयो. बंने पक्षमांथी कोइ रथ खेंचनार पुरुषो बीजा रथने मार्ग आपी आगळ चाल्या नहीं, त्यारे क्लेशनी निवृत्तिने माटे राजाए बंने रथने पाछा वळाव्या, एटले महापद्म आवी रीते पोतानी मातानुं अपमान करेलुं जोइने पोताना मनमां दुःखी थयो अने परदेश चाल्यो गयो. ते अनुक्रमे चक्रवर्ती योग्य समृद्धि मेळवीने जन्मभूमिमां आव्यो. तेना पिताए मोटा उत्सवथी तेने पुरमां प्रवेश कराव्यो. पछी बत्रीश हजार राजाओए बार वर्ष सुधी महापद्मनो राज्याभिषेक कर्यो.

त्यार पछी विष्णुकुमार सहित पद्मोत्तर राजाए सुव्रताचार्य पासे दीक्षा लीधी अने पोते स्वर्गे गया. विष्णुकुमारने छ हजार वर्ष सुधी तीव्र तप करवाथी वैक्रियादिक अनेक लब्धिओ प्राप्त थइ.

महापद्म राजाए पोतानी मातानो रथयात्रानो मनोरथ मोटा ओछव पूर्वक पूर्ण कर्यो. त्यारपछी पोतानां पाप नाश करवा माटे माताना कहेवाथी समग्र पृथ्वीने जिनेश्वरोना चैत्योथी भूषित करी.

एकदा सुव्रताचार्य हस्तिनापुरमां घणा साधु सहित चातुर्मासनो अभिग्रह धारण करीने रह्या, ते वखते पूर्वनुं वैर संभारीने नमुचिए चक्री पासे पोतानुं वरदान माग्युं के "हे राजेंद्र! कार्तिक मासनी पूर्णिमासुधी मने छ खंडनुं राज्य आपो." राजाए तेने सर्व राज्य सोंपी दीधुं अने तेटला वखतने माटे पोते अंतःपुरमां रह्या.

त्यार पछी निरंकुशपणे सर्व धर्मनो द्वेषी नमुचि छ खंड राज्यनुं पालन करवा लाग्यो. समग्र पृथ्वीनो नमुचि नवो राजा थवाथी सर्व राजाओए भेटणां आपीने तेनी आज्ञा अंगीकार करी. पछी नमुचिए जीवहिंसावाळो यज्ञ प्रारंभ्यो. सर्व ब्राह्मणो आशिर्वाद आपीने तेना यज्ञकर्मनी प्रशंसा करवा लाग्या. ते वखते तेणे सुव्रताचार्यने बोलावीने कह्युं के-" तमो मुंडाओने मुकीने बीजा सर्व वेष-

धारीओ अने ब्राह्मणो मने चक्रवर्ती तथा यज्ञरूप धर्मकार्य करनार जाणीने नमे छे अने प्रशंसा करे छे; तमे तेम करता नथी तो शुं तमे माराथी पण मोटा छो? माटे मारी पृथ्वीमां कोई पण साधुए रहेवुं नहि. जो मारी भूमिमां सात दिवसथी वधारे कोई साधु रहेशे तो तेमने हुं मारी नाखीश, तेमां मने दुपण आपशो नहीं." आ प्रमाणे सांभळीने नगरना लोकोए तेने साम वाक्योथी समजाव्यो, पण तेणे पोतानो आग्रह छोड्यो नहीं, त्यारे आचार्य महाराजे विचार्युं के "आनुं राज्य तो सर्व स्थळे छे, तेथी अमो चोमासाना समयमां सात दिवसमां क्यां जईए ?" ए प्रमाणे विचारीने तेणे बीजा साधुओने पूछयुं के "आमां कोई गगनगामिनी लब्धिवाळो छे के जे मेरु पर्वतना शिखर उपर रहेला विष्णु-कुमार मुनिने अहीं बोलावी लावे ?" एक शिष्ये पोतानी तेवी शक्ति जणावी अने गुरुनी आज्ञा लईने ते मेरु पर्वतपर गया. विष्णुकुमार मुनिए चोमासामां तेने अकस्मात् आववानुं कारण पूछयुं, एटले तेणे यथार्थ सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी विष्णुमुनि ते साधुनी साथे नमुचिनी सभामां आव्या. त्यां एक नमुचि विना सर्व राजाओए तेमने वंदना करी. पछी विष्णु मुनिए नमुचिने कह्युं-" हे राजा ! एक स्थाने चोमासुं रहेवाना अभिग्रहवाळा मुनिओ हमणा क्यां जशे ? माटे तेमने रहेवा सारु केटलीक पृथ्वी आपो." नमुचिए त्रण पगलां पृथ्वी आपवा कह्युं. ते सांभळीने क्रोधातुर थयेला विष्णु मुनिए वैक्रिय लब्धिथी लाख योजन प्रमाण शरीर विकुर्वीने एक पग पूर्व दिशानी जंबूद्वीपनी जगती उपर अने बीजो पग पश्चिम दिशानी जगती उपर मुकीने कह्युं के-" हे पापी ! हवे त्रीजो पग मुकवानी जग्या क्यां आपे छे ?" ते सांभळीने भयभ्रांत थयेलो नमुचि मौन रह्यो, एटले विष्णु मुनिए त्रीजुं पगलुं नमुचिना पृष्ठ उपर मुक्युं, तेथी जेम त्रिविक्रमे बली राजाने पातालमां पेसाडी दीधो हतो, तेम ते नमुचि पण द्रव्यथी अने भावथी बंने प्रकारे[1] पातालमां गयो. ते समये पर्वतो पण कंपवा लाग्या, ग्रहो भय-भीत थया, अने इंद्रादिक देवो पण "आ शुं ?" एम संभ्रांत थई गया. पछी अवधिज्ञानवडे तेनुं कारण जाणीने इंद्रे विष्णु मुनिना क्रोधने शांत करवा माटे संगीत जाणनारा गंधर्वोने मोकल्या. तेओए मुनिना कर्ण पासे शांतता रूप अमृतमय गीतनृत्यनो आरंभ कर्यो, तेथी मुनिनो कोपाग्नि शांत थयो, अने ते ओ मूळ स्वरूपे स्थित थया. महापद्म चक्री पण लज्जा सहित आवीने नम्यो. तेने मुनिए ओळंभो दीधो के "तुं राज्य पाळतां छतां शासननी आवी हीलना अने पीडा थाय, तो पछी बीजा क्षुद्र राजाओना राज्यमां तेम थाय तो तेनो शो

१ द्रव्यथी शरीर पाताळमां पेसी गयुं; भावथी मरीने सातमी नरके गयो.

दोष ? " इत्यादिक चक्रवर्तीने उपदेश आपीने आचार्य पासे आवी यथार्थ कहेवा वडे आलोचना करी, अने प्रायश्चित्त लईने प्रतिक्रमण कर्युं. आ ठेकाणे शासननी भक्तिने माटे तेमणे कर्युं छे तेथी तेमने कांइ दोष नथी, तोपण सझाय ध्यानादिकमां किंचित् भ्रंशत्व[1] अने विभावप्रसंगत्व[2] थवाथी ते गुरुनी समक्ष इर्यापथिकि पडिकमवावडे आलोच्युं. प्रांते विष्णु मुनि मोक्षगति पाम्या.

आ प्रमाणे महा उत्पात शांत थवाथी जाणे फरीथी जन्म अने चैतन्य पाम्या होय तेम सर्व मनुष्योए शुभ वस्त्र अन्नपान विगेरे ग्रहण कर्यां अने परस्पर जुहार कर्या. ते उपरथी मनुष्यो दर वर्षे पडवाने दिवसे उत्तम वस्त्र, अन्न, पान, जुहार अने घरनी शोभा विगेरे महोत्सव करे छे.

जे साधुओनी निंदा करे छे ते मनुष्य छतां पण पशु समानज छे, तेवुं सर्व स्थाने प्रसिद्धिमां लाववा माटे अने जणाववा माटे राजाए घेरघेर गोहिंसो[3] कराव्यो. हजु पण मारवाड विगेरेमां छाणनो गोहिसो करवामां आवे छे.

" जुहार करवाने दिवसे पहेला गणधर श्रीगौतम स्वामीए श्रीवीतराग शब्दना अर्थने विचारतां केवळज्ञान रूप लक्ष्मीने, जिनेंद्र शासनना राज्यने अने गुणना समूहनी शक्तिने प्राप्त करी हती. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य द्विशतएकादशतमः संबंधः ॥

---

१ कांईक सझाय ध्यानादिकमां हानि आववो. २ विभावदशानो प्रसंग पडवो. ३ ' गोहिसो ' शुं ? ते कांइ समजातुं नथी.

व्याख्यान २१२ मुं.

हवे पूजानो विधि कहे छे.

निश्चयाद्भव्यजीवेन पूजा कार्या जिनेशितुः ।
दमयन्त्येव कल्याणसुखसंततिदायिनी ॥ १ ॥

भावार्थ—" भव्य प्राणीए दमयंतीनी जेम कल्याण अने सुखनी संपत्ति आपनारी जिनेश्वरनी पूजा अवश्य करवी. "

दमयंतीनी कथा.

कोसला नगरीमां **निषध** नामे राजा हतो. तेने **नळ** अने **कुबर** नामना बे पुत्रो हता. ते अरसामां विदर्भ देशमां **भीम** नामे राजा हतो. तेने **दमयंती** नामनी एक पुत्री हती. तेनां सर्वे अंगो सुंदर हतां, अने ते समग्र कळाओमां कुशळ हती. अनुक्रमे वृद्धि पामती ते पुत्री अढार वर्षनी थइ त्यारे भीम राजाए पुत्रीने योग्य वर मेळववानी इच्छाथी स्वयंवरनो आरंभ कर्यो. त्यां नळ अने कुबर सहित निषध विगेरे घणा राजाओ गया. पछी पोतानी दासीए करेला वर्णन पूर्वक दमयंतीए नळना कंठमां वरमाळा आरोपण करी. शुभ दिवसे पाणिग्रहणना ओछवमां भीम राजाए नळने हाथी, घोडा, रथ, रत्न विगेरे आप्युं. केटलाक दिवस त्यां रहीने पछी पुत्रो अने वहु सहित निषध राजा कोसला नगरी तरफ चाल्यो. ते वखते भीम राजा पुत्रीने शिखामण आपीने पाछो वळ्यो.

मार्गे चालतां तेओ एक मोटा जंगलमां आवी पहोंच्या. ते वखते सूर्य अस्त पाम्यो, गाढ अंधकारथी मार्ग पण देखावा न लाग्यो. तेथी तेनुं सैन्य पगले पगले वारंवार स्खलना पामतुं दिग्मूढ थइ गयुं. ते वखते दमयंतीए पोतानुं कपाळ लुहीने अंगरागथी ढंकायेलुं स्वाभाविक तिलक तेजस्वी कर्युं. तेना तेजथी ते दंपतीए नजीकमां प्रतिमा[1] धारण करी रहेलो एक मुनिने जोया. ते साधुना शरीर साथे एक मदोन्मत्त वननो हाथी पोतानी सुंढ घसतो हतो, तेथी हाथीनो मद साधुना शरीरे चोटेलो हतो, तेना गंधथी भमराओ गुंजारव करीने निःस्पृह एवा ते मुनिने पीडा करता हता. आ प्रमाणे मुनिनुं स्वरूप जोइने निषध राजा विगेरे सर्वे पोतपोताना वाहनमांथी उतरीने तेमने नम्या, अने तेमणे कहेली धर्म देशना सांभळ्या पछी तेमने पूछयुं के–' हे स्वामी ! दमयंतीना कपाळमांथी

1 कायोत्सर्गे रहेला.

उद्योत शी रीते प्रगट थयो ?' त्यारे मुनिए तेना पूर्व जन्मनुं वृत्तांत कह्युं के-"पूर्व भवमां तेणे पांचसो आंबिल कर्यां हतां, भावि तीर्थंकर श्री शांतिनाथनी पूजा करी हती, तपनी समाप्तिमां विधि पूर्वक उद्यापन कर्युं हतुं, अने चोवीश तीर्थंकरोना भालस्थळमां रत्नजडित सुवर्णना तिलको करावीने चडाव्यां हतां, ते पुण्यना प्रभावथी आ भवे तेना भालस्थळमां तिलकने आकारे सूर्यना खंडनी जेवो स्वाभाविक उद्योत थयो छे."

आ प्रमाणे अमृत समान वाणी सांभळीने हर्ष पामेला निषध विगेरे पोताना पुरमां आव्या. त्यारपछी निषध राजा नळने राज्याभिषेक करी, पोते दीक्षा ग्रहण करीने स्वर्गमां गयो, अने नळ राजा अनुक्रमे त्रण खंडनो स्वामी थयो.

हवे तेनुं राज्य लेवानी इच्छाथी कुबर हंमेशां तेनां छिद्र जोवा लाग्यो. नळ पण भाइनी साथे द्यूत रमवा लाग्यो. ते संबंधमां घणा आप्त जनोनी शिखामण पण तेणे मानी नहीं, अने रमतां रमतां अनुक्रमे दैवयोगे नळराजा पोतानी स्त्रीने पण हारी गयो, एटले कुबरे आनंद पामीने कह्युं के-"हे भाइ! हवे पृथ्वीने अने स्त्रीने मुकी दे." त्यारे नळ मात्र एकज वस्त्र धारण करीने कोसला नगरीमांथी एकलो नीकळ्यो. नगरना लोकोए तथा प्रधानोए कुबरनी प्रार्थना करीने दमयंतीने साथे मोकली. ते स्त्रीपुरुष चालतां चालतां एक मोटा अरण्यमां आवी पहोंच्या. मध्यान्ह समये फळनो आहार करीने रात्रे कोइ लतागृहमां विश्रांति लइने रात्रि निर्गमन करी. पछी नळे प्रवासमां स्त्रीने महा बंधन रूप धारीने तेने सुती सती तजी देवानी इच्छाथी आंखमां आंसु लावी, हाथमां छरी लइने पोताना लोहीथी तेना वस्त्रने छेडे आ प्रमाणे अक्षरो लख्या के-"हे प्रिया! अहींथी वट वृक्षनी तरफ कुंडिनपुर जवानो रस्तो छे, अने जमणी तरफ केसुडाना झाड पासे थइने कोसला नगरी जवानो रस्तो छे. तेथी ज्यां तारी इच्छा होय त्यां जजे, हुं आवी स्थितिमां लज्जा पामुं छुं, तेथी तने अहीं मुकीने जाउं छुं."

उपर प्रमाणे लखी दमयंतीने एकली मुकीने आगळ चालतां नळ राजाए प्रातःकाळे समीपना भागमां चोतरफ बळतो दावानळ जोयो. तेमां थता अनेक प्राणीओना आक्रंदमां तेणे आ प्रमाणेनी मनुष्यवाणी सांभळी के-" हे इक्ष्वाकु कुळना मुगट समान नळ! मारुं रक्षण कर, रक्षण कर." आ प्रमाणे सांभळीने आम तेम जोतां तेणे एक लताना गुच्छामां सर्प जोइने कह्युं के-" हे सर्पराज! तुं मारा नामने तथा मनुष्यभाषाने शीरीते जाणे छे?" तेणे कह्युं के-" पूर्व भवना संस्कारथी जाणुं छुं, माटे मारुं रक्षण कर, रक्षण कर." नळे

तेने त्यांथी खेंचीने बहार काढ्यो के तरतज ते कृतघ्नी सर्प राजाने डश्यो. तेनुं झेर व्यापवाथी पोतानुं शरीर कुबडुं थई गयेलुं जोईने खेद पूर्वक नळे विलाप कर्यो. त्यारे ते सर्पे तेने कह्युं के–" हे पुत्र ! हुं तारो पिता छुं. में मायावडे तने छेतर्यो छे. हुं ब्रह्म देवलोकथी तारा परना स्नेहवडे आव्यो छुं. हे पुत्र ! तुं हजु भरतार्धनुं राज्य भोगवनार छे. तेथी आ श्रीफळ अने करंडीओ तुं ग्रहण कर. श्रीफळमांथी वस्त्र काढीने पहेरीश अने करंडीयामां रहेला अलंकारो धारण करीश, एटले तुं तारुं मूळ स्वरूप पामीश." इत्यादि कहीने तेमज नळनी मार्थनाथी तेने सुसुमार पुरी पासे तेज वखते मुकी दइने सर्प अदृश्य थयो.

नळ राजा सुसुमार पुरीए आव्यो ते वखते प्रजानो संहार करनार मदोन्मत्त हाथीनो उपद्रव थयो हतो. ते हाथीने कोइ वश करी शकतुं नहोतुं. तेने पोतानी बुद्धिथी वश करी तेने स्थाने बांधीने नळ पुरजनोनी साथे दधिपर्ण राजा पासे आव्यो. राजाए ते कुबडाने यथायोग्य सत्कार करीने तेनो वंश विगेरे पूछ्युं. एटले कुबडाए कह्युं के–" हुं नळ राजानो रसोइओ छुं, अने सूर्यपाक रसवती जाणुं छुं. नळ राजा द्यूतमां सर्वस्व हारीने पोतानी स्त्री सहित क्यांक चाल्या गया एटले हुं अहीं आव्यो छुं." आ प्रमाणे सांभळीने दधिपर्ण राजाए शोक सहित नळ राजानुं प्रेतकार्य कर्युं, अने कुबडाने पोतानी पासे राख्यो.

एक दिवस उपवननी शोभा जोवा नीकळेला कुबडाने एक ब्राह्मणे आवीने संगीतमां आ प्रमाणेना बे श्लोक कह्या—

अनार्याणामलज्जानां, दुर्बुद्धिनां हतात्मनां,
रेखा मन्ये नलस्येव, यः सुप्तामत्यजत्प्रियां ॥ १ ॥
विश्वास्य वल्लभां स्निग्धां, सुप्तामेकाकिनीं वने,
त्यक्तुंकामोपि जातः किं, तत्रैव हि न भस्मसात् ॥ २ ॥

" जे नळ राजानी जेम सुतेली स्त्रीने त्याग करे ते माणसने अनार्य पुरुषोमां, निर्लज्जमां, दुर्बुद्धिमां अने आत्मघ्नमां प्रथम रेखा समान जाणवो. स्नेहवाळी प्रियाने विश्वास पमाडी छेतरीने वनमां एकली सुती मुकी तजी जवानी इच्छावाळो नळ तेज वखत भस्मभूत केम थयो नहीं ?" आ प्रमाणेना श्लोक सांभळीने कुबडाए "बहु सारुं गायुं" एम कही तेनी प्रशंसा करीने " तुं कोण छे ? तें शी रीते अने क्यांथी नळराजानुं वृत्तांत सांभळ्युं ? अने नळना गया पछी शुं थयुं ?" ए प्रमाणे तेने पूछ्युं एटले ते ब्राह्मण बोल्यो के–" दमयंती प्रातःकाळे पोताना पतिने पासे नहीं देखवाथी शोकथी विव्हळ थइ आम तेम

शोधवा लागी. एम करतां अकस्मात् वस्त्रने छेडे लखेला अक्षरो. तेना वांचवामां आव्या. तेनो अर्थ जाणीने 'वट वृक्ष तरफना मार्ग वडे पिताने घेर जाऊं' एम विचारी ते त्यांथी चाली. आगळ जतां कोइ सार्थने लुंटवाने प्रवर्तेला चोरोने तेणे हुंकार मात्रथी त्रास पमाड्या. पछी सार्थपतिए कुळदेवीनी जेम तेने नमीने तेना मुखथी तेनुं सर्व वृत्तांत सांभळ्युं. ते परथी तेने नळनी स्त्री जाणीने पोतानी बेन समान मानी पोतानी साथे राखी. पछी वर्षा ऋतु आववाथी 'सार्थने बहु विलंब थशे' एम जाणीने सार्थवाहनी रजा लीधा विना दमयंती त्यांथी एकली नीकळी गई. आगळ चालतां कोइ राक्षसे तेने उपद्रव कर्यो. पण ते तेनाथी क्षोभ पामी नहीं. एटले तेना सत्वथी संतुष्ट थयेला राक्षसे कह्युं के-'हे देवी ! तुं दुःखी थइश नहीं. बार वर्षने अंते तने तारा पतिनो समागम थशे.' पछी दमयंती कोइ पर्वतनी गुफामां रही श्री शांतिनाथनुं माटीनुं बिंब करीने तेनी पूजा करवा लागी, अने स्वभावथीज पाकीने भूमिपर पडेला फळोथी उपवासादितपनुं पारणुं करीने धर्माराधन करवा लागी. चोमासाने अंते पेला सार्थवाहे तेनी शोध करतां ते गुफामां तेने श्री शांतिनाथनी पूजामां तत्पर जोई एटले ते बहु हर्ष पाम्यो, अने तेना उपदेशथी जैनधर्मी थयो. ते वनमां रहेला पांचसो तापसो पण दमयंतीनी वाणीथी प्रतिबोध पाम्या. त्यां **तापसपुर** नामनुं नगर थयुं. एकदा **यशोभद्र** नामना सूरि त्यां पधार्या. दमयंतीना पूछवाथी तेमणे तेनो पूर्व भव कह्यो के- "पूर्व भवमां तुं **मम्मण** नामना राजानी **वीरमती** नामनी स्त्री हती. एक दिवसे ते दंपती कोइ ठेकाणे जता हता, तेवामां सामे आवता एक मुनिने जोया. एटले अपशुकन धारीने तेमने बार घडी सुधी तेमणे रोकी राख्या. पछी पाछा ते दंपतीए मुनिने खमाव्या. ए कारणथी आ भवमां बार वरस सुधीनो तमारे बंनेने विरह पड्यो." आ प्रमाणे कही आचार्य विहार करी गया.

एक दिवसे कोइए आवीने दमयंतीने कह्युं के-" तारो पति में हमणा अहीं नजीकमांज जोयो हतो." एवुं सांभळीने ते तत्काळ तेने जोवाने वनमां गइ. त्यां कोइ राक्षसीनो उपद्रव थयो. ते तेणे पोताना शियळ व्रतना प्रभावथी शांत कर्यो. पछी अनुक्रमे ते अचलपुरमां आवी. ते नगरमां **चंद्रयशा** नामनी दमयंतीनी मासी त्यांना राजानी राणी हती. ते दमयंतीने सुशील जोइने पोताने घेर लइ गइ. त्यां तेनी दानशाळामां दमयंती नित्य दान देवा लागी. **पिंगल** नामना चोरने त्यां रह्या सता मोतमांथी बचाव्यो.

एक वखत हरिभट्ट नामे ब्राह्मण कुंडिनपुरथी त्यां आव्यो. तेणे दानशाळाए दान लेवा जतां दमयंतीने जोइने ओळखी एटले तेनी मासीने मळथी सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी चंद्रयशा तेने पोतानी बहेननी दीकरी जाणी राजमहेलमां लइ गइ अने पोताने ओळखाण न पाड्या बाबत ठपको आप्यों. पछी घणी युक्तिथी तेनो सत्कार करीने मोटा आडंबरथी तेने तेना पिताने घेर कुंडीनपुर मोकली.

एकदा **भीम** राजानो दूत पोताने कामे दधिपर्ण राजा पासे आव्यो हतो. त्यां "नळनो रसोइओ कुबडो सूर्यपाक रसवतीने जाणनारो छे." एम पुरमां पगले पगले तेना वखाण सांभळीने अने तेने जाते जोईने पोताने नगरे जइ पोताना राजा भीमने ते वृत्तांत निवेदन कर्यो. दूतनुं वाक्य सांभळीने भीम राजाए तेनी विशेष तजवीज करवा एक ब्राह्मणने सुसुमारपुर मोकल्यो. ते ब्राह्मणे कुबडाने मळीने कह्युं के–"तने जोइने मने खेद थाय छे, केमके हुं अहीं नळराजा होवानी शंकाए आव्यो हतो, पण कल्पवृक्ष क्यां अने एरंडानुं झाड क्यां? माणिक्य क्यां अने पथ्थर क्यां? एम आजे तने कुबडाने जोवाथी मारा मनमां रहेलो दमयंतीनो मनोरथ पण कुबडो थइ गयो." आ प्रमाणे सांभळीने कुबडो रोयो; अने ते ब्राह्मणने सूर्यपाक रसवती जमाडी तेने घणुं सुवर्ण आपी विदाय कर्यो. ते ब्राह्मणे भीम राजा पासे आवीने लक्ष सुवर्णनुं दान, रोवुं अने सूर्यपाक रसवतीनुं जमाडवुं विगेरे सर्व वृत्तांत कह्यो. ते सांभळी दमयंती बोली के–"हे पिता! आ बाबतमां कांइ पण विचार करवा जेवुंनथी, जरूर कुबडामे रुपे रहेलो ते तमारो जमाइज छे एम जाणवुं." पछी भीम राजाए दमयंतीनो खोटो स्वयंवर आरंभीने सुसुमारपुरना राजा दधिपर्णने बोलाववा माटे माणसो मोकल्या. केमके तेम करवाथी ते वात सांभळीने दधिपर्णनी साथे नळ राजा जो त्यां हशे तो ते जरूर आवशे; कारणके पशुओ पण स्त्रीनो पराभव सहन करी शकता नथी.

दधिपर्ण राजा दमयंती परना अनुरागथी मुदत मात्र एकज दिवसनी बाकी छतां कुबडा सारथिनी सहायथी तेज दिवसे कुंडिनपुरमां आव्यो, अने कुबडा पासे सूर्यपाक रसवती करावीने परिवार सहित भीम राजाने जमाड्यो. त्यार पछी "आ निषध राजानो पुत्र नळज कुबडाने स्वरूपे छे; केमके श्वेतांबर मुनिनुं वचन मिथ्या होय नहीं." एम धारीने लज्जा पूर्वक दमयंतीए पोताना पतिने कह्युं के–"हे नाथ! ते वखत वनमां तो सुती मुकीने गया हता, पण आजे जागती शी रीते मुकी शकशो?" आ प्रमाणे सांभळी नळे पोतानुं रुप प्रगट कर्युं. पछी भीम राजा नळने पोताना सिंहासनपर बेसाडी हर्षथी हाथ जोडीने बोल्यो के–

शोधवा लागी. एम करतां अकस्मात् वस्त्रने छेडे लखेला अक्षरो. तेना वांचवामां आव्या. तेनो अर्थ जाणीने 'वट वृक्ष तरफना मार्गे वडे पिताने घेर जाऊं' एम विचारी ते त्यांथी चाली. आगळ जतां कोइ सार्थने लुंटवाने प्रवर्तेला चोरोने तेणे हुंकार मात्रथी त्रास पमाड्या. पछी सार्थपतिए कुळदेवीनी जेम तेने नमीने तेना मुखथी तेनुं सर्व वृत्तांत सांभळ्युं. ते परथी तेने नळनी स्त्री जाणीने पोतानी बेन समान मानी पोतानी साथे राखी. पछी वर्षा ऋतु आववाथी 'सार्थने बहु विलंब थशे' एम जाणीने सार्थवाहनी रजा लीधा विना दमयंती त्यांथी एकली नीकळी गई. आगळ चालतां कोइ राक्षसे तेने उपद्रव कर्यो. पण ते तेनाथी क्षोभ पामी नहीं. एटले तेना सत्वथी संतुष्ट थयेला राक्षसे कह्युं के-' हे देवी ! तुं दुःखी थइश नहीं. बार वर्षने अंते तने तारा पतिनो समागम थशे.' पछी दमयंती कोइ पर्वतनी गुफामां रही श्री शांतिनाथनुं माटीनुं बिंब करीने तेनी पूजा करवा लागी, अने स्वभावथीज पाकीने भूमिपर पडेला फळोथी उपवासादितपनुं पारणुं करीने धर्माराधन करवा लागी. चोमासाने अंते पेला सार्थवाहे तेनी शोध करतां ते गुफामां तेने श्री शांतिनाथनी पूजामां तत्पर जोई एटले ते बहु हर्ष पाम्यो, अने तेना उपदेशथी जैनधर्मी थयो. ते वनमां रहेला पांचसो तापसो पण दमयंतीनी वाणीथी प्रतिबोध पाम्या. त्यां **तापसपुर** नामनुं नगर थयुं. एकदा **यशोभद्र** नामना सूरि त्यां पधार्या. दमयंतीना पूछवाथी तेमणे तेनो पूर्व भव कह्यो के- "पूर्व भवमां तुं **मम्मण** नामना राजानी **वीरमती** नामनी स्त्री हती. एक दिवसे ते दंपती कोइ ठेकाणे जता हता, तेवामां सामे आवता एक मुनिने जोया. एटले अपशुकन धारीने तेमने बार घडी सुधी तेमणे रोकी राख्या. पछी पाछा ते दंपतीए मुनिने खमाव्या. ए कारणथी आ भवमां बार वरस सुधीनो तमारे बंनेने विरह पड्यो." आ प्रमाणे कही आचार्य विहार करी गया.

एक दिवसे कोइए आवीने दमयंतीने कह्युं के-" तारो पति में हमणा अहीं नजीकमांज जोयो हतो." एवुं सांभळीने ते तत्काळ तेने जोवाने वनमां गइ. त्यां कोइ राक्षसीनो उपद्रव थयो. ते तेणे पोताना शियळ व्रतना प्रभावथी शांत कर्यो. पछी अनुक्रमे ते अचलपुरमां आवी. ते नगरमां **चंद्रयशा** नामनी दमयंतीनी मासी त्यांना राजानी राणी हती. ते दमयंतीने सुशील जोइने पोताने घेर लइ गइ. त्यां तेनी दानशाळामां दमयंती नित्य दान देवा लागी. **पींगल** नामना चोरने त्यां रह्या सता मोतमांथी बचाव्यो.

एक वखत हरिभद्र नामे ब्राह्मण कुंडिनपुरथी त्यां आव्यो. तेणे दानशाळाए दान लेवा जतां दमयंतीने जोइने ओळखी एटले तेनी मासीने मूळथी सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी चंद्रयशा तेने पोतानी बहेननी दीकरी जाणी राजमहेलमां लइ गइ अने पोताने ओळखाण न पाड्या बाबत ठपको आप्यो. पछी घणी युक्तिथी तेनो सत्कार करीने मोटा आडंबरथी तेने तेना पिताने घेर कुंडीनपुर मोकली.

एकदा **भीम** राजानो दूत पोताने कामे दधिपर्ण राजा पासे आव्यो हतो. त्यां " नळनो रसोइओ कुबडो सूर्यपाक रसवतीने जाणनारो छे. " एम पुरमां पगले पगले तेना वखाण सांभळीने अने तेने जाते जोईने पोताने नगरे जइ पोताना राजा भीमने ते वृत्तांत निवेदन कर्यो.दूतनुं वाक्य सांभळीने भीम राजाए तेनी विशेष तजवीज करवा एक ब्राह्मणने सुसुमारपुर मोकल्यो. ते ब्राह्मणे कुबडाने मळीने कह्युं के–" तने जोइने मने खेद थाय छे, केमके हुं अहीं नळराजा होवानी शंकाए आव्यो हतो, पण कल्पवृक्ष क्यां अने एरंडानुं झाड क्यां ? माणिक्य क्यां अने पथ्थर क्यां ? एम आजे तने कुबडाने जोवाथी मारा मनमां रहेलो दमयंतीनो मनोरथ पण कुबडो थइ गयो." आ प्रमाणे सांभळीने कुबडो रोयो; अने ते ब्राह्मणने सूर्यपाक रसवती जमाडी तेने घणुं सुवर्ण आपी विदाय कर्यो. ते ब्राह्मणे भीम राजा पासे आवीने लक्ष सुवर्णनुं दान, रोवुं अने सूर्यपाक रसवतीनुं जमाडवुं विगेरे सर्व वृत्तांत कह्यो. ते सांभळी दमयंती बोली के–" हे पिता! आ बाबतमां कांइ पण विचार करवा जेवुंनथी, जरूर कुबडाने रूपे रहेलो ते तमारो जमाइज छे एम जाणवुं. " पछी भीम राजाए दमयंतीनो खोटो स्वयंवर आरंभीने सुसुमारपुरना राजा दधिपर्णने बोलाववा माटे माणसो मोकल्या. केमके तेम करवाथी ते वात सांभळीने दधिपर्णनी साथे नळ राजा जो त्यां हशे तो ते जरूर आवशे; कारणके पशुओ पण स्त्रीनो पराभव सहन करी शकता नथी.

दधिपर्ण राजा दमयंती परना अनुरागथी मुदत मात्र एकज दिवसनी बाकी छतां कुबडा सारथिनी सहायथी तेज दिवसे कुंडिनपुरमां आव्यो, अने कुबडा पासे सूर्यपाक रसवती करावीने परिवार सहित भीम राजाने जमाड्यो. त्यार पछी " आ निषध राजानो पुत्र नळज कुबडाने स्वरूपे छे; केमके श्वेतांबर मुनिनुं वचन मिथ्या होय नहीं. " एम धारीने लज्जा पूर्वक दमयंतीए पोताना पतिने कह्युं के–" हे नाथ! ते वखत वनमां तो सुती मुकीने गया हता, पण आजे जागती शी रीते मुकी शकशो ? " आ प्रमाणे सांभळी नळे पोतानुं रूप प्रगट कर्युं. पछी भीम राजा नळने पोताना सिंहासनपर बेसाडी हर्षथी हाथ जोडीने बोल्यो के–

" आ सर्व राज्यने अने आपसि विनानी आ संपत्तिने तमे आनंदे भोगवो अने तमारी आज्ञामां वर्तता एवा अमने मरजी प्रमाणे आपो. ". दधिपर्ण राजा पण नळने जोइ तेने नमस्कार करीने आश्चर्यथी बोल्यो के–" हे देव ! में अज्ञानताथी जे कांइ अयोग्य आचरण कर्युं होय ते सर्व क्षमा करजो. "

पछी नळ राजा सर्व राजाओ अने तेना सैन्य सहित पृथ्वीने कंपावतो कोसला नगरी तरफ चाल्यो. त्यां युद्ध करतां क्रीडा मात्रमां कुबरने जीतीने पोते राज्याधिपति थयो. पछी भरतार्धना सर्व राजाओए नळने भेटो आपी. नळे पण पोतानी आज्ञामां रहे त्यां सुधी तेमने अभयदान आप्युं. अनुक्रमे पुष्कल नामना पोताना पुत्रने राज्य सोंपीने दमयंती सहित नळ राजाए शास्त्रानुसार जैनी दीक्षा ग्रहण करी. नळ राजाना शरीरमां स्वाभाविक कोमलता होवाथी संयममां ते अतिचार लगाडवा लाग्या, एटले तेना पिता निषध देवताए आवीने फरीथी दृढ कर्या; पछी दमयंतीना भोगनी इच्छावाळो छतां पण मनने बलात्कारे रोकीने, दीक्षानुं पालन करवामां असमर्थ थवाथी अनशन अंगीकार करी मृत्यु पामीने कुबेर नामे उत्तर दिशानो लोकपाल थयो. दमयंती पण अनशनथी मृत्यु पामीने तेनी प्रिया थई. पछी काळक्रमे करीने दमयंती द्वारका नगरीमां कनकवती नामे वसुदेवनी प्रिया थई. त्यां जैनधर्ममां आसक्त थइ सती संसारिक सुख भोगवती हती, तेवामां श्रीनेमिनाथ प्रभु त्यां समोसर्या. कृष्ण तेमने वांदवाने परिवार सहित गया. भगवाने धर्मदेशना आपी. पछी देशनाने अंते कृष्णे पूछयुं के–" हे स्वामी ! आ नगरी अक्षय छे के तेनो क्षय थशे ? " त्यारे भगवाने कह्युं के–"हे कृष्ण ! आ नगरीनो द्वैपायन ऋषिना शापथी नाश थशे." आ प्रमाणे श्रीनेमिनाथना मुखथी द्वारकानो दाह सांभळीने घणा जादवकुमारे, तथा तेनी स्त्रीओए दीक्षा लीधी. ते समये वसुदेवनी ७१९९८ स्त्रीओए पण प्रभुनी पासे दीक्षा लीधी. मात्र देवकी ने रोहीणी बे घेर रही. कनकवती चारित्र लइ उत्कृष्ट भावना भावी शुक्ल ध्यान धरीने केवल ज्ञान पामी. पछी देवताए आपेला साध्वीना वेषने धारण करी घणा जीवोने प्रतिबोध पमाडी प्रांते सर्व कर्मनो क्षय करीने मुक्ति पामी.

॥ इत्यब्ददिनपरिमित्तोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य
२१२ द्वादशाधिकद्विशततमः संबंधः ॥

व्याख्यान २१३ मुं.

दीपपूजा.

जिनेन्द्रस्य पुरो दीपपूजां कुर्वन् जनो मुदा ।
लभते पृथुराज्यादिसंपदं धनदुःस्थवत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जिनेश्वरनी पासे हर्षथी दीपपूजा करनार मनुष्य निर्धन धनानी जेम मोटी राज्यसमृद्धि पामे छे."

दीपपूजा विषे धनानुं दृष्टांत.

आ जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां आवेला दक्षिणार्ध भरतमां **मगध** नामना देशने विषे **पद्मपुर** नामे नगर छे. ते नगरमां **कलाकेली** नामे राजा हतो. तेनुं वर्णन जाणी लेवुं. ते राजाने पांच लाख अश्वो, छसें मदोन्मत्त हाथीओ अने असंख्य रथ तथा पत्तिओ हता. ए प्रमाणे ते राजाने पुण्यना प्रभावथी राज्यलक्ष्मी प्राप्त थई हती. तेवा राज्यने करतो अने सुखभोग भोगवतो कलाकेली राजा सुखे सुखे दिवसो निर्गमन करतो हतो.

एकदा पद्मवन नामना चैत्यथी शोभित **पद्मवन** नामना उद्यानमां मनुष्योमां केवली, सर्वज्ञ अने सर्वदर्शी आदेयनाम कर्मवाळा एवा त्रेवीशमा तीर्थंकर **श्रीपार्श्वनाथ** स्वामी अनेक गणधर तथा साधुना परिवारे संयुक्त अने कोटीगमे भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिषि अने विमानवासी देवो सहित समवसर्या. चतुर्विधि देवताओए समवसरण रच्युं. अहीं समवसरणनुं वर्णन जाणी लेवुं. यावत् पूर्वद्वारे समवसरणमां प्रवेश करीने भगवान सिंहासन उपर बेठा, अने बारे पर्षदाओ आवीने स्वस्व स्थाने बेठी. ते वखते कलाकेलि राजा अने बीजा नगरना लोको पण भगवानने वांदवा माटे आव्या. ते वखते त्रायस्त्रिंशत् देवताओ पण घणा आव्या हता. पछी भगवाने नीचे प्रमाणे पर्षदानी समीपे देशना आपी.

मन्ह जिणाणं आणं, मिच्छं परिहर धरह सम्मत्तं ।
छव्विह आवस्सयंमि, उज्जुत्तो होइ पइदिवसं ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे भव्य जीवो ! जिनेन्द्रनी आज्ञाने मान्य करो, मिथ्यात्वने तजो, सम्यक्त्वने धारण करो, अने अहर्निश छ प्रकारना आवश्यकमां उद्यमी थाओ;" तथा

पव्वेसु पोसहवयं, दाणं सीलं तवो अ भावो अ ।
सज्झाय नमुक्कारो, परोवयारो अ जयणा अ ॥ २ ॥

भावार्थ—" पर्वतिथिए पौषध व्रत करो तथा दान, शील, तप, भावना, स्वाध्याय, नमस्कार, परोपकार अने जतना करो; " तथा

जिणपूआ जिणथुणिणं, गुरुथुअ साहंमिआण वच्छल्लं ।
सव्व विरइमणोरह, एमाइं सड्ढकिच्चाइं ॥ ३ ॥

भावार्थ--" जिनपूजा, जिनेश्वरनी स्तुति, गुरुनी स्तुति, साधर्मिक वात्सल्य अने सर्वविरतिनो मनोरथ करो. इत्यादि श्रावकनां कर्तव्य छे. "

हे भव्य प्राणीओ ! मोहनी आदि आठ कर्मना वशथी संसारी जीव जन्म मरणादि अनेक दुःखोथी व्याप्त एवा चतुर्गति रूप भयंकर संसारकान्तारमां वारंवार परिभ्रमण करे छे ते जीव प्रथम अकाम निर्जराथी थयेला पुण्यना उंदयथी अव्यवहार राशिमांथी नीकळीने व्यवहार राशिमां आवे छे: पछी यथाप्रवृत्ति करण करवाथी आयुविना[1] साते कर्मनी उत्कृष्ट स्थिति खपावीने पल्योपमना असंख्यातमे भागे उणी एक कोडाकोडी सागरोपमनी करे छे. तेटली लघु स्थिति पर्वत उपरथी पडतो पाषाण कुटातो पीटातो गोळ थाय ते न्याये करे छे, तथा शुभभाव बांधे छे. यथाप्रवृत्ति करण वडेज जीव प्रथम बादर पृथ्वीकायमां पर्याप्त भावे उत्पन्न थाय छे. त्यार पछी कोईक भव्य जीव अनुक्रमे संज्ञी पंचेंद्रिय मनुष्यपणुं पामीने अल्प संसारी थईने आर्यक्षेत्रमां उच्च कुळने विषे उत्पन्न थाय छे. एवी रीते आर्यक्षेत्र, मनुष्यभव, उच्च कुळ, सुगुरुनी जोगवाई विगेरे धर्मनी सामग्री पामीने जीव आत्माना शुद्ध स्वाभावे करीने अथवा गुरुना उपदेशे करीने आ प्रमाणे आत्मस्वरूपनुं चिंतवन करे के-"आ मारो आत्मा असंख्यात प्रदेशवाळो छे. ते द्रव्यार्थिक नये करीने एक छे, अने पर्यायार्थिक नये करीने अनेक परिणामवाळो छे. ज्ञान, दर्शन, रुप, शुद्ध गुणना पर्यायवाळो छे ते आत्माना अनंता अस्तिधर्मो छे,अनंता नास्ति धर्मो छे; अने तेमां सामान्य विशेष धर्मो पण अनेक रहेला छे. वळी ते समग्र पुद्गल भावथी रहित छे. वस्तुगत भावे त्रणेकाले अनंती कर्म प्रकृतिथी रहित छे. साकारोपयोग (ज्ञान) तथा अनाकारोपयोग (दर्शन)ना स्वभाववाळो छे. कदाचित् पण चैतन्य भावने तजतो नथी. आ मारो आत्मा शाश्वत् छे; शरीर, लेश्या, जोग, कषाय अने क्लेश रहित छे, अर्थात्

[1] आयुष्य विना.

अशरीरी, अलेशी, अयोगी, अकषायी अने अक्लेशी छे; परम चिदानंद स्वरुपी छे, द्रव्यार्थिक नयनी मुख्यताये नित्य छे, अने पर्यायार्थिक नयनी अपेक्षाए अनित्य छे. रत्नत्रयी (ज्ञान, दर्शन, चारित्र) मय छे. श्रद्धा, भासन अने रमणता लक्षणवाळो छे. तथा उत्तम निमित्तकारणे करीने तेनुं उपादान सुधरे छे. तेथी आप्रमाणेनुं तेनुं शुद्ध स्वरुप निरंतर ध्याववुं.

आवी अमृत सरखी पार्श्वनाथ स्वामीए धर्मदेशना आपी, ते सांभळीने राजादिक सर्वे पौरलोको हृष्ट तुष्ट थया, चित्तमां आनंद पाम्या, प्रीतियुक्त थया, परम शांतभाव पाम्यां अने हर्षथी उल्लास पामेला हृदयवाळा थया. वर्षादनीधाराए हणेला कदंबना पुष्पोनी जेम तेमना रोमांच प्रफुल्लित थया, यावत् अस्थि मज्जा पर्यंत धर्मना रागथी रंगाई गया. तेमांथी केटलाक जीवोए चारित्र ग्रहण कर्युं, केटलाके बार प्रकारनो श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो, अने केटलाके रात्रिभोजननी विरति, अनंतकायनो त्याग, अभक्ष्य भोजननो परिहार अने वासी विदलनुं वर्जन, इत्यादिक पच्चखाण कर्यां. त्यारपछी पर्षदा स्वस्व स्थाने गइ. पछी कलाकेलि राजाए हस्तकमळ जोडीने नम्रताथी भगवानने आ प्रमाणे पूछयुं के–" हे करुणासागर,परम दयाना भंडार अने त्रिभुवनमां सूर्य समान भगवंत ! आप जयवंता वर्तो. हे प्रभो ! कया कर्मे करीने मने आवी राज्यसंपदा प्राप्त थई ? ते कृपा करीने कहो." त्यारे पार्श्वनाथ स्वामीए कह्युं के–"हे राजन् ! तारा पूर्व भवनुं वृत्तांत सांभळ.

आ जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमां दक्षिणार्धे भरतने विषे **अंग** नामे देश छे. तेमां **रम्भा** नामे नगरी छे. त्यां **जीतारी** नामे राजा राज्य करतो हतो. ते नगरीमां एक **धना** नामनो निर्धन वणिक् रहेतो हतो, ते जेवा तेवा प्रकारना उद्योगथी आजीविका (उदरपूर्णा) करतो हतो. एकदा रमापुरीनी समीपना उद्यानमां बावीशमा तीर्थंकर बाळब्रह्मचारी **श्रीनेमिनाथ** भगवान अढार गणधर अढार हजार साधु अने छत्रीश हजार साध्वीओना परिवार सहित समवसर्या. तेमना देहनी कांति श्याम कमळना जेवी हती,देहनुं प्रमाण दश धनुष उंचुं हतुं,अने चारे[1] प्रकारना देवताओ तेमना चरणकमळनी सेवा करता हता. ते उद्यानमां देवताओए समवसरण रच्युं; तेना मध्यभागमां सिंहासन उपर ते नेमनाथ स्वामी बीराज्या अने सर्व पर्षदा पण आवी, ते वखते तेमणे नीचे प्रमाणे धर्म देशना आपी.

---

१ भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिषि अने वैमानिक.

भवे जीवा वि बज्झंति, मुच्चंति य तहेव य ।
सव्वकम्म खवेऊण सिद्धिं गच्छइ नीरया ॥ १ ॥

भावार्थ––" जेम जीवो संसारने विषे बंधाय छे तेमज संसारथी मुक्त पण थाय छे; अने सर्व कर्मनो क्षय करीने आसक्ति रहितपणे सिद्धिपदने पामे छे. "

आ प्रमाणे धर्मदेशना चालती हती. ते समये पेलो धना नामे वाणीओ त्यां आव्यो; ते वखते भगवाने एवो उपदेश कर्यो के–" जे भव्य प्राणी जिनेंद्रनी पासे दीपपूजा करे छे ते राज्यलक्ष्मी पामीने यावत मोक्षे जाय छे. " ए प्रमाणेनो धर्मोपदेश सांभळीने हर्ष पामेला धनाए आ प्रमाणे मनमां विचार्युं के– " हुं जिनेश्वरनी पासे निरंतर दीपपूजा करीश. "पछी एवो अभिग्रह धारण करी श्रीनेमिनाथने वांदीने ते धनो पोताने घेर गयो. त्यार पछी जीवहिंसा न थाय तेवी रीते पोताना ज्ञानादिक त्रण रत्नना उद्योतने निमित्ते ते विधि पूर्वक हमेशां दीपपूजा करवा लाग्यो. तेम करवाथी मनुष्यनुं आयुष्य बांधी मरण पामीने कलाकेलि नामनो तुं राजा थयो छे, अने आवी राज्यसमृद्धि पाम्यो छे. "

आ प्रमाणे श्रीपार्श्वनाथ स्वामी पासे पोतानो पूर्वभव सांभळीने आनंद पामेलो कलाकेलि राजा प्रतिदिन द्रव्यपूजा तथा भावपूजा विशेष प्रकारे करवा लाग्यो अने सुखे सुखे रहेवा लाग्यो. ते राजा अनेक प्रकारना सुख भोगवीने अनुक्रमे सिद्धिपदने पामशे.

" हे भव्य प्राणीओ ! पोतानुं अज्ञान नाश करवा माटे कलाकेलि राजानी जेम ज्ञाननो विकास करनार एवी द्रव्य अने भावथी विधि पूर्वक दीपपूजामां आदर करो. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य
२१३ त्रयोदशाधिकद्विशततमः संबंधः ॥

1 शुभ तथा अशुभ.

व्याख्यान २१४ मुं.

हवे थोडा अक्षर शिखवाथी पण सुख थाय छे ते विषे कहे छे.

ज्ञानं शिक्षयेदल्पं हि, भवेत्तन्न निरर्थकम् ।
स्वल्पाक्षरमहिम्नापि, यवेन जीव रक्षितः ॥ १ ॥

भावार्थ—" थोडुं ज्ञान शीखवाथी पण ते निरर्थक थतुं नथी, केमके थोडा ज्ञानना महिमाथी पण **यव** नामना राजर्षिए पोताना जीवनी रक्षा करी हती.

यव ऋषिनी कथा.

विशाला नामनी नगरीमां **यव** नामे राजा हतो. तेने **गर्दभिल्ल** नामनो पुत्र, **अणुल्लिका** नामनी पुत्री अने **दीर्घपृष्ठ** नामनो प्रधान हतो. एक दिवस रात्रिना पाछला भागमां जागेला राजाए विचार्युं के–" में पूर्व भवमां कांई पण अद्भुत सुकृत कर्युं हशे के जेथी ते सुकृतना प्रभावे समुद्र पर्यंत समग्र पृथ्वीने स्वतंत्रताथी भोगवुं छुं. माटे आ भवमां पण हवे एवुं सुकृत करुं के जेथी आवतो भव पण सुधरे." आ प्रमाणे विचारीने प्रातःकाळे पोताना पुत्रने राज्य पर बेसाडी तथा तेने केटलीक हितशिक्षा आपीने उपवनमां आवेला गुरुने वांदी तेमनी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. पछी वैयावच्चमां तत्पर रह्या सता तेमणे तीव्र तप करवा मांडयुं, अने गुरु महाराजनी साथे विहार करवा लाग्या. गुरुए शास्त्रनो अभ्यास करवा माटे बहु कह्युं, तोपण ते कांई शीख्या नहीं; अने " हुं वृद्ध छुं तेथी मने पाठ आवडशे नहीं. " एम कहेवा लाग्या.

एकदा लाभनुं कारण जोइने गुरुमहाराजे ते यव मुनिने तेना पुत्रने प्रतिबोध करवा माटे विशाला नगरीए मोकल्या. गुरुनां वचनने पुष्पमाळानी जेम मस्तक पर चडावीने ते चाल्या. रस्तामां तेणे विचार्युं के–" मने किंचित् पण शास्त्रनुं ज्ञान नथी, तो हुं पुत्रने तथा बीजाओने शुं उपदेश आपीश " आ प्रमाणे विचार करे छे तेवामां नजीकना कोई खेतरमां जव खावानी इच्छाथी आवता पण भयवडे चोतरफ जोता एक गधेडाने ते खेतरना रक्षके नीचे प्रमाणे गाथा कही-

ओहावसि पहावसि ममं चेव निरखसि ।
लखिओ ते अभिप्पाओ जवं भखेसि गद्दहा ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे गर्धभ ! तुं उतावळो उतावळो आवे छे, अने मने जुए छे. पण में तारो अभिप्राय जाण्यो छे के तारे जवनुं भक्षण करवानी इच्छा छे."

आ प्रमाणेनी गाथा सांभळीने यव मुनिए जाणे अमोघ शस्त्र मार्युं होय तेवी ते गाथा मानी;अने तेने महाविद्यानी जेम संभारता संभारता आगळ चाल्या. केटलेक दूर जतां कोईएक गामनी नजीकमां केटलाएक छोकराओ रमता हता. तेमां एक छोकराए लाकडाना कडकानी अणुल्लिका (मोई) फेंकी. ते बीजा बाळकोए शोधी, पण जडी नहीं. त्यारे कोई छोकराए नीचे प्रमाणे गाथा कही—

अओ गया तओ गया, जो इज्जंति न दीसई ।
अम्हे न दिठ्ठि तुम्हे न दिठ्ठि, अगडे छुटा अणुल्लिया ॥ १॥

भावार्थ"अहींथी गई, त्यांथी गई. शोध करतां पण मळी नहीं. अमे जोई नथी. तेम तमे पण जोई नथी. पण ते अणुलिका (मोई) खाडामां पडी छे."

आ गाथा पण यव मुनिने तत्काळ कंठे थई गई. पछी तेनुं वारंवार स्मरण करतां आगळ चाल्या. केटलेक दिवसे ते विशाला नगरी समीपे आव्या. त्यां एक कुंभारने घेर रात्रिवासो रह्या. ते कुंभारना घरमां एक उंदर आम तेम भमतो हतो, तेने ते कुंभारे नीचे प्रमाणे गाथा कही—

सुकुमालय कोमल मद्दलया, तुम्हेरत्तिहिंडणसीलणया ।
अम्ह पसा ओ नत्थिते भयं, दिह पिठ्ठाओ तुम्हभयं ॥ १॥

भावार्थ-" कोमळ अंगवाळा हे भद्र ! तारे रात्रे चालवानो स्वभाव छे. पण तारे अमारा तरफनो भय नथी. दीर्घपृष्ठथी* तारे भय छे."

आ गाथा पण यवमुनिए कंठे करी. पछी ए त्रण गाथाने कल्पवृक्ष, चिंतामणि रत्न अने कामधेनु समान मानीने तेनुं वारंवार आवर्तन करवा लाग्या. हवे ते विशाला नगरीमां दीर्घपृष्ठ मंत्रीए " गर्दभिल्लराजाने कोई पण उपायथी मारीने तेना राज्य पर मारा पुत्रने बेसाडीने तेने अणुल्लिका परणावीश." एम धारीने ते राजानी बहेन अणुल्लिकाने पोताना घरना भोंयरामां गुप्त रीते संताडी छे. राजाना सुभटोए तेने घणी शोधी पण तेनो पत्तो लागतो नथी. तेवामां मंत्रीए यव मुनिने आवेला सांभळीने विचार्युं के-"आ यव मुनिने तपना प्रभावथी ज्ञान प्राप्त थयुं हशे; अने तेथी मारुं सर्व कपट जाणीने ते जो राजाने कहेशे, तो राजा मने मारा कुटुंब सहित हणी नाखशे, माटे हुं कांई पण आगळथी तेनो उपाय करुं

* सर्पनो.

एम विचारीने ते रात्रिने वखतेज गर्दभिल्ल राजा पासे गयो. राजाए तेने अव-सर विना आववानुं कारण पूछ्युं, एटले ते बोल्यो के–"चारित्रथी भ्रष्ट थयेला आपना पिता अहीं आव्या छे ने कुंभारने घरे रात रह्या छे; ते प्रातःकाळे आ-वीने आपनुं राज्य लइ लेशे." आ प्रमाणे सांभळीने राजा बोल्यो के–"जो पिताश्री राज्य लेशे तो हुं मारुं मोटुं भाग्य मानीश." मंत्रीए कह्युं के पोताने मळेलुं राज्य आपी देवुं ते योग्य नथी. कोणिक राजानी जेम एवा पिताने तो हणी नाखवा तेज योग्य छे." आ प्रमाणे करी विविध प्रकारनी युक्तिथी क-पटी मंत्रीए राजाने समजाव्यो. एटले रात्रिमांज पितानो वध करवा माटे गर्द-भिल्ल राजा हाथमां खड्ग लइने कुंभारने घेर गयो, अने बारणानी सांधमांथी पिताने जोवा लाग्यो, तेटलामां यव मुनि सहज बुद्धिथी पहेली गाथा बोल्या. ते सांभळीने राजाए विचार्युं के–" अहो! मारा पिताए मारो अभिप्राय जाण्यो. केम के ते कहे छे के–हे गद्धहा ! एटले हे गर्दभिल्ल ! तुं यवं एटले यव ऋषिने भक्षण करवा इच्छे छे." आ प्रमाणे राजाए पोतानी बुद्धिथी ते गाथानो अर्थ कर्यो, अने पाछो विचारवा लाग्यो के– " आम तेम जोतां मने मारा पिताए ज्ञानवडे जाण्यो, पण जो ते खरेखरा ज्ञानी हशे तो मारी बहेनना समाचार कहे शे." आ प्रमाणे विचारे छे तेवामां तेज वखते यव मुनि बीजी गाथा बोल्या. ते सांभळी तेणे ते गाथानो एवो अर्थ कर्यो के– " में मारी बहेन अणुल्लिकानी सर्वत्र शोध करी, पण ते अणुल्लिकाने कोइए भोंयरामां संताडीछे." आ प्रमाणे अर्थ चिंतवीने वळी विचारवा लाग्यो के–" जो हवे मारी बहेनने जेणे संताडी होय तेनुं नाम प्रकाश करे तो सारुं." तेवामां मुनि त्रीजी गाथा बोल्या. ते सांभळीने तेनो अर्थ तेणे एवो धार्यो के " तुं कोमळ छे. रात्रिए चालवानो तारो स्वभाव छे. तुं अमाराथी बीए छे; पण अमाराथी तने भय नथी. दीर्घपृष्ठ नामना मंत्रीथी तारे भय राखवानो छे." आवो अर्थ धारी तमाम शंका दूर थवाथी ते बारणुं उघाडी अंदर आव्यो; अने पोताना ज्ञानी पिताने मारवानी इच्छा करनारा एवा पोतानी निंदा करतो सतो गर्दभिल्ले अश्रुपात सहित पिता मुनिने वांदीने पोतानो अपराध निवेदन करवा पूर्वक खमाव्यो. ते सर्व सांभळी मुनि तो मौनज रह्या, केमके " मौनं सर्वार्थसाधकम्."

पछी राजा पोताने घेर आव्यो. रात्रि गया पछी प्रातःकाले तेणे पोताना भटो (सिपाइओ) पासे मंत्रीना घरनी तपास करावीने भोंयरामांथी पोतानी बहेनने मेळवी. मंत्रीने तेना कुटुंब सहित देशमांथी काढी मूक्यो, अने ज्ञानी मुनिनी प्रशंसा करी तेमने नमीने तेणे कहेलो धर्म अंगीकार कर्यो.

आ प्रमाणे पुरना लोक सहित पोताना कुटुंबने प्रतिबोध करीने यव राजर्षि गुरु महाराज पासे आव्या. गुरु महाराज पण सर्व वृत्तांत सांभळीने विस्मय पाम्या. पछी यव मुनि पण आळस छोडीने विनय सहित श्रुतनो अभ्यास करवा लाग्या. भणवानुं फळ प्रत्यक्ष जोवाथी ज्ञानाभ्यास करी तपो तपीने अनुक्रमे मोक्षे गया.

हवे आ दृष्टांतनुं व्यतिरेकी दृष्टांत कहे छे.

यैर्नाधीतः श्रुतग्रंथः कर्णाघातेन यच्छ्रुतम् ।
स्वमतिकल्पनापूर्वं वदेत् स मौढ्यमश्नुते ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेणे [१]श्रुतग्रंथनो अभ्यास कर्यो नथी, अने काने सांभळीने पछी पोतानी मतिकल्पनाथी जवाब आपे छे ते मूर्खपणाने पामे छे, "

आ विषे एक दृष्टांत छे के– कोई गच्छना आचार्ये पोताना आयुष्नो अंत जाणीने उपदेशथी कांइक सिद्धांतने अने स्थूल सामाचारीने जाणनारा कोइ साधुने आचार्यपदे स्थापन कर्यो. ते आचार्य आगमनुं ज्ञान नहीं छतां पण गुरुना महिमाथी प्रसिद्धिने पाम्या.अन्यदा विहार करतां करतां ते **पृथ्वीपुर** नामना नगरे गया. त्यांना श्रावकोए मोटा ओच्छवथी तेमने पुरप्रवेश कराव्यो. ते नगरमां पूर्वे जैनाचार्योए राजसभामां अनेक परवादीओने घणीवार पराभव पमाड्या हता. ते परवादीओए फरीथी पण तेमनी उन्नति जोइने इर्ष्यालु थया सता पूर्वे पराभव पाम्या छतां पण फरीथी पोताना महत्वनी हानि थशे, एवा भयथी आ नवीन आचार्यना शास्त्र संबंधी ज्ञाननी परीक्षा करवा माटे पोताना वर्गमांथी एक सेवकने तेनी पासे मोकल्यो. तेणे सूरिने प्रश्न कर्यो के–" हे भगवान् ! पुद्गलने केटली इंद्रियो होय ? " त्यारे सिद्धांतना ज्ञान रहित सूरिए घणीवार सुधी विचार्युं तो " पुद्गल एक समये लोकांत सुधी जाय छे " एवुं कोइक स्थळे सांभळेलुं ते तेमना स्मरणमां आव्युं. पछी " पंचेंद्रिय विना आटली बधी शक्ति क्यांथी होय? " एम पोताना मनमां निश्चय करीने सिद्धांतादिकनी अपेक्षा विनाज स्वमतिकल्पनाथी तेने प्रत्युत्तर आप्यो के–" हे भद्र ! पुद्गलने पांच इंद्रियो होय छे. " आवो उत्तर सांभळीने " आने पोताना शास्त्रनुं पण ज्ञान नथी, तो पछी अन्य शास्त्रनुं ज्ञान तो क्यांथीज होय ? " एम विचारीने तेणे परवादीओने सर्व हकीकत कही. एटले तेओए नवीन आचार्यना ज्ञाननुं प्रमाण जाणीने राजसभामां तेनो पराभव कर्यो, तेथी जैन धर्मनी मोटी हीलना थई,

१ सिद्धांतनो.

अने घणा लोको धर्मभ्रष्ट थया. पछी संघे ते आचार्यमे त्यांथी दूर देश मोकली दीधा. आ प्रमाणे कल्पवृत्तिमां दृष्टांत कह्युं छे.

आवा गुरुओ चारित्र पाम्या छतां अने उपदेश देवाने तत्पर थया छतां पण शास्त्र संबंधी तथाप्रकारनुं ज्ञान नहीं होवाथी उत्सूत्र प्ररुपणा पण करे छे, अने पोताना आश्रितोने उलटा भवसमुद्रमां डुबावे छे. तेथी तेवा 'अवहु श्रुतोए' उत्सूत्र बोलाइ जवानो भय होवाथी धर्मनो उपदेश देवो ते पण योग्य नथी.

" आ प्रमाणे विविध दृष्टांतोथी जाणीने संसार रूपी शत्रुना विजयने माटे ज्ञानी गुरुना आश्रयथी हे विवेकी भव्य जीवो! प्रत्यक्ष गुणवाळा सिद्धांतना विचारनो आश्रय करो. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य चतुर्दशाधिकद्विशततमः प्रबंध ॥ २१४ ॥

व्याख्यान २१९ मुं.

ज्ञाननी विराधना तजवा विषे.

जघन्योत्कृष्टभेदाभ्यां, त्याज्या ज्ञानविराधना ।
ज्ञानस्य ज्ञानिनां भक्तिर्वृद्धिं नेया च धर्मिभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" धर्मिष्ठ पुरुषोए जघन्य तथा उत्कृष्ट भेदे करीने ज्ञाननी विराधनानो त्याग करवो, अने ज्ञान तथा ज्ञानीनी भक्तिमां वृद्धि करवी. "

ज्ञाननी जघन्य विराधना आ प्रमाणे छे—

पुस्तक, पाटी, ठवणी, रुमाल (पोथी बंधन), लेखण, विगेरे ज्ञानना उपकरणोने चरण विगेरे कनिष्ठ अवयवोथी स्पर्श करवो, मुख पासे वस्त्र राख्या शिवाय भणवुं भणाववुं, अने पुस्तकने काखमां राखवुं; शिवाय आहार, नीहार तथा भोग आदि समये ज्ञानना उच्चार करवा विगेरेथी मोटा ज्ञानावरणीय कर्मनो बंध थाय छे; पुस्तक के तेना पानां अथवा लखेला कागळ विगेरे पासे होय अने लघुशंका विगेरे करे, तो तेथी पण मोटा ज्ञानावरणीय कर्मनो बंध थाय छे; तेथी तेने महा आशातना जाणवी. नवकारवाळी, पुस्तक विगेरे पूज्य उपकरणनी साथे मुहपत्ति तथा चरवळानो स्पर्श न करवो. मुहपत्ति थुंक विगेरेथी उच्छिष्ट थयेली होय छे, माटे तेने पुस्तकनी साथे तथा स्थापनाचार्यनी साथे राखवी नहीं, जूदीज राखवी. पुस्तक बंधननो रुमाल पण केवळ पृथ्वीपर राखवो नहीं, अन्यथा मोटी आशातना थाय छे, अने ज्ञानावरणीय कर्म बंधाय छे. लखेला कागळना ककडा पण उच्छिष्ट भूमिपर पड्या होय, तो ते लइने सारी उंची जग्याए पगथी चंपाय नहीं तेवी रीते मूकवा, तेम करवाथी ज्ञाननी स्फूर्ति थाय छे. तेनो महिमा चालता समयमां पण प्रत्यक्ष दीठो छे. लखेला कागळो कोइ पण कारणथी वेचवा नहीं. लोभी थईने लखेलां पानां कुचो करीने तेनी कांइ वस्तु बनाववा माटे पण आपवां नहीं, तथा दिवाळीना पर्वमां गंधक, दारु विगेरे भरीने फटाकीया, फुलकणी, टेटा विगेरे करवामां आवे छे तेना उपयोगमां पण आपवां नहीं. केम के तेमांना सर्वे अक्षरो बळीने भस्म थाय छे; तेम करवाथी महा ज्ञानावरणीय कर्मनो बंध थाय छे. पुस्तकादिक उपकरणोने ओसीके राखवां नहीं, तेमज तेनापर बेसवुं नहीं. आ प्रमाणे ज्ञाननी आशातना करवाथी महा ज्ञानावरणीय कर्म बंधाय छे. ज्ञाननी विराधनाना उपर जणावेला शिवायना बीजा प्रकारो विवेकी पुरुषोए पोतानी मेळे समजी लेवा.

हवे ज्ञाननी उत्कृष्ट विराधना बतावे छे–

श्रीमत् जिनागमना सूत्र, तेनो अर्थ तथा उभयनुं वितथ करण–उत्सूत्र भाषण **मरीचि, जमालि, लक्ष्मणा साध्वी** तथा **सावद्याचार्य** विगेरेनी जेम करवुं नहीं. तेम करवाथी महा ज्ञानावरणीय कर्म बंधाय छे.

हवे ज्ञाननी तथा ज्ञानीनी भक्ति तथा वृद्धि आ प्रमाणे करवी– जिनागम तथा जिनेश्वरादिनां चरित्रवाळां पुस्तको विगेरे न्यायथी मेळवेला द्रव्य वडे सारा कागळ उपर विशुद्ध अक्षरोथी लखाववां, तथा गीतार्थ मुनिनी पासे वंचाववां. तेना प्रारंभादि प्रसंगे मोटा ओछव करवा. अहर्निश पूजादिक बहुमान पूर्वक गुरु-पासे व्याख्यान सांभळवुं, के जेथी अनेक भव्य जीवोने बोधदायक थाय. ज्ञाननां पुस्तको वांचनारने तथा भणनारने अन्न, वस्त्र विगेरेनुं उपष्टंभ आपवुं.

एवुं संभळाय छे के– दुषम कामना वशथी ज्यारे बारवर्षी दुष्काळ पड्यो, त्यारे सिद्धांतने उच्छिन्न प्राय थयेल जाणी तेनो तद्दन विच्छेद थशे एम धारीने **नागार्जुन, स्कंदिल** विगेरे आचार्योए एकठा थइने तेना पुस्तको लखाव्यां, तेथी पुस्तको लखाववां अने उत्तम वस्त्र विगेरेथी तेनी पूजा करवी.

श्रीधर्मघोष सूरिना उपदेशथी संघवी **पेथडे** तेमना मुखथी एकादशांगी सांभळवानो आरंभ कर्यो, तेमां पांचमा अंगमां ज्यां ज्यां" **गोयमा** (हे **गौतम!**) एवुं पद आवे, त्यां त्यां सुवर्ण मोहोरथी तेणे पुस्तकनी पूजा करी; एम दरेक प्रश्ने सोना मोहोर मूकवाथी छत्रीश हजार सोना मोहोर थइ. पछी एटलुं द्रव्य खरचीने तेणे समग्र आगमनां पुस्तको लखाव्यां, अने तेने रेशमी वस्त्रनां बंधन करावीने **भरूच, सुरगिरि, मांडवगढ, अर्बुदाचल** विगेरे स्थानोमां सात ज्ञानना भंडारो कर्या.

श्री कुमारपाल राजाए सातसो लहीया पासे छ लाख अने छत्रीश हजार आगमनी सात प्रतो सोनेरी अक्षरथी लखावी, अने **श्रीहेमाचार्ये** रचेला साडा त्रण करोड श्लोकनी एकवीश प्रतो लखावीने एकवीश ज्ञानना भंडार कर्या. कह्युं छे के—

कालानुभावान्मतिमांद्यतश्च तच्चाधुना पुस्तकमंतरेण ।
न स्यादतः पुस्तकलेखनं हि श्राद्धस्य युक्तं नितरां विधातुम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" हालना समयमां काळना अनुभावथी तथा मतिनी मंदताथी पुस्तक विना ज्ञान रही शकतुं नथी, माटे श्रावकोए निरंतर पुस्तको लखाववां, ते अत्यंत योग्य छे. "

"जिनप्रतिमा कराव्या करतां पण सिद्धांतोने लखाववामां तथा तेनुं श्रवण करवामां मोटुं पुण्य छे. केमके ज्ञान विना प्रतिमानुं महत्व शी रीते जाणी शकाय ? तेथी ज्ञानना भंडारो धर्मनी दानशाळानी जेवा शोभे छे. गुरु विना शिष्यनी जेम पुस्तको विना विद्वत्ता पण आवती नथी." इत्यादि उपदेश सांभळीने वस्तुपाल मंत्रीए अढार करोड द्रव्य खरचीने त्रण ज्ञानभंडार लखाव्या.

थरादना संघवी आभु नामना श्रेष्ठीए त्रण करोड द्रव्य खरचीने सर्व सूत्रनी एक एक प्रत सोनेरी अक्षरथी अने बीजा ग्रंथोनी एक एक प्रत शाहीथी लखावी हती. कह्युं छे के—

न ते नरा दुर्गतिमाप्नुवन्ति न मूकतां नैव जडस्वभावम् ।
नैवांधतां बुद्धिविहीनतां च ये लेखयन्त्यागमपुस्तकानि॥१॥

भावार्थ—"जे मनुष्य सिद्धान्तनां पुस्तको लखावे छे तेओ दुर्गतिने, मूकपणाने, जडताने, अंधताने अने बुद्धिरहितपणाने पामता नथी."

वळी कोइक प्रकारे जिनागमनुं (श्रुत ज्ञाननुं) केवल ज्ञान करतां पण अतिशायिपणुं देखाय छे. ते विषे कह्युं छे के—"श्रुतना उपयोगमां वर्तता छद्मस्थ मुनिए लावेलो आहार कदि अशुद्ध होय तो पण केवळी वापरे छे, कारण के तेम न करे तो श्रुतनुं अप्रमाणपणुं थइ जाय."

तेथी सम्यक् प्रकारे सूत्रार्थना उपयोग पूर्वक निरंतर सर्व अनुष्ठान करवां; उपयोग विनानी क्रिया, द्रव्य क्रियापणाने पामे छे.

ज्ञाननी विराधना करवाथी बंधायेल पापकर्म ज्ञान पंचमीनुं आराधन करवाथी नाश पामे छे. कह्युं छे के—

उत्सूत्रजल्पाच्छ्रुति शब्दव्यत्ययात् क्रोधादनाभोगहठाच्च हास्यतः ।
बद्धानि यज्ज्ञानविराधनोद्भवात् कर्माणि यांति श्रुतपंचमिव्रतात्॥१॥

भावार्थ—"उत्सूत्रनी प्ररुपणाथी, सूत्रना अर्थ विपरीत करवाथी, क्रोधथी, अनाभोगथी, हठथी अने हास्यथी, ज्ञाननी विराधना थवावडे बंधायेलां कर्मो ज्ञानपंचमीना व्रतथी नाश पामे छे."

आनुं तात्पर्य **गुणमंजरी** अने **वरदत्तना** दृष्टांतथी जाणवुं.

गुणमंजरी ने वरदत्तनी कथा.

आ भरतक्षेत्रमां पद्मपुर नामे नगर छे. तेमां **अजीतसेन** नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने शियळ व्रतने धारण करनारी अति प्रिय **यशोमती**

नामनी राणी हती. तेने **वरदत्त** नामे एक पुत्र थयो. ते आठ वर्षनो थयो, एटले तेने भणवा माटे अध्यापक पासे मोकल्यो; त्यां ते हमेशां भणवा लाग्यो, पण तेना मुखमां एक अक्षरनी पण स्फूर्ति थइ नहीं. अनुक्रमे ते युवावस्थाने पाम्यो. एटले पूर्व कर्मना उदयथी तेने कुष्ट (कोढ)नो व्याधि थयो, तेथी तेनुं शरीर क्षीण थवा लाग्युं.

तेज नगरमां सात करोड सोनामोहोरनो अधिपति **सिंहदास** नामनो श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने **कर्पूरतिलका** नामे पत्नी हती. तेमनी पुत्री **गुणमंजरी** नामनी बाल्य वयथीज रोगी अने मूंगी हती. तेना रोगनी निवृत्तिने माटे श्रेष्ठीए अनेक उपायो कर्या, पण ते सर्वे उखर भूमिमां वृष्टिनी जेम, खळ पुरुषना वचननी जेम अने शरद ऋतुनी मेघगर्जनानी जेम निष्फळ गया. ते सोळ वर्षनी थइ तो पण तेनी साथे कोइए लग्न कर्या नहीं.

एकदा ते नगरमां चार ज्ञानने धारण करनार, बारसें छन्नु गुणना निधि अने धैर्यवडे मेरु पर्वतने पण तिरस्कार करनार एवा **विजयसेन** गुरु पधार्या. वनपाळना मुखथी तेमनुं आगमन सांभळी तेने पारितोषिक आपीने पौरजन सहित राजा गुरुने वांदवा गयो. गुरुने विधि पूर्वक वांदी नमीने गुरुनी पासे बेसी आ प्रमाणे देशना सांभळी—

क्षपयेन्नारकः कर्म, बह्वीभिर्वर्षकोटिभिः ।
यत्तदुच्छ्वासमात्रेण ज्ञानयुक्तस्त्रिगुप्तवान् ॥ १ ॥

भावार्थ—"नारकीना जीवो जेटलां कर्मने घणा करोडो वर्षे खपावे छे तेटलां कर्मने त्रिगुप्तिमान्[1] ज्ञानी मात्र एक श्वासोच्छ्वासमा खपावे छे." वळी "छठ अठम दशम दुवालस विगेरे तप करनार अबुध जीवना आत्मानी जेटली शुद्धि थाय छे ते करतां अनेकगणी शुद्धि दररोज जमता एवा ज्ञानीना आत्मानी थाय छे. ते ज्ञान पांच प्रकारनुं कहेलुं छे, तेमां पण श्रुत ज्ञान पोताने तथा परने उपकारी होवाथी श्रेष्ठ छे. बीजां चार ज्ञान मुंगां छे. एटले के तेओ पोताना स्वरूपने कहेवा पण समर्थ नथी; अने श्रुतज्ञान तो पोताने तथा परने प्रकाश करवामां दीवानी जेम समर्थ छे. वळी श्रुतज्ञान कोइने आपी शकाय छे अने कोइ पासेथी लइ पण शकाय छे; बीजां चार ज्ञान कोइने आपी शकातां नथी अने कोइनी पासेथी लइ पण शकातां नथी. तीर्थंकरनामकर्म पण धर्मोपदेशे करीनेज निर्जरा पामे छे. तेथी अध्ययन, श्रवण विगेरेथी निरंतर श्रुत ज्ञाननी आराधनामां यत्न करवो. जे अज्ञानी जीवो मन, वचन अने कायाना

[1] मन, वचन अने कायानी गुप्ति.

योगे करीने ज्ञाननी आशातना करे छे तेओ शरीरे रोगी तथा शून्य मनवाळा तेमज मुंगा विगेरे थाय छे, अने अनेक भवमां परिभ्रमण करे छे. कह्युं छे के—

अज्ञानतिमिरग्रस्ता, विषयामिषलंपटाः ।
भ्रमंति शतशो जीवा, नानायोनिषु दुःखिताः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अज्ञान रूपी अंधकारथी ग्रस्त अने विषय रूपी आमिष (मांस)मां लंपट एवा सेंकडो जीवो नाना प्रकारनी योनीमां दुःखीपणे परिभ्रमण करे छे."

इत्यादि धर्मदेशना सांभळीने सिंहदासे विज्ञप्ति करी के–" हे भगवन् ! मारी पुत्रीना शरीरमां कया कर्मथी व्याधिओ थई छे ! " त्यारे सूरि महाराज बोल्या के–" श्रेष्ठी ! तारी पुत्रीए पूर्व भवे बांधेलां कर्मोनो संबंध सांभळ–धातकी खंडमां खेटकपुर नामना नगरने विषे जिनदेव नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने सुंदरी नामे प्राणप्रिया हती. तेमने पांच पुत्रो तथा चार पुत्रीओ थइ हती. श्रेष्ठीए पांचे पुत्रोने भणवा माटे मोटा उत्सव पूर्वक अध्यापक पासे मूक्या. परंतु तेओ परस्पर चपलता,आलस अने अविनय करता सता त्यां रहेवा लाग्या. कह्युं छे के—

आरोग्यबुद्धिविनयोद्यमशास्त्ररागाः
पंचांतराः पठनसिद्धिकरा नराणाम् ।
आचार्यपुस्तकनिवाससहायवल्गा
बाह्याश्च पंच पठनं परिवर्धयन्ति ॥ १ ॥

भावार्थ—" आरोग्य, बुद्धि, विनय, उद्यम अने शास्त्रपर प्रीति–ए पांच आभ्यंतर कारणो मनुष्योना अभ्यासनी सिद्धि करनारां छे, अने अध्यापक, पुस्तक, निवास, सहाय तथा खावा पीवानी सगवड–ए पांच बाह्य कारणोथी विद्या वृद्धि पामे छे."

एकदा ते उन्मत्त छोकराओने पंडिते शीक्षा करी. अने " कंबाग्रे वसति विद्या " एटले " सोटीना अग्र भागने विषे विद्या वसे छे " एम विचारीने तेओने सोटी वती मार्या, तेथी तेओ रोता रोता घेर आव्या; अने सोटीथी शरीर उपर पडेला क्षतने पोतानी माने बताव्या. ते जोइने तेनी मा सुंदरी बोली के–" हे पुत्रो ! भणवाथी शुं विशेष छे ? केमके जन्म, जरा अने मृत्यु तो भणेल के अभण कोईने छोडता नथी." कह्युं छे के–

पठितेनापि मर्तव्यं, शठेनापि तथैव च ।
उभयोर्मरणं दृष्ट्वा, कंठशोषं करोति कः ॥ १ ॥

भावार्थ—" भणेलो माणस पण मृत्यु पामे छे अने मूर्ख पण मृत्यु पामे छे; ते बन्नेनुं मरण जोईने कयो माणस फोकट भणीने कंठनुं शोषण करे ?" वळी-

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पंडितः स श्रुतिमान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनी पासे द्रव्य छे ते पुरुष कुलीन छे, ते पंडित छे, ते शास्त्रनो जाणनार छे, ते गुणज्ञ छे, ते वक्ता छे अने तेज दर्शन करवा लायक छे. अर्थात सर्वे गुणो कंचननोज आश्रय करे छे. "

वळी धनवाळा महा मूर्ख माणसनी पासे पण पंडितो दैन्य वचनो बोले छे; वळी बहुधा पंडितो निर्धनज होय छे. माटे हे पुत्रो ! मूर्खताज श्रेष्ठ छे. तेथी हवे आजथी तमारे भणवा जवुं नहीं. कदाच तमारो महेताजी तमने तेडी जवा आवे तो तेने दूरथी पथ्थरवडे मारजो; अने तमने मार्यानुं फळ एक वखतमांज बतावी देजो. इत्यादि शीखामण आपीने पुत्रपरना रागथी अने ज्ञान परना द्वेषथी लेखण, पाटी, पुस्तक विगेरे सर्व अग्निमां नांखी बाळी दीधां.

एक दिवस आ व्यतिकर जाणीने श्रेष्ठीए पोतानी स्त्रीने कह्युं के-" हे भद्रे ! तें आवी मूर्खता भरेली चेष्टा केम करी ? आ मूर्ख रहेला पांचे पुत्रोनो विवाह अने उद्धार शी रीते थशे ?" कह्युं छे के-

क्षणं रक्ता विरक्ताश्च, क्षणं सर्वेषु वस्तुषु ।
अज्ञानेनैव कार्यंते प्राणिनः कपिचापलम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" क्षणवारमां सर्व वस्तुओपर आसक्ति अने क्षणवारमां विरक्ति, ए प्रमाणेनी कपिना जेवी चपलता अज्ञानवडेज प्राणीओ करे छे. " वळी-

माता वैरी पिता शत्रुः येन बाला न पाठिताः ।
सभामध्ये न शोभंते, हंसमध्ये बका यथा ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेणे पोताना बाळकोने भणाव्यां नथी ते मातापिता तेमना वैरी अने शत्रुज समजवा. केमके हंसोमां बगलानी जेम ते अज्ञानी पुत्रो विद्वाननी सभामां शोभता नथी. "

योगे करीने ज्ञाननी आशातना करे छे तेओ शरीरे रोगी तथा शून्य मनवाळा तेमज मुंगा विगेरे थाय छे, अने अनेक भवमां परिभ्रमण करे छे. कह्युं छे के—

अज्ञानतिमिरग्रस्ता, विषयामिषलंपटाः ।
भ्रमंति शतशो जीवा, नानायोनिषु दुःखिताः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अज्ञान रूपी अंधकारथी ग्रस्त अने विषय रूपी आमिष (मांस)मां लंपट एवा सेंकडो जीवो नाना प्रकारनी योनीमां दुःखीपणे परिभ्रमण करे छे."

इत्यादि धर्मदेशना सांभळीने सिंहदासे विज्ञप्ति करी के–" हे भगवन् ! मारी पुत्रीना शरीरमां कया कर्मथी व्याधिओ थई छे ! " त्यारे सूरि महाराज बोल्या के–" श्रेष्ठी ! तारी पुत्रीए पूर्व भवे बांधेलां कर्मोनो संबंध सांभळ–धातकी खंडमां खेटकपुर नामना नगरने विषे जिनदेव नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने सुंदरी नामे प्राणप्रिया हती. तेमने पांच पुत्रो तथा चार पुत्रीओ थइ हती. श्रेष्ठीए पांचे पुत्रोने भणवा माटे मोटा उत्सव पूर्वक अध्यापक पासे मूक्या. परंतु तेओ परस्पर चपलता,आलस अने अविनय करता सता त्यां रहेवा लाग्या. कह्युं छे के—

आरोग्यबुद्धिविनयोद्यमशास्त्ररागाः
पंचांतराः पठनसिद्धिकरा नराणाम् ।
आचार्यपुस्तकनिवाससहायवल्गा
बाह्याश्च पंच पठनं परिवर्धयन्ति ॥ १ ॥

भावार्थ—" आरोग्य, बुद्धि, विनय, उद्यम अने शास्त्रपर प्रीति–ए पांच आभ्यंतर कारणो मनुष्योना अभ्यासनी सिद्धि करनारां छे, अने अध्यापक, पुस्तक, निवास, सहाय तथा खावा पीवानी सगवड–ए पांच बाह्य कारणोथी विद्या वृद्धि पामे छे."

एकदा ते उन्मत्त छोकराओने पंडिते शीक्षा करी. अने " कंबाग्रे वसति विद्या " एटले " सोटीना अग्र भागने विषे विद्या वसे छे " एम विचारीने तेओने सोटी वती मार्या, तेथी तेओ रोता रोता घेर आव्या; अने सोटीथी शरीर उपर पडेला क्षतने पोतानी माने बताव्या. ते जोइने तेनी मा सुंदरी बोली के–" हे पुत्रो ! भणवाथी शुं विशेष छे ? केमके जन्म, जरा अने मृत्यु तो भणेल के अभण कोईने छोडता नथी." कह्युं छे के–

पठितेनापि मर्तव्यं, शठेनापि तथैव च ।
उभयोर्मरणं दृष्ट्वा, कंठशोषं करोति कः ॥ १ ॥

भावार्थ—" भणेलो माणस पण मृत्यु पामे छे अने मूर्ख पण मृत्यु पामे छे; ते बन्नेनुं मरण जोईने कयो माणस फोकट भणीने कंठनुं शोषण करे ?" वळी-

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पंडितः स श्रुतिमान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ते ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनी पासे द्रव्य छे ते पुरुष कुलीन छे, ते पंडित छे, ते शास्त्रनो जाणनार छे, ते गुणज्ञ छे, ते वक्ता छे अने तेज दर्शन करवा लायक छे. अर्थात सर्वे गुणो कंचननोज आश्रय करे छे. "

वळी धनवाळा महा मूर्ख माणसनी पासे पण पंडितो दैन्य वचनो बोले छे; वळी बहुधा पंडितो निर्धनज होय छे. माटे हे पुत्रो ! मूर्खताज श्रेष्ठ छे. तेथी हवे आजथी तमारे भणवा जवुं नहीं. कदाच तमारो महेताजी तमने तेडी जवा आवे तो तेने दूरथी पथ्थरवडे मारजो; अने तमने मार्यानुं फळ एक वखतमांज बतावी देजो. इत्यादि शीखामण आपीने पुत्रपरना रागथी अने ज्ञान परना द्वेषथी लेखण, पाटी, पुस्तक विगेरे सर्व अग्निमां नांखी बाळी दीधां.

एक दिवस आ व्यतिकर जाणीने श्रेष्ठीए पोतानी स्त्रीने कह्युं के-" हे भद्रे ! तें आवी मूर्खता भरेली चेष्टा केम करी ? आ मूर्ख रहेला पांचे पुत्रोनो विवाह अने उद्धार शी रीते थशे ?" कह्युं छे के-

क्षणं रक्ता विरक्ताश्च, क्षणं सर्वेषु वस्तुषु ।
अज्ञानेनैव कार्यंते प्राणिनः कपिचापलम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" क्षणवारमां सर्व वस्तुओपर आसक्ति अने क्षणवारमां विरक्ति, ए प्रमाणेनी कपिना जेवी चपलता अज्ञानवडेज प्राणीओ करे छे. " वळी-

माता वैरी पिता शत्रुः येन बाला न पाठिताः ।
सभामध्ये न शोभंते, हंसमध्ये बका यथा ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेणे पोताना बाळकोने भणाव्यां नथी ते मातापिता तेमना वैरी अने शत्रुज समजवा. केमके हंसोमां बगलानी जेम ते अज्ञानी पुत्रो विद्वाननी सभामां शोभता नथी. "

आ प्रमाणे सांभळीने सुंदरी हसीने बोली के-" तमे पंडित छो, तेथी शुं कर्युं ? शुं तमे जगतनुं दारिद्र्य काप्युं ? बाकी सुख तो पुण्यथीज मळे छे, कांई भणवा भणाववाना जंजालथी मळतुं नथी." आवुं मूर्खताभरेलुं पोतानी स्त्रीनुं भाषण सांभळीने श्रेष्ठीए ते वखत तो मौन धारण कर्युं. कह्युं छे के-

उपदेशो हि मूर्खाणां, प्रकोपाय न शांतये ।
पयःपानं भुजंगानां, केवलं विषवर्धनम् ॥ १ ॥

भावार्थ--" मूर्खने उपदेश आपवो, ते तेना क्रोधने माटेज थाय छे, शांतिने माटे थतो नथी. केमके सर्पने दूध पावाथी केवळ विषनीज वृद्धि थाय छे."

एक दिवसे श्रेष्ठीए पोतानी स्त्रीने कह्युं के-" हे प्रिया ! आपणा पुत्रोने कोइ कन्या आपतुं नथी. परंतु उलटां एम कहे छे के-"

मूर्खनिर्धनदूरस्थ, शूरमोक्षाभिलाषिणाम् ।
त्रिगुणाधिकवर्षाणामेषां कन्या न दीयते ॥ १ ॥

भावार्थ--" मूर्खने, निर्धनने, दूर देशमां रहेनारने, शूरवीरने, मोक्षना अभिलाषीने अने कन्यां करता त्रणगणी[1] उम्मरथी अधिक वयवाळाने कोई कन्या आपतुं नथी. माटे हे प्रिया ! तें आ पुत्रोनो अवतार व्यर्थ कर्यो." सुंदरी बोली के-" एमां मारो कांई पण दोष नथी, तमारोज दोष छे. केमके पुत्रो पितानी जेवा होय छे, अने पुत्रीओ मातानी जेवी होय छे." आ वचन सांभळीने श्रेष्ठीने क्रोध चड्यो एटले बोल्या के-" हे दुर्भागी ! हे पापणी ! हे शंखणी ! तुं मारा सामुं बोले छे !" सुंदरी बोली के-" हे मूर्ख ! पापी तो तारो बाप के जेणे कूतरानी पूंछडी जेवा वक्र बुद्धिवाळा तने उत्पन्न कर्यो." आ प्रमाणे सांभळी क्रोध पामेला श्रेष्ठीए तेने पथ्थर मार्यो ते तेना मर्मस्थानमां वागवाथी तत्काळ मरण पामी. हे शेठ ! ते सुंदरी मरीने तारे घेर पुत्रीपणे अवतरी छे. तेणे पूर्व भवे ज्ञाननी विराधना करवाथी ते आ भवमां घणुं दुःख भोगवे छे."

आ प्रमाणेनां गुरुनां वचनो सांभळीने गुणमंजरीने जातिस्मरण थयुं, तेथी ते बोली के-" हे भगवान ! आपनां वचनो सत्य छे. में पूर्व भवमां स्वेच्छाए वर्ती जे कर्म बांध्युं छे तेनुं आ फळ मने प्राप्त थयुं छे; ते विलाप करवाथी के खेद करवाथी नाश पामे तेम नथी." पछी श्रेष्ठीए गुरुने कह्युं के-" हे भगवन् !

[1] कन्या दश वर्षनी कहेवाय छे एटले त्रीश वर्षथी अधिक वयवाळाने.

जेणे व्याधिनुं आदान निदान कर्युं होय छे तेज तेनुं औषध पण बतावी शके छे. आपना विना अभ्यंतर कारण कोण जाणी शके तेम छे ? माटे हवे आपज कृपा करीने तेना निवारणनो उपाय बतावो." त्यारे गुरु बोल्या के–"हे श्रेष्ठी ! विधि पूर्वक ज्ञानपंचमीनुं आराधन करवाथी सर्व प्रकारनुं सुख प्राप्त थाय छे.ते विधि आ प्रमाणे छे.

कार्तिक शुदी पांचमने दिवसे ठवणी अथवा नांदीनुं स्थापन करीने तेनी सन्मुख आठ स्तुतिवडे देव वांदवा. पछी ज्ञानपंचमीनो तप अंगीकार करवानो आळावो गुरुमुखे सांभळीने ते तप अंगीकार करवुं. ते तप पांच वर्ष ने पांच महिना सुधी करवानो छे. ते तपने दिवसे बे वखत एटले सांज सवार प्रतिक्रमण करवुं, त्रिकाळ देववंदन करवुं, तथा उपवास करीने संपूर्ण पौषधव्रत ग्रहण करवुं; अने पांच मूळभेद तथा एकावन उत्तर भेदनां नाम ग्रहण पूर्वक एकावन लोगस्सनो कायोत्सर्ग करवो. ठवणी उपर पुस्तक स्थापीने तेनी एकावन प्रदक्षिणा देवी तथा एकावन खमासमण देवां, अने ते दिवसे नवुं शास्त्र भणवुं, भणाववुं तथा श्रवण करवुं. कह्युं छे के–

अपूर्वज्ञानग्रहणं महती कर्मनिर्जरा ।
सम्यग्दर्शननैर्मल्यात् कृत्वा तत्त्वप्रबोधतः ॥ १ ॥

भावार्थ—"अपूर्व ज्ञान ग्रहण करवाथी मोटी कर्मनी निर्जरा थाय छे; अने सम्यक् दर्शननी निर्मलता थवाथी तत्त्वनो पण बोध थाय छे."

ज्ञानपंचमीने दिवसे जो पोसह कर्यो न होय तो पाट उपर पुस्तकनी स्थापना करीने तेनी जमणी बाजु पांच दीवेटनो दीवो करवो तथा सन्मुख पांच स्वस्तिक (साथीया) करवा, ज्ञानना भंडारोनी पूजा करवी, ज्ञान द्रव्यनी वृद्धि करवी अने "ॐ ह्रीं नमो नाणस्स" ए मंत्रनो बेहजार[1] जाप करवो. आ प्रमाणे कदाच दर मासे करी शके नहीं, तो जीवन पर्यंत कार्तिक शुदी पांचमे तो जरुर ए प्रमाणे ज्ञाननी आराधना करवी. अथवा ते दिवसे जिनेश्वरनी पासे अने पुस्तकनी समीपे चैत्यवंदन करी शक्रस्तव कहीने "मतिज्ञानाराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं" एम कही वंदण० अने अन्नथ्थ० कही एक नवकारनो काउस्सग्ग करवो. पछी नमोर्हत्० कही नीचेनुं काव्य गंभीर स्वरथी बोलवुं.

अष्टाविंशतिभेदभिन्नगदितं ज्ञानं शुभाद्यं मतिः
सप्रज्ञाभिनिबोधिकश्रुतनिधेर्हेतुश्च बुद्धिप्रभे ।

१ वीश नोकारवाळी.

पर्यायाः कथिता इमे बहुविधा ज्ञानस्य चैकार्थिनः
सम्यग्दर्शनिसत्कमाप्तकथितं वंदामि तद्भावतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" पहेलुं मतिज्ञान अठावीश प्रकारनुं कहेलुं छे; ते शुभकारी छे, चार प्रकारनी प्रज्ञा सहित छे, आभिनिबोधिक छे, श्रुत ज्ञाननो हेतु छे. बुद्धि, प्रभा विगेरे तेना पर्यायो बहु प्रकारना कहेला छे. ते ज्ञान समकित-धारीने होय छे, एवा तीर्थंकरे कहेला मतिज्ञानने हुं भावथी वांदुं छुं. "

पछी चैत्यवंदन विगेरे पूर्वे कह्या प्रमाणे करीने श्रुतज्ञानाराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं कही वंदण० अन्नथ्थ कही एक नवकारनो काउसग्गा करी नीचेनुं काव्य भणवुं.

अन्यज्ज्ञानचतुष्टयं स्वविषयं नैवाभिधातुं क्षमं
श्रीमत्केवलिनोऽपि वर्णनिकरज्ञानेन तत्त्वं जगुः ।
स्पष्टं स्वात्मपरप्रबोधनविधौ सम्यक् श्रुतं सूर्यव-
द्भेदाः पूर्वमिताः श्रुतस्य गणिभिर्वंद्याः स्तुवे तान्मुदा ॥ २ ॥

भावार्थ—" श्रुतज्ञान शिवायनां बीजां चारे ज्ञान पोताना विषयने कहेवा समर्थ नथी. श्रीमान् केवळी पण वर्णसमुदायना ज्ञानवडेज तत्त्व जणावे छे. वळी सम्यग् श्रुत ज्ञानज सूर्यनी जेम पोताने तथा परने बोध करवामां स्पष्ट छे. ते ज्ञानना चौद भेद छे, अने तेने गणधरो वांदे छे. आवा श्रुत ज्ञाननी हुं हर्षथी स्तुति करुं छुं. "

पछी त्रीजुं चैत्यवंदन करीने " अवधिज्ञानाराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं " विगेरे पूर्वोक्त प्रकारे कही काउसग्ग पारी नीचेनुं काव्य भणवुं.

अल्पं तत्पनकावगाहनसमं चासंख्यलोकाभ्रगं
ज्ञानं स्यादवधेश्च रूपिविषयं सम्यग्दृशां तच्छुभम् ।
देवादौ भवप्राप्तिजं नृषु तथा तिर्यक्षु भावोद्भवं
षड् भेदाः प्रभुभिश्च यस्य कथिता ज्ञानं भजे तत्सदा ॥ ३ ॥

भावार्थ—" त्रीजुं अवधि ज्ञान जे छे तेनी अवगाहना जघन्य पनकना[१] जेटली छे, अने उत्कृष्टी असंख्य लोकाकाश प्रमाण छे, ते ज्ञान रूपी द्रव्यने

१ सूक्ष्म वनस्पति कायनुं शरीर.

जाणी शके छे; सम्यक्दृष्टि जीवने शुभकारी होय छे. ते देव तथा नारकीने भव प्रत्यये होय छे, अने मनुष्य तथा तिर्यंचने भाव थकी एटले गुण प्रत्यये उत्पन्न थाय छे. प्रभुए तेना छ भेद कह्या छे. एवा अवधि ज्ञानने हुं निरंतर भजुं छुं."

पछी चोथुं चैत्यवंदन करी "मनःपर्यवज्ञानाराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं" एम बोली बीजुं बधुं पूर्वोक्त प्रकारे कहीने नीचेनुं काव्य भणवुं.

साधूनामप्रमादतो गुणवंता तूर्यं मनःपर्यवं
ज्ञानं तद्विविधं त्वनिंद्रियभवत्तत्स्वात्मकं देहिनाम् ।
चेतोद्रव्यविशेषवस्तुविषयं द्वीपे च सार्धद्विके
सकृज्ज्ञानगुणांचितान् व्रतधरान् वंदे सुयोगैर्मुदा ॥ ४ ॥

भावार्थ—" अप्रमत्त गुणस्थाने रहेला साधुओने चोथुं मनःपर्यवज्ञान होय छे; तेना बे भेद छे, ते इंद्रियना विषयवाळुं नथी पण आत्मविषयी छे. अढीद्वीपमां रहेला प्राणीओनां चित्त द्रव्यमां रहेली सर्व वस्तुना विषयने जाणे छे. ते ज्ञानने धारण करनारा गुणी मुनिओने हुं हर्षथी भावे करीने वांदुं छुं."

पछी पांचमुं चैत्यवंदन करी "केवलज्ञानाराधनार्थं करेमि काउस्सग्गं" विगेरे सर्व पूर्वोक्त रीते कही नीचेनुं काव्य भणवुं.

निर्भेदं विशदं करामलकवज्ज्ञेयं परिच्छेदकं
लोकालोकविभासकं चरमचिन्नांत्यं व्रजेत्स्वात्मतः ।
निद्रास्वप्नसुजागरातिगदशं तूर्यां दशां संगतं
वंदे कार्तिकपंचमीसितदिने सौभाग्यलक्ष्म्यास्पदम् ॥ ५ ॥

भावार्थ—" छेल्लुं (पांचमुं) केवलज्ञान छे, ते एकज प्रकारनुं छे. करामलकनी जेवुं निर्मळ छे, सर्व वस्तुनो परिच्छेद करनारुं छे, लोक तथा अलोकने प्रकाश करनार छे, ज्ञानवाळाना आत्मा थकी कोई वखत पण प्राप्त थया पछी जूदुं पडतुंज नथी, अने जे ज्ञान निद्रा, स्वप्न अने जाग्रत ए त्रण दशाने उल्लंघीने चोथी उजागर दशाने पामेलुं छे. एवा सोभाग्य लक्ष्मीना स्थान रूप केवलज्ञानने हुं कार्तिक शुदी पंचमीने दिवसे वांदुं छुं."

आ प्रमाणे पांचे ज्ञाननी आराधनानो विधि जाणवो.

हवे ए रीते ६५ मास सुधी आराधन करवा पडे तप पूर्ण थाय त्यारे चैत्य- नां तथा ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनां उपयोगी दरेक उपकरणो पांच पांच मेळवीने उद्यापन करवुं. कह्युं छे के–

उद्यापनं यत्तपसः समर्थने तच्चैत्यमौलौ कलशाधिरोपणम् ।
फलोपरोपोऽक्षतपात्रमस्तके तांबूलदानं कृतभोजनोपरि॥१॥

भावार्थ—" तपना समर्थन माटे उद्यापन करवुं, ते चैत्यना शिखर पर कळश चडाववा जेवुं छे, अक्षत पात्र उपर फळ मूकवा जेवुं छे, अने भोजन करावीने तांबूल आपवा जेवुं छे. "

इत्यादि गुरुनो उपदेश सांभळीने गुणमंजरीए विधि पूर्वक ज्ञानपंचमीनुं तप अंगीकार कर्युं.

त्यार पछी अजीतसेन राजाए सूरिने पूछ्युं के–" हे स्वामी! मारा पुत्र वरदत्तने कया कारणथी कुष्टनो व्याधि थयो छे ? अने शा कारणथी अभ्यास कर्या छतां कांइ आवडतुं नथी ?" गुरुए कह्युं के–" तेनो पूर्व भव सांभळो—

आ भरतक्षेत्रमां **श्रीपुर** नामना नगरने विषे **वसु** नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने **वसुसार** अने **वसुदेव** नामना बे पुत्रो हता. तेओ एक दिवस क्रीडा करवाने माटे वनमां गया. त्यां गुरुना मुखथकी धर्मदेशना सांभळी. पछी घेर आवीने पितानी रजा लइने ते बन्ने भाइओए चरित्र ग्रहण कर्युं. तेमां नानो भाइ वसुदेव मुनि सिद्धांत रुपी समुद्रनो पारगामी थयो, अने अनुक्रमे आचार्यपद पाम्यो. ते हमेशां पांचशें साधुओने वांचना आपतो हतो. एक दिवस ते आचार्य संथारामां सुता हता, ते वखते कोइ मुनिए आगमनो अर्थ पूछ्यो. तेना गया पछी बीजा मुनि आव्या, ते पण अर्थ पूछीने गया. एम एक पछी एक घणा साधुओ आवी पूछी पूछीने गया. पछी आचार्यने कांईक निद्रा आवी, तेवामां वळी बीजा कोई साधुए आवीने पूछ्युं के– " हे पूज्य! आनी आगळनुं पद, वाक्य कहो अने तेनो अर्थ समजावो." त्यारे सूरिए मनमां विचार कर्यो के–" अहो! मारो मोटो भाइ तो सुखे सूवे छे, स्वेच्छाए भोजन करे छे, अने स्वेच्छाए बोले छे. आवुं सुख कोइ पण प्रकारे मने मळे तो सारुं. केमके–

मूर्खत्वं हि सखे ममापि रुचितं तस्मिन् यदष्टौ गुणा
निश्चिंतो बहुभोजनोऽत्रपमना नक्तंदिवा शायकः ।

---

१ उजमणुं.

कार्याकार्यविचारणांधबधिरो मानापमाने समः
प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुर्मूर्खः सुखं जीवति ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे मित्र ! मूर्खपणुं मने पण रुचे छे. केमके तेमां आठ गुणो रह्या छे. ते आ प्रमाणे–प्रथम तो मूर्खने कांइ पण चिंता होती नथी १. घणुं भोजन करे छे २. लज्जा रहित होय छे ३, रात्रिदिवस सुवानो वखत मळे छे ४. कर्तव्य तथा अकर्तव्यना विचारमां अंध तथा बधिर होय छे ५. मान तथा अपमानने विषे समान होय छे ६, घणुं करीने व्याधि रहित होय छे ७. अने शरीरे पुष्ट होय छे ८. माटे मूर्ख माणस सुखे जीवे छे. "

माटे मारे आजथी भणवा भणाववानुं कामज करवुं नहीं. आ प्रमाणेनो विचार करीने ते आचार्ये पुण्य रूपी अमृतनो भरेलो घडो भांगी नांख्यो, अने पापनो घडो भरीने बार दिवस सुधी मौन रह्या. पछी ते पापनी आलोचना कर्या विना रौद्रध्यानवडे मृत्यु पाम्या. ते आ तारा पुत्रपणे उत्पन्न थयेला छे, अने पूर्वे बांधेलां कर्मथी मूर्ख तथा कोढी थयेल छे. ते सूरिनो मोटो भाइ मरण पामीने मानससरोवरमां हंस थयो छे. "

आ प्रमाणे गुरु महाराजे कहेल पूर्व भव सांमळीने वरदत्तने जातिस्मरणज्ञान थयुं. एटले ते बोल्यो के–" अहो! भगवंततुं वचन अक्षरे अक्षर सत्य छे. अहो! केवुं ज्ञान ! " पछी राजाए कह्युं के–" हे भगवन् ! आ मारा पुत्रना रोगो शी रीते जशे ? " गुरुए कह्युं के–" पूर्वे कहेला विधि प्रमाणे यथाशक्ति पंचमी तप करवाथी सर्व सारुं थशे . " पछी कुमारे पण गुणमंजरीनी जेम विधि पूर्वक तप अंगीकार कर्युं. तेना आराधनथी ते बंनेना सर्व व्याधिओ नाश पाम्या.

वरदत्त कुमार स्वयंवरे आवेली एक हजार राजकन्याओने परण्यो, अने अनुक्रमे राज्यसुख भोगवी पोताना पुत्रने राज्य सोंपीने दीक्षा ग्रहण करी.

गुणमंजरी पण उत्तम सौंदर्य पामी. तेनुं पाणिग्रहण **जिनचंद्र** नामना श्रेष्ठिपुत्र साथे थयुं. तेणे घणा काळ सुधी संसारसुख भोगवी वीधि पूर्वक तपनुं उद्यापन करीने दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे वरदत्तने गुणमंजरी बन्ने काळ करीने **वैजयन्त** नामना अनुत्तर विमानमां उत्तम देवता थया.

आयुष्यना क्षये विजयंत विमानमांथी चवीने वरदत्तनो जीव जंबू द्वीपना विदेह क्षेत्रमां **पुंडरीकिणी** नगरीमां **अमरसेन** राजानी भार्या **गुणवती**नी कुक्षिमां **शूरसेन** नामे पुत्रपणे उत्पन्न थयो. युवावस्था पाम्ये सते ते सो राजकन्याओने परण्यो. तेना पिता तेने राज्य सोंपीने परलोकमां गया. एकदा

ते नगरीनी समीपना उद्यानमां श्री **सीमंधर स्वामी** समवसर्या; ते वात सांभळीने शूरसेन राजा त्यां गया, अने विधि पूर्वक भगवान्ने वांदीने देशना सांभळी. देशनामां भगवाने कह्युं के-" हे भव्य प्राणीओ ? सौभाग्य पंचमी एटले ज्ञानपंचमीनुं तप वरदत्तनी जेम करवुं. " ते सांभळीने शूरसेन राजाए पूछ्यूं के-" हे भगवन् ! आपे जेनी प्रशंसा करी ते वरदत्त कोण हतो ? " त्यारे भगवाने तेनुं सर्व वृत्तांत कह्युं. ते सांभळीने राजा हर्षित थयो. पछी ते भवमां पण तेणे घणा पौर जनो सहित ज्ञानपंचमीनुं व्रत अंगीकार कर्युं. दश हजार वर्ष सुधी राज्यनुं प्रतिपालन कर्या पछी पोताना पुत्रने राज्य सोंपी पोते सीमंधर स्वामी पासे चारित्र ग्रहण कर्युं. ते राजर्षि एक हजार वर्ष सुधी विधि पूर्वक चारित्र पाळी केवळज्ञान प्राप्त करीने मोक्षे गया.

हवे गुणमंजरीनो जीव वैजयन्त विमानमांथी चवीने जंबूद्वीपना महाविदेह क्षेत्रमां **रमणी** नामना विजयमां **अमरसिंह** राजानी पत्नी **अमरवतीना** गर्भमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. प्रसव थया बाद पिताए तेनुं **सुग्रीव** नाम पाड्युं. ते वीश वर्षनो थयो त्यारे तेने राज्य सोंपीने तेना पिताए दीक्षा ग्रहण करी.

सुग्रीव राजाए घणी राजकन्याओनुं पाणिग्रहण कर्युं. तेने चोराशी हजार पुत्रो थया. पछी तेणे पुत्रने राज्य आपीने दीक्षा ग्रहण करी यथाविधि चारित्र पाळवा वडे अने तप वडे तेमणे केवळज्ञान प्राप्त कर्युं. देशनामां सर्वत्र पोतानुं चरित्र कहेवा लाग्या. आ प्रमाणे ते राजर्षि एक लाख पूर्व सुधी चारित्रनुं सेवन करीने प्रांते परम ज्ञानमय, चिद्रूप, चिदानंद अने चित् घन, एवा मोक्ष प्रत्ये पाम्या.

" जे ज्ञानपंचमीनुं आराधन करवाथी वरदत्त तथा गुणमंजरीने बन्ने प्रकारनी सौभाग्य लक्ष्मी प्राप्त थइ ते ज्ञानपंचमी जेवो बीजो कोइ पण दिवस ज्ञाननी वृद्धि करवामां श्रेष्ठ नथी; माटे आत्मानुं हित इच्छनार पुरुषोए विधि पूर्वक ज्ञानपंचमीनुं आराधन करवुं. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य द्वापंचदशाधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१५ ॥

व्याख्यान २१६ मुं.

अभय दान विषे.

अभयं सर्वसत्त्वेभ्यो यो ददाति दयापरः ।
तस्य देहाद्विमुक्तस्य भयं नास्ति कुतश्चन ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे दयाळु मनुष्य सर्व प्राणीओने अभय दान आपे छे ते मनुष्य देहथी मुक्त थाय अर्थात् मृत्यु पामे त्यारे पण तेने कोइथी भय रहेतो नथी."

अभय दान उपर दृष्टांत.

जयपुर नामना नगरमां धना नामनो एक माळी रहेतो हतो. तेणे बेइंद्री एवा पांच पूरानुं दयाथी रक्षण कर्युं. अनुक्रमे ते माळी मरीने कुलपुत्र थयो. बाल्यावस्थामांज तेना माबाप मरी गया, तेथी ते परदेश जवा नीकळ्यो. रस्तामां रात्रिनो समय थवाथी ते कोइ अरण्यमां एक वटवृक्षनी नीचे रात्रिवासो रह्यो. ते वृक्ष उपर पांच यक्षो रहेता हता. तेओए तेने दीठो, एटले ज्ञानवडे " आ आपणो पूर्व भवनो उपकारी छे " एम ओळखीने तेओए तेने कह्युं के-" तने आजथी पांचमे दिवसे राज्य मळशे. " एवुं सांभळीने ते कुळपुत्र खुशी थयो. प्रातःकाळे त्यांथी चालतां ते पांचमे दिवसे वाराणसी नगरीए जइ पहोंच्यो. त्यांनो नरपाळ नामनो राजा पुत्ररहित मरण पाम्यो हतो. तेनुं राज्य तेने मळ्युं. पछी ते प्रधान उपर राज्यनो भार आरोपण करीने सुखमांज मग्न रहेवा लाग्यो. अन्यदा सीमाडाना राजाओ तेनुं राज्य उच्छेदन करवा माटे चडी आव्या, त्यारे प्रधाने आवीने तेने द्यूतक्रीडा करतां अटकावी ते वात करी अने द्यूत तजी दइ लडाइ करवामाटे आववा कह्युं, पण तेणे मान्युं नहीं. पछी तेनी स्त्रीए पण रमतमां पासा नांखतां अटकवानुं कह्युं त्यारे ते बोल्यो के—

स वटः पंच ते यक्षाः, ददंति च हरंति च ।
अक्षान् पातय कल्याणि, यद्भाव्यं तद्भविष्यति ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे कल्याणी ! वट वृक्ष पर रहेला ते पांच यक्षोए राज्य आप्युं छे, अने तेने लेवुं हशे तो लइ लेशे, माटे हे स्त्री ! तुं तारे पासा नांख, जे थवानुं हशे ते थशे. "

आ प्रमाणे कह्युं, एटले ते यक्षोए ते शत्रुओने बांधी लावीने तेने पगे लगाड्या. ते जोइने लोको घणुं आश्चर्य पाम्या.

एक दिवस ज्ञानी गुरुनो समागम थवाथी राजाए पोतानो पूर्व भव पूछयो. तेना उत्तरमां गुरुए कह्युं के–" पूर्व भवमां तें पांच पूरानुं रक्षण कर्युं हतुं. ते पांचे मरीने अनुक्रमे यक्षो थया छे; तेओएज तारा राज्यनुं रक्षण कर्युं छे. " एवुं सांभळीने ते राजाए वाव, कूवा, तलाव विगेरे जळाशयोमां गळणीओ मुकावी, अने सर्वत्र अमारी घोषणा करावी.

हवे जे पापी मनुष्यो मांस खाय छे तेना प्रत्ये उपदेश करे छे के– एकदा श्रेणिक राजाए सभामां पूछयुं के–" हालमां आपणा नगरने विषे कइ वस्तु सौथी सोंघी छे ? " त्यारे निर्दय एवा क्षत्रियो बोल्या के–" हे महाराजा ! हालमां मांस सस्तुं छे. " आ प्रमाणे सांभळीने अभयकुमार मंत्रीए चिंतव्युं के–" आजे हुं आ लोकोनी परीक्षा करुं के जेथी फरीने आवुं बोले नहीं. " एम विचारी रात्रिने वखते अभयकुमार सर्व क्षत्रियोने घेर पृथक् पृथक् गयो, अने तेमने कह्युं के–" हे राजपुत्रो ! आजे राजाने महा व्याधि उत्पन्न थयो छे; वैद्योए घणा प्रकारनी औषधीओ आपी पण कांइ फेर पड्यो नहीं, तेथी तेमणे कह्युं छे के ' जो मनुष्यना कलेजानुं मात्र बे टांक जेटलुं मांस मळे तो राजा जीवे तेम छे, नहीं तो मरी जशे; माटे तमे तेना ग्रासमांथी आजीविका करनार छो, तो शुं एटलुं काम पण नहीं करो? " आ प्रमाणे सांभळी जेने त्यां प्रथम गयो ते रजपुत बोल्यो के–"हजार महोर लइने मने तो छोडो, अने बीजे ठेकाणे जाओ. " त्यारे अभयकुमारे तेटलुं द्रव्य लीधुं; अने बीजे स्थळे जइने त्यां पण ते प्रमाणे ज कह्युं, त्यारे तेणे पण हजार सोना महोर आपी, पण मांस आप्युं नहीं. एवी रीते सर्व स्थळे भमतां भमतां आखी रात्रि निर्गमन करीने एक लाख सोना महोर एकठी करी. पछी प्रातःकाळे सभामां आवी सर्व क्षत्रियोने ते द्रव्य देखाडीने अभयकुमार बोल्यो के–"हे क्षत्रियो ! तमे बोल्या हता के हालमां मांस सौथी सस्तुं छे, परंतु मने तो आटला बधा द्रव्यथी पण बे टांक मांस मळ्युं नहीं. " ते सांभळीने सर्वे क्षत्रियो लज्जित थइने मौन रह्या. त्यारे अभयकुमार बोल्यो के–" सर्वने पोतानो आत्मा वहालो होय छे. तमे मात्र पारका मांसना लोलुपी थइने एवुं अन्यथा वाक्य बोल्या छो. कह्युं छे के–

अमेध्यमध्ये कीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये ।
समाना जीविताकांक्षा, समं मृत्युभयं द्वयोः ॥ १ ॥

भावार्थ—" विष्टामां रहेला कीडाने अने स्वर्गमां रहेला सुरेन्द्रने जीवितानी आकांक्षा सरखीज छे; अने ते बन्नेने मृत्युनो भय पण सरखोज छे. " वळी

दुर्योनिमपि संप्राप्तः प्राणी मर्तुं न वांछति ।
स्वादुवन्तो भवन्ति स्वस्वाहाराः कुक्षितावपि ॥ २ ॥

भावार्थ—" दुष्ट योनिमां जन्मेलो जंतु पण मरवाने इच्छतो नथी. केमके खराब पृथ्वीमां पण प्राणीओने पोतपोताना आहार स्वादवाळाज लागे छे." वळी जे मनुष्य हिंसा करे छे ते अति दुःखी थाय छे. जेम–

गोपो बब्बूलशूलाग्रे, प्रोतयूकोत्थपातकात् ।
अष्टोत्तरशतं वारान्, शूलिकारोपणान्मृतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" एक गोवाळे बावळनी शूळ उपर जू परोवी हती, ते पापथी ते गोवाळ एकसो ने आठ वार शूळीए चडवानी शिक्षाथी मरण पाम्यो. " तेनुं दृष्टांत आ प्रमाणे–

नागपुर नामना नगरमां **माधव** नामे एक गोवाळ रहेतो हतो. ते एक दिवस गायो चारवा माटे मोटा अरण्यमां गयो. त्यां सूर्यनो प्रचंड ताप लागवाथी एक बावळना वृक्ष नीचे बेठो, तेवामां तेना माथामांथी एक जू तेना खोळामां पडी. ते जोइने ते निर्दय गोवाळे तेने " आ जू मारा देहनुं सत्व (लोही) पी जाय छे. " एम विचारीने बावळनी तीक्ष्ण शूळ उपर परोवी. ते पापना उदयथी तेज भवमां ते गोवाळ चोरीना गुन्हामां आवी शूळीनी शिक्षा पामीने मरण पाम्यो. त्यार पछी ते एज प्रमाणे एकसो ने सात वार जूदा जूदा भवोमां चोरी विगेरेना दोषथी शूळीनुं दुःख भोगवीने मरण पाम्यो. एकसो सातमा भवमां ते पापकर्मनो उदय थोडो रह्यो, त्यारे तेणे तापसी दीक्षा ग्रहण करी; अने सदा वनमां रहीने सुकां पांदडां, फळ, फूल विगेरेनुं भक्षण करवा लाग्यो. ए प्रमाणे निःसंगपणे व्रतनुं पालन करतां तेने विभंग ज्ञान उत्पन्न थयुं. अन्यदा ते अरण्यनी नजीकना नगरमांथी राजाना अलंकारोनी पेटी कोइ चोरे उपाडी. तेने पकडवा माटे राजाना सिपाइओ पाछळ दोड्या. तेओने पाछळ आवतां जोइने चोरे ते रत्नालंकारनी पेटी अरण्यमां पेला तापस पासे मूकी अने ते वट वृक्ष उपर चडी गयो. सिपाइओ त्यां आव्या, तो तापस सुतेलो हतो, अने पासे पेटी पडेली हती. तेओ पेटी सहित तापसने पकडीने राजा पासे लइ गया. तापस विभंग ज्ञानथी सर्व हकीकत जाण्या छतां पोताना पूर्वकृत कर्मने निंदतो सतो मौनज रह्यो. अन्यायी राजाए तेने शूळी पर चडाव्यो; पूर्व कर्मना क्षयथी ते मरण पामीने देवता थयो.

इति अभयदाने दृष्टांतः–

एक दिवस ज्ञानी गुरुनो समागम थवाथी राजाए पोतानो पूर्व भव पूछ्यो. तेना उत्तरमां गुरुए कह्युं के-" पूर्व भवमां तें पांच पूरानुं रक्षण कर्युं हतुं. ते पांचे मरीने अनुक्रमे यक्षो थया छे; तेओएज तारा राज्यनुं रक्षण कर्युं छे. " एवुं सांभळीने ते राजाए वाव, कूवा, तलाव विगेरे जळाशयोमां गळणीओ मुकावी, अने सर्वत्र अमारी घोषणा करावी.

हवे जे पापी मनुष्यो मांस खाय छे तेना प्रत्ये उपदेश करे छे के- एकदा **श्रेणिक** राजाए सभामां पूछ्युं के-" हालमां आपणा नगरने विषे कइ वस्तु सौथी सोंघी छे ? " त्यारे निर्दय एवा क्षत्रियो बोल्या के-" हे महाराजा ! हालमां मांस सस्तुं छे. " आ प्रमाणे सांभळीने **अभयकुमार** मंत्रीए चिंतव्युं के-" आजे हुं आ लोकोनी परीक्षा करुं के जेथी फरीने आवुं बोले नहीं. " एम विचारी रात्रिने वखते अभयकुमार सर्व क्षत्रियोने घेर पृथक् पृथक् गयो, अने तेमने कह्युं के-" हे राजपुत्रो ! आजे राजाने महा व्याधि उत्पन्न थयो छे; वैद्योए घणा प्रकारनी औषधीओ आपी पण कांइ फेर पड्यो नहीं, तेथी तेमणे कह्युं छे के ' जो मनुष्यना कलेजानुं मात्र बे टांक जेटलुं मांस मळे तो राजा जीवे तेम छे, नहीं तो मरी जशे; माटे तमे तेना ग्रासमांथी आजीविका करनार छो, तो शुं एटलुं काम पण नहीं करो? " आ प्रमाणे सांभळी जेने त्यां प्रथम गयो ते रजपुत बोल्यो के-"हजार महोर लइने मने तो छोडो, अने बीजे ठेकाणे जाओ. " त्यारे अभयकुमारे तेटलुं द्रव्य लीधुं; अने बीजे स्थळे जइने त्यां पण ते प्रमाणे ज कह्युं, त्यारे तेणे पण हजार सोना महोर आपी, पण मांस आप्युं नहीं. एवी रीते सर्व स्थळे भमतां भमतां आखी रात्रि निर्गमन करीने एक लाख सोना महोर एकठी करी. पछी प्रातःकाळे सभामां आवी सर्व क्षत्रियोने ते द्रव्य देखाडीने अभयकुमार बोल्यो के-"हे क्षत्रियो ! तमे बोल्या हता के हालमां मांस सौथी सस्तुं छे, परंतु मने तो आटला बधा द्रव्यथी पण बे टांक मांस मळ्युं नहीं. " ते सांभळीने सर्वे क्षत्रियो लज्जित थइने मौन रह्या. त्यारे अभयकुमार बोल्यो के-" सर्वने पोतानो आत्मा वहालो होय छे. तमे मात्र पारका मांसना लोलुपी थइने एवुं अन्यथा वाक्य बोल्या छो. कह्युं छे के-

अमेध्यमध्ये कीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये ।
समाना जीविताकांक्षा, समं मृत्युभयं द्वयोः ॥ १ ॥

भावार्थ-" विष्टामां रहेला कीडाने अने स्वर्गमां रहेला सुरेन्द्रने जीववानी आकांक्षा सरखीज छे; अने ते बन्नेने मृत्युनो भय पण सरखोज छे. " वळी

दुर्योनिमपि संप्राप्तः प्राणी मर्तुं न वांछति ।
स्वादुवन्तो भवन्ति स्वस्वाहाराः कुक्षितावपि ॥ २ ॥

भावार्थ—" दुष्ट योनिमां जन्मेलो जंतु पण मरवाने इच्छतो नथी. केमके खराब पृथ्वीमां पण प्राणीओने पोतपोताना आहार स्वादवाळाज लागे छे. " वळी जे मनुष्य हिंसा करे छे ते अति दुःखी थाय छे. जेम-

गोपो बब्बूलशूलाग्रे, प्रोतयूकोत्थपातकात् ।
अष्टोत्तरशतं वारान्, शूलिकारोपणान्मृतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" एक गोवाळे बावळनी शूळ उपर जू परोवी हती, ते पापथी ते गोवाळ एकसो ने आठ वार शूळीए चडवानी शिक्षाथी मरण पाम्यो. " तेनुं दृष्टांत आ प्रमाणे-

नागपुर नामना नगरमां **माधव** नामे एक गोवाळ रहेतो हतो. ते एक दिवस गायो चारवा माटे मोटा अरण्यमां गयो. त्यां सूर्यनो प्रचंड ताप लागवाथी एक बावळना वृक्ष नीचे बेठो, तेवामां तेना माथामांथी एक जू तेना खोळामां पडी. ते जोइने ते निर्दय गोवाळे तेने " आ जू मारा देहनुं सत्व (लोही) पी जाय छे. " एम विचारीने बावळनी तीक्ष्ण शूळ उपर परोवी. ते पापना उदयथी तेज भवमां ते गोवाळ चोरीना गुन्हामां आवी शूळीनी शिक्षा पामीने मरण पाम्यो. त्यार पछी ते एज प्रमाणे एकसो ने सात वार जूदा जूदा भवोमां चोरी विगेरेना दोषथी शूळीनुं दुःख भोगवीने मरण पाम्यो. एकसो सातमा भवमां ते पापकर्मनो उदय थोडो रह्यो, त्यारे तेणे तापसी दीक्षा ग्रहण करी; अने सदा वनमां रहीने सुकां पांदडां, फळ, फूल विगेरेनुं भक्षण करवा लाग्यो. ए प्रमाणे निःसंगपणे व्रतनुं पालन करतां तेने विभंग ज्ञान उत्पन्न थयुं. अन्यदा ते अरण्यनी नजीकना नगरमांथी राजाना अलंकारोनी पेटी कोइ चोरे उपाडी. तेने पकडवा माटे राजाना सिपाइओ पाछळ दोड्या. तेओने पाछळ आवतां जोइने चोरे ते रत्नालंकारनी पेटी अरण्यमां पेला तापस पासे मूकी अने ते वट वृक्ष उपर चडी गयो. सिपाइओ त्यां आव्या, तो तापस सुतेलो हतो, अने पासे पेटी पडेली हती. तेओ पेटी सहित तापसने पकडीने राजा पासे लइ गया. तापस विभंग ज्ञानथी सर्व हकीकत जाण्या छतां पोताना पूर्वकृत कर्मने निंदतो सतो मौनज रह्यो. अन्यायी राजाए तेने शूळी पर चडाव्यो; पूर्व कर्मना क्षयथी ते मरण पामीने देवता थयो.

इति अभयदाने दृष्टांतः--

आ जगतमां दानना पांच प्रकार छे ते आ प्रमाणे–

अभयं सुपत्तदाणं अणुकंपा उचिय कित्तिदाणं च ।
दोहिंपि मुरको भणिओ, तिन्नि भोगाइ दियंति ॥ १ ॥

भावार्थ—" अभय दान, सुपात्र दान, अनुकंपा दान. उचित दान अने कीर्त्ति दान, ए पांच प्रकारनां दान छे. तेमां पहेला बे प्रकारनां दान मोक्षने आपनार छे, अने पाछला त्रण प्रकारनां दान सांसारिक सुखभोग आपनार छे. "

तेमां पहेलुं हनन बंधन विगेरेना भयथी भयभीत थयेला जंतुओना प्राणनुं रक्षण करीने तेमने निर्भय करवा ते अभय दान कहेवाय छे. तेनुं स्वरूप उपर कहेवामां आव्युं छे.

बीजुं सुपात्र दान तेमां सु एटले सारुं, अने पात्र एटले ज्ञानादि त्रण रत्ननुं स्थान. अथवा सु एटले अतिशये करीने अने पात्र एटले पापथी रक्षण करनार. आ प्रमाणे अन्वर्थ संज्ञावाळुं सुपात्र दान दुर्लभ छे.

त्रीजुं अनुकंपा दान एटले दीन अने दुःखी लोकोने पात्र तथा अपात्रनो विचार कर्या विना मात्र दयावडे अन्नादिक आपवुं ते. कह्युं छे के—

दानकाले महेभ्यानां किं पात्रापात्रचिंतया ।
दीनाय देवदुष्यार्धं यथादात् कृपया प्रभुः ॥ १ ॥

भावार्थ—" दातारने दान देती वखते पात्र तथा अपात्रनो विचार शुं काम करवो ? जुओ, महावीर भगवाने कृपाथी अर्धुं देवदूष्य गरीब (ब्राह्मण) ने आप्युं छे. "

आ दुषम काळने विषे जगडुशा नामना श्रावके नीचेना श्लोकमां लख्या प्रमाणे धान्यना मुंडा[1] मात्र दयावडे बीजा राजाओने आप्या हता.

अठ य मुंडसहस्स विसलरायस्स बार हम्मीरे ।
इगवीसय सुरत्ताणे दुब्भिरके जगडुसाहुणा दिन्ना ॥ १ ॥

भावार्थ—जगडुशाह नामना श्रावके दुकाळना वखतमां विसल राजाने आठ हजार मुंडा, हमीर राजाने बार हजार मुंडा अने दील्हीना सुलताननने एकवीश हजार मुंडा धान्य आप्युं हतुं.

---

1 धान्यनुं एक प्रकारनुं माप.

नवकरवालि मणिअडा, ते पर अलगा चार ।
दानशाला जगडुतणी, दीसे पुढवी मुझार ॥

अर्थात्–ते दुकाळना वखतमां जगडुशाहे ११२ दानशाळाओ स्थापी हती. दररोज प्रभातकाळे जगडुशाह जे ठेकाणे बेसीने यथेष्ट दान आपता हता त्यां कोइ लज्जावान कुलवीओ विगेरे प्रगटपणे दान लइ शके नहीं तेमने प्रच्छन्नपणे दान आपवा सारु एक पडदो बांधी राखवामां आवतो हतो के जेथी तेओ तेमां हाथ नांखीने दान लइ शके. एक दिवस विसल राजा पोताना भाग्यनी परीक्षा करवा माटे वेष बदलीने एकलो त्यां गयो, अने पडदामांथी हाथ लांबो कर्यो. जगडुशाए शुभ लक्षणवाळो भाग्यशाळी हाथ जोइने विचार्युं के "जगतना मनुष्योने मानवा लायक कोइ राजानो आ हाथ छे; हालमां दैवयोगे ते आवी स्थिति पामेलो जणाय छे. माटे ते जींदगी पर्यंत सुखी थाय तेम हुं करुं." ए प्रमाणे विचारीने पोताना हाथनी आंगळीमांथी मणिजडित्र मुद्रिका (वींटी) काढीने हाथमां मूकी. ते जोइने राजा आश्चर्य पाम्यो. क्षणवार पछी वळी तेणे डाबो हाथ पडदामांथी लांबो कर्यो, एटले जगडुशाए ते हाथमां पण बीजी वींटी आपी. ते बन्ने मुद्रिका लइने विसल राजा पोताना महेलमां गयो. बीजे दिवसे जगडुशाने बोलावीने "आ शुं छे?" एम कहीने ते बन्ने मुद्रिका बतावी. ते जोइने जगडुशा बोल्या के–

सर्वत्र वायसाः कृष्णाः, सर्वत्र हरिताः शुकाः ।
सर्वत्र सुखिनां सौख्यं, दुःखं सर्वत्र दुःखिनाम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"कागडाओ सर्वत्र काळाज होय छे, पोपटो सर्वत्र लीलाज होय छे, सुखी पुरुषोने सर्वत्र सुख होय छे, अने दुःखी पुरुषोने सर्वत्र दुःख होय छे."

आ प्रमाणे सांभळीने खुशी थयेला राजाए जगडुनो प्रणाम निषेधं[1] करीने तेने हाथी उपर बेसाडी तेने घेर मोकल्यो. आ प्रमाणे धार्मिकपणुं अनुकंपा दानवडेज शोभे छे. ए त्रीजुं अनुकंपा दान कह्युं.

हवे चोथुं उचित दान कहे छे– योग्य अवसरे इष्ट अतिथि (प्राहुणा)ने, देवगुरुना आगमननी तथा नवा करेला प्रासादनी अने बिंबनी वधामणी आपनारने, तेमज काव्य, श्लोक, कोइ सुभाषित के विनोदवाळी कथा विगेरे कहेनारने प्रसन्न चित्तथी जे दान आपवुं ते उचित दान कहेवाय छे. जेम चंक्रवर्ती निरंतर

---

१ जगडुए राजाने प्रणाम करवो नहीं.

प्रभातकाळे विहार करता तीर्थंकरनी स्थितिना खबर आपनारने वर्षासन आपे छे. कह्युं छे के– बार कोटी सुवर्ण अथवा बार लाख द्रव्य अथवा छ लाख द्रव्य एटलुं चक्रवर्ती एक वखते प्रीति दानमां आपे छे. सांप्रत काळमां पण श्रीसिद्धाचळ उपर प्रासाद पूरो थयानी वधामणी आपनारने **वाग्भट्ट** मंत्रीए सुवर्णनी बत्रीश जीभो आपी हती.

एकदा **जुनागढनो खेंगार** नामनो राजा शीकार करवा गयो हतो, त्यां घणा ससलाओनो वध करी तेने घोडाना पुंछडा साथे बांधीने पाछो आवतां ते मार्गेथी तेमज परिवारथी भ्रष्ट थयो, अर्थात् एकलो भूलो पड्यो. तेवामां एक बावळना वृक्षनी शाखा उपर चडीने बेठेला **ढुंढण** नामना चारणने जोइने तेने पूछयुं के–" अरे! तुं मार्ग जाणे छे?" त्यारे ते दयाळु चारणे कह्युं के– (भाषा)

> जीव वधंता नरग गइ, अवधंता गइ सग्ग ।
> हुं जाणुं दो वाटडी, जिण भावे तिण लग्ग ॥ १ ॥

अर्थ––" जीवनो वध करनार नर्के जाय छे अने दया पाळनारा स्वर्गे जाय छे; हुं तो ए बे मार्ग जाणुं छुं. तने गमे ते मार्गे जा."

आ प्रमाणे वेध करे तेवी दूध जेवी तेनी वाणी सांभळीने ते राजाने तत्काळ विवेक उत्पन्न थयो. तेथी तेणे त्यांज जीवन पर्यंत प्राणीवध करवानो नियम ग्रहण कर्यो. तथा ते चारणनो अश्वो तथा गाम विगेरे आपीने गुरुनी जेम सत्कार कर्यो.

विक्रम राजाए **सिद्धसेन** गुरुने मन वडे प्रणाम कर्यो, ते जाणीने गुरुए तेने धर्मलाभ आप्यो. राजाए पूछयुं के–" हे पूज्य गुरु! आ धर्मलाभे करीने शुं थाय?" त्यारे गुरुए कह्युं के–

> दुर्वारा वारणेन्द्रा जितपवनजवा वाजिनः स्यंदनौघा
> लीलावत्यो युवत्यः प्रचलितचमरैर्भूषिता राज्यलक्ष्मीः ।
> उच्चैः श्वेतातपत्रं चतुरुदधितटीसंकटा मेदिनीयं
> प्राप्यन्ते यत्प्रभावात्त्रिभुवनविजयी सोऽस्तु ते धर्मलाभः॥१॥

भावार्थ–" जेना प्रभावथी मदोन्मत्त हस्तीओ, पवनना वेगने जीतनारा घोडाओ, रथना समूह, विलासवाळी स्त्रीओ, चलायमान श्वेत चामरोथी शोभती राज्यलक्ष्मी, मोटुं श्वेत छत्र अने चार समुद्र पर्यंतनी समग्र पृथ्वी प्राप्त थाय छे तेवो त्रिभुवनने जीतनारो धर्मलाभ रूप आशीर्वाद तने हो."

आ प्रमाणे सूरिनां वचन सांभळी तेमना गुणथी हर्ष पामेला राजाए तेमने एक करोड सोनामहोर आपी, परंतु सूरि निःस्पृह होवाथी तेमणे ते धर्मस्थानमां स्थापन करावी.

इत्यादि अनेक दृष्टांतो उचित दान संबंधी जाणवां.

हवे कीर्ति दान एटले कीर्ति वडे करीने भिक्षुकादिकने जे दान आपवुं ते कहे छे. तेनां दृष्टांतो नीचे प्रमाणे–

एकदा सपादलक्ष देश (माळवा) नो अधिपति **अर्ण** नामना राजा उपर दिग्विजय माटे नीकळेला **कुमारपाळे** चडाइ करी, ते वखते घोडाना पलाणने स्वारो पासे पुंजाव्या. ते जोइने तेनी साथेना बोंतेर सामंतराजाओए मश्करी करी के–" आ वाणीया जेवो कुमारपाळ लडाइमां शुं (सामर्थ्य) करशे ? " आवो तेओनो अभिप्राय जाणीने कुमारपाळे सोळ मण सोपारीनी गोणी मार्गमां पडी हती, तेने भालाना अग्र भागवडे उंची करीने उछाळी अने लोढाना सात मोटां कडायांने परस्पर अथडावीने लोढाना भालावडे फोडी नांख्यां. ते अवसरे योग्य वचन बोलवामां चतुर एवा **आम्रभटे** कह्युं के–

> रे रखे लहु जीवडा, रणे मयगळ मारे;
> न पीये अणगळनीर, लेही राय संहारे;
> अवर न बंधे कोइ, सधर रयणायर बंधे;
> वगे राय परमार, अपर राय निरुंधे;
> ए कुमारपाळ कोपे चड्यो, फाडी सात कडाह;
> तीम जे जिणधम्म न मन्नशे, तेहनी तेहवी चाड ॥ १ ॥

आ कवित सांभळीने राजाए तेने कवितना प्रत्यक्षरे अर्थात् अक्षर जेटला घोडा आप्या.

एकदा कुमारपाळ राजा **श्रीहेमाचार्य** गुरुने द्वादश आवर्त पूर्वक वंदन करीने खमावता हता ते वखते गुरुए तेना पृष्ठ उपर हाथ मूक्यो. ते जोइने **गागलि** नामनो कवि बोल्यो–

> हेम तुमारा करमहीं, दीसे अद्भुत सिद्धि;
> जे चंपे हेठा मुहा, ते पामे हरी सम ऋद्धि ॥ १ ॥

आ दुहो सांभळी कुमारपाळे तेने पोताना हाथनां कडां आप्यां. इत्यादि अनेक प्रबंधो कीर्ति दान उपर जाणी लेवा.

" सुपात्र दान ने अभय दानथी मुक्ति पामे, अनुकंपा दानथी सुख पामे, उचित दानथी प्रशंसा पामे अने कीर्त्ति दानथी सर्वत्र मोटाइ पामे. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य षोडदशाधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१६ ॥

व्याख्यान २१७ मुं.

दान धर्मनी देशना.

श्राद्धानां पात्रभक्तानां, कार्पण्यदोषमुक्तये ।
देशना दानधर्मस्य, देया तीर्थहितेच्छुभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" सुपात्रनी भक्ति करनारा श्रावकोने कृपणता रूपी दोषनुं निवारण करवा माटे तीर्थना हितेच्छु साधुओए दानधर्मनी देशना आपवी. "

ते दानधर्मनी देशना नीचे प्रमाणे—

कालेऽल्पमपि पात्राय, दत्तं भूयोभवेद्यथा ।
जिनाय चंदना दत्ताः कुल्माषाः कल्मषच्छिदे ॥ २ ॥

भावार्थ—" योग्य समये सुपात्रने थोडुं पण दान आप्युं होय तो ते मोटुं फळ आपे छे. जेम चंदनबाळाए वीर भगवानने अडदना बाकळा आप्या, ते तेना पापनो नाश करनार थया. "

श्रीवीर भगवाने करेलो अभिग्रह छ मासे पूरो थयो ते वखते देवोए साडा बार करोड सुवर्णनी वृष्टि करी, तेनाथी धनावह श्रेष्ठीनुं घर भराइ गयुं, ते जोइने तेनी पडोशमां रहेनारी एक डोशीए विचार्युं के—" मात्र अडदना बाकळा आपवाथी दुर्बळ तपस्वी जो आटली बधी समृद्धि आपे छे, तो हुं कोइ पुष्ट अंगवाळा मुनिने घी तथा साकर सहित परमान्नवडे संतोष पमाडीने अपार लक्ष्मी ग्रहण करुं. " पछी ते कोइ रुष्टपुष्ट शरीरवाळा मुनिवेश धारीने बोलावी क्षीरनुं दान देती सती वारंवार आकाश सामुं जोवा लागी; ते जोइने पेला वेशधारी साधुए ते डोशीनो अभिप्राय जाणीने तेने कह्युं के—" हे मुग्धा! मारा तप वडे अने तारा भाववडे तेमज आधाकार्मिक आहारना दानथी तारा घरमां आकाशथी पथ्थरनी वृष्टि थशे, रत्ननी वृष्टि थशे नहीं. केमके दान आपनारनी के लेनारनी तेवी शुद्धि नथी. " इत्यादिक कहीने ते डोशीने प्रतिबोध पमाड्यो.

वळी जे नामने योग्य गुणवान होय तेज श्रेष्ठ पात्र छे, बीजो नहीं. पात्रनी परीक्षाना संबंधमां युधिष्ठिर अने भीमना संवादमां कह्युं छे के– हस्तीनापुर नगरने विषे एकदा धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) सभामां बेठा हता, ते वखते दरवाजे उभेला भीमसेने सभामां आवीने धर्मराजाने कह्युं के–

मूर्खतपस्वी राजेन्द्र, विद्वांश्च वृषलीपतिः ।
उभौ तौ तिष्ठतो द्वारे, कस्य दानं प्रदीयते ॥ १ ॥

भावार्थ—"हे राजन्! एक मूर्ख छे पण तपस्वी छे, अने बीजो विद्वान छे पण वृषलीनो पति छे (भ्रष्ट छे). ते बन्ने द्वारमां उभा छे, तेमां कोने दान आपवुं ?"

त्यारे युधिष्ठिरे कह्युं के–

सुखसेव्यं तपो भीम, विद्या कष्टदुराचरी ।
विद्यां संपूजयिष्यामि, तपोभिः किं प्रयोजनम् ॥ २ ॥

भावार्थ—"हे भीम! तपनुं सेवन सुखेथी थइ शके छे, पण विद्या तो महा कष्टथी भणाय छे, माटे हुं विद्यानो सत्कार करीश, मात्र तपनुं शुं प्रयोजन छे ?"

. ते सांभळी भीमसेन बोल्यो के–

श्वानचर्मगता गंगा क्षीरं मद्यघटस्थितम् ।
कुपात्रे पतिता विद्या, किं करोति युधिष्ठिर ॥ ३ ॥

भावार्थ—"हे राजा युधिष्ठिर! जेम कूतराना चामडानी मसकमां भरेलुं गंगाजळ अने मदिराना घडामां भरेलुं दूध काम आवतुं नथी, तेम कुपात्रने विषे रहेली विद्या पण शुं कामनी छे ?" भीमसेननां आवां वचन सांभळी सभामां बेठेला कृष्ण द्वीपायन बोल्या के–

न चैकविद्यया पात्रं, तपसापि च पात्रता ।
यत्र विद्या चरित्रं च, तद्धि पात्रं प्रचक्ष्यते ॥ ४ ॥

भावार्थ—"केवळ विद्यावडे पात्र कहेवाय नहीं, तेमज केवळ तपवडे पण पात्रता कहेवाय नहीं, परंतु ज्यां विद्या अने आचार बन्ने रह्यां होय छे, तेज पात्र कहेवाय छे."

आ प्रमाणे होवाथी पात्रने दान आपवुं, तेज कल्याणकारी छे. ते दान पण भावपूर्वक आपवुं. कह्युं छे के–

दातव्यमिति यद्दानं, दीयतेऽनुपकारिणे ।
क्षेत्रे काले च भावे च, तद्दानं सात्विकं स्मृतम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" देवा योग्य एवुं दान पण जे अनुपकारिने देवाय अने यथा-योग्य क्षेत्र, काळ अने भावनो विचार करीने अपाय ते दान सात्विक कहेलुं छे. "

आवुं सात्विक दान शालिभद्र विगेरेए आप्युं छे.

यस्तु प्रत्युपकाराय, फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
प्रदीयते परिक्लिष्टस्तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥ २ ॥

भावार्थ—"जे दान उपकारना बदलामां प्रत्युपकारने माटे देवामां आवे अथवा जे दान कांइ पण फळनी इच्छाए आपवामां आवे ते दान राजस कहेलुं छे. " आ बाबतमां चंदनबाळानी वृद्ध पाडोशणनुं दृष्टांत छे ते पूर्वे कहेलुं छे.

क्रोधाद्बलाभियोगाद्वा, मनोभावं विनापि वा ।
यद्दीयते हितं वस्तु, तद्दानं तामसं स्मृतम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—" क्रोधथी, बळात्कारथी अथवा मनना भाव विना जे सारी वस्तु पण दानमां अपाय छे ते दान तामस कहेलुं छे." आ संबंधमां श्रेणिक राजानी कपीला दासीनुं दृष्टांत जाणी लेवुं. कांइ पण इच्छा विना दान करनारा दुर्लभ छे. कह्युं छे के—

दुल्लहाओ मुधादाई, मुधाजीविवि दुल्लहा ।
मुहादायी मुहाजीवि, दोवि गच्छंति सुग्गइं ॥ १ ॥

भावार्थ—"कोइ प्रकारनी इच्छा विना दान करनारा दुर्लभ छे, अने निष्कपटपणे आजीविका चलावनारा पण दुर्लभ छे, बाकी एवा दातार अने एवा आजीविका करनार बन्ने सद्गतिने पामे छे. "

आ विषय उपर भागवत नामना कणबीनुं दृष्टांत छे ते नीचे प्रमाणे—

कोइ एक तापसे कोइक भक्तिवाळा पुरुषने कह्युं के—"तारे घेर मने चातुर्मास रहेवा दे. " ते पुरुषे कह्युं के—" जो तमे पाछो मारो कांइ पण प्रत्यु-पकार न करो तो खुशीथी रहो. " तापसे ते अंगीकार कर्युं, एटले पेलाए तेने रहेवा माटे आवास आप्यो, अने आहारादिक वडे तेनी भक्ति करवा लाग्यो.

---

१ पोतानी उपर जेणे उपकार करेलो होय तेवाने नहीं पण मात्र पात्रता जोइने.

एकदा चोरोए आवीने तेनो घोडो हरण कर्यो,पण गामनी बहार नीकळतां प्रातः-काळ थइ जवाथी चोरोए विचार्युं के-" हवे अत्यारे आ घोडो आपणाथी लइ जवाशे नहीं " एम धारीने घणा वृक्षोनी घटामां ते घोडाने बांधी दइने तेओ जता रह्या. प्रातःकाळे पेलो तापस स्नान करवा माटे तळाव उपर गयो, त्यां तळावनी समीपे सांकडी गलीमां पेलो घोडो बांधेलो तेणे जोयो. एटले " मारा उपकारी भागवत पटेलनो चोरोए हरण करेलो आ घोडो छे" एम तेणे ओळख्यो. तेथी ते पोतानुं धोएलुं वस्त्र त्यां भूली जवाने मिषे मूकी दइ घेर जइने भागवत पटेलने कह्युं के--"मारुं धोएलुं वस्त्र हुं तळाव उपर भूली गयोछुं ते मंगावी द्यो." तेणे पोताना चाकरने ते लेवा मोकल्यो. तेणे त्यां जइने वस्त्र लीधुं, तो पासे पोताना शेठनो घोडो बांधेलो जोयो, एटले तेने पण लेतो आव्यो, अने घरधणीने ते वृत्तांत कह्यो. घरधणीए मनमां विचार्युं के--"अहो ! आ तपस्वीए बीजुं मिष करीने पण मारापर उपकार कर्यो." पछी तेणे तापसने बोलावीने कह्युं के–" हे भद्र ! हवे तमे अहींथी पधारो, कारणके उपकारीने आपेलुं दान निष्फळ जायछे."

हवे मुधाजीवी (निष्कपट जीवनार) नुं दृष्टांत कहे छे.

कोइएक राजाने वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी तेणे धर्मनी परीक्षा करवा माटे विचार कर्यो के--"वास्तवीक रीते दान लइने कोण भोजन करे छे ? तेनी हुं तपास करूं." एम विचारी तेणे पोताना सेवकने हुकम कर्यो के--" राजा लाडु आपे छे ते आवीने लइ जाओ" एवी सर्वत्र आघोषणा करावो. तेणे तेम करवाथी घणा भिक्षुको लाडु लेवा माटे आव्या. तेमने राजाए पूछ्युं के--"तमे शावडे जीवो छो?" त्यारे तेमांथी एक जण बोल्यो के–"हुं मुखवडे जीवुं छे." बीजाए कह्युं के -" हुं पगवडे जीवुं छुं." त्रीजाए कह्युं के--" हुं हाथवडे जीवुं छुं." चोथाए कह्युं के--" हुं लोकोनी कृपाथी जीवुं छुं." अने पांचमा जैन साधुए कह्युं के–" हुं मुधा जीवुं छुं." पछी राजाए फरीथी तेमने पूछ्युं के–" शीरीते !" त्यारे पहेलाए कह्युं के–" हुं कथा कहेनार छुं, तेथी माणसोने रामायण विगेरेनी कथा कहुं छुं, तेथी मारी आजीविका चाले छे, माटे मुखवडे जीवुं छुं." बीजाए कह्युं के–" हुं कासद छुं, तेथी लोकोनुं कासदीयुं करीने आजीविका चलावुं छुं, तेथी पगवडे जीवुं छुं." त्रीजाए कह्युं के–" हुं लहीयो छुं, तेथी लखवावडे आजीविका चलावुं छुं; माटे हाथवडे जीवुं छुं." चोथाए कह्युं के–" हुं भिक्षुक छुं, तेथी लोकोनी कृपाथी भीख मांगीने आजीविका चलावुं छुं." जैन साधुए कह्युं के–" हुं गृहस्थनो पुत्र छुं, पण संसारनी असारता जोइने में वैराग्य

वडे दीक्षा ग्रहण करी छे. तेथी यथाकाळे जेवो आहार मळी जाय तेवा आहारथी चलावी लउं छुं, माटे मुधा जीवुं छुं." आ प्रमाणे सांभळीने राजाए विचार्युं के " अहो ! आ धर्मज सर्व दुःखनो नाश करनार अने मोक्षने साधनार छे." आ प्रमाणेनो निश्चय करीने तेणे जैन धर्म अंगीकार कर्यो.

वळी दान रूपी अलंकार विनानी लक्ष्मी पथ्थर अने मळ रूपज छे. जुओ, नवनंद राजाए कृपणतादोषथी पात्रदान कर्या विना मात्र प्रजाने अत्यंत पीडा करीने सुवर्णनी नव डुंगरीओ करी, ते दुर्भाग्यजोगे काळे करीने पथ्थरमय थइ गइ. हजु सुधी ते डुंगरीओ पाटलिपुर नगर पासे गंगा नदीने कांठे पीळा पथ्थरमय देखाय छे. राजगृह नगरीमां संमण श्रेष्ठीए मणिजडित्र बे बळद कर्या हता. तेमां एक बळदनुं शींगडुं अधुरुं हतुं ते पुरुं करवा माटे ते अनेक प्रकारनां कष्ट सहन करतो हतो. परंतु पात्रदान नहीं करवाथी ते बळद पृथ्वीमां ने पृथ्वीमांज विनाश पामी गया. तेथी मळेला धननुं सुपात्रमां दान करवुं जोइए.

दान शत्रुने आप्युं होय तो वैरनो नाश करे छे, सेवकने आपवाथी ते विशेष भक्तिमान थाय छे, राजाने आपवाथी उत्कृष्ट सन्मान पामी शकाय छे; अने भाट, कवि के चारण विगेरेने आपवाथी सर्वत्र यश फेलाय छे; दान कोइ पण स्थाने निष्फळ थतुं नथी. तेमां पण सुपात्रने दान आपवाथी विशेष कल्याणकारी थाय छे. कह्युं छे के-

जले तैलं खले गुह्यं, पात्रे दानं मनागपि ।
प्राज्ञे शास्त्रं सतां प्रीतिर्विस्तारं यात्यनेकधा ॥ १ ॥

भावार्थ-" जळमां तेल, खळ पुरुषमां छानी वात, सुपात्रमां थोडुं पण दान, डाह्या पुरुषमां विद्या अने सत्पुरुष साथे प्रीति, ए अल्प होय छे तो पण अनेक प्रकारे विस्तार पामे छे."

अहीं कोइ शंका करे के-' पात्र अने अपात्रनो विचार तो कृपण माणस करे छे, पण उदार माणस करतो नथी. ते विषे कह्युं छे के-

पत्त परिरकह किं करुं, दिज्जे मग्गंताहिं ।
किं वरिसंतो अंबुहर जोवे सम विसमाइं ॥ १ ॥

भावार्थ—"पात्रनी परीक्षा शामाटे करवी ? जे मागे तेने आपवुं. केमके शुं मेघ सम विषम प्रदेश जोइने वृष्टि करे छे ? ना, ना, सर्वत्र करे छे." आ शंकानो उत्तर कहे छे-

वरिसो वरिसो अंबुहर, वरसीडां फल जोइ।
धंतुरे विष इख्कुरस, एवडो अंतर होय ॥ १ ॥

" हे वरसाद! भले, तुं गमे त्यां वरश, पण वरश्यानां फळ जो; धंत्तुरामां तो तारा जळथी विष उत्पन्न थशे, अने शेरडीमां इक्षुरस उत्पन्न थशे. एटलुं पात्रने अपात्रमां अंतर पडशे. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य सप्तदशाधिकाद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१७ ॥

व्याख्यान २१८ मुं.

सुपात्र दान उपर दृष्टांत.

पात्रे यच्छति यो वित्तं, निजशक्त्या सुभक्तितः ।
सौख्यानां भाजनं स स्याद्यथा धन्योऽभवत्पुरा ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे मनुष्य पोतानी शक्ति प्रमाणे भक्ति पूर्वक पात्र विषे दान आपे छे ते धनानी जेम सर्व सुखनुं स्थान थाय छे. "

धनानु दृष्टांत.

पृथ्वीपुर नामना नगरथी एक वणीक पोताना कुटुंब सहित दैवयोगे प्रतिष्ठानपुर नामना नगरमां आव्यो. तेना कुळमांथी एक डोशीनो छोकरो लोकोनां वाछरडां चारीने निर्वाह करतो हतो. एक दिवस कोइक पर्व होवाथी दरेक घेर खीरनुं भोजन करता लोकोने जोइने ते छोकराने खीर खावानी इच्छा थइ. तेथी ते घेर आवीने पोतानी माने वारंवार कहेवा लाग्यो के—" मने खीर आप. " कह्युं छे के—

चोरा बालका वि य, दुज्जण विज्जाय विप्प पाहुणया ।
वेसाणि धुत्त नरिंदा, परस्स पीडं न याणंति ॥ १ ॥

भावार्थ—" चोर, बालक, दुर्जन, वैद्य, ब्राह्मण, परोणो, वेश्या, धूर्त अने राजा ए बीजानां दुःखने जाणता नथी. "

वडे दीक्षा ग्रहण करी छे. तेथी यथाकाळे जेवो आहार मळी जाय तेवा आहारथी चलावी लउं छुं, माटे मुधा जीवुं छुं." आ प्रमाणे सांभळीने राजाए विचार्यु के "अहो ! आ धर्मज सर्व दुःखनो नाश करनार अने मोक्षने साधनार छे." आ प्रमाणेनो निश्चय करीने तेणे जैन धर्म अंगीकार कर्यो.

वळी दान रूपी अलंकार विनानी लक्ष्मी पथ्थर अने मळ रूपज छे. जुओ, नवनंद राजाए कृपणतादोषथी पात्रदान कर्या विना मात्र प्रजाने अत्यंत पीडा करीने सुवर्णनी नव डुंगरीओ करी, ते दुर्भाग्यजोगे काळे करीने पथ्थरमय थइ गइ. हजु सुधी ते डुंगरीओ पाटलिपुर नगर पासे गंगा नदीने कांठे पीळा पथ्थरमय देखाय छे. राजगृह नगरीमां मंमण श्रेष्ठीए मणिजडित्र बे बळद कर्या हता. तेमां एक बळदनुं शींगडुं अधुरुं हतुं ते पुरुं करवा माटे ते अनेक प्रकारनां कष्ट सहन करतो हतो. परंतु पात्रदान नहीं करवाथी ते बळद पृथ्वीमां ने पृथ्वीमांज विनाश पामी गया. तेथी मळेला धननुं सुपात्रमां दान करवुं जोइए.

दान शत्रुने आप्युं होय तो वैरनो नाश करे छे, सेवकने आपवाथी ते विशेष भक्तिमान थाय छे, राजाने आपवाथी उत्कृष्ट सन्मान पामी शकाय छे; अने भाट, कवि के चारण विगेरेने आपवाथी सर्वत्र यश फेलाय छे; दान कोइ पण स्थाने निष्फळ थतुं नथी. तेमां पण सुपात्रने दान आपवाथी विशेष कल्याणकारी थाय छे. कह्युं छे के—

> **जले तैलं खले गुह्यं, पात्रे दानं मनागपि ।**
> **प्राज्ञे शास्त्रं सतां प्रीतिर्विस्तारं यात्यनेकधा ॥ १ ॥**

भावार्थ—" जळमां तेल, खळ पुरुषमां छानी वात, सुपात्रमां थोडुं पण दान, डाह्या पुरुषमां विद्या अने सत्पुरुष साथे प्रीति, ए अल्प होय छे तो पण अनेक प्रकारे विस्तार पामे छे."

अहीं कोइ शंका करे के—' पात्र अने अपात्रनो विचार तो कृपण माणस करे छे, पण उदार माणस करतो नथी. ते विषे कह्युं छे के—

> **पत्त परिरकह किं करु, दिजे मग्गंताहिं ।**
> **किं वरिसंतो अंबुहर जोवे सम विसमाइं ॥ १ ॥**

भावार्थ—"पात्रनी परीक्षा शामाटे करवी ? जे मागे तेने आपवुं. केमके शुं मेघ सम विषम प्रदेश जोइने वृष्टि करे छे ? ना, ना, सर्वत्र करे छे." आ शंकानो उत्तर कहे छे—

वरिसो वरिसो अंबुहर, वरसीडां फल जोइ।
धंतुरे विष इरकुरस, एवडो अंतर होय ॥ १ ॥

" हे वरसाद! भले, तुं गमे त्यां वरश, पण वरश्यानां फळ जो; धंत्तुरामां तो तारा जळथी विष उत्पन्न थशे, अने शेरडीमां इक्षुरस उत्पन्न थशे. एटलुं पात्रने अपात्रमां अंतर पडशे. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य सप्तदशाधिकाद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१७ ॥

व्याख्यान २१८ मुं.

सुपात्र दान उपर दृष्टांत.

पात्रे यच्छति यो वित्तं, निजशक्त्या सुभक्तितः ।
सौख्यानां भाजनं स स्याद्यथा धन्योऽभवत्पुरा ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे मनुष्य पोतानी शक्ति प्रमाणे भक्ति पूर्वक पात्र विषे दान आपे छे ते धनानी जेम सर्व सुखनुं स्थान थाय छे. "

धनानु दृष्टांत.

पृथ्वीपुर नामना नगरथी एक वणीक पोताना कुटुंब सहित दैवयोगे **प्रतिष्ठानपुर** नामना नगरमां आव्यो. तेना कुळमांथी एक डोशीनो छोकरो लोकोनां वाछरडां चारीने निर्वाह करतो हतो. एक दिवस कोइक पर्व होवाथी दरेक घेर खीरनुं भोजन करता लोकोने जोइने ते छोकराने खीर खावानी इच्छा थइ. तेथी ते घेर आवीने पोतानी माने वारंवार कहेवा लाग्यो के–" मने खीर आप. " कह्युं छे के–

चौरा बल्लका वि य, दुज्जण विज्जाय विप्प पाहुणया ।
नव्वणि धुत्त नरिंदा, परस्स पीडं न याणंति ॥ १ ॥

भावार्थ–" चोर, बालक, दुर्जन, वैद्य, ब्राह्मण, परोणो, वेश्या, धूर्त अने राजा ए बीजानां दुःखने जाणता नथी. "

पुत्रनां वचन सांभळीने डोशी दरिद्री होवाथी खीर करी शके तेम नहोतुं, तेथी ते शोकथी रोवा लागी; त्यारे तेनी पडोशनी स्त्रीओए दयाथी तेने दूध, खांड, घी अने चोखा विगेरे सर्व सामग्री आपी. एटले डोशीए दूध ने चोखानी खीर बनावी अने तेमां खांड तथा घी नांखी पुत्रने पीरसी ते कोइ कार्यने माटे बीजे घेर गइ, तेटलामां एक महात्मा मुनि मासक्षपणने पारणे त्यां पधार्या. तेमने जोइने पेलो छोकरो बहु खुशी थयो अने बोल्यो के-" हे दयाना भंडार मुनि! आ खीर ग्रहण करो." मुनिए पात्र धर्युं एटले तेणे मुनिनां पात्रामां खीर वहोरावी; ते वखत तेणे मनुष्यनुं आयुष्य बांध्युं. पछी तेनी माए बहारथी आवीने फरीने बाकी रहेली खीर तेने पीरसी, ते सर्व खाइ जवाथी तेने विसूचिकानो व्याधि थयो. तेथी तेज रात्रिए मरण पामीने ते तेज नगरमां धनसार नामना श्रेष्ठीनो पुत्र थयो. तेना मोटा त्रण भाइओ परणेला हता, त्यार पछी आ चोथो पुत्र धना नामनो थयो. एनो जन्म थयो त्यारथी धनसार श्रेष्ठीनुं धन अधिक अधिक वृद्धि पामवा लाग्युं. धनो योग्य वयनो थतां समग्र कळाओ शीख्यो, अने उत्तम गुणोथी मातापितानो अति प्रीतिपात्र थयो. ते वखते तेना मोटा त्रण भाइओ पोताना मातापिताने कहेवा लाग्या के-" आ लघु छतां तमे तेनो अत्यंत आदर केम करो छो ?" त्यारे तेमणे कह्युं के-" तेना गुणोथी ते विशेष सत्कारने लायक छे." ते सांभळी त्रणे जणा बोल्या के-" एम होय तो तेना अने अमारा गुणोनी परीक्षा करो." पिताए परीक्षा करवामाटे चारे पुत्रोने बत्रीश बत्रीश सोनामोहोरो आपी, अने कह्युं के-" आटला द्रव्यवडे वेपार करीने नफो करी लावो."

धनाए ते दिवसे पशुव्यापारमां लाभ थवो जाणीने ते द्रव्यनो एक बळवान मेंढो लीधो, पछी राजपुत्रना मेंढा साथे लडाववा माटे हजार सोनामोहोरनी सरत करीने तेनी साथे लडाव्यो. तेमां राजपुत्रनो मेंढो हार्यो, तेथी एक हजार सोनामोहोर मेळवीने ते पोताने घेर गयो. तेना मोटा त्रणे भाइओए पोतपोताने मळेली बत्रीश बत्रीश सोनामहोरवडे जूदा जूदा वेपार कर्या, पण तेमांथी कांइ नफो मेळव्यो नहीं.

ए प्रमाणे अनेक उपायो धनाना सफळ थया, अने मोटा त्रण भाइओना निष्फळ थया. हवे ते गाममां एक धनाढ्य श्रेष्ठी रहेतो हतो. ते अति कृपण होवाथी तेणे घरमां खाडो खोदीने तेमां केटलुंक धन दाट्युं हतुं. बाकीना द्रव्यना अमूल्य रत्नो लइने सुवाना खाटलाना पाया विगेरेमां गुप्त रीते छुपाव्या हता, अने पेला खाडा उपर ते खाटलो राखी तेना उपर निरंतर सुइ रहेतो हतो. पछी ज्यारे ते मरवा पड्यो, त्यारे तेणे तेना पुत्रोने कह्युं के-" ज्यारे हुं मरी

जाउं, त्यारे आ खाटला सहित मारो अग्निसंस्कार करजो." अनुक्रमे कांइ पण पुण्य दान कर्या विना ते वृद्ध मृत्यु पाम्यो. एटले तेने तेना पुत्रो खाटला सहित स्मशानमां लइ गया. केमके तेओ ते खाटलामां रत्नो छे एवुं जाणता नहोता. स्मशानमां चांडाले पोतानो हक्क होवाथी ते खाटलो माग्यो; तेने आपवानी ना कहेवाथी तेनी साथे कजीओ थयो. छेवट तेमना संबंधीओना कहेवाथी तेओए ते खाटलो चांडालने आप्यो, एटले चांडाळ ते खाटलो वेचवा माटे चौटामां लइ गयो. ते वखते लब्धलक्ष धनाए केटलाक चिन्होथी ते खाटलाने द्रव्यसंयुक्त जाणीने योग्य मूल्य आपीने ते खाटलो खरीद कर्यो. घेर जइने खाटलो भांग्यो, तो मांहेथी अमूल्य रत्नो नीकळ्यां, तेथी धनो मोटो धनाढ्य थयो. तेना भाइओने आ जोइने तेना पर घणी इर्ष्या थइ, तेथी तेओ तेने मारी नाखवा सुधीना उपायो चिंतववा लाग्या. ते वृत्तांत ते भाइओनी वहुओए पुत्रना जेवी प्रीतिथी धनाने एकांतमां कह्युं. ते सांभळी धनो घरमांथी एकलोज नीकळी गयो; अने पृथ्वी उपर भमतो भमतो राजगृह नगरीनी समीपे पहोंची तेनी बहारना एक उद्यानमां विश्राम लेवा माटे बेठो. ते उद्यान प्रथम दैवयोगे केवळ सुकाइ गयुं हतुं, ते धनाना पुण्यप्रभाववडे तत्काळ नवपल्लवित अने पुष्पफळवाळुं थइ गयुं. ते जोइने उद्यानना रक्षके ते वृत्तांत तेना धणी **कुसुमपाळ** श्रेष्ठीने कह्यो. ते सांभळी कुसुमपाळ श्रेष्ठी विस्मय पाम्यो, अने धनाने घेर तेडी लावी पोतानी पुत्री तेने आपी. ते वखते ते नगरीमां श्रेणिक राजा राज्य करता हता, तेणे पण हर्षित थइने पोतानी पुत्री धनाने आपी. राजपुत्रीनी सखी **सुभद्रा** नामनी **शालिभद्र**नी बहेन हती, तेने पण तेना स्वजनोए धनाने आपी. ते त्रणे पुत्रीनां लग्न मोटी समृद्धि पूर्वक श्रेणिक महाराजाए कर्यां. पछी राजाए तेने रहेवा माटे मोटो महेल आप्यो, तेमां रहीने धनो पूर्व जन्ममां आपेला सुपात्रदाननुं फळ भोगववा लाग्यो. श्रेणिक राजाए केटलांक गामो पण तेने आप्यां.

एक वखते धनो पोताना महेलनी बारीमां बेठो हतो. ते समये तेणे पोताना कुंटुंबने गरीब हालतमां ते शहेरमां फरतुं जोयुं, एटले तेमनो सत्कार करी घेर लइ आवी, केटलांक गाम विगेरे आपीने फरीथी सुखी कर्युं. केटलोक काळ गया पछी धनाना मोटा त्रण भाइओए एक दिवस तेमना पिताने कह्युं के-" हे पिता ! घरनुं समग्र द्रव्य आज ने आज वहेंचीने अमारो भाग अमने आपो." पिताए कह्युं के-" हे मूर्खो ! हाल तो तमे बधुं धनानुं मेळवेलुं द्रव्यज भोगवो छो. तेमां मारुं शुं छे के हुं तमने वहेंची आपुं?" त्यारे तेओ बोल्या के-"ज्यारे धनो घेरथी नासी गयो हतो, त्यारे चोरनी जेम घरमांथी रत्नादिक सार सार वस्तु लइने

गयो हतो. तेथी धनाना पुत्रो भले राज्य भोगवे, पण अमे तो अमारो द्रव्यनो भाग लीधा विना आवतो काल जमवाना नथी." आ प्रमाणे कुटुंबमां क्लेश थतो जाणीने धनो तेज रात्रिए एकलो घर छोडीने चालतो थयो.

चालतां चालतां धनो कौशाम्बी नगरीए पहोंच्यो. त्यां मृगावती राणी ना पति शतानीक राजा राज्य करता हता. धनो नगरीना चौटामां गयो, त्यां तेणे राजाए करावेली आघोषणा सांभळी के- राजाना भंडारमां एक अमूल्य रत्न छे, तेनी जे कोइ परीक्षा करशे तेने राजा आ प्रमाणेनी वस्तुओ आपशे—

हस्तिनां शतमेकं च वाजिनां शतपंचकम् ।
सौभाग्यमंजरीं पुत्रीं ग्रामपंचशतीयुताम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" एकसो हाथी, पांचसो घोडा अने पांचसो गाम सहित **सौभाग्यमंजरी** नामनी पुत्री (आपशे)."

आवी उद्घोषणा सांभळीने धनो तेनुं निवारण करीने राजसभामां गयो; अने रत्ननी परीक्षामां निपुण होवाथी तेणे ते रत्ननी परीक्षा करी. तेथी विस्मय पामेला राजाए घणा द्रव्य सहित पोतानी पुत्री तेने परणावी. त्यां सुखमां निमग्न थयेलो धनो काळ निर्गमन करवा लाग्यो.

एक दिवसे पोतानी कीर्तिनेमाटे लोकरीतिने अनुसरीने धनाए नगरीना समीप भागमां एक तळाव खोदाववा मांड्युं.

अहीं धनसार श्रेष्ठीना घरमांथी धनो गयो त्यारथी तेनी नबळी स्थिति थवा लागी. छेवट एवी स्थिति थइ के—

घृतं नास्ति तैलं नास्ति, नास्ति मुद्गो जुगंधरी ।
वल्लार्थे लवणं नास्ति, तन्नास्ति यत्प्रभुज्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" घी नथी, तेल नथी, मग के जुवार पण नथी, वालमां नाखवा लुण पण नथी अर्थात् एवुं कांइ पण नथी के जे खाइ शकाय." आवी स्थिति थवाथी धनसार शेठे धनानी बे पत्नीओने तो तेमने पीयर मोकली, अने शालिभद्रनी बहेनने कह्युं के-" हे वत्से ! तुं तारा भाइने घेर जा." त्यारे सुभद्रा बोली के-

सुखे च विभवोल्लासे, सेव्यं स्त्रीभिः पितुर्गृहम् ।
श्वशुरस्य गृहं दुःखे, सुखे दौस्थ्येऽपि सर्वदा ॥ १ ॥

भावार्थ—" सुखना वखतमां अने वैभवना समयमां स्त्रीओए पिताने घेर जवुं, अने सासराना घरमां तो सुखमां, दुःखमां अने खराब स्थितिमां सर्वदा रहेवुं. "

आ प्रमाणे ते वहुनुं वचन सांभळीने धनसार हर्षित थयो. पछी पुत्रोने अने वहुओने लइने ते रात्रिए गाममांथी नीकळी गयो. अनुक्रमे फरतां फरतो ते कौशांबी नगरीमां आव्यो. त्यां तेणे सांभळ्युं के-" अहीं एक तलाव खोदाय छे." ते सांभळी पोतानी आजीविका चलाववा माटे ते कुटुंब सहित त्यां गयो. त्यां पुरुषोने हमेशां बे दीनार अने स्त्रीओने एक दीनार मळतो, उपरांत रांधेलुं अन्न खावा मळतुं. तेथी ते सरोवरमां बीजा मजुरोनी साथे ते पण कुटुंब सहित मजुरी करवा रह्यो, अने पोतानो निर्वाह करवा लाग्यो. एक दिवस धनो घोडा पर चढीने ते तळाव जोवा आव्यो. त्यां मजुरोनी साथे काम करतुं पोतानुं कुटुंब जोइने ते विचार करवा लाग्यो के-" अहो ! आ दैवे शुं कर्युं ? "

> गोभद्रो जनको यस्या, भद्रा यस्या जनन्यहो ।
> शालिभद्रानुजा सेयं, शीर्षे वहति मृत्तिकाम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनो पिता गोभद्र छे, अने जेनी माता भद्रा छे, ते आ शालिभद्रनी नानी बहेन मस्तक उपर माटी वहन करे छे. "

आ प्रमाणे विचारीने धनाए अजाण्या थइने तेमने पूछयुं के-" तमे क्यां रहो छो ? अने क्यांथी आव्या छो ? " त्यारे श्रेष्ठीए लज्जा सहित पोताना कुटुंबनो सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी कह्युं के-" हे जगत्पालक ! मारा कुटुंबने छाश विना बहु अडचण पडे छे तेथी छाश आपवानी कृपा करो." त्यारे धनाए कह्युं के-"छाश लेवाने माटे खुशीथी तमारी वहुओने मारे घेर मोकलजो." पछी हमेशां चारे वहुओ तेने घेर छाश लेवा माटे वाराफरती जवा लागी. एक दिवस सुभद्रानो वारो होवाथी ते गइ, तेने धनाए पूछयुं के-" हे भद्रे ! तुं कोण छे? " ते लज्जाथी नीचुं मुख राखीने बोली के-" तमे मने वारंवार पूछशो नहीं. हुं गोभद्रशेठनी पुत्री अने शालिभद्रनी बहेन छुं. तमारा नामना एक श्रेष्ठीना पुत्रने हुं परणी हती, परंतु घरमां क्लेश थवाथी ते मने तजीने कोइक स्थाने जता रह्या छे. " ते सांभळी धनाए कह्युं के- " हे भद्रे ! पतिना वियोगे तुं शी रीते रही शके छे ? माटे तुं पतिव्रत छोडीने मारी साथे भोग भोगव. " ते सांभळीने सुभद्रा बोली के-

गतियुगलिकमेवोन्मत्तपुष्पोत्करस्य
त्रिनयनतनुपूजांवाथवा भूमिपातः ।
विमलकुलभवानामंगनानां शरीरं
पतिकरफरसो वा सेवते सप्तजिह्वः ॥ १ ॥

भावार्थ-" खीलेला पुष्पोनी बेज गति होय छे, क्यां तो महादेवना शरीरनी पूजाना उपयोगमां आवे छे अथवा तो खरीने भूमिपर पडे छे; तेवीज रीते निर्मळ कुळमां उत्पन्न थयेली स्त्रीओना शरीरने पण पोताना स्वामीना हाथनो स्पर्श थाय छे अथवा तो अग्नि तेनुं सेवन करे छे. "

आ प्रमाणे घणी रीते तेनी परीक्षा करतां तेने दृढ शीळवाळी जाणीने धनाए पूर्वेनो सर्व वृत्तांत तेने जणाव्यो, एटले सुभद्रा तेमने पोताना भर्त्तार तरिके ओळखीने लज्जाथी नीचुं जोइ रही. पछी धनाए तेने घरमां मुख्य पदवी आपी सर्वेनी स्वामिनी करी.

आ वृत्तांत धनसारे सांभळ्युं, तेथी लोको पासे धनानी निंदा करता करता ते धनाने घेर गया. धनाए पोतानी ओळखाण आपी नमस्कार करीने तेमने घरमां राख्या. एवीज रीते अनुक्रमे पोतानी मा तथा मोटा भाइओने पण सत्कार करीने घरमां राख्या. पछी ते मोटा भाइओनी त्रण वहुओ रही. तेमणे विचार्युं के-" आपणा सासुससराने तथा स्वामीने धनाए केद कर्या छे. माटे तेनी फर्याद करवा माटे आपणे शतानीक राजानी सभामां जइए." आम निश्चय करीने ते वहुओए राजसभामां जइ राजाने आशीर्वाद दइने कह्युं के-" अमे उदरनिर्वाहने माटे तमारा नगरमां आव्यां छीए. परंतु तळाव खोदावनार धनाए अमारा आखा कुटुंबनुं हरण कर्युं छे. तेने जीवतुं राख्युं छे के मारी नांख्युं छे तेनी पण खबर नथी, माटे हे पांचमा लोकपाळ[१] ! तमे तेनी शोध करो." आवी फर्याद सांभळीने शतानीक राजाए पोताना सेवकोने मोकली धनाने कहेवराव्युं के-" आ फर्यादणोना कुटुंबना माणसोने जलदी छोडी मूको." धनाए जवाबमां कहेवराव्युं के-" हुं कदापि अन्याय करुंज नहीं, अने कदाच करुं तो तेमां राजाने वचमां आववानी शी जरूर छे ? " आ प्रमाणेनां तेनां गर्विष्ठ वचनो सांभळीने ते जमाइ हतो, तो पण तेने हणवा माटे राजाए सेना मोकली. धनो पुण्यशाळी होवाथी लडाइमां जय पाम्यो. त्यारे प्रधानोए राजाने विनंति करी के-" हे राजेंद्र ! आ धनो

१ राजा पांचमो लोकपाळ कहेवाय छे.

कदापि अनीति करे तेवो नथी, महा धर्मात्मा छे, अने परस्त्रीनो सहोदर छे. माटे आ स्त्रीओनेज विशेष पूछवाथी कांइक खबर पडशे." एम कही राजाना मनने शांत करी प्रधानोए ते स्त्रीओने पूछ्युं के–" धना नामनो तमारो कोइ स्वजन छे ?" तेओ बोली के–" हा, अमारो दियर धना नामे हतो. पण ते घरनी समग्र लक्ष्मीनो त्याग करी अमने मुकीने क्यांइक जतो रहेलो छे. ते जीवे छे के नहीं तेनी पण अमने खबर नथी. " प्रधानोए पूछ्युं के–"तमे तमारा दियर धनाना शरीरनुं कांइ पण चिन्ह जाणो छो?" तेओ बोली के–" हा, ते ज्यारे नानो हतो त्यारे तेने नवरावतां अमे तेना पगमां पद्मनुं चिन्ह जोयुं हतुं." ते सांभळीने प्रधानोए धनाने त्यां बोलाव्यो. धनो त्यां आवी पोतानी भाभीओने नमीने बोल्यो के–" शुं ! श्रेणिक राजानी पुत्रीना पति धनाने धारीने तमे मने बोलाव्यो छे ?" ते स्त्रीओ बोली के–"अमे भक्ति पूर्वक तमारा पग धोइने अमारा दीयर तमे छो के नहीं, तेनी खात्री करीशुं. " धनाए कह्युं के–" परस्त्रीनो स्पर्श करवाथी पाप लागे छे. हुं परस्त्री साथे बोलतो पण नथी, तो स्पर्शनी तो वातज शी करवी ? " पछी प्रधानोना अने राजाना कहेवाथी धनाए हास्य करवुं तजी दइने पोतानी भाभीओने आदरसत्कार पूर्वक पोताने घेर मोकली. पछी पोताना पांचसें गामो पोताना भाइओने आपी बन्ने पत्नीओने साथे लइने धनो राजगृह नगरे गयो. त्यां बीजा श्रेष्ठीओनी चार कन्याओने ते परण्यो. आ प्रमाणे धनाने आठ स्त्रीओ थइ.

अहीं धनाना भाइओए पांच सें गामोमां अहंकारथी पोतानी आज्ञा प्रवर्तावी. तेमना दुर्भाग्य वडे ते बधा गामोमां दुकाळ पड्यो; लोको कागडानी जेम नासी गया. पछी ते दुर्भागी त्रणे भाइओ घउंना पोठीया भरीने राजगृह नगरीमां वेचवा माटे आव्या. धनाए तेमने जोया; एटले तेमनो सत्कार करीने पोताने घेर लइ गयो. परंतु तेमने नाना भाइने घेर रहेवानुं पसंद पड्युं नहीं. तेथी तेओना कहेवाथी धनाए सर्व द्रव्यना सरखा भाग पाडी तेमने चौद चौद करोड सोनामहोरो आपी. ते द्रव्य लइने तेओ नगर बहार जता हता; तेवामां गामना सीमाडामांज धनना अधिष्ठायक देवोए तेमने रोक्या, अने कह्युं के–" आ धन तमारा भाग्यनुं नथी. ए धननो भोक्ता तो भाग्यशाळी धनोज छे. " आवां वचनो सांभळीने तेओ गर्व रहित थया, अने पाछा वळीने धनाने शरणे गया. धनाए सत्कार करीने तेमने घरमां राख्या, एटले तेओ त्यां सुखे रहेवा लाग्या.

एकदा चार ज्ञानने धारण करनारा धर्मघोष नामना सूरि त्यां पधार्या. धनो पोताना भाइओ सहित सूरिने वांदवा गयो. सूरिने वांदी देशना सांभळीने

धनाए नम्रता पूर्वक पूछ्युं के-" हे भगवन् ! मारा त्रणे भाइओ कया कर्मथी निर्धन रह्या ? " ते सांभळी गुरुए तेमनो पूर्व भव आ प्रमाणे कह्यो के—

"कोइ एक गाममां त्रण भाइओ काष्ठना भारा वेचीने आजीविका चलावता हता. एक दिवस लाकडां लेवा माटे तेओ साथे खावानुं भातुं लइने वनमां गया. मध्यान्हकाळे खावा बेठा, ते वखते कोइ साधु मासक्षपणने पारणे त्यां आव्या. तेमने जोइने दान आपवानी इच्छा थवाथी तेमणे पोताना भातामांथी दान दीधुं. मुनि गया पछी तेओ पश्चात्ताप करवा लाग्या के "आपणे भूल करी, आ साधु फोगटनुं लइने जता रह्या, अने आपणे भूख्या रह्या. ए साधु कांइ उत्तम कुळनो न होतो; पण एमां तेनो दोष नथी, आपणेज मूर्ख के फोगट भूखे मर्या. " आ प्रमाणे पश्चात्ताप करता करता पोताने घेर गया. अनुक्रमे आयुषना क्षये मरण पामीने अल्पर्द्धिवान् व्यंतरपणुं पामी त्यांथी चवीने अहीं उत्पन्न थया छे. पूर्वे मुनिराजने दान आपीने पश्चात्ताप करवाथी आ भवमां वारंवार निर्धनपणुं पाम्या छे. कह्युं छे के--

पश्चात्तापो न तत्कार्यो, दत्ते दाने मनीषिभिः ।
किं तु पुण्यद्रुमो भावजलेन परिषिच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" तेथी दान दइने सुज्ञ पुरुषोए पश्चात्ताप करवो नहीं. परंतु भाव रूपी जळवडे पुण्य रूपी वृक्षनुं सिंचन करवुं. "

पछी शालिभद्रनी बहेन सुभद्राए गुरुने पूछ्युं के-" हे गुरु ! कया कर्मे करीने में माटीनुं वहन कर्युं ? " गुरु बोल्या के-" ज्यारे पूर्व भवमां धनो एक डोशीनो पुत्र हतो अने गायो चारतो हतो, त्यारे तमे पहेली चारे प्रियाओ तेना पाडोशमां रहेनारी पाडोशणो हती. धनाए खीर मागी अने तेनी माता रोइ, ते वखते तमे चारे दयाळु पाडोशणो भेगी थइ अने तेने खीर करी आपवा माटे तमारामांथी एके दूध, बीजीए चोखा, त्रीजीए खांड अने चोथीए घी आप्युं हतुं. ते कार्यथी तमे चारेए जे पुण्य उपार्जन कर्युं हतुं तेना प्रभावथी आ भवमां राजपुत्री विगेरे थयां छो. हवे हे सुभद्रा ! तें माथे माटी वहन करवानुं जे कर्म बांध्युं हतुं तेनुं कारण सांभळ-पूर्वे तारी दासीए माथे छाण उपाडतां वधारे भार लागवा संबंधी तने कांइक अरज करी, एटले तें तिरस्कार पूर्वक तेने कह्युं के- " तुं तो मोटी शेठाणी खरीने ! ताराथी कांइ भार उपडे ? " आवा शब्दो कहेवाथी तेने बहु दुःख लाग्युं. ते कर्मवडे तुं शालिभद्रनी बहेन थइ छतां तारे माटी उपाडवी पडी. "

आ प्रमाणे सर्वना संशय छेदीने गुरुए विहार कर्यो. पछी धनो सदा सुखमां मग्न रह्यो सतो दिवसो निर्गमन करवा लाग्यो. छेवटे तेने जे रीतें वैराग्य प्राप्त थवाथी तेणे दीक्षा ग्रहण करी ते विषेनुं सर्व वृत्तांत शालिभद्रनी कथामांथी सुज्ञ पुरुषोए जाणी लेवुं.

" जे निर्भाग्य माणसो प्रथम मुनिने दान दइने पछी पश्चात्ताप करे छे ते दैवयोगे पामेला श्रेष्ठ वहाणनो त्याग करीने उंचेथी समुद्रमां झंपापात करवा जेवुं करे छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य अष्टादशाधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१८ ॥

व्याख्यान २१९ मुं.

धर्मना चार प्रकार.

दानं सुपात्रे विशदं च शीलं, तपो विचित्रं शुभभावना च ।
भवार्णवोत्तारणयानपात्रं, धर्मं चतुर्धा मुनयो वदन्ति॥ १ ॥

भावार्थ—" सुपात्रदान, निर्मळ शील, विचित्र प्रकारनो तप अने शुभ भावना–ए संसारसमुद्रने तरवामां वहाण समान धर्मना चार प्रकार मुनिओए कह्या छे."

दाननुं वर्णन पूर्वे करी गया छे. हवे शीळनुं वर्णन करे छे–

ऐश्वर्यराजराजोऽपि रूपमीनध्वजोऽपि च ।
सीतया रावणश्चेव त्याज्यो नार्या नरः परः ॥ १ ॥

भावार्थ—"ऐश्वर्यवडे चक्रवर्ती जेवो होय अने रूपवडे कामदेव जेवो होय तो पण पर पुरुषने रावणने, जेम सीताए तज्यो तेम उत्तम स्त्रीओए तजी देवो."

रावणे सीताने राज्य, अलंकार विगेरे आपवानो अनेक प्रकारनो लोभ बताव्यो, तो पण ते महासती पोताना शीळ व्रतथी भ्रष्ट थइ नहीं. कह्युं छे के–

सीतया दुरपवादभीतया, पावके स्वतनुराहुतीकृता ।
पावकस्तु जलतां जगाम यत्तत्र शीलमहिमा विजृंभितः॥ १॥

भावार्थ—" अपवादथी भय पामेली सीताए अग्निमां पोतानो देह झंपलाव्यो, परंतु ते वखत अग्नि जळ जेवो शीतळ थइ गयो. तेमां मात्र उल्लसायमान शीळनो महिमाज कारणभूत छे. माटे बीजाओए पण शीळव्रत पाळवाने विषे यत्न करवो."

शील पाळवा उपर दृष्टांत.

वसंतपुरमां शिवंकर नामनो व्रतधारी एक श्रावक रहेतो हतो. त्यां एक वखते धर्मदास नामना सूरि पधार्या. तेने वांदवा माटे शिवंकर गयो. वांदीने गुरु पासे केटलीक आलोयण लीधी. पछी हर्ष पूर्वक बोल्यो के-" हे भगवन्! मारा मनमां लाख साधर्मी भाइओने भोजन करावावानो मनोरथ छे, परंतु तेटलुं धन मारी पासे नथी, माटे हुं शुं करुं के जेथी मारो ते मनोरथ पूर्ण थाय? " गुरुए कह्युं के-" तुं मुनि सुव्रत स्वामीने वांदवा माटे भरुच जा. त्यां जिनदास नामनो श्रावक रहे छे, तेनी भार्या सौभाग्यदेवी नामे छे; ते बन्नेने तारी सर्व शक्तिथी भोजन, अलंकार विगेरे आपीने प्रसन्न कर. तेना वात्सल्यथी तने लाख साधर्मीने भोजन आप्या जेटलुं पुण्य थशे. " आ प्रमाणे गुरुनुं वचन सांभळीने तेणे ते प्रमाणे कर्युं. भोजनादिक भक्तिवडे जिनदासनी सेवा करी.

त्यार पछी ते शिवंकरे गाममां जइने लोकोने पूछ्युं के-"आ जिनदास केवो उत्तम छे? सत्य छे के दांभिक छे? " त्यारे लोकोए कह्युं के-" हे भाइ! सांभळ, आ जिनदास सात वर्षनो हतो, त्यारे एक दिवस उपाश्रये गयो हतो. त्यां गुरुना मुखथी शीलोपदेशमाळानुं व्याख्यान सांभळीने तेणे एकांतरे ब्रह्मचर्य पाळवानो नियम ग्रहण कर्यो. एज प्रमाणे सौभाग्यदेवीए पण बाल्यावस्थामां साध्वी पासे एकांतरे शीळ पाळवानुं अंगीकार कर्युं. दैवयोगे ते बन्नेनुंज परस्पर पाणिग्रहण थयुं. परंतु शीळ पाळवाना क्रममां जे दिवस जिनदासने छुटो हतो ते दिवस सौभाग्यदेवीने नियम हतो अने जे दिवस सौभाग्यदेवीने छुटो हतो ते दिवस जिनदासने नियम हतो. आवी हकीकत बनवाथी सौभाग्यदेवीए जिनदासने कह्युं के-" हे स्वामी! हुं तो निरंतर शीळ पाळीश, तमे खुशीथी बीजी स्त्री साथे लग्न करो. " तेणे कह्युं के-" मारे तो फरी लग्न करवा नथी, परंतु हुं तो योग्य अवसरे दीक्षा लइश. " पछी ते दंपतीए गुरु पासे जइने जीवन पर्यंत हंमेशने माटे ब्रह्मचर्य अंगीकार कर्युं; अने पहेरामणी विगेरे करीने श्रीसंघनो पण सत्कार कर्यो. माटे ते दंपतीना जेवा बाळब्रह्मचारी अमे तो कोइ पण सांभळ्यो नथी. " आ प्रमाणेनुं वृत्तांत सांभळीने शिवंकर ते जिनदासनी विशेष प्रकारे सेवाभक्ति करीने पोताने गाम गयो.

आ प्रमाणे द्रौपदी, कळावती, शीळवती, सुभद्रा, सुदर्शन शेठ अने जंबूस्वामी विगेरेनां सेंकडो दृष्टांतो शीळोपदेशमाळा, शीळकुळक विगेरेथी शीळव्रतना माहात्म्य विषे जाणवां.

हवे तप धर्मनुं वर्णन करे छेः

तपना जेवुं भावमंगळ बीजुं एक पण नथी. केमके तेज भवमां नियमा मुक्ति पामनारा तीर्थंकरोए पण तप कर्युं हतुं. ते विषे कह्युं छे के—

संवच्छरमुसभजिणो, छम्मासा वद्धमाणजिणचंदो ।
इअ विहरिआ निरसणा, जइज्जए उवमाणेणं ॥ १ ॥

भावार्थ—" ऋषभ स्वामीए एक वर्ष सुधी अने जिनोने विषे चंद्र समान **श्रीवर्धमान** स्वामीए छ मास सुधी निरनशनपणे (उपवास करीने) विहार कर्यो हतो तेथी बीजाओए पण यथाशक्ति तपने विषे प्रयत्न करवो. "

तपथी इष्ट मनोरथनी सिद्धि थाय छे. चक्रवर्ती राजाओ अठ्ठम तप करीनेज मागध, वरदाम, गंगा, सिंधु अने प्रभास विगेरेना अधिष्ठायक देवोने जीते छे. तथा हरिकेशी विगेरे मुनिनी जेम तपथी देव सांनिध्य थाय छे. श्री ऋषभदेव स्वामीनी पुत्री बाहुबळीनी बेन सुंदरीनी जेवुं तप करवुं. तेनुं तप नीचेनी गाथाथी जाणवुं.

सट्ठिं वाससहस्सा, अविलंबं अंबिलाइं विहिआइं ।
जीए निरकमण कए, सा सुंदरी साविआ धन्ना ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेणे दीक्षा लेवाने माटे साठ हजार वर्ष सुधी निरंतर आंबेल कर्यां ते सुंदरी श्राविकाने धन्य छे. " वळी तपथी कोढ विगेरे व्याधिओ पण नाश पामे छे.

छज्जइ सणंकुमारो, तवबल खेलाइ लध्धि संपन्नो ।
निट्ठुअखडिअंगुलि, सुवन्नसोहं पयासंतो ॥ १ ॥

भावार्थ—" छ खंडने जीतनार सनत्कुमार चक्रीने तपना प्रभावथी खेलौषधि आदि अनेक लब्धिओ प्राप्त थइ हती, तेथी पोतानी कोढवाळी आंगळी उपर थुंक चोपडीने तेमणे सुवर्ण समान कांतिवाळी करी देखाडी हती. (सनत्कुमारे दीक्षा लीधा पछी तेमना शरीरनी चिकित्सा करवाना मिषथी वैद्यनां रूप धारण करीने बे मिथ्यात्वी देवो परीक्षा करवा आव्या हता, ते वखतनी आ वात छे.) माटे तप अवश्य करवुं. कह्युं छे के—

विरज्य विषयेभ्यो यैस्तेपे मोक्षफलं तपः ।
तैरेव फलमंगस्य जगृहे तत्त्ववेदिभिः ॥ २ ॥

भावार्थ—" विषयो थकी विरक्त थइने जेओए मोक्षफळ आपनारुं तप कर्युं छे, तेवा तत्वज्ञानीओएज मनुष्यदेहनुं फळ ग्रहण कर्युं छे. "

जे कारण माटे त्रस अने स्थावर अनेक प्राणीओनो क्षय करनारुं, वज्र जेवा कठण लोढाना तपावेला गोळा समान ज्यां त्यां विनाश करनारुं अने वस्त्रादिक अनेक वस्तुओनो पंण विनाश करनारुं एवुं पुष्ट शरीर तद्दन असारज छे; तेमां सार मात्र तेना वडे तप साधवो तेज छे. केमके—

अथिरेण थिरो समलेण निम्मलो परवसेण साहिणो ।
देहेण जइ विढप्पई धम्मो ता किं न पज्जुत्तं ॥ १ ॥

भावार्थ—" आ देह अस्थिर, मलीन अने पराधीन छे; तेनावडे जो स्थिर, निर्मळ अने स्वाधीन एवो धर्म साधी शकाय छे तो तेने विषे शा माटे उपयुक्त न थवुं ? "

ते तप शरीरनी समाधि वडे करवो. कह्युं छे के–

सो अ तवो कायव्वो, जेण मणोमगुणं न चिंतेइ ।
जेण न इंदियहाणि, जेण य जोगा न हायंति ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे तप करवाथी मन अवगुणनुं चिंतन न करे, जेना वडे इंद्रियो हानि न पामे, अने जेनावडे मन, वचन अने कायाना जोग क्षीण न थाय एवो तप करवो. "

आवो तप पण मात्र कर्म निर्जराने माटेज करवो.

कह्युं छे के–" आ लोक संबंधी सुखसंपत्तिने अर्थे तप न करवो, परलोकमां सुखप्राप्ति थवाने अर्थे तप न करवो, लोको प्रशंसा करशे एवी इहावडे पण तप न करवो, मात्र निर्जराने अर्थेज तप करवो. " विवेक विना करेलुं तप मात्र शरीरने कष्टकारीज थाय छे. जुओ, तामली तापसे जेटलो तप कर्यो हतो तेटलो तप जो जैन शासनविधि प्रमाणे निरिच्छ भावे कर्यो होय तो तेथी सात जीव सिद्धिने पामे, परंतु अज्ञानना दोषथी ते इशान देवलोकेज गयो हतो.

वळी तपस्वीए क्रोधनो त्याग करवो जोइए. केमके क्रोध रूपी अग्नि घणा तपने पण चंदनना काष्टसमूहनी जेम एक क्षणमां बाळी नांखे छे. कह्युं छे के–

एकेन दिनेन तेजोऽयूहं, षण्मासिकं ज्वरो हन्ति ।
कोपः क्षणेन सुकृतं यदर्जितं पूर्वकोट्यापि ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम एक दिवसनो ज्वर छ मासना तेजसमूहने हणे छे, तेम कोप कोटीपूर्ववडे उपार्जन करेलां सुकृतनो पण एक क्षणमां नाश करे छे." वळी—

द्रुमोद्भवं हंति विषं न हि द्रुमं न वा भुजंगप्रभवं भुजंगमम् ।
अतः समुत्पत्तिपदं दहत्यहो महोल्बणं क्रोधहलाहलं पुनः ॥ २ ॥

भावार्थ—"वृक्षमांथी उत्पन्न थतुं विष वृक्षनो नाश करतुं नथी, अने सर्पथी उत्पन्न थतुं विष सर्पनो नाश करतुं नथी; परंतु अहो ! क्रोध रूपी महा भयंकर हलाहल विष तो पोताना उत्पत्तिस्थानने ज बाळे छे. वळी—

कषाया देहकारायां, चत्वारो यामिका इव ।
यावज्जाग्रति पार्श्वस्थास्तावन्मोक्षः कुतो नृणाम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—" देह रूपी केदखानामां चार कषाय रूपी चार चोकीदारो ज्यां सुधी समीप भागे जागता रहेला छे, त्यां सुधी मनुष्योनो मोक्ष क्यांथी थाय ? "

अहीं शुष्कांगुळी भग्नकारकनुं दृष्टांत छे ते अन्य ग्रंथोथी जाणी लेवुं. यथाविधि तप करनारा श्रावकोने प्रांते तेनुं उद्यापन करवाथी मोटुं फळ थाय छे. कह्युं छे के—

वृक्षो यथा दोहदपूरणेन कायो यथा षड्रसभोजनेन ।
विशेषशोभां लभते यथोक्तेनोद्यापनेनैव तथा तपोऽपि ॥१॥

भावार्थ—" जेम दोहद पूर्ण करवाथी वृक्ष अने छ रसना भोजनथी शरीर विशेष शोभा पामे छे, तेम विधि पूर्वक उद्यापन करवाथी तप पण विशेष शोभा पामे छे. वळी—

लक्ष्मीः कृतार्था सफलं तपोऽपि ध्यानं सदोच्चैर्जिनबोधिलाभः ।
जिनस्य भक्तिर्जिनशासनश्रीर्गुणाः स्युरुद्यापनतो नराणाम् ॥२॥

भावार्थ—"विधि पूर्वक उद्यापन (उजमणुं) करवाथी लक्ष्मी कृतार्थ थाय छे, तप सफळ थाय छे, उंचा प्रकारनुं ध्यान प्राप्त थाय छे, जिनेश्वर संबंधी बोधिरत्ननो लाभ थाय छे, जिनेश्वरनी भक्ति थाय छे, अने जिनशासननी शोभा वधे छे, विगेरे अनेक गुण थाय छे.

श्री पेथड संघवीए नवकार मंत्रना आराधनमाटे उजमणुं कर्युं हतुं. तेमां सुवर्णमुद्रिका, मणि, मुक्ताफळ, प्रवाळां, सर्व जातिनां फळ, सर्व जातिनुं सोनैया विगेरे द्रव्य, सर्व जातिनी सुखडी विगेरे पक्वान, चंद्रुवा, महाध्वजाओ, विगेरे अडसठ अडसठ मूकीने अति विस्तारवाळुं समग्र जनने विस्मय करनारुं उद्यापन कर्युं हतुं, ए प्रमाणे बीजाए पण शक्ति प्रमाणे करवुं जोइए.

हवे भाव धर्मनुं वर्णन करे छे.

दानं तपस्तथा शीलं नृणां भावेन वर्जितम् ।
अर्थहानिः क्षुधापीडा कायक्लेशश्च केवलम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" भाव विना दान करवाथी केवळ द्रव्यनी हानिज थाय छे, भावविनाना तपथी मात्र क्षुधानी पीडाज सहेवाय छे, अने भावविनाना शीळ व्रतथी तो फक्त कायानेज क्लेश थाय छे, ते विना बीजुं कांइ फळ थतुं नथी. "

भावना **भरत** चक्रीना जेवी भाववी, के जेथी भोग भोगव्या छतां पण मुक्ति आपनारी थाय. **मरुदेवा** माता कोइ वखत एकासणुं पण नहीं कर्या छतां मात्र भावनाथीज मुक्ति पाम्या हता; तथा **प्रसन्नचंद्र** मुनिने, **वल्कलचीरीने** अने गौतमस्वामीए प्रतिबोधेला पंदरसो तापसोने मात्र भावथीज केवळज्ञान थयुं हतुं. कह्युं छे के–

थोवं पि अणुट्ठाणं, भावविसुद्धं हणइ कम्ममलं ।
लहुओ वि सहस्सकिरणो, तिमिरसमूहं पणासेइ ॥ १ ॥

भावार्थ—" थोडुं पण अनुष्ठान जो भावनी विशुद्धि पूर्वक कर्युं होय तो ते कर्ममळने हणे छे. केमके नानो (उदय पामतो) पण सूर्य अंधकारसमूहनो नाश करे छे. "

भाव बे प्रकारनो छे. प्रशस्त अने अप्रशस्त. तेमां जिनाज्ञामां तत्परपणे, कांइ पण नियाणुं कर्या विना, इच्छा रहितपणे, मात्र संसारनो पार पामवा माटे दानादि धर्मनो विस्तार करवाथी प्रशस्त भाव थाय छे, अने कांइ पण आ-शंसादि दोष सहित दानादिक अनुष्ठान करवाथी अप्रशस्त भाव थाय छे.

भावथी चित्तनी एकाग्रता राखवा वडे घणा जीवो मोक्षे गया छे. परंतु भाव रहित अनेक प्रकारना दानादिक करवाथी एक पण जीव मोक्षे गयो नथी. सारांश ए छे के–

चित्तसाध्यमिह दानमुत्तमं, शीलमप्यविकलं सुदुर्द्धरम् ।
दुष्कराणि च तपांसि भावना, स्वीयचित्तवशगेति भाव्यताम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" मनना भाव सहित उत्तम दान देवुं, दुःखथी पाळी शकाय एवुं निर्मळ शील पाळवुं. कष्टथी करी शकाय एवुं तप करवुं, अने चित्तने स्थिर राखीने भावना भाववी. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य नवदशाधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २१९ ॥

व्याख्यान २२० मुं.

विवेकीनुं कर्तव्य.

विवेकवान्नरः कश्चित्, स्वभावाद्धर्मतत्त्वताम् ।
शीघ्रं विज्ञाय गृह्णाति, कपिलाह्वगुरोरिव ॥ १ ॥

भावार्थ—" कोइक विवेकी पुरुष स्वभावथीज धर्मनुं तत्व जाणीने कपिल नामना गुरुनी जेम तत्काळ तेने ग्रहण करे छे. "

कपिल मुनिनी कथा.

कौशांबी नामनी नगरीमां जितशत्रु नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने चौद विद्यानो पारगामी काश्यप नामनो ब्राह्मण पुरोहित हतो. तेने यशा नामनी पत्नी हती, अने कपिल नामे पुत्र हतो. ते पुत्रनी बाल्यावस्थामांज तेनो पिता मरण पाम्यो. एटले कपिलने बाळक तथा अज्ञानी जाणीने राजाए तेना बापने स्थाने बीजा कोइ अयोग्य ब्राह्मणने पुरोहितपदे स्थापन कर्यो. ते हमेशां घोडा पर बेसी माथे छत्र धरावी घणा सेवको सहित राजद्वारमां जतो, त्यारे तेने जोइने कपिलनी माता रुदन करती हती. एकदा पोतानी माताने रोती जोइने कपिले तेनुं कारण पूछ्युं के–"हे माता ! तुं आ ब्राह्मणने जोइने केम रुवे छे ? मारी पासे तेनुं खरेखरुं कारण कहे. " त्यारे तेनी माताए कह्युं के–" हे पुत्र ! तारा पिताने स्थाने राजाए आ ब्राह्मणने राख्यो छे. अत्यारे जेवो आ संपत्ति-

वाळो देखाय छे, तेवाज तारा पिता पण प्रथम हता. तेथी आने जोइ तारा पितानुं स्मरण थवाथी खेद थवाने लीधे हुं रोउं छुं. तुं अभण होवाथी आ तारा पितानी लक्ष्मी पाम्यो छे." कपिल बोल्यो के-" हे माता! मारा पितानुं स्थान मने शी रीते मळे?" ते बोली के-" तुं विद्याभ्यास कर, तो पछी राजा तने तारा पिताने स्थाने स्थापन करशे." ते बोल्यो के-" हे माता! हुं कोनी पासे अभ्यास करुं?" त्यारे तेणे कह्युं के-"आ नगरीमां तो सर्व तारा द्वेषी छे; तेथी तुं श्रावस्ती नगरीए जा. त्यां तारा पितानो मित्र इंद्रदत्त नामनो पंडित ब्राह्मण रहे छे ते तने समग्र कळामां निपुण करशे." ते सांभळीने कपिल श्रावस्ती नगरीए गयो. त्यां इंद्रदत्तना चरणने नमीने तेणे नम्रताथी विनंति करी के-" हे पूज्य काका! मारी माताए मने तमारी पासे मोकल्यो छे, तेथी हुं अभ्यास करवा आव्यो छुं." ते सांभळी इंद्रदत्ते तेने पुत्रनी जेम खोळामां बेसाडी खुशी खबर पूछया. पछी तेने जमाडीने कह्युं के-"हुं तने विद्याभ्यास करावीश, पण तारा भोजनने माटे शुं थशे? केमके मारा घरनी स्थिति एवी नथी के हुं तने जमाडी शकुं." त्यारे कपिल बोल्यो के-" हुं भिक्षावृत्ति करीने निर्वाह चलावीश." इंद्रदत्ते कह्युं के-" हे वत्स! भिक्षा माटे भमवाथी विद्याभ्यास थइ शके नहीं. अने भोजन विना पण अभ्यास बनी शके नहीं; केमके भोजन विना मृदंग[१] पण वागतुं नथी. माटे प्रथम भोजनने माटे विचार करीए." एम कहीने ते बाळकने लइ इंद्रदत्त शालिभद्र नामना कोइ शेठने घेर गयो. तेना घर पासे उभो रहीने मोटे स्वरे गायत्री मंत्र बोलीने पोते ब्राह्मण छे एम जणाव्युं. एटले शालिभद्र श्रेष्ठीए तेने बोलावीने पूछ्युं के-" हे ब्राह्मण! तमारे शुं जोइए छे? जे इच्छा होय ते मागो." इंद्रदत्ते कह्युं के-" आ ब्राह्मणनो पुत्र विद्यानो अर्थी छे. तेने हमेशां आप भोजन आपो, एटले एने हुं भणावीश; मारी पासे धन नथी, माटे हुं आपनी पासे तेनुं हंमेशनुं भोजन मागुं छुं." आ प्रमाणे सांभळीने श्रेष्ठीए तेने हमेशां भोजन करावावानुं अंगीकार कर्युं. पछी ते दिवसथी कपिल इंद्रदत्तनी पासे अभ्यास करवा लाग्यो, अने शालिभद्रने घेर जमवा जवा लाग्यो.

शालिभद्र शेटने घेर कपिल ज्यारे जमवा बेसतो, त्यारे तेने पीरसवा एक दासी आवती; तेनी साथे हास्य विनोद करतां अनुक्रमे ते दासी उपर आसक्त थयो; अने दासी पण तेना पर आसक्त थइ. पछी ते बन्ने स्त्रीपुरुषनी जेम क्रीडा करवा लाग्या. "अहो! विषयने धिक्कार छे! केमके विषयमां आसक्त थयेलो पुरुष कांइ पण कृत्याकृत्यने जाणतो नथी." हवे ए प्रमाणे क्रीडा करतां तेमने केट-

१ मृदंग उपर आटो पलाळीने चोंटाडे छे त्यारे ते बरावर अवाज करे छे.

लाक दिवसो व्यतीत थया. एकदा दासीए कपिलने कह्युं के-" मारा स्वामी तरीके तो तमेज छो. परंतु तमे धनरहित छो, तेथी मारा निर्वाहने माटे हुं बीजा पुरुषने सेवुं ? पतिबुद्धिथी नहीं. " कपिले ते वात अंगीकार करी. त्यार पछी एक दिवस ते नगरमां सर्व दासीओनो कांइक उत्सव हतो, त्यारे ते दासी पुष्पनी माळा विगेरे लेवा माटे कांइ पण द्रव्य नहीं होवाथी उदासीमां पडी; तेने उदास जोइने कपिले पूछयुं के-" हे प्रिया ! तुं आज उदास केम जणाय छे ? " ते बोली के-" आजे सर्व दासीओनो उत्सव छे तेथी पुष्पपत्र विगेरेनी जरूर छे. जो मारी पासे पुष्पमालादि न होय तो बीजी दासीओमां मारी मश्करी थाय." आ प्रमाणे तेनुं वचन सांभळीने तेना दुःखे दुःखी थयेलो कपिल पण उदास थइ गयो, अने कांइ पण बोली शक्यो नहीं. तेने तेवी रीते खेद पामेलो जोइने दासी बोली के-" हे स्वामी ! तमे खेद न करो; आ नगरमां धनो करीने एक श्रेष्ठी छे. तेने प्रातःकाळे जे जाग्रत करे तेने ते श्रेष्ठी बे मासा सुवर्ण आपे छे, माटे तमे त्यां जइने तेने प्रथम जगाडशो तो ते तमने बे मासा सोनुं आपशे; ते मने आजो, जेथी मारुं अने तमारुं कार्य थइ रहेशे. " कपिले ते अंगीकार कर्युं.

पछी कपिल ते दिवसनी रात्रे " बीजो कोइ वहेलो जइने जगाडशे " एवा भयथी मध्यरात्रिए जाग्यो. रात्रि चंद्रवती होवाथी केटली रात्रि बाकी छे ते जाण्या विनाज ते चाल्यो. रस्तामां जतां कोटवाळे पकड्यो, अने चोर धारीने बांध्यो. केमके " चोरना आचरण तेवांज होय छे. " पछी प्रातःकाळे सिपाइओ तेने **प्रसेनजित** राजा पासे लइ गया. राजाए तेने पूछयुं के-" हे ब्राह्मण ! तुं कोण छे ? क्यां रहे छे ? अने शा माटे आ गाममां आव्यो छे ? " त्यारे कपिले पाछली सर्व वात कही बतावी. ते सांभळीने राजाने दया आववाथी तेने कह्युं के-" हे महात्मा ! तारी जे इच्छा होय ते माग, हुं तारी इच्छा प्रमाणे तने आपीश." कपिल बोल्यो के-" हे राजा ! हुं विचार करीने पछी मागुं. " एम कहीने ते अशोक वनमां जइ विचार करवा लाग्यो के-" बे मासा सुवर्ण मागवाथी तो वस्त्र विगेरे कांइ थाय नहीं, माटे सो महोर मागुं ? सो महोरथी पण घर घरेणां विगेरे थाय नहीं. त्यारे हजार मागुं ? हजारथी पण पुत्रना विवाह विगेरे उत्सवो थाय नहीं, त्यारे एक लाख महोर मागुं ? लाखथी पण दान, मान पूर्वक मित्र, बांधव, गरीब विगेरेनो उद्धार थइ शके नहीं, माटे करोड मागुं ? सो करोड मागुं ? हजार करोड मागुं ? " आ प्रमाणे विचार करतां करतां तेने शुभ कर्मनो उदय थवाथी आवी बुद्धि उत्पन्न थइ के—

जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवढ्ढइ ।
दो मास कणय कज्जं, कोडिए वि न निट्ठियं ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम जेम लाभ थाय छे तेम तेम लोभ थाय छे. लाभथी लोभ वृद्धि पामे छे; केमके बे मासा सुवर्णनुं काम हतुं ते छतां करोड सोनामहोरथी पण पूरुं पडतुं नथी. "

" अहो ! लोभ रुपी सागर दुर्धर छे, तेने पूर्ण करवाने कोइ पण शक्तिमान नथी. हुं विद्या माटे अहीं आव्यो, घर तजीने परदेशमां पर घेर आव्यो. इंद्रदत्त मने धर्मार्थेज विद्या आपे छे, अने शालिभद्र शेठ भोजन आपे छे, तो पण अल्प बुद्धिवाळा में यौवनना मदथी दासी साथे गमन कर्युं. मारा निर्मळ कुळने कलंक लगाड्युं. माटे विषयोनेज धिक्कार छे के जेथी जीवो आवी रीते विडंबना पामे छे." इत्यादि विचार करतां करतां ते विषयो थकी विरक्त थयो. तेने जातिस्मरणज्ञान थयुं, तेथी ते स्वयंबुद्ध थयो. एटले मस्तक परना केश पोताने हाथे उखेडीने देवताए आपेला रजोहरण, मुखवस्त्रीका विगेरे मुनिवेशने तेणे ग्रहण कर्यो. पछी कपिल मुनि प्रसेनजित राजानी पासे गया. राजाए पूछयुं के-" आ शुं कर्युं ? " तेणे " जहा लाहो तथा लोहो० " ए गाथा कहीने पोताना विचार जणाव्या. राजाए कह्युं के-" मारी आज्ञा छे, तुं सुखेथी सांसारिक भोग भोगव अने दुष्कर व्रत मूकी दे. " कपिल मुनिए कह्युं के-" ग्रहण करेलुं व्रत प्राणांते पण हुं मूकीश नहीं. हुं हवे निर्ग्रंथ थयो छुं. तेथी हे राजा ! तने धर्म लाभ हो. " आ प्रमाणे कही कपिल मुनि त्यांथी नीकळीने ममता रहित, अहंकार रहित अने इच्छा रहितपणे पृथ्वी पर विहार करवा लाग्या. आ प्रमाणे व्रतनुं पालन करतां कपिल मुनिने छ मास व्यतीत थया एटले केवळज्ञान उत्पन्न थयुं.

राजगृही नगरीनी पासे अढार योजन विस्तारवाळी अति भयंकर अटवी छे. तेमां बलभद्र विगेरे पांचसो चोर वसे छे. तेओ बोधने योग्य छे एम जाणीने कपिल मुनि ते अटवीमां गया. एटले पेला चोरो तेमनी पासे आव्या. पल्लिपतिए मुनिने कह्युं के-" तमने नृत्य आवडे छे ? " लाभ धारीने मुनि बोल्या के-" वाजित्र वगाडनार विना नृत्य थाय नहीं. " चोरो बोल्या के-" अमे हाथनी ताळीओ वगाडशुं, तमे नाच करो. " एटले कपिल मुनि जतना पूर्वक नृत्य करवा लाग्या, अने चोरो चारे बाजु फरतां फरतां ताळीओ पाडवा लाग्या. पछी नाच करतां करतां मुनि प्राकृत भाषामां आ प्रमाणेनी गाथा बोलवा लाग्या.

अध्रुवे असासयंमि, संसारंमि दुरकपुराए ।
किं नाम हुज्जं तं कम्मं, जेणाहं दुग्गइं न गच्छेज्जा ॥ १ ॥

भावार्थ—"अध्रुव, अशाश्वत अने दुःखथी पूर्ण एवा संसारमां एवुं कयुं कर्म छे के जेथी जीव दुर्गतिमां न जाय ?"

आ विगेरे पांचसो गाथा कपिल मुनिए कही. ते सांभळीने ते पांचसो चोर प्रतिबोध पाम्या. तेओने गुरुए चारित्र आप्युं; अने देवताए मुनिवेश आप्यो. ते धारण करीने तेओ महर्षि थया. पछी ते सर्वे केवळी गुरुनी साथे पृथ्वीपर विहार करवा लाग्या. केटलाक वर्ष सुधी विहार करीने कपिल केवळी मोक्षे पधार्या.

"आ प्रमाणे कपिल मुनि सम्यक् भाववडे केवळज्ञान पाम्या, अने बळभद्र आदि चोरोने प्रतिबोध पमाडीने सिद्धिपदने प्राप्त थया."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य विंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२० ॥

व्याख्यान २२१ मुं.

शुद्धाशुद्ध व्रत पालन करवानुं फळ कहे छे.

बहुकालं व्रतं चीर्णं, सातिचारं निरर्थकम् ।
एकमपि दिनं साधोर्व्रतं शुचि शुभंकरम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" अतिचार सहित घणा काळ सुधी व्रतनुं आचरण कर्युं होय तो पण ते निरर्थक छे; अने मात्र एकज दिवस पवित्रपणे एटले अतिचार रहित मुनिव्रतनुं पालन कर्युं होय तो ते शुभ फळने आपे छे."

आ उपर एक दृष्टांत छे ते नीचे प्रमाणे—

कंडरीक पुंडरीकनी कथा.

जंबूद्वीपना महाविदेह क्षेत्रमां पुंडरीकिणी नामे नगरी छे. तेमां महापद्म नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने बे पुत्रो थया. पछी राजाए धर्म श्रवण करतां वैराग्य उत्पन्न थवाथी मोटा पुत्र पुंडरीकने राजगादी आपी, अने नाना पुत्र कंडरीकने युवराजपदवी आपी. पोते दीक्षा लइ कर्मनो क्षय करीने मुक्ति पाम्या.

एकदा केटलाएक साधुओ ते नगरीमां आव्या. तेमने वांदवा माटे बन्ने भाइओ गया. तेमने मुनिए धर्मनुं तत्त्व आ प्रमाणे समजाव्युं के—

भ्राम्यन् भवार्णवे प्राणी, प्राप्य कृच्छ्रान्नृणां भवं ।
पोतवद्यो हारयति, मुधा कोऽन्यस्ततो जडः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे प्राणी आ संसारसमुद्रमां भटकतां महा कष्टे वहाण समान मनुष्यभवने पामीने फोगट गुमावी दे छे, तेना थकी वधारे मूर्ख बीजो कोण कहेवाय ? "

आ प्रमाणेनी देशना सांभळीने वैराग्य पामेला बन्ने भाइओ घेर आव्या. पछी पुंडरीके नाना भाइने कह्युं के–" हे वत्स ! आ राज्य ग्रहण कर, हुं दीक्षा ग्रहण करीश. " कंडरीक बोल्यो के–" हे भाइ ! आ संसारना दुःखमां मने केम नांखो छो ? हुं दीक्षा लइश. " मोटा भाइए कह्युं–" हे भाइ ! युवावस्थामां इंद्रियोनो समूह जीती शकातो नथी, अने परीसह पण सहन थइ शकता नथी. " कंडरीक बोल्यो के–" हे भाइ ! नरकनां दुःख करतां परीसहादिनुं दुःख कांइ वधारे नथी, माटे हुं तो चारित्र अंगीकार करीश. " कंडरीकनो आवो आग्रह होवाथी पुंडरीके तेने रजा आपी, एटले तेणे मोटा उत्सव पूर्वक दीक्षा ग्रहण करी; अने पुंडरीक तो मंत्रीओना आग्रहथी भावचारित्र धारण करीने घरमांज रह्यो. कंडरीक ऋषि अगियार अंग भण्या, परंतु लुखां सुकां भोजनथी तथा घणुं तप करवाथी तेना शरीरमां केटलाक रोगो उत्पन्न थया.

अन्यदा गुरुनी साथे विहार करतां करतां कंडरीक मुनि पोताना नगरमां आव्या. पुंडरीक राजा तेमने वांदवा गयो. सर्व साधुओने वांद्या, परंतु शरीर कृश होवाथी पोताना भाइने ओळख्या नहीं. तेथी तेणे गुरु महाराजने पोताना भाइ संबंधी समाचार पूछ्या. गुरुए कंडरीक मुनिने बतावीने कह्युं के–" आ जे मारी पासे बेठा छे तेज तमारा भाइ छे. " राजा तेमने नम्यो. पछी तेमनुं शरीर रोगग्रस्त जणावाथी गुरुनी रजा लइने तेमने राजा शहेरमां लइ गयो, अने पोतानी वाहनशाळामां राखी सारां सारां राजऔषधोवडे तेमने रोगरहित कर्या. त्यां राज्य संबंधी स्वादिष्ट भोजन करवाथी ते मुनि रसमां लोलुप थइ गया. तेथी त्यांथी विहार करवानी इच्छा न थइ. एटले राजा तेने हमेशां कहेवा लाग्यो के" हे पूज्य मुनि ! तमे तो अहर्निश विहार करनारा छो; द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भाव ए चारे प्रकारना प्रतिबंधथी रहित छो. हवे निरोगी थवाथी तमे विहार करवा उत्सुक थया हशो. तमने निर्ग्रंथने धन्य छे. हुं अधन्य छुं. केमके भोग रूपी कादवमां खुंच्यो सतो कदर्थना

पामुं छुं." इत्यादि वचनो राजाए वारंवार कह्यां. एटले कंडरीक मुनि लज्जा पामी त्यांथी विहार करीने गुरु पासे गया.

एक दिवस वसंत ऋतुमां पोतपोतानी स्त्रीओ साथे क्रीडा करतां नगरजनोने जोइने चारित्रावरणकर्मना उदयवडे कंडरीक मुनिनुं मन चारित्रथी चलायमान थयुं. तेथी ते गुरुनी आज्ञा लीधा विना पुंडरीकिणी नगरी पासेना वनमां आव्या; अने पात्रां विगेरे उपकरणोने झाडनी शाखा उपर लटकावीने कोमळ लीलां घास उपर आळोटवा लाग्या. तेने आवी रीते संयमथी भ्रष्ट चित्तवाळा थयेला तेनी धावमाताए जोया. तेथी तेणे नगरमां जइने पुंडरीक राजाने ते वात कही. ते सांभळीने राजा परिवार सहित तत्काळ त्यां आव्यो, ते वखते कंडरीकने चिंतातुर, प्रमादी अने भूमि खोतरतो जोइने राजाए कह्युं के-" हे सुखदुःखमां समान भाववाळा ! हे निःस्पृह! हे निर्ग्रंथ ! हे मुनि ! तमे पुण्यशाळी छो, अने संयम पाळवावडे धन्य छो." इत्यादि अनेक प्रकारे तेनी प्रशंसा करी, तोपण ते नीचुंज जोइ रह्या, तेम कांइ उत्तर पण आप्यो नहीं. तेथी राजाए तेने संयमथी भ्रष्ट थयेला अने संयमनी अनिष्टतावाळा जाणीने पूछ्युं के-" हे मुनि ! आ भाइना सामुं केम जोता नथी ? प्रशस्त ध्यानमां मग्न छो के अप्रशस्त ध्यानमां ? जो अप्रशस्त ध्यानमां आरूढ थया हो तो तमे पूर्वे बळात्कारे मोटुं भावराज्य ग्रहण कर्युं छे, तेना चिन्हभूत पात्रादिक मने आपो, अने परिणामे महाविरस फळ आपनार राज्यना चिन्हभूत आ पट्टहस्ती विगेरे तमे ग्रहण करो." आ प्रमाणे राजानुं वचन सांभळीने कंडरीक बहु हर्ष पाम्यो अने तत्काळ पट्टहस्ती उपर चडीने नगरमां गयो. साधुमां श्रेष्ठ एवा पुंडरीके विलाप करती राणीओ विगेरेने सापनी कांचळी माफक तजी दइने अने यतिनो वेषग्रहण करीने त्यांथी तत्काळ विहार कर्यो.

अहीं कंडरीके घणा काळनो भूख्यो होवाथी तेज दिवसे इच्छा मुजब भक्ष्याभक्ष्यना विवेक शिवाय अनेक प्रकारनुं भोजन कर्युं. ते आहार कृश शरीरे नहीं पचवाथी तथा रात्रिए भोगविलासने माटे जागरण करवाथी तत्काळ रात्रिमांज विसूचिकानो व्याधि उत्पन्न थयो, पेट फुली गयुं, अपान वायु बंध थयो अने तृषाक्रांत थवाने लीधे अत्यंत पीडा पामवा लाग्यो. ते अवसरे " व्रतनो भंग करवाथी आ अति पापी छे " एम धारीने सेवकपुरुषोए तेनुं औषध कर्युं नहीं. तेथी तेणे विचार्युं के " जो आ रात्रि वीती जाय तो प्रातःकाळमांज सर्व सेवकोने हणी नाखुं." एवी रीते रौद्र ध्यानमां वर्ततो ते रात्रिमांज कंडरीक मृत्यु पाम्यो अने सातमी नरकमां अप्रतिष्ठान नामना नरकावासमां उत्पन्न थयो.

पुंडरीक राजर्षि तो पोतानी नगरीथी चालतांज अभिग्रह कर्यो के "गुरु पासे जइ व्रत ग्रहण कर्या पछी आहार लइश." एवो अभिग्रह करीने चालतां मार्गमां क्षुधा, तृषा विगेरे परिषह सहन करवा पड्या छतां अने कोमळ देह छतां पण ते खेद पाम्या नहीं. बे दिवसे छठनो तप थतां गुरु पासे जइने चारित्र लीधुं. पछी गुरुनी आज्ञा लइने पारणुं करवा माटे गोचरी लेवा गया. तेमां तुच्छ अने लुखो आहार पामीने तेनावडे तेमणे प्राणवृत्ति करी. परंतु तेवो तुच्छ आहार पूर्वे कोइ वखत नहीं करेलो होवाथी तेमने अति तीव्र वेदना थइ; तोपण शुभ आराधना करीने पुंडरीक राजर्षि मृत्यु पाम्या, अने सर्वार्थसिद्धि नामना विमानमां उत्पन्न थया. ते विषे छठा अंगमां कह्युं छे के—

वाससहस्संपि जई, काउणवि संयमं विउलंपि ।
अंते किलिट्ठभावो, नवि सिज्झइ कंडरियव्व ॥ १ ॥

भावार्थ—" हजार वर्ष सुधी विपुल संयम पाळ्या छतां पण जो अंते क्लिष्ट अध्यवसाय थाय छे तो ते कंडरीकनी जेम सिद्धिपदने पामता नथी. "

अप्पेणवि कालेण, केइ जहागहिय सीलसामन्ना ।
साहंति नियय कज्जं, पुंडरिय महारिसिव्व जहा ॥ २ ॥

भावार्थ—" थोडो काळ मात्र पण चारित्र ग्रहण करीने जे यथार्थ पाळे छे ते पुंडरीक ऋषिनी जेम पोतानुं कार्य सिद्ध करे छे."

" एवी रीते सम्यक् प्रकारे चारित्र पाळीने केटलाक जीवो थोडा काळमां मोक्षगतिने पामे छे, अने बीजा अतिचार सहित घणा काळ सुधी चारित्र पाळे छे तोपण तेओ सिद्धिपदने पामता नथी. "
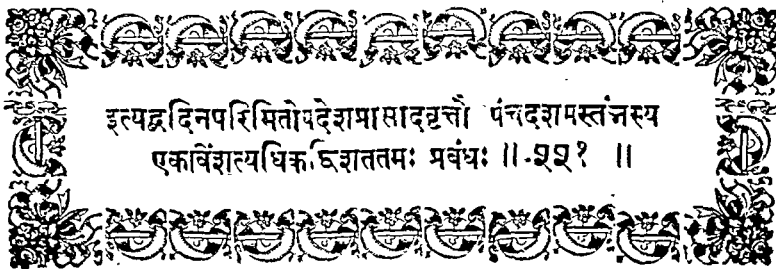
इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य
एकविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२१ ॥

व्याख्यान २२२ मुं.

सत्संग.

'उत्तम मनुष्ये सत्संग करवो' एवा सत्पुरुषना शिक्षावाक्यनी पुष्टिने माटे कहे छे के—

उत्तमाधमयोः संगफलं लब्धं परीक्षया ।
प्रभाकरेण विप्रेण, ततः कार्या सुसंगतिः ॥ १ ॥

भावार्थ—"प्रभाकर नामनो ब्राह्मण उत्तम अने अधम संगतिनुं फळ पाम्यो छे तेनुं दृष्टांत सांभळीने सुज्ञ जनोए परीक्षा करीने सत्संग करवो."

प्रभाकर विप्रनुं दृष्टांत.

वीरपुर नामना नगरमां दिवाकर नामे एक ब्राह्मण रहेतो हतो, ते पोताना षट्कर्ममां तत्पर हतो. तेने प्रभाकर नामे पुत्र हतो. ते साते व्यसनमां आसक्त हतो, अने निरंकुश हाथीनी जेम स्वेच्छाए चोतरफ भमतो हतो. एक दिवस तेने तेना पिताए शीखामण दीधी के "हे पुत्र ! तुं सत्संग कर. धूर्त अने अधम जनोना संगथी सारुं शील पण नाश पामे छे. कह्युं छे के—

पश्य सत्संगमाहात्म्यं, स्पर्शपाषाणयोगतः ।
लोहं स्वर्णीभवेत् स्वर्णयोगात् काचो मणीयते ॥ १ ॥

भावार्थ—"सत्संगनुं माहात्म्य जुओ के पारस पाषाण (पत्थर) ना योगथी लोढुं सुवर्ण थाय छे अने सुवर्णना योगथी काच मणि थाय छे."

विकाराय भवत्येव, कुलजोऽपि कुसंगतः ।
कुलजातोऽपि दाहाय, शंखो वह्निनिषेवणात् ॥ २ ॥

भावार्थ—"उंच कुळनो मनुष्य पण कुसंगथी विकार पामे छे. जुओ ! उत्तम जातिनो शंख पण अग्निनुं सेवन करे छे तो ते दाहने अर्थे थाय छे."

माटे हे पुत्र ! तुं विद्वानोनो संग करीने शास्त्राभ्यास कर, काव्य रूपी अमृत रसनुं पान कर, कळाओ शीख, धर्म कर, अने पोताना कुळनो उध्धार कर." आ प्रमाणे घणी शीखामण आपी परंतु ते तो कहेवा लाग्यो के—

न शास्त्रेण क्षुधा याति, न च काव्यरसेन तृट् ।
एकमेवार्जनीयं तु, द्रविणं निष्फलाः क्रियाः ॥ १ ॥

भावार्थ—" शास्त्रथी कांइ क्षुधानो नाश थतो नथी अने काव्यना रसथी कांइ तृषा मटती नथी, माटे मात्र धननेज उपार्जन करवुं; ते शिवायनी सर्व कळाओ निष्फळ छे. "

आवी पुत्रनी उक्तियी खेद पामेलो दिवाकर मौन रह्यो. फरीने शीखामण आपी नहीं. पछी पोताना मृत्युसमये वात्सल्यने लीधे पुत्रने बोलावीने कह्युं के " हे पुत्र ! जोके मारा वाक्य उपर तने आस्था नथी, तोपण आ श्लोकने ग्रहण कर, जेथी मारुं समाधि मरण थाय. "

कृतज्ञस्वामिसंसर्गमुत्तमस्त्रीपरिग्रहम् ।
कुर्वन्मित्रमलोभं च, नरो नैवावसीदति ॥ १ ॥

भावार्थ—" कृतज्ञ (कदरदान) स्वामीनो संग करनार, उत्तम कुळनी स्त्री साथे विवाह करनार अने निर्लोभी मित्र करनार मनुष्य कोइ वखत पण खेद पामतो नथी. "

उत्तमैः सह संगत्यं, पंडितैः सह संकथाम् ।
अलुब्धैः सह मित्रत्वं, कुर्वाणो नैव सीदति ॥ २ ॥

भावार्थ—" उत्तम पुरुषोनी संगति, पंडितो साथे वार्तालाप अने निर्लोभीनी साथे मैत्री करनार माणस कदी पण खेद पामतो नथी. "

आ बेमांथी एक श्लोकने पिताना आग्रहथी भद्राकरे ग्रहण कर्यो. केटलीक मुदते तेनो पिता मरण पाम्यो. पछी ते श्लोकनी परीक्षा करवा माटे भद्राकर देशांतरमां जतां कोइक गाममां सिंह नामनो क्षत्रिय रहेतो हतो, जे स्वभावे कृतघ्नी हतो तेने आशरे जइने ते रह्यो. ते सिंहनी एक अधम दासी हती. तेने भद्राकरे स्त्री तरीके पोताना घरमां राखी, अने लोभनंदी नामना अतिलोभी अने निर्दाक्षिण्य जनोमां मुख्य एवा वणिकनी साथे मित्राइ करी.

एक वखते ते नगरना राजाए सिंहने बोलाव्यो; तेनी साथे भद्राकर पण राजसभामां गयो. " आ राजा विद्वान उपर प्रीति वाळो छे " एम जाणीने भद्राकर बोल्यो के—

मूर्खा मूर्खैः समं संगं, गावो गोभिर्मृगा मृगैः ।
सुधीभिः सुधियो यांति, समशीले हि मित्रता ॥ १ ॥

भावार्थ—" मूर्ख मूर्खनी साथे, गायो गायोनी साथे, मृग मृगनी साथे अने पंमितो पंमितोनी साथे संगत करे छेः अर्थात् समान स्वभाववाळानीज मित्रता होय छे."

ते सांभळीने राजा संतुष्ट थयो, अने प्रभाकरने बेटम्बुंक गाम गरास विगेरे इनाममां आप्युं. ते प्रभाकरे सिंहने आपी दीधुं. ए प्रमाणे अनेक वखत तेणे सिंहनी उपर उपकार कर्यो. दासीने पण वस्त्रालंकार विगेरे पुष्कळ आप्युं, अने लोभनंदी मित्रने पण समृद्धिवाळो करी दीधो.

हवे सिंहने एक मोर पोताना प्राणथी पण अधिक प्रिय हतो. तेनुं मांस खावानो दोहद तेनी दासी जे प्रभाकरे स्त्री करीने राखी हती तेने गर्भना अनुभावथी थयो. प्रभाकरे पिताना श्लोकनी परीक्षा करवा माटे ते मोरने कोइ गुप्त स्थाने राखीने बीजा मोरना मांसथी तेनो दोहद पूर्ण कर्यो. भोजन वखते सिंहे सर्व ठेकाणे पोतानो मोर जोयो; पण हाथ आव्यो नहीं. तेथी तेणे उद्घोषणा करावी के " जे मोरना खबर आपशे तेने सिंह राजा आठसो सोनामहोर आपशे. " आ प्रमाणे सांभळीने पेली दासीए विचार्युं के " मारा पतिए मोरने मार्याना खबर जो हुं सिंहने कहुं तो मने ८०० सोनामहोर मळशे अने पति तो प्रभाकर नहीं तो बीजो पण थशे. " एम धारीने द्रव्यना लोभथी ते सिंह राजा पासे गइ अने कह्युं के " हे राजा ! प्रभाकरनी बुद्धि भ्रष्ट थई छे. केमके स्वामीनो प्रिय मोर होवाथी तेने मारवानी में ना पाड्या छतां मारो दोहद पूर्ण करवा माटे बीजो मोर न लावतां तेणे आपना मोरने मारी नांख्यो छे. " आ प्रमाणे दासीनुं वचन सांभळीने क्रोध पामेला सिंह ठाकोरे प्रभाकरने पकमी लाववाने सेवको मोकल्या. प्रभाकरे पण ते वृत्तांत जाणीने कृत्रिम भय पामी लोभनंदी मित्रने घेर जइ कह्युं के " हे मित्र ! मारुं रक्षण कर, रक्षण कर. " लोभनंदी हकीकत सांभळीने बोल्यो के " तें शुं सिंहठाकोरनुं कांइ बगाम्युं छे ? " प्रभाकर बोल्यो के " राजाना मोरने प्रियानो दोहद पूर्ण करवा माटे मार्यो छे. " त्यारे ते अधम मित्र बोल्यो के " स्वामीनो द्रोह करनार एवो जे तुं तेने निर्भय स्थान क्यांथी मळे ? पोताना घरमां बळतो घासनो पूळो कोण नांखे ? " इत्यादि कठिन वचनो कह्यां. प्रभाकर मित्रना घरमां पेसवा लाग्यो, एटले लोभनंदीए बूम पाडी; तेथी तत्काळ राजसेवकोए आवीने तेने पकड्यो अने सिंह राजा पासे लइ गया.

न शास्त्रेण क्षुधा याति, न च काव्यरसेन तृट् ।
एकमेवार्जनीयं तु, द्रविणं निष्फलाः क्रियाः ॥ १ ॥

भावार्थ—" शास्त्रथी कांइ क्षुधानो नाश थतो नथी अने काव्यना रसथी कांइ तृषा मटती नथी, माटे मात्र धननेज उपार्जन करवुं; ते शिवायनी सर्व कळाओ निष्फळ छे. "

आवी पुत्रनी उक्तियी खेद पामेलो दिवाकर मौन रह्यो. फरीने शीखामण आपी नहीं. पछी पोताना मृत्युसमये वात्सल्यने लीधे पुत्रने बोलावीने कह्युं के " हे पुत्र ! जोके मारा वाक्य उपर तने आस्था नथी, तोपण आ श्लोकने ग्रहण कर, जेथी मारुं समाधि मरण थाय. "

कृतज्ञस्वामिसंसर्ग सुत्तमस्त्रीपरिग्रहम् ।
कुर्वन्मित्रमलोभं च, नरो नैवावसीदति ॥ १ ॥

भावार्थ—" कृतज्ञ (कदरदान) स्वामीनो संग करनार, उत्तम कुळनी स्त्री साथे विवाह करनार अने निर्लोभी मित्र करनार मनुष्य कोइ वखत पण खेद पामतो नथी. "

उत्तमैः सह संगत्यं, पंडितैः सह संकथाम् ।
अलुब्धैः सह मित्रत्वं, कुर्वाणो नैव सीदति ॥ २ ॥

भावार्थ—" उत्तम पुरुषोनी संगति, पंडितो साथे वार्तालाप अने निर्लोभीनी साथे मैत्री करनार माणस कदी पण खेद पामतो नथी. "

आ बेमांथी एक श्लोकने पिताना आग्रहथी प्रभाकरे ग्रहण कर्यो. केटलीक मुदते तेनो पिता मरण पाम्यो. पछी ते श्लोकनी परीक्षा करवा माटे प्रभाकर देशांतरमां जतां कोइक गाममां सिंह नामनो क्षत्रिय रहेतो हतो, जे स्वभावे कृतघ्नी हतो तेने आशरे जइने ते रह्यो. ते सिंहनी एक अधम दासी हती. तेने प्रभाकरे स्त्री तरीके पोताना घरमां राखी, अने सोमनंदी नामना अतिलोभी अने निर्दाक्षिण्य जनोमां मुख्य एवा वणिकनी साथे मित्राइ करी.

एक वखते ते नगरना राजाए सिंहने बोलाव्यो; तेनी साथे प्रभाकर पण राजसभामां गयो. " आ राजा विद्वान उपर प्रीति वाळो छे " एम जाणीने प्रभाकर बोल्यो के—

मूर्खा मूर्खैः समं संगं, गावो गोभिर्मृगा मृगैः ।
सुधीभिः सुधियो यांति, समशीले हि मित्रता ॥ १ ॥

भावार्थ—"मूर्ख मूर्खनी साथे, गायो गायोनी साथे, मृग मृगनी साथे अने पंडितो पंडितोनी साथे संगत करे छेः अर्थात् समान स्वभाववाळानीज मित्रता होय छे."

ते सांभळीने राजा संतुष्ट थयो, अने प्रभाकरने वेटछुंक गाम गरास विगेरे इनाममां आप्युं. ते प्रभाकरे सिंहने आपी दीधुं. ए प्रमाणे अनेक वखत तेणे सिंहनी उपर उपकार कर्यो. दासीने पण वस्त्रालंकार विगेरे पुष्कळ आप्युं, अने लोभनंदी मित्रने पण समृध्धिवाळो करी दीधो.

हवे सिंहने एक मोर पोताना प्राणथी पण अधिक प्रिय हतो. तेनुं मांस खावानो दोहद तेनी दासी जे प्रभाकरे स्त्री करीने राखी हती तेने गर्भना अनुभावथी थयो. प्रभाकरे पिताना श्लोकनी परीक्षा करवा माटे ते मोरने कोइ गुप्त स्थाने राखीने बीजा मोरना मांसथी तेनो दोहद पूर्ण कर्यो. भोजन वखते सिंहे सर्व ठेकाणे पोतानो मोर जोयो; पण हाथ आव्यो नहीं. तेथी तेणे उद्घोषणा करावी के "जे मोरना खबर आपशे तेने सिंह राजा आठसो सोनामहोर आपशे." आ प्रमाणे सांभळीने पेली दासीए विचार्युं के "मारा पतिए मोरने मार्याना खबर जो हुं सिंहने कहुं तो मने ८०० सोनामहोर मळशे अने पति तो प्रभाकर नहीं तो बीजो पण थशे." एम धारीने द्रव्यना लोभथी ते सिंह राजा पासे गइ अने कह्युं के "हे राजा! प्रभाकरनी बुध्धि भ्रष्ट थई छे. केमके स्वामीनो प्रिय मोर होवाथी तेने मारवानी में ना पाड्या छतां मारो दोहद पूर्ण करवा माटे बीजो मोर न लावतां तेणे आपना मोरने मारी नांख्यो छे." आ प्रमाणे दासीनुं वचन सांभळीने क्रोध पामेला सिंह ठाकोरे प्रभाकरने पकडी लाववाने सेवको मोकल्या. प्रभाकरे पण ते वृत्तांत जाणीने कृत्रिम भय पामी लोभनंदी मित्रने घेर जइ कह्युं के "हे मित्र! मारुं रक्षण कर, रक्षण कर." लोभनंदी हकीकत सांभळीने बोल्यो के "तें शुं सिंहठाकोरनुं कांइ बगाड्युं छे?" प्रभाकर बोल्यो के "राजाना मोरने प्रियानो दोहद पूर्ण करवा माटे मार्यो छे." त्यारे ते अधम मित्र बोल्यो के "स्वामीनो द्रोह करनार एवो जे तुं तेने निर्भय स्थान क्यांथी मळे? पोताना घरमां बळतो घासनो पूळो कोण नांखे?" इत्यादि कठिन वचनो कह्यां. प्रभाकर मित्रना घरमां पेसवा लाग्यो, एटले लोभनंदीए बूम पाडी; तेथी तत्काळ राजसेवकोए आवीने तेने पकड्यो अने सिंह राजा पासे लइ गया.

सिंहे भृकुटी चमावीने कह्युं के " हे अधम ब्राह्मण ! मारो मोर लाव, नहीं तो तारा इष्टदेवनुं स्मरण कर. " प्रभाकर दीनताथी बोल्यो के " हे देव ! तमेज मारा स्वामी, पिता अने शरणभूत ढो, माटे आ सेवकनो आ एक अपराध क्षमा करो. " इत्यादि नम्र वचनो कह्यां ढतां नीच प्रकृतिवाळा सिंहे तेने मारी नाखवा माटे सुजटोने सोंप्यो. प्रज्ञाकरनी अरजपर कांइ पण ध्यान आप्युं नहीं. पढी प्रज्ञाकरे मनमां विचार्युं के " मारे तो पितानुं वचन देवना वचन तुल्य थयुं. ते वचननुं उल्लंघन करवाथी मने तत्काळ आवुं फळ मळ्युं. " एम विचारीने गुप्त राखेलो मोर सिंह राजाने आप्यो, अने तेनी रजा लइ स्त्री तथा मित्रने तजी दइने त्यांथी चालतो थयो.

मार्गे चालतां प्रज्ञाकर विचार करवा लाग्यो के—

नृणां मृत्युरपि श्रेयान्, पंमितेन सह ध्रुवम् ।
न राज्यमपि मूर्खेण, लोकद्ध्यविनाशिना ॥ १ ॥

ज्ञावार्थ—" माणसोने पंमितनी साथे मरवुं ते श्रेष्ठ, पण मूर्खनी साथे रहीने राज्य करवुं ते श्रेष्ठ नहीं. केमके मूर्खनो संग आलोकमां अने परलोकमां बंनेमां विनाश करनार ढे. "

अनुक्रमे चालतां चालतां प्रज्ञाकर सुंदरपुर नामना नगरमां गयो. त्यां हेमरथ नामे राजा हतो. तेने गुणसुंदर नामे पुत्र हतो. ते कुमार नीच पुरुषोना संगथी अने व्यसनथी रहित हतो, वळी कृतज्ञ, चतुर अने प्रिय जन उपर प्रीति राखवावाळो हतो. तेने नगरनी बहार शस्त्रशास्त्रनो अज्यास करतां प्रज्ञाकरे जोयो, एटले तेनी पासे जइने विनय पूर्वक ते कुमारने नम्यो. कुमारे पण प्रसन्न दृष्टिथी तेनी सामुं जोइने तेनो सत्कार कर्यो. कह्युं ढे के—

प्रसन्ना दृङ् मनः शुद्धं, ललिता वाङ् नतं शिरः ।
सहजार्थिष्वियं पूजा, विनापि विज्ञवं सताम् ॥ १ ॥

ज्ञावार्थ—" प्रसन्न दृष्टि, शुद्ध मन, सुंदर वाणी अने मस्तकनुं नमाववुं, ए वैज्ञव विना पण सत्पुरुषोनी सहज अर्थिने विषे पूजानी सामग्री ढे. "

प्रज्ञाकरे पण कुमारनी स्नेह पूर्वक वातचीत जोइने विचार्युं के—

अस्याहो विशदा मूर्तिर्मितं च मधुरं वचः ।
नव्यमौचित्यचातुर्यं, कटरे स्वच्छतात्मनः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अहो ! आ कुमारनी निर्मळ मूर्ति, परिमित अने मधुर वचन, योग्यता भरेली सुंदर चतुराइ अने आत्मानी निर्मळता केवी सुंदर छे ? "

बाल्येऽपि मधुराः केऽपि, द्राक्षावत् केऽपि चूतवत् ।
विपाकेन कदापीन्द्रवारुणीफलवत् परे ॥ २ ॥

भावार्थ—" केटलाएक द्राक्षनी जेम बाल्यावस्थाथीज मधुर होय छे, केटलाएक आम्र फळनी जेम परिणामे मधुर थाय छे, अने केटलाएक तो इंद्रवरणाना फळनी जेम कदापि पण मधुर थता नथी. "

वळी " यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसंति ज्यां मधुर आकृति छे त्यां गुणो पण वसे छे " एवी कहेवत छे. इत्यादि विचार करीने प्रज्ञाकरे ते कुमारनी सेवा स्वीकारी. कुमारे तेने गाममां रहेवा माटे मकान आप्युं, तेमां ते रह्यो. पछी कौमारावस्थामांथीज श्रेष्ठ प्रकृतिवाळी अने स्थिरता विनयादिक गुणोवाळी कोइ ब्राह्मणनी पुत्रीने ते परण्यो, अने वसंत नामना कोइ गृहस्थ साथे मिलाइ करी. ते श्रेष्ठी परोपकार करवामां निरंतर तत्पर हतो अने ते नगरमां मुख्य गणातो हतो.

अनुक्रमे ते नगरनो हेमरथ राजा मृत्यु पामवाथी कुमार गुणसुंदर राजा थयो त्यारे राज्यनुं सर्व कार्य करवामां समर्थ एवो प्रज्ञाकर तेनो मंत्री थयो.

एकदा बीजा कोइ राजाए गुणसुंदर राजाने बे उत्तम लक्षणवाळा अश्वोनी भेट मोकली, पण ते घोडाने विपरीत शिक्षा आपेली हती. ते वातने नहीं जाणनारा एवा राजा तथा प्रधान ते घोडा उपर चढीने पुरनी बहार अश्वक्रीडा करवा गया. त्यां घोडानो वेग जाणवा माटे तेओए घोडाने चाबुकनो प्रहार कर्यो. एटले बंने घोडा घणा वेगथी दोड्या. तेनो वेग ओछो करवा माटे जेम जेम तेओ प्रयत्न करता, तेम तेम ते घोडाओ विपरीत शीखेला होवाथी वधारे दोडता.[1] एम करतां करतां तेओ बहु दूर नीकळी गया अने एक गाढ अरण्यमां आवी पहोंच्या. मार्गे जतां विचारवंत मंत्रीए आमळानां वृक्ष उपरथी त्रण आमळां लइ लीधां. छेवट थाकीने कुमारे तथा मंत्रीए लगाम ढीली मुकी, एटले तुरत ते घोडा उभा रह्या. पछी त्यांथी पाछा वळतां राजाने अत्यंत तृषा लागी, तेथी मंत्रीए एक आमळुं आप्युं. थोडी वारे वळी तृषा लागवाथी बीजुं आमळुं आप्युं. वळी थोडी वारे त्रीजुं पण आप्युं. एम त्रण आमळांवडे काळक्षेप कर्यो; एटलामां सैन्य आवी पहोंच्युं. पछी पाणी पी स्वस्थ थइने तेओ नगरमां आव्या.

1 लगाम खेंचवाथी उभा रहेवाने बदले वधारे दोडवानी टेव पाडेली हती.

गुणसुंदर राजानो पुत्र पांच वर्षनो थयो हतो. ते हमेशां मंत्रीने घेर क्रीडा करवा जतो. एक वखत परीक्षा करवा माटे मंत्रीए ते कुमारने गुप्त रीते संताड्यो. भोजनसमये राजाए सर्वत्र शोध करावी, परंतु कोइ पण स्थानेथी पत्तो लाग्यो नहीं. राजा अति क्रोधयुक्त थयो, अने सर्व सेवकपरिवारनां मुख पण फीकां पडी गयां. ते वखते कोइए कह्युं के "आजे कुमार मंत्रीने घेर गया हता." ते सांभळीने सर्वने मंत्री उपर शंका थइ. मंत्री पण ते वखत दरबारमां गयो नहोतो. तेनी पत्नीए कह्युं के "हे स्वामी! केम आज दरबारमां गया नथी?" मंत्रीए कह्युं के "हे प्रिये! राजाने मुख बतावबा हुं शक्तिमान नथी, केमके आजे में राजकुमारने मारी नांख्यो छे." ते बोली के "हे नाथ! ए शुं! पण हवे तमे खेद करशो नहीं. 'गर्भना प्रभावथी दोहदने लीधे राजपुत्र मारी दृष्टिने वैरीनी जेम दाह करतो हतो तेथी तेने मेंज मारी नांख्यो छे' ए प्रमाणे हुं राजाने कहीश." एटलामां तेनो मित्र श्रेष्ठी आव्यो. तेणे बधी वात सांभळीने कह्युं के "हुंज राजानो कोप दूर करीश, तमे फिकर करशो नहीं." एवी रीते कही मंत्रीने तथा तेनी भार्याने आश्वासन आपी ते राजा पासे गयो अने कह्युं के "हे देव! कुमारना संबंधमां हकीकत विपरीत बनी छे पण तेमां मंत्रीनो कांइ दोष नथी." तेटलामां मंत्रीनी स्त्री पण आवी. तेणे कह्युं के "मारा दोहदने माटे आ अयोग्य कार्य माराथी थयुं छे." त्यार पछी मंत्री पण आव्यो अने भयथी कंपतो होय तेम बोल्यो के "हे राजन्! हुंज अपराधी छुं. सर्वथा मारा प्राणज लेवा योग्य छे. मारां करेलां अकार्यने लीधे दुःखी थवाथीज मारी स्त्री पोतानो अपराध जणावे छे." आ सर्व वात सांभळीने राजाए विचार्युं के "आ मंत्री सर्व प्रकारे चतुर, हितकारी अने आमळां आपीने मारा प्राणनुं रक्षण करनार छे." एम विचारीने मंत्रीने सर्व लोक समक्ष कह्युं के—

मित्र त्वं यदि नादास्यस्तदा धात्रीफलानि मे ।
तदा क्वाहं क्व राज्यं च, क्व सुतः क्व परिच्छदः ॥१॥

भावार्थ—"हे मित्र! ते दिवस जो तें मने आमळां न आप्यां होत तो आज हुं क्यांथी होत? मारुं राज्य क्यांथी होत? पुत्र क्यांथी थयो होत? अने आ परिवार पण क्यांथी होत?"

मंत्री बोल्यो के "हे प्रभो! तमे तो कृतज्ञपणुं देखाडो छो, परंतु कुमारनी हत्या करनार एवा मने अवश्य दंड आपवो जोइए." त्यारे राजाए कह्युं के "तें मने त्रण आंमळां आप्यां हतां, तेमांथी हजी तो एक वळ्युं." ते सांभळीने

प्रधान बोल्यो के—" हे गुणना सागर ! ज्यारे आप एम कहो छो, त्यारे त्रणे आमळांथी सर्युं, तमे पुत्र सहित चिरकाळ राज्य करो." एम कहीने राजपुत्रने लावी आप्यो, कुमारने जोइने सर्वे हर्षित थया. पछी " आम शामाटे कर्युं? " एम राजाए पूछ्युं त्यारे मंत्रीए पोताना पिताना उपदेशथी आरंभीने सर्व वृत्तांत कही संभळाव्यो. राजा ते सर्व वृत्तांत सांभळीने पोतानी प्रशंसा थइ जाणी जरा लज्जित थयो. अने मंत्रीने पोताना अर्धा आसनपर बेसाडीने बोल्यो के-" हे मित्र ! में अमुल्य एवा त्रण आमळामांथी एक आमळाने पण पुत्रतुल्य गण्युं ते योग्य कर्युं नहीं. " आप्रमाणे कही अनेक प्रीतिवाक्योथी तेनो सत्कार कर्यो. आ प्रमाणे प्रभाकर मंत्री सारा राजानो आश्रय पामीने घणो सुखी थयो अने तेनी साथे रहीने चिरकाळ राज्यनुं प्रतिपालन कर्युं.

" प्रभाकरनी जेम सज्जन अने दुर्जनना संगनुं फळ प्रत्यक्ष जोइने विवेकी प्राणीओए सुख अने सद्गुणनी प्राप्तिने माटे निरंतर सज्जननोज संग करवो. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य द्वाविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२२ ॥

व्याख्यान २२३ मुं.

अंतरंग छ शत्रुने जीतवा विषे.

कामः क्रोधस्तथा लोभो, हर्षो मानो मदस्तथा ।
षड्वर्गमुत्सृजेदेवं, तस्मिंस्त्यक्ते सुखी भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" काम, क्रोध, लोभ, हर्ष, मान अने मद ए छ शत्रुना वर्गने त्याग करवा, केमके तेमनो त्याग करवाथीज मनुष्य सुखी थाय छे."

आ गाथानो विस्तरार्थ नीचे प्रमाणे.

काम एटले परस्त्री उपर अथवा नहीं परणेली [कुमारी] स्त्री उपर अति आसक्ति राखवी ते. आवो काम रावण अने पद्मनाभ विगेरेनी जेम विवेक तथा राज्यथी भ्रष्ट करे छे अने नरकादि गमननो हेतु थाय छे, कह्युं छे के-

तावन्महत्त्वं पांडित्यं, कुलीनत्वं विवेकिता ।
यावज्ज्वलति चित्तांतर्न पापः कामपावकः ॥ १ ॥

भावार्थ—" ज्यां सुधी मनुष्यना चित्तमां दुष्ट काम रूपी अग्नि प्रज्वलित थतो नथी, त्यां सुधीज तेनी महत्ता, विद्वत्ता, कुलीनपणुं अने विवेकीपणुं रहे छे," वळी

नान्यः कुतनयादाधिर्व्याधिर्नान्यः क्षयामयात् ।
नान्यः सेवकतो दुःखी, नान्यः कामुकतोऽन्धलः ॥ २ ॥

भावार्थ—"कुपुत्रथी विशेष बीजो कोइ आधि (मननी पीडा) नथी, क्षय रोगथी बीजो कोइ रोग नथी, सेवक विना बीजो कोइ दुःखी नथी, अने कामी पुरुष विना बीजो कोइ आंधळो नथी."

क्रोध एटले बीजानो अथवा पोतानो विनाश विचार्याविना कोप करवो ते. आवो क्रोध चंडकोशीयानी जेम दुर्गतिनुं कारण होवाथी सत्पुरुषने करवा योग्य नथी, कह्युं छे के–

संतापं तनुते छिनत्ति विनयं सौहार्दमुत्सादय-
त्युद्वेगं जनयत्यवद्यवचनं सूते विधत्ते कलिम् ।
कीर्तिं कृंतति दुर्मतिं वितरति व्याहंति पुण्योदयं
दत्ते यः कुगतिं स हातुमुचितो रोषः सदोषः सताम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे (क्रोध) संतापने विस्तारे छे, विनयने छेदी नांखे छे, मित्राइने उखेडी नांखे छे, उद्वेगने उत्पन्न करे छे, पापकारी वचनोने जन्म आपे छे, क्लेश करावे छे, कीर्तिने कापी नांखे छे, दुर्मतिने विस्तारे छे, पुण्यना उदयनो नाश करे छे, तथा नरकादि कुगतिने आपे छे, तेवा दुषणवाळो क्रोध सत्पुरुषोए त्याग करवा लायक छे," वळी

द्रुमोद्भवं हंति विषं न हि द्रुमं, न वा भुजंगप्रभवं भुजंगमम्।
अदः समुत्पत्तिपदं दहत्यहो, दाहोल्बणं क्रोधहलाहलं पुनः।२।

भावार्थ—" वृक्षथी उत्पन्न थयेलुं विष वृक्षने हणतुं नथी, तेमज सर्पथी उत्पन्न थयेलुं विष सर्पने हणतुं नथी; परंतु आ क्रोध रूपी भयंकर विष तो आकरा दाहवाळुं होवाथी पोताना उत्पत्तिस्थानने पण बाळे छे, ते आश्चर्य छे."

लोभ एटले दान आपवा योग्य (पात्र) ने यथाशक्ति दान आपवुं नहीं अथवा अन्यायथी पर धनने ग्रहण करवुं ते. लोभ सर्व पापनुं मूळ छे, तेनी उपर सागर श्रेष्ठी,सुभूम चक्री,मम्मण श्रेष्ठी अने लोभनंदी विगेरेनां दृष्टांतो प्रसिद्ध छे. लोभथी व्याकुळ थयेला पुरुषो अनेक पापनां कार्यो करे छे, कह्युं छे के–

क्रयविक्रयकूटतुला लाघव निक्षेप भक्षण व्याजैः ।
एते हि दिवसचौरा मुष्णंति महाजने वणिजाः ॥ १ ॥

भावार्थ–" महाजनमां गणाता आ वणिक् रूपी दिवसना चोरो लेवा तथा देवानां खोटां तोलां करीने लघु लाघवी कळावडे ओछुं आपीने, थापण राखेला द्रव्यनुं भक्षण करीने, अने व्याजना वेपारे करीने दुनियाने लुंटी लेछे."

हृत्वा धनं जनानां, दिनमखिलं विविधवचनरचनाभिः ।
वितरति गृहे किरातः, कष्टेन वराटिकात्रितयम् ॥ २ ॥

भावार्थ–" लोभी माणस आखो दिवस विविध प्रकारना वचननी रचना करीने माणसोनुं धन हरण करे छे. पण ते नीच पोताना घरमां त्रण कोडी पण महा मुश्केलीथी वापरे छे."

आख्यायिकानुरागी, व्रजति सदा पुस्तकं श्रोतुम् ।
दृष्ट इव कृष्णसर्पैः, पलायते दानधर्मेभ्यः ॥ ३ ॥

भावार्थ–" कथा सांभळवानो रागी एवो लोभी हमेशां पुस्तक श्रवण करवा जाय छे, परंतु दानधर्मनी वात आवे त्यारे जाणे कृष्णसर्पथी डंखायो होय तेम त्यांथी तुरत नासी जाय छे."

उत्सृज्य साधुवृत्तं, कुटिलधिया वंचितः परो येन ।
आत्मैव मूढमतिना, हतसुकृतो वंचितस्तेन ॥ ४ ॥

भावार्थ–" जेणे सदाचरणनो त्याग करीने कुटिल बुद्धिथी बीजाने छेतर्यो छे ते मूढमतिवाळाए जेना सुकृत हणाया छे एवा पोताना आत्मानेज छेतर्यो छे, एम जाणवुं."

द्रव्यानामपि लाभेन, न लोभः परिभूयते ।
मात्रासमधिकः कुत्र, मात्राहीनेन जीयते ॥ ५ ॥

भावार्थ—" द्रव्यादिकना लाभथी पण लोभनो पराभव थतो नथी. केमके जे मात्राए करीने अधिक होय, ते ओछी मात्रा वाळाथी जीती शकातो नथी[1]."

मान एटले दुराग्रहने छोडवो नहीं, अथवा बीजाना युक्तियुक्त वचनने ग्रहण करवां नहीं ते. आ मान तत्व अतत्वनो विचार नहीं करनारा दुर्योधन जेवा दुराग्रहीने विशेषे होय छे, कह्युं छे के—

दृग्भ्यां विलोकते नोर्ध्वं, सप्तांगेश्च प्रतिष्ठितः ।
स्तब्धदेहः सदा सोष्मा, मान एव महागजः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मान ए मोटा हाथी समान छे, केमके हाथीनी जेम मानी पुरुष पोतानी दृष्टि वडे उंचुं जोतो नथी, सप्तांग राजलक्ष्मीथी प्रतिष्ठित रहे छे, तेनुं शरीर स्तब्ध थाय छे अने हमेशां उष्मा सहित होय छे, एटले फुंफाडा मार्या करे छे, आप्रमाणे हाथीनी ने मानीनी समानता छे "

आवा माननो त्याग करवाथीज बाहुबळीने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयुं हतुं' माटे तेनो त्याग करवो योग्य छे.

मद एटले प्राप्त थयेला बळ, कुळ, ऐश्वर्य, स्वरूप तथा विद्या विगेरेवडे अहंकार करवो, अथवा कोइने बळात्कारे बांधवो ते. कह्युं छे के—

एकः सकलजनानां, हृदयेषु कृतास्पदो मदशत्रुः ।
येनाविष्टशरीरो, न श्रृणोति न पश्यति स्तब्धः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मद रूपी शत्रु एक छतां सर्व जनोना हृदयमां निवास करे छे अने ते मद शत्रु जेना शरीरमां पेसे छे ते माणस स्तब्ध थइने कांइ पण देखतो नथी, तेमज सांभळतो पण नथी. "

शौर्यमदो रूपमदः, श्रृंगारमदः कुलोन्नतिमदश्च ।
विभवमदो जातिमदः, मदवृक्षा देहिनामेते ॥ २ ॥

भावार्थ—" शौर्यनो मद, रूपनो मद, कामनो मद, उच्च कुळनो मद, धननो मद अने जातिनो मद, ए मनुष्योनां मद रूपी वृक्षो छे. "

---

[1] लोभ शब्द मात्राए करीने अधिक छे अने लाभ मात्रा रहित छे. बीजी रीते अर्थ करतां मात्रानो अर्थ परिमाण अथवा धन लेवो.

शौर्यमदः स्वभुजदर्शी, रूपमदो दर्पणादिदर्शी च ।
काममदः स्त्रीदर्शी, विभवमदस्त्वेष जात्यंधः ॥ ३ ॥

भावार्थ—" शौर्यना मदवाळो पोतानी भुजानेज जुए छे, रूपना मदवाळो आरिसा विगेरेमां देख्या करे छे, कामना मदवाळो स्त्रीओने जुए छे, अने वैभवना मदवाळो तो जन्मांध जेवोज होय छे. "

सावधयः सर्वमदा, निजानिजमूलक्षयैर्विनश्यंति ।
गुरुमद एकः कुटिलो, विजृंभते निरवधिर्भोगी ॥ ४ ॥

भावार्थ—" आ सर्व मदो तो अवधिवाळा छे, एटले तेओ पोतपोताना मूळनो क्षय थवाथी नाश पामे छे, परंतु सर्पना जेवो कुटिल एक गुरुमद छे के जे अवधि विनाज विकास पामे छे."

मौने सामंतानां, निस्यंददृशि प्रवृद्धविभवानाम् ।
भ्रूभंगमुखविकारे, धनिकानां भ्रुयुगे विटादीनाम् ॥ ५ ॥
जिह्वासूद्धतविदुषां, रूपवतां दशनकेशवेशेषु ।
वैद्यानामोष्ठपुटे, ग्रीवायां गुरुनियोगिगणकानाम् ॥ ६ ॥
स्कंधतटे सुभटानां, हृदये वणिजां करेषु शिल्पवताम् ।
गंडेषु कुंजराणां, घनस्तनतटेषु तरुणीनाम् ॥ ७ ॥

भावार्थ—" सामंतोने मौनपणामां मद रहे छे, अधिक वैभववाळाने मटकुं मार्या विनानी दृष्टिमां मद रहे छे[1], धनिकने भ्रकुटीनो भंग करवामां अथवा मुखना विकारमां मद रहे छे, जारपुरुषोने भ्रकुटीमां मद रहे छे, उद्धत विद्वानोनी जीभमां मद होय छे, रूपवाळाने दांत तथा केशनी रचनामां मद रहे छे, वैद्योने होठ उपर मद रहे छे, मोटा अधिकारी तथा जोशीने ग्रीवामां मद रहे छे, सुभटोने स्कंध उपर मद रहे छे, वाणीयाओने हृदयमां मद रहे छे, कारीगरोने हाथमां मद रहे छे, हाथीओने गंडस्थलमां मद रहे छे. अने स्त्रीओने पोताना दृढ स्तनमां मद रहे छे."

[1] वैभवना मदवाळो उंचुं जोतो नथी.

भावार्थ—" द्रव्यादिकना लाभथी पण लोभनो पराभव थतो नथी. केमके जे मात्राए करीने अधिक होय, ते ओछी मात्रा वाळाथी जीती शकातो नथी[1]."

मान एटले दुराग्रहने छोडवो नहीं, अथवा बीजाना युक्तियुक्त वचनने ग्रहण करवां नहीं ते. आ मान तत्व अतत्वनो विचार नहीं करनारा दुर्योधन जेवा दुराग्रहीने विशेषे होय छे, कह्युं छे के—

दृग्भ्यां विलोकते नोर्ध्वं, सप्तांगैश्च प्रतिष्ठितः ।
स्तब्धदेहः सदा सोष्मा, मान एव महागजः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मान ए मोटा हाथी समान छे. केमके हाथीनी जेम मानी पुरुष पोतानी दृष्टि वडे उंचुं जोतो नथी, सप्तांग राजलक्ष्मीथी प्रतिष्ठित रहे छे, तेनुं शरीर स्तब्ध थाय छे अने हमेशां उष्मा सहित होय छे, एटले फुंफाडा मार्या करे छे, आप्रमाणे हाथीनी ने मानीनी समानता छे "

आवा माननो त्याग करवाथीज बाहुबलीने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयुं हतुं' माटे तेनो त्याग करवो योग्य छे.

मद एटले प्राप्त थयेला बळ, कुळ, ऐश्वर्य, स्वरूप तथा विद्या विगेरेवडे अहंकार करवो, अथवा कोइने बळात्कारे बांधवो ते. कह्युं छे के—

एकः सकलजनानां, हृदयेषु कृतास्पदो मदशत्रुः ।
येनाविष्टशरीरो, न शृणोति न पश्यति स्तब्धः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मद रूपी शत्रु एक छतां सर्व जनोना हृदयमां निवास करे छे अने ते मद शत्रु जेना शरीरमां पेसे छे ते माणस स्तब्ध थइने कांइ पण देखतो नथी, तेमज सांभळतो पण नथी. "

शौर्यमदो रूपमदः, शृंगारमदः कुलोन्नतिमदश्च ।
विभवमदो जातिमदः, मदवृक्षा देहिनामेते ॥ २ ॥

भावार्थ—" शौर्यनो मद, रूपनो मद, कामनो मद, उच्च कुळनो मद, धननो मद अने जातिनो मद, ए मनुष्योनां मद रूपी वृक्षो छे. "

---

[1] लोभ शब्द मात्राए करीने अधिक छे अने लाभ मात्रा रहित छे. बीजी रीते अर्थ करतां मात्रानो अर्थ परिमाण अथवा धन लेवो.

शौर्यमदः स्वभुजदर्शी, रूपमदो दर्पणादिदर्शी च ।
काममदः स्त्रीदर्शी, विभवमदस्त्वेष जात्यंधः ॥ ३ ॥

भावार्थ—" शौर्यना मदवाळो पोतानी भुजानेज जुए छे, रूपना मदवाळो आरिसा विगेरेमां देख्या करे छे, कामना मदवाळो स्त्रीओने जुए छे, अने वैभवना मदवाळो तो जन्मांध जेवोज होय छे. "

सावधयः सर्वमदा, निजानिजमूलक्षयैर्विनश्यंति ।
गुरुमद एकः कुटिलो, विजृंभते निरवधिर्भोगी ॥ ४ ॥

भावार्थ—" आ सर्व मदो तो अवधिवाळा छे, एटले तेओ पोतपोताना मूळनो क्षय थवाथी नाश पामे छे, परंतु सर्पना जेवो कुटिल एक गुरुमद छे के जे अवधि विनाज विकास पामे छे."

मौने सामंतानां, निस्यंददृशि प्रवृद्धविभवानाम् ।
भ्रूभंगमुखविकारे, धनिकानां भ्रुयुगे विटादीनाम् ॥ ५ ॥
जिह्वासूद्धतविदुषां, रूपवतां दशनकेशवेशेषु ।
वैद्यानामोष्ठपुटे, ग्रीवायां गुरुनियोगिगणकानाम् ॥ ६ ॥
स्कंधतटे सुभटानां, हृदये वणिजां करेषु शिल्पवताम् ।
गंडेषु कुंजराणां, घनस्तनतटेषु तरुणीनाम् ॥ ७ ॥

भावार्थ—" सामंतोने मौनपणामां मद रहे छे, अधिक वैभववाळाने मटकुं मार्या विनानी दृष्टिमां मद रहे छे[1], धनिकने भ्रकुटीनो भंग करवामां अथवा मुखना विकारमां मद रहे छे, जार पुरुषोने भ्रकुटीमां मद रहे छे, उद्धत विद्वानोनी जीभमां मद होय छे, रूपवाळाने दांत तथा केशनी रचनामां मद रहे छे, वैद्योने होठ उपर मद रहे छे, मोटा अधिकारी तथा जोशीने ग्रीवामां मद रहे छे, सुभटोने स्कंध उपर मद रहे छे, वाणीयाओने हृदयमां मद रहे छे, कारीगरोने हाथमां मद रहे छे, हाथीओने गंडस्थळमां मद रहे छे. अने स्त्रीओने पोताना दृढ स्तनमां मद रहे छे."

1 वैभवना मदवाळो उंचुं जोतो नथी.

उन्नत चित्तवाळाने आवो मद करवो उचित नथी. केमके–

पातालान्न समुद्धृतो बलिनृपो नीतो न मृत्युः क्षयं
नोन्मृष्टं शशलांछनस्य मलिनं नोन्मूलिता व्याधयः ।
शेषस्यापि धरा विधृत्य न कृतो भारावतारः क्षणं
चेतः सत्पुरुषाभिमानगणना मिथ्या वहन् लज्जसे ॥ ८ ॥

भावार्थ—" हे आत्मा ! तें कांइ पातालमांथी बलि राजानो उद्धार कर्यो नथी, यमराजाने क्षय पमाड्यो नथी, चंद्रनुं मलिनपणुं दूर कर्युं नथी, व्याधिओने निर्मूळ कर्या नथी तथा पृथ्वीने धारण करीने शेष नागनो एक क्षणवार पण भार उतार्यो नथी, तेथी सत्पुरुषपणाना अभिमाननी खोटी गणना वहन करतां तारे शरमावुं जोइए छीए."

हर्ष एटले कारण विना कोइने दुःख आपीने अथवा पोते शीकार के द्यूत विगेरे अनर्थकारी व्यसननो आश्रय करीने मनमां खुशी थवुं ते. आ हर्ष दुर्ध्यानमां जेमनुं चित्त मग्न थयुं छे एवा अधम पुरुषोनेज सुलभ छे. कह्युं छे के–

परवसणं अभिनंदइ निरवरको निद्दउ निरणुतावो ।
हरिसिज्जइ कयपावो रुद्दज्झाणोवगयचित्तो ॥ १ ॥

भावार्थ—" रौद्र ध्यानमां अवगत चित्तवाळो प्राणी परने कष्टमां पडेल जोइने खुशी थाय छे, निरपेक्षपणे वर्त्ते छे, निर्दय होय छे, पाप करीने पश्चात्ताप करतो नथी, पण पाप करीने उलटो खुशी थाय छे."

तुष्यंति भोजनैर्विप्रा, मयूरा घनगर्जितैः ।
साधवः परकल्याणैः, खलाः परविपत्तिभिः ॥ २ ॥

भावार्थ—" ब्राह्मणो भोजनथी हर्ष पामे छे, मोर मेघनी गर्जनाथी हर्ष पामे छे, साधुओ परना कल्याणथी हर्ष पामे छे अने खळ पुरुषो बीजानी आपत्ति जोइने हर्ष पामे छे."

जुओ ! वनवासमां पांडवो दुःख पामे छे एवुं सांभळीने तथा जोइने दुर्योधन अत्यंत हर्ष पाम्यो हतो, तथा श्रीपाल राजाने समुद्रमां नाखी दइने धवलश्रेष्ठी पोताने इष्ट सिद्धि थयेली मानी अति हर्ष पाम्यो हतो.

उपर कहेला छ अंतरंग शत्रुओ निंद्य होवाथी, अपकीर्ति तथा अनर्थना हेतुभूत होवाथी अने परलोकमां दुर्गतिमां कारण होवाथी विवेकी पुरुषोए त्याग करवा योग्य छे.

" जे विवेकी महात्मा पुरुष आ छ अंतरंग शत्रुओनो त्याग करे छे ते गृहाश्रममां रह्यो सतो पण धर्मकार्य, सत्कीर्ति, सुख अने शोभा विगेरेने पामे छे.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य त्रयोविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२३ ॥

व्याख्यान २२४ मुं.

कर्म योगे पडवाइ थया छतां पण जे फरीथी पोताना आत्माने तारे छे ते धन्य छे.

शिथिलाः संयमे योगे, भूत्वा भूयोऽप्रमादिनः ।
भवंति ते प्रशस्याः स्युर्यथा सेलक साधवः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेओ चारित्र योगने विषे शिथिल थइने पण फरीथी अप्रमादी थाय छे, तेओ सेलक साधुनी जेम प्रशंसा करवा लायक छे."

सेलक मुनिनुं दृष्टांत

नव योजन विस्तारवाळी अने बार योजन लांबी द्वारका नगरीमां कृष्ण वासुदेव राज्य करता हता, ते वखते सोळ हजार राजाओ तेनी आज्ञा मस्तकपर चडावता हता. तेने प्रद्युम्न विगेरे साडा त्रण क्रोड पुत्रो हता. तेमां शांब विगेरे पुत्रो कोइथी दमन कराय तेवा नहोता. ते नगरीमां एक थावच्चापुत्र नामे गृहस्थ कुमार हतो. तेने तेना मावापे एक दिवसे बत्रीश कन्याओ परणावी हती. तेमनी साथे ते पंचेंद्रिय संबंधी विषयसुख भोगवतो हतो. एक दिवस दश धनुषनी उंची कायावाळा श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर अढार हजार साधुना परिवार सहित समवसर्या, ते समाचार वनपाळना मुखथी सांभळीने कौमुदिकी नामनी भेरीथी उद्घोषणा करावी चतुरंग सेना सहित श्रीकृष्ण प्रभुने वांदवा गया. सर्व पौरजनो साथे थावच्चापुत्र पण वांदवा गयो. त्यां प्रभुए कहेली धर्मदेशना सांभ-

ळीने बोध पामेला थावच्चापुत्रे घेर आवी पोतानी माताने कह्युं के " मने दीक्षा अपावो. " माताए संसारना सुखनो घणो लोभ लगाड्यो, पण ते लोभायो नहीं. त्यारे तेनी माता कृष्ण पासे गइ अने भेटणुं मूकीने विनंति करी के " हे राजन्! दीक्षा लेवाने इच्छता मारा पुत्रने तमे शीखामण आपो, जो मारो एकनो एक पुत्र दीक्षा लेशे तो हुं निराधार शीरीते जीवीश ? " कृष्ण तेणीने धीरज आपीने सेना सहित तेने घेर गया, अने थावच्चापुत्रने कह्युं के–" हे वत्स ! तुं संसारना विलासोने आनंदथी भोगव. अमारी छायामां रहेवाथी तारुं कांइ पण अहित थशे नहीं. " ते सांभळीने थावच्चापुत्र हसीने बोल्यो के–" हे राजन्! एक मृत्युएज मने अनंती वार विटंबना पमाड्यो छे, ते मारा अहितने तमे निवारण करो तो तमे मारा खरा हितवांछक छो एम हुं मानुं. " कृष्णे कह्युं के–" ते तो परमानंदनी प्राप्ति थाय त्यारेज थाय तेम छे. " त्यारे थावच्चापुत्र बोल्यो के–" एटलामाटेज मृत्युए करेला अहितनुं निवारण करवा सारु श्रीनेमिनाथना चरणकमळने सेववा हुं इच्छुं छुं. "

आ प्रमाणे तेनी स्थिरता जोइने हर्ष पामेला कृष्णे नगरीमां उद्घोषणा करावी के–" आ थावच्चापुत्रनी साथे जे कोइ दीक्षा लेशे तेना कुटुंबनुं भरणपोषण तथा दीक्षानो उत्सव कृष्ण जाते करशे." आवी उद्घोषणा थवाथी एक हजार माणसो दीक्षा लेवा तैयार थया. ते सर्वनी साथे थावच्चापुत्रनो दीक्षा महोत्सव श्रीकृष्णे कर्यो. हजार पुरुषोथी वहन थइ शके एवी शिबिकामां बेसीने हजार दीक्षाभिलाषी माणसो सहित थावच्चापुत्र जिनेश्वर पासे आव्यो; ते वखते तेनी माताए प्रभुने कह्युं के–" आ शिष्य रूपी भीक्षा ग्रहण करो, अने तेने बंने प्रकारनी शिक्षा (शिखामण) आपो. " पछी तेणीए आंखमां अश्रु लावीने पुत्र प्रत्ये कह्युं के–" हे पुत्र ! आ चारित्र पाळवामां किंचित् प्रमाद करीश नहीं. " पछी थावच्चापुत्रे हजार माणसो सहित प्रभु पासे प्रव्रज्या ग्रहण करी. अनुक्रमे सामायिकथी आरंभीने चौद पूर्वनो अभ्यास करी एक हजार शिष्यना आचार्य थया.

एकदा जिनेश्वरनी आज्ञा लइने विहार करतां करतां थावच्चापुत्र आचार्य सेलकपुरे समवसर्या. ते पुरमां पंथक विगेरे पांचसो मंत्रिनो स्वामी सेलक नामे राजा राज्य करतो हतो. तेणे आचार्य पासे मोटा उत्सव पूर्वक आवीने धर्मदेशना सांभळी. पछी पांचसो अमात्य सहित तेणे श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो.

हवे सौगंधिक नामना नगरमां एक सुदर्शन नामे श्रेष्ठी रहेतो हतो. अन्यदा चार वेदने जाणनार तथा शौच, संतोष, स्वाध्याय, तप तथा देवनुं

ध्यान इत्यादि धर्मना नियमवाळो अने गेरुए रंगेला वस्त्रने धारण करनार शुक नामनो परिव्राजक एक हजार शिष्यो (तापसो) सहित त्यां आव्यो. तेनो शौच मूलक सांख्य धर्म सांभळीने सुदर्शने ते ग्रहण कर्यो. एकदा विहार करतां करतां थावच्चापुत्र आचार्य ते नगरमां पधार्या. ते वात सांभळी सुदर्शने तेमनी परीक्षा करवा माटे तेनी पासे आवीने पूछ्युं के-" तमारो शौच मूलक धर्म छे के बीजो धर्म छे ?" सूरिए कह्युं के-" हे श्रेष्ठी ! अमारो विनयमूलक धर्म छे. ते पण साधु श्रावक भेदे करीने बे प्रकारनो छे, अने बीजा तेना क्षांत्यादि दश प्रकार छे. " इत्यादि वाक्योथी प्रतिबोध पामीने सुदर्शने श्रावकधर्म ग्रहण कर्यो; अने जीवादि तत्त्वोनुं स्वरूप जाणीने अस्थिमज्जाए जैनधर्म उपर प्रेमवाळो थयो. अन्यदा तेनो पूर्व गुरु शुक परिव्राजक हजार शिष्यो सहित ते नगरमां आव्यो. त्यां सुदर्शनने अन्य धर्ममां आसक्त थयेलो जोइने " अरे रे ! कया पाखंडीथी तुं छेतरायो ?" एम तेणे पूछ्युं, एटले श्रेष्ठी बोल्यो के-" मारा गुरु चार ज्ञानने धारण करनारा थावच्चापुत्र नामना आचार्य छे ते अर्हीज छे, तेणे मने विनयमूलक धर्म पमाड्यो छे. " पछी हजार शिष्योने साथे लइने शुक परिव्राजक ते श्रेष्ठीनी साथे सूरि पासे जइने प्रश्नो पूछवा लाग्यो.

शुक-हे भगवन् ! तमारे यात्रा, यापनिका, अव्याबाधा अने प्रासुक विहार छे?

सूरि-हे शुक ! ते सर्व अमारे छे.

शुक-हे भगवन् ! तमारे कइ यात्रा छे ?

सूरि-हे शुक ! साधुओने ज्ञानाधिक त्रण रत्न मेळववामां यत्न करवो, ते यात्रा होय छे.

शुक-हे भगवन् ! तमारे यापना शी छे ?

सूरि-हे शुक ! यापना बे प्रकारनी होय छे. इंद्रिय यापना अने नोइंद्रिय यापना. तेमां शुभ अने प्रशस्त मार्गने अनुसरवाथी पांच इंद्रियो संबंधी यापना अमारे शुभ छे, अने क्रोधादि रहित अंतःकरण होवाथी नोइंद्रिय यापना पण अमारे प्रशस्त छे.

शुक-हे भगवन् ! तमने अव्याबाधा शी रीते छे ?

सूरि-हे शुक ! विविध प्रकारनी व्याधिओ अमने पीडा करती नथी, ते अव्याबाधा छे.

शुक-हे आचार्य ! तमारे प्रासुक विहार शी रीते छे ?

सूरि-स्त्री, पशु अने नपुंसक रहित वसतीमां, जीव रहित स्थाने, पाट पाटला

विगेरे याचना वडे ग्रहण करीने अमे विचरीए छीए-रहीए छीए, ते अमारे प्रासुक विहार छे.

पछी शुक आचार्ये "सरिसवया भक्षण करवा लायक छे ? के अभक्ष्य छे?" इत्यादि छठा अंगमां वर्णवेला प्रश्नो पूछ्या; तेना योग्य उत्तर सांभळीने सुलभबोधि होवाथी ते प्रतिबोध पाम्यो, एटले हजार शिष्यो सहित तेणे जैनी दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे ते सूरिपद पाम्या. पछी थावच्चापुत्र आचार्य पोतानो निर्वाण समय नजीक जाणी हजार मुनिओ सहित शत्रुंजय गिरिए पधार्या. त्यां एक मासनुं अनशन ग्रहण करी अंते केवली थइने मुक्तिपद प्रत्ये पाम्या.

त्यार पछी चौद पूर्वने जाणनार शुक आचार्य विहार करतां करतां अन्यदा सेलकपुरना उद्यानमां समवसर्या. ते वात जाणीने सेलक राजा पांचसो मंत्री सहित तेमने वांदवा गयो. गुरुने नमी धर्मोपदेश सांभळीने सेलक राजा वैराग्य पामी पोताने घेर गयो. त्यां पोतानी राणी साथे बेसीने पांचसो मंत्रीने तेणे कह्युं के "हे प्रधानो! हुं समस्त पापने नाश करनारी प्रव्रज्या लेवानो छुं, तमे शुं करशो?" तेओ बोल्या-"हे स्वामिन्! अमे पण सर्वे संयमना सुखनी इच्छावाळा छीए तेथी तमारी साथे व्रत ग्रहण करशुं." त्यारे राजाए कह्युं के-"जो एम छे तो तमे पोतपोताने घेर जइ पोतपोताना पुत्रने गृहनो कार्यभार सोंपीने हजार पुरुषोथी वहन थाय तेवी शिबिका उपर आरूढ थइ अहीं जलदीथी आवो." तेओने ए प्रमाणे कहीने राजाए पोताना मंडुक कुमारने राज्याभिषेक कर्यो. पछी मंडुक राजाए जेनो निष्क्रमणोत्सव कर्यो छे एवा राजाए पांचसो मंत्री सहित शुक आचार्यनी पासे आवीने त्रिविधे त्रिविधे सर्व सावद्य योगनुं प्रत्याख्यान कर्युं.

अनुक्रमे सेलक मुनिने बार अंगने धारण करनार थयेला जाणीने शुक सूरिए तेने सूरिपद उपर स्थापन कर्या. पछी शुक सूरि चिरकाळ विहार करीने हजार मुनिओ सहित शत्रुंजयगिरिपर गया. त्यां एक मासनुं अनशन करीने मोक्षपद पाम्या.

श्री सेलकाचार्यनुं शरीर लुखुं, सुकुं, तुच्छ अने काळातिक्रांत[1] भोजन करवाथी कंडु (खरज), दाह तथा पीत ज्वरना व्याधिथी व्याप्त थयुं. तेओ विहार करतां करतां सेलकपुरे गया. त्यां तेनो पुत्र मंडुक राजा तेमने वांदवा आव्यो. धर्मदेशना सांभळीने तेणे श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो. पछी आचार्यनो देह शुष्क

१ बहु वखत जवाथी अत्यंत ठरी गयेलुं.

तथा व्याधिग्रस्त जाणीने तेणे कह्युं के–" हे गुरु ! मारी यानशाळामां निवास करो." एटले सूरि पांचसो शिष्यो सहित त्यां रह्या. पछी मंडुक राजाए गुरुनी आज्ञा लइने वैद्य बोलाव्यो; तेणे औषध करवा मांड्युं. परंतु रोगना मूल उच्छेदनने माटे तेणे मद्यपान कराव्युं, तेथी सूरि नीरोगी थया; परंतु रसलोलुप थइ गया. कह्युं छे के "अभक्ष्य एवा मद्य पानादिक वडे साधु मूर्छित, गृद्ध, उसन्न विहारी, पासथ्थो, कुशिळीओ, प्रमादी अने संसक्तो थइ जाय छे." गुरुनी एवी स्थिति जोइने एक पंथक विना बीजा चारसो नवाणुं साधुओए विचार कर्यो के "गुरु तो प्रमादी अने एक स्थाननिवासी थइ गया छे, तेथी आपणे गुरुनी आज्ञा लइने विहार करीए." आम विचारीने तेओए आज्ञा लइने त्यांथी विहार कर्यो. मात्र एक पंथक मुनि तेमनी वैयावच करवा रह्या.

अन्यदा चातुर्मासनी चतुर्दशीने दिवसे सूरि अत्यंत मद्यपान करीने सुता हता. ते वखते पंथक मुनि देवसी प्रतिक्रमण करीने कार्तिक चोमासीना खामणा खामवा माटे निद्रा पामेला गुरुना पादमां मस्तक राखीने "अप्भुठिओहं" इत्यादि बोलवा लाग्या. ते शब्द सांभळवाथी तथा पोताना पगने स्पर्श थवाथी गुरुनी निद्रानो भंग थयो तेथी " मने कोण जगाडे छे? " एम बोलतां गुरु उठ्या. त्यारे पंथक विनयथी नम्र थइनेबोल्या–"हे स्वामिन् ! मने धिक्कार छे के चातुर्मासीना खामणा माटे में आपने जगाड्या. माटे मारो अपराध क्षमा करो." आ प्रमाणेना तेना विनय भरेला वाक्यथी लज्जा पामीने सेलकाचार्य तेनी अनुमोदना करवा लाग्या, अने प्रमादमां आसक्त थयेला पोतानी अनेक प्रकारे निंदा करवा लाग्या–"अरेरे ! में रसमां गृद्ध थइने चारित्ररत्नने मलिन कर्युं; आ शिष्यने धन्य छे के तेणे मने बाह्यथी तथा अभ्यंतरथी एम बन्ने प्रकारे जाग्रत कर्यो. अहो ! हुं क्यां अने आ शिष्य क्यां ? मारामां अने तेनामां घणुं अंतर छे. मारो गुरु तो खरेखरो एज छे, केमके ते पंथके मने रस्ता उपर आण्यो, माटे तेणे "पंथक" एटले "मार्ग देखाडनार" एवुं पोतानुं नाम सार्थक कर्युं. वळी नहीं वांदवा योग्य एवा मने द्वादशावर्त्त वंदन पूर्वक वंदना करी अने मारा दोष जाणतां छतां तेणे गुप्त राख्या." इत्यादि तेनी प्रशंसा करीने सूरिए विचार्युं के–" काले मंडुक राजानी रजा लइ अहींथी विहार करीने फरीथी निर्मळ संयमने पाळुं." पछी ते प्रमाणे करीने आलोयणवडे पोताना आत्मानी शुद्धि करी सेलक गुरु घणा भव्य प्राणीओने बोध पमाडी छेवट पांचसो मुनि सहित सिद्धाचळ उपर पधार्या. त्यां एक मासनुं अनशन करीने मासने अंते परमानंदपदने पाम्या.

" आचारथी भ्रष्ट थयेला एवा गुरुने पण तज्या विना क्षामणादि विधिना मिषथी पंथक साधुए तेने मार्ग पर आण्या, अने छेवट ते सेलक सूरि सिद्धाचळ उपर सिद्धिपदने पाम्या. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य
चतुर्विंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२४ ॥

व्याख्यान २२५ मुं.

कार्तिकी पूर्णिमानुं महात्म्य.

यः कुर्यात् कार्तिकीं राकामत्रार्हध्ध्यानतत्परः ।
स भुक्त्वा सर्वसौख्यानि, निर्वृत्तिं लभते ततः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे माणस अहीं (सिद्धाद्रि उपर) जिनेश्वरना ध्यानमां तत्पर थइने कार्तिकी पुनम करे, ते आ लोकमां सर्व सुख भोगवीने पछी मोक्षसुखने पामे छे."

एकेनाप्युपवासेन कार्तिक्या विमलाचले ।
ऋषिस्त्रीबालहत्यादि पातकान्मुच्यते जनः ॥ २ ॥

भावार्थ—" शत्रुंजय गिरि उपर कार्तिकी पुनमने दिवसे मात्र एक उपवास करवाथी माणस ऋषिहत्या, स्त्रीहत्या अने बाळहत्या विगेरे पापोथी मुक्त थाय छे." ते उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

द्राविड वालिखिल्ल कथा.

ऋषभदेवनो पुत्र द्राविड नामे हतो. तेने द्राविड अने वालिखिल्ल नामना बे पुत्रो थया हता. एकदा द्राविडने मिथिलानुं राज्य अने वालिखिल्लने

लाख गामो आपीने द्रविडे प्रभु पासे दीक्षा ग्रहण करी. अन्यदा द्राविड पोताना नाना भाइने अधिक संपत्तिवाळो जोइने तेनी उन्नति नहीं सहन थवाथी तेना पर द्वेष करवा लाग्यो. वालिखिल्ल पण ते वृत्तांत जाणीने मोटा भाइ पर द्वेष धरवा लाग्यो. ए रीते परस्पर द्वेष थवाथी तेओ एक बी जाना राज्य ग्रहण करवामां उत्सुक थया, अने परस्परना छळ जोवा लाग्या. तेवामां एक वखत वालिखिल्ल द्राविडना नगरमां आवतो हतो, त्यारे द्राविडे तेने नगरमां आवतो अटकाव्यो. तेथी वालिखिल्लने क्रोध चड्यो एटले तेणे युद्ध करवा माटे पोतानुं सैन्य एकठुं कर्युं. द्राविड पण युद्धमाटे तैयार थइ गयो. बन्ने जण सामसामा आव्या. बन्ने पांच योजन युद्धभूमि राखीने बंने जणाए सेनानो पडाव नांख्यो. बन्नेना सैन्यमां दश दश लाख हाथी, घोडा अने रथो हता, तथा दश दश क्रोड पत्ति हता पछी निश्चय करेला दिवसे युद्ध शरु कर्युं. हाथीवाळा हाथीवाळा साथे अने पत्ति पत्ति साथे एवी रीते समान युद्ध थवा लाग्युं. आ प्रमाणे निरंतर युद्ध करतां सात मास व्यतीत थइ गया. तेमां एकंदर दश क्रोड सुभटोनो नाश थयो. तेवामां वर्षा ऋतु आववाथी युद्ध बंध राखीने घास अने पांदडांनी झुंपडीओ करीने त्यांज रह्या.

अनुक्रमे वर्षा ऋतु व्यतीत थयो अने सर्व धान्य तथा औषधिओ पाकी गइ. ते वखते द्राविड पोताना परिवार सहित वननी समृद्धि (शोभा) जोवा माटे नीकळ्यो. आगळ चालतां पोताना विमलमति नामना प्रधाननी प्रेरणाथी कोई तापसना आश्रममां गयो. त्यां जटा रुपी मुकुटथी सुशोभित, वल्कल वस्त्रने धारण करनार अने पर्यंकासने बेठेला सुवल्गु नामना कुलपतिने दीठा. तेनी फरता घणा तापसो बेठेला हता; अने तेनी आकृति शांत तथा दयाळु जणाती हती. एवा कुलपतिने जोइने द्राविड राजाए तेने प्रणाम कर्या. मुनिए पण ध्यान तजी दइ राजाने आशीर्वादनां वचनोवडे हर्षित कर्यो. पछी कुलपति अनुग्रहनी बुद्धिथी धर्मदेशना आपवा लाग्या-" हे राजन् ! आ संसार रुपी सागर अनंत दुःख रुपी जळथी भरेलो छे, काम क्रोधादिक मकरना समूहथी ते अति भयंकर छे. तेमां आखा जगतने गळी जवामां लालचु एवो लोभ रुपी वडवानळ रहेलो छे, अने तेमां रहेला विषयो रुपी आवर्तमां निमग्न थयेला सुर, असुर अने राजाओ विगेरे कोइपण प्रकारे तेमांथी नीकळी शकता नथी. आ संसारमां जे राज्य पामवुं ते अंते नरकने आपनारुंज छे, माटे हे राजन् ! तने एवा नरकरुपी अनर्थने आपनारा राज्यना लोभथी भाइनी साथे महा अनर्थकारी युद्ध करवुं योग्य नथी. जेओ एक खंड मात्र पृथ्वीना लोभथी बंधु विगेरेनो नाश करे छे ते अनंत

दुःखो पामे छे. माटे तमारे श्रीऋषभप्रभुना पौत्रोने आवो क्लेश करवो योग्य नथी."

आ प्रमाणेनां कुलपतिनां वचनो सांभळीने द्राविड राजा बोल्यो के-" हे भगवन्! पूर्वे भरत तथा बाहुबळी विगेरेए पण ते कारणने लीधे परस्पर युद्ध कर्यां हतां, तो अमारो शो दोष !" मुनि बोल्या के-" हे राजा ! भरते पूर्व जन्ममां साधुओने आहार देवानी भक्तिए करीने चक्रवर्तिपणुं उपार्जन कर्युं हतुं, अने बाहुबळीए साधुओनी वैयावच्च करीने बाहुनुं बळ उपार्जन कर्युं हतुं. बन्ने पोतपोताना शुभ कर्मनुं फळ पाम्या हता. भरत चक्रीए तो चक्ररत्न आयुधशाळामां न पेसवाथी युद्ध कर्युं अने बाहुबळीए एवो विचार कर्यो के-"पिताए मने राज्य आप्युं छे, ते भरत लइ लेवाने इच्छे छे, तो शुं हुं निर्बळ छुं के आपी दउं? अर्थात तेनी आज्ञा स्वीकारुं ? हुं तो तातना चरणकमळ शिवाय बीजाने नमीश नहीं." इत्यादि कारणथी तेमनुं युद्ध थयुं हतुं. तेम छतां पण देवताओना कहेवाथी ते बन्ने बोध पाम्या हता, अने तेमणे पोताना आत्माने तार्या हता. माटे हे राजन् ! तेवा पुरुषसिंहोनी स्पर्धा तमारे करवी योग्य नथी. "

आ प्रमाणेनां कुळपतिनां वचनो सांभळीने द्राविड राजा लज्जित थयो, अने पश्चात्ताप करवा लाग्यो. ते बोल्यो के-" हे मुनि ! में मूर्खाए अज्ञानताथी मारा काकानी समानता ग्रहण करी; परंतु काच चिंतामणिना प्रभावने कदिपण पामी शकतोज नथी. आपे मने घोर नरकमां पडतो बचाव्यो; हवे मारां विवेक रुपी नेत्र उघड्यां." आ प्रमाणे बोलीने ते जाते पोताना नाना भाइने खमाववा चाल्यो. वालिखिल्ल पण मोटा भाइने सन्मुख आवतो जोइने पोतेज तेनी सामे गयो, अने तेना पगमां पड्यो, एटले द्राविडे तेने उभो करी स्नेह पूर्वक आलिंगन कर्युं. वालिखिल्ल बोल्यो-" हे भाइ ! तमे मारा ज्येष्ठ बंधु छो, माटे मारुं राज्य ग्रहण करो." द्राविड पण गद्‌गद् कंठे बोल्यो-" हे भाइ! राज्यथी शुं ! आ संसारना कामभोग अनित्य छे, दुर्गतिमां पडता प्राणीओने धर्म विना बीजुं कांइ पण शरणभूत नथी, माटे मारे तो व्रत अंगीकार करवुं छे, तेथी तने खमाववा आव्यो छुं." नानो भाइ बोल्यो-" हे भाइ ! जो तमे सर्व प्रकारे श्रेय करनार व्रतने आदरवा इच्छो छो, तो मारे पण तेज अंगीकार करवुं छे." एम कही बन्ने जणाए पोतपोताना पुत्रने राज्य सोंपी पोतपोताना मंत्रीओ सहित दश क्रोड पुरुषो साथे तेज तापस पासे जइ तापस व्रत ग्रहण कर्युं. ते सर्वे कंदमूळनो आहार करता,

गंगाजळमां स्नान करतां, अने अल्प कषाय तथा अल्प निद्रावाळा थइने जपमाळा वडे श्री युगादीश प्रभुनुं स्मरण करता तथा परस्पर धर्मकथा करता हता. ए प्रमाणे तेमणे एक लाख वर्ष त्यांज निर्गमन कर्यां.

एकदा **नमिविनमि** नामना विद्याधर राजर्षिना बे प्रतिशिष्यो[1] आकाश मार्गे त्यां आव्या. तेमने ते सर्वे तापसोए वांदीने पूछ्युं के-" तमे क्यां जाओ छो ?" त्यारे ते बन्ने मुनिओ तेमने धर्मलाभनी आशिष् आपीने बोल्या के—" अमे पुंडरीक गिरिनी यात्रा करवा जइए छीए. " तापसोए पूछ्युं के-" ते गिरिनुं महात्म्य केवुं छे ? " मुनिए जवाब आप्यो के-

अनंता मुक्तिमासेदुरत्र तीर्थप्रभावतः ।
सेत्स्यंति बहवोऽप्यत्र शुद्धचारित्रभूषिताः ॥ १ ॥

भावार्थ-" अहीं (सिद्धाचळ उपर) तीर्थना प्रभावथी शुद्ध चारित्रथी शोभता एवा अनंत जीवो मुक्ति गया छे, अने हजु पण घणा जीवो अहीं सिद्धिपदने पामशे."

आ प्रमाणे लाख वर्ष सुधी कहीए तोपण ते तीर्थना महिमानो पार आवे तेम नथी. ते तीर्थमां नमिविनमि नामना मुनींद्र बे क्रोड मुनिओ सहित पुंडरीक गणधरनी जेम फाल्गुन शुदी दशमीने दिवसे मोक्षे गया छे. पूर्वे श्रीमान अनंत ज्ञानगुणना भंडार श्रीऋषभदेवना गणधरो विगेरे केवळीनां वचनथी अमे सांभळ्युं छे के-" आगामि काळे आ तीर्थे घणा उत्तम पुरुषो सिद्धिपदने पामशे. श्री रामचंद्र राजर्षि त्रण क्रोड मुनि सहित सिद्धिने पामशे, एकाणुं लाख मुनिओ सहित नारदजी मुक्ति पामशे, साडा आठ क्रोड मुनिओ सहित सांब अने प्रद्युम्न सिद्धिने पामशे, वीश क्रोड मुनि सहित पांडवो सिद्धि पामशे, थावच्चापुत्र तथा शुक आचार्य विगेरे हजार हजार साधुओ सहित मुक्ति पामशे, पांचसो साधु सहित सेलक राजर्षि सिद्धिने पामशे तथा श्रीऋषभदेव स्वामीना शासनमां पण असंख्य कोटी लक्ष साधुओ मुक्तिपदने पामशे. तेथी केवळज्ञानी पण ए तीर्थना महिमानुं वर्णन करवाने शक्तिमान नथी." इत्यादि महात्म्य सांभळीने ते सर्वे तापसो पुंडरीक तीर्थनी यात्रा करवा उत्सुक थया. एटले ते मुनिनी साथे ते तरफ भूमिमार्गे प्रयाण कर्युं. मार्गमां ते विद्याधर मुनिना उपदेशथी ते सर्वे तापसोए

[1] शिष्यनां शिष्य.

मिथ्यात्वनी क्रियाओ छोडी दइ लोच करीने साधुधर्म अंगीकार कर्यो. अनुक्रमे दूरथी सिद्धाचळने दृष्टिवडे जोइने तेमने अत्यंत हर्ष उत्पन्न थयो. पछी त्यां पहोंची, उपर चडीने श्री भरतचक्रीना बनावेला चैत्योमां युगादीश प्रभुने तेओ भक्ति पूर्वक नम्या. त्यार पछी मासक्षपणने अंते ते विद्याधर मुनिओए तेमने कह्युं के-" हे मुनिओ ! तमारा अनंत काळथी संचय करेलां पापकर्मो आ तीर्थनी सेवावडे क्षय पामशे, माटे तमारे अहींज तपसंयममां तत्पर थइने रहेवुं. " एम कहीने ते बन्ने मुनि त्यांथी अन्यत्र विहार करी गया.

पछी ते द्राविड, वालिखिल्ल विगेरे दश क्रोड साधुओ त्यांज रहीने तप करवा लाग्या. अनुक्रमे एक महिनानी संलेखना करीने ते सर्वे केवळज्ञान पामी मोक्षे गया. तेमना पुत्रोए त्यां आवी तेमना निर्वाणस्थाने प्रासादो कराव्या. श्रीभरतेशना निर्वाणथी पूर्व कोटी वर्षो गया पछी द्राविड विगेरे मुनिओनुं निर्वाण थयुं. काळना क्रमे करीने आ वृत्तांत नहीं जाणनारा मिथ्यात्विओ कार्तिकी पुनमने दिवसे मिथ्यामोहथी शत्रुंजयने छोडीने बीजा सेंकडो क्षुद्र तीर्थोमां भटके छे.

" जेओ संघ सहित श्रीसिद्धाचळ उपर जइने कार्तिक तथा चैत्र मासनी पूर्णिमाने दिवसे आदर पूर्वक दान तथा तप विगेरे करे छे तेओ मोक्षसुखने भोगवनार थाय छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ पंचदशमस्तंभस्य पंचविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२५ ॥

श्रीउपदेश प्रासाद.

स्थंभ १६ मो.

व्याख्यान २२६ मुं,

छ लेश्यानुं स्वरूप.

कीर्तिधरमुनीन्द्रेण, प्रियंकरनृपं प्रति ।
लेश्यास्वरूपमाख्यातं तच्छ्रुत्वासौ शुभां दधौ ॥ १ ॥

भावार्थ—"कीर्तिधर मुनींद्रे प्रियंकर राजाने लेश्यानुं स्वरूप कही बताव्युं छे ते सांभळीने तेमांनी शुभ लेश्या तेणे धारण करी."

प्रियंकर राजानी कथा.

अक्षपुर नामना नगरमां अरिदमन नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने **प्रियंकर** नामे पुत्र हतो. एक दिवस दिग्यात्रा करीने विजय पामेलो राजा घणो काळ व्यतीत थयेलो होवाथी प्रियाना दर्शन माटे अति उत्सुक थयो. तेथी पोतानी सेनाने पण पाछळ मूकीने एकलोज त्वराथी पोताना नगरमां आव्यो. ते वखत पोतानुं नगर ध्वज, तोरण विगेरेथी शोभित जोइने आश्चर्य पामतो ते राजमहेल पासे गयो. त्यां पण पोतानी कांताने सर्व अलंकारथी शोभित अने सत्कार करवा माटे तैयार थइने उभेली जोइ राजाए तेने पूछ्युं के—"हे प्रिया! मारा आगमनना समाचार तमने कोणे कह्या?" तेणीए कह्युं के—"कीर्तिधर नामना मुनिराजे आपना एकाकी आववाना खबर आप्या हता, तेथी हुं आपनी सन्मुख आववा तैयार थइने उभी छुं." पछी अरिदमन राजाए ते मुनिराजने बोलावीने पूछ्युं के—"जो तमे ज्ञानी हो तो मारा मननुं चिंतित कहो!" त्यारे मुनिए कह्युं के—"हे राजन्! तमे तमारा मरण विषे चिंतवन कर्युं छे." राजाए पूछ्युं के—"हे साधु! मारुं मृत्यु क्यारे थशे?" मुनि बोल्या के—"आजथी सातमे दिवसे विजळीनो पात थवाथी तमारुं मृत्यु थशे; अने मरीने अशुचिमां बेइंद्रिय कीडा रूपे उत्पन्न थशो." एम कहीने मुनिराज पोताने उपाश्रये गया. राजा आ वृत्तांत सांभळीने आकुळव्याकुळ थयो, अने पोताना पुत्र प्रियंकरने बोलावीने कह्युं के—

'हे वत्स! जो हुं अशुचिमां कीडो थाउं तो तारे मने मारी नांखवो." प्रियंकरे ते वात अंगीकार करी. राजा सातमे दिवस पुत्र, स्त्री अने राज्यादिकनी तीव्र मूर्छाथी मरीने अशुचिमां कीडा रूपे उत्पन्न थयो, ते वखते प्रियंकरे तेने मारवा मांड्यो, पण ते मरवा खुशी थयो नहीं. तेथी प्रियंकरे मुनिने पूछ्युं के–"हे मुनिराज! शुं आ मारो पिता छे के जे दुःखी छतां पण मरणने इच्छतो नथी?" त्यारे साधु बोल्या के—

अमेध्यमध्ये कीटस्य सुरेन्द्रस्य सुरालये ।
समाना जीविताकांक्षा तुल्यं मृत्युभयं द्वयोः ॥ १ ॥

भावार्थः–"विष्टामां रहेला कीडाने तथा स्वर्गमां रहेला इंद्रने जीववानी आकांक्षा सरखीज होय छे; अने ते बन्नेने मृत्युनुं भय पण समानज होय छे."

आ प्रमाणे सांभळीने प्रियंकर राजाए गुरुने कह्युं के–"हे स्वामी! कोइ वखत न जोएलुं, न सांभळेलुं अने न इच्छेलुं एवुं परभवमां गमन सर्व जीवो पामे छे, जेम मारा पिता कीडानो भव पाम्या; तो तेवी गतिमां आत्मा शा हेतुवडे जतो हशे?" गुरुए कह्युं के–"जीवोने जेवी लेश्याना परिणाम होय छे तेवी गति तेने प्राप्त थाय छे." राजाए पूछ्युं के–"हे स्वामी! लेश्या केटला प्रकारनी छे?" त्यारे गुरुए छ लेश्यानुं स्वरूप कह्युं के–"हे राजा! आत्माना परिणामविशेषे करीने लेश्याओ छ प्रकारनी छे."

अतिरौद्रः सदा क्रोधी. मत्सरी धर्मवर्जितः ।
निर्दयो वैरसंयुक्तः, कृष्णलेश्याधिको नरः ॥ १ ॥

भावार्थः–"जे माणस महा रौद्रध्यानी होय, सदा क्रोधी होय, सर्व उपर द्वेषी होय, धर्मथी वर्जित होय, निर्दय होय अने निरंतर वैर राखनारो होय तेने विशेषे करीने कृष्ण लेश्यावाळो जाणवो."

अलसो मंदबुद्धिश्च, स्त्रीलुब्धः परवंचकः ।
कातरश्च सदा मानी, नीललेश्याधिको भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थः–"नील लेश्यावाळो जीव आळसु, मंदबुद्धि, स्त्रीमां लुब्ध, परने छेतरनार, बीकण अने निरंतर अभिमानी होय छे."

शोकाकुलः सदा रुष्टः, परनिंदात्मशंसकः ।
संग्रामे दारुणो दुःस्थः, कापोतक उदाहृतः ॥ २ ॥

भावार्थ–"निरंतर शोकमां मग्न रहेनार, सदा रोषवाळो, परनी निंदा करनार, आत्मप्रशंसा करनार, रणसंग्राममां भयंकर अने दुःखी अवस्थावाळा माणसनी कापोत लेश्या कहेली छे."

विद्वान् करुणायुक्तः, कार्याकार्यविचारकः ।
लाभालाभे सदा प्रीतः, पीतलेश्याधिको नरः ॥ ४ ॥

भावार्थ–" विद्वान्, करुणावान्, कार्याकार्यनो विचार करनार अने लाभमां के अलाभमां सदा आनंदी–एवा माणसने पीत लेश्या अधिक होय छे."

क्षमावान् निरतत्यागी, देवार्चनरतो यमी ।
शुचिभूतः सदानंदः, पद्मलेश्याधिको भवेत् ॥ ५ ॥

भावार्थः–" क्षमायुक्त, निरंतर त्यागवृत्तिवाळो, देवपूजामां तत्पर, यमने धारण करनार, पवित्र अने सदा आनंदमां मग्न–एवो मनुष्य पद्म लेश्यावाळो होय छे."

रागद्वेषविनिर्मुक्तः, शोकनिंदाविवर्जितः ।
परात्मभावसंपन्नः, शुक्ललेश्यो भवेन्नरः ॥ ६ ॥

भावार्थ–" रागद्वेषथी मुक्त, शोक अने निंदाथी रहित तथा परमात्म भावने पामेलो मनुष्य शुक्ल लेश्यावाळो कहेवाय छे."

आ छ लेश्यामां प्रथमनी त्रण लेश्याओ अशुभ छे, अने बीजी त्रण शुभ छे. ते छएनुं विस्तारथी स्वरूप जणाववा माटे जांबु खानारा तथा गाम भांगनारा छ छ पुरुषनां दृष्टांत छे. ते आप्रमाणे––

कोइ अरण्यमां क्षुधाथी कृश थयेला छ पुरुषोए पाकेलां अने रसवाळां जांबुना भारथी जेनी सर्व शाखाओ नमी गइ छे एवुं कल्प वृक्षना जेवुं एक जांबुनुं वृक्ष जोयुं. ते जोइने सर्वे हर्षित थइने बोल्या के–" अहो! खरे अवसरे आ वृक्ष आपणा जोवामां आव्युं छे, माटे हवे स्वेच्छाए तेनां फळ खाइने आपणे क्षुधानो नाश करीए." पछी तेमां एक क्लिष्ट परिणामवाळो हतो ते बोल्यो के–" आ दुरारोह वृक्ष उपर चडवाथी जीवनुं पण जोखम थाय तेवुं छे, माटे तीक्ष्ण कुहाडानी धारवडे मूळमांथी कापी नाखी तेने आडो पाडो दइए अने पछी निरांते तेनां समग्र फळो खाइए." आवा परिणाम पुरुषने कृष्ण लेश्याथीज थाय

१ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रहप्रमाण–ए पांच यम. २ मुश्केलीथी चडी शकाय तेवा.

छे. (१). पछी बीजो तेना करतां कांइक कोमळ हृदयवाळो बोल्यो के-"आवा मोटा वृक्षने कापवाथी आपणने शुं वधारे लाभ छे? मात्र एक मोटी शाखा तोडी पाडीने तेनी उपर रहेलां फळो खाइए." आ पुरुष नील लेश्याना परिणामवाळो जाणवो. (२). पछी त्रीजो बोल्यो के-" एवडी मोटी शाखाने कापवाथी शुं? मात्र तेनी एक प्रशाखानेज कापीए." आ पुरुष कापोत लेश्या वाळो जाणवो. (३). पछी चोथो बोल्यो के-" ते बिचारी नानी शाखाने कापवाथी शुं विशेष लाभ छे? मात्र तेना गुच्छा तोडवाथीज आपणुं कार्य सिद्ध थशे." आ माणस तेजो लेश्यावाळो जाणवो. (४). पछी पांचमो बोल्यो के-" गुच्छा तोडवाथी पण शुं? मात्र पाकेलां अने भक्षण करवा लायक जोइए तेटलां फळोनेज तोडीए." आ पुरुष पद्मलेश्यावाळो जाणवो. (५) हवे छठ्ठो बोल्यो के-" फळो तोडवाथी पण शुं? आपणने जेटलां फळोनी जरूर छे तेटलां तो आ वृक्षनी नीचे पडेलांज मळी शके तेम छे, तो तेनाथीज प्राणनो निर्वाह करवो ते श्रेष्ठ छे. माटे आ वृक्षने कापी नांखवा विगेरेना विचारो शा माटे करवा जोइए?" आ छेल्लो शुक्ल लेश्याना परिणामवाळो जाणवो. (६).

धाड पाडनार छ पुरुषनुं दृष्टांत.

धन धान्यादिकमां लुब्ध थयेला चोरोना छ अधिपतिओए एकत्र थइने एक गाममां धाडुं पाड्युं. ते समये तेमांथी एक जण बोल्यो के-" आ गाममां मनुष्य, पशु, पुरुष, स्त्री, बाळक, वृद्ध विगेरे जे कोइ नजरे पडे ते सर्वने मारी नांखवा." आ प्रमाणे कृष्ण लेश्याना स्वभाववाळानुं वाक्य सांभळीने बीजो नील लेश्यावाळो बोल्यो के-" मात्र मनुष्यनेज मारवा, पशुओने मारवाथी आपणने शुं फळ छे?" त्यारे त्रीजो कापोत लेश्यावाळो बोल्यो के-"स्त्रीओने शा माटे मारवी जोइए? मात्र पुरुषोनेज मारवा." त्यारे चोथो तेजो लेश्यावाळो बोल्यो के-" पुरुषमां पण शस्त्ररहितने मारवानुं शुं काम? मात्र शस्त्रधारिनेज मारवा." ते सांभळी पांचमो पद्म लेश्यावाळो बोल्यो के-" शस्त्रधारीमां पण जेओ आपणी सामा युद्ध करवा आवे तेनेज मारवा. बीजा निरपराधीने शामाटे मारवा जोइए?" छेवटे छठ्ठो शुक्ल लेश्यावाळो बोल्यो के-" अहो! तमारो केवो खोटो विचार छे? एक तो द्रव्यनुं हरण करवा आव्या छो, अने वळी बिचारा प्राणीओने मारवा चाहो छो; माटे जो तमे द्रव्य लेवा आव्या छो तो भले द्रव्य ल्यो, परंतु तेमना प्राणनुं तो रक्षण करो."

आ प्रमाणेनी छ लेश्यावाळा जीवो मरीने जुदी जुदी गतिने पामे छे. कह्युं छे के-

किण्हाए जाइ नरये, नीलाण थावरो नरो होइ।
कापोताए तिरियं, पीताए माणुसो होइ ॥ १ ॥
पम्माए देवलोयं, सुक्काए जाइ सासयं ठाणं।
इय लेसाण वियारो, णायव्वो भव्वजीवेहिं ॥ २ ॥

भावार्थ–" कृष्ण लेश्यावाळो नरकगति पामे छे, नील लेश्यावाळो थावरपणुं पामे छे, कापोत लेश्यावाळो तिर्यंच थाय छे, पीत लेश्यावाळो मनुष्य-गति पामे छे, पद्म लेश्यावाळो देवलोकमां जाय छे अने शुक्ल लेश्यावाळो जीव शाश्वत स्थान पामे छे. आ प्रमाणे भव्य जीवोए लेश्यानो विचार जाणवो."

गुरुना मुखथी उपर प्रमाणे लेश्यानुं स्वरूप जाणीने प्रियंकर राजा प्रतिबोध पाम्यो, अने निरंतर शुभ लेश्यामां वर्ती श्रावकधर्मने अंगीकार करी अंते सद्गति पाम्यो.

" कापोत लेश्याना परिणामवाळा अरिदमन राजानी कथा सांभळीने तेमज तेनी क्रीडा तरिकेनी उत्पत्ति आपना मुखथी जाणीने प्रियंकर राजा भला धर्मने आपवावाळी शुभ लेश्यावाळो थयो."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य षड्विंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२६ ॥

व्याख्यान २२७ मुं.

अविमृश्य कारिता.

अविमृष्य कृतं कार्यं, पश्चात्तापाय जायते।
अत्राम्रतरुच्छेदाद्या, दृष्टांताः खचिता बुधैः ॥ १ ॥

भावार्थ–" कोइ पण कार्य विचार कर्या विना करवाथी पश्चातापने

माटेज थाय छे. ते उपर आम्र वृक्षना छेद करनार विगेरेना दृष्टांत पंडितोए कहेलां छे." ते आ प्रमाणे-

पाटलीपुर नामना नगरमां निवास करनार धनदत्त नामनो श्रेष्ठी वेपार माटे वहाणमां बेसी दरीआ रस्ते चाल्यो. अनुकूल पवनने लीधे त्वराथी वहाण चाल्युं, अने मध्य समुद्रमां आव्युं, तेटलामां श्रेष्ठीए आकाशमार्गे चाल्या आवता एक उत्तम पोपटने जोयो. ते पोपटना मुखमां एक आम्रफळ हतुं. श्रमित थइ जवाथी तेने समुद्रमां पडतो जोइने श्रेष्ठीए तेनी नीचे एक वस्त्र लांबुं करावीने खलासीओ पासे तेने झीलावी लीधो, अने पोतानी पासे मंगावी तेने पाणी तथा पवन नाखवावडे स्वस्थ कर्यो. त्यार पछी श्रेष्ठीए तेने बोलाव्यो, एटले ते मुखमांथी आम्र फळने नीचे मूकीने मनुष्यवाणीथी बोल्यो के-" हे सार्थना अधिपति श्रेष्ठी ! तमे सर्व प्रकारना उपकारमां श्रेष्ठ एवो जीवितदान रूपी उपकार मारापर करीने मने जीवाड्यो छे, एटलुंज नहीं पण मारा अंध अने वृद्ध मातपिताने पण तमे जीवाड्या छे. तो आवा मोटा उपकार करनारा तमोने हुं केवी जातनो प्रतिउपकार करुं ? तो पण में आणेलुं आ आम्रफळ तमे स्वीकारो." श्रेष्ठीए कह्युं के-" आ फळ तारुं भक्ष छे ने तारे खावा लायक छे, माटे तुंज खा, अने बीजुं पण साकर, द्राक्ष विगेरे तने खावा आपुं छुं." त्यारे पोपट बोल्यो के-" हे श्रेष्ठी ! आ फळनुं वृत्तांत सांभळो. विंध्याटवीमां एक वृक्ष उपर पोपटनुं मिथुन वसे छे तेनो हुं पुत्र छुं .ते मारां मातपिता अनुक्रमे वृद्धपणाथी जराक्रांत थवाने लीधे आंखे जोइ शकता नथी तेथी हुंज तेमने खावानुं लावीने आपुं छुं. ते अरण्यमां एक दिवस बे मुनिराज पधार्या; तेमणे चो तरफ जोइने एकांत जणायाथी परस्पर आप्रमाणे वात करीके-'समुद्रना मध्यमां कपि नामना पर्वतना शिखर उपर निरंतर फळतुं एक आम्र वृक्ष छे, तेनुं एक पण फळ एक वार जे भक्षण करे तेना अंगमाथी सर्व व्याधिओ नाश पामे छे, तेमज अकाळ मृत्यु के जराजीर्णपणुं तेने प्राप्त थतुं नथी.' आ प्रमाणे तेमनुं वाक्य सांभळीने में विचार्युं के-' मुनितुं वाक्य हमेशां सत्य अने हितकरज होय छे, तेथी ते वृक्षनुं फळ लावीने जो मारां मातापिताने आपुं तो तेओ युवावस्थाने पामशे.' आवो विचार करीने हुं त्यां गयो, अने आ फळ लाव्यो छुं; माटे हे श्रेष्ठी ! आ फळ तमे ग्रहण करो, हुं बीजुं फळ लइ आवीने मारा माबापने आपीश." पछी श्रेष्ठीए पोपटना आग्रहथी ते फळ लीधुं, अने पोपट त्यांथी आकाशमां उडी गयो.

पछी श्रेष्ठीए विचार्युं के-"जो आ फळ हुं कोइ राजाने आपुं तो तेनाथी

घणा जीवोनो उपकार थशे हुं खाइश तो पण शुं ! अने नहीं खाउं तो पण शुं !" एम विचारीने ते आम्र फळ तेणे सारी रीते साचवी राख्युं. पछी केटलेक दिवसे ते वहाण कोइ किनारे पहोच्युं. एटले श्रेष्ठी वहाणमांथी उतरीने भेट लइने राजा पासे गयो. राजानी पासे भेट मूकीने पछी ते आम्र फळ पण आप्युं. ते जोइने राजाए विस्मय पूर्वक पूछ्युं के-" हे श्रेष्ठी ! आ शानुं फळ छे ?" त्यारे श्रेष्ठीए राजाने ते फळनो समग्र महिमा कह्यो. तेथी राजा अत्यंत संतुष्ट थयो अने तेनुं सघळुं दाण माफ कर्युं. एटले श्रेष्ठी हर्ष पामीने पोताने स्थानके गयो.

पछी राजाए फळ हाथमां राखीने विचार्युं के-" आ फळने हुं एकलोज खाइश तो तेथी शुं अधिक गुण थशे ! माटे तेने कोइ सारा क्षेत्रमां ववरावुं तो तेना घणां फळो थशे, अने तेथी स्त्री पुत्रादिक सर्वने वृद्धावस्थारहित करी शकीश." एम विचारीने राजाए कोइ सारा क्षेत्रमां ते बीज ववराव्युं; अनुक्रमे ते आम्र वृक्ष वृद्धि पाम्युं, अने तेने पुष्प फळ विगेरे थयां. त्यारे राजाए तेना रक्षकोने घणुं धन आपीने कह्युं के-" आ वृक्षनुं यत्न पूर्वक रक्षण करवुं." आ प्रमाणे राजानुं वचन सांभळीने ते रक्षको रात्रिदिवस त्यांज रहेवा लाग्या. एक दिवसे दैव योगे रात्रिमां एक फळ पोतानी मेळे तुटीने पृथ्वीपर पड्युं. पछी प्रातःकाले ते पाकेला फळने पडेलुं जोइने रक्षकोए हर्ष पूर्वक ते लइ तत्काल राजाने आप्युं. ते वखत राजाए विचार्युं के-" आ नवीन फळ प्रथम कोइ पात्रने आपुं तो ठीक." एम धारीने चार वेदना जाणनार कोइ ब्राह्मणने राजाए भक्ति पूर्वक ते फळ आप्युं ब्राह्मण ते फळ खावाथी तत्काळ मृत्यु पाम्यो. ते वृत्तांत सांभळीने राजा अति खेद सहित बोल्यो के-" अहो ! में धर्मबुद्धिथी ब्रह्महत्या रूप मोटुं पाप कर्युं. खरेखर मने मारवा माटेज कोइ शत्रुए प्रपंच करीने ते फळ मोकल्युं हशे. माटे आ विषवृक्ष पोतेज वावेलुं अने प्रयत्नथी पाळेलुं छतां शीघ्रताथी छेदी नखावुं" पछी तेवो हुकम थतांज राजपुरुषोए तीक्ष्ण कुहाडा वडे ते उत्तम वृक्षने मूळ सहित कापीने भूमि पर पाडी दीधुं अने ते समग्र वृक्षने पृथ्वीमां दाटी दीधुं. पछी मरगी (वाइ), कोढ, रक्तपित्तादिक असाध्य व्याधिथी पीडाएला केटलाक लोको जीवितथी खेद पाम्या सता ते वृक्षनुं छेदन सांभळीने त्यां आव्या; अने सुखेथी मरण थाय एवा हेतुथी ते वृक्षना शेष रहेलां सुकां काष्ठ अने कुत्सित पत्रादिक तेमणे खाधां. तेथी ते सर्वे नीरोगी तथा कामदेव समान रूपवाळा थया. तेमने जोइने राजाए विस्मय पामीने रक्षकोने बोलावीने पूछ्युं के-" तमे मने आप्युं हतुं ते आम्र फळ तोडीने लाव्या हता के पृथ्वीपर पडेलुं लीधुं हतुं"? त्यारे

माटेज थाय छे. ते उपर आम्र वृक्षना छेद करनार विगेरेना दृष्टांत पंडितोए कहेलां छे." ते आ प्रमाणे–

पाटलीपुर नामना नगरमां निवास करनार धनदत्त नामनो श्रेष्ठी वेपार माटे वहाणमां बेसी दरीआ रस्ते चाल्यो. अनुकूल पवनने लीधे त्वराथी वहाण चाल्युं, अने मध्य समुद्रमां आव्युं, तेटलामां श्रेष्ठीए आकाशमार्गे चाल्या आवता एक उत्तम पोपटने जोयो. ते पोपटना मुखमां एक आम्रफळ हतुं. श्रमित थइ जवाथी तेने समुद्रमां पडतो जोइने श्रेष्ठीए तेनी नीचे एक वस्त्र लांबुं करावीने खलासीओ पासे तेने झीलावी लीधो, अने पोतानी पासे मंगावी तेने पाणी तथा पवन नाखवावडे स्वस्थ कर्यो. त्यार पछी श्रेष्ठीए तेने बोलाव्यो, एटले ते मुखमांथी आम्र फळने नीचे मूकीने मनुष्यवाणीथी बोल्यो के–" हे सार्थना अधिपति श्रेष्ठी ! तमे सर्व प्रकारना उपकारमां श्रेष्ठ एवो जीवितदान रूपी उपकार मारापर करीने मने जीवाड्यो छे, एटलुंज नहीं पण मारा अंध अने वृद्ध मातपिताने पण तमे जीवाड्या छे. तो आवा मोटा उपकार करनारा तमोने हुं केवी जातनो प्रतिउपकार करुं ? तो पण में आणेलुं आ आम्रफळ तमे स्वीकारो." श्रेष्ठीए कह्युं के–" आ फळ तारुं भक्ष छे ने तारे खावा लायक छे, माटे तुंज खा, अने बीजुं पण साकर, द्राक्ष विगेरे तने खावा आपुं छुं." त्यारे पोपट बोल्यो के–" हे श्रेष्ठी ! आ फळनुं वृत्तांत सांभळो. विंध्याटवीमां एक वृक्ष उपर पोपटनुं मिथुन वसे छे तेनो हुं पुत्र छुं .ते मारां मातपिता अनुक्रमे वृद्धपणाथी जराक्रांत थवाने लीधे आंखे जोइ शकता नथी तेथी हुंज तेमने खावानुं लावीने आपुं छुं. ते अरण्यमां एक दिवस बे मुनिराज पधार्या; तेमणे चो तरफ जोइने एकांत जणायाथी परस्पर आप्रमाणे वात करीके–'समुद्रना मध्यमां कपि नामना पर्वतना शिखर उपर निरंतर फळतुं एक आम्र वृक्ष छे, तेनुं एक पण फळ एक वार जे भक्षण करे तेना अंगमाथी सर्व व्याधिओ नाश पामे छे, तेमज अकाळ मृत्यु के जराजीर्णपणुं तेने प्राप्त थतुं नथी.' आ प्रमाणे तेमनुं वाक्य सांभळीने में विचार्युं के–' मुनिनुं वाक्य हमेशां सत्य अने हितकरज होय छे, तेथी ते वृक्षनुं फळ लावीने जो मारां मातापिताने आपुं तो तेओ युवावस्थाने पामशे.' आवो विचार करीने हुं त्यां गयो, अने आ फळ लाव्यो छुं; माटे हे श्रेष्ठी ! आ फळ तमे ग्रहण करो, हुं बीजुं फळ लइ आवीने मारा माबापने आपीश." पछी श्रेष्ठीए पोपटना आग्रहथी ते फळ लीधुं, अने पोपट त्यांथी आकाशमां उडी गयो.

पछी श्रेष्ठीए विचार्युं के–"जो आ फळ हुं कोइ राजाने आपुं तो तेनाथी

घणा जीवोनो उपकार थशे हुं खाइश तो पण शुं ! अने नहीं खाउं तो पण शुं !" एम विचारीने ते आम्र फळ तेणे सारी रीते साचवी राख्युं. पछी केटलेक दिवसे ते वहाण कोइ किनारे पहोंच्युं. एटले श्रेष्ठी वहाणमांथी उतरीने भेट लइने राजा पासे गयो. राजानी पासे भेट मूकीने पछी ते आम्र फळ पण आप्युं. ते जोइने राजाए विस्मय पूर्वक पूछ्युं के-" हे श्रेष्ठी ! आ शानुं फळ छे ?" त्यारे श्रेष्ठीए राजाने ते फळनो समग्र महिमा कह्यो. तेथी राजा अत्यंत संतुष्ट थयो अने तेनुं सघळुं दाण माफ कर्युं. एटले श्रेष्ठी हर्ष पामीने पोताने स्थानके गयो.

पछी राजाए फळ हाथमां राखीने विचार्युं के-" आ फळने हुं एकलोज खाइश तो तेथी शुं अधिक गुण थशे ! माटे तेने कोइ सारा क्षेत्रमां ववरावुं तो तेना घणां फळो थशे, अने तेथी स्त्री पुत्रादिक सर्वने वृद्धावस्थारहित करी शकीश." एम विचारीने राजाए कोइ सारा क्षेत्रमां ते बीज ववराव्युं; अनुक्रमे ते आम्र वृक्ष वृद्धि पाम्युं, अने तेने पुष्प फळ विगेरे थयां. त्यारे राजाए तेना रक्षकोने घणुं धन आपीने कह्युं के-" आ वृक्षनुं यत्न पूर्वक रक्षण करवुं." आ प्रमाणे राजानुं वचन सांभळीने ते रक्षको रात्रिदिवस त्यांज रहेवा लाग्या. एक दिवसे दैव योगे रात्रिमां एक फळ पोतानी मेळे तुटीने पृथ्वीपर पड्युं. पछी प्रातःकाले ते पाकेला फळने पडेलुं जोइने रक्षकोए हर्ष पूर्वक ते लइ तत्काल राजाने आप्युं. ते वखत राजाए विचार्युं के-" आ नवीन फळ प्रथम कोइ पात्रने आपुं तो ठीक. " एम धारीने चार वेदना जाणनार कोइ ब्राह्मणने राजाए भक्ति पूर्वक ते फळ आप्युं ब्राह्मण ते फळ खावाथी तत्काळ मृत्यु पाम्यो. ते वृत्तांत सांभळीने राजा अति खेद सहित बोल्यो के-" अहो ! में धर्मबुद्धिथी ब्रह्महत्या रूप मोटुं पाप कर्युं. खरेखर मने मारवा माटेज कोइ शत्रुए प्रपंच करीने ते फळ मोकल्युं हशे. माटे आ विषवृक्ष पोतेज वावेलुं अने प्रयत्नथी पाळेलुं छतां शीघ्रताथी छेदी नखावुं "
पछी तेवो हुकम थतांज राजपुरुषोए तीक्ष्ण कुहाडा वडे ते उत्तम वृक्षने मूळ सहित कापीने भूमि पर पाडी दीधुं अने ते समग्र वृक्षने पृथ्वीमां दाटी दीधुं. पछी मरगी (वाइ), कोढ, रक्तपित्तादिक असाध्य व्याधिथी पीडाएला केटलाक लोको जीवितथी खेद पाम्या सता ते वृक्षनुं छेदन सांभळीने त्यां आव्या; अने सुखेथी मरण थाय एवा हेतुथी ते वृक्षना शेष रहेलां सुकां काष्ठ अने कुत्सित पत्रादिक तेमणे खाधां. तेथी ते सर्वे नीरोगी तथा कामदेव समान रूपवाळा थया. तेमने जोइने राजाए विस्मय पामीने रक्षकोने बोलावीने पूछ्युं के-" तमे मने आप्युं हतुं ते आम्र फळ तोडीने लाव्या हता के पृथ्वीपर पडेलुं लीधुं हतुं"? त्यारे

तेओए सत्य वात कही. ते सांभळीने राजाए विचार्युं के–" जरूर ते फळ पृथ्वी पर पड्या पछी सर्प विगेरेना विषथी मिश्रित थयुं हशे तेथीज ते उत्तम ब्राह्मणनुं मृत्यु थयुं. परंतु ते वृक्ष तो अमृत समानज हतुं. अरेरे! में अविचार्युं सहसा काम कर्युं के आवुं उत्तम वृक्ष क्रोधथी उखेडी नांख्युं." आ प्रमाणे पोताना गुणोने वारंवार संभारीने तेणे जीवतां सुधी अति शोक कर्यो.

" जेम आ राजाए वगर विचारे कार्य कर्युं तेम बीजाए करवुं नहीं " तेवुं आ दृष्टांतनुं तात्पर्य छे. अहीं तेना उपनयनी योजना आ प्रमाणे करवी– " अत्यंत दुर्लभ आम्रवृक्ष सदृश मनुष्यजन्म पामीने अज्ञान तथा अविरति वडे करीने जे मूढ पुरुष पोतानो मनुष्यभव व्यर्थ गुमावे छे ते वारंवार अत्यंत शोक पामे छे.कदाचित् देवना सान्निध्यथी तेवा सद्वृक्षनी प्राप्ति तो फरीने थइ शके छे, पण मुग्धपणाथी वृथा गुमावेल मनुष्यभवनी प्राप्ति फरीथी थइ शकती नथी. माटे किंचित् पण प्रमाद करवो नहीं. हे प्राणी ! जेम पतंगीयुं, भ्रमर, मृग, पक्षी, सर्प, माछलुंअने हाथी विगेरे इंद्रियोना विषयने आधीन थवाथी पोताना प्रमादथीज मृत्यु पामे छे अने सिंह विगेरे प्राणीओ मांसलुब्धपणाथी पांजरे पडे छे, अने बंधनना दुःख पामीने चिरकाळ पर्यंत शोकजनक दशाने भोगवे छे; तेम तुं पण जो प्रमादमां पडीश तो तेवीज दशा पामीश. हे मूढ जीव ! प्रथम पण पाप करवाथीज दुःखना समूहमां पडेलो छे, अने फरीथी पण पाछो पापज कर्यां करे छे; तेथी महासागरमां डूबतां माथे अने कंठे पथ्थर बांध्या जेवुं करे छे. हे जीव ! तने वारंवार उपदेश आपीए छीए के जो तुं दुःखथी भय पामतो होय, अने सुखनी इच्छा राखतो होय तो एवुं कार्य कर के जेथी तारुं वांछित सिद्ध थाय. तेम करवानो तारो आज अवसर छे. हे जीव ! तुं धन, स्त्री, स्वजन, सुख अने प्राणने पण तजी देजे, पण एक जैनधर्मने तजीश नहीं. केमके धर्मथीज सर्व संपत्तिओ प्राप्त थाय छे. आ प्रमाणे विचारीने सत्क्रियामां प्रवर्तन करवुं."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य सप्तविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२७ ॥

व्याख्यान २२८ मुं.

सहसा कार्य न करवा विषे

सहसा विहितं कर्म, न स्यादायति सौख्यदम् ।
पतत्रिहिंसकस्यात्र, महीभर्तुर्निदर्शनम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"साहस काम करवाथी परिणामे सुख मळतुं नथी. ते उपर पक्षीनी हिंसा करनार राजानुं दृष्टांत छे." ते आप्रमाणे–

आ भरत क्षेत्रमां शत्रुंजय नामे एक राजा हतो. तेनी पासे कोइ एक पुरुषे उत्तम लक्षण वाळो एक अश्व लावीने भेट कर्यो. तेने जोइने राजाए विचार्युं के–" आ अश्व शरीरनी शोभाथी प्रशंसा करवा लायक छे, परंतु तेनी गति जोवी जोइए." कह्युं छे के–

जवो हि सप्तेः परमं विभूषणं
नृपांगनायाः कृशता तपस्विनः ।
द्विजस्य विद्यैव मुनेरपि क्षमा
पराक्रमः शस्त्रबलोपजीविनः ॥ १ ॥

भावार्थ–" अश्वनुं श्रेष्ठ भूषण गति छे, राजपत्नी तथा तपस्वी पुरुषनुं भूषण कृशपणुं छे, ब्राह्मणनुं भूषण विद्याज छे, मुनिनुं भूषण क्षमा छे अने शस्त्र-विद्याना बळथी आजीविका करनार पुरुषनुं भूषण पराक्रम छे"

पछी ते राजा घोडापर चडीने अरण्यमां तेने दोडाववा लाग्यो; एटलामां ते पवनवेगी घोडो एवो दोड्यो के तेनुं सर्व सैन्य पाछळ रही गयुं. राजा जेम जेम तेना वेगने रोकवा माटे तेनी वल्गा (चोकडुं) खेंचे तेम तेम ते अश्व वधारे वधारे दोडवा लाग्यो. पछी राजाए थाकीने लगाम ढीली मूकी के तरतज ते अश्व उभो रह्यो. त्यारे राजाए जाण्युं के आ अश्वने विपरीत शिक्षा (केळवणी) आपी छे. पछी राजाए अश्व परथी उतरीने पलाण उतार्युं तेवामां ते घोडो संधीओ त्रुटी जवाथी पृथ्वीपर पडीने मरण पाम्यो. राजा क्षुधा अने तृषाथी पीडा पामतो एकलो ते भयंकर अटवीमां भमवा लाग्यो. भमतां भमतां एक मोटो वट वृक्ष जोईने राजा थाकेलो होवाथी तेनी छायामां जईने बेठो. पछी ते आम तेम जुए छे तेवामां तेज वृक्षनी एक शा-

खामांथी पाणीनां टीपां पडतां तेणे जोयां. राजाए विचार्युं के–" वर्षा काळमां पडेलुं जळ आठला वखत सुधी शाखाना छिद्रमां भराई रह्युं हशे. ते हालमां पडे छे." एम धारीने पोते तरस्यो होवाथी खाखरानां पांदडांनो पडीयो बनावीने तेनी नीचे मूक्यो. थोडी वारे ते पडीयो काळा अने मेला पाणीथी भराई गयो. ते लईने राजा जेवामां पीवा जाय छे तेटलामां कोई पक्षी वृक्षनी शाखा परथी उतरी ते जळनुं पात्र राजाना हाथमांथी पाडी नांखीने पाछो वृक्षनी शाखा उपर जइने बेठो. राजाए निराश थइने फरीथी पडीयो मूक्यो. ते भराई गयो. तेने पीवा जाय छे एटले फरीथी पण ते पक्षीए पाडी नाख्यो. त्यारे राजाए क्रोध करीने विचार्युं के–" जो आ दुष्ट पक्षी हवे त्रीजीवार आवशे तो तेने हुं मारी नांखीश." एम धारीने एक हाथमां चाबुक राखीने बीजा हाथे जळ भरवा माटे पडीयो मूक्यो. ते वखते पक्षीए विचार्युं के–" आ राजा कोपायमान थयो छे तेथी हवे जो हुं पडीयो पाडी नांखीश तो जरूर ते मने मारी नांखशे अने जो नहीं पाडुं तो आ झेरी पाणी पीवाथी ते अवश्य मरण पामशे. तेथी मारे मरवुं ते श्रेष्ठ छे पण आ राजा जीवे तो सारुं." एम विचारीने तेणे त्रीजी वार पण राजाना हाथमांथी पडीयो पाडी नांख्यो एटले कोप पामेला राजाए कोरडाना प्रहार वडे तरतज ते पक्षीने मारी नांख्यो. पछी राजाए फरीथी पडीयो मूक्यो. ते वखते उपरथी पडतुं जळ आडुं अवळुं पडवा मांडयुं. एटले राजा आश्चर्य सहित उठीने वृक्षनी शाखा पर चडी जुए छे, तो ते वृक्षना कोटरमां एक अजगरने पडेलो जोयो. तेने जोइने राजाए धार्युं के–" ते जळ नथी, पण आ सुतेला अजगरना मुखमांथी गरल पडे छे. जो में ते पीधुं होत तो अवश्य मारुं मरण थात. अहो ! ए पक्षीए मने वारंवार झेर पीतां अटकाव्यो, पण में मूर्खाए ते जाण्युं नहीं. अरेरे! परमोपकारी पक्षीने में फोगट मारी नांख्यो."

आ प्रमाणे राजा पश्चात्ताप करतो हतो. तेवामां तेनुं सैन्य आवी पहोंच्युं. पछी ते पक्षीने पोताना माणसो पासे उपडावी पोताना नगरमां लावीने चंदनना काष्ठ वडे तेने अग्निसंस्कार कराव्यो, अने तेने जलांजलि आपीने राजा पोताना महेलमां गयो. त्यां शोकातुर थईने बेठो, एटले मंत्री सामंत विगेरेए राजाने पूछ्युं के–"हे नाथ ! आ पक्षीनुं आपे प्रेतकार्य कर्युं तेनुं शुं कारण ?" त्यारे राजाए तेणे करेलो महा उपकार कही बताव्यो अने कह्युं के–" ते पक्षीने जीवनपर्यंत हुं भूली शकीश नहीं." विचार्या विना कार्य करवाथी जेम ते राजाने पश्चात्ताप थयो, तेवी रीते कोई पण प्राणी विचार विना सहसा कार्य करे तो तेने तेवो पश्चाताप थाय.

आ दृष्टांतनो उपनय आ प्रमाणे छे. चार गतिमां भ्रमण करनार जीव ते राजा समान छे. ते अजरामर (मोक्ष) स्थान आपनार पक्षी समान मनुष्य भवने पामीने अविरति विगेरेथी जो मनुष्य भवने वृथा गुमावे छे, तो ते अत्यंत शोकनुं भाजन थाय छे. अथवा पक्षी समान समग्र जीवने उपकार करनार जिन-वाणीने पामीने जे प्राणी मिथ्यात्व रूपी कोरडाथी तेने हणे छे तेने महा मूर्ख जाणवो. कह्युं छे के-

> शिलातलाभे हृदि ते वहंति
> विशंति सिद्धांतरसा न चांतः ।
> यदत्र नो जीवदयार्द्रता ते
> नो भावनांकुरततिश्च लभ्या ॥ १ ॥

भावार्थ-" हे आत्मा ! पथ्थरना तल सरखा कठोर तारा हृदय उपर सिद्धांत रूपी रस वहे छे, तथापि ते अंदर प्रवेश पामतो नथी; केमके तारा हृदयमां जीव दया रूपी आर्द्रता नथी, तेथी शुभ भावना रूपी अंकुरनी श्रेणी तेमां उगतीज नथी. "

जेना हृदयमां जीवदया रूप कोमलता होय छे तेनां हृदयमांज शुभ भावनारूप अंकुरनी श्रेणी उत्पन्न थाय छे. तेवी भावना आसन्नसिद्धि[1] जीवोनेज होय छे, बीजाने होती नथी. वळी सिद्धांतनुं अध्ययन करीने पण जेओ प्रमादने छोडता नथी, तेमनो सर्व अभ्यास व्यर्थ छे. कह्युं छे के-

> अधीतिनोऽर्चादिकृते जिनागमः
> प्रमादिनो दुर्गतिपातिनो मुधा ।
> ज्योतिर्विमूढस्य हि दीपपातिनो
> गुणाय कस्मै शलभस्य चक्षुषी ॥ १ ॥

भावार्थ-"लोकमां पूजावाने माटे जिनागम जाणनार अने दुर्गतिमां पडनार एवा प्रमादी पुरुषने जिनागम व्यर्थ छे, केमके दीवानी जोतमां मोह पामेला अने दीवामां पडनारा एवा पतंगीयाने चक्षु शा गुणने माटे होय ? "

सिद्धांत रूपी चक्षु विरतिवंत पुरुषने परम उपकार करनार थाय छे माटे तेवी इच्छाथी शास्त्र भणवुं जोइए. कह्युं छे के-

1 थोडा काळमां मोक्षजनारा.

किं मोदसे पंडितनाममात्रा-
च्छास्त्रेष्वधीती जनरंजकेषु ।
तत्किंचनाधीष्व कुरुष्व चाशु
न ते भवेद्येन भवाब्धिपातः ॥ १ ॥

भावार्थ-" लोकने रंजन करवा माटे शास्त्रो भणीने पंडितना नाम मात्रे करीने शुं हर्ष पामे छे ? परंतु एवुं कांइक भण अने कर के जेथी तारो संसार रूपी समुद्रमां पात थाय नहीं. "

हवे चार गति रूप संसारनां दुःखनुं वर्णन करे छे.

दुर्गन्धतोऽपि यदणोर्हि पुरस्य मृत्यु-
रायूंषि सागरमितान्यनुपक्रमेण ।
स्पर्शः खरः क्रकचतोऽतितमामितश्च
दुःखावनंतगुणितौ भृशशैत्यतापौ ॥ १ ॥
तीव्रा व्यथाः सुरकृता विविधाश्च यत्रा-
क्रंदारवैः सततमभ्रभृतोऽप्यमुष्मात् ।
किं भाविनो न नरकात् कुमते बिभेषि
यन्मोदसे क्षणसुखैर्विषयैः कषायैः ॥ २ ॥

भावार्थ-" जे नरकना एक परमाणुनी दुर्गंधथी पण समग्र नगरना मनुष्योनुं मृत्यु थाय छे, जे नरकमां सागरोपम प्रमाण निरुपक्रमी[१] आयुष्य छे, जे नरक भूमिनो स्पर्श करवत करतां पण अत्यंत कठोर छे, जेमां टाढ अने ताप संबंधी दुःखो अनंत गुणा छे, वळी जे नरकमां परमाधामी देवताओनी करेली विविध प्रकारनी तीव्र वेदनाओ छे अने जेमां नारकी जीवोना आक्रंदना शब्दोथी आकाश पूर्ण थाय छे. एवा भविष्यमां प्राप्त थनार नरकथी हे मूर्ख! तुं भय पामतो नथी ? के जेथी क्षण मात्र सुखने आपनारा विषय अने कषायोथी हर्ष पामे छे?"

बंधाभिशवाहनताडनानि
क्षुत्तृट् दुरामा तपशीतवातः ।

१ कोई पण कारणथी जे आयुष्य विघटे नहीं तेवुं आयुष्य.

निजान्यजातीयभयापमृत्यु-
दुःखानि तिर्यक्ष्विति दारुणानि ॥ ३ ॥

भावार्थ-" बंधन पामवुं, अहर्निश भार वहन करवो, मार सहन करवा, क्षुधा, तृषा, दुष्ट व्याधिओ, ताप, टाढ अने पवन विगेरे सहन करवा. तेमज स्वजाति थकी तथा परजाति थकी भय, अने अकाळ मृत्यु पामवुं विगेरे तिर्यंच गतिमां पण दारुण दुःखो छे. "

सुधान्यदास्याभिभवा ससुया
भियोंतगर्भस्थिति दुर्गतिनां ।
एवं सुरेष्वप्यसुखानि नित्यं
किं तत्सुखैर्वा परिणामदुःखैः ॥ ४ ॥

भावार्थ—कांई पण उदर पूर्णार्ति के द्रव्य प्राप्ति विगेरे कारण विना फोगट निरंतर इंद्रादिकनी सेवा करवी, वधारे शक्तिवाळा देवताओथी पराभव पामवो, बीजाने वधारे ऋद्धिमान् अने सुखी जोईने ईर्षा आववी, आगामी भवमां गर्भमां स्थिती थवानी जोईने तेमज दुर्गति थवानी जोईने तेथी भय पामवुं—इत्यादिक देवगतिमां पण निरंतरना दुःखो रहेलां छे. तेथी ते सुखोथी शुं के जेमां परिणामे दुःख रहेलुं छे. ? "

सप्तभीत्यभिभवेष्टविप्लवा-
निष्टयोगगदुःसुतादिभिः ।
स्याच्चिरं विरसता नृजन्मनः
पुण्यतः सरसतां तदानय ॥ ५ ॥*

भावार्थ—वळी मनुष्य गतिमां पण सात प्रकारनो भय, अन्यजनो थी पराभव, इष्टनो वियोग, अनिष्टनो संयोग, अनेक प्रकारना व्याधिओ, कुपुत्रादि संतति विगेरेथी थतो उपद्रव—इत्यादि अनेक दुःखो रहेलां छे अने तेथी मनुष्य जन्म पण विरस[१] लागे छे. तो तेने पुण्योपार्जनवडे सरस[२] कर"

आ प्रमाणे चारे गतिमां अनेक प्रकारना दुःखो रहेलां छे.

---

१ कडवो. २ सारारसवाळो. * आ पांचे श्लोको श्री अध्यात्मकल्पद्रुमना आठमा अधिकारमांथी लीधेला छे.

पक्षिसमं नृणां जन्म, गुणाकरं प्रमादतः ।
लब्ध्वा न हिंसनीयं तत्, येन त्वं सद्गतिं भज ॥

भावार्थ–"पक्षि समान गुणना स्थानभूत आ मनुष्य जन्मने पामीने प्रमादवडे तेने हणी नाखवो नहीं अर्थात् वृथा खोई नाखवो नही के हारी जवो नहीं–"ए प्रमाणे नहीं हारी जवाथी अर्थात् तेने सफळ करवाथी तुं सद्गतिनुं भाजन थईश.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य अष्टाविंशत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२८ ॥

व्याख्यान २२९ मुं.

पांच कारणोथी कार्य सिद्ध थाय छे ते विषे.

कालादिपंचभिः कार्यमन्योऽन्यं सव्यपेक्षकैः ।
संपृक्ता यांति सम्यक्त्वमिमे व्यस्ता कुदर्शनम् ॥१॥

भावार्थ—"काळ विगेरे पांच कारणो परस्पर अपेक्षा वाळा थईने कार्य साधे छे. ते पांचने संबंध वाळा मानवाथी सम्यकत्व कहेवाय छे अने जूदा अंगीकार करवाथी मिथ्यात्व कहेवाय छे."

जैन मत प्रमाणे सर्व दृष्ट अथवा अदृष्ट कार्य काळ, स्वभाव, नियति, पूर्वकर्म अने पुरुषार्थ ए पांच कारणो वडे सिद्ध थाय छे. ते पांचे अनेकानेक स्वभाव वाळा होवाथी दरेक कार्य साधवामां समर्थ छे. श्री सिद्धसेन दिवाकर आचार्ये संमति सूत्रना त्रीजा कांडमां कह्युं छे के–

कालो सहाव नियई, पुव्वकयं पुरिसकारणं पंच ।
समवाये सम्मत्तं, एगंते होइ मिच्छत्तम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"काळ, स्वभाव, नियति, पूर्वकर्म अने पुरुषार्थ ए पांचे सम-

वाय वडे कार्य सिद्धि मानवाथी सम्यकत्व होय छे. अने तेमांना कोइपण एक वडे कार्य सिद्धि मानवा रूप एकांत वडे मिथ्यात्व कहेवाय छे."

एकांत पक्ष माननार प्रथम काळवादी कहे छे.

कालः सृजति भूतानि, कालः संहरते प्रजाः ।
कालः सुप्तेषु जागर्ति, कालो हि दुरतिक्रमः ॥ १ ॥

भावार्थ—"काळ सर्व प्राणीने सरजे छे, काळ प्रजानो संहार (नाश) करे छे अने काळ सर्व सुतां होय त्यारे पण जाग्रत होय छे; माटे काळनुं उल्लंघन करवुं अति मुश्केल छे."

प्रथमतो काळे करीने गर्भ उत्पन्न थाय छे, काळे करीने वृद्धि पामे छे अने काळे करीने जन्मे छे. काळे करीने तीर्थंकर थाय छे. जीवो काळ लब्धि पामीने सिद्ध थाय छे. योग्य काळेज आत्माने अनंत आनंद रूप क्षायिक रत्न त्रय विगेरेनी प्राप्ति थाय छे. अने काळज भाव धर्मने उत्पन्न करे छे. एम न होय तो आ वर्तमान काळमां मनुष्य भव तथा जैन शासन विगेरे सामग्री पाम्या छतां पण केम कोई सिद्ध थता नथी ! माटे काळज सर्व आपे छे अने नाश करे छे. काळे करीनेज दांतनुं उगवुं, पगे चालवुं, बोलवुं विगेरे यावत् मृत्यु सुधीना समग्र भावो थाय छे. एज प्रमाणे काळे करीने टाढ, तडको, वृष्टि विगेरे थाय छे. माटे सर्वनुं कारण काळज छे.

हवे स्वभाव वादी कहे छे के– बिचारो काळ शुं करी शके ! स्वभावथीज स्त्री पुरुषना संयोग वडे गर्भनी उत्पत्ति, वृद्धि, जन्म, विगेरे भावो थाय छे. मोरनां पींछानुं चित्र विचित्रपणुं अने कांटामां तिक्ष्ण पणुं कोण करे छे ? तेमज जो काळे करीने समग्र सृष्टि होय, तो मनुष्यनां बाळको अमुक मास पछी चालतां शीखे छे, अने अश्व विगेरेना बाळको जन्म थतांज चाले छे तेनुं शुं कारण ? माटे सर्वनुं कारण स्वभावज छे.

हवे नियति वादी कहे छे के–काळ तथा स्वभाव शुं करे ? नियति अर्थात् भवितव्यताज सर्वनुं कारण छे. केमके काळ अने स्वभाव छतां पण जेने पुत्रादिक थवाना होय तेनेज थाय छे, बीज़ाने थता नथी. वळी कोडीओने हाथ वडे उंचे उछाळीए तो तेमांनी केटलीक चत्ती पडे छे, केटलीक उंधी पडे छे अने केटलीक आडी पडे छे. तेमां काळ अने स्वभावमांथी कोनुं प्रमाण छे. परंतु जे जेवी रीते पडवानी होय छे ते तेवीज रीते पडे छे. माटे भवितव्यताज प्रमाण छे.

जेम कोई शिकारी धनुष उपर बाण चडावीने वृक्ष उपर बेठेला एक पक्षीने मारवा तैयार थयो. तेज पक्षीने हणवा माटे एक सींचाणो ते वृक्ष उपर भमतो हतो. तेवामां पेळा शिकारीए बाण छोड्युं. ते सिंचाणाने लाग्युं एटले ते मरण पाम्यो, अने शिकारी सर्पदंशथी मृत्यु पाम्यो. पेलो पक्षी झाड उपरथी सुखे उडी गयो. आ प्रमाणे नियति विना बनी शके नहीं. माटे नियतिज सर्वनुं कारण छे.

हवे कर्म वादी कहे छे के—काळ, स्वभाव अने नियतिनी शी शक्ति छे? पूर्वे करेलां कर्मज सुख दुःखमां कारण भूत छे. कर्मे करीनेज श्रोत्रिय होय ते चांडाळ थाय छे, स्वामी होय ते सेवक थाय छे अने इंद्र होय ते रंक थाय छे; तेमज चांडाळ श्रोत्रिय थाय छे, सेवक राजा थाय छे, अने रंक होय ते इंद्रपद पामे छे. कह्युं छे के—

यथा यथा पूर्वकृतस्य कर्मणः
फलं निधानस्थमिवोपतिष्ठते ।
तथा तथा पूर्वकृतानुसारिणी
प्रदीपहस्तेव मतिः प्रवर्तते ॥

भावार्थ—"जेम जेम पूर्वे करेलां कर्मनुं फल निधाननी जेम प्राप्त थाय छे, तेम तेम पूर्व कर्मने अनुसरती बुद्धि हाथमां दीवानी जेम प्रवर्ते छे."

पूर्व कर्मना वशथीज प्राणीने नहीं इच्छेला, नहीं जोएला अने नहीं अनुभवेला स्थान प्रत्ये आकर्षण करीने लई जवामां आवे छे. जेम कोई उंदरे एक करंडीयो जोयो, तेमां सारूं खावानुं हशे एम धारीने दांत वडे ते करंडीयामां विवर करीने ते अंदर पेठो. एटले तेमां रहेलो भुख्यो सर्प ते उंदरने गळी गयो अने तेज विवरमां थईने ते बहार नीकळी वनमां गयो. माटे कर्मज खरूं कारण छे.

हवे पुरुषार्थ वादी कहे छे के— शठ एवा कर्म वडे शुं ? पुरुषार्थज सर्व कार्यनुं (फळनुं) कारण छे. जो कदाच कर्मथीज सर्वनी सिद्धि होय, तो सर्व प्राणीओ बेसी रहो. कर्म वडे पोतानी मेळे सर्व वांछितनी सिद्धि थशे. कह्युं छे के—

न दैवमिति संचिंत्य, त्यजेदुद्यममात्मनः ।
अनुद्यमेन कस्तैलं, तिलेभ्यः प्राप्तुमिच्छति ॥ १ ॥

भावार्थ—"दैव (प्रारब्ध) ना पर आधार राखीने माणसोए पोतानो उद्यम छोडवो नहीं. केमके उद्यम विना तलमांथी तेल मेळववा कोण इच्छा करे ?"

अहीं कोइ शंका करे के—"राजा विगेरे बेसी रहे छे छतां तेनां कर्म करीने सेवको सर्व वांछित लावीने आपे छे." तेना जवाबमां एटलुंज कहेवानुं के—"जो एम छे तो सेवकोए आणेलुं अन्नादि हाथनो उपयोग कर्या विना शी रीते मुखमां जशे ? कदाच तेना सेवको तेना मुखमां नांखशे, तो पण दांत वडे चाव्या शिवाय शी रीते गळे उतरशे ? माटे कर्मनुं तो उद्योगथी उत्पन्न थवापणुं छे. तेथी कर्म पुत्र तुल्य छे, अने उद्योग पिता समान छे. वळी मोक्षप्राप्तिने समये क्षपक श्रेणि पर आरूढ थइने शुभ ध्यान वडे सर्व कर्मनो क्षय करवाथी ज जीवसिद्धि पदने पामे छे, माटे उद्योगज बळवान छे."

हवे ते सर्व एकांतवादीने जवाब आपवामां आवे छे—प्रथम काळवादी छे. ते सर्व काळथी करेलुं माने छे, ते अयोग्य छे. केमके समयादिक वडे परिणाम पामतो काळ समान छतां पण फळनुं विचित्रपणुं देखाय छे. जेमके एकज वखते वावेला मगमां परिणामे कोइ छोड मोटो नानो थाय छे. तेमज तेनी शींगो पण नानी मोटी थाय छे, अने कोइ उगे छे ने कोइ उगतो पण नथी. वळी कोइ बे पुरुषे सम काळे राजानी सेवा करवा मांडी, होय तेमां एक सेवकने तेनुं फळ टुंका वखतमां मळे छे, अने बीजाने काळांतरे पण मळतुं नथी. तथा एकी वखते खेती विगेरे कार्य करवा मांडनारमां एकने संपूर्ण धान्य पाके छे, अने बीजाने कांइ पण पाक थतो नथी. तेथी जो मात्र काळज सर्वनुं कारण होय, तो पूर्वे बतावेला सर्वने फळ समानज थवुं जोइए. पण तेम तो थतुं नथी. माटे आ विश्वनी विचित्रतामां केवळ काळ कारण नथी परंतु काळ विगेरे पांचे कारणनुं सापेक्षपणुं छे. काळादिक पांचमांथी एक एकनेज कारण रूप माननारा मिथ्यादृष्टि जाणवा. केमके तेओ पांचे कारणोने परस्पर निरपेक्ष मानता होवाथी सर्व कार्यनी सिद्धिनो तेमने अभाव छे. पांचे कारणो परस्पर मळवाथी पोतपोताना स्वरूपनो त्याग कर्या विना कार्यसिद्धि करी आपे छे. एम मानवाथी प्राणी सम्यक्त्व रूपने पामे छे. ते कारणमांना एकथी कोइ कार्य थतुं नथी. पण तेमनी गौणता मुख्यता करवाथी कार्य उत्पन्न थाय छे. ते विषे भगवती सूत्रनी वृत्तिना पहेला शतकना प्रथम उद्देशामां कह्युं छे के—"भविष्य काळमां वेदवा लायक कर्मनो क्षय करवा माटे करण विशेषे करीने तेने खेंचीने उदयावळीमां प्रवेश करे ते उदीरणा कहेवाय छे. ते उदीरणादिकमां काळ, स्वभाव विगेरे पांचे कारण-

भूत छे. तो पण मुख्यताए करीने पुरुषार्थनुंज कारणपणुं बतावता सता कहे छे के—

"जं तं भंते अप्पणा चेव उदीरिते"

हे भगवान् ! ते कर्मनी उदीरणा आत्मा पोतेज करे छे ? इत्यादि.

आ काळादिक एक एक कोइ वखत कार्यनी अपेक्षाए कारणभूत थाय छे. ते विषे बीजा श्रुतस्कंधमां "नत्थिधम्मेअधम्मेअ" इत्यादि० अर्थात् श्रुत चारित्रात्मक एवो जे आत्मानो परिणाम ते कर्मक्षयनुं कारण होवाथी धर्म अने मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय अने योग रूप जे आत्माना परिणाम ते कर्मबंधनां कारण होवाथी अधर्म कहेवाय छे. आवा प्रकारना धर्म अने अधर्म काळवादी, ईश्वरवादी, विगेरेना मतमां नथी. परंतु धर्म अधर्मविना एकांतपणे काळ विगेरेज सर्व जगतनी विचित्रतानुं कारण छे एम कदी पण धारवुं नहीं; केमके धर्म अने अधर्म विना संसारनी विचित्रता घटती नथी. धर्म ए सम्यक् दर्शन छे, अने अधर्म ए मिथ्या दर्शन छे. सम्यक् दृष्टिए ते पांचे कारण रूपे जाणेला छे. केमके तेज रीते सृष्टिनी सिद्धि तेणे जोइछे. जेमके मातापिताना उद्यमथी रुधीरने वीर्यनो संबंध थाय छे, कर्मे करीने तेमां जीव अवतरे छे, ते जीवना सत् असत् कर्मने अनुसारे सुख दुःखना हेतु रूप ते ते वस्तुनो संबंध प्रतिक्षणे नियति वडे थाय छे, स्वभावे करीने ते जीवमां पशु, पक्षी, मनुष्य, स्त्री, पुरुष विगेरेना स्वभावो उत्पन्न थाय छे; अने पछी काळे करीने जन्म अने बाल्यावस्था, युवावस्था विगेरे भावो प्राप्त थाय छे. ए प्रमाणे सर्व पदार्थोमां यथायोग्य जाणी लेवुं.

जेम पांच माणसो मळीने उपडी शके तेवो भार एक माणस ओछो करीए तो उपडशे नहीं, अने पांचे एकत्र थशे तो ज उपडशे. तेम अहीं पण काळादिकमांथी एकने मानीए नहीं, तो संसारनी कार्यसिद्धि थशे नहीं.

अहीं कोइ प्रश्न करे छे केः—" परस्पर अपेक्षा रहित काळादिकमांथी प्रत्येकने माननारा मिथ्यात्वी अने समुदायने माननारा समकिती कह्या, ते घटशे नहीं. केमके जेम सिकता (रेती) ना दरेक अवयवमां तेल नथी तो तेना समुदायमां पण नथी. तेवीज रीते काळादिक प्रत्येकने माननारमां सम्यक्त्व नथी तो पछी तेना समुदायने माननारमां पण ते आवशे नहीं. " आ प्रश्ननो जवाब ए छे के—"पद्मरागादिक मणिओ छूटा होय तो ते प्रत्येकने हार कही शकातो नथी. परंतु तेज मणिओने एकत्र करीए तो तेनो

हार बने छे, माटे वादीनी शंकानो अवकाश नथी. ते विषे कह्युं छे के-

ण हि कालादिहिंतो केवलएगेहिंतु जायए किंचि ।
इह मुग्गरंधणादिव, ता सव्वे समुदिता हेउं ॥ १ ॥
जह णेगलरकणगुणा वेरुलियादिमणि विसंजुत्ता ।
रयणावलिववएसं न लहंति महग्घमूलावि ॥ २ ॥

भावार्थ-"कालादिकमांथी केवळ कोइ एक हेतु कांइ पण कार्य सिद्ध करी शकतो नथी, केमके मग रांधती वखते एक काष्ठथी मग रंधाता नथी, पण काष्ठना समुदायनो सरखो ताप लागवाथी रंधाय छे, तेम ते पांचे कारणोनो समुदायज कार्य साधवामां हेतु छे." "जेम अनेक गुणलक्षण वाळा अने अमूल्य, पण वैडूर्य आदिक मणिओ जूदा होय, तो ते रत्नावळी (हार) ना व्यपदेशने पामता नथी. तेम काळादिक ऐकेकने माननारा समकितीना व्यपदेशने पामी शकता नथी."

वळी काळलब्धि पाम्या शिवाय मोक्षप्राप्ति थती नथी. तेथी जे काळे जे कार्य थवानुं होय छे, ते कार्य तेज काळे थाय छे. अहीं शिष्य प्रश्न करे छे के "अभव्य प्राणी अनेक जीव सिद्धि गयाना काळने पाम्यो छे तो पण ते केम सिद्धि पामतो नथी ?"

गुरु कहे छे--" अभव्य प्राणीनो सिद्धि जवा योग्य स्वभाव कोइ काळे पण थतो नथी. केमके तेने पहेलुं मिथ्यात्व गुणस्थानक अनादि अनंत भांगे छे."

शिष्य—त्यारे मुक्ति पामवाना स्वभाववाळा सर्व भव्य जीवो एकज काळे केम सिद्धि पामता नथी ?

गुरु—निश्चये करीने सम्यक्त्वादि गुण जाग्रत थाय त्यारे मोक्ष मळे छे. माटे नियति होवी जोइए.

शिष्य—हे पूज्य ! सम्यक्त्वादि गुणश्रेणी उत्पन्न थयां छतां श्रेणिक राजानी केम मुक्ति थइ नहीं ?

गुरु—पूर्वना कर्मनो क्षय थयो नहोतो तेमज पुरुषार्थनो-पंडितवीर्यनो उल्लास थयो नहोतो, तेथी सम्यक्त्व छतां मुक्ति पाम्या नहीं.

शिष्य—हे गुरु! शालिभद्रे मोक्षने माटे घणो उद्यम कर्यो हतो, छतां ते केम मोक्षे गया नहीं?

गुरु—पूर्वनां शुभ कर्म अवशेष रह्यां हतां, तेथी शी रीते मुक्ति मळे?

शिष्य—हे भगवन्! मरुदेवा माताने चार कारणो मळ्यां हतां, पण तेणे मोक्षने माटे पुरुषार्थ कांइ पण कर्यो नहोतो, छतां ते केम मोक्षे गया?

गुरु—मरुदेवा माताए शुक्ल ध्यान वडे क्षपक श्रेणीपर आरूढ थइने अनंत वीर्य (पुरुषार्थ)नो उल्लास कर्यो हतो, तेथी ते सिद्धिने पाम्या छे.

आ प्रमाणे होवाथी स्याद्वाद मते काळ, स्वभाव विगेरे पांचे हेतु मळीने ज सर्व कार्य सिद्ध थाय छे. जेओ ते पांचेना समुदायने मानता नथी तेओने जैन धर्मना लोपनार समजवा.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य एकोनत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२९॥

व्याख्यान २३० मुं.

भावी भाव.

भवितव्यविपर्यासं, मत्तोऽसौ दशकंधरः ।
कर्तुं समर्थो नैवाभूत्, स श्रीपूज्यैः प्रबोधितः॥ १ ॥

भावार्थ—" मदोन्मत्त एवो रावण पण भवितव्यताने अन्यथा करवा समर्थ थयो नहीं. तेने पूज्य एवा मुनि महाराजे बोध पमाड्यो. "

त्रिकुटाचळनी उपर वसावेली लंका नगरीमां रावण नामे राजा राज्य करतो हतो. शैवशास्त्रमां कह्युं छे के तेने दश माथां अने वीश हाथ हतां; तेणे इंद्रने जीत्यो हतो, दश लोकपाळने तेणे कोटवाळ कर्या हता, तेने त्यां वायु वासीदुं

वाळतो हतो, मेघ तेना घरनुं पाणी भरतो हतो, नव दुर्गा देवीओ तेनी आरती उतारती हती, खर नामनो दैत्य घंटा वगाडतो हतो, नव ग्रहो शय्यानुं रक्षण करता हता, कुबेर धान्यनां बीज वावतो हतो, वरुण तेने पाणी सींचतो हतो, यमराज खेतर खेडतो हतो, सुती वखते ते प्रतिवासुदेव रावणनुं वक्षस्थळ दशमस्तकना जेमां प्रतिबिंब पडी रह्यां छे एवा हारथी शोभतुं हतुं, ते राक्षसी विद्याथी अत्यंत बळवान हतो, जतगने तृण समान मानतो हतो, अने 'हुं अजर अमर छुं' एवा गर्व वडे गर्विष्ठ थयेलो हतो."

एकदा एक नैमित्तिक [जोशी] त्यां आव्यो. ते विद्वद् गोष्ठी करतां प्रसंगोपात बोल्यो के–"सर्व प्राणीओने अवश्य मरण होय छे, केमके मरवुं ते तेनी प्रकृतिज छे, अने जीववुं ते विकृति छे." त्यारे रावण बोल्यो के–"यम तो मारो सेवक छे, माटे मारुं मरण तो नथी." नैमित्तिके कह्युं के–"दशरथराजाना पुत्र लक्ष्मणना हाथथी तमारुं अवश्य मरण थशे." ते सांभळीने रावणे मंत्री सामुं जोयुं, एटले मंत्रीओ बोल्या के–"भावी मिथ्या थतुं नथी एम लोकमां कहेवाय छे." त्यारे रावण गर्व सहित बोल्यो के–"अरे! बिचारी कागडी जेवी रांकडी भवितव्यता कोण छे? उत्तम पुरुषोने तो पुरुषार्थ ज प्रमाण छे." ते सांभळीने नैमित्तिक बोल्यो के–"हे राजन्! एम बोलशो नहीं. सांभळो! चन्द्रस्थलना राजानी पुत्री रत्नस्थलना राजाना पुत्र साथे आजथी सातमे दिवसे परणशे, ते भावी भावने मिथ्या करवानी जो तमारी शक्ति होय, तो तमारा मरण विषेनी भवितव्यता पण मिथ्या थाय." रावणे कह्युं के–'तेनुं विशेष स्वरूप कहो.' त्यारे नैमित्तिक बोल्यो के–"रत्नस्थळ नामना नगरमां रत्नसेन नामे राजा छे. तेने बहोंतेर कळामां कुशळ, सर्वोत्तम रूप अने लावण्य वडे इन्द्र समान रत्नदत्त नामनो पुत्र छे. एकदा राजाए पुत्रने योग्य राजकन्या शोधवा माटे कुमारनी छबी वस्त्र उपर चित्रावीने ते छबी तथा कुमारनी लग्नपत्रिका आपी चार चार मंत्रीने चारे दिशामां मोकल्या. तेमांना पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशामां गयेला बार मंत्रीओ तो निराश थइने पाछा आव्या; अने जे मंत्रीओ उत्तर दिशामां गया हता, तेओ फरतां फरतां गंगाने कांठे चन्द्रस्थळ नामना नगरमां आव्या. त्यां चन्द्रसेन नामे राजा छे. तेने चोसठ कळामां प्रवीण अने दिव्य स्वरूपवान् चन्द्रावती नामनी कन्या छे. ते कन्याने जोइने मंत्रीओए राजाने कुमारनुं स्वरूप बताव्युं अने जन्मपत्रिका आपी. ते कन्यानी लग्नपत्रिका साथे मेळवतां आठ वसा प्रीति मळी, एटले राजाए पोतानी पुत्रीने बोलावी, अने बन्नेनी योग्यता जाणीने विवाह कर्यो. पछी जोशी लोकोने बोलावीने लग्ननुं मुहूर्त पूछ्युं.तेओए विचारीने

शिष्य—हे गुरु! शालिभद्रे मोक्षने माटे घणो उद्यम कर्यो हतो, छतां ते केम मोक्षे गया नहीं?

गुरु—पूर्वनां शुभ कर्म अवशेष रह्यां हतां, तेथी शी रीते मुक्ति मळे?

शिष्य—हे भगवन्! मरुदेवा माताने चार कारणो मळ्यां हतां, पण तेणे मोक्षने माटे पुरुषार्थ कांइ पण कर्यो नहोतो, छतां ते केम मोक्षे गया?

गुरु—मरुदेवा माताए शुक्ल ध्यान वडे क्षपक श्रेणीपर आरूढ थइने अनंत वीर्य (पुरुषार्थ)नो उल्लास कर्यो हतो, तेथी ते सिद्धिने पाम्या छे.

आ प्रमाणे होवाथी स्याद्वाद मते काळ, स्वभाव विगेरे पांचे हेतु मळीने ज सर्व कार्य सिद्ध थाय छे. जेओ ते पांचेना समुदायने मानता नथी तेओने जैन धर्मना लोपनार समजवा.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य एकोनत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २२९॥

व्याख्यान २३० मुं.

भावी भाव.

भवितव्यविपर्यासं, मत्तोऽसौ दशकंधरः।
कर्तुं समर्थो नैवाभूत्, स श्रीपूज्यैः प्रबोधितः॥ १॥

भावार्थ—"मदोन्मत्त एवो रावण पण भवितव्यताने अन्यथा करवा समर्थ थयो नहीं. तेने पूज्य एवा मुनि महाराजे बोध पमाड्यो."

त्रिकुटाचळनी उपर वसावेली लंका नगरीमां रावण नामे राजा राज्य करतो हतो. शैवशास्त्रमां कह्युं छे के तेने दश माथां अने वीश हाथ हतां; तेणे इंद्रने जीत्यो हतो, दश लोकपाळने तेणे कोटवाळ कर्या हता, तेने त्यां वायु वासीदुं

वाळतो हतो, मेघ तेना घरनुं पाणी भरतो हतो, नव दुर्गा देवीओ तेनी आरती उतारती हती, खर नामनो दैत्य घंटा वगाडतो हतो, नव ग्रहो शय्यानुं रक्षण करता हता, कुबेर धान्यनां बीज वावतो हतो, वरुण तेने पाणी सींचतो हतो, यमराज खेतर खेडतो हतो, सुती वखते ते प्रतिवासुदेव रावणनुं वक्षस्थळ दशमस्तकना जेमां प्रतिबिंब पडी रह्यां छे एवा हारथी शोभतुं हतुं, ते राक्षसी विद्याथी अत्यंत बळवान हतो, जतगने तृण समान मानतो हतो, अने 'हुं अजर अमर छुं' एवा गर्व वडे गर्विष्ठ थयेलो हतो."

एकदा एक नैमित्तिक [जोशी] त्यां आव्यो. ते विद्वद् गोष्टी करतां प्रसंगोपात बोल्यो के–"सर्व प्राणीओने अवश्य मरण होय छे, केमके मरवुं ते तेनी प्रकृतिज छे, अने जीववुं ते विकृति छे." त्यारे रावण बोल्यो के–"यम तो मारो सेवक छे, माटे मारुं मरण तो नथी." नैमित्तिके कह्युं के–"दशरथराजाना पुत्र लक्ष्मणना हाथथी तमारुं अवश्य मरण थशे." ते सांभळीने रावणे मंत्री सामुं जोयुं, एटले मंत्रीओ बोल्या के–"भावी मिथ्या थतुं नथी एम लोकमां कहेवाय छे." त्यारे रावण गर्व सहित बोल्यो के–"अरे! बिचारी कागडी जेवी रांकडी भवितव्यता कोण छे? उत्तम पुरुषोने तो पुरुषार्थ ज प्रमाण छे." ते सांभळीने नैमित्तिक बोल्यो के–"हे राजन्! एम बोलशो नहीं. सांभळो! चन्द्रस्थलना राजानी पुत्री रत्नस्थलना राजाना पुत्र साथे आजथी सातमे दिवसे परणशे, ते भावी भावने मिथ्या करवानी जो तमारी शक्ति होय, तो तमारा मरण विषेनी भवितव्यता पण मिथ्या थाय." रावणे कह्युं के–'तेनुं विशेष स्वरूप कहो.' त्यारे नैमित्तिक बोल्यो के–"रत्नस्थळ नामना नगरमां रत्नसेन नामे राजा छे. तेने बहोंतेर कळामां कुशळ, सर्वोत्तम रुप अने लावण्य वडे इन्द्र समान रत्नदत्त नामनो पुत्र छे. एकदा राजाए पुत्रने योग्य राजकन्या शोधवा माटे कुमारनी छबी वस्त्र उपर चित्रावीने ते छबी तथा कुमारनी लग्नपत्रिका आपी चार चार मंत्रीने चारे दिशामां मोकल्या. तेमांना पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिण दिशामां गयेला बार मंत्रीओ तो निराश थइने पाछा आव्या; अने जे मंत्रीओ उत्तर दिशामां गया हता, तेओ फरतां फरतां गंगाने कांठे चन्द्रस्थळ नामना नगरमां आव्या. त्यां चन्द्रसेन नामे राजा छे. तेने चोसठ कळामां प्रवीण अने दिव्य स्वरूपवान् चन्द्रावती नामनी कन्या छे. ते कन्याने जोइने मंत्रीओए राजाने कुमारनुं स्वरूप बताव्युं अने जन्मपत्रिका आपी. ते कन्यानी लग्नपत्रिका साथे मेळवतां आठ वसा प्रीति मळी, एटले राजाए पोतानी पुत्रीने बोलावी, अने बन्नेनी योग्यता जाणीने विवाह कर्यो. पछी जोशी लोकोने बोलावीने लग्ननुं मुहूर्त पूछ्युं.तेओए विचारीने

कह्युं के-"हे स्वामी! अमे बार वर्षनां मुहूर्त जोयां, पण आजथी बारमे दिवसे जेवुं शुभ मुहूर्त आवे छे, तेवुं बीजुं एके आवतुं नथी." ते सांभळीने राजाए कह्युं के-"वर अति दूर छे अने मुहूर्त पासे आव्युं, तेनो शो उपाय?" त्यारे आवेला मंत्रीओ बोल्या के-"वायुवेगी राता वर्णनी सांढ आपो, तो ते साधनथी कुमारने शीघ्रताथी अहीं लावीए" राजाए ते प्रमाणे अंगीकार कर्युं. अने वायुवेग वाळी सांढो आपीने ते मंत्रीओने मोकल्या. तेओ पांच दिवसे पोताने नगरे पहोंच्या. रत्नसेन राजाए कन्यानुं चित्र जोयुं, तेथी बहु हर्ष पामीने कुमारने मंत्रीओ साथे मोकलवा तैयार कर्यो. तेओ हाल सांढनी उपर बेसीने प्रयाण करवानी तैयारीमां छे, माटे हे रावण राजा! जो भावी भाव मिथ्या करवानी तमारामां शक्ति होय तो ते अजमावी जुओ."

रावणे तत्काळ तक्षक नागने बोलावीने आज्ञा आपी के-"हे नाग! अहींथी एकदम जइ रत्नदत्त कुमारने एवो दंश कर के ते तुरत मरण पामे." एवी आज्ञा थतांज तक्षकनाग तरतज त्यां गयो, अने कुमारनो एक पग सांढना पेगडामां अने बीजो भूमिपर छे तेज अवसरे ते तेने करड्यो, एटले कुमार पृथ्वीपर पडी गयो. राजकन्याने पण पोताना बे राक्षससेवको पासे मंगावीने रावणे नैमित्तिकने बतावी. नैमित्तिके ते कन्याने ओळखी. पछी रावणे [1]तिमंगळीना स्वरूपवाळी एक राक्षसीने बोलावी, अने एक पेटीमां सात दिवस चाले तेटलां अन्न पान सहित कुमारीने बेसारी. पछी ते पेटीने बंध करीने तिमंगला राक्षसीना मुखमां आपी. तेने विसर्जन करतां कह्युं के-"सात दिवस सुधी अपार समुद्रमां जइ आ पेटी सहित उंचुं मुख राखीने रहेजे, अने ज्यारे हुं बोलावुं त्यारेज अहीं आवजे." एम कहीने तेने रवाने करी. पछी रावणे नैमित्तिकने कह्युं के-"भवितव्यताने हुं केवी मिथ्या करुं छुं ते तमे जुओ." निमित्तिओ मौन रह्यो.

अहीं रत्नदत्त कुमार मूर्छा पाम्यो, एटले रत्नसेन राजाए घणा मंत्रवादीओने बोलाव्या. तेओ गारुडी मंत्र विगेरेथी विष उतारवा लाग्या, पण कोइ प्रकारे कुमार जाग्रत थयो नहीं. एटले राजाए नगरमां घोषणा करावी, त्यारे एक वृद्ध पुरुषे आवीने कह्युं के—"हे राजा! विषनी मूर्छा छ मास सुधी रहे छे. माटे तेने जळमां वहन करो, पण अग्निसंस्कार करशो नहीं." आ प्रमाणे सांभळीने राजाए ते कुमारना शरीरप्रमाण पेटी करावीने तेमा कुमारने सुवार्यो, अने ते पेटी गंगाना प्रवाहमां वहेती मूकी. जळप्रवाहमां भमती भमती ते पेटी

---

[1] समुद्रमां मोटा मत्स्य होय छे तेमांनी एकजाति 'तिमंगळ' कहेवायछे.

समुद्र पासे पहोंची. त्यां खारा पाणीना प्रभावथी कुमारनी विषजन्य मूर्छा कांइक ओछी थइ. सातमे दिवसे तिमंगला राक्षसी पेटी लइने गंगा अने समुद्रना संगमस्थाने आवी. त्यां कांठा पर पेटीने मूकीने ते जळक्रीडा करवा लागी. पछी रत्नवती पेटीनुं द्वार उघाडीने क्षणवार क्रीडा करवा माटे बहार नीकळी. तेवामां तेणे पवनथी हालती एक पेटीने तेनी पासे आवती जोइ. एटले तेने नजीक खेंची लइने पोताने हाथे उघाडी, तो तेमां कोइ राजकुमारने विषमूर्छित स्थितिमां जोइ पोतानी पासेनी विषहरण मुद्रिकानुं जळ तेना पर छांट्युं. तेनाथी कुमार सचेतन थयो, एटले चित्रमां कुमारनुं स्वरूप जोयुं हतुं तेनी समानताथी तेणीए कुमारने ओळख्यो के "मने पिताए जेने आपी हती तेज आ रत्नदत्त कुमार छे." एम जाणीने तेणे हर्षथी कुमारने तेनुं वृत्तांत पूछ्युं. कुमारे पण तेनुं चित्र जोयुं हतुं, तेथी कुमारीने ओळखी. पछी 'आजे अने आ समये ज आपणा लग्ननुं मुहूर्त निर्धार्युं हतुं' एम जाणीने तेमणे त्यां गांधर्व लग्न कर्या. वननां वृक्षो परथी फळो लीधां अने खाधां. ते वखते कांठे रहेलां पक्षीओ गीतगान करी रह्यां हतां. कुमारे आभरणने माटे त्यांथी विविध प्रकारनां रत्नो ग्रहण कर्यां. पछी बन्नेना वस्त्रना छेडा (छेडा छेडी) बांधीने तेओ कुमारीवाळी पेटीमां पेठा, अने पेटीनुं द्वार बंध कर्युं. क्षणांतरे तिमंगला राक्षसी क्रीडा करीने आवी, अने प्रथमनी पेठेज मुखमां पेटी राखीने अगाध जळमां गइ. पछी आठमो दिवस थयो. एटले रावणे नैमित्तिकने कह्युं के-"में अवश्य थवानुं पाणिग्रहण मिथ्या कर्युं." त्यारे नैमित्तिक बोल्यो के-"हे राजा ! ते बन्नेनां लग्न थइ गयां." ते सांभळीने राजाए ते राक्षसीने बोलावीने पूछ्युं के-"तारा मुखमां धारण करेली पेटी छे के नहीं ?" राक्षसीए कह्युं के—"तेनी तेज स्थितिमां छे." पछी रावणे पेटी मंगावीने उघडावी, तो तेमांथी नवी परणेली कन्या पोताना पतिने आगळ करीने छेडाछेडी सहित बहार नीकळी. ते जोइने सर्व लोक आश्चर्य पाम्या. पछी "तेमनो विवाह शी रीते थयो ?" एवुं राजाए नैमित्तिकने पूछ्युं, एटले तेणे सर्व वृत्तांत कह्यो. ते सांभळीने रावणे "भावीनो नाश थतो नथी" एम निश्चय करीने पोतानुं मरण अंगीकार कर्युं. पछी कुमार तथा कुमारीनो सत्कार करीने रावणे रजा आपी, एटले तेओ पोताने स्थानके गया.

एक दिवस रावणे मुनिचंद्र नामना आचार्यने वांदीने पूछ्युं के-"हे भगवन् ! कोइ पण नियतिने व्यर्थ करवामां समर्थ सांभळ्यो के जोयो छे ?" गुरुए कह्युं के-"हे राजा ! ए एकवादीनो मत छे. तेओ कहे छे के-

प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयेण योऽर्थः
सोऽवश्यं भवति नृणां शुभोऽशुभो वा ।
भूतानां महति कृतेऽपि हि प्रयत्ने
नाभाव्यं भवति न भाविनोऽस्ति नाशः ॥ १ ॥

भावार्थ—"नियतिना सामर्थ्यथी मनुष्यने जे शुभ अथवा अशुभ प्राप्त थवानुं होय छे ते अवश्य थाय छे. प्राणीओ गमे तेटलो प्रयत्न करे, तो पण जे कार्य थवानुं नथी ते थतुंज नथी; अने जे थवानुं छे तेनो नाश थतो नथी."

आ प्रमाणे नियतिनो आश्रय करीने तेओ काळादिक कारणने तजी दइने बोले छे. पण ते प्रमाणभूत नथी. केमके कर्म विगेरे पण पोतपोतानां कार्य उत्पन्न करवामां मुख्य कारण छे. कह्युं छे के—

कर्मणो हि प्रधानत्वं, किं कुर्वन्ति शुभा ग्रहाः ।
वसिष्ठदत्तलग्नोऽपि, रामः प्रव्राजितो वने ॥ १ ॥

भावार्थ—"कर्मनुं ज प्राधान्य छे. तेमां शुभ ग्रहो पण शुं करी शके छे? केमके वसिष्ठे आपेला राज्यस्थापनना मुहूर्त्ते पण रामने वनवासमां जवुं पडयुं हतुं." वळी—

नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं
विद्यापि नैव न च जन्मकृतापि सेवा ।
कर्माणि पूर्वतपसा किल संचितानि
काले फलन्ति पुरुषस्य यथेह वृक्षाः ॥ २ ॥

भावार्थ—"पुरुषने तेनी आकृति कांइ पण फळ आपती नथी, सारुं कुळ कांइ फळ आपतुं नथी, शील कांइ फळ आपतुं नथी, विद्या कांइ फळ आपती नथी. तेमज जन्म पर्यंत करेली सेवा पण कांइ फळ आपती नथी. परंतु पूर्व जन्ममां करेली तपस्या वडे संचय करेलां कर्मोज काळे करीने वृक्षनी जेम फळ आपे छे."

वैद्या वदन्ति कफपित्तमरुद्विकारं
नैमित्तिका ग्रहकृतं प्रवदन्ति दोषम् ।
भूतोपसर्गमथ मंत्रविदो वदंति
कर्मैव शुद्धमतयो यतयो गृणन्ति ॥ ३ ॥

भावार्थ—"वैद लोको वात, पित्त अने कफनो विकार कहे छे, जोशी लोको ग्रहोए करेलो दोष कहे छे, अने मंत्र जाणनाराओ भूत प्रेत विगेरेनो उपद्रव कहे छे; परंतु शुद्ध मतिवाळा यतिओ तो कर्मनोज दोष कहे छे."

केटलाक तो नीचे जणावेलां नामो कर्मना पर्याय रूपे कहे छे.

विधिर्विधाता नियतिः स्वभावः
कालो ग्रहाश्चेश्वरकर्मदैवः ।
भाग्यानि पुण्यानि यमः कृतांतः
पर्यायनामानि पुराकृतस्य ॥ ४ ॥

भावार्थ—"विधि, विधाता, नियति, स्वभाव, काळ, ग्रहो, ईश्वर, कर्म, दैव, भाग्य, पुण्य, यम अने कृतांत, ए सर्वे पूर्वे करेलां कर्मनां पर्याय नामो छे."

यथा धेनुसहस्रेषु, वत्सो विंदति मातरम् ।
एवं पूर्वकृतं कर्म, कर्तारमनुधावति ॥ ५ ॥

भावार्थ—" जेम वाछरडुं हजारो गायोमांथी पोतानी माताने ओळखीने तेनी पाछळ जाय छे, तेम पूर्वे करेलुं कर्म तेना कर्तानी पाछळ जाय छे."

यथा छायातपौ नित्यं, सुसंबद्धौ परस्परम् ।
एवं कर्म च कर्ता च, संश्लिष्टावितरेतरम् ॥ ६ ॥

भावार्थ—"जेम छाया अने आतप हमेशां परस्पर संबंधवाळा छे, तेम कर्म अने तेनो कर्ता पण परस्पर मळेला छे."

हवे उद्यम विषे कहे छे.

प्राप्तव्यो नियतिबलाश्रयेण योऽर्थः
सोऽवश्यं भवति नृणां शुभोऽशुभो वा ।
भूतानां महति कृतेऽपि हि प्रयत्ने
नाभाव्यं भवति न भाविनोऽस्ति नाशः ॥ १ ॥

भावार्थ—"नियतिना सामर्थ्यथी मनुष्यने जे शुभ अथवा अशुभ प्राप्त थवानुं होय छे ते अवश्य थाय छे. प्राणीओ गमे तेटलो प्रयत्न करे, तो पण जे कार्य थवानुं नथी ते थतुंज नथी; अने जे थवानुं छे तेनो नाश थतो नथी."

आ प्रमाणे नियतिनो आश्रय करीने तेओ काळादिक कारणने तजी दइने बोले छे. पण ते प्रमाणभूत नथी. केमके कर्म विगेरे पण पोत-पोतानां कार्य उत्पन्न करवामां मुख्य कारण छे. कह्युं छे के—

कर्मणो हि प्रधानत्वं, किं कुर्वन्ति शुभा ग्रहाः ।
वसिष्ठदत्तलग्नोऽपि, रामः प्रव्रजितो वने ॥ १ ॥

भावार्थ—"कर्मनुं ज प्राधान्य छे. तेमां शुभ ग्रहो पण शुं करी शके छे? केमके वसिष्ठे आपेला राज्यस्थापनना मुहूर्त्ते पण रामने वनवासमां जवुं पड्युं हतुं." वळी—

नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं
विद्यापि नैव न च जन्मकृतापि सेवा ।
कर्माणि पूर्वतपसा किल संचितानि
काले फलन्ति पुरुषस्य यथेह वृक्षाः ॥ २ ॥

भावार्थ—"पुरुषने तेनी आकृति कांइ पण फळ आपती नथी, सारुं कुळ कांइ फळ आपतुं नथी, शील कांइ फळ आपतुं नथी, विद्या कांइ फळ आपती नथी. तेमज जन्म पर्यंत करेली सेवा पण कांइ फळ आपती नथी. परंतु पूर्व जन्ममां करेली तपस्या वडे संचय करेलां कर्मोज काळे करीने वृक्षनी जेम फळ आपे छे."

वैद्या वदन्ति कफपित्तमरुद्विकारं
नैमित्तिका ग्रहकृतं प्रवदन्ति दोषम् ।
भूतोपसर्गमथ मंत्रविदो वदंति
कर्मैव शुद्धमतयो यतयो गृणन्ति ॥ ३ ॥

भावार्थ--"वैद लोको वात, पित्त अने कफनो विकार कहे छे, जोशी लोको ग्रहोए करेलो दोष कहे छे, अने मंत्र जाणनाराओ भूत प्रेत विगेरेनो उपद्रव कहे छे; परंतु शुद्ध मतिवाळा यतिओ तो कर्मनोज दोष कहे छे."

केटलाक तो नीचे जणावेलां नामो कर्मना पर्याय रूपे कहे छे.

विधिर्विधाता नियतिः स्वभावः
कालो ग्रहाश्चेश्वरकर्मदैवः ।
भाग्यानि पुण्यानि यमः कृतांतः
पर्यायनामानि पुराकृतस्य ॥ ४ ॥

भावार्थ--"विधि, विधाता, नियति, स्वभाव, काळ, ग्रहो, ईश्वर, कर्म, दैव, भाग्य, पुण्य, यम अने कृतांत, ए सर्वे पूर्वे करेलां कर्मनां पर्याय नामो छे."

यथा धेनुसहस्रेषु, वत्सो विंदति मातरम् ।
एवं पूर्वकृतं कर्म, कर्तारमनुधावति ॥ ५ ॥

भावार्थ—" जेम वाछरडुं हजारो गायोमांथी पोतानी माताने ओळखीने तेनी पाछळ जाय छे, तेम पूर्वे करेलुं कर्म तेना कर्तानी पाछळ जाय छे."

यथा छायातपौ नित्यं, सुसंबद्धौ परस्परम् ।
एवं कर्म च कर्ता च, संश्लिष्टावितरेतरम् ॥ ६ ॥

भावार्थ--"जेम छाया अने आतप हमेशां परस्पर संबंधवाळा छे. तेम कर्म अने तेनो कर्ता पण परस्पर मळेला छे."

हवे उद्यम विषे कहे छे.

न यथैकेन हस्तेन, तालिका संप्रपद्यते ।
तथोद्यमपरित्यक्तं न फलं कर्मणः स्मृतम् ॥ ७ ॥

भावार्थ–"जेम एक हाथे ताळी पडती नथी, तेम उद्यम विना एकला कर्मनुं फळ कहेलुं नथी."

पश्य कर्मवशात्प्राप्तं, भोज्यकाले च भोजनम् ।
हस्तोद्यमं विना वक्त्रे, प्रविशेन्न कथंचन ॥ ८ ॥

भावार्थ–"जुओ के कर्मना वशथी भोजनने वखते जमवानुं तो मळ्युं, पण हाथनो उद्यम कर्या विना मुखमां कोइ पण प्रकारे ते पेसतुं नथी."

आ प्रमाणे गुरुमहाराजनां वचनो सांभळीने रावणे फरीथी पूछ्युं के–" हे स्वामी ! मृत्युने जीतवानो कोइ पण उपाय छे ?" त्यारे गुरु बोल्या के–हे त्रण खंडना राजा रावण !

परिहरति न मृत्युः पंडितं श्रोत्रियं वा
धनकनकसमृध्धं बाहुवीर्यं नृपं वा ।
तपसि नियतयुक्तं सुस्थितं दुःस्थितं वा
वनगत इव वह्निः सर्वभक्षी कृतांतः ॥ १ ॥

भावार्थ–"पंडितने, वेदज्ञ ब्राह्मणने, धनसुवर्णनी समृद्धिवाळाने, बाहुना पराक्रमवाळा राजाने, निरंतर तपस्या करनारने, सारी स्थितिवाळाने अथवा नबळी स्थितिवाळाने कोइने पण मृत्यु छोडतो नथी. केमके वनमां रहेला दावानळनी जेम कृतांत (यम) सर्वभक्षी छे."

ये पातालनिवासिनोऽसुरगणा ये स्वैरिणो व्यंतरा
ये ज्योतिष्कविमानवासिविबुधास्ताराश्च चंद्रादयः ।
सौधर्मादिसुरालयेषु सुखिनो ये चापि वैमानिका-
स्ते सर्वेऽपि कृतांतवासमवशा गच्छन्ति किं शोच्यते॥ २ ॥

भावार्थ–"जे असुरकुमारो पाताळमां वसेला छे, जे व्यंतरो स्वेच्छाचारी छे, जे ज्योतिष्, विमानवासी देवो तारा अने चंद्र विगेरे छे, अने जे सुधर्मादिक विमानमां सुखेथी वसेला वैमानिक देवो छे, ते सर्वे पण

पराधीनपणे यमराजना वासमां जाय छे, अर्थात् मरण पामे छे, तो पछी हे रावण ! तुं शाने माटे शोक करे छे ?"

आ प्रमाणेना गुरुमहाराजना उपदेशथी रावण प्रतिबोध पाम्यो, अने हमेशां **शांतिनाथ** जिनेश्वरनी भक्ति करवा लाग्यो.

एक दिवस रावण पुष्पक नामना विमानमां बेसीने पोतानी पत्नी **मंदोदरी** सहित अष्टापद तीर्थे गयो. त्यां भरत चक्रीए करावेला चोमुख जिनालयमां द्रव्यपूजा कर्या बाद हाथमां वीणा लइने भावपूजा करवा लाग्यो; तेवामां नागपति धरणेंद्र त्यां आवी चोवीश तीर्थंकरोने नमस्कार करीने रावण पासे बेठा. रावणे तेमने अष्टापद तीर्थनुं स्वरूप पूछयुं. एटले नागपतिए अष्टापद तीर्थनुं माहात्म्य कही बताव्युं. ते सांभळीने रावण घणा हर्षथी भक्ति करवा लाग्यो, ते वखत तेनी प्रिया मंदोदरी नृत्य करती हती, अने पोते वीणा वगाडतो हतो. थोडी वारमां दैवयोगे वीणानी एक तंत्री तुटी गइ, त्यारे "अहो आ नृत्यसमयमां मारी प्रियाना भावनो भंग न थाओ" एम विचारीने तत्काळ रावणे जाणे तांत त्रुटीज नथी तेम पोताना हाथमांथी एक नस काढीने वीणामां सांधी दीधी, तेथी तेनो अवाज घणो सुंदर थयो अने नृत्यनी शोभा पण वृद्धि पामी ते जोइ देवो पुष्पवृष्टि करीने वारंवार तेनी प्रशंसा करवा लाग्या. ते वखते भावमां निमग्न थयेला रावणे तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युं. पछी ते पोताने स्थाने आवीने राज्यसुख भोगववा लाग्यो.

"आ प्रमाणे विविध प्रकारे परीक्षा करी नियत्यादि रूप एकांत पक्ष मूकीने आत्मसिद्धि माटे उद्यम करनारा रावणे अष्टापद तीर्थने विषे तीर्थंकरनामकर्म उपार्जन कर्युं."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य त्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३० ॥

व्याख्यान २३१ मुं.

कालादि करतां कर्मनी बलवत्ता विषे.

देवेन्द्रा दानवेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च महाबलाः ।
नैव कर्मपरीणाममन्यथा कर्तुमीश्वराः ॥ १ ॥

भावार्थ—" देवेन्द्रो, दानवेन्द्रो अने बळवान राजाओ कोइ पण कर्मना परिणामने मिथ्या करवा समर्थ नथी." आ संबंधमां एक दृष्टांत छे ते नीचे प्रमाणे—

मनोरम नामना पुरने विषे **रिपुमर्दन** नामे एक राजा हतो. तेने पुत्र न हतो; **भाविनी** नामे एक पुत्रीज हती. ते राजाने प्राणथी पण अधिक प्रिय हती. तेथी ते पुत्रीना स्नान, भोजन, शणगार विगेरे कर्या पछी राजा पोते स्नान, भोजनादिक क्रिया करतो हतो. ते कुमारी कळाचार्य पासे कळानो अभ्यास करती हती.

तेज पुरमां सर्वथा निर्धन **धनदत्त** नामनो श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने सात पुत्र उपरांत **कर्मरेख** नामे आठमो पुत्र थयो. ते सौथी नानो होवाथी तेना पिताने वधारे वहालो हतो. ते पुत्र पण तेज कळाचार्य पासे कळानो अभ्यास करतो हतो. एक दिवस समग्र कळा शीखेली भाविनीए कर्मरेखना सांभळतां गुरुने पूछ्युं के—" हे पिता ! मारो वर कोण थशे ?" गुरुए लग्न जोइने कह्युं के—"आ कर्मरेख तारो पति थशे." आ प्रमाणे गुरुनुं वचन सांभळीने जाणे वज्रथी हणाइ होय तेम ते मूर्छित थइ गइ. पछी सावध थइ सती विचारवा लागी के—" अरे रे! आ निर्धननो दीकरो मारो पति थशे ते करतां तो मारे मरी जवुं तेज श्रेष्ठ छे. परंतु आ कर्मरेखनेज मारी नखावुं तो पछी ते मारो स्वामी शी रीते थशे ?" एम विचारीने क्रोधसहित ते पोताने घेर गइ, अश्रुवडे तेनी कांचळी भीनी थइ गइ, अने मुख ढांकीने ते सुइ गइ. पछी भोजनसमये " भाविनी क्यां गइ ? " एम पूछतां राजाए तेनी शोध करावी तो कोपगृहे[1]मां सूती छे, एम तेना जाणवामां आव्युं. एटले राजा तेनी पासे गयो अने तेने पोताना उत्संगमां बेसाडीने दुःखनुं कारण पूछ्युं. त्यारे तेणे गुरुए कहेली वात अने पोतानो विचार कही बताव्यो. ते सांभळीने राजाए " आ बाबतमां शुं करवुं ? " एम मंत्रीओने पूछ्युं. मंत्रीओ बोल्या के— " हे महाराज ! कारण विना पारका मनुष्यनो घात करवो राजाने योग्य नथी. माटे ते कर्मरेखना पिताने बोलावी तेने कांइ द्रव्य आपीने ते पुत्र तेनी पासेथी

१ रीसानार ने सुवानुं स्थान.

लइ लेवो. पछी जेम आपनी इच्छा हशे एम थइ शकशे; अने तेम करवाथी आपणो अन्याय पण कहेवाशे नहीं." पछी राजाए ते धनदत्त श्रेष्ठीने बोलावीने पोतानो विचार कह्यो. वज्रना घात करतां पण अधिक कठोर वचन सांभळीने नेत्रमां अश्रु सहित ते धनदत्त बोल्यो के–" हे देव! पुत्र कोण? स्त्री कोण? अने हुं पण कोण? मारो समग्र परिवार आपनोज छे. मरजी प्रमाणे करो." राजा पण एक तरफ वाघ अने एक तरफ भरपूर नदीनी जेम सांकडमां आव्यो. छेवट निरुपायपणे कर्मरेखने बोलावीने तेनो वध करवा माटे चांडाळने आप्यो. चांडाळो तेने लइने गाम बहार शूळी पासे गया. त्यां "बाळहत्या करवी आपणने योग्य नथी" एम विचारीने ते चांडाळोए कर्मरेखने बदले एक मडदुं शूळी उपर चडावीने तेने छोडी दीधो. राजानो अभिप्राय जाणनार कर्मरेख पण त्यांथी शीयाळनी जेम तत्काळ नासी गयो.

हवे श्रीपुर नामना नगरमां श्रीदत्त नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने श्रीमती नामे पुत्री हती. ते शेठने रात्रिमां कुळदेवीए आवीने स्वप्नने विषे कह्युं के–" हे श्रेष्ठी! आ गामनी बहार काले प्रातःकाळे उत्तर दिशाना रस्तामां सुतेला जे बाळकनी पासे तारी काळी गाय उभी होय ते बाळकने तारी श्रीमती पुत्री साथे परणावजे." हवे कर्मरेख कुमार पण आखी रात्रि मार्गमां चालतां अत्यंत थाकी गयो, तेथी ते श्रीपुर गामनी नजीक आवीने सुइ गयो. श्रीदत्त श्रेष्ठी प्रातःकाळे गोत्रदेवीना वचनथी त्यां आव्यो, अने तेज प्रमाणे जोइने तेने पोताने घेर लइ गयो. पछी तेने पोतानी कन्या परणावी. हस्तमेलाप वखते श्रेष्ठीए पोताना घरनी सर्व लक्ष्मी तेने आपी.

ते गाममां कर्मरेखे पोतानुं असल नाम गुप्त राखीने रत्नचंद्र नाम प्रसिद्ध कर्युं. एक दिवस ते रत्नचंद्र पोताना श्वशुर श्रीदत्तनी आज्ञा लइने वहाणमां बेसी समुद्ररस्ते वेपार करवा गयो. त्यांथी घणुं द्रव्य उपार्जन करीने पाछो आवतां रस्तामां वहाण भांगवाथी समुद्रमां पड्यो. तेने एक मोटो मच्छ गळी गयो. ते मच्छ चाली न शकवाथी समुद्रने कांठे आवीने पड्यो. एक मछीमारे तेने पकड्यो, अने तेनुं पेट फाडतां नीकळेला ते कुमारने भृगुपुर (भरुच) नगरना राजाने भेट तरीके आप्यो. ते राजाने पुत्र नहीं होवाथी तेणे तेने पुत्र करीने राख्यो. पछी तेने कुंडनपुरना राजानी पुत्री जोडे परणाव्यो.

अहीं रिपुमर्दन राजाए पोतानी भाविनी पुत्री योग्य वयमां आवतां तेनो स्वयंवरमंडप रच्यो. तेमां तेणे सर्व राजाओ, राजकुमारो, मंत्रीओ, मंत्रीपुत्रो, श्रेष्ठीओ, श्रेष्ठिपुत्रो अने सार्थवाह विगेरेने आमंत्रण करी बोलाव्या. ते वखते

भृगुपुर राजाना कुमार रत्नचंद्रे पण चतुरंगीणी सेना सहित त्यां आवीने स्वयंवर-मंडपने शोभाव्यो. राजपुत्री भाविनी सर्व राजमंडळनुं अतिक्रमण करीने रोहिणी चंद्रने वरे तेम ते रत्नचंद्रनेज वरी. रिपुमर्दन राजाए विधिपूर्वक तेमनां लग्न करीने हाथी अश्व विगेरे पुष्कळ दायजो आपीने तेमने विदाय कर्यां. रत्नचंद्र कुमार भाविनीने लइने पोताना पुरमां आव्यो.

एक दिवस कुमार सुवर्णना थाळमां स्वर्गना भोजन (अमृत) जेवुं मिष्ट भोजन करतो हतो; ते वखते अकस्मात् पवन उत्कट थवाथी धूळ उडवा लागी, तेने थाळीमां पडती जोइने हाथमां पंखो लइने पासे उभेली भाविनीए पोताना वस्त्रना छेडाथी ते भोजन तुरत ढांकी दीधुं. ते जोइने रत्नचंद्र विचार करवा लाग्यो के-" अहो ! एक एवो पण वखत हतो के आ स्त्रीए मने शूळीपर चडाव्यो हतो, अने आजे एवो पण वखत छे के तेज स्त्री मने पोतानो प्राणपति मानीने मारा शरीरउपर रजनो स्पर्श पण थवा देवा इच्छती नथी." एम विचारीने तेणे विस्मयथी जरा हास्य कर्युं. तेनुं हास्य जोइने ते चतुर भाविनीए आश्चर्य पामीने विचार्युं के-" आवुं स्मित हास्य तो मारी जेवी स्त्रीओने योग्य छे. परंतु आवा पुरुषोने कारण विना हास्य घटतुं नथी. " एम विचारीने तेणे पोताना पतिने आग्रह पूर्वक हास्यनुं कारण पूछ्युं. प्रियाना अत्यंत दुराग्रहथी ते बोल्यो के-" हे सुंदर अंगवाळी ! तुं मने ओळखे छे ? " ते बोली- "हा, आप मारा प्राणपति छो, अने हुं आपनी प्रिया छुं." कुमारे कह्युं के- " हे सुंदर भ्रकुटीवाळी प्रिया ! तें जे आ संबंध कह्यो ते तो जगतमां प्रसिद्ध छे. परंतु आपणो बीजो पण संबंध छे, अने ते ए के- हे मृगाक्षी ! हुं कर्मरेख नामनो धनदत्त श्रेष्ठीनो पुत्र छुं, अने तुं कळाचार्य पासे मारी साथे अभ्यास करनारी भाविनी छे." एम कहीने तेणे पूर्वनी केटलीक रहस्यनी वात कही. ते सांभळीने भाविनीए अत्यंत लज्जाथी नीचुं मुख कर्युं. ते जोइने तेने आश्वासन पमाडी प्रीति पूर्वक कुमार बोल्यो के-

" त्रपायाः पद्मपत्राक्षि, तत्रास्त्यवसरोऽधुना ।
लोकोक्तिरिति यद्विप्रेणातीता नोच्यते तिथिः ॥ १ ॥

भावार्थ-" हे कमलाक्षि ! लोकमां पण एवुं कहेवाय छे के गइ तिथि ब्राह्मण पण वांचतो नथी, तो तारे हवे लज्जा पामवानो वखत नथी."

तेमज वळी हे कृशोदरी ! कर्मनी गहन गति छे. तेथीज पूर्वना मोढ पंडितोए दैव, देव, विधि विगेरेने छोडी दइने कर्मनेज नमस्कार कर्यो छे. कह्युं छे के–

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्मांडभांडोदरे
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तो महासंकटे ।
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे ॥१॥

भावार्थ—" जेणे ब्रह्माने कुंभारनी जेम ब्रह्मांड रूपी पात्रने रचवामां नियमित कर्यो छे, जेणे विष्णुने दश अवतार वडे गहन एवा मोटा संकटमां नांख्यो छे, जेणे महादेवने हाथमां कपालसंपूट आपीने भिक्षाटन कराव्युं छे, अने जेना वडे सूर्य हमेशां गगनमां भम्या करे छे, एवा कर्मने नमस्कार थाओ."

इत्यादि पतिनां वचन सांभळीने भाविनीए लज्जानो त्याग कर्यो. पछी तेणी आ वृत्तांत पोताना पिता रिपुमर्दनने कहेवरावीने पतिभक्तिमां तत्पर थइ.

अन्यदा कर्मरेख राजाए गुरु पासे देशना सांभळीने विचार्युं के–" कर्मनुं फळ में आ भवमां प्रत्यक्ष जोयुं छे, माटे गुरुनुं वचन प्रमाण छे." पछी ते कर्मनो जय करवा माटे तेणे वृद्धावस्थामां चारित्र ग्रहण कर्युं, अने दुस्तप तपस्या करीने सद्गतिनो भाजन थयो.

"भावि भावने मिथ्या करवामां कोइ समर्थ नथी, ते आ दृष्टांतनुं तात्पर्य छे. अहीं कर्मना बळथीज भाविनी तथा कर्मरेखनो संयोग थयो छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य एकत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३१ ॥

व्याख्यान २३२ सुं.

"पांचे कारणो मळीनेज कार्य छे, ते विषे."

कालादिपंचहेतूनां, समवायो यदा भवेत् ।
तदा कार्यस्य निष्पत्तिः, स्यात् क्षुल्लककुमारवत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" ज्यारे काळादिक पांचे कारणनुं एकत्र मळवुं थाय छे त्यारेज क्षुल्लक कुमारनी जेम कार्यनी उत्पत्ति थाय छे." क्षुल्लक कुमारनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

साकेत नामना नगरमां पुंडरीक नामे राजा राज्य करतो हतो. तेनो नानो भाइ कंडरीक युवराजस्थाने हतो. कंडरीकने यशोभद्रा नामनी अति रूपवंत स्त्री हती. ते जोइने पुंडरीक राजा कामरागमां मग्न थयो. तेथी तेणे दासीद्वारा तेने पोतानी इच्छा जणावी. यशोभद्राए जवाबमां कहेवराव्युं के—"हे पूज्य ! तमे समग्र प्रजाना स्वामी छो, तेथी नीतिपथनो त्याग करवो आपने उचित नथी." आ प्रमाणेनुं यशोभद्रानुं वचन दासीए राजाने कह्युं. एटले राजाए फरीथी कहेवराव्युं के—"हे स्त्री ! स्त्रीओने "ना" कहेवानो स्वभावज होय छे; परंतु हे कृशांगी ! मश्करी मुकीने मने पति तरीके अंगीकार कर." यशोभद्राए कह्युं के—" कुळ तथा धर्मनी मर्यादा हुं मूकीश नहीं. तुं आवां दुष्ट वचनो बोलतां केम लज्जा पामतो नथी?" ते सांभळीने राजाए विचार्युं के"ज्यां सुधी मारो भाई जीवे छे त्यां सुधी आ मने चाहशे नहीं, माटे तेने मारी नांखुं." एम धारीने कपटथी तेणे पोताना नाना भाइने मारी नांख्यो. कह्युं छे के—

त्रपावरत्रया बद्धास्तावत्तिष्ठंति जंतवः ।
अविवेकबलं यावन्न कामरसनिर्मितम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" ज्यां सुधी कामदेवना रसथी उत्पन्न थयेलुं अविवेक रूपी बळ होतुं नथी, त्यां सुधीज लज्जा रूपी वाधरी (दोरी) थी बंधाएला जंतुओ मर्यादामां रहे छे."

पछी यशोभद्राए विचार कर्यो के—"जे दुष्टे पोताना भाइनी हत्या करी ते अवश्य मारा शीलनो पण भंग करशे, माटे मारे परदेश जवुं योग्य

छे." एम धारीने गर्भवंती एवी ते यशोभद्रा गुप्त रीते त्यांथी नासी गइ; अने "शीलनुं रक्षण करवामां दीक्षा जेवुं बीजुं कोइ श्रेष्ठ साधन नथी" एम मानीने तेणे दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे गर्भ वृद्धि पाम्यो. ते जोइने सर्व साध्वी विगेरेए तेने पूछयुं. त्यारे तेणे सर्व सत्य वृत्तांत कही बताव्युं. पछी श्रावकोए शासननी हीलना न थाय तेवी रीते तेने राखी. समय पूर्ण थतां तेने पुत्रनो जन्म थयो, ते श्रावकोने घरे वृद्धि पामवा लाग्यो, श्रावकोए तेनुं लालनपालन कर्युं, अने तेनुं क्षुल्लककुमार नाम राख्युं. ते कुमार आठ वर्षनो थयो त्यारे तेने दीक्षा आपी; परंतु चारित्रावरणनो उदय थवाथी तेना चित्तमां विषयवासना उत्पन्न थइ; एटले तेणे पोतानी माताने कह्युं के-"हे माता! विषयनुं सुख अनुभवीने पछी हुं फरीथी व्रत ग्रहण करीश." तेनी माताए कह्युं के-"हे पुत्र! आवुं संयमनुं सुख तजीने तुच्छ विषयमां केम आसक्ति करे छे? तोपण जो तारे संयमनी इच्छा न होय, तो मारां वचनथी बार वर्ष सुधी मारी पासे रहीने जिनेश्वरनी वाणी सांभळ." आ प्रमाणे पोतानी मातानुं वचन सांभळीने ते तेटलो वखत रह्यो, अने पोतानी माता (साध्वी) पासे हमेशां वैराग्यमय वाणी सांभळवा लाग्यो, परंतु तेना मनमां वैराग्यनो लेश पण उत्पन्न थयो नहीं.

बार वर्ष पूरां थतां तेणे मातानी पासे रजा मागी, त्यारे तेणे कह्युं के-"हे पुत्र! तुं मारी गुरुणीजी पासे जइने रजा ले." त्यारे तेणे मोटी साध्वी पासे जइने रजा मागी. साध्वीए कह्युं के-"अमारी पासे रहीने बार वर्ष सुधी देशना सांभळ." तेणे कबुल कर्युं; अने तेमनी पासे रहीने अनेक सूत्रना अर्थो सांभळ्या, पण कांइ प्रतिबोध पाम्यो नहीं. अवधि पूरो थतां तेणे तेमनी पासे रजा मागी के-"तमारा आग्रहथी घणुं कष्ट सहन करीने पण रह्यो छुं, माटे हवे हुं जइश." ते सांभळीने तेमणे कह्युं के--"आपणा उपाध्यायजी गुरु छे, तेनी रजा लइने पछी जा." त्यारे तेणे उपाध्याय पासे जइने रजा मागी. उपाध्याये कह्युं के--"बार वर्ष सुधी अमारी पासे रहीने देशना सांभळ."तेणे ते पण कबुल कर्युं, परंतु बोध लाग्यो नहीं. अवधि पूरो थतां उपाध्यायनी रजा मागी. त्यारे तेणे कह्युं के-"गच्छना अधिपति सूरि पासे जइने तारी इच्छा निवेदन कर." तेणे तेम कर्युं. आचार्ये पण पोतानी पासे बार वर्ष सुधी रहेवानुं कह्युं. एटले ते तेटलो वखत रहीने अनेक प्रकारनी देशना सांभळवा लाग्यो. आ प्रमाणे माता विगेरेना आग्रहथी अडतालीश वर्ष पर्यंत दीक्षानुं पालन कर्युं; तोपण विषयथी तेनुं चित्त पराङ्मुख थयुं नहीं. पछी अवधि

पूर्ण थतां तेणे सूरिने कह्युं के–"हे स्वामी ! हुं जाउं छुं." ते सांभळीने सावद्य कर्म होवाथी सूरि तो मौनज रह्या. त्यारे ते पोतानी मेळे त्यांथी चाल्यो. जती वखत तेनी माताए पूर्व अवस्थामां (गृहस्थीपणामां) आणेलुं रत्नकंबल तथा मुद्रा (वींटी) तेने आपी. ते लइने अने संयमना सर्व चिन्ह तजीने ते अनुक्रमे साकेतपुरनी राजसभामां पहोंच्यो, त्यां कोइ नर्तकी नृत्य करती हती. ते नृत्य जोवामां व्यग्र चित्तवाळा सर्वे सभासदो तेने वारंवार धन्यवाद आपता हता, अने ते नर्तकीनी प्रशंसा करता हता. क्षुल्लक पण ते जोइने तेमां तल्लीन थइ गयो. तेवामां नर्तकी घणा वखतथी नाच करवाने लीधे थाकी गयेली होवाथी तेनां नेत्र निद्राथी घुर्णायमान थयां. ते जोइने तेनी अक्काए संगीतना आलापमां तेने कह्युं के–

" सुट्ठु गाइअं सुट्ठु वाइयं, सुट्ठु नच्चियं सामसुंदरि ।
अणुपालिय दीहराइयं, उसुमिणं ते मा पमायए ॥ १ ॥

भावार्थ–"हे सुंदरी ! तें बहु सारुं गायन कर्युं, घणुं सारुं वगाड्युं, अने सारी रीते नृत्य कर्युं. एवी रीते घणी रात्रि व्यतीत थवा दइने हवे थोडा माटे प्रमाद न कर."

आ प्रमाणे अक्कानुं गायन सांभळीने नर्तकी फरीथी सावधान थइ.

अहीं क्षुल्लक कुमार ते गाथा सांभळीने बोध पाम्यो. तेथी तेणे ते नर्तकीने पोताना रत्नकंबलनुं पारितोषिक (इनाम) आप्युं, एटले राजपुत्रे मणिजडित्र कुंडळ आप्यां. मंत्रीए मुद्रा रत्न आप्युं.लांबा वखतथी पतिना विरहवाळी कोइ सार्थवाहनी स्त्रीए पोतानो हार आप्यो, अने राजाना महावते अंकुश रत्न इनाममां आप्युं. ते दरेक इनाम लक्ष लक्ष मूल्यनां हतां; ते जोइने राजाए ते सर्वने पूछ्युं के"तमे आ प्रमाणे तुष्टिदान आप्युं, तेनुं शुं कारण ? " त्यारे प्रथम क्षुल्लक बोल्यो के–" हे राजा ! हुं तमारा नाना भाइनो पुत्र छुं. साठ वर्ष सुधी संयम पाळीने विषयवासनाथी राज्य लेवा माटे हुं तमारी पासे आव्यो हतो; पण आ गाथा सांभळीने में विचार्युं के"हवे थोडा काळ माटे प्रमाद करवो मने उचित नथी." आवी वैराग्यनी बाधक गाथा पण मने साधकपणे परिणमी; प्रथम गुरुनां साधक वचनो पण मने बाधक रूप थयां हतां. हवे हुं चारित्र पाळवामां निश्चळ थवानो, ते कारणथी में मारापर मोटा उपकार करनारी आ नर्तकीने सौथी प्रथम प्रीतिदान आप्युं. वळी हे राजा! जो तमे मने पोताना नाना भाइना पुत्र तरीके

ओळखवामां संदेह पामता हो, तो ते संदेहने छेदनारी आ नाममुद्रा जुओ." ते जोइने राजाए क्षुल्लक कुमारने कह्युं के-"आ राज्य ग्रहण कर." तेणे कह्युं के-"राज्यादिकमां आसक्ति उत्पन्न करनारो मोह रूपी चोर हवे मारा आत्म प्रदेशथी दूर गयो छे, माटे हुं राज्यादिकने शुं करुं ?"

पछी राजाए पोताना पुत्रने प्रीतिदाननुं कारण पूछ्युं, एटले ते बोल्यो के-"हे पिता ! राज्यना लोभथी आज काल हुं तमने विषादिकना प्रयोगवडे मारी नांखवाना विचारमां हतो, पण आ गाथा सांभळीने में विचार्युं के-'पिता वृद्ध थया छे, माटे हवे तेनुं बहु थोडुं आयुष्य बाकी रह्युं हशे, तेथी मारवा तो नहीं, एम धारीने हुं खुशी थयो तेथी में तेने प्रीतिदान आप्युं." पछी मंत्रीने पूछतां तेणे कह्युं के-"हे स्वामी ! तमारा शत्रुओए मने पोताना पक्षमां लीधो हतो. पण आ गाथा सांभळीने हुं तेवा पापकर्मथी निवृत्ति पाम्यो छुं." पछी पतिना विरहवाळी स्त्रीने पूछतां ते बोली के-"हे प्रभु ! आज काल करतां पतिना विरहमां में बार वर्ष निर्गमन कर्यां तोपण ते तो आव्या नहीं, तेथी पुरुषनो विरह असह्य लागवाथी हुं आजे परपुरुष सेवीने शीलनो भंग करवा इच्छती हती. ते आ गाथा सांभळवाथी पाछी शियळमां दृढ थइ के- लांबा काळनुं पालन करेलुं शील थोडा वखत माटे मूकवुं नहीं. आ कारणथी में प्रसन्न थइने नर्तकीने प्रीतिदान आप्युं छे." पछी महावतने ते पूछतां तेणे कह्युं के 'हुं आपनी राणी साथे लुब्ध थयेलो छुं. आजे आपनो विनाश करवा इच्छतो हतो, पण आ गाथा सांभळीने तेवा पापविचारथी निवृत्त थयो छुं अने तेथी में तुष्टिदान आप्युं छे."

आ प्रमाणे सर्वनां कारणो सांभळीने राजा विगेरे सर्वे हर्ष पाम्या;अने तेसर्वे ए क्षुल्लक कुमारनी साथे जइ दीक्षा ग्रहण करी.अनुक्रमे ते स्वर्गादिक गतिने पाम्या.

आ दृष्टांतनो सार ए छे के-"संविज्ञ साधु विगेरेना मुखथी शुभकारी जिनेंद्रनी वाणी चिरकाळ सुधी सांभळ्या छतां पण क्षुल्लक कुमार बोध पाम्यो नहीं, अने काळादिक सामग्री मळवाथी मात्र एकज नर्तकीनी गाथा सांभळीने तत्काळ वैराग्य पाम्यो. तेथी पांच कारणो मळे त्यारेज कार्यसिद्धि थाय छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य
द्वात्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३२ ॥
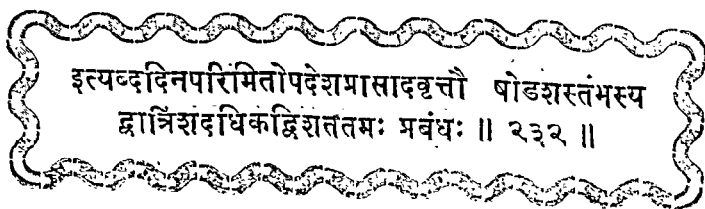
व्याख्यान २३३ मुं.

सद्गुणना विचारनी पण दुर्लभता.

यः प्राप्य मानुषं जन्म, दुर्लभं भवकोटिभिः ।
धर्मं शर्मकरं कुर्यात्, सफलं तस्य जीवितम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे प्राणी कोटी भवे करीने पण पामवो दुर्लभ एवो मनुष्य-भव पामीने कल्याण करनार एवा धर्मने करे छे तेनुं जीवित सफल छे."

दुःप्राप्यं प्राप्य मानुष्यं, कार्यं तत् किंचिदुत्तमैः ।
मुहूर्तमेकमप्यस्य नैव, याति यथा वृथा ॥ २ ॥

भावार्थ—"दुःखे पामवा लायक मनुष्यजन्म पामीने उत्तम पुरुषोए कांइक एवुं काम करवुं जोइए के जेथी एक मुहूर्त पण वृथा न जाय."

आ हकीकतने दृढ करवा माटे नीचेनुं दृष्टांत जाणवुं—

पूर्वे प्रतिष्ठान नगरमां कोइक धनवान श्रेष्ठी रहेतो हतो. ते मुहूर्त, घडी, पहोर, दिवस विगेरे सर्व काळ धर्म, क्रिया, दान विगेरे धर्मकार्य कर्या विनाज वृथा निर्गमन करतो हतो. अनुक्रमे ते आर्तध्यानथी मृत्यु पामीने तेज पुरनी समीपे एक सरोवरमां माछलुं थयो.

तेज नगरमां शालिवाहन राजानो पूर्व भवनो जीव एक श्रेष्ठी हतो, ते श्रेष्ठी तेज सरोवरने कांठे बेसीने सुपात्र दान आपतो हतो. कह्युं छे के—

धर्मकीर्तिविहीनस्य, जीवितेन नरस्य किम् ।
यो धर्मकीर्तिवान् दानी, तस्य जीवितमुच्यते ॥ १॥

भावार्थ—"धर्म अने कीर्तिथी रहित मनुष्यना जीवितथी शुं? पण जे धर्म अने कीर्तिवाळो होवा साथे दातार छे, तेनुंज जीवित सफळ छे."

अन्यदा ते सरोवरनी पाळ उपर मुनिने दान आपतां ते श्रेष्ठीने पेला माछलाए जोयो. एटले तेने जातिस्मरणज्ञान थयुं. अनुक्रमे श्रेष्ठीनो जीव मरीने प्रतिष्ठान नगरमां शालिवाहन नामे राजा थयो.

एकदा शालिवाहन राजा उद्यानमां फरतो फरतो तेज सरोवरने कांठे

वृक्षनी छायामां आवीने बेठो. तेने मोटो समृद्धिवान जोइने "पूर्व भवना दाननुं आ फळ छे." एम पेला माछलाए जाण्युं. पछी लोकने बोध करवा माटे माछलुं मनुष्यभाषाथी बोल्युं के-

को जीवति, को जीवति,को जीवति वदति वारिमध्यस्थः।
मत्स्यः प्रबोधविधये, लोकानां ललितविज्ञानम् ॥ १ ॥

भावार्थ--"कोण जीवे छे. ? कोण जीवे छे ? कोण जीवे छे ? ए प्रमाणे त्रण वखत जळमां रहेलो मत्स्य लोकोने बोध करवा माटे सुंदर वचन बोल्यो."

आ प्रमाणे मत्स्यनुं वाक्य सांभळीने राजा विगेरे सर्व लोकोने मोटुं आश्चर्य थयुं. पछी राजाए सभामां आवी पोताना पंडितोने ते मत्स्यना वचननुं स्वरूप पूछयुं. परंतु चित्तने चमत्कार करनारां तेनां वचननो तात्पर्य कोइ कही शक्युं नहीं. पछी श्रीकालीकाचार्ये ते मत्स्यना मननो भाव जाणीने तेनी समक्ष राजाने कह्युं के-

को जीवति गुणा यस्य, यस्य धर्मः स जीवति ।
गुणधर्मविहीनस्य, निष्फलं तस्य जीवितम् ॥ १ ॥

भावार्थ--"कोण जीवे छे ? के जेनामां गुणो अने धर्म रहेला छे तेज जीवे छे. गुण अने धर्मथी जे रहित होय तेनुं जीवित निष्फळ छे." वळी-

यस्मिञ्जीवति, जीवंति सज्जना मुनयस्तथा ।
सदा परोपकारी च, स जातः स च जीवति ॥ २ ॥

भावार्थ--"जेना जीववाथी सज्जन पुरुषो तथा मुनिओ जीवे छे, अने जे सदा परोपकारी छे, तेनो जन्म सफळ छे, अने तेज जीवे छे."

पंचमेऽहनि षष्ठे वा, भुंक्तेऽनवद्यमेव यः ।
धर्मार्थी चाप्रमादी च, स वारिचर जीवति ॥ ३ ॥

भावार्थ--"हे जळचर प्राणी ! जे पांचमे अथवा छट्ठे दिवसे निर्दोष भोजन करे छे, जे धर्मना अर्थी छे, अने अप्रमादी छे, तेज पुरुष जीवे छे."

आचार्ये आमांनो पहेलो श्लोक कह्यो, त्यारे मत्स्य ते वखत "को जी-

वर्ति" ए पद बोलवा लाग्यो. आचार्य बीजो श्लोक बोल्या, त्यारे एक वखत उपरतुं पद बोलवा लाग्यो, अने त्रीजो श्लोक बोल्या, त्यारे ते मौन धरीने रह्यो. पछी राजाए सूरि महाराजने कह्युं के-"हे स्वामी ! जळचर प्राणी पण धर्मक्रियानी इच्छा करे छे, ते मोटुं आश्चर्य छे." गुरु बोल्या के-"हे राजा ! धर्म अने गुणहीन मनुष्यनो भव सर्व जीवो करतां अति नीच छे. ते विषे विद्वाननी वाणीना विलासी कविओनां वचनो सांभळ-

येषां न विद्या न तपो न दानं
न चापि शीलं न गुणो न धर्मः ।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥ १ ॥

भावार्थ--"जे मनुष्योमां विद्या, तप, दान, शील, गुण अने धर्म नथी तेओ आ मृत्युलोकमां पृथ्वीना भार रूप थइने मनुष्यने रुपे मृग छे, एम समजवुं."

आ प्रमाणे विद्वानना मुखथी नीकळेलां वचन सांभळीने एक मृग गर्व सहित बोल्यो के-"निंदित मनुष्यने अमारी उपमा केम आपो छो ? केमके अमे तो घणा गुणवान छीए.

गीते शीर्षं जने मांसं, त्वचं च ब्रह्मचारिणे ।
शृंगं योगीश्वरे दद्मो, मृगस्त्रीषु सुलोचने ॥ १ ॥

भावार्थ-"गीतने माटे माथुं, माणसने मांस, ब्रह्मचारीने चर्म, योगीने शींगडां अने स्त्रीओने माटे नेत्र आपीए छीए." वळी-

दुर्वांकुरतृणाहारा, धन्यास्ते च वने मृगाः ।
विभवोन्मत्तमूर्खाणां, न पश्यंति मुखानि यत् ॥२॥

भावार्थ-" दूर्वाना अंकुर अने तृणनुं भक्षण करनारा मृगो वनमां रहेता होवाथी वैभवथी उन्मत्त थयेला मूर्खोनां मुख जोता नथी, माटे तेमने धन्य छे."

अयि कुरंग कुरंगमविक्रमे
त्यज वनं जवनं गमनं कुरु ।
इह वने हि वनेचरनायकाः
सुरभिलोहितलोहितसायकाः ॥ ३ ॥

भावार्थ—"हे मृग ! आ वनने तुं तजी दे, अने शीघ्रताथी अन्यत्र गमन कर; केमके आ वनमां गायोना लोहीथी जेमणे पोतानां बाणोने रक्त कर्यां छे एवा मोटा पाराधीओ आवेला छे."

वसंत्यरण्येषु चरंति दुर्वां
पिबंति तोयान्यपरिग्रहाणि ।
तथापि वध्या हरिणा नराणां
को मूर्खमाराधयितुं समर्थः ॥ ४ ॥

भावार्थ—"हरणो वनमां वसे छे, दुर्वा खाय छे, अने कोइनी मालेकी विनाना जळनुं पान करे छे; तोपण तेने जे माणसो मारी नांखे छे तेवा मूर्खने समजाववाने कोण समर्थ छे ? "

माटे निर्गुण मनुष्यने अमारी उपमा आपवी योग्य नथी. एटले सूरि फरीथी बोल्या के—

येषां न विद्या न तपो न दानं
न चापि शीलं न गुणो न धर्मः ।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता
मनुष्यरूपाः पशवश्चरंति ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे मनुष्योमां विद्या, तप, दान, शील, गुण अने धर्म नथी, तेओ मृत्युलोकमां पृथ्वीना भार रूप थइने मनुष्यनुं रूप धारण करनारा पशुओ छे."

आ प्रमाणे सांभळीने कोइ गाय बोली के—

तृणमद्मि दुग्धं धवलं, छगणं गेहस्य मंडनं भवति ।
रोगापहारि मूत्रं पुच्छं सुरकोटिसंस्थानम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"हुं घास खाउं छुं, पण श्वेत दूध आपुं छुं. मारुं छाण घरनुं भूषण थाय छे, मारुं मूत्र रोगनो नाश करेछे अने मारा पूंछडामां कोटी देवताओनुं स्थान छे."

माटे निर्गुण मनुष्यने मारुं गुणीनुं उपमान योग्य नथी. पछी कोइ बळद बोल्यो के—

नास्य भारग्रहे शक्तिर्न च वाहगुणक्रिया ।
देवागारबलीवर्दस्तथाप्यश्नाति भोजनम् ॥ १ ॥

भावार्थ--"तमे कह्या तेवा निर्गुण मनुष्यमां मारी जेवी भार उपाडवानी शक्ति नथी. वहन करवानो कांइ गुण नथी, तोपण महादेवना पोठीआनी जेम ते बेठो बेठो भोजन करे छे;" अने हुं तो

गुरुशकटधुरंधरस्तृणाशी
समविषमेषु च लांगलापकर्षी ।
जगदुपकरणं पवित्रयोनि-
र्नरपशुना कथमुपमीयते गवेंद्रः ॥ २ ॥

भावार्थ-मोटा गाडानी धुसरीने धारण करुं छुं, घास खाइने जीवुं छुं, सम विषम स्थानमां हळ खेंचुं छुं, एवी रीते जगतनो उपकार करुं छुं. वळी मारुं उत्पत्तिस्थान गाय रूपी पवित्र छे. माटे नरपशुनी साथे मारी बळदनी उपमा केम आपो छो?"

आ प्रमाणे होवाथी तेवा मनुष्योने पशुनी उपमा पण योग्य नथी.

पछी आचार्ये " येषां न विद्या० " ए श्लोक बोलतां चोथा पदमां "मनुष्य रूपेण तृणोपमानाः" एटले " तृण जेवा छे" एम बोल्या. ते सांभळीने तृण बोल्युं के--

गवि दुग्धकरं ग्रीष्मे, वर्षाहेमंतयोरपि ।
नृणां त्राणमहं कुर्वे, तत्समं च कथं मम ॥ १ ॥

भावार्थ-"हुं गायने विषे दूध उत्पन्न करुं छुं, अने शियाळामां, उनाळामां तथा चोमासामां सर्व ऋतुमां मनुष्योनुं रक्षण करुं छुं, तो मने निर्गुण पुरुषनी सरखुं केम कहोछो? " वळी-

रूढस्य सिंधुतटमनुगतस्य तृणस्यापि जन्म कल्याणम् ।
यत्सलिलमज्जदाकुलजनहस्तावलंबनं भवति ॥ २ ॥

भावार्थ-" समुद्रने कांठे उगेला अने नीचे नमेला तृणनो जन्म पण कल्याणकारी छे, केमके जळमां डुबवाथी व्याकुळ थयेला माणसोने ते हस्तना अवलंबन रूप थाय छे."

तथा समरांगणमां मुखने विषे तृण राखवाथी ते माणसने कोइ पण हणतुं नथी. वळी-

यस्यैवाहारयोगाज्जगति सुरभयोऽजाविका वा महिष्यः
सर्वाः संप्राप्तभूयो वपुरुपचितिका आज्यदध्नो निदानम्।
क्षीरं लोकाय दद्युः सकलरसमहायोनिभूतं तृणं त-
ज्जानेऽजानंत एते धिगखिलकवयो नीरसं वर्णयंति ॥ ३ ॥

भावार्थ–"जे तृणनुं भक्षण करवाथी जगत्मां गायो, बकरां, घेटां, भेंशो विगेरे सर्वे शरीरमां अति पुष्टि पामीने घी अने दहीं विगेरेना कारण रूप दूध सर्व माणसोने आपे छे, तेवा समग्र रसना मोटा कारण रूप घासने जाणे पोते तेना गुणथी अजाण्या होय तेम कविओ नीरस तरीके वर्णवे छे; माटे तेवा कविओने धिक्कार हो !"

पछी फरीथी सूरि तेज श्लोक बोल्या अने छेवटमां–मनुष्यरूपेण वृक्षा भवंति "मनुष्य रूपे करीने वृक्षो रहेलां छे" एम बोल्या. त्यारे कोइ वृक्ष मनुष्यभाषाए बोल्युं के–

छायां कुर्मो वयं लोके, फलपुष्पाणि दद्महे ।
पक्षिणां च सदाधारं, गृहादीनां च हेतवे ॥ १ ॥

भावार्थ–"अमे सर्वने छाया करीए छीए, फळ, फूल विगेरे आपीए छीए, अने पक्षीओने घर करवा माटे निरंतर आधार आपीए छीए."

वळी फरीथी युक्ति पूर्वक कहे छे–

छायामन्यस्य कुर्वंति, स्वयं तिष्ठंति चातपे ।
फलंति च परार्थे च, नात्महेतोर्महाद्रुमाः ॥ २ ॥

भावार्थ–"महा वृक्षो अन्यने छाया करेछे अने पोते तापमां रहे छे; तथा परोपकारने माटेज फळे छे, पोताने माटे फळता नथी."

भीष्मग्रीष्मखरांशुतापमसमं वर्षांबुतापक्लमं
भेदच्छेदमुखं कदर्थनमलं मर्त्यादिभिर्निर्मितम् ।
सर्वग्रासिदवानलप्रसमरज्वालोत्करालिंगनं
हंहो वृक्ष सहस्व जैनमुनिवद्यत्त्वं क्षमैकाश्रयः ॥ ३ ॥

भावार्थ–" हे वृक्ष ! तुं जैन साधुनी जेम क्षमानो अद्वितीय आश्रय छे, माटे ग्रीष्म ऋतुना अत्यंत तीक्ष्ण सूर्यनां किरणो सहन कर, वर्षा ऋतुना जळथी उत्पन्न थता क्लेशने सहन कर, मनुष्यादिके भेदन, छेदन विगेरे

नास्य भारग्रहे शक्तिर्न च वाहगुणक्रिया ।
देवागारबलीवर्दस्तथाप्यश्नाति भोजनम् ॥ १ ॥

भावार्थ--"तमे कह्या तेवा निर्गुण मनुष्यमां मारी जेवी भार उपाडवानी शक्ति नथी. वहन करवानो कांइ गुण नथी, तोपण महादेवना पोठीआनी जेम ते बेठो बेठो भोजन करे छे;" अने हुं तो

गुरुशकटधुरंधरस्तृणाशी
समविषमेषु च लांगलापकर्षी ।
जगदुपकरणं पवित्रयोनि-
र्नरपशुना कथमुपमीयते गवेंद्रः ॥ २ ॥

भावार्थ-मोटा गाडानी धुसरीने धारण करुं छुं, घास खाइने जीवुं छुं, सम विषम स्थानमां हळ खेंचुं छुं, एवी रीते जगतनो उपकार करुं छुं. वळी मारुं उत्पत्तिस्थान गाय रूपी पवित्र छे. माटे नरपशुनी साथे मारी बळदनी उपमा केम आपो छो?"

आ प्रमाणे होवाथी तेवा मनुष्योने पशुनी उपमा पण योग्य नथी.

पछी आचार्य " येषां न विद्या० " ए श्लोक बोलतां चोथा पदमां "मनुष्य रूपेण तृणोपमानाः" एटले " तृण जेवा छे" एम बोल्या. ते सांभळीने तृण बोल्युं के--

गवि दुग्धकरं ग्रीष्मे, वर्षाहेमंतयोरपि ।
नृणां त्राणमहं कुर्वे, तत्समं च कथं मम ॥ १ ॥

भावार्थ-"हुं गायने विषे दूध उत्पन्न करुं छुं, अने शियाळामां, उनाळामां तथा चोमासामां सर्व ऋतुमां मनुष्योनुं रक्षण करुं छुं, तो मने निर्गुण पुरुषनी सरखुं केम कहोछो? " वळी-

रूढस्य सिंधुतटमनुगतस्य तृणस्यापि जन्म कल्याणम् ।
यत्सलिलमज्जदाकुलजनहस्तावलंबनं भवति ॥ २ ॥

भावार्थ-" समुद्रने कांठे उगेला अने नीचे नमेला तृणनो जन्म पण कल्याणकारी छे, केमके जळमां डुबवाथी व्याकुळ थयेला माणसोने ते हस्तना अवलंबन रूप थाय छे."

तथा समरांगणमां मुखने विषे तृण राखवाथी ते माणसने कोइ पण हणतुं नथी. वळी-

यस्यैवाहारयोगाज्जगति सुरभयोऽजाविका वा महिष्यः
सर्वाः संप्राप्तभूयो वपुरुपचितिका आज्यदध्नो निदानम्।
क्षीरं लोकाय दद्युः सकलरससहायोनिभूतं तृणं त-
ज्ज्ञानेऽजानंत एते धिगखिलकवयो नीरसं वर्णयंति ॥ ३ ॥

भावार्थ–"जे तृणनुं भक्षण करवाथी जगत्मां गायो, बकरां, घेटां, भेंशो विगेरे सर्वे शरीरमां अति पुष्टि पामीने घी अने दहीं विगेरेना कारण रूप दूध सर्व माणसोने आपे छे, तेवा समग्र रसना मोटा कारण रूप घासने जाणे पोते तेना गुणथी अजाण्या होय तेम कविओ नीरस तरीके वर्णवे छे; माटे तेवा कविओने धिक्कार हो !"

पछी फरीथी सूरि तेज श्लोक बोल्या अने छेवटमां–मनुष्यरूपेण वृक्षा भवंति "मनुष्य रूपे करीने वृक्षो रहेलां छे" एम बोल्या. त्यारे कोइ वृक्ष मनुष्यभाषाए बोल्युं के–

छायां कुर्मो वयं लोके, फलपुष्पाणि दद्महे ।
पक्षिणां च सदाधारं, गृहादीनां च हेतवे ॥ १ ॥

भावार्थ–"अमे सर्वने छाया करीए छीए, फळ, फूल विगेरे आपीए छीए, अने पक्षीओने घर करवा माटे निरंतर आधार आपीए छीए."

वळी फरीथी युक्ति पूर्वक कहे छे–

छायामन्यस्य कुर्वंति, स्वयं तिष्ठंति चातपे ।
फलंति च परार्थे च, नात्महेतोर्महाद्रुमाः ॥ २ ॥

भावार्थ–"महा वृक्षो अन्यने छाया करेछे अने पोते तापमां रहे छे; तथा परोपकारने माटेज फळे छे, पोताने माटे फळता नथी."

भीष्मग्रीष्मखरांशुतापमसमं वर्षांबुतापक्रमं
भेदच्छेदसुखं कदर्थनमलं मर्त्यादिभिर्निर्मितम् ।
सर्वग्रासिदवानलप्रसृमरज्वालोत्करालिंगनं
हंहो वृक्ष सहस्व जैनमुनिवद्यत्त्वं क्षमैकाश्रयः ॥ ३ ॥

भावार्थ–"हे वृक्ष ! तुं जैन साधुनी जेम क्षमानो अद्वितीय आश्रय छे, माटे ग्रीष्म ऋतुना अत्यंत तीक्ष्ण सूर्यनां किरणो सहन कर, वर्षा ऋतुना जळथी उत्पन्न थता क्लेशने सहन कर, मनुष्यादिके भेदन, छेदन विगेरे

विविध प्रकारे करेली कदर्थना सहन कर, तथा सर्वेनुं भक्षण करनारा दावानळनी प्रकाशित ज्वाळासमूहने आलिंगन करवानुं दुःख पण सहन कर."

वृक्षनो आवो उत्तर सांभळीने सूरिए कह्युं के–मनुष्यरूपेण हि धूलिपुंजाः– गुणरहित मनुष्यो "मनुष्यना रूपे करीने धूळना ढगला छे." ते सांभळीने धूलि बोली के–

> कारयामि शिशुक्रीडां, पंकनाशं करोमि च ।
> मत्तोऽजनि रजःपर्व, वर्षे क्षिप्तं फलप्रदम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"हुं बाळकने क्रीडा करावुं छुं, पंकनो नाश करुं छुं, माराथीज होळीनुं पर्व थयुं छे, अने मने खेतरमां नांखवाथी सारा पाक थाय छे."

> धूलिर्मूलपदार्थसार्थजननी स्तंभाद्यवष्टंभदा
> लेखाश्लेषकरी करीश्वरकरासंगिन्यवश्यं प्रिया ।
> गंधं दूरकरी शिशोः सुखकरी कालत्रयेऽपि स्थिरा
> तस्माद्धूलिसमं न चास्ति किमपि क्षेप्या मुखे पापिनाम् २

भावार्थ—"धूळ सर्व मूळ पदार्थोने उत्पन्न करनारी छे, थांभला विगेरेने आधार आपनारी छे, लखेला लेखने सुकववा माटे तेनो आश्लेष करनारी छे, हाथीनी सुंढनो संग करनारी होवाथी तेने अति प्रिय छे, दुर्गंधने दूर करनारी छे, बाळकने सुख करनारी छे, त्रणे काळने विषे स्थिर रहेनारी छे; माटे धूलि समान कोइ पण नथी. ते पापीओना मुखपर नांखवा योग्य छे."

सूरिए फरीथी तेज श्लोकना चोथा पादमां कह्युं के– मनुष्यरूपा भषणस्वरूपाः । "तेओ मनुष्य रूपे करीने कूतरा जेवा छे." ते सांभळीने कूतरो बोल्यो के–

> स्वामिभक्तः सुचैतन्यः, स्वल्पनिद्रः सदोद्यमी ।
> अल्पसंतोषवानस्मि, तस्मात्तत्तुल्यता कथम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"हुं स्वामीनी भक्तिवाळो, तरत चेतवा वाळो, स्वल्प निद्रावाळो, निरंतर उद्यमी अने थोडाथी संतोषी छुं तेथी तेवा निर्गुण मनुष्यनी सदृश हुं शी रीते ?" एनी उपर एक दृष्टांत कहे छे के–

अयोध्या नगरीमां गोविंदचंद्र नामे राजा हतो, तेनो मंत्री आनंद नामनो हतो, ते अति पापीष्ट हतो. ते लोकोने घणी पीडा करतो हतो, तेथी राजाए तेने मारीने उकरडामां दटाव्यो. तेने खावा माटे बे कूतराए आवी खोदीने काढ्यो. पछी तेमांथी मोटा कूतराए नानाने कह्युं के "एने भक्षण कर मा."केमके–

हस्तौ दानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सत्यंवचोद्रोहिणौ
चक्षुः साधुविलोकनेन रहितं पादौ न तीर्थाध्वगौ ।
लंचालुंचितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो
भ्रातः कुर्कुर मुंच मुंच सहसा निंद्यं वपुः सर्वदा॥१॥

भावार्थ—"तेना हाथ दानथी रहित छे, तेना कान सत्यवचन श्रवण करवामां द्वेषी छे, तेनां नेत्रो साधु पुरुषना दर्शनथी रहित छे, तेना चरण तीर्थमार्गे गया नथी, तेनुं पेट लांचथी लुंटी लीधेला द्रव्यथी पूर्ण छे, अने तेनुं मस्तक गर्वथी उन्नत छे, माटे हे भाइ कुर्कुर ! सर्वदा निंदवा लायक आ शरीरने तुं जलदी मूकी दे, मूकी दे."

आवी परीक्षा करवामां चतुर जे कूतरो ते निर्गुण पुरुषनी तुल्य शी रीते थाय ?

पछी प्रवीण सूरिए ते श्लोकना चोथा पादमां कह्युं के–मनुष्य रूपेण खराश्चरंति । "तेओ मनुष्यरूपे गधेडा छे." ते सांभळीने गर्दभ बोल्यो के–

शीतोष्णं नैव जानामि, भारं सर्वं वहामि च ।
तृणभक्षणसंतुष्टः, प्रत्यहं भद्रकाकृतिः ॥ १ ॥

भावार्थ—"हुं शीत के उष्ण कांइ जाणतो नथी, सर्व प्रकारनो भार वहन करुं छुं, तृणना भक्षणथी संतोषी छुं, अने निरंतर (भद्रक) भोळी आकृतिवाळो छुं."

" माटे मारी उपमा निर्गुण पुरुषने घटे नहीं."

फरीथी सूरिए कह्युं के– ते मनुष्यरूपेण भवंति काकाः । "तेओ मनुष्य रूपे कागडा छे." त्यारे कागडो बोल्यो के–

प्रियं दूरं गतं गेहे, प्राप्तं जानामि तत्क्षणात् ।
न विश्वसामि कस्यापि, काले चालयकारकः ॥ १ ॥

भावार्थ—"दूर देश गयेला पतिने घेर आवतो जाणीने तुरत कहुं छुं, कोइनो विश्वास करतो नथी, अने वर्षाकाळमां माळो बांधीने रहुं छुं."

कोइ स्त्रीए कागडाने सोनाना पांजरामां राखेलो जोइ तेनी सखीए पूछ्युं के पोपटने तो सौ पांजरामां राखे छे पण तें आवा कागडाने केम राख्यो छे? एटले ते बोली—

अत्रस्थः सखि लक्षयोजनगतस्यापि प्रियस्यागमं
वेत्त्याख्याति च धिक् शुकादयइमे सर्वे पठंतः शठाः।
मत्कांतस्य वियोगतापदहनज्वालावलीचंदनं
काकस्तेन गुणेन कांचनमये व्यापारितः पञ्जरे॥ २ ॥

भावार्थ—"हे सखी ! कागडो लाख योजन दूर रहेला पतिनुं आगमन अहीं बेठां जाणे छे, अने कहे छे; आ पोपट विगेरे सर्वे भण्या छे, पण शठ छे; अने आ कागडो तो मारा पतिना वियोगताप रूपी अग्निनी ज्वाळावळीमां चंदन समान छे. माटे ते गुणने लीधे में सुवर्णना पांजरामां तेने राख्यो छे."

फरीथी कवि कहेछे के—मनुष्यरूपेण हि ताम्रचूडाः। "तेओ मनुष्य रुपे करीने कुकडा छे." ते सांभळीने कुकडो कहे छे के—मारा गुण सांभळो—एक कविए मारा विषे कह्युं छे के—

भो लोकाः सुकृतोद्यता भवत तं लब्ध्वा भवं मानुषं
मोहांधाः प्रसरत्प्रमादवशतो माहार्यमाहार्यथा ।
इत्थं सर्वजनप्रबोधमधुरो यामेऽर्धयामे सदा
कृत्वोर्ध्वं निजकंधरं प्रतिदिनं कोकूयते कुर्कुटः ॥१॥

भावार्थ—"हे लोको ! मनुष्यभव पामीने तमे सत्कृत्य करवामां उद्यमी थाओ, प्रसार पामता प्रमादना वशथी मोहांध थइने मनुष्यभव व्यर्थ हारी

नहीं, हारो नहीं. आ प्रमाणे सर्व लोकने प्रबोध करवामां निपुण एवो कुकडो हमेशां पहोरे ने अडधे पहोरे पोतानुं मस्तक उंचुं राखीने बोले छे."

में कु कहेतां पृथ्वीमां कु कहेतां खराब (कुत्सित) कु कहेतां कर्युं तेथी हुं पक्षी थयो, तेना निवारण माटे हुं प्रातःकाळे "कू कू कू" एवो शब्द करीने सर्वने सुकृत्य करवा जागृत करुं छुं, तो मारी समान निर्गुण माणस शी रीते ?

फरीथी पंडिते कह्युं के–मनुष्यरूपेण चोष्ट्राश्चरंति । "तेओ मनुष्य रूपे उंट छे." त्यारे उंट बोल्यो के––मारे माटे एक कविए कह्युं छे के–

वपुर्विषमसंस्थानं, कर्णज्वरकरो रवः ।
करभस्याशु गत्यैव, छादिता दोषसंततिः ॥ १ ॥

भावार्थ–"शरीर विषम संस्थानवाळुं छे. शब्द कर्णने कठोर लागे तेवो छे, तोपण उंटनी गति शीघ्र होवाथी तेना दोषनो समूह ढंकाइ जाय छे."

माटे हुं चंदननी जेम मात्र एक शीघ्र गति रूप गुणथीज राजाने पण मान्य छुं.

ते सांभळी पंडिते फरीथी कह्युं के– मनुष्यरूपेण च भस्मतुल्याः "तेओ मनुष्यरूपे राख समान छे." ते सांभळीने राख बोली के—

मूढकमध्ये क्षिप्ता, करोम्यहं सकलधान्यरक्षां द्राक् ।
मानं ददते मनुजा, मुखशुद्धिकरी सुगंधा च ॥ १ ॥

भावार्थ–" मने धान्यना मोटा समूहमां नांखी होय, तो हुं सर्व धान्यनी रक्षा करुं छुं. वळी हुं मुखने शुद्ध करुं छुं तथा सुगंधी छुं, माटे मनुष्यो मने मान आपे छे."

फरीथी पंडित बोल्या के–मनुष्यरूपाः खलु मक्षिकाः स्युः "तेओ मनुष्य रूपे करीने माखी जेवा छे." ते सांभळीने माखी कहे छे के–

सर्वेषां हस्तयुक्त्याहं, बोधयामि निरंतरम् ।
ये धर्मं नो करिष्यंति, ते हस्तौ घर्षयंति वै ॥ १ ॥

भावार्थ–"हुं मारा आगळना हाथ घसवानी युक्ति (निशानी) वडे माणसोने हमेशां बोध आपुं छुं के–जेओ मारी पेठे पाम्या छतां धर्म करशे नहीं तेओ हाथ घसता रहेशे."

एकदा भोज राजाए सभामां विद्वानोने पूछ्युं के-"माखी पोताना आगळना बे हाथ शामाटे घसे छे ?" त्यारे पंडितो बोल्या के-

देयं भोज धनं धनं सुविधिना नो संचितव्यं कदा
श्रीकर्णस्य बलस्य विक्रमनृपस्याद्यापि कीर्तिर्यतः ।
येनेदं बहु पाणिपादयुगलं घृष्यंति भो मक्षिका
अस्माकं मधु दानभोगरहितं नष्टं चिरात् संचितम् ॥ १ ॥

भावार्थ-"हे भोज राजा ! मळेला द्रव्यनुं विधि पूर्वक निरंतर दान देवुं, पण कदापि द्रव्यनो संग्रह करवो नहीं. दानना प्रभावथी कर्ण, बळ अने विक्रम राजानी कीर्ति हजु सुधी जगतमां जागृत छे. आ प्रमाणे कहेती एवी माखीओ पोताना हाथपग घसती सती जणावे छे के-"अहो ! अमे घणा काळथी संग्रह करेला मधनो दानभोग न कर्यो तो ते परिणामे नाश पाम्युं."

इत्यादि युक्तिथी श्रीकाळिकाचार्ये प्रतिबोध पमाडेला शालिवाहन राजा विगेरे लोको दान शीलादिक धर्ममां तत्पर थया.

"सर्व भवमां मनुष्यभव दुर्लभ छे. तेमां पण धर्म तथा गुण विगेरेनी प्राप्ति अति दुर्लभ छे. आ प्रमाणेना श्री काळिकाचार्यना उपदेशथी प्रतिबोध पामीने शालिवाहन राजा दानादिक गुणोने जाणी, तेने धारण करीने शोभतो हतो."

व्याख्यान २३४ मुं.

बाह्यभावथी वांदवानी निष्फळता विषे.

बाह्याचारेण संयुक्तः, करोति द्रव्यवंदनम् ।
तन्न प्रमाणमायाति, साफल्यं भाववंदनम् ॥ १ ॥

भावार्थ--" बहारना आचार सहित जे द्रव्यवंदन करे छे ते प्रमाण नथी अर्थात् तेनुं फळ नथी, पण भाववंदनज सफळ छे."

आ विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

कोइ एक राजानो पुत्र शीतल नामे हतो. ते बाल्यावस्थाथीज वैराग्यवाळो हतो. एक वखते गुरुने वांदीने ते देशना सांभळवा बेठो. ते प्रसंगे गुरुए कह्युं के-"कोइ एक वनमां रहेनार तापस लोकना आमंत्रणथी गाममां आवीने मासक्षपणनुं पारणुं करतो हतो, परंतु गाममां कोइ पण स्त्रीनुं मुख जोतो नहीं; तेथी तेनी सन्मुख आवती स्त्रीओने तेनी आगळ चालता छडीदारो दूर खसेडता हता. आ प्रकारनी स्त्रीओनी विडंबना थती सांभळीने कोइ वेश्याए विचार्युं के-"अहो ! केवी कपटजाळ ! लोकने रंजन करवा माटे केवो दंभ राखे छे ?" एम धारीने तेणे तापसने बोध करवानो निश्चय कर्यो. पछी एक दिवस ते तापस राजाने घेर पारणुं करवा जतो हतो, ते अवसरे तेने पालखीमां बेसीने रस्तामां आवतो जोइने ते वेश्या तेनी सन्मुख चाली. तेने सीपाइओए अटकावी, पण ते खसी नहीं, अने तापसनी पासे आवीने तेना माथामां पोतानी आंगळीवडे टकोरा मार्या, तेथी ते गुस्से थयो; अने ते वेश्याने क्रोधदृष्टिथी जोतो, मनमां कांइक बडबडतो, अने मुखथी "हरि ! हरि ! विष्णु ! विष्णु !" एम बोलतो स्नान करवा माटे पाछो वळ्यो; केमके " वेश्यानुं दर्शन थयुं माटे स्नान करवुं जोइए " एवो तेनो आचार हतो. ते सर्व वृत्तांत जाणीने राजाए ते वेश्याने बोलावीने तेम करवानुं कारण पूछ्युं. त्यारे वेश्याए कह्युं के-"तापस आवशे त्यारे कहीश." पछी फरीथी स्नान करीने ते तापस राजाने घेर आव्यो अने वेश्या सामुं न जोतां आंख मींचीने जमवा लाग्यो. त्यारे वेश्याए कह्युं.–

आंख म मींची जम जमन,
नयन नीहाली जोय;

अप्पइ अप्पा जोयइ,
अवर न वीजो कोइ.

"आंख मींचीने जमवा मांड नहीं, आंख उघाडीने जो; तारा आत्मावडे मारा आत्माने जो एटले जणाशे के हुं पण आत्माज छुं, बीजुं कांइ नथी; माटे फोगट दंभ कर नहीं."

आ प्रमाणे सांभळीने ते तापस बोध पाम्यो, तथा बीजा राजा विगेरे सर्व लोक पण बोध पाम्या. माटे हे शीतल कुमार ! आत्मानुं दमन करवुं तेज श्रेष्ठ धर्म छे." इत्यादि देशना सांभळीने शीतल कुमारे बोध पामी दीक्षा लीधी अने बे प्रकारनी शिक्षा[1] ग्रहण करी.

शीतल कुमारने गुणवती नामे एक बेन हती. ते पृथ्वीपुरना प्रियंकर नामना राजाने परणावी हती. तेने चार पुत्रो थया हता. सुतां, उठतां, बेसतां, जमतां वगेरे दरेक वखते तेओनी पासे गुणवती पोताना भाइ शीतल मुनिनी वारंवार प्रशंसा करती अने कहेती के–"दुनियामां तमारो मामोज धन्य छे, के जेणे मुनिपणुं अंगीकार कर्युं छे." तेवुं सांभळीने ते चारे जण कामभोग थकी विरम्या, अने कोइ स्थविर मुनि पासे दीक्षा लीधी. अनुक्रमे ते चारे बहुश्रुत थया. पछी तेओ गुरुनी रजा लइने पोताना मामा शीतलाचार्यने वांदवा चाल्या. चालतां चालतां मामाना चरणकमळथी पवित्र थयेला नगर नजीक आवी पहोंच्या. तेवामां रात्रिनो समय थइ गयो, एटले गामनी बहार कोइ देवकुळमांज रात्रि रह्या; अने गाममां जता एक श्रावकनी साथे तेमणे मामाने कहेवराव्युं के–"तमारी बेनना पुत्रो दीक्षित थइने तमोने वांदवा आव्या छे, पण दिवस वीती जवाथी गाममां प्रवेश कर्यो नथी." एवुं सांभळीने शीतलाचार्य हर्ष पाम्या. ते चारे मुनिओने रात्रिमां शुभ अध्यवसायथी केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. अहीं प्रातः-काळे आचार्य तेओनी राह जोइने बेठा, अने चोतरफ जोवा लाग्या पण तेओ तो आव्या नहीं; एटले थोडी वार राह जोइने पछी शीतलाचार्य पोतेज उठीने गाम बहार आव्या. तेने जोइने केवळी मुनिओ वीतराग थयेला होवाथी उभा थया नहीं के सत्कार पण कर्यो नहीं; एटले आचार्य गमनागमन आलोवीने अर्थात् इर्यावही पडिक्कमीने बोल्या के–"प्रथम कोने नमुं अने वांदुं ?" तेओ बोल्या के–"जेम तमारी इच्छा." ते सांभळी सूरिए विचार्युं के–"अहो ! आ शिष्यो

---

१ ग्रहणा ने आसेवना.

केवा धृष्ट छे ? जरा लाजता पण नथी." एम विचारीने क्रोधथी चारे मुनिने वांदीने वांदणा दीधां; पण केवळीओ तो षट्स्थानमां रहेला कषाय कंडकवडे[1] ते वांदेछे एम जाणता हता. तेना वांदी रह्या पछी ज्ञानीए आचार्यने कह्युं के– "तमोए कषाय कंडकनी वृद्धिवडे द्रव्यथी वंदन कर्युं, हवे भावथी वंदन करो." ते सांभळीने सूरि बोल्या के– "द्रव्य वंदन तथा भाव वंदन केम जाण्युं ? अने कषाय कंडकनी वृद्धि शी रीते जाणी? शुं कांइ अतिशय ज्ञान पाम्या छो ?" केवळीए "हा" कही. एटले सूरिए फरीथी पूछ्युं के–"छाद्मस्थीक ज्ञान के केवळज्ञान ? " त्यारे तेओए जवाब आप्यो के– "सादि अनंत भांगे केवळज्ञान." ते सांभळीने आचार्य हर्षथी रोमांचित थया सता विचार करवा लाग्या के–"अहो ! में मंद भाग्यवाळाए सर्वदर्शी सर्वज्ञनी आशातना करी." एम विचारीने संवेग पाम्या, अने भाव पूर्वक वंदना करतां तेज कषाय कंडक स्थानथी पाछा फर्या, ते अपूर्व करण नामना गुण स्थानकमां पेठा; अने क्षपकश्रेणी मांडी केवळज्ञानना भाजन थया. गुरुने वांदवानी विधि श्रीगुरुवंदन भाष्यमां बतावी छे ते आ प्रमाणे–

पण नाम पणाहरणा, अजुग्ग पण जुग्ग पण चउ अदाया ॥
चउ दाया पण निसेहा, चउ अणिसेहठ्ठ कारणया ॥ १ ॥

भावार्थ–१"वंदनना पांच नाम छे, २ तेनी उपर पांच उदाहरण छे, ३ पांच वांदवाने अयोग्य छे, ४ पांच वांदवा योग्य छे, ५ चार वांदणा आपे नहीं, ६ चार वांदणा आपे, ७ पांच वखते वांदवानो निषेध छे, ८ चार वखते अनिषिद्ध छे, ९ वांदवामां आठ कारण छे,"

आवस्सय मुहणंतय, तणु पेह पणिस दोस बत्तीसा ।
छ गुण गुरु ठवण दुग्गह, दुछविसरकर गुरु पणिसा ॥ २ ॥

भावार्थ–" १० वांदवामां पचीश आवश्यक जाळववाना छे, ११ पचीश मुहपत्तीनी पडिलेहण छे,१२ पचीश शरीरनी पडिलेहण छे,१३ उपरांत बत्रीश दोष, १४ छ गुण, १५ आचार्यनी स्थापना, १६ बे प्रकारना अवग्रह, १७ वांदणामां बसें ने छवीश अक्षर तेमां पचीश गुरु अक्षर,"

---

१ आ षट्स्थान कंडकादिनो विस्तार श्रीकम्मपयडीनी टीकाथी जाणवो. अनुभाग बंधना विवरणमां ते अधिकार छे.

पय अडवन्न छट्ठाण, छ गुरुवयणासायण तित्तीसं ।
दु विही दुवीस दारेहिं, चउसया बाणउइ ठाणा ॥ ३ ॥

भावार्थ-१८ "अठ्ठावन पद, १९ छ स्थान, २० छ गुरुवचन, २१ तेत्रीश आशातना, २२ अने बे विधि; आ प्रमाणे बावीश द्वार कहेला छे, तेना उत्तर-स्थान चारसें बाणुं थाय छे.

आ प्रमाणे चारसें बाणुं स्थाननी शुद्धि पूर्वक गुरुवंदना करवानी छे. उपर जे वांदणानां पांच नाम कह्यांछे ते नीचे प्रमाणे-

वंदणयं चिइकम्मं, किइकम्मं विणयकम्मं पूअकम्मं ।
गुरुवंदण पण नामा, दव्वे भावे दुहाहरणा ॥ ४ ॥

भावार्थ-"वंदनक, चितिकर्म, कृतिकर्म, विनयकर्म अने पूजाकर्म ए गुरुवंदन करवानां पांच नाम छे. ते पांचेनी उपर द्रव्य भाव बंने प्रकारना उदाहरणो छे."

पांच उदाहरणनां नाम नीचे प्रमाणे-

सीयलय खुड्डूए वीर, कन्ह सेवगदु पालयेसंबे ।
पंचे ए दिठ्ठंता, किइकम्मे दव्वभावेहिं ॥ ५ ॥

भावार्थ-"शीतलाचार्य, क्षुल्लक सूरि, वीरो साळवी अने कृष्ण वासुदेव, बे सेवक, तथा पालक अने सांब. ए पांचे द्रव्य भावे करीने पांच प्रकारनां कृतिकर्म उपरनां दृष्टांतो छे."

तेमां शीतलाचार्यनुं उदाहरण उपर कही गया छीए अने क्षुल्लक सूरिनुं दृष्टांत एवुं छे के-एकदा क्षुल्लक सूरि गच्छना व्यवहारथी उद्वेग पामीने छुटा पडवानी इच्छाथी वनमां गया. त्यां चंपा विगेरे उत्तम वृक्षोथी वींटायेला खीजडीना वृक्षने पूजातुं जोइने प्रतिबोध पाम्या, अने वनमांथी पाछा फर्या. तेणे विचार कर्यो के-"चंपकादि उत्तम वृक्ष जेवा बहुश्रुत मुनिओ छे, अने हुं तो खीजडीना वृक्ष जेवो छुं. तेओ पूज्य छतां उलटा मने वांदे छे; कारणके गुरुए मने आचार्यपदवी आपी छे."

आ चितिकर्म उपर उदाहरण जाणवुं. बाकीनां त्रण उदाहरण विगेरे श्रुतरूपी मंजुषामांथी जाणी लेवां. " कषाय कंडकनी वृद्धि पूर्वक शीतलाचार्यनी

१ गुरुवंदन भाष्यनी टीका विगेरेमां तेनो विस्तारछे. अहीं आपेली पांचे गाथाओ गुरुवंदन भाष्यनीज छे.

जेम जे द्रव्य वंदन करे ते निरर्थक छे, अने भावपूर्वक करेली वंदना मोक्ष आपे छे. जुओ, पाछळथी शीतलाचार्ये भाववंदन कर्यु तो तेथी केवळज्ञान प्राप्त कर्यु."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य चतुस्त्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३४ ॥

व्याख्यान २३५ मुं.

ज्ञानविज्ञानयुक्तक्रियाविषे.

ज्ञानविज्ञानसंयुक्ता, या क्रियात्र विधीयते ।
सावश्यं फलदा पुंसां, द्वाभ्यामुक्तमतः शिवम् ॥ १ ॥

भावार्थ–" ज्ञान अने विज्ञान सहित जे क्रिया कराय छे, ते पुरुषोने अवश्य फळ आपनार थाय छे; एज कारणथी ज्ञान अने क्रिया ते बन्नेवडे मोक्ष कहेलो छे."

दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

श्रीनिर्ग्रंथ गच्छमां धर्मबुद्धि नामे एक नाना साधु हता. ते शास्त्रना अभ्यासमां कुशळ हता. पण १ हेय, २ ज्ञेय, ३ उपादेय, ४ उत्सर्ग अने ५ अपवादना स्वरूपने समजीने तेनुं यथायोग्य स्थापन करी जाणता नहोता. तेणे धर्मबुद्धिथी चातुर्मासमां एवो अभिग्रह कर्यो के–" आ चातुर्मासमां मारे ग्लान (मांदा) साधुनी वैयावृत्य करवी." पण ते चोमासामां कोइ साधु मांदा थया नहीं, अने कोइनी सेवा करवानो समय आव्यो नहीं. तेथी ते मुनि खेद सहित विचार करवा लाग्या के–" बीजा सर्व साधुओना अभिग्रह पूर्ण थया, पण मारो अभिग्रह पूर्ण थयो नहीं." आ प्रमाणे मनथी चिंतव्युं, तेथी तेने पाप लाग्युं. अन्यदा तेणे ते वात गुरुने कही के–"हे स्वामी ! आ चोमासामां कोइ पण साधु मांदा पड्या नहीं, तेथी मारो अभिग्रह पूर्ण न थवाथी मने शोक थाय छे." ते सांभळीने गुरुए कह्युं के–" दरेक क्रिया ज्ञान विज्ञान सहित करवाथीज ते फळीभूत थाय छे ते विषे एक व्यवहारिक दृष्टांत सांभळ–

कोइ श्रेष्ठीए एक वखत केटलाक क्षत्रियोने पोताना घरमां जमवा बेसाड्या. ते घरमां उंचे एक घडो बांधेलो हतो. ते घडामां सर्व वस्तुनो संग्रह करनार श्रेष्ठीए पोताना घरमांथी नीकळेलो सर्प नांख्यो हतो. " ते घडामां सुवर्णना अलंकारो हशे " एम धारीने ते क्षत्रियो रात्रिमां चौरवृत्तिथी तेना घरमां पेसी ते घडो लइ गया. पछी घडो उघाडीने तेमां हाथ नाख्यो, एटले सर्पना करडवाथी अनुक्रमे तेओ सर्व मरी गया. माटे हे शिष्य ! ते क्षत्रियो ज्ञान विज्ञान रहित हता तेथी समज्या नहीं के आम छूटा घडामां अलंकार होय नहीं, तेथी तेओ दुःखी थया. आ दृष्टांतनो सार ए छे के–" पढमं नाणं तओ दया " एटले "प्रथम ज्ञान अने पछी दया " इत्यादि युक्ति पूर्वक दृष्टि पडिलेहणादि सर्व क्रिया ज्ञान-विज्ञानवडेज फळीभूत थाय छेः " वळी गुरुए कह्युं के–

यादृशं तादृशं वापि, पठितं न निरर्थकम् ।
यदि विज्ञानमभ्येति, तदैव फलति ध्रुवम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"गमे तेवुं अध्ययन कर्युं होय ते निरर्थक थतुं नथी; परंतु ज्यारे विज्ञानयुक्त थाय छे त्यारेज तेनुं फळ मळे छे. "

एक राजा हतो. ते जे कोइ नवी कविता करी लावे तेने पांचसो दिनार इनाम आपतो. एकदा एक सरोवरने कांठे कोइ मूर्ख ब्राह्मणे बे बळद बांध्या हता. त्यां पाणी पीवा माटे एक मोटो मदोन्मत्त आखलो आव्यो. ते पाणी पीतां पीतां पगवडे पृथ्वी खोदतो हतो. ते जोइने ब्राह्मणे एक कविता करी के-घसे घसे ने अति घसे, उपर घाले पाणी; जीणे कारण ए घसे घसावे, ते वात में जाणी. एटले मारा बळदने मारवानी तारी इच्छा छे, ए वात में जाणी. पछी ते ब्राह्मण ते कविता लइने राजा पासे गयो. राजाए तेने पांचसो सोना-महोर आपी. ते लइने हर्ष पामतो ब्राह्मण घेर गयो. पछी आवो राजानो खर्च नहीं सहन थवाथी मंत्रीए राजपुत्रनी संमतिथी राजाने मारी नांखवा माटे एक हजामने मोकल्यो. ते हजाम दाढी मुंडवाना मिषथी राजा पासे गयो, अने राजाना कंठमां सजायो मारवाना विचारथी ते हजाम सजायाने तीक्ष्ण करवा माटे पथ्थर पर पाणी नांखीने खुब घसवा लाग्यो. ते वखते काळ निर्गमन करवा माटे राजा पोताना हाथथी भींत पर लखेली पेला ब्राह्मणवाळी कविता बोल्यो. ते सांभळीने अर्थना प्रगटपणाथी हजामे विचार्युं के–"राजाए मारो हेतु जाणी लीधो." एटले ते हजाम भयथी राजाना पगमां पडीने बोल्यो के–" हे

स्वामी ! आमां मारो दोष नथी. पण तमारा पुत्रे तथा प्रधाने मने एम करवा कह्युं छे." ते सांभळीने राजाए आश्चर्य पामी सर्व वृत्तांत हजाम पासेथी जाणी लीधुं. पछी हजामने अभयदान आपीने पोते मौनज रह्यो. अनुक्रमे प्रधानने तथा पुत्रने योग्य शिक्षा करीने निर्भय थयो.

आ प्रमाणे एक साधारण कविताथी पण राजा मरतां बच्यो. हे शिष्य ! आ दृष्टांतनो सार ए छे के–साधुओए गमे तेवुं वाक्य सांभळ्युं होय अथवा अध्ययन कर्युं होय पण तेनो उपयोग स्याद्वाद मार्गे करवो; तेथी तेतुं सर्व भणेलुं गुणकारी थाय छे.

वळी हे शिष्य ! विद्या तो अवश्य ग्रहण करवी. विद्या विना वखत आवे मुंझावुं पडे छे. ते उपर एक दृष्टांत सांभळ–

कोइएक दरिद्री पुरुष द्रव्य उपार्जन करवा माटे विविध उपाय करतो पृथ्वीपर भटकतो हतो, पण कांइ मेळवी शक्यो नहोतो. एक दिवस कोइ विद्यासिद्ध पुरुष हाथमां एक घडो राखी तेनी पूजा करी बोल्यो के–" हे कुंभ ! शय्या, भोजन, स्त्री इत्यादि सर्व सामग्री सहित एक महेल बनाव." ते सांभळीने ते काम कुंभे सर्व करी दीधुं. पछी प्रातःकाळे ते सर्वनो उपसंहार करी दीधो. ते बधुं जोइने पेला दरिद्री ब्राह्मणे विचार्युं के–" मारे बीजो निष्फळ उद्यम शा माटे करवो जोइए ? आ विद्यासिद्धनीज सेवा करुं, तो सर्व दारिद्र्यनो नाश थशे." एम विचारीने ते सिद्धनी विविध प्रकारनी सेवा करीने तेने प्रसन्न कर्यो. एटले एक दिवस सिद्धे कह्युं के–"तारी शी इच्छा छे ?" त्यारे ब्राह्मणे पोतानी दरिद्री अवस्था जणावी. ते सांभळीने सिद्धे विचार्युं के–

व्रतं सत्पुरुषाणां च, दीनादीनामुपक्रिया ।
तदस्योपकृतिं कृत्वा, करोमि सफलं जनुः ॥ १ ॥

भावार्थ–" दीन पुरुषोनो उपकार करवो तेज सत्पुरुषोनुं व्रत छे, माटे आ ब्राह्मणनो उपकार करीने मारो जन्म हुं सफळ करुं."

एम विचारीने ते सिद्धे ब्राह्मणने कह्युं के–" विद्याथी साधेलो कुंभ आपुं के विद्या आपुं ?" ते सांभळीने विद्या साधवामां बीकण अने कामभोग मेळववामां उत्सुक एवा ते ब्राह्मणे कह्युं के–" विद्याथी साधेलो कुंभज आपो." एटले सिद्धे तेने कामकुंभ आप्यो. ते लइने दरिद्री जलदीथी पोताना गाममां

गयो. कुंभना प्रभावथी घर विगेरे मनोरथ प्रमाणे करीने बांधवादि कुटुंब सहित स्वच्छंदपणे भोग भोगववा लाग्यो. तेना बांधवो कोइ खेतीनुं काम करता हता, कोइ पशु चारवानुं काम करता हता, अने कोइ वेपार करता हता. ते सर्व धंधा छोडी दइ मदांध थइने भोग भोगववा लाग्या. एक दिवस सुरापान करीने ते ब्राह्मण खांध उपर कुंभ राखी नृत्य करवा लाग्यो. उद्धताइने लीधे तेना हाथमांथी कुंभ छूटी गयो, अने पृथ्वीपर पडी तेना सेंकडो ककडा थइ गया. ते साथे ते निर्भागीना मनोरथ पण भग्न थइ गया. एटले के कुंभना प्रभावथी उत्पन्न थयेलो घर विगेरे सर्व वैभव इंद्रजाळथी बनावेला नगरनी जेम तत्काळ अदृश्य थइ गयो, अने पोतानी पासे विद्या नहीं होवाथी तेवो नवीन कुंभ करवानी तेनी शक्ति नहोती. तेथी ते नवो कुंभ करी न शक्यो अने सदा दरिद्रीपणाथी व्याकुळ रह्यो.

हे शिष्य! आ दृष्टांतनो सार ए छे के-"ज्ञान विनानी सर्व क्रियाओ निष्फळ छे. जेम आ ब्राह्मणे प्रमादथी विद्या ग्रहण करी नहीं, तेथी ते मंद बुद्धिवाळो आ लोकमांज दुःख पाम्यो; तेम बीजा माणसो पण ज्ञान विना अनेक क्रियाओ करे, तो पण ते अशुद्धज थाय छे."-

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य
पंचत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३५ ॥

व्याख्यान २३६ मुं.

नव नियाणां विषे.

संति नव निदानानि, क्ष्मापः श्रेष्ठी नितंविनी ।
इत्यादीनि च हेयानि, मोक्षकांक्षैर्मुनीश्वरैः ॥ १ ॥

भावार्थ-"राजा, श्रेष्ठी, स्त्री आदि नव नियाणां छे. ते मोक्षनी इच्छावाळा मुनीश्वरोए त्याग करवा लायक छे."

नव नियाणां पाक्षिक सूत्रनी वृत्तिमां आ प्रमाणे कहेलां छे-

निव सिठि इत्थि पुरिसे, परपवियारे सपवियारे ।
अप्पुसरे दरिद्दे, सड्ढे हुज्जा नव नियाणा ॥ १ ॥

भावार्थ-" राजा, श्रेष्ठी, स्त्री, पुरुष, परप्रविचार, स्वप्रविचार, अल्प विकार, दरिद्र अने श्रावक ए प्रमाणे नव नियाणां छे. "

कोइ साधु अथवा साध्वी एवुं निदान करे के-'देव अथवा देवलोक तो साक्षात जोया नथी, माटे राजाओज खरा देव जणाय छे. तेथी जो मारां करेलां तप अनुष्ठान विगेरेनुं फळ होय तो आवता भवमां मने राजापणुं प्राप्त थजो.' पछी ते देवलोकमां जइने राजापणे उत्पन्न थाय छे, परंतु तेने बोधि बीज दुर्लभ थाय छे. आवुं नियाणुं ब्रह्मदत्त चक्रीए पूर्व भवमां कर्युं हतुं. (१)

वळी कोइ एवुं नियाणुं करे के-

बहुचिंता महीनाथो, सुहिया धणिणो इमो ॥
उग्गाणं च सुओ होहं, नीयाणं बीइयं इमं ॥ १ ॥

भावार्थ-"राजाने तो घणी चिंता होय छे, अने धनिक लोको सुखीया होय छे; माटे तेवा उंच कुळमां हुं पुत्र थाउं." एवुं जे चिंतवे ते बीजुं निदान जाणवुं. (२)

वळी कोइ एवुं विचारे के पुरुषपणामां तो व्यापार, संग्राम विगेरे अनेक प्रकारनां कष्ट छे, तेथी स्त्रीनो अवतार मळे तो सारो. आ त्रीजुं निदान समजवुं. ते सुकुमालिका साध्वीए कर्युं हतुं. (३)

कोइ एवो विचार करे के-स्त्रीनो जन्म तो नीच गणाय छे, माटे सर्व कार्य करवामां समर्थ एवा पुरुषभवने हुं पामुं. केमके-

इत्थी सव्वे पराभूया, पराहीणाइदुरिकया ।
कोवि पच्छे नरो होहं, नियाणं तु चतुत्थयं ॥ १ ॥

भावार्थ-" सर्व स्त्रीओ पराभव, पराधीनता विगेरे दुःखवाळी होय छे; माटे पुरुषपणुं पामवुं सारुं छे. आ प्रमाणे जे विचारे ते चोथुं निदान जाणवुं. (४).

मनुष्यना कामभोग अपवित्र छे. मूत्र विष्टादिथी दुर्गंधवाळा छे; माटे देवपणुं सारुं छे. केमके ते देवो पोतानी तथा बीजानी देवीओ भोगवे छे. वळी पोतेज इच्छानुसार देवदेवीनां रूप विकुर्वीने तेनीसाथे भोग भोगवे छे; माटे हुं पण तेवो थाउं. आ प्रमाणे जे नियाणुं करे ते पांचमुं परप्रविचार नियाणुं कहेवाय छे. (५)

जे देवो बीजी देवीओने भोगवे ते पण कष्ट छे. परंतु पोताना रूपनेज देवदेवी रूपे विकुर्वीने जेओ भोग भोगवे छे ते ठीक छे; माटे हुं तेवो थाउं. एवुं जे निदान करे ते स्वप्रविचार नामे छट्ठुं नियाणुं जाणवुं. (६)

देव अने मनुष्यना कामभोगमांथी वैराग्य पामीने कोइ एवुं चिंतवे के-" हुं विषय रहित अल्प विकारवाळो देव थाउं. " एवुं निदान करीने ते तेवो थाय, पण ते त्यांथी च्यवीने मनुष्य थाय त्यारे देशविरति पामे नहीं. (७)

कामभोगमां उद्वेग पामीने कोइ एवुं निदान करे के-" द्रव्यवान पुरुषने राजा, चोर, अग्नि विगेरेथी महाभय होय छे, माटे हुं अल्प आरंभवाळा दरिद्रीना कुळमां उत्पन्न थाउं. ते आठमुं नियाणुं समजवुं. (८)

वळी कोइ एवुं निदान करे के-" मुनिने दान आपवामां प्रीतिवाळो अने बार व्रतने पालन करनार एवो श्रावक हुं थाउं. " ते नवमुं नियाणुं जाणवुं. आ नियाणावाळो देशविरति पामे पण सर्वविरति पामे नहीं. (९)

आ प्रमाणे नव नियाणांनुं स्वरूप जाणीने केटलाएक नमि राजर्षि जेवा उत्तम पुरुषो, इंद्रादिके देवादिकना अनेक प्रकारना सुखथी लोभ पमाड्या छतां पण नियाणुं करता नथी. श्रीमहावीर स्वामीए संगम देवताना करेला अनुकूळ उपसर्गथी पण नियाणुं कर्युं नहीं, अने नंदिषेण मुनिए नियाणुं कर्युं, तेथी ते वसुदेवनो[१] जन्म पाम्या अने अनेक स्त्रीओना स्वामी थया. वळी कोइक जीव समकित रहित होय छतां पण तामलि तापसनी जेम नियाणुं करतो नथी. ते

१ वसुदेव ते कृष्ण वासुदेवना पिता; तेमने ७२००० स्त्रीओ हती.

तामलि तापसनो वृत्तांत एवो छे के—ताम्रलिप्ती नामनी नगरीमां तामलि नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो. तेने एक दिवस रात्रिजागरिका करतां लौकिक वैराग्य उत्पन्न थयो. तेणे विचार्युं के—"हुं पूर्व जन्मना पुण्यथी आ भवमां पुत्र, स्त्री, धन, धान्य, राज्यसत्कार विगेरे अनेक सुख भोगवुं छुं. जन्मथी आरंभीने कोइ वखत एक श्वासोच्छ्वास पण में दुःखे लीधो नथी. तेथी हवे प्रातःकाळे स्वजनोने भोजन विगेरेथी संतुष्ट करी मोटा पुत्रने गृहकार्यनो भार सोंपीने सर्वनी रजा लइ काष्ठनुं पात्र हाथमां राखीने तापसी दीक्षा ग्रहण करीश. पछी हाथ उंचा राखीने सूर्य सन्मुख दृष्टि करी उभो रहीश; जावज्जीव छट्ठ तप करीश. पारणाने दिवसे ते काष्ठपात्र लइने ताम्रलिप्ती नगरीमां उंच नीच अने मध्यम सर्व कुळमां भिक्षा माटे अटन करीश; दाळ तथा शाक रहित मात्र भात जेवुं हविष्यान्न लइने ते अन्नने एकवीश वार जळवडे धोइ तेने नीरस करीने पछी हुं ते अन्न खाइश." इत्यादि विचार करीने प्रातःकाळ थतां तेणे रात्रिनुं चिंतवेलुं सर्व कार्य कर्युं, अने पोतानी उदरपूर्ति थाय तेवडुं काष्ठनुं एक पात्र कराव्युं. तेमां चार खानां पडाव्यां. तेनी अंदर आवेल अन्नमांथी त्रण भाग दानमां आपी चोथा भागवडे पारणुं करवानो निरधार कर्यो; अने अव्यक्त लिंगने तेमज सर्वने प्रणाम करवाना व्रतने अंगीकार करीने ते नदीनी पासे आश्रम करीने तेमां रह्यो. पछी इंद्र, शंकर, राजा, कागडो, कूतरो, चांडाळ विगेरे जेने देखे तेने प्रणाम करवा लाग्यो. षष्ठ तपने पारणे नगरीमां अटन करीने ते पात्र भरी लावी तेमां मळेला अन्नमांथी एक भाग जळचर प्राणीने, एक भाग स्थळचर प्राणीने अने एक भाग खेचर प्राणीने (पक्षीने) एम त्रण भाग आपीने चोथा भागने एकवीश वार जळथी धोइ तेनावडे संतोषथी उदरपूर्ति करवा लाग्यो. आ प्रमाणे तेणे साठ हजार वर्ष सुधी तप कर्युं. तेथी ते बाळतपस्वी (अज्ञान तपस्वी) नो देह तद्दन शुष्क थयो अने अस्थि पण देखाय नहीं तेवो थयो. एकदा तेणे रात्रिजागरिका करतां विचार्युं के—"हुं मात्र जीवना बळथी गमनागमन करुं छुं. शरीरनुं बळ बिलकुल नथी, माटे आ शरीरने प्रभाते वोसरावी दउं." एम विचारीने प्रातःकाळे इशान खूणामां पोताना देहप्रमाण मंडळ आलेखीने तेमां अनशन करी आत्मध्यान करतो रह्यो.

हवे ते अवसरे बलिचंचा[1] राजधानीनो इंद्र च्यव्यो. एटले त्यां रहेनारा देव अने देवीओए विचार्युं के—"आपणे सर्वे दुष्कर तप करनार तामलि नामना बाळ तपस्वी पासे जइए, अने तेने अनेक प्रकारना सुखादिकथी लोभ पमाडीने ते आपणा इंद्र थाय तेवुं नियाणुं करावीए." पछी ते देवताओ अने देवीओ तामलि तापस पासे आव्यां. तेमणे तेनी पासे बत्रीश प्रकारनुं नाटक कर्युं. पछी त्रण प्रदक्षिणा दइ

1 भुवनपति असुरकुमारनो इंद्र बलींद्र.

नमस्कार करीने तेओए कह्युं के–"हे स्वामी! अमारी राजधानी प्राप्त करवा माटे नियाणुं करो; जेथी अमारुं इंद्रपणुं पामीने अमारी साथे दिव्य भोग भोगवो." आ प्रमाणे देवोए तेने लोभ पमाड्या छतां पण तेणे तेमनुं वचन अंगीकार कर्युं नहीं. अंते ते देवो थाकीने पोताने स्थाने गया. तामलि तापस पण बे मासनी संलेखना एटले १२० भक्तपानना त्यागरूप अनशनवडे मृत्यु पामीने इशानेंद्र थयो. आटलुं बधुं कष्ट कर्या छतां पण अल्प कषाय तथा अनुकंपाना परिणाम होवाथी ते मात्र वैमानिक देवपणुं पाम्यो. आ तामलि तापस विषे बीजा चरित्र ग्रंथमां एवुं सांभळ्युं छे के–" तामलि तापसे पोतानी अंत्यावस्थामां एक साधुने जोया हता; तेने जोइने तेना गुणनी प्रशंसा तेणे मनमां करी हती. तेथी ते सम्यक्त्व पामेल होवाथी इंद्रपद पाम्यो." केटलाएक एम कहे छे के–" स्वर्गमां उत्पन्न थया पछी शाश्वता जिनबिंबनुं दर्शन करवाथी इंद्रपद संबंधी समकित पाम्यो हतो." तत्त्व बहुश्रुत जाणे. आ तामलि तापसनुं दृष्टांत श्री भगवती सूत्रमां कहेलुंछे. वृद्धो एम कहे छे के–

तामलि तणे तवेण, जिणमय सिज्झे सत्त जणे ।
अन्नाणं दोसेण, तामलि ईसाणे गयो ॥ १ ॥

" तामलि तापसना जेटली तपस्याए करीने जैनमत प्रमाणे सात जीव सिद्धिपद पामे (तेटलो तेणे तप कर्यो हतो); पण अज्ञानना दोषथी ते इशानेंद्र थयो."

श्रीउपदेशमाळामां कह्युं छे के–

सट्ठिं वाससहस्सा, तिसत्तगुतोदयेण धोएण ।
अणुचिन्नं तामलिणा, अन्नाणतवात्ति अप्पफलो ॥ २ ॥

भावार्थ–––"तामलि तापसे साठ हजार वर्ष सुधी एकवीश वार जळथी धोइने अन्न खाधुं, अने महा तप कर्युं, पण ते अज्ञान तप होवाथी तेने तेनुं अल्प फळ मळ्युं."

पृथ्वीकाय आदि छ काय जीवोनो वध करनारा अने सर्वज्ञना शासनथी पराङ्मुख एवा बाळ तपस्वीओ घणो तपक्लेश करवा छतां पण अल्प फळ पामे छे.

मिथ्यादृष्टि छतां पण तामलिए तपस्याना फळनुं नियाणुं कर्युं नहीं, ए आ वृत्तांतनुं तात्पर्य छे. माटे मुनिओए मुक्तिना अमूल्य सुखने आपनार तपस्यानुं नियाणुं करीने ते अल्पमूल्य करवुं नहीं.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य
षट्त्रिंशदधिकाद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३६ ॥

व्याख्यान २३७ मुं.

उपदेशमां अयोग्य चार प्रकारना मनुष्यो विषे.

प्रथम अत्यंत रागी पुरुष उपदेशने अयोग्य छे. ते कहे छे–

यस्मिन् वस्तुनि संजातो, रागो यस्य नरस्य सः ।
तदीयाननु दोषांश्च, गुणतयैव पश्यति ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे पुरुषने जे वस्तुमां राग उत्पन्न थयो होय छे ते माणस तेना दोषने गुणरूपेज देखे छे. "

आ विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

मगध देशमां एक शहेरनी अंदर नंदन नामनो एक कोटवाळ हतो. तेने आद्यश्री अने द्वितीयश्री नामे बे स्त्रीओ हती. तेमां द्वितीयश्री उपर ते आसक्त हतो, तेथी ते तेनेज घेर रहेतो. एक दिवस ते परदेश जइने आव्यो अने आद्यश्रीने घेर गयो. आद्यश्रीए घणा हर्षथी शाक, पकवान विगेरे उत्तम भोजन बनावी तेने जमवा बेसाड्यो, पण ते उत्तम भोजन तेने स्वादिष्ट लाग्युं नहीं, अने तेथी ते मनमां बोल्यो के–" आमां शुं खावुं ? " पछी तेणे आद्यश्रीने कह्युं के–" द्वितीयश्रीने घेरथी तेणे कांइ रांध्युं होय तेमांथी शाक, पापड विगेरे लइ आव. " तेथी आद्यश्रीए शोकनी पासे जइने पतिमाटे शाक माग्युं. तेणे कह्युं के " आजे कांइ रांध्युंज नथी तो शाक क्यांथी होय ? " आद्यश्रीए आवीने ते वात नंदनने कही. तेणे फरीथी कह्युं के–" खातां कांइ वध्युं होय ते मागी लाव. " तेणे फरीथी जइने माग्युं त्यारे द्वितीयश्रीए कह्युं के–" वधेलुं हतुं ते चाकरने आपी दीधुं, माटे कांइ पण नथी. " ते वात पण आद्यश्रीए पोताना स्वामीने कही. त्यारे ते नंदने फरीथी कह्युं के–" तेना घेरथी कांइ कांजी जेवुं गमे ते पण लाव." ते सांभळीने आद्यश्रीने क्रोध चड्यो. तेथी तेणे बहार जइ तरतनुं करेलुं वाछडानुं छाण लइ तेमां चणानो आटो, पाणी, मसालो विगेरे नांखी तेने कांइक उनुं करीने लावी, अने कह्युं के–" आ तेने घेरथी लावी छुं. " ते खातो खातो तळाटी बोल्यो के–'अहो! घणुं स्वादिष्ट छे. केवो ते स्त्रीनो गुण छे ? ' विगेरे तेनी प्रशंसा करी. आ कोटवाळ नवी स्त्रीनो रागी हतो, तेथी ते गुणदोषना विवेकथी रहित हतो. आवीज रीते जे कोइ असत्य

धर्ममां रागी होय ते गुणदोषना विवेकथी अज्ञात होय छे. तेथी ते धर्म पामतो नथी. कह्युं छे के–

मिथ्यात्वपंकमलिनो आत्मा विपरीतदर्शनो भवति।
श्रद्धते न च धर्मं मधुरमपि रसं यथा ज्वरितः ॥

"मिथ्यात्व रूपी पंकथी मलिन एवो आत्मा विपरीत श्रद्धावाळो होय छे. तेथी जेम ज्वरवाळा माणसने मधुर रस रुचतो नथी, तेम तेने सद्धर्म उपर रुचि थती नथी." (१)

२ हवे जे अत्यंत द्वेषी होय ते पण धर्म पामतो नथी. ते विषे कहे छे–

यो यस्मिन् द्वेषमापन्नः, क्रोधमानातिरेकवान् ।
स लुप्यते गुणांस्तस्य दोषान् प्रादुष्करोत्यथ ॥ १ ॥

भावार्थ–"जे माणस क्रोध अथवा मानना अधिकपणाथी जेना उपर द्वेष पाम्यो होय, ते तेना गुणनो नाश करीने दोषनेज प्रगट करे छे."

ते उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

पांडवोना वनवासना तेर वर्ष संपूर्ण थया पछी तेमने कौरवो साथे परिणामे दुःखदाइ एवो क्लेश थवानो संभव जाणीने श्रीकृष्णे दुर्योधन पासे जइने पांडवोनो संदेशो कह्यो के—

इन्द्रप्रस्थं यवप्रस्थं, माकंदीं वरुणावतम् ।
देहि मे चतुरो ग्रामान् पंचमं हस्तिनापुरम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"इंद्रप्रस्थ, यवप्रस्थ, माकंदी, वरुणावत अने पांचमुं हस्तिनापुर ए पांच गामो मने आप; अने बाकीनुं तमाम राज्य तुं भोगव." आ प्रमाणेनो संदेशो सांभळीने दुर्योधन बोल्यो के––

सूच्यग्रेण सुतीक्ष्णेन, या सा भिद्यते मेदिनी ।
तदर्धं तु न दास्यामि, विना युध्धेन केशव ॥ १ ॥

भावार्थ–"हे कृष्ण! अति तीक्ष्ण सोयना अग्रभागथी जेटली पृथ्वी भेदाय तेथी अर्धी पृथ्वी पण हुं युध्ध कर्या विना आपीश नहीं."

कृष्णे फरीथी कह्युं के–"हे दुर्योधन ! युध्ध करवाथी कुळनो क्षय थायछे, तेम छतां पण जय थाय के पराजय थाय ते संदेह भरेलुं छे; अने परभवमां नरके

जवुं पडेछे, माटे युद्धनी वात छोडी दइ आ टुंकी मागणी कबुल कर." इत्यादि घणी रीते बोध करतां छतां पण दुर्योधन समज्यो नहीं, अने उलटो कृष्णने पण बांधी लेवा विचार कर्यो.

आवीज रीते धर्मनी बाबतमां पण द्वेषी माणसने उपदेश करतां उलटो ते अनर्थ करवा तत्पर थाय छे. आ विषयमां भद्रबाहु स्वामी प्रत्ये वराहमिहिर, जमालि[1], व्योटिक, सहस्रमल्ल[2] अने मंखलिपुत्र[3] विगेरेनां दृष्टांतो जाणवां. (२)

हवे त्रीजो मूढ माणस उपदेशने अयोग्य छे ते कहे छे-

अज्ञानोपहतचित्तः कार्याकार्याविचारकः ।
मूढः स एव विज्ञेयो, वस्तुतत्त्वमवेतृकः ॥ १ ॥

भावार्थ—"जेनुं चित्त अज्ञानथी हणायेलुं छे अने जे कार्य तथा अकार्यनो विचार करी शकतो नथी तेनेज मूढ जाणवो; केमके ते वस्तुतत्त्वने जाणतो नथी."

आ विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे--

कोइएक गाममां एक विधवा स्त्री दुःखथी दिवसो निर्गमन करती हती. तेने एक पुत्र हतो. ते युवावस्थाने पाम्यो, त्यारे तेणे तेनी माने पूछ्युं के-"हे मा ! मारा पिताने शी आजीविका हती ?" ते बोली के "हे पुत्र ! तारा पिताने राजानी नोकरी हती." पुत्र बोल्यो के-"हुं पण राजसेवा करुं." माताअे कह्युं के-"हे पुत्र ! राजसेवा अति दुष्कर छे अने ते अति विनय पूर्वक कराय छे." पुत्रे पूछ्युं के-"विनय केवी रीते कराय ?" माताए कह्युं के-"जे कोइने देखीए तेने जुहार करवो, अने नम्र वृत्तिथी वर्तवुं." ते सांभळीने "हुं तेवी रीते करीश" एम अंगीकार करीने ते राजसेवा करवा माटे चाल्यो. रस्तामां हरणो जता हता, तेमने मारवा माटे वृक्षना मूळमां संताइने अने धनुष पर तीर चडावीने बेठेला पाराधिओ तेणे जोया. तेमने तेणे दूरथीज मोटो शब्द करीने जुहार कर्यो. ते शब्द सांभळीने त्रास पामेला मृगो नासी गया. तेथी पाराधिओए तेने मारीने बांध्यो, एटले तेणे कह्युं के-"मारी माए मने शीखव्युं छे के-जेने देखे तेने जुहार करवो." ते सांभळीने "आ भोळो माणस छे" एम जाणी तेओए तेने छोडी दीधो, अने शिखामण आपी के-"आवी रीते कोइ संताइने बेठा होय,

१ भगवंतनो जमाइ-पहेलो निन्हव. २ दिगंबर मतस्थापक. ३ गोशाळो.

त्यारे धीरे धीरे मौन राखीने ते तरफ जवुं." ते प्रमाणे अंगीकार करीने ते आगळ चाल्यो. आगळ जतां तेणे लूगडां धोता धोबी जोया. तेमनां वस्त्रो हमेशां कोइ चोरलोको चोरी जता हता. तेथी ते दिवसे ते धोबीओ चोरनी शोध करवा माटे हाथमां लाकडीओ राखीने गुप्त रीते बेठा हता, तेमने संतायेला जोइने ते बोल्या विना संतातो संतातो शरीरने नीचुं नमावीने धीरे धीरे आव्यो. आवी चौरवृत्तिथी तेने आवतो जोइने "आज चोर छे" एम मानीने तेने मारीने बांध्यो. पछी सत्य वात कहेवाथी छोड्यो, अने शिखामण आपी के—"आवी रीते कोइ ठेकाणे जोइए त्यारे 'अहीं उस खार पडो, चोख्खुं थाओ.' ए प्रमाणे बोलवुं." ते वाक्य पण अंगीकार करीने आगळ जतां कोइक गाममां ते दिवसे प्रथम हळ खेडवानुं मुहूर्त हतुं. तेनी बहु मंगळ पूर्वक क्रिया थती हती. त्यां जइने ते "अहीं उस खार पडो, चोख्खुं थाओ" ए प्रमाणे बोल्यो; एटले त्यां पण तेने मारीने बांध्यो. पछी सत्य वात कहेवाथी छोड्यो, अने शीखव्युं के—"आवी रीते जोइने एम बोलवुं के—अहीं गाडां भराओ, घणुं थाओ, हमेशां आवुं थाओ." ते पण तेणे अंगीकार कर्युं. पछी कोइ ठेकाणे कोइ मडदाने गाम बहार लइ जता हता. ते वखते ते उपर प्रमाणे बोल्यो, एटले त्यां पण तेने बांध्यो. पछी सत्य वात कहेवाथी तेने छोडी दइने शिखामण आपी के—"आवुं ज्यां जुए त्यां एम कहेवुं के—कोइ पण वखत तमारे आवुं न थाओ, न थाओ." ते पण अंगीकार करीने ते वचन कोइक स्थानके विवाहना प्रसंगमां बोल्यो, एटले त्यां पण तेने बांध्यो अने सत्य वात कहेवाथी छोडी दइने शिखामण आपी. आ प्रमाणे ठेकाणे ठेकाणे ते कदर्थना पाम्यो. पछी एक दिवस ते एक निर्धन ठाकोर (क्षत्रिय) नी नोकरी करवा रह्यो. तेने घेर एक दिवस छाशमां राब रांधी हती, ते वखते ठाकोरनी स्त्रीए ठाकोरने तेडवा मोकलतां घणा लोकोनी सभामां बेठेला ठाकोर पासे आवीने ते मोटेथी बोल्यो के—"हे ठाकोर! चालो; राब टाढी थइ जाय छे; पछी खवाशे नहीं, माटे राणीए मने तेडवा मोकल्यो छे." ते सांभळीने ठाकोर लज्जा पामीने घेर गयो. पछी तेने घणो मारीने शीखव्युं के—"आवी रीते पोकार करीने घरनुं काम कहेवुं नहीं. परंतु वस्त्रथी मुख ढांकीने कान पासे आवीने धीमे धीमे कहेवुं." पछी एक वखत ते ठाकोरना घरमां आग लागी. ते वखते सभामां बेठेला ठाकोर पासे ते धीरे धीरे गयो, अने मुख आडुं वस्त्र राखीने कानमां धीरेथी कह्युं. ते सांभळीने ठाकोर एकदम घर तरफ दोड्यो; तेटलामां तो घर बळी गयुं. पछी अति क्रोधथी तेने घणो मार्यो, अने शीखव्युं के—"हे मूर्ख! प्रथम धूमाडो नीकळे तेज वखते तेना उपर पाणी, धूळ, राख विगेरे नांखीने उंचे

स्वरे पोकार करवो जोइए." त्यारे ते बोल्यो के-" हवेथी तेम करीश." पछी कोइएक वखत ठाकोर स्नान करीने अग्नि पासे तापवा बेठो हतो, ते वखते ठाकोरना लुगडानी उपर धूमाडो नीकळतो जोयो, के तरतज तेणे राखनी भरेली थाळी उपाडीने तेना पर नांखी. पछी धूळ पाणी विगेरे नांखवा लाग्यो, अने मोटा शब्दथी पोकार करवा लाग्यो. एटले "आ तद्दन अयोग्य छे" एम धारीने ठाकोरे तेने काढी मूक्यो.

आ दृष्टांत प्रमाणे श्रोता अथवा शिष्य गुरुवचनना परमार्थने न जाणे तेने उपदेशने अयोग्य जाणवो. (३)

हवे धूर्त माणसे अवळुं समजावेलो माणस पण उपदेशने अयोग्य छे, ते कहे छे-

वस्त्ववस्तुपरीक्षायां, धूर्तव्युद्ग्राहणावशात् ।
अक्षमो कुग्रहाविष्टो, हास्यः स्याद्गोपवन्नरः ॥ १ ॥

भावार्थ—" धूर्त माणसे अवळुं समजाववाथी कदाग्रही थयेलो माणस वस्तु अने अवस्तुनी परीक्षा करवामां असमर्थ थाय छे, अने गोवाळनी जेम ते हास्यने पात्र थायछे."

राजपुर नगरमां एक गोवाळ रहेतो हतो. तेणे गायो चारीने घणुं धन मेळव्युं हतुं. एक दिवस तेना मित्र सोनीए तेने कह्युं के-" तारा धननुं एक सुवर्णनुं कडुं बीजा कोइ सोनी पासे कराव." ते गोवाळे कह्युं के-" तुंज करी आप." सोनी बोल्यो के-"प्रीतिने नाश करवामां मूळ कारण पैसो छे. कह्युं छे के-

यदीच्छेद्विपुलां प्रीतिं, तत्र त्रीणि निवारयेत् ।
विवादमर्थसंबन्धं, परोक्षे दारभाषणम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"जो प्रीति वधारवानी इच्छा होय तो मित्रनी साथे वादविवाद, द्रव्यनो संबंध अने परोक्षमां तेनी स्त्रीनी साथे वातचीत ए त्रणनो त्याग करवो."

माटे लोको आपणी प्रीतिनो भंग करावशे." ते सांभळीने गोवाळ बोल्यो के-" हुं कडांनी परीक्षा करावीश. मारुं चित्त स्थिर हशे तो लोको शुं करवाना हता?" पछी ते सोनीए एक सुवर्णनुं अने एक पीतळनुं एम बे एक सरखांज कडां कर्यां. तेमां प्रथम ते गोवाळने सोनानुं कडुं आप्युं. ते लइने तेणे गाममां बीजानी

दुकाने परीक्षा करावी. परीक्षके कह्युं के-" आ कडुं सोनानुं छे, अने तेनी आटली किंमत छे, एटले ते गोवाळनी खातरी थइ. पछी ते सोनीए तेने ओपवा माटे माग्युं, एटले गोवाळे तेने आप्युं. सोनीए पीतळनुं कडुं ओपीने तेने आप्युं. मूढ गोवाळे ते फेरफार जाण्यो नहीं, अने पोताना घरमां जइने मूक्युं. पछी कोइ वखत काम पड्ये तेणे कोइ नाणावटीओने बताव्युं. ते जोइने तेओए " पीतळनुं छे" एम कह्युं. त्यारे गोवाळ बोल्यो के-" तमेज असत्य बोलनारा छो. प्रथम तमेज आने सत्य कह्युं हतुं, अने आजे खोटुं कहो छो; माटे मारा मित्रनो आमां कांइ पण दोष नथी. "(४)

आ दृष्टांतनुं तात्पर्य ए छे के-जेम आ गोवाळने प्रथमथीज अवळे रस्ते समजाव्यो हतो, तेथी ते योग्यायोग्यने जाणी शक्यो नहीं. तेमज जेने आडुं अवळुं समजावीने कुमत ग्रहण कराव्यो होय ते माणस पण सिद्धांतना सत्य तत्त्वने जाणी शकतो नथी.

" आ प्रमाणे उपदेश संभळाववामां आवा चार प्रकारना पुरुषने अयोग्य कहेला छे; माटे तेने छोडीने बीजाने सिद्धांत श्रवण कराववुं."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य सप्तत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३७ ॥

व्याख्यान २३८ मुं.

कदाग्रही विषे.

स्याद्वादयुक्तितो बोधं, न प्राप्तवान् स निर्गुणः ।
विद्वन्मरालसंघेभ्यो, बाह्यः कार्यः शुभात्मभिः ॥१ ॥

भावार्थ-" जे स्याद्वादनी युक्तिथी बोध पामतो नथी तेने निर्गुण जाणवो; तेने डाह्या पुरुषोए विद्वानो रूपी हंसना समूहमांथी बहार करवो. " ते उपर दृष्टांत कहे छे-

दक्षपुर नामना नगरमां तोशलीपुत्र आचार्यना शिष्य आर्यरक्षित

सूरि हता. तेओ वज्रस्वामी आचार्य पासे कांइक अधिक नव पूर्व भण्या हता. तेमणे शिष्योने अल्पबुद्धिवाळा जाणीने अनुक्रमे जुदा जुदा अनुयोगमां आगमोने स्थापन कर्या[1]. तथा सीमंधर स्वामीना वचनथी निगोद संबंधी प्रश्न करवा माटे देवेंद्र तेमनी पासे आव्या हता अने यथार्थ निगोदनुं स्वरूप सांभळीने तेणे तेमने नमस्कार कर्यो हतो. ते सूरि एकदा विहार करतां करतां दशपुर नगरे आव्या हता. ते वखते मथुरा नगरीमां कोइ नास्तिकवादी उत्पन्न थयो, तेनी सामे प्रतिवादी तरीके कोइ नहीं होवाथी सर्व संघे एकठा थइने विचार कर्यो के–" हालना समयमां आर्यरक्षित सूरि युगप्रधान छे. " एम धारीने आ वृत्तांत तेमने कहेवा माटे साधुना संघाटकने एटले बे साधुने तेमनी पासे मोकल्या. साधुओए जइने सर्व वृत्तांत तेमने कह्यो. परंतु सूरि वृद्ध होवाथी पोते जवाने अशक्त हता. तेथी वादलब्धिने धारण करनारा गोष्ठामाहिल नामना मुनिने तेमणे मोकल्या. ते गोष्ठामाहिले त्यां जइने वादीनो पराजय कर्यो. पछी त्यांना श्रावकोए गोष्ठामाहिलने विनंति करीने चातुर्मास राख्या. अहीं आर्यरक्षित सूरिए पोताना आयुष्यनो अंत पासे आवेलो जाणीने विचार्यु के–" योग्य शिष्यनेज गणधर (सूरि) पद आपवुं जोइए. कह्युं छे के–

वुड्ढो गणहर सद्दो, गोयममाइहिं धीरपुरिसेहिं ।
जो तं ठवइ अपत्ते, जाणंतो सो महापावो ॥ १ ॥

भावार्थ–"गौतम आदि धीर पुरुषोए वहन करेलो गणधर शब्द जाणतो सतो तेने जे अपात्रमां स्थापन करे ते महापापी कहेवाय."

"हवे गणधरपदने योग्य तो दुर्बलिका पुष्पमित्र मुनिज छे; अने बीजा सर्वे साधुओ मारा मामा गोष्ठामाहिलने अथवा मारा नाना भाइ फल्गुरक्षितने चाहे छे." एम विचारीने आचार्ये सर्व संघने बोलावीने कह्युं के–"त्रण प्रकारना घडा होय छे. तेमां एक वालनो, बीजो तेलनो अने त्रीजो घीनो छे. तेने उंधा वाळीए तो वालना घडामांथी सर्वे वाल नीकळी जाय, तेलना घडामांथी कांइक तेल घडाने वळगी रहे, अने घीना घडामां घी वधारे वळगी रहे. तेवीज रीते हुं सूत्र तथा तेना अर्थना विषयमां दुर्बलिका पुष्पमित्र पासे वालना घडा रूप थयो छुं. केमके मारामां रहेलो समग्र सूत्रार्थ तेणे ग्रहण कर्यो छे, फल्गुरक्षित पासे

1 केटलाकमां द्रव्यानुयोग प्रधान राख्यो, केटलाकमां गणितानुयोग प्रधान राख्यो, केटलाकमां धर्मकथानुयोग प्रधान राख्यो, ने केटलाकमां चरणकरणानुयोगनी प्रधानता राखी. आम चारे अनुयोगमां आगमोनी वहेंचणी करी नाखी.

तेलना घडा समान थयो छुं; केमके सर्व सूत्रार्थ तेणे ग्रहण कर्यो नथी, अने गोष्ठा-माहिल पासे तो हुं घीना घडा जेवो थयो छुं. केमके घणो सूत्रार्थ मारी पासेज रही गयो छे. माटे दुर्बलिका पुष्पमित्रज तमारा सूरि थाओ. " ते सांभळीने सर्व संघे "इच्छामः" (इच्छीए छीए) एम कहीने ते कबुल कर्युं. पछी सूरि साधु तथा श्रावक बन्ने पक्षने योग्य अनुशासन (शिक्षा) आपीने अनशन ग्रहण करी स्वर्गे गया. ते सर्व वृत्तांत गोष्ठामाहिले सांभळ्यो. एटले ते मथुराथी त्यां आव्या, अने पूछ्युं के-"सूरिए पोताने स्थाने कोने स्थाप्या ?" ते सांभळीने सर्वेए वाल विगेरेना घडाना दृष्टांत पूर्वक सर्व वृत्तांत कह्यो, तेथी ते अति खेद पाम्या; अने जूदा उपाश्रयमां रहीने सूरिनी निंदा करवा लाग्या. तेमज साधुओने अवळुं समजाववा मांड्युं, अने कह्युं के-"तमे वालना घडा जेवा आचार्यनी पासे केम श्रुतनो अभ्यास करो छो ?"

एक दिवस दुर्बळिका पुष्पमित्र सूरिना शिष्य विन्ध्य नामना मुनि कर्म-प्रवाद नामना पूर्वनी आवृत्ति करता हता, तेमां एवो विषय हतो के-"जीवना प्रदेश साथे बद्ध थयेलुं कर्म जेनो बंध मात्र थाय छे एटले कषाय रहित (केवळी) मुनिने इर्यापथिकी संबंधी जे कर्म बंधाय छे ते बद्ध कहेवाय छे. ते कर्म कालांतर स्थितिने पाम्या विनाज सुकी भींत पर नांखेली भुकानी मुठीनी जेम जीवना प्रदेशथी जुदुं पडे छे.

हवे जीवना प्रदेशोए पोतानुं करी लीधेलुं जे कर्म ते बद्ध स्पृष्ट कहेवाय छे. तेवुं कर्म आर्द्र भींत पर नांखेला भीना चूर्णनी जेम काळांतरे नाश पामे छे; अने अति गाढ अध्यवसायथी बांधेलुं कर्म के जे अपवर्तनादि कर-णने अयोग्य होवाथी निकाचित कहेवाय छे ते कर्म अति गाढ बंधवाळुं होवाथी आर्द्र भींत उपर आकरा कळी चुनानो या सफेतानो हाथ दीधो होय तेनी जेम काळांतरे पण विपाकथी भोगव्या विना प्राये करीने क्षय पामतुं नथी. आ त्रणे प्रकारनो[1] बंध समजवा माटे सोयना समूहनुं दृष्टांत छे ते आ प्रमाणे-दोरो वींटेला सोयना समूह जेवुं बद्ध कर्म जाणवुं, लोढानी पाटीथी बांधेला सोयना समूह जेवुं स्पृष्ट बद्ध कर्म जाणवुं अने अग्निथी तपावी हथोडावती टीपीने एकत्र करेला सोयना समूह जेवुं बद्ध स्पृष्ट निकाचित कर्म जाणवुं. अहीं कोइने शंका थाय के-"निकाचित तथा अनिकाचित कर्ममां शो तफावत ?" तो तेनो उत्तर कहे छे के-"कर्मना संबंधमां श्रीकम्मपयडी ग्रंथमां अपवर्तनादिक आठ करण कहेलां छे, ते सर्व करण अनिकाचित कर्ममांज प्रवर्ते छे, अने निकाचित कर्ममां तो तेनुं फळ

1 प्रतिक्रमण हेतु ग्रंथमां स्पृष्ट, बद्ध, निधत्त ने निकाचित एम चार भेद कहेला छे.

उदय आवेथी प्राये करीने भोगववुंज पडे छे, एटलो निकाचित ने अनिकाचितमां फेर छे.

अहीं निकाचित कर्मना संबंधमां "प्राये करीने भोगववुंज पडे." एम प्राये शब्द कहेवानुं तात्पर्य ए छे के-"तवसाओ निकाइयाणं पि (तपथी निकाचित कर्मनो पण क्षय थाय.)" ए वचनना अनुसारे अत्यंत तप करवाथी तथा उत्कट अध्यवसायना बळथी निकाचित कर्ममां पण अपवर्तनादिक करणो प्रवर्ते छे. आवी रीते व्याख्या करवाथी ए तात्पर्य समजवुं के-क्षीरनीरनी जेम तथा अग्निथी तपावेला लोहना गोळानी जेम जीवना प्रदेश साथे कर्मनो संबंध छे." आ प्रमाणे विन्ध्य मुनिनी व्याख्या सांभळीने असत्कर्मना उदयने लीधे कदाग्रहथी तेने नहीं स्वीकारतो गोष्ठामाहिल तेनी पासे जइने बोल्यो के-" जीव कर्मनो जे तादात्म्य संबंध कह्यो ते दूषित छे. केमके तादात्म्यभाव मानवाथी जेम जीवना प्रदेश जीवथी भिन्न थता नथी तेम कर्म पण जीवथी अभिन्न रहेशे, अने तेथी सदा काळ जीव कर्म सहित रहेवाथी मोक्ष पामशे नहीं. मोक्षनो अभाव थशे माटे मारी युक्तिज योग्य छे के-सर्पनी कांचळीनी पेठे जीवनी साथे कर्मनो मात्र स्पर्शज छे. अग्निथी तपावेला लोहगोळाना न्यायनी जेम तादात्म्य भाव पाम्या विनाज ते जीवनी साथे जोडाय छे, अने तेनी साथे परभवमां जाय छे. एम मानवाथी मोक्षनी प्राप्ति रहेशे."

आ प्रमाणे तेनुं वचन सांभळीने विन्ध्य मुनिने शंका पडवाथी तेणे आचार्य पासे जइने पूछ्युं त्यारे आचार्ये कह्युं के-" तमे जे प्रथम कह्युं तेज सत्य छे. केमके-

> जीवो हि स्वावगाहाभिव्याप्त एवांबरे स्थितम् ।
> गृह्णाति कर्मदलिकं, जातु न त्वन्यदेशगम् ॥ १ ॥
> अथात्मान्यप्रदेशस्थं, कर्मादायानुवेष्टयेत् ।
> यद्यात्मानं तदा तस्य घटते कंचुकोपमा ॥ २ ॥

भावार्थ-" जीव पोतानी अवगाहनाथी व्याप्त थयेला आकाशप्रदेशमां रहेलांज कर्मनां दळीयांने ग्रहण करे छे. पण बीजा प्रदेशमां रहलांने ग्रहण करतो नथी; तेथी जो कदाच आत्मा अन्य प्रदेशमां रहेला कर्मने ग्रहण करीने पोतानी फरता वींटे, तो ते कर्मने सर्प कांचळीनी उपमा घटी शके. ते शिवाय घटी शके नही."

तेलना घडा समान थयो छुं; केमके सर्व सूत्रार्थ तेणे ग्रहण कर्यो नथी, अने गोष्ठामाहिल पासे तो हुं घीना घडा जेवो थयो छुं. केमके घणो सूत्रार्थ मारी पासेज रही गयो छे. माटे दुर्बलिका पुष्पमित्रज तमारा सूरि थाओ." ते सांभळीने सर्व संघे "इच्छामः" (इच्छीए छीए) एम कहीने ते कबुल कर्युं. पछी सूरि साधु तथा श्रावक बन्ने पक्षने योग्य अनुशासन (शिक्षा) आपीने अनशन ग्रहण करी स्वर्गे गया. ते सर्व वृत्तांत गोष्ठामाहिले सांभळ्यो. एटले ते मथुराथी त्यां आव्या, अने पूछयुं के-"सूरिए पोताने स्थाने कोने स्थाप्या ?" ते सांभळीने सर्वेए वाल विगेरेना घडाना दृष्टांत पूर्वक सर्व वृत्तांत कह्यो, तेथी ते अति खेद पाम्या; अने जूदा उपाश्रयमां रहीने सूरिनी निंदा करवा लाग्या. तेमज साधुओने अवळुं समजाववा मांड्युं, अने कह्युं के-"तमे वालना घडा जेवा आचार्यनी पासे केम श्रुतनो अभ्यास करो छो ?"

एक दिवस दुर्बळिका पुष्पमित्र सूरिना शिष्य विन्ध्य नामना मुनि कर्मप्रवाद नामना पूर्वनी आवृत्ति करता हता, तेमां एवो विषय हतो के-"जीवना प्रदेश साथे बद्ध थयेलुं कर्म जेनो बंध मात्र थाय छे एटले कषाय रहित (केवळी) मुनिने इर्यापथिकी संबंधी जे कर्म बंधाय छे ते बद्ध कहेवाय छे. ते कर्म कालांतर स्थितिने पाम्या विनाज सुकी भींत पर नांखेली भुकानी मुठीनी जेम जीवना प्रदेशथी जुदुं पडे छे.

हवे जीवना प्रदेशोए पोतानुं करी लीधेलुं जे कर्म ते बद्ध स्पृष्ट कहेवाय छे. तेवुं कर्म आर्द्र भींत. पर नांखेला भीना चूर्णनी जेम काळांतरे नाश पामे छे; अने अति गाढ अध्यवसायथी बांधेलुं कर्म के जे अपवर्तनादि करणने अयोग्य होवाथी निकाचित कहेवाय छे ते कर्म अति गाढ बंधवाळुं होवाथी आर्द्र भींत उपर आकरा कळी चुनानो या सफेतानो हाथ दीधो होय तेनी जेम काळांतरे पण विपाकथी भोगव्या विना प्राये करीने क्षय पामतुं नथी. आ त्रणे प्रकारनो[1] बंध समजवा माटे सोयना समूहनुं दृष्टांत छे ते आ प्रमाणे-दोरो वींटेला सोयना समूह जेवुं बद्ध कर्म जाणवुं, लोढानी पाटीथी बांधेला सोयना समूह जेवुं स्पृष्ट बद्ध कर्म जाणवुं अने अग्निथी तपावी हथोडावती टीपीने एकत्र करेला सोयना समूह जेवुं बद्ध स्पृष्ट निकाचित कर्म जाणवुं. अहीं कोइने शंका थाय के-"निकाचित तथा अनिकाचित कर्ममां शो तफावत ?" तो तेनो उत्तर कहे छे के-"कर्मना संबंधमां श्रीकम्मपयडी ग्रंथमां अपवर्तनादिक आठ करण कहेलां छे, ते सर्व करण अनिकाचित कर्ममांज प्रवर्ते छे, अने निकाचित कर्ममां तो तेनुं फळ

१ प्रतिक्रमण हेतु ग्रंथनां स्पृष्ट, बद्ध, निधत्त ने निकाचित एम चार भेद कहेला छे.

उदय आवेथी प्राये करीने भोगववुंज पडे छे, एटलो निकाचित ने अनिकाचितमां फेर छे.

अहीं निकाचित कर्मना संबंधमां "प्राये करीने भोगववुंज पडे." एम प्राये शब्द कहेवानुं तात्पर्य ए छे के-"तवसाओ निकाइयाणं पि (तपथी निकाचित कर्मनो पण क्षय थाय.)" ए वचनना अनुसारे अत्यंत तप करवाथी तथा उत्कट अध्यवसायना बळथी निकाचित कर्ममां पण अपवर्तनादिक करणो प्रवर्ते छे. आवी रीते व्याख्या करवाथी ए तात्पर्य समजवुं के-क्षीरनीरनी जेम तथा अग्निथी तपावेला लोहना गोळानी जेम जीवना प्रदेश साथे कर्मनो संबंध छे." आ प्रमाणे विन्ध्य मुनिनी व्याख्या सांभळीने असत्कर्मना उदयने लीधे कदाग्रहथी तेने नहीं स्वीकारतो गोष्ठामाहिल तेनी पासे जइने बोल्यो के-" जीव कर्मनो जे तादात्म्य संबंध कह्यो ते दूषित छे. केमके तादात्म्यभाव मानवाथी जेम जीवना प्रदेश जीवथी भिन्न थता नथी तेम कर्म पण जीवथी अभिन्न रहेशे, अने तेथी सदा काळ जीव कर्म सहित रहेवाथी मोक्ष पामशे नहीं. मोक्षनो अभाव थशे माटे मारी युक्तिज योग्य छे के-सर्पनी कांचळीनी पेठे जीवनी साथे कर्मनो मात्र स्पर्शज छे. अग्निथी तपावेला लोहगोळाना न्यायनी जेम तादात्म्य भाव पाम्या विनाज ते जीवनी साथे जोडाय छे, अने तेनी साथे परभवमां जाय छे. एम मानवाथी मोक्षनी प्राप्ति रहेशे."

आ प्रमाणे तेनुं वचन सांभळीने विन्ध्य मुनिने शंका पडवाथी तेणे आचार्य पासे जइने पूछ्युं त्यारे आचार्ये कह्युं के-" तमे जे प्रथम कह्युं तेज सत्य छे. केमके-

जीवो हि स्वावगाहाभिर्व्याप्त एवांबरे स्थितम् ।
गृह्णाति कर्मदलिकं, जातु न त्वन्यदेशगम् ॥ १ ॥
अथात्मान्यप्रदेशस्थं, कर्मादायानुवेष्टयेत् ।
यद्यात्मानं तदा तस्य घटते कंचुकोपमा ॥ २ ॥

भावार्थ-" जीव पोतानी अवगाहनाथी व्याप्त थयेला आकाशप्रदेशमां रहेलांज कर्मनां दळीयांने ग्रहण करे छे. पण बीजा प्रदेशमां रहेलांने ग्रहण करतो नथी; तेथी जो कदाच आत्मा अन्य प्रदेशमां रहेला कर्मने ग्रहण करीने पोतानी फरता वींटे, तो ते कर्मने सर्प कांचळीनी उपमा घटी शके. ते शिवाय घटी शके नही."

तेलना घडा समान थयो छुं; केमके सर्व सूत्रार्थ तेणे ग्रहण कर्यो नथी, अने गोष्ठा-माहिल पासे तो हुं घीना घडा जेवो थयो छुं. केमके घणो सूत्रार्थ मारी पासेज रही गयो छे. माटे दुर्बलिका पुष्पमित्रज तमारा सूरि थाओ." ते सांभळीने सर्व संघे "इच्छामः" (इच्छीए छीए) एम कहीने ते कबुल कर्युं. पछी सूरि साधु तथा श्रावक बन्ने पक्षने योग्य अनुशासन (शिक्षा) आपीने अनशन ग्रहण करी स्वर्गे गया. ते सर्व वृत्तांत गोष्ठामाहिले सांभळ्यो. एटले ते मथुराथी त्यां आव्या, अने पूछ्युं के-"सूरिए पोताने स्थाने कोने स्थाप्या ?" ते सांभळीने सर्वेए वाल विगेरेना घडाना दृष्टांत पूर्वक सर्व वृत्तांत कह्यो, तेथी ते अति खेद पाम्या; अने जूदा उपाश्रयमां रहीने सूरिनी निंदा करवा लाग्या. तेमज साधुओने अवळुं समजाववा मांड्युं, अने कह्युं के-"तमे वालना घडा जेवा आचार्यनी पासे केम श्रुतनो अभ्यास करो छो ?"

एक दिवस दुर्बळिका पुष्पमित्र सूरिना शिष्य विन्ध्य नामना मुनि कर्म-प्रवाद नामना पूर्वनी आवृत्ति करता हता, तेमां एवो विषय हतो के-"जीवना प्रदेश साथे बद्ध थयेलुं कर्म जेनो बंध मात्र थाय छे एटले कषाय रहित (केवळी) मुनिने इर्यापथिकी संबंधी जे कर्म बंधाय छे ते बद्ध कहेवाय छे. ते कर्म कालांतर स्थितिने पाम्या विनाज सुकी भींत पर नांखेली भुकानी मुठीनी जेम जीवना प्रदेशथी जुदुं पडे छे.

हवे जीवना प्रदेशोए पोतानुं करी लीधेलुं जे कर्म ते बद्ध स्पृष्ट कहेवाय छे. तेवुं कर्म आर्द्र भींत पर नांखेला भीना चूर्णनी जेम काळांतरे नाश पामे छे; अने अति गाढ अध्यवसायथी बांधेलुं कर्म के जे अपवर्तनादि कर-णने अयोग्य होवाथी निकाचित कहेवाय छे ते कर्म अति गाढ बंधवाळुं होवाथी आर्द्र भींत उपर आकरा कळी चुनानो या सफेतानो हाथ दीधो होय तेनी जेम काळांतरे पण विपाकथी भोगव्या विना प्राये करीने क्षय पामतुं नथी. आ त्रणे प्रकारनो[1] बंध समजवा माटे सोयना समूहनुं दृष्टांत छे ते आ प्रमाणे-दोरो वींटेला सोयना समूह जेवुं बद्ध कर्म जाणवुं, लोढानी पाटीथी बांधेला सोयना समूह जेवुं स्पृष्ट बद्ध कर्म जाणवुं अने अग्निथी तपावी हथोडावती टीपीने एकत्र करेला सोयना समूह जेवुं बद्ध स्पृष्ट निकाचित कर्म जाणवुं. अहीं कोइने शंका थाय के-"निकाचित तथा अनिकाचित कर्ममां शो तफावत ?" तो तेनो उत्तर कहे छे के-"कर्मना संबंधमां श्रीकम्मपयडी ग्रंथमां अपवर्तनादिक आठ करण कहेलां छे, ते सर्व करण अनिकाचित कर्ममांज प्रवर्ते छे, अने निकाचित कर्ममां तो तेनुं फळ

1 प्रतिक्रमण हेतु ग्रंथमां स्पृष्ट, बद्ध, निधत्त ने निकाचित एम चार भेद कहेला छे.

उदय आवेथी प्राये करीने भोगववुंज पडे छे, एटलो निकाचित ने अनिकाचितमां फेर छे.

अहीं निकाचित कर्मना संबंधमां "प्राये करीने भोगववुंज पडे." एम प्राये शब्द कहेवानुं तात्पर्य ए छे के-"तवसाओ निकाइयाणं पि (तपथी निकाचित कर्मनो पण क्षय थाय.)" ए वचनना अनुसारे अत्यंत तप करवाथी तथा उत्कट अध्यवसायना बळथी निकाचित कर्ममां पण अपवर्तनादिक करणो प्रवर्ते छे. आवी रीते व्याख्या करवाथी ए तात्पर्य समजवुं के-क्षीरनीरनी जेम तथा अग्निथी तपावेला लोहना गोळानी जेम जीवना प्रदेश साथे कर्मनो संबंध छे." आ प्रमाणे विन्ध्य मुनिनी व्याख्या सांभळीने असत्कर्मना उदयने लीधे कदाग्रहथी तेने नहीं स्वीकारतो गोष्ठामाहिल तेनी पासे जइने बोल्यो के-"जीव कर्मनो जे तादात्म्य संबंध कह्यो ते दूषित छे. केमके तादात्म्यभाव मानवाथी जेम जीवना प्रदेश जीवथी भिन्न थता नथी तेम कर्म पण जीवथी अभिन्न रहेशे, अने तेथी सदा काळ जीव कर्म सहित रहेवाथी मोक्ष पामशे नहीं. मोक्षनो अभाव थशे माटे मारी युक्तिज योग्य छे के-सर्पनी कांचळीनी पेठे जीवनी साथे कर्मनो मात्र स्पर्शज छे. अग्निथी तपावेला लोहगोळाना न्यायनी जेम तादात्म्य भाव पाम्या विनाज ते जीवनी साथे जोडाय छे, अने तेनी साथे परभवमां जाय छे. एम मानवाथी मोक्षनी प्राप्ति रहेशे."

आ प्रमाणे तेनुं वचन सांभळीने विन्ध्य मुनिने शंका पडवाथी तेणे आचार्य पासे जइने पूछयुं त्यारे आचार्ये कह्युं के-"तमे जे प्रथम कह्युं तेज सत्य छे. केमके-

जीवो हि स्वावगाहाभिर्व्याप्त एवांबरे स्थितम् ।
गृह्णाति कर्मदलिकं, जातु न त्वन्यदेशगम् ॥ १ ॥
अथात्मान्यप्रदेशस्थं, कर्मादायानुवेष्टयेत् ।
यद्यात्मानं तदा तस्य घटते कंचुकोपमा ॥ २ ॥

भावार्थ-"जीव पोतानी अवगाहनाथी व्याप्त थयेला आकाशप्रदेशमां रहेलांज कर्मनां दळीयांने ग्रहण करे छे. पण बीजा प्रदेशमां रहेलांने ग्रहण करतो नथी; तेथी जो कदाच आत्मा अन्य प्रदेशमां रहेला कर्मने ग्रहण करीने पोतानी फरता वींटे, तो ते कर्मने सर्प कांचळीनी उपमा घटी शके. ते शिवाय घटी शके नही."

तेलना घडा समान थयो छुं; केमके सर्व सूत्रार्थ तेणे ग्रहण कर्यो नथी, अने गोष्ठा. माहिल पासे तो हुं घीना घडा जेवो थयो छुं. केमके घणो सूत्रार्थ मारी पासेज रही गयो छे. माटे दुर्बलिका पुष्पमित्रज तमारा सूरि थाओ." ते सांभळीने सर्व संघे "इच्छामः" (इच्छीए छीए) एम कहीने ते कबुल कर्युं. पछी सूरि साधु तथा श्रावक बन्ने पक्षने योग्य अनुशासन (शिक्षा) आपीने अनशन ग्रहण करी स्वर्गे गया. ते सर्व वृत्तांत गोष्ठामाहिले सांभळ्यो. एटले ते मथुराथी त्यां आव्या, अने पूछ्युं के-"सूरिए पोताने स्थाने कोने स्थाप्या ?" ते सांभळीने सर्वेए वाल विगेरेना घडाना दृष्टांत पूर्वक सर्व वृत्तांत कह्यो, तेथी ते अति खेद पाम्या; अने जूदा उपाश्रयमां रहीने सूरिनी निंदा करवा लाग्या. तेमज साधुओने अवळुं समजाववा मांड्युं, अने कह्युं के-"तमे वालना घडा जेवा आचार्यनी पासे केम श्रुतनो अभ्यास करो छो ?"

एक दिवस दुर्बळिका पुष्पमित्र सूरिना शिष्य विन्ध्य नामना मुनि कर्म. प्रवाद नामना पूर्वनी आवृत्ति करता हता, तेमां एवो विषय हतो के-"जीवना प्रदेश साथे बद्ध थयेलुं कर्म जेनो बंध मात्र थाय छे एटले कषाय रहित (केवळी) मुनिने इर्यापथिकी संबंधी जे कर्म बंधाय छे ते बद्ध कहेवाय छे. ते कर्म कालांतर स्थितिने पाम्या विनाज सुकी भींत पर नांखेली भुकानी मुठीनी जेम जीवना प्रदेशथी जुदुं पडे छे.

हवे जीवना प्रदेशोए पोतानुं करी लीधेलुं जे कर्म ते बद्ध स्पृष्ट कहेवाय छे. तेवुं कर्म आर्द्र भींत पर नांखेला भीना चूर्णनी जेम काळांतरे नाश पामे छे; अने अति गाढ अध्यवसायथी बांधेलुं कर्म के जे अपवर्तनादि करणने अयोग्य होवाथी निकाचित कहेवाय छे ते कर्म अति गाढ बंधवाळुं होवाथी आर्द्र भींत उपर आकरा कळी चुनानो या सफेतानो हाथ दीधो होय तेनी जेम काळांतरे पण विपाकथी भोगव्या विना प्राये करीने क्षय पामतुं नथी. आ त्रणे प्रकारनो[1] बंध समजवा माटे सोयना समूहनुं दृष्टांत छे ते आ प्रमाणे-दोरो वींटेला सोयना समूह जेवुं बद्ध कर्म जाणवुं, लोढानी पाटीथी बांधेला सोयना समूह जेवुं स्पृष्ट बद्ध कर्म जाणवुं अने अग्निथी तपावी हथोडावती टीपीने एकत्र करेला सोयना समूह जेवुं बद्ध स्पृष्ट निकाचित कर्म जाणवुं. अहीं कोइने शंका थाय के-"निकाचित तथा अनिकाचित कर्ममां शो तफावत ?" तो तेनो उत्तर कहे छे के-"कर्मना संबंधमां श्रीकम्मपयडी ग्रंथमां अपवर्तनादिक आठ करण कहेलां छे, ते सर्व करण अनिकाचित कर्ममांज प्रवर्ते छे, अने निकाचित कर्ममां तो तेनुं फळ

१ प्रतिक्रमण हेतु ग्रंथमां स्पृष्ट, बद्ध, निधत्त ने निकाचित एम चार भेद कहेला छे.

उदय आवेथी प्राये करीने भोगववुंज पडे छे, एटलो निकाचित ने अनिकाचितमां फेर छे.

अहीं निकाचित कर्मना संबंधमां "प्राये करीने भोगववुंज पडे." एम प्राये शब्द कहेवानुं तात्पर्य ए छे के-"तवसाओ निकाइयाणं पि (तपथी निकाचित कर्मनो पण क्षय थाय.)" ए वचनना अनुसारे अत्यंत तप करवाथी तथा उत्कट अध्यवसायना बळथी निकाचित कर्ममां पण अपवर्तनादिक करणो प्रवर्ते छे. आवी रीते व्याख्या करवाथी ए तात्पर्य समजवुं के-क्षीरनीरनी जेम तथा अग्निथी तपावेला लोहना गोळानी जेम जीवना प्रदेश साथे कर्मनो संबंध छे." आ प्रमाणे विन्ध्य मुनिनी व्याख्या सांभळीने असत्कर्मना उदयने लीधे कदाग्रहथी तेने नहीं स्वीकारतो गोष्ठामाहिल तेनी पासे जइने बोल्यो के-" जीव कर्मनो जे तादात्म्य संबंध कह्यो ते दूषित छे. केमके तादात्म्यभाव मानवाथी जेम जीवना प्रदेश जीवथी भिन्न थता नथी तेम कर्म पण जीवथी अभिन्न रहेशे, अने तेथी सदा काळ जीव कर्म सहित रहेवाथी मोक्ष पामशे नहीं. मोक्षनो अभाव थशे माटे मारी युक्तिज योग्य छे के-सर्पनी कांचळीनी पेठे जीवनी साथे कर्मनो मात्र स्पर्शज छे. अग्निथी तपावेला लोहगोळाना न्यायनी जेम तादात्म्य भाव पाम्या विनाज ते जीवनी साथे जोडाय छे, अने तेनी साथे परभवमां जाय छे. एम मानवाथी मोक्षनी प्राप्ति रहेशे."

आ प्रमाणे तेनुं वचन सांभळीने विन्ध्य मुनिने शंका पडवाथी तेणे आचार्य पासे जइने पूछ्युं त्यारे आचार्ये कह्युं के-" तमे जे प्रथम कह्युं तेज सत्य छे. केमके-

> जीवो हि स्वावगाहाभिर्व्याप्त एवांबरे स्थितम् ।
> गृह्णाति कर्मदलिकं, जातु न त्वन्यदेशगम् ॥ १ ॥
> अथात्मान्यप्रदेशस्थं, कर्मादायानुवेष्टयेत् ।
> यद्यात्मानं तदा तस्य घटते कंचुकोपमा ॥ २ ॥

भावार्थ-" जीव पोतानी अवगाहनाथी व्याप्त थयेला आकाशप्रदेशमां रहेलांज कर्मनां दळीयांने ग्रहण करे छे. पण बीजा प्रदेशमां रहेलांने ग्रहण करतो नथी; तेथी जो कदाच आत्मा अन्य प्रदेशमां रहेला कर्मने ग्रहण करीने पोतानी फरता वींटे, तो ते कर्मने सर्प कांचळीनी उपमा घटी शके. ते शिवाय घटी शके नहीं."

आ प्रकारनुं गुरुनुं वचन विंध्य मुनिए गोष्ठामाहिलने कह्युं, पण तेणे अंगीकार कर्युं नहीं. एटले आचार्ये तेने बोलावीने पूछ्युं के–"तमे सर्पकंचुकनी जेम कर्मनो संबंध मानो छो. ते जीवना दरेक प्रदेशनी साथे मानो छो के जीवनी बहार त्वचाना पर्यंत भाग साथे फरतो विंटायेलो मानो छो? जो जीवना दरेक प्रदेशना पर्यंत भाग साथे मानशो, तो आकाशनी जेम जीवमां सर्व प्रदेशे कर्म प्राप्त थशे. तो पछी जीवनो मध्यभाग कयो के जे कर्म रहित रहेशे. केमके जीवना प्रति प्रदेशे कर्म लागवाथी कोइ मध्य प्रदेश बाकी रहेशे नहीं के जेथी कर्मनुं असर्वव्यापीपणुं थाय. ए रीते साध्यविकलता प्राप्त थवाथी कंचुकनुं दृष्टांत अघटित छे अने जो जीवनी बहार त्वचाना पर्यंत भाग साथे कंचुकनी जेम स्पर्श करेलुं कर्म मानशो, तो जीव एक भवमांथी बीजा भवमां जशे, त्यारे अंगना बाह्य मेलनी जेम तेनी साथे कर्म जशे नहीं; अने "भले जीवनी साथे कर्म न जाय तेमां शो दोष छे?" एम कहेशो तो सर्व जीवनो मोक्ष थशे केमके पुनर्जन्मना कारणभूत कर्मनोज तेनी साथे अभाव छे. इत्यादि अनेक दोष प्राप्त थशे."

ते सांभळीने गोष्ठामाहिले पूछ्युं के–"जो जीव अने कर्मनुं जुदापणुं न होय, तो जीव थकी तेनो वियोग शी रीते थाय?" त्यारे गुरुए कह्युं के–"जोके कर्म जीवनी साथे अभेदे करीने रह्युं छे, तोपण सुवर्ण अने माटीनी जेम तेनो वियोग थइ शके छे. जेम मिथ्यात्वादिके करीने कर्मनुं ग्रहण थाय छे, तेम ज्ञान अने क्रियाए करीने तेनो वियोग थइ शके छे." इत्यादि अनेक युक्तिओथी तेने समजाव्या छतां गोष्ठामाहिल बोध पाम्या नहीं, अने तेणे पोतानो कदाग्रह मूक्यो नहीं.

एकदा विंध्य मुनि नवमा प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्वमां आवेला मुनिओना प्रत्याख्यान (पच्चक्खाण) नुं वर्णन करता हता के–"मुनिए यावज्जीव (जीवनपर्यंत) सर्व सावद्यनां प्रत्याख्यानो त्रिविधे त्रिविधे करवां." ते सांभळीने गोष्ठामाहिले कह्युं के–"सर्व प्रत्याख्यान यावज्जीव आदि अवधि विनाज करवां. अवधि सहित करवाथी आशंसा[1] दोष प्राप्त थाय छे. जेमके कोइ साधु एवो विचार करे के–'प्रत्याख्यान पूर्ण थया पछी हुं स्वर्गादिकमां देवांगना साथे भोग विगेरे भोगवीश.' आम थवाथी परिणाम अशुद्ध थया, तेथी प्रत्याख्यान पण अशुद्ध थयुं." ते विषे सूत्रमां कह्युं छे के–

रागेण च दोसेण च, परिणामेण च न दूसियं जं तु ।
तं खलु पच्चक्खाणं, भावविसुद्धं मुणेयव्वं ॥ १ ॥

---

१ परभवमां भोगादिकनी इच्छा.

भावार्थ–" जे राग, द्वेष के परिणामथी दूषित थयेलुं न होय, तेज प्रत्याख्यान भावविशुद्ध जाणवुं."

अहीं गुरु तेने उत्तर आपे छे के–" तमे जे आशंसा दोष आप्यो ते काळनो अवधि करवाथी प्राप्त थाय छे? के वांच्छाथी प्राप्त थाय छे? जो काळनो अवधि करवाथी थतो होय तो पोरसी विगेरेना पच्चख्खाणमां पण ते दोष प्राप्त थशे केमके काळप्रत्याख्यानमां प्रहर विगेरे काळमान साक्षात् कहेलुं छे." जो कदाच " पोरसी विगेरेमां पण काळनो अवधि कहेवो नहीं " एम कहेशो तो दीक्षा ग्रहण करवाना दिवसथीज अनशन करवुं जोइशे, अने तीर्थंकरोए तो तपस्वीओने दश प्रकारे अनागत आदि प्रत्याख्यानो करवाना सिद्धांतमां कहेलां छे. हवे जो " तृष्णाथी आशंसा दोष प्राप्त थाय छे " ए बीजो पक्ष मानशो तो ते पण अयोग्य छे. केमके मुनिने अन्य भवमां पाप सेववानी इच्छा होती नथी; अने जो अवधि विना प्रत्याख्यान करे, तो सर्व आवता (भविष्य) काळनुं प्रत्याख्यान थइ जशे;तेम थवाथी आयुपना क्षये देवगतिने पामेला यतिने सावद्य कर्मना सेवनथी अवश्य व्रतनो भंग प्राप्त थशे. आ विगेरे कारणोथी आशंसा रहितपणे अवधि सहित प्रत्याख्यान करवाथी कायोत्सर्गनी जेम कांइ पण दोष नथी." इत्यादि युक्तिओथी समजाव्या छतां पण ज्यारे ते कांइ पण श्रद्धा पाम्यो नहीं, त्यारे पुष्पमित्र आचार्य तेने अन्य गच्छना बहुश्रुत अने वृद्ध मुनिओ पासे लइ गया. तेओए कह्युं के–" आ पुष्पमित्र आचार्य जेम कहे छे तेमज आर्यरक्षित सूरिए पण प्ररुपणा करेली छे. तेमां कांइ पण न्यूनाधिक नथी." त्यारे गोष्ठामाहिले कह्युं के–" तमारी जेवा ऋषिओ शुं जाणे? तीर्थंकरोए तो जेम हुं कहुं छुं, तेमज प्ररुपणा करी छे." स्थविर मुनिओए कह्युं के–" तुं मिथ्या अभिनिवेश न कर. एम करवाथी तीर्थंकरनी आशातना थाय छे ते शुं तुं जाणतो नथी?" इत्यादि कहेवाथी पण गोष्ठामाहिले अंगीकार कर्युं नहीं. त्यारे सर्व संघे मळीने शासनदेवताने बोलाववा माटे कायोत्सर्ग कर्यो; तेथी कोइ भद्रक देवीए आवीने कह्युं के–" मने आज्ञा आपो. हुं शुं कार्य करूं?" संघे सिद्धांतनो परमार्थ जाणतां छतां पण लोकना विश्वासने माटे कह्युं के–"हे देवी! तमे महाविदेहक्षेत्रमां तीर्थंकर पासे जइने पूछी लावो के–संघ जे वात कहे छे ते सत्य के गोष्ठामाहिल कहे छे ते सत्य?" देवीए कह्युं के–"हुं महाविदेहमां जइने पाछी आवुं त्यां सुधी मने मार्गमां विघ्न न थवा माटे कृपा करीने तमे कायोत्सर्गमां रहो के जेथी हुं जइ शकुं."संघे ते प्रमाणे कर्युं. पछी ते देवीए महाविदेहमां जइ प्रभुने पूछी आवीने संघने कह्युं के–" तीर्थंकरे मने कह्युं के " तमे (संघ) कहो छो ते सत्य छे अने श्री वीर जिनेश्वर

मुक्ति पाम्या पछी पांचसें चोराशी वर्षे सातमो निन्हव थवानो हतो ते आ मिथ्यावादी गोष्ठामाहिल थयेलो छे." ते सांभळीने गोष्ठामाहिल बोल्यो के-"आ बिचारी देवी अल्प ऋद्धिवाळी छे. तेनी महाविदेहमां जवानी शक्तिज क्यांथी होय?" एम कहीने तेणे ते वात पण अंगीकार करी नहीं, तेथी संघे तेने संघ बहार कर्यो. त्यारपछी आयुषना क्षये ते मिथ्या प्ररुपणा तथा कदाग्रहनी आलोचना कर्या विना मृत्यु पाम्यो.

आ दृष्टांतनुं तात्पर्य ए छे के-"संघे संघ बहार कर्या छतां पण गोष्ठामाहिले पोतानो मत छोड्यो नहीं, अने बोधिरत्न रहित थइने पृथ्वी पर अनेक माणसोने भ्रमावी पोते संसारमां भम्यो."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य
अष्टत्रिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३८ ॥

व्याख्यान २३९ मुं.

आठमो निन्हव.

स्वल्पमात्रजिनप्रोक्तवचनोत्थापकारिणः ।
जमालिप्रमुखा ज्ञेया, निन्हवाः सप्त शासने ॥ १ ॥

भावार्थ-"जिनेश्वरे कहेला वचनमांथी अल्पमात्र वचनने उत्थापन करनारा जमालि विगेरे सात निन्हवो जिनशासनमां थयेला जाणवा."

अथ सर्वविसंवादी, निन्हवः प्रोच्यतेऽष्टमः ।
श्रीवीरमुक्तेर्जातोऽब्दशतैः षड्भिर्नवोत्तरैः ॥ २ ॥

भावार्थ-" हवे श्रीवीरना निर्वाण पछी छसें नव वर्षे जिनेश्वरना सर्व वचननुं उत्थापन करनार आठमो निन्हव उत्पन्न थयो. तेनी हकीकत कहे छे."

आठमा निन्हवनी कथा नीचे प्रमाणे-

रथवीर नामना नगरमां हजार योधाने जीतनार शिवभूति नामनो एक क्षत्रिय हतो. ते राजानी सेवा करतो हतो. एकदा राजाए तेना शौर्यादिक गुणोनी परीक्षा करवा माटे कृष्ण चतुर्दशीने दिवसे तेने एक पशु तथा मदिरा आपीने कह्युं के-" तुं एकलो स्मशानमां जा अने आ बाळिदान आपीने पाछो आव. " ते मध्य रात्रिए एकलो स्मशानमां गयो. त्यां अनेक भूत, प्रेत, पिशाच विगेरेए तेने भय बताव्यो पण तेनुं एक रुंवाडुं पण चाल्युं नहीं. तेथी तेने शूरवीर जाणीने राजाए तेनो पगार वधारी आप्यो. पछी एक दिवसे राजाए दक्षिण मथुराना राजाने जीतवा माटे हजार योधानुं सैन्य मोकल्युं, अने उत्तर मथुराना राजाने जीतवा माटे एकला शिवभूतिने मोकल्यो. ते तुरत जीतीने पाछो आव्यो. ते जोइने राजाए तेनुं सहस्रमल्ल नाम पाड्युं, अने वरदान मागवानुं कह्युं. तेणे माग्युं के-"हे स्वामी! मने स्वतंत्रता आपो." एटले राजाए तेने स्वतंत्रता आपी.

पछी ते राजाना प्रसादथी मरजी मुजब विलास करतो नगरमां फरवा लाग्यो, अने राते बे पहोर रात्रि गया पछी घेर आववा लाग्यो; तेथी खेद पामीने तेनी स्त्रीए तेनी माने कह्युं के-" तमारा पुत्रथी हुं कायर थइ गइ छुं. ते कोइ पण दिवस रात्रे वखतसर घेर आवता नथी. तेथी जागरण तथा भूखने लीधे हुं निरंतर पीडा पामुं छुं. " ते सांभळीने सासुए कह्युं के-" हे वहु ! आजे तुं सुइ रहे, हुं जागीश. " तेम कहेवाथी वहु सुइ गइ. मध्य रात्रे सहस्रमले आवीने कह्युं के-" बारणुं उघाडो. " ते सांभळीने कोप पामेली माताए कह्युं के-" हे दुष्ट ! आ मध्य रात्रिने समये ज्यां द्वार उघाडां होय त्यां जा. " आ प्रमाणे सांभळवाथी क्रोध पामीने ते गाममां फरवा लाग्यो; एटलामां तेणे उघाडा द्वारवाळो साधुनो उपाश्रय जोयो, एटले तेणे जइने साधुने वांदी व्रत माग्युं. सूरिए राजाने वल्लभ तथा माता विगेरेए मोकळो नहीं करेलो तेमज स्वेच्छाचारी जाणीने तेने दीक्षा आपी नहीं; तोपण तेणे साधुना थुंकवाना पात्रमांथी भीनी राख लइने जातेज लोच कर्यो. एटले पछी कृष्णसूरिए तेने मुनिवेश आप्यो. पछी कृष्ण सूरिनी साथे विहार करतां एक दिवस पाछा तेज नगरमां आव्या. राजाए सहस्रमल्लने एक रत्नकंबल आप्युं, त्यारे आचार्ये तेने कह्युं के-" आपणे साधुने आवां बहु-मुलां उपकरण राखवां न जोइए. " गुरुए आम कह्या छतां पण तेणे ते कंबलने मूर्छाथी गुप्त रीते राख्युं, अने हमेशां तेनी संभाळ करवा लाग्यो. गुरुए तेनी कंबल उपरनी मूर्छा जाणी. तेथी एकदा ते कांइ बहार गयो हतो ते वखते कंबलने

फाडीने तेना पादप्रोंच्छण विगेरे करवा सारु सर्व साधुओने वहेंची आप्युं. ते वात जाणीने शिवभूतिने घणो क्रोध चड्यो, अने तेवी स्थितिमांज त्यां रह्यो.

एक दिवस आचार्य जिन कल्पिकनुं वर्णन करता हता. ते आ प्रमाणे- " जिन कल्पिक बे प्रकारना होय छे. एक पाणिपात्र एटले हाथमां लइने भोजन करनारा अने बीजा पात्र भोजी ते पात्रमां लइने भोजन करनारा. ते दरेकना पण बबे भेद छे. एक स्वल्प सचेलका एटले अल्प वस्त्र राखनारा अने बीजा अचेलका एटले बिलकुल वस्त्र नहीं राखनारा. " इत्यादि हकीकत सांभळीने शिवभूतिए कह्युं के-" जो एम छे तो हालमां शामाटे बहु उपधि राखवामां आवे छे ? जिन कल्प शामाटे अंगीकार करता नथी ? " गुरुए कह्युं के-"आ भरतक्षेत्रमां श्री वीरना धर्मपौत्र एटले तेमना त्रीजे पाटे थयेला श्रीजंबूस्वामीना निर्वाण साथे जिन कल्प विगेरे दश वस्तुओनो विच्छेद थयो छे, वळी तेवा संहननादिकनो[1] अभावथी वर्तमान काळमां तेम करी शकातुं नथी." ते सांभळीने शिवभूति बोल्यो के-" अल्प सत्ववाळाने माटे जिनकल्प विच्छेद थयो छे, पण मारा जेवाने माटे नहीं. केमके मारा जेवा महासत्व तो वर्तमान काळमां पण जिन कल्प अंगीकार करवाने समर्थ छे. मोक्षना अभिलाषीए समग्र परिग्रहनो त्याग करवो जोइए. तो पछी कषाय, भय, मूर्च्छादिक दोषना निधि समान आ अनर्थकारी परिग्रहथी शुं? जिनेंद्रो पोते अचेलकज हता. तेथी वस्त्र रहितपणुंज श्रेष्ठ छे." त्यारे गुरुए कह्युं के-" जो एम होय तो देहने विषे पण कषाय, भय, मूर्च्छा विगेरे दोषोनो संभव छे. माटे ते देहनो पण व्रत ग्रहण कर्या पछी तरतज त्याग करवो जोइशे. परंतु शास्त्रमां जे परिग्रह रहितपणुं कह्युं छे तेनो हेतु ए छे के -धर्मनां उपकरणो उपर मूर्छा राखवी नहीं, पण सर्वथा धर्मनां उपकरणनो त्याग करवो तेम नथी. वळी जिनेश्वरो पण सर्वथा अचेलक हता तेम नथी; केमके-" सव्वे वि एगदूसेण निग्गया जिणवरा चउवीसं पि (सर्व चोवीशे तीर्थंकरोए एक देवदूष्य वस्त्र लइने दीक्षा लीधेली छे.) इत्यादि वचनथी जिनेंद्रो पण सचेलक हता. " आ प्रमाणे आचार्ये तथा स्थविर मुनिओए पूर्वोक्त तथा वक्ष्यमाण[2] युक्तिओथी बोध कर्या छतां पण तथाप्रकारना कषाय अने मोहनीयना उदयथी तेणे पोतानो आग्रह छोड्यो नहीं, अने सर्व वस्त्रोने तजी दइने गाम बहार अरण्यमां जइने रह्यो.

---

१ संहनन ते शरीरनी मजबुती जिनकल्पीपणुं पाळवामां जेवी जोइए तेवी हाल नथी. वळी आदि शब्दथी तथाप्रकारनुं ज्ञान विगेरे पण नथी.

२ आगळ कहेवामां आवशे एवी.

एकदा उत्तरा नामनी तेनी बेन तेने वांदवा गइ त्यां पोताना भाइने वस्त्र रहित जोइने तेणे पण वस्त्रोनो त्याग कर्यो. पछी ते भिक्षाने माटे नगरमां गइ. त्यां कोइ वेश्याए तेने जोइने विचार्युं के-"वस्त्र रहित होवाथी बीभत्स देखाती आ स्त्रीने जोइने लोको अमारी उपरथी पण विरक्त थशे." एम धारीने तेणे तेनी इच्छा नहीं छतां बळात्कारे वस्त्र पहेराव्यां. ते वृत्तांत उत्तराए शिवभूति पासे जइने जणाव्यो. ते सांभळीने शिवभूतिए विचार्युं के-"वस्त्र रहित स्त्री घणी बीभत्स तथा अति लज्जास्पद थाय छे." तेथी तेणे उत्तराने कह्युं के-"हवे तुं तो आज रीते रहेजे, वस्त्र तजीश नहीं."

हवे अनेक जैन साधुओ शिवभूतिने समजाववा लाग्या के-"जिनागमने विषे त्रण कारणे वस्त्र धारण करवानुं कहेलुं छे." "तिहिं ठाणेहिं वत्थं धारेज्जा हिरि पत्तियं, दुगंच्छावत्तियं, परिसहवत्तियं."

अर्थ-"ह्री" एटले लज्जा अथवा संयम. तेना रक्षणनिमित्ते, लोकमां दुगंच्छा (निंदा) न थवा माटे तथा "परीषह" एटले टाढ, तडको, डांस, मच्छर विगेरेथी रक्षण थवा माटे. ए त्रण कारणे वस्त्र धारण करवां.

वळी कह्युं छे के-"तपस्विओने धर्ममां सहायभूत होवाथी शुद्ध आहारादिकनी जेम वस्त्रादिकनुं ग्रहण करवुं, तेमां दोष नथी."

वळी तुं एम कहेछे के-" हिंसानुबंधि, मृषानुबंधि, स्तेयानुबंधि अने संरक्षणानुबंधि एम चार प्रकारनुं रौद्र ध्यान कहेलुं छे. तेमां "हिंसा" एटले प्राणीनो वध तेनो "अनुबंध" एटले निरंतर चिंतवन जेमां होय ते हिंसानुबंधि, असत्यनुं चिंतवन जेमां होय ते मृषानुबंधि, चोरीनुं चिंतवन जेमां होय ते स्तेयानुबंधि, अने तस्करादिक थकी पोताना वित्तने गुप्त राखवा माटे निरंतर तेना रक्षण संबंधी चिंतवन करवुं ते संरक्षणानुबंधि. आमां रौद्र ध्याननो चोथो भेद जे संरक्षणानुबंधि छे ते वस्त्रादिक ग्रहण करवाथी अवश्य थशे. केमके ते रौद्र ध्याननो हेतु छे. वळी "शस्त्रादिकनी जेम दुर्गतिनुं कारण होवाथी वस्त्रादिक ग्रहण करवां नहीं" एवी तारी बुद्धि थाय तो ते पण अयुक्त छे. केमके-हे देवोना प्रिय! तारी आ युक्ति प्रमाणे तो देहादिकमां पण रौद्रध्याननी प्राप्ति थशे. केमके शरीरनुं पण जळ, अग्नि, चोर, डांस, शिकारीपशु, विष, कंटक विगेरेथी रक्षण करवानी जरूर पडे छे, तेथी देहादिकमां पण संरक्षणानुबंधिनी तुल्यता छे. एटले ते देहादिकनो पण त्याग करवो जोइशे.

१ खराब देखाववाळी.

कदाच तुं एम कहीश के–" देहादिक मोक्षनुं साधन करवामां अंगीभूत होवाथी जयणावडे तेनुं संरक्षण करवुं तेमां दोष नथी. पण ते प्रशस्त संरक्षण छे." तो अहीं पण आगममां कहेला यतना (जयणा) ना प्रकारथीज वस्त्रादिकनुं संरक्षण करवुं, ते केम प्रशस्त नथी? माटे वस्त्रादिकनो शामाटे त्याग करवो? वळी " मुच्छा परिग्गहो वुत्तो, इति वुत्तं महेसिणा (भगवंते मूर्छानेज परिग्रह कहेलो छे एम महर्षि श्रीसुधर्मास्वामीए कह्युं छे). " इत्यादि श्रीसय्यंभवसूरिनां वचनथी वस्त्र, वित्त, देह विगेरेमां मूर्छा उत्पन्न थाय ते परिग्रह छे.

प्रश्न–मुनि जो वस्त्र ग्रहण करे, तो पछी साधुने अचेल परीषह सहन करवानुं केम कह्युं छे? केमके वस्त्र न होय तोज ते घटे छे.

उत्तर–तारुं कहेवुं अयोग्य छे. केमके–जीर्णप्राय वस्त्रथी पण वस्त्ररहितपणुं लोकमां प्रसिद्ध छे. जेमके कोइ स्त्री जीर्ण अने फाटेलुं वस्त्र शरीरे वींटीने कोइ वणकरने कहे छे के–'हे वणकर! उतावळथी मारी साडी वणीने मने आप. केमके हुं नागी फरुं छुं.' अहीं वस्त्र सहित छतां पण स्त्रीने विषे नग्नपणानो शब्द प्रवर्ते छे. शास्त्रमां पण " जस्सठ्ठा कीरइ नग्गभावो " एवुं वाक्य छे ते उपचारिक नग्नभावने माटेज छे, तेथी वस्त्र राखवामां कोइ प्रकारनो विरोध नथी; तेज प्रमाणे मुखवस्त्रिका रजोहरण विगेरे उपकरणो पण संयममां उपकारी होवाथी ग्रहण करवा योग्य छे. कह्युं छे के–

स्थानोपवेशनस्वाप, निक्षेपग्रहणादिषु ।
जंतुप्रमार्जनार्थं हि, रजोहरणमिष्यते ॥ १ ॥

भावार्थ– " कोइ पण स्थानने विषे बेसवुं, शयन करवुं, कोइ वस्तु मूकवी, लेवी विगेरे कार्यमां जंतुना प्रमार्जनने माटे रजोहरणनी जरुर छे. "

संपातिमादिसत्वानां, रक्षायै मुखवस्त्रिका ।
भक्तपानस्थजंतूनां, परीक्षायै च पात्रकम् ॥ २ ॥

भावार्थ–"संपातिम[1] विगेरे जंतुओना रक्षण माटे मुखवस्त्रिकानी जरुर छे, अने भक्त पानने विषे रहेला जंतुनी जयणाने माटे पात्रनी जरुर छे."

वळी पात्र विना सजीव गोरसादिक[2] अजाणपणाथी हाथमां लइ लीधुं. पछी तेनुं शुं करवुं? तेमां रहेला जीवनी हिंसाज थाय; तथा हाथमां लीधेला

१ उडीने पडता. २ दहीं, दुध, छाश विगेरे.

प्रवाही पदार्थो हाथमांथी गळे तेथी कुंथुवा, कीडी विगेरे अनेक जीवोनी हिंसा थाय, तथा गृहस्थो मुनिए वापरेला पात्रो धोवे लूंछे तेथी पश्चात्कर्मादि दोष लागे; तेथी बाळ अने ग्लानादि साधुओनी वैयावच्चने माटे तेमज पारिष्ठापनिका समिति जाळववाने माटे साधुने पात्रनुं ग्रहण करवुं योग्य छे. वळी जघन्यथी पण नव पूर्वमां कांइक ओछुं भणेला, उत्तम धैर्य अने संहननवाळा "तवेण सुत्तेण सत्तेण (तप, सूत्र अने सत्ववडे)" इत्यादि भावनाए करीने प्रथम तुलना कर्या पछीज जिन कल्प अंगीकार करी शके छे. पण शेरीना सिंह समान तारा जेवाने माटे तीर्थंकरोए जिन कल्पनी आज्ञा आपी नथी. तेमज तुं तीर्थंकरनी तुल्यता करे छे, ते पण योग्य नथी. केमके जिनेश्वरो तो पाणिप्रतिग्रहादि अनंत अतिशयोवाळा होय छे. माटे तारुं मानवुं सर्वथा त्याज्य छे."

इत्यादि अनेक युक्तिथी समजाव्या छतां पण ते मिथ्या अभिनिवेशथी श्री तीर्थंकरनां तथा मुनींद्रोनां अनेक वचनोनो उत्थापक थयो. ते शिवभूतिना कोडिन्य अने कोटवीर नामना बे बुद्धिशाळी शिष्यो थया. तेमनाथी ते मतनी परंपरा चाली. पछी तो तेओए अनुक्रमे "केवळी आहार करे नहीं, स्त्रिओ मोक्ष पामे नहीं, तिवीहार उपवासमां सचित्त जळ पीवामां दोष नहीं, दिगंबर साधु देवद्रव्य ले ने तेनो व्यय करे, तेमां दोष नहीं" विगेरे जिनागमथी विरुद्ध लगभग आठसो वचन नवां रच्यां, अने ते वचनो तेओ स्वेच्छाए बोलवा लाग्या. माटे तेओ सर्वविसंवादी (उत्थापक) थया. ते बोटिकनी परंपरामां थयेला बोटिको दिगंबर कहेवाय छे.

आ प्रमाणे दिगंबर नामनो आठमो निन्हव पोतानुं शुद्ध बोधिरत्न गुमावी बेठो. केमके समकित (बोधिरत्न) पाम्या छतां पण कोइने जतुं रहे छे, माटे हे भव्य प्राणीओ ! प्रयत्न वडे समकितनुं रक्षण करो.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य एकोनचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २३९ ॥

व्याख्यान २४० मुं.

ढुंढक मत विषे.

श्रीमद्वीरजिनं नत्वा, वक्ष्येऽहं श्रुतनिंदकान् ।
चरित्रं वंगचूलिकाध्ययनाद्धारितं यथा ॥ १ ॥

भावार्थ—"श्रीमान् वीर जिनेश्वरने नमस्कार करीने वंगचूलिका नामना अध्ययनमांथी वांचेलुं श्रुतना निंदकनुं चरित्र हुं कहुं छु."

श्रीवीरपरमात्माना पांचमा पट्टने धारण करनार श्रीयशोभद्र सूरिना शिष्य श्रीभद्रबाहु स्वामी श्रुतकेवली थया. तेमना शिष्य अग्निदत्त मिथिला नगरीना उद्यानमां प्रतिमा[1] अंगीकार करीने तप करता हता. ते वखते मदिरा तथा मांसमां आसक्त एवा कोइ बावीश मित्रो कामलता नामनी वेश्या साथे अयोग्य चेष्टा करता हमेशां उपवनमां क्रीडा करता हता. एकदा मदिरापानथी उद्धत थयेला तेओ ते अग्निदत्त मुनिने जोइने तेने हणवा माटे अति तीक्ष्ण खड्ग हस्तमां धारण करीने एक साथे दोड्या. दोडतां मार्गमां एक अंध[2] कूपमां तेओ उपरा-उपरी पड्या. तेथी एक बीजानां शस्त्रो परस्पर लागवाथी सर्वे मृत्यु पामी गया. तेओनी ए स्थिति जोइने अग्निदत्त मुनिए विचार्युं के–"अरे रे! आ बिचारा सुकृत कर्या विना अकाळे मृत्यु पाम्या." पछी ते साधु कायोत्सर्ग पारीने यशोभद्र गुरुमहाराज पासे गया. गुरुनी पासे विनयपूर्वक "ते बावीश मित्रो जे मरण पाम्या तेमनी शी गति थइ अने शी गति थशे?" ते पूछ्युं. त्यारे त्रण ज्ञानवाळा अने दृष्टिवादना जाणनार यशोभद्र गुरुए श्रुतनो उपयोग दइने तेओनुं बहु भवभ्रमणनुं चरित्र कही बताव्युं ते नीचे प्रमाणे–

"हे अग्निदत्त! ते बावीश मनुष्यो तने हणवा माटे दोडतां अंधकूपमां पड्या पछी अंतर्मुहूर्तमांज ते गणिकानी इच्छावाळा अध्यवसायथी मरीने तेज वेश्याना जमणा स्तनमां पोतेज करेला नखक्षतमां कृमिपणे उत्पन्न थया. तेथी वेश्याने स्तनमां अत्यंत वेदना थवा लागी. अनेक वैद्योनां औषधो निष्फळ गयां. अंते एक वैद्ये तेनो उपाय जाणीने तेना स्तनने विदारी तेमांथी हाड, मांस अने रुधिरमां अति तृष्णावाळा ते बावीश बेइंद्रिय कीडाओने काढी जळना पात्रमां

---

१ मुनिने वहेवानी बार पडिमाओछे तेने अंगीकार करीने. २ जळ रहित घणो उंडो कूवो.

नाखीने ते वेश्याने बताव्या. पछी स्तनने व्रण रुझावानी दवाथी रुझवी दीधुं. ते वैद्यने तेणे घणुं द्रव्य आप्युं. पछी ते बावीश कीडाओ उपर पूर्व भवना स्नेहथी दया लावीने वेश्याए विचार्युं के—"आ बिचारा मारा हाथना स्पर्शथी मरी जशे, माटे हुं एओने नगरनी खाइमां पडेला कूतराना शबमां मूकुं." एम विचारीने तेणे ते प्रमाणे कर्युं. परंतु त्यां पण ते बावीशे कीडा ताप, क्षुधा अने तृषाथी पीडा पामीने एक अंतर्मुहूर्तमां मरण पाम्या. त्यांथी तेओ साधारण वनस्पति-कायमां मोथ जातिना कंदमां उत्पन्न थशे. त्यां ते कंदने खोदतां तेओ सर्व मरीने पृथ्वीकाय आदि पांचे एकेंद्रियमां जघन्य अने मध्यम स्थितिना आयुष्यवाळा थशे. त्यांथी मरीने तेज कामलता वेश्याना उदरमां करमीया थशे. त्यां विरेचनना प्रयोगथी तेओ मरण पामीने मळद्वारे बहार नीकळशे, अने तेनीज विष्टामां तेंरिद्रिय-पणे उत्पन्न थइने तथा अंतर्मुहूर्तमां मरीने फरीथी तेज विष्टामां चौरिंद्रियपणे उत्पन्न थशे. एवी रीते तेज वेश्यानी विष्टामां, मूत्रमां, थुंकमां, बडखामां अने नाकनी लींट विगेरेमां बेइंद्रिय तेइंद्रिय ने चौरिंद्रियपणे सात सातवार उत्पन्न थशे. ए प्रमाणे ओगणत्रीश भव करशे. पछी त्रीशमा भवमां ते बावीश जीवो तेज वेश्याना घरनी खाळमां समूर्छिम देडका थशे. त्यां बेथी नव दिवसनुं आयुष्य भोगवीने ऐकत्रीशमा भवमां ते वेश्याना घरने विषे गर्भज उंदर थशे. त्यां बेथी नव मासना आयुष्यने अंते मरीने बत्रीशमा भवने विषे ते गणिकाना आंग-णामां विष्टा विगेरेनो आहार करनारा शूकर (भुंड) थशे. त्यां बेथी नव वर्षनुं आयुष्य भोगवीने तेत्रीशमा भवने विषे अवन्ती नगरीमां चांडाळना कुळमां उत्पन्न थशे. त्यां ते बावीशे चांडाळो वृद्धि पामीने हुंड संस्थानवाळा, लांबा दांतवाळा, मोटा पेटवाळा, गळी जेवा कृष्ण वर्णवाळा, जोवाने पण अयोग्य, मनुष्योने दुगंच्छा उत्पन्न करनारा अने पोताना नीच कर्ममां कुशळ थशे. एवा समयमां हे अग्निदत्त ! ते वेश्या वृद्ध थवाथी द्रव्यने पोताना धर्ममां खर्ची, तापसी दीक्षा रूप धर्म स्वीकारी मिथिला नगरीथी नीकळीने काशी देशमां गंगा नदीने कांठे रहेला तापसो पासे आवशे, अने तेमनी पासे शौचमूळ धर्मने अंगीकार करशे. त्यांथी फरती फरती अनुक्रमे अवंति देशमां रहेली सिप्रा नदीने कांठे आवशे. त्यां अनेक मनुष्यो पासे पोतानो शौचमूळ धर्म प्रगट करशे अने कहेशे के—"हे मनुष्यो ! शौचमयी धर्म बे प्रकारनो छे, द्रव्य शौच तथा भाव शौच. तेमां जळ अने माटीथी द्रव्य शौच थाय छे, अने दर्भ तथा मंत्रथी भाव शौच कहेवाय छे. जे कांइ पण अशुचि थयुं होय ते सर्वने माटी लगाडीने पछी तेने शुद्ध जळथी धोवुं जोइए, तेम करवाथी सर्व वस्तु शुद्ध थाय छे. आ प्रमाणे निरं-

तर सातवार जळवडे शुद्धि करवाथी प्राणीओ मोक्षपदने पामे छे. " इत्यादि ते वेश्या तापसीनो उपदेश सांभळीने पेला चांडाळो ते धर्मना रसिक थशे; तेथी बीजा बधा दर्शनना तेमां विशेषे जैन मुनिना तथा जैन चैत्योना वधारे द्वेषी थशे, अने तेमना अवर्णवाद बोलशे. छेवट तेओ वैराग्य पामीने ते वेश्या तापसी पासे तापसी दीक्षा लेशे. त्यारपछी पांच वर्षे मरण पामीने चोत्रीशमा भवे तेज अवंती नगरीमां भांडना कुळने विषे उत्पन्न थशे त्यां अनेक प्रकारनी भांडचेष्टा करीने पोतानी आजीविका चलावशे. एक वखत कुशस्थल नगरना राजानी पासे तेओ भांडचेष्टा करीने लोकोने हसावशे. ते समये अष्टम तपने पारणे कोइ बे साधुओ गोचरीने माटे त्यांथी नीकळशे तेने जोइने पुरोहितना कहेवाथी ते भांडो एओनी हीलना करशे, तोपण ते साधुओ तो मौनज रहेशे. तेथी ते भांडो थाकीने साधुओने जवा देशे. पछी हे अग्निदत्त! ते भांडो एक वखत साथे सुतेला हशे, ते समये तेमना पर अकस्मात् विद्युत्पात थशे, तेथी तेओ मरण पामशे. त्यांथी पांत्रीशमा भवने विषे मध्य देशमां जूदा जूदा ब्राह्मणना कुळमां उत्पन्न थशे. त्यां अनुक्रमे वृद्धि पामीने चौद विद्यामां प्रवीण थशे. एक वखत तेओ धारापुर नगरमां यज्ञदत्त नामना ब्राह्मणना निमंत्रणथी तेना यज्ञमां जशे. त्यां यज्ञमंडपनां द्वार बंध करीने तेओ अग्निकुंडमां होम करशे. ते वखत कुंडना अग्निनी ज्वाळाथी बळतां बळतां तृषाथी व्याकुळ थइने आर्तध्यानवडे मरण पामशे, अने सिप्रा नदीना द्रहमां मत्स्यपणे उत्पन्न थशे. उपराउपर सात वार जळचर योनिमां उत्पन्न थशे. त्यारपछी नव वार पक्षीओमां उत्पन्न थशे अने पछी अग्यार वार पशुओमां उत्पन्न थशे. एटले सर्व मळीने बासठ भव थशे; तेमां छेल्ला बासठमा भवमां तेओ मृगपणुं पामशे. त्यां दावानळना अग्निथी बळीने त्रेसठमा भवे ते बावीश गोठीला पुरुषो मध्यदेशमां श्रावकना कुळमां जूदा जूदा उत्पन्न थशे. त्यां

दक्षिणेन्द्रनी देशे उणा अर्ध पल्योपमना आयुष्यवाळी सुचक्ला नामे देवी थशे. त्यां विभंग ज्ञानवडे पूर्वना घणा भवना संबंधवाळा ते बावीश वणिकोने जोइने ते हर्ष पामशे, तुष्टमान थशे अने तेओने सर्व कार्यमां सहाय करशे. ते देवीना प्रभावे करीने तेओ समृद्धिवाळा थशे. पछी तेओ सर्व जन समक्ष हर्ष पूर्वक उद्घोषणा करशे के–" हे मनुष्यो! जुओ, अमारा धर्मनुं प्रत्यक्ष फळ के अमे केवुं सुख भोगवीए छीए? तमे पण अमारा धर्मने अंगीकार करो. पथ्थरना बिंबनी पूजा करवाथी अने छकाय जीवनी हिंसा करवाथी शुं फळ पामशो?" इत्यादि वचनो कहेवा वडे ते बावीशे भ्रष्ट श्रावको अनेक लोकोने कुमार्गमां पाडशे. ते वखते तीर्थंकरोए निरूपण करेला श्रुतनी हीलना थशे. श्रमण निर्ग्रंथोनो उदय, पूजा, सत्कार थशे नहीं, अने धर्मनुं पालन करवुं अति दुष्कर थइ पडशे. पछी ते बावीशे वाणीआओ आयुषने अंते सोळ प्रकारना रोगनी पीडाथी अति कष्ट पामीने आर्तध्यानवडे मरण पामशे, अने धम्मा नामनी पहेली नरकना प्रथम प्रस्तरमां दश हजार वर्षना आयुष्यवाळा नारकी थशे. त्यांथी नीकळ्या पछी पण अनेक योनिमां परिभ्रमण करशे. श्रीजिनागमनी हीलना करवाना कारणथी तेमने बोधिरत्ननी प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ थशे.

आ प्रमाणे सूरिनां वचन सांभळीने अग्निदत्त मुनिए फरीथी गुरुने वंदना करीने पूछ्युं के–" हे स्वामी! कया काळमां ए श्रुतनिंदकोनी उत्पत्ति थशे?" तेनो उत्तर जे यशोभद्र सूरिए कह्यो तेनी वंगचूळिआमां जे गाथाओ छे ते आ प्रमाणे–

भणइ जस्सभद्दसुरि, सुओवओगेण अग्गिदत्तमुणि।
सुणसु महाभाय जहा, सुअहिलणमह जहा उदओ ॥ १ ॥
मुरकाओ वीरपहुणो, दुसएहियएगनवइअहिएहिं।
वरिसाइ संपइनिवो, जिणपडिमाराहओ होही ॥ २ ॥
तत्तो अ सोलसएहिं, नवनवइसंजुएहिं वरिसेहिं।
ते दुट्ठा वाणियगा, अवमन्नइस्संति सुयमेयं ॥ ३ ॥
तंमि समए अग्गिदत्ता, संघसुयजम्मरासिनरकत्ते।
अडतीसइमो दुट्ठो, लग्गिस्सइ धूमकेउगहो ॥ ४ ॥

तस्स ठिइ तिन्निसया, तित्तिसा एगरासि वरिसाणं ।
तम्मियमीण पइठो, संघस्स सुयस्स उदओ पच्छा ॥ ५ ॥
इय जस्सभद्दगुरुणं, वयणं सोच्चा मुणि सुवेरग्गो ।
पायाहिणं कुणंतो, पुणो पुणो वंदए पाए ॥ ६ ॥
आपुच्छीऊण सूरिं, सुगुरु तह भद्दबाहु संभूयं ।
संलेहणपवन्नो, गओग्गिदत्तो पढमकप्पे ॥ ७ ॥

भावार्थ-यशोभद्र सूरिए श्रुतना उपयोग पूर्वक अग्निदत्त मुनिने कह्युं के-"हे महा भाग्यशाळी! श्रुतनी निंदा अने उदय जेम थवानो छे तेम सांभळ-श्रीवीरप्रभुना निर्वाण पछी बसे एकाणुं वर्षे जिनप्रतिमानो आराधक संप्रति राजा थशे. त्यार पछी सोळसें ने नवाणुं वर्षे ते दुष्ट वाणियाओ श्रुतनी निंदा करशे. ते समये हे अग्निदत्त ! संघ अने श्रुतनी जन्मराशि उपर आडत्रीशमो धुमकेतु नामनो ग्रह बेसशे. ते ग्रहनी स्थिति एक राशि उपर त्रणशें ने तेत्रीश वर्षनी छे, तेथी ते ज्यां सुधी वर्तशे त्यां सुधी आ लोकोना पंथनुं रहेवुं थशे; ते उतरशे एटले संघनो अने श्रुतनो उदय थशे. आ प्रमाणे यशोभद्र गुरुनुं वचन सांभळीने अत्यंत वैराग्य पामेला अग्निदत्त मुनि गुरुनी प्रदक्षिणा करता सता वारंवार तेमना चरणे नमस्कार करवा लाग्या. पछी यशोभद्र सूरिनी तथा भद्रबाहु स्वामी अने संभुतिविजय गुरुनी आज्ञा लइने अग्निदत्त मुनि अनशन करी प्रथम देवलोकमां गया."

"सिद्धान्त तथा चैत्य आदिनो लोप करनारा अने मिथ्यात्व गुणस्थानमां रहेला ते बावीश वाणीआओ संसार रूपी कूपमां चिरकाळ सुधी भटकशे. माटे आगमने जाणनारा बीजाओए कदापि पण तेम करवुं नहीं."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ षोडशस्तंभस्य
चत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४० ॥

स्थंभ सोळमो संपूर्ण.

श्री उपदेश प्रासाद.

स्तंभ १७ मो.

व्याख्यान २४१ मुं.

क्रोधविषे.

बध्धं यद्येन क्रोधेन, वचसा पूर्वजन्मनि ।
रुदद्भिर्वेद्यतेऽवश्यं, तत्कर्मेह शरीरिभिः ॥ १ ॥

भावार्थ–"प्राणीओए पूर्व जन्ममां वचनवडे करीने क्रोधथी जे कर्म बांध्युं होय ते कर्म आ जन्ममां प्राणीओने रोतां रोतां पण अवश्य भोगववुं पडे छे." आ विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

अमरदत्त ने मित्रानंदनी कथा.

अमरपुर नगरमां मकरध्वज नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने **मदनसेना** नामनी पट्टराणी हती. एकदा तेणे राजाना मस्तकपर उगेलो एक पळी (धोळो वाळ) काढीने राजाने देखाड्यो. ते जोइने राजाने वैराग्य उत्पन्न थयो, तेथी राणी सहित तेणे तापसी दीक्षा ग्रहण करी. अन्यदा गुप्त गर्भवाळी[1] राणी तापसीए पुत्र प्रसव्यो. परंतु अयोग्य आहारना प्रभावथी ते मूर्च्छागत थइने मरण पामी. ते जोइने राजा तापस चिंतातुर थयो. पछी तेणे पोताना कोइ रागी श्रेष्ठीने ते पुत्र पाळवा आप्यो. श्रेष्ठीए पोतानी स्त्रीने आप्यो. ते पुत्रनुं नाम अमरदत्त राख्युं. अनुक्रमे ते युवावस्था पाम्यो. तेने **मित्रानंद** नामे एक मित्र थयो. एकदा ते बन्ने मित्रो सिप्रा नदीने कांठे आवेला एक वडनी पासे मोइ दांडीए रमता हता. ते वखते अमरदत्ते दंडवडे मोइ उछाळी, ते वड वृक्षे बांधेला कोइ चोरना मृतकना मुखमां पडी. ते जोइने हसतां हसतां मित्रानंदे मित्रने कह्युं के–" आ अद्भुत बनाव तो जुओ ! " त्यारे ते चोरनुं शब वोल्युं के–

[1] जे गर्भनो देखाव न जणाय ते गूढगर्भ कहेवाय छे. राणीने प्रथम संसारीपणामां गर्भ रहेलो ते न जणावाथी तापसी थएली, नहींतो गर्भिणी स्त्री तापसी थइ शकती नथी.

"अरे तुं केम हसे छे ? तारी पण आवीज दशा थशे, अने आज प्रमाणे तारा मुखमां पण मोइ पडशे." ते सांभळीने मित्रानंद भय पाम्यो, अने कोइ पण ठेकाणे रति पाम्यो नहीं. तेने शांत करवा माटे अमरदत्त शिखामण देवा लाग्यो के–" हे मित्र ! मृतकमां प्रवेश करेला व्यंतरना वचनथी केम भय पामे छे ? तेणे तो तने मश्करीमां कह्युं हशे, तो पण तुं उद्यम कर." कह्युं छे के–

आपन्निमित्तदृष्टापि, जीवितांतविधायिनी ।
शांता पुरुषकारेण, ज्ञानगर्भस्य मंत्रिणः ॥ १ ॥

भावार्थ–"प्राणनो नाश करनारी आपत्ति, निमित्त वडे जाण्याछतां पण पुरुषार्थवडे **ज्ञानगर्भ** नामना मंत्रीनी शांत थइ."

"माटे आपणे आ स्थान छोडीने बीजे ठेकाणे जइए." पछी तुल्य सुख दुःख वाळा ते बन्ने मित्रो त्यांथी नीकळीने **पाटलीपुर** नजीक जइ पहोंच्या. त्यां वृक्ष विगेरेथी सुशोभित एक उपवनमां उंचो महेल जोइने तेमां पेठा, अने बागनी शोभा जोतां जोतां महेलमां गया. त्यां जाणे साक्षात् ब्रह्माए बनावी होय तेवी एक रूपवती जुवान स्त्रीनी पुतळी जोवामां आवी. तेनां रूप तथा लावण्यने जोइने अमरदत्त मोह पामी गयो. तेथी ते त्यांथी आघो पाछो पण जाय नहीं, त्यांज स्थिर थइ गयो. मित्रानंद तेने वारंवार गाममां जवानुं कहेतां थाकी गयो, छेवट ते बोल्यो के–"हे मित्र अमरदत्त ! आ पथ्थरनी पुतळी उपर प्रीति बांधीने शुं उभो छे ? केमके आकाशने मंथन करवानी जेम तारी इच्छा निष्फळ छे." अमरदत्ते कह्युं के–"हे मित्र ! जो हुं अहींथी चालीश तो जरूर मारुं मृत्यु थशे." ते सांभळीने मित्रानंद अत्यंत रोवा लाग्यो एटले अमरदत्त पण ते पुतळी विना रहेवाने अशक्त होवाथी रोवा लाग्यो. तेवामां ते प्रासाद करावनार श्रेष्ठी त्यां आवी चड्यो. तेणे बन्नेने रोतां जोइने पूछ्युं के–"हे भाइ ! तमे बन्ने केम रडो छो ?" त्यारे मित्रानंदे सर्व वृत्तांत कही बतावीने पूछ्युं के–"हे पिता ! आ संकटमां हवे शो उपाय करवो?" श्रेष्ठी बोल्यो के–"आ पुतळी बनावनार कारीगर सोपारकपुरमां रहे छे तेने पूछो, ते मर्म बतावशे." मित्रानंद बोल्यो के–"हे पिता! जो तमे आ मारा मित्रनी संभाळ राखो तो हुं सोपारकपुरे जइने ते कारीगरने पूछुं के–'आ पुतळी तेणे स्वभावथीज घडी छे के कोइ वर्तमान स्त्रीनुं रूप जोइने चीतरी छे?' जो कदाच आवी कोइ पण कन्या हशे, तो हुं मारा मित्रनो मनोरथ पूर्ण करीश." ते सांभळी श्रेष्ठीए अमरदत्तनी संभाळ राखवानुं अंगीकार कर्युं. त्यारे अमरदत्त

बोल्यो के–' हे मित्र ! तुं जाय छे, पण जो हुं तने आपत्ति प्राप्त थयानुं सांभळीश तो मारा प्राण नाश पामशे.' मित्रानंद बोल्यो के–" जो हुं बे मासमां पाछो न आवुं तो मित्र नथी एम जाणजे." आ प्रमाणे तेने धैर्य आपीने मित्रानंद सोपारकपुरे पहोच्यो अने उत्तम वेष धारण करीने ते कारीगरने घेर गयो. कारीगरे तेनो सत्कार करी आववानुं कारण पूछ्युं, त्यारे मित्रानंदे कह्युं के–"मारे एक देवळ बंधाववानी इच्छा छे परंतु कोइ पण ठेकाणे तमारुं बांधेलुं देवळ होय तो देखाडो." कारीगर बोल्यो के–" पाटलीपुरमां में मारा हाथथी एक प्रासाद कर्यो छे, ते तमे जोयो छे?" मित्रानंदे कह्युं के–" हा जोयो छे, पण ते प्रासादमां एक पुतळी छे, तेनुं रूप तमे तमारी बुद्धिकल्पनाथी कर्युं छे? के एवुं रूप साक्षात् कोइ ठेकाणे जोइने कर्युं छे?" कारीगरे कह्युं के–" अवन्ती नगरीना राजानी पुत्री रत्नमंजरीनुं स्वरूप जोइने ते पुतळी में करी छे." त्यारे मित्रानंदे तेने कह्युं के–" ठीक त्यारे हुं सारुं मुहूर्त जोइने तमारी पासे आवीश, तमे तैयार थइ रहेजो." एम कहीने ते अवन्ती नगरीए गयो अने गामना दरवाजा पासे एक देवालय हतुं तेमां तेणे निवास कर्यो. तेवामां तेणे कोइ एक गृहस्थे करावेली उद्घोषणा सांभळी के–" रात्रिना चार पहोर सुधी आ मडदानुं जे रक्षण करे तेने एक हजार सोनामहोर हुं आपीश." आ प्रमाणे सांभळीने मित्रानंदे शबरक्षण अंगीकार कर्युं. ते वखते तेने लोकोए शीखामण आपी के– " आ नगरमां मोडी राते गामना दरवाजा बंध थइ गया पछी जे कोइ मरी जाय तेना मृतकने मारी[1] खाइ जाय छे; माटे तारामां तेनाथी रक्षण करवानुं सामर्थ्य होय तो आ कार्य अंगीकार करजे." मित्रानंदे कह्युं के–" वीर पुरुषोने आमां मोटुं कार्य शुं छे?" पछी ते गृहस्थे तेने ठरावना अर्धा रुपीआ तथा शब सोंप्युं, अने बाकीना रुपीआ प्रातःकाळे आपीश, एम कहीने ते पोताने घेर गयो. अहीं मित्रानंद शबनुं रक्षण करवा रह्यो छे, त्यां मध्यरात्रिए भूत, प्रेत विगेरेना उपसर्गो थवा लाग्या, पण तेणे ते धैर्यथी दूर कर्या, अने आखी रात्र शबनुं रक्षण कर्युं. प्रातःकाळे ते शबने लइ जइने तेना स्वजनोए अग्निदाह कर्यो. पछी मित्रानंदे शरत प्रमाणे बाकीना रुपीआ माग्या, पण श्रेष्ठीए आप्या नहीं. त्यारे ते बोल्यो के–" हवे तो ते द्रव्य अहींना राजानी समक्ष लउं तोज हुं वीराग्रणि खरो." पछी ते सुंदर वेष धारण करीने राजानी मानीती वेश्याने घेर गयो. ते वेश्याए तेनो सत्कार कर्यो. मित्रानंदे रात्रि रहेवा माटे चारसो

[1] मरकी अथवा कोइ देवीविशेष.

"अरे तुं केम हसे छे ? तारी पण आवीज दशा थशे, अने आज प्रमाणे तारा मुखमां पण मोइ पडशे." ते सांभळीने मित्रानंद भय पाम्यो, अने कोइ पण ठेकाणे रति पाम्यो नहीं. तेने शांत करवा माटे अमरदत्त शिखामण देवा लाग्यो के–"हे मित्र ! मृतकमां प्रवेश करेला व्यंतरना वचनथी केम भय पामे छे ? तेणे तो तने मश्करीमां कह्युं हशे, तो पण तुं उद्यम कर." कह्युं छे के–

आपन्निमित्तदृष्टापि, जीवितांतविधायिनी ।
शांता पुरुषकारेण, ज्ञानगर्भस्य मंत्रिणः ॥ १ ॥

भावार्थ–"प्राणनो नाश करनारी आपत्ति, निमित्त वडे जाण्याछतां पण पुरुषार्थवडे ज्ञानगर्भ नामना मंत्रीनी शांत थइ."

"माटे आपणे आ स्थान छोडीने बीजे ठेकाणे जइए." पछी तुल्य सुख दुःख वाळा ते बन्ने मित्रो त्यांथी नीकळीने पाटलीपुर नजीक जइ पहोंच्या. त्यां वृक्ष विगेरेथी सुशोभित एक उपवनमां उंचो महेल जोइने तेमां पेठा, अने बागनी शोभा जोतां जोतां महेलमां गया. त्यां जाणे साक्षात् ब्रह्माए बनावी होय तेवी एक रूपवती जुवान स्त्रीनी पुतळी जोवामां आवी. तेनां रूप तथा लावण्यने जोइने अमरदत्त मोह पामी गयो. तेथी ते त्यांथी आघो पाछो पण जाय नहीं, त्यांज स्थिर थइ गयो. मित्रानंद तेने वारंवार गाममां जवानुं कहेतां थाकी गयो, छेवट ते बोल्यो के–"हे मित्र अमरदत्त ! आ पथ्थरनी पुतळी उपर प्रीति बांधीने शुं उभो छे ? केमके आकाशने मंथन करवानी जेम तारी इच्छा निष्फळ छे." अमरदत्ते कह्युं के–"हे मित्र ! जो हुं अहींथी चालीश तो जरूर मारुं मृत्यु थशे." ते सांभळीने मित्रानंद अत्यंत रोवा लाग्यो एटले अमरदत्त पण ते पुतळी विना रहेवाने अशक्त होवाथी रोवा लाग्यो. तेवामां ते प्रासाद करावनार श्रेष्ठी त्यां आवी चड्यो. तेणे बन्नेने रोतां जोइने पूछ्युं के–"हे भाइ ! तमे बन्ने केम रडो छो ?" त्यारे मित्रानंदे सर्व वृत्तांत कही बतावीने पूछ्युं के–"हे पिता ! आ संकटमां हवे शो उपाय करवो?" श्रेष्ठी बोल्यो के–"आ पुतळी बनावनार कारीगर सोपारकपुरमां रहे छे तेने पूछो, ते मर्म बतावशे." मित्रानंद बोल्यो के–"हे पिता! जो तमे आ मारा मित्रनी संभाळ राखो तो हुं सोपारकपुरे जइने ते कारीगरने पूछुं के–'आ पुतळी तेणे स्वभावथीज घडी छे के कोइ वर्तमान स्त्रीनुं रूप जोइने चीतरी छे?' जो कदाच आवी कोइ पण कन्या हशे, तो हुं मारा मित्रनो मनोरथ पूर्ण करीश." ते सांभळी श्रेष्ठीए अमरदत्तनी संभाळ राखवानुं अंगीकार कर्युं. त्यारे अमरदत्त

बोल्यो के–' हे मित्र ! तुं जाय छे, पण जो हुं तने आपत्ति प्राप्त थयानुं सांभळीश तो मारा प्राण नाश पामशे. ' मित्रानंद बोल्यो के–" जो हुं बे मासमां पाछो न आवुं तो मित्र नथी एम जाणजे. " आ प्रमाणे तेने धैर्य आपीने मित्रानंद सोपारकपुरे पहोच्यो अने उत्तम वेष धारण करीने ते कारीगरने घेर गयो. कारीगरे तेनो सत्कार करी आववानुं कारण पूछ्युं, त्यारे मित्रानंदे कह्युं के–"मारे एक देवळ बंधाववानी इच्छा छे परंतु कोइ पण ठेकाणे तमारुं बांधेलुं देवळ होय तो देखाडो. " कारीगर बोल्यो के–" पाटलीपुरमां में मारा हाथथी एक प्रासाद कर्यो छे, ते तमे जोयो छे? " मित्रानंदे कह्युं के–" हा जोयो छे, पण ते प्रासादमां एक पुतळी छे, तेनुं रूप तमे तमारी बुद्धिकल्पनाथी कर्युं छे? के एवुं रूप साक्षात् कोइ ठेकाणे जोइने कर्युं छे? " कारीगरे कह्युं के–" अवन्ती नगरीना राजानी पुत्री रत्नमंजरीनुं स्वरूप जोइने ते पुतळी में करी छे. " त्यारे मित्रानंदे तेने कह्युं के–" ठीक त्यारे हुं सारुं मुहूर्त जोइने तमारी पासे आवीश, तमे तैयार थइ रहेजो. " एम कहीने ते अवन्ती नगरीए गयो अने गामना दरवाजा पासे एक देवालय हतुं तेमां तेणे निवास कर्यो. तेवामां तेणे कोइ एक गृहस्थे करावेली उद्घोषणा सांभळी के–" रात्रिना चार पहोर सुधी आ मडदानुं जे रक्षण करे तेने एक हजार सोनामहोर हुं आपीश. " आ प्रमाणे सांभळीने मित्रानंदे शबरक्षण अंगीकार कर्युं. ते वखते तेने लोकोए शीखामण आपी के– " आ नगरमां मोडी राते गामना दरवाजा बंध थइ गया पछी जे कोइ मरी जाय तेना मृतकने मारी[1] खाइ जाय छे; माटे तारामां तेनाथी रक्षण करवानुं सामर्थ्य होय तो आ कार्य अंगीकार करजे. " मित्रानंदे कह्युं के–" वीर पुरुषोने आमां मोटुं कार्य शुं छे?" पछी ते गृहस्थे तेने ठरावना अर्धा रुपीआ तथा शब सोंप्युं, अने बाकीना रुपीआ प्रातःकाळे आपीश, एम कहीने ते पोताने घेर गयो. अहीं मित्रानंद शबनुं रक्षण करवा रह्यो छे, त्यां मध्यरात्रिए भूत, प्रेत विगेरेना उपसर्गो थवा लाग्या, पण तेणे ते धैर्यथी दूर कर्या, अने आखी रात्र शबनुं रक्षण कर्युं. प्रातःकाळे ते शबने लइ जइने तेना स्वजनोए अग्निदाह कर्यो. पछी मित्रानंदे शरत प्रमाणे बाकीना रुपीआ माग्या, पण श्रेष्ठीए आप्या नहीं. त्यारे ते बोल्यो के–" हवे तो ते द्रव्य अहींना राजानी समक्ष लउं तोज हुं वीराग्रणि खरो. " पछी ते सुंदर वेष धारण करीने राजानी मानीती वेश्याने घेर गयो. ते वेश्याए तेनो सत्कार कर्यो. मित्रानंदे रात्रि रहेवा माटे चारसो

1 मरकी अथवा कोइ देवीविशेष.

सोनामहोर वेश्यानी माताने आपी. तेथी हर्ष पामीने ते अक्काए पोतानी पुत्री के जे राजानी वेश्या हती तेने कह्युं के-"हे पुत्री! आ युवकनी उत्तम सेवा बजावजे." पछी रात्रे सर्व भोगसामग्री तैयार करी शृंगार सजीने वेश्या शयनगृहमां आवी. ते वखते मित्रानंदे विचार्युं के-" विषयमां आसक्त थयेला मनुष्योनां कार्य सिद्ध थतां नथी." एम निश्चय करीने ते वेश्या प्रत्ये बोल्यो के-"हे कल्याणी! एक पाटलो लाव, जेथी हुं इष्ट देवनुं स्मरण करुं." एटले ते तरतज एक सुवर्णनो पाटलो लावी. तेना पर मित्रानंद पद्मासन वाळीने बेठो. तेनी सामे रहीने वेश्याए अनेक हावभाव कर्या; परंतु तेनुं मन चलित थयुं नहीं. आखी रात्रि एज प्रमाणे निर्गमन करीने प्रभाते त्यांथी नीकळी बीजे स्थाने गयो. बीजी रात्रि पण तेणे तेज प्रमाणे निर्गमन करी. ते वृत्तांत सांभळीने अक्काए तेने कह्युं के-" हे भद्र! आ मारी पुत्री राजाओने पण दुर्लभ छे छतां तुं तेनी केम अवगणना करे छे?" मित्रानंद बोल्यो के-" समय आवे हुं सर्व करीश; परंतु हुं तने पूछुं छुं के-"राजगृहमां तारो प्रवेश छे के नहीं?" अक्काए जवाब आप्यो के-"आ मारी पुत्री राजानी चामरधारिणी छे, अने राजानी पुत्री मदनमंजरी मारी पुत्रीनी सखी छे." ते सांभळी मित्रानंदे राजवेश्याने कह्युं के-"हे भद्रे! तुं आजे रत्नमंजरीने कहेजे के-"हे सखी! जेना गुणनो समूह तें सांभळ्यो छे, अने तेथी राग उत्पन्न थवाने लीधे तें जेना पर पत्र लख्यो हतो ते अमरदत्तनो मित्र अहीं आव्यो छे." पछी ते वेश्याए रत्नमंजरी पासे जइने कह्युं के-"हे सखी! आजे हुं तारा प्रियना समाचार कहेवा आवी छुं." त्यारे ते हसीने विस्मय पूर्वक बोली के-"कोण मारो प्रिय छे?" त्यारे ते वेश्याए समग्र समाचार कह्या. ते सांभळीने राजपुत्रीए विचार्युं के-"खरेखर आ कोइ अलौकिक धूर्त होवो जोइए; केमके आज सुधी मारो कोइ पण प्रिय नथी. परंतु जेणे आवुं कपटजाळ रच्युं छे तेने दृष्टिए तो जोवो जोइए." एम विचारीने तेणे वेश्याने कह्युं के-"हे सखी! मारा प्रियनो संदेशो लावनार ते माणसने मारा प्रियना पत्र सहित आजे आ बारीने रस्ते अहीं लावजे." ते वेश्याए घेर आवीने सर्व वृत्तांत मित्रानंदने कह्यो. पछी ते रात्रे अक्काए बतावेला रस्तावडे सात किल्लानुं उल्लंघन करीने ते राजकन्याना निवासगृहमां गयो. अक्काए पोतानी पुत्री पासे तेना धैर्यनी प्रशंसा करी. अहीं राजपुत्री तेनुं धैर्य, प्रियना पत्रमांहेनुं लेखन चातुर्य, तेमज तेनुं रूप, लावण्य अने वचनकळानुं कौशल्य जोइने जाणे स्तंभित थइ गइ होय तेम एक अक्षर पण बोल्या विना स्थिर थइ गइ. ते वखते मित्रानंदे हिंमत करीने तेणीना हाथमांथी राजाना नामवाळुं कडुं काढी लीधुं, अने तेणीनी

जंघा उपर छरी वडे त्रिशूळनी आकृति करी, पछी त्यांथी नीकळी अक्काने घेर गयो. राजकुमारी तेना गुणोथी आक्षिप्त थइ सती विचारवा लागी के-" खरेखर ते सामान्य पुरुष नहोतो, माटे मे तेनी साथे संभाषण पण कर्युं नहीं ते सारुं कर्युं नहीं." इत्यादि विचार करतां ते पाछली राते निद्रावश थइ.

हवे प्रातःकाले मित्रानंदे राजा पासे जइने फरियाद करी के-" हे राजा! अखंडित आज्ञावाळा आप राज्य करतां छतां अमुक श्रेष्ठी मारुं मागणुं धन आपतो नथी. आप तो लोकपाळ छो, तेथी तेवा दुष्टनो निग्रह करवो जोइए." ते सांभळीने राजाए पोताना सीपाइओ मोकली ते श्रेष्ठीने बोलाव्यो. ते श्रेष्ठीए बधो व्यतिकर जाण्यो, एटले राजसभामां आवतांज प्रथम मित्रानंदने तेनुं बाकी रहेलुं द्रव्य आपीने प्रणाम पूर्वक राजाने कह्युं के-"पितानी पाछळना लोकाचारमां गुंथावाथी तथा पिताना विरहना शोकथी धन आपवामां विलंब थयो हतो." राजाए तेनी वात सत्य मानीने तेने रजा आपी. पछी राजाए मित्रानंदने पूछ्युं के-" तें रात्रे मृतकनुं रक्षण शी रीते कर्युं?" ते बोल्यो के-" हे राजा! ते रात्रिए भूत, वेताळ, राक्षस, शाकिनी, व्यंतर विगेरे अनेक प्रकारनां शस्त्रो सहित आव्या हता; तेओनी साथे में रात्रिना त्रण पहोर सुधी घणुं युद्ध कर्युं. छेवटे ते सर्व गुरुए आपेला मंत्रना बळथी नासी गया. पछी चोथे प्रहरे कोइ एक अप्सरा जेवी स्त्री मारी पासे आवी. तेणे दिव्य वस्त्र धारण कर्यां हतां, विविध प्रकारनां आभूषणथी शोभित हती, केश छूटा मुकेला होवाथी भयंकर लागती हती. मुखमांथी अग्निनी ज्वाळा काढती हती अने हाथमां कर्त्रीका राखेली हती. ते स्त्रीए मने कह्युं के-" हे दुष्ट! आजे तनेज खाइ जइश." में तेने जोइने विचार्युं के-" लोको कहेता हता ते मारी, खरेखर आज छे." तेथी हुं तेनी साथे भयंकर युद्ध करवा लाग्यो अने चमत्कारथी तेनो हाथ मरडीने तेना हाथमांथी सुवर्णनुं कंकण काढी लीधुं. छेवटे ते नासवा लागी एटले में तेनी जमणी जंघामां छरी वडे त्रिशूळनुं चिन्ह कर्युं." आ प्रमाणे सांभळवाथी राजा आश्चर्य पामीने बोल्यो के-" तें मारीना हाथमांथी खेंची लीधेलुं कडुं बताव." मित्रानंदे ते कडुं बताव्युं, एटले राजा पोतानुं नामांकित कडुं जोइने विचार करवा लाग्यो के-" अहो! शुं मारीज कन्या मरकी ठरी? केमके आ भूषण तेनुं छे." एम विचारीने तेनी खात्री करवा मटो शौचनुं मिष करीने राजा महेलमां गयो. जइने जुए छे तो कन्या सुतेली हती, तेना हाथमां कंकण नहोतुं, अने जंघा पर करेलां चिन्ह उपर लूगडानो पाटो बांधेलो हतो. ते जोइने राजा जाणे वज्रथी हणायो होय तेवो थयो, अने बोल्यो

के–"अहो ! आ पुत्रीए मारा वंशमां कलंक लगाड्युं." पछी राजाए सभामां जइने गुप्त रीते मित्रानंदने कह्युं के–"हे भद्र ! मारी पुत्रीज मरकी ठरे छे, तेमां कांइ संदेह नथी; तेथी तेनो निग्रह कर." ते बोल्यो के–"हे राजा! आपना कुळमां एवुं होय नहीं." राजाए कह्युं के–"नहीं, हुं सत्यज कहुं छुं, माटे ते सर्व प्रजाने मारी न नांखे, तेटलामां तुं कोइ पण उपायथी तेनो निग्रह कर." मित्रानंदे कह्युं के–"प्रथम मने जोवा दो, के ते माराथी साध्यछे के नहीं ?" राजाए कह्युं के–"स्व इच्छाथी जइने जो." एटले मित्रानंद राजकन्या पासे गयो. तेणीए तेने ओळख्यो अने तेने बेसवा माटे आसन आप्युं. पछी मित्रानंद बोल्यो के "हे सुभ्रू! में तने कलंक आप्युं छे; माटे हवे तारे अहीं रहेवुं योग्य नथी. परंतु तुं चिंता करीश नहीं, तने सारे स्थाने लइ जइश." ते सांभळीने तेना गुणोथी आधीन थयेली राजकन्या बोली के–"आ मारा प्राण पण तमारे आधीन छे." कह्युं छे के–

अंधो नरपतेश्चित्तं, व्याख्यानं महिला जलम् ।
तत्रैतास्महि गच्छंति, नीयंते यत्र शिष्यते ॥ १ ॥

भावार्थ–"आंधळो, राजानुं चित्त, व्याख्यान (कथा), स्त्री अने जळ एने ज्यां लइ जइए त्यां तेओ जाय छे." अर्थात् आंधळाने जेटली पृथ्वी ने जे बाजु चलावो तेटलुं चालेछे, राजानुं चित्त जे बाजुवाळो ते बाजु वळेछे, कथानो प्रवाह जे बाजु वहवेरावो ते बाजु वहेछे, स्त्रीने ज्यां लइ जाओ के मोकलो त्यां जायछे अने जळ जे बाजु नीक करी आपो ते तरफ वहे छे."

मित्रानंदे कह्युं के–"राजानी समक्ष तारा उपर हुं सर्षवना दाणा नांखुं त्यारे तारे फूत्कार करवा." ते वात रत्नमंजरीए कबूल करी. एटले तेणे राजा पासे जइने कह्युं के–" हे स्वामी! आपे कह्युं ते सत्य छे. पण एक सांढ तैयार करो, आज रात्रे मंत्रना बळथी तेने सांढ उपर बेसाडीने आपना देश बहार हुं लइ जइश. पछी मार्गमां ज्यां सूर्योदय थशे त्यां ते मारी रहेशे." ते सांभळीने भय पामेला राजाए एक वायुना सरखी वेगवाळी सांढ मंगावी तेने आपी. संध्यासमये ते राजकुमारीना केश पकडी मित्रानंदे तेना उपर सर्षवना दाणा छांट्या, एटले ते फुंफाडा मारवा लागी. पछी तेने सांढ उपर बेसाडीने ते चालतो थयो. राजा गामना दरवाजा बंध करावीने पोताना महेलमां गयो. मित्रानंद पण मित्रनी पत्नी होवाथी माता प्रमाणे तेनी भक्ति करवा लाग्यो.

अहीं अमरदत्त मित्रनो बे मासनो अवधि पूर्ण थवाथी चिंता करीने तेमां

प्रवेश करवानी तैयारी करतो हतो, तेवामां काकतालीय न्यायनी जेम मित्रानंद अने रत्नमंजरी आवीने तेने मळ्या. तेज वखते तेज चिताना अग्निनी तथा पुरना लोकोनी साक्षीए तेनी साथे पाणिग्रहण कर्युं. नगरना लोको ते स्त्रीना स्वरूपनी, मित्रानंदना धैर्यनी अने अमरदत्तना भाग्यनी प्रशंसा करवा लाग्या.

हवे तेज समये ते नगरनो राजा अपुत्रीओ[1] मरण पाम्यो; तेथी बीजो राजा मुकरर करवा माटे प्रधानोए मळीने पंचदिव्य[2] कर्यां. तेणे फरतां फरतां नगर बहार आवीने अमरदत्तना उपर कळश ढोळ्यो, तेथी तेने मोटा उत्सव पूर्वक राज्यनो स्वामी कर्यो. पछी तेणे मित्रने मंत्रीपद आप्युं, अने रत्नसारने नगरशेठ बनाव्यो. आ प्रमाणे ते अखंडित आज्ञाथी राज्य चलाववा लाग्यो.

मित्रानंद राज्यकार्यमां गुंथायो हतो, तो पण तेने शबनुं वचन कदि पण विस्मरण थतुं नहोतुं, तेथी तेणे अमरदत्त राजाने कह्युं के–"आपणुं नगर अहींथी नजीक छे, तेथी मारुं मन घणुं दुःखी रह्या करे छे, माटे मने दूर देश जवानी रजा आपो." राजाए कह्युं के–"हे मित्र! जो एम छे, तो आपणा नोकरोने साथे लइने वसंतपुरे जा, परंतु हमेशां कुशळ समाचार मोकल्या करजे." पछी मित्रानंदे शुभ दिवसे त्यांथी प्रयाण कर्युं. तेना जवाथी तेना वियोगे करीने पीडा पामतो राजा तेना कुशळ समाचार निरंतर इच्छतो हतो, पण घणा दिवसो गया छतां तेनुं कांइ पण वृत्तांत तेना जाणवामां आव्युं नहीं. तेथी गभरायेला चित्ते तेणे राणीने कह्युं के–" अरे मित्रानंदनी कांइ पण वार्ता संभळाती नथी." राणी बोली के–"हे प्राणनाथ! ज्ञानी गुरु विना संशय नाश पामतो नथी." अन्यदा वनपाळे आवीने राजाने विनंती करी के–" हे स्वामी! आजे आपना उद्यानमां ज्ञानभानु नामना गुरुमहाराज पधार्या छे." ते सांभळीने राजाए वनपाळने वधामणी आपी, अने राणीने साथे लइने मोटा उत्सव पूर्वक ते गुरु पासे गयो; गुरुने वांदीने योग्य आसने बेठो. गुरुए अनेक जनोए पूछेला संशयना खुलासा आप्या, ते सांभळीने राजाए प्रत्यक्ष ज्ञानवाळा गुरुने पोताना मित्रनी हकीकत पूछी, तेथी गुरुए कह्युं के–"हे राजन्! तारो मित्र अहींथी चालीने घणे दूर पहोंच्या पछी एक पर्वतनी पासे नदीने कांठे पडाव करीने रह्यो हतो, अने तारा सेवको जमवामां रोकाया हता, ते वखते ओचिंती चोरनी धाड पडी, तेओए तारा सर्व सेवकोनो पराजय कर्यो, अने मित्रानंद एकलो त्यांथी नासी गयो. ते कोइक वट वृक्षनी नीचे सुतो हतो, तेवामां सर्पे तेने डस्यो. ते समये कोइ तपस्वी त्यां आव्या तेणे तेनुं विष उतार्युं. त्यांथी मित्रानंद तारी

---

१ पुत्र विनानो, वांझीयो. २ हाथी, घोडो, कळश, छत्र अने चामर ए पांच दिव्य करवामां आवे छे.

पासे आवतो हतो, तेटलामां मार्गमां चोरलोकोए तेने पकड्यो, अने एक वाणिआने त्यां वेच्यो. ते वणिके पारसकुळ तरफ जतां रस्तामां अवंती नगरीनी बहार पडाव कर्यो. रात्रिए समय जोइने तारो मित्र बंधन तोडीने नाठो. गामनी खाळने रस्ते ते गाममां पेसवा जतो हतो, एटलामां राजाना सीपाईओए तेने दीठो, एटले चोर जाणी चोरनी जेम पकडीने बांध्यो. प्रातःकाळ थतां राजाना हुकमथी तेने पूर्वोक्त वट वृक्ष उपरज मारी नाखवामाटे बांधवामां आव्यो. ते वखते तारो मित्र विचार करवा लाग्यो के-अहो! शबनुं कहेलुं वाक्य साचुं थयुं. कह्युं छे के-

यत्र वा तत्र वा यातु, यद्वा तद्वा करोत्यसौ ।
तथापि मुच्यते प्राणी, न पूर्वकृतकर्मणः ॥ १ ॥

भावार्थ-"प्राणी गमे त्यां जाओ अथवा गमे ते उपाय करो परंतु ते पूर्वे करेलां कर्मोथी कोइ प्रकारे मुक्त थतो नथी."

त्यां मित्रानंद मरण पाम्यो. पछी एक दिवस गोवाळीआना बाळको ते वटनी पासे रमता हता, तेनी मोइ उछळीने तेना मुखमां पडी." आ प्रमाणे गुरुना मुखथी सांभळीने राजा अत्यंत रुदन करवा लाग्यो. राणी पण विलाप करतां बोली के-

यदाहं भवदानीता, तदानेके विनिर्मिताः ।
उपायाः स्वविपत्तौ ते, क्व गता हा महामते ॥ १ ॥

भावार्थ-" हे दीयर! ज्यारे तमे मने अहीं लाव्या ते वखत तमे घणा उपायो कर्या हता, छतां हे बुद्धिशाळी! आजे तमारी विपत्तिमां ते सर्व उपायो क्यां गया ? "

गुरुए राजाने तथा राणीने कह्युं के-

शोकोऽवश्यं परित्यज्य, राजन् धर्मोद्यमं कुरु ।
येनेदृशानां दुःखानां, भाजनं नोपजायते ॥ १ ॥

भावार्थ-"हे राजन्! शोकनो त्याग करीने धर्ममां उद्यम करो; जेथी फरीथी आवां दुःखोनुं स्थान थवाय नहीं,अर्थात् आवां दुःखो फरीथी आवे नहीं."

राजाए गुरुने फरीथी पूछयुं के-"हे स्वामी! ते मारो मित्र मरीने क्यां उत्पन्न थयो?" गुरुए कह्युं के-"हे राजा! तारी राणीनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न

थयो छे, ते अनुक्रमे राजा थशे." फरीने राजाए पोताना, राणीना अने मित्रना पूर्व भव पूछया. त्यारे गुरुए कह्युं के–"हे राजा! तुं आजथी त्रीजे भवे क्षेमंकर नामे कणबी हतो. सत्यश्री नामे तारे पत्नी हती अने चंद्रसेन नामनो चाकर हतो. ते चाकर एकदा तारा खेतरमां काम करतो हतो, ते वखते तेणे बीजाना खेतरमांथी कोइक मुसाफरने धान्यनी शींगो लेतां जोयो. ते जोइने चंद्रसेन बोल्यो के–" आ महाचोरने उंचो बांधीने लटकावो." एवा वचनथी तेणे महा आकरुं कर्म बांध्युं. सत्यश्रीए पण कोइ वखत पोताना पुत्रनी वहुने कह्युं के–" डाकणनी जेम उतावळी उतावळी शुं खाय छे? धीरे धीरे केम खाती नथी? के जेथी गळुं तो रुंधाय नहीं." एम कहेवाथी तेणे पण कर्म बांध्युं. एकदा क्षेमंकरे नोकरने कह्युं के "आजे अमुक गाम जवानुं छे, माटे जा." त्यारे चाकर बोल्यो के–" आजे मारा स्वजनोने मळवा सारुं हुं उत्सुक छुं, तेथी नहीं जइ शकुं." क्षेमंकरे कोपथी कह्युं के--"भले तारा स्वजननो मेळाप न थाय, पण जवुं पडशे." एवामां कोइ बे मुनि गोचरी माटे पधार्या. तेने जोइने क्षेमंकरे पोतानी स्त्रीने कह्युं के–"आ महर्षिओने मोटा हर्ष पूर्वक प्रासुक अने एषणीय अन्न वहोराव." ते वखते पेला चाकरे मनमां विचार कर्यो के–" आ दंपतीने धन्य छे, के जेओ संपूर्ण भक्तिपूर्वक मुनिने दान आपे छे." तेवामां ते त्रणेना उपर अकस्मात् विजळी पडवाथी ते त्रणे एकी वखते मरण पाम्या. तेमां क्षेमंकरनो जीव तुं अमरदत्त थयो, सत्यश्रीनो जीव तारी पट्टराणी थयो, तारो चाकर चंद्रसेन ते मित्रानंद थयो. ते चाकरे जे मुसाफरने शींगो लेतां बांधवानुं कह्युं हतुं, तेज मरीने पेला वट वृक्ष उपर व्यंतर थयो. ते मित्रानंदने जोइने पोताना पूर्व जन्मनुं वैर याद आववाथी शबद्वारा बोल्यो हतो."

आ प्रमाणे गुरुनुं वचन सांभळीने राजा तथा राणीने जाति स्मरण थयुं, गुरुनुं वचन सत्य मानीने घेर आव्या. पछी अनुक्रमे तेने पुत्र थयो. ते युवावस्था पाम्यो. त्यारे तेने राज्य सोंपीने ते दंपतीए दीक्षा ग्रहण करी, अने क्रमे करीने तेओ मोक्षे गया.

आ दृष्टांतनुं तात्पर्य ए छे के–थोडो पण क्रोध मोटा दुःखनुं कारण थाय छे. माटे मुमुक्षुए तेनो त्याग करवो.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य एकचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४१ ॥

व्याख्यान २४२ मुं.

मान त्याग करवा विषे.

मानत्यागान्महौजस्वी, तत्त्वज्ञानी सुदक्षताम् ।
दधन् दधौ महज्ज्ञानं, बाहुबलिमुनीश्वरः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मोटा पराक्रमी, तत्वज्ञानी अने अतीदक्षपणाने धारण करनार बाहुबली मुनीश्वरे माननो त्याग करवाथी केवळज्ञान प्राप्त कर्युं. "

श्रीबाहुबलीनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

श्री ऋषभदेवना पुत्र भरत चक्री साठ हजार वर्षे छ खंड पृथ्वी जीतीने अयोध्या नगरीमां आव्या. त्यां बार वर्ष सुधी चक्रीनो राज्याभिषेक थती वखते कोण कोण राजाओ आव्या छे अने कोण नथी आव्या? एवुं अवलोकन करतां चक्रीए पोताना नाना भाइओने नहीं आवेला जाणीने तेओने बोलाववा माटे दरेकनी पासे पोताना दूत मोकल्या. दूतो तेमनी पासे जइने बोल्या के—" हे भरत राजाना भाइओ! तमो सर्वे भरत चक्री पासे आवी तेनी सेवा करो." तेओ बोल्या के—" भरत ऋषभदेवना पुत्र छे ,तेम अमे पण ऋषभदेवना पुत्रो छीए. तो शुं ते अमारा थकी अधिक छे के अमारी पासे सेवा मागे छे? हे दूतो! तमे तमारे स्थाने जाओ. अमे पिताने पूछीने योग्य जणाशे तेम करशुं." एम कहीने ते भाइओ सुवर्णगिरी[1] उपर जिनेश्वर पासे गया, अने कह्युं के—" हे पिता! अमारो मोटो भाइ भरत छ खंडनुं राज्य पाम्यो, तो पण हजु तृप्ति पाम्यो नथी. तेथी तमोए आपेलुं अमारुं राज्य लइ लेवानी इच्छा करे छे. माटे तमारी आज्ञा होय तो अमो सौ एकत्र थइने तेनुंज राज्य लइ लइए. " ते सांभळीने प्रभुए तेमने भद्रिक जाणी धर्मोपदेश आप्यो के—

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोहि खलु पच्च दुल्लहा ।
नो हुवणं मंति राइओ, नो सुलहं पुणरवि जीविअं ॥ १ ॥

भावार्थ—"बोध पामो, केम बोध पामता नथी? आ प्राणीने बोधि जे सम्यक्त्व तेज दुर्लभ छे. मंत्री के राजा थवुं दुर्लभ नथी परंतु फरीने मनुष्यपणानुं जीवित पामवुं दुर्लभ छे."

---

[1] मेरु नहीं, कोइ पर्वत विशेष.

इत्यादि भगवाननी देशना सांभळीने ते अठाणुं भाइओए प्रभुनी पासे दीक्षा ग्रहण करी. पछी तेमनां राज्य भरत चक्रीए स्वाधीन करी लीधां. एकदा आयुधशाळाना रक्षके आवीने चक्रीने विज्ञप्ति करी के-"हे स्वामी ! तमे ज्यां सुधी बाहुबलीने जीत्या नथी, त्यां सुधी छ खंड पृथ्वी पण जीती नथी एम समजजो. केमके चक्ररत्न हजु आयुधशाळामां प्रवेश करतुं नथी." आ प्रमाणे सांभळीने चक्रीए तक्षशिला नगरीए एक वाचाळ दूतने मोकल्यो. ते दूत थोडा दिवसमां बाहुबलीना देशमां पहोच्यो. त्यां बहलीदेशमां गामे गामे अने नगरे नगरे घणा लोकोनां मुखथी बाहुबळीना यशनुं श्रवण करतो ते तक्षशिलाए आव्यो. ते सुवेग नामना दूतने प्रतिहारे बाहुबळीनी आज्ञाथी सुवर्णना वर्ण जेवी सभामां प्रवेश कराव्यो. बाहुबळीए पोताना बंधुना तथा तेना देशनगरादिना कुशळ समाचार पूछया. ते कही रह्या पछी दूत बोल्यो के-"हे राजा ! तमने मळवाने उत्सुक थयेला तमारा मोटा भाइए तमने बोलाववा माटे मने मोकल्यो छे. माटे एक वार त्यां आवी तमारा भाइने नमी तेनी आज्ञा मस्तक पर चडावीने पछी अहीं पाछा आवजो. केमके लोको अपवाद आपे छे के भरत राजानो भाइ पण तेनी आज्ञा मानतो नथी, तो भरतनुं पराक्रम अकिंचित्कर छे[1]. माटे लोकापवादने दूर करवा सारु तमे तेनी पासे आवो. नहीं तो तमने राज्यनो पण संशय थशे." कह्युं छे के-

करालगरलः सर्पः, पावकः पवनोध्धुरः ।
प्रभुः प्रौढप्रतापश्च, विश्वास्या न त्रयोऽप्यमी ॥ १ ॥

भावार्थ-"भयंकर विषवाळो सर्प, पवनथी उद्धत थयेलो अग्नि अने प्रौढ प्रतापी राजा-ए त्रणे विश्वास करवा लायक नथी."

वळी हे राजा ! देवताओ पण जेनी सेवा करे छे तेवा तमारा बंधुनी सेवा करतां तमारुं कांइ हीनपणुं कहेवाशे नहीं." आ प्रमाणेनां दूतनां वचनो सांभळीने बाहुबळी बोल्या के-"हे दूत ! तारो राजा मने जोइने लज्जा पामशे, केमके बाल्यावस्थामां जळक्रीडा करतां तेनो पग झालीने में तेने आकाशमां उछाळ्यो हतो, ते पण शुं ते भूली गयो छे ? हे दूत ! साठ हजार वर्ष सुधी देश साधवामां पापकर्मनो संचय करनारा तारा पूज्यने मारा विना बीजो कोइ प्रायश्चित्त आपनार नथी, माटे तारा राजाने तेना बळनी परीक्षा करवा माटे जलदी अहीं लाव." ते सांभळी सुवेग भय सहित पाछो फरीने थोडाज दिवसमां पोताना नगरमां

[1] किंचित् पण नथी.

व्याख्यान २४२ मुं.

मान त्याग करवा विषे.

मानत्यागान्महौजस्वी, तत्त्वज्ञानी सुदक्षताम् ।
दधन् दधौ महज्ज्ञानं, बाहुबलिमुनीश्वरः ॥ १ ॥

भावार्थ–" मोटा पराक्रमी, तत्वज्ञानी अने अतीदक्षपणाने धारण करनार **बाहुबली** मुनीश्वरे माननो त्याग करवाथी केवळज्ञान प्राप्त कर्युं. "

श्रीबाहुबलीनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

श्री ऋषभदेवना पुत्र **भरत** चक्री साठ हजार वर्षे छ खंड पृथ्वी जीतीने **अयोध्या** नगरीमां आव्या. त्यां बार वर्ष सुधी चक्रीनो राज्याभिषेक थती वखते कोण कोण राजाओ आव्या छे अने कोण नथी आव्या? एवुं अवलोकन करतां चक्रीए पोताना नाना भाइओने नहीं आवेला जाणीने तेओने बोलाववा माटे दरेकनी पासे पोताना दूत मोकल्या. दूतो तेमनी पासे जइने बोल्या के–" हे भरत राजाना भाइओ! तमो सर्वे भरत चक्री पासे आवी तेनी सेवा करो." तेओ बोल्या के–" भरत ऋषभदेवना पुत्र छे ,तेम अमे पण ऋषभदेवना पुत्रो छीए. तो शुं ते अमारा थकी अधिक छे के अमारी पासे सेवा मागे छे? हे दूतो! तमे तमारे स्थाने जाओ. अमे पिताने पूछीने योग्य जणाशे तेम करशुं." एम कहीने ते भाइओ सुवर्णगिरी[1] उपर जिनेश्वर पासे गया, अने कह्युं के–" हे पिता! अमारो मोटो भाइ भरत छ खंडनुं राज्य पाम्यो, तो पण हजु तृप्ति पाम्यो नथी. तेथी तमोए आपेलुं अमारुं राज्य लइ लेवानी इच्छा करे छे. माटे तमारी आज्ञा होय तो अमो सौ एकत्र थइने तेनुंज राज्य लइ लइए. " ते सांभळीने प्रभुए तेमने भाद्रिक जाणी धर्मोपदेश आप्यो के–

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोहि खलु यच्च दुलहा ।
नो हुवणं मंति राइओ, नो सुलहं पुणरवि जीविअं ॥ १ ॥

भावार्थ–"बोध पामो, केम बोध पामता नथी? आ प्राणीने बोधि जे सम्यक्त्व तेज दुर्लभ छे. मंत्री के राजा थवुं दुर्लभ नथी परंतु फरीने मनुष्यपणानुं जीवित पामवुं दुर्लभ छे."

---

[1] मेरु नहीं, कोइ पर्वत विशेष.

इत्यादि भगवाननी देशना सांभळीने ते अठाणुं भाइओए प्रभुनी पासे दीक्षा ग्रहण करी. पछी तेमनां राज्य भरत चक्रीए स्वाधीन करी लीधां. एकदा आयुध-शाळाना रक्षके आवीने चक्रीने विज्ञप्ति करी के–"हे स्वामी ! तमे ज्यां सुधी बाहु-बलीने जीत्या नथी, त्यां सुधी छ खंड पृथ्वी पण जीती नथी एम समजजो. केमके चक्ररत्न हजु आयुधशाळामां प्रवेश करतुं नथी." आ प्रमाणे सांभळीने चक्रीए तक्षशिला नगरीए एक वाचाळ दूतने मोकल्यो. ते दूत थोडा दिवसमां बाहुब-ळीना देशमां पहोंच्यो. त्यां बहलीदेशमां गामे गामे अने नगरे नगरे घणा लोकोनां मुखथी बाहुबळीना यशनुं श्रवण करतो ते तक्षशिलाए आव्यो. ते सुवेग नामना दूतने प्रतिहारे बाहुबळीनी आज्ञाथी सुवर्णना वर्ण जेवी सभामां प्रवेश कराव्यो. बाहुबळीए पोताना बंधुना तथा तेना देशनगरादिना कुशळ समाचार पूछया. ते कही रह्या पछी दूत बोल्यो के–"हे राजा ! तमने मळवाने उत्सुक थयेला तमारा मोटा भाइए तमने बोलाववा माटे मने मोकल्यो छे. माटे एक वार त्यां आवी तमारा भाइने नमी तेनी आज्ञा मस्तक पर चडावीने पछी अहीं पाछा आवजो. केमके लोको अपवाद आपे छे के भरत राजानो भाइ पण तेनी आज्ञा मानतो नथी, तो भरतनुं पराक्रम अकिंचित्कर छे[1]. माटे लोकापवादने दूर करवा सारु तमे तेनी पासे आवो. नहीं तो तमने राज्यनो पण संशय थशे." कह्युं छे के–

करालगरलः सर्पः, पावकः पवनोध्धुरः ।
प्रभुः प्रौढप्रतापश्च, विश्वास्या न त्रयोऽप्यमी ॥ १ ॥

भावार्थ–"भयंकर विषवाळो सर्प, पवनथी उद्धत थयेलो अग्नि अने प्रौढ प्रतापी राजा–ए त्रणे विश्वास करवा लायक नथी."

वळी हे राजा ! देवताओ पण जेनी सेवा करे छे तेवा तमारा बंधुनी सेवा करतां तमारुं कांइ हीनपणुं कहेवाशे नहीं." आ प्रमाणेनां दूतनां वचनो सांभ-ळीने बाहुबळी बोल्या के–"हे दूत ! तारो राजा मने जोइने लज्जा पामशे, केमके बाल्यावस्थामां जळक्रीडा करतां तेनो पग झालीने में तेने आकाशमां उछाळ्यो हतो, ते पण शुं ते भूली गयो छे ? हे दूत ! साठ हजार वर्ष सुधी देश साधवामां पापकर्मनो संचय करनारा तारा पूज्यने मारा विना बीजो कोइ प्रायश्चित्त आप-नार नथी, माटे तारा राजाने तेना बळनी परीक्षा करवा माटे जलदी अहीं लाव." ते सांभळी सुवेग भय सहित पाछो फरीने थोडाज दिवसमां पोताना नगरमां

१ किंचित् पण नथी.

आव्यो, अने बाहुबळीनुं सर्व वृत्तांत भरत महाराजाने कह्युं. तेणे जणाव्युं के–"बाहुबळीने इंद्र पण जीतवा समर्थ नथी." ते सांभळीने भरत चक्री पोताना सवा करोड पुत्र अने सैन्य सहित तक्षशिला नगरी तरफ चाल्या. बाहुबळी पण पोताना पुत्रो तथा सैन्य सहित सामा आव्या. तेनो मोटो पुत्र **सोमयशा** एकलो पण त्रण लाख हाथी, घोडा अने रथनो जीतनार हतो; तेने त्रण लाख पुत्रो हता, तेमां सौथी नानो पुत्र पण एकलो एक **अक्षौहिणी** सेना जीतवाने समर्थ हतो.

चक्रीना सैन्यमां चोराशी लाख डंकाओ, अढार लक्ष दुंदुभि अने सोळ लाख बीजां वाजित्रो हतां, ते बधांनो एकज वखते नाद थवा लाग्यो; ते सांभळीने उत्साह पामेला बन्ने पक्षना वीरो परस्पर युद्ध करवा लाग्या. निरंतर युद्ध चालतां एक दिवसे **अनिलवेग** नामनो विद्याधर के जे बाहुबळीनो भक्त हतो ते चक्रीना सेनापतिने अस्त्र विद्यावडे जीतीने आकाशमार्गे चक्रीनी हाथीनी सेनामां पेठो, अने दडानी जेम हाथीओने आकाशमां उछाळीने तेमने पृथ्वी पर पडतां मुष्टिथी हणवा लाग्यो. ते बीजा कोइ पण प्रकारथी पराजय नहीं पामे एम जाणीने चक्रीए तेनापर चक्र रत्न छोड्युं. चक्रने जोतांज ते भयथी नाठो. पछी ते मेरु पर्वतनी गुफाओमां के समुद्र विगेरेमां ज्यां ज्यां गयो त्यां त्यां पूर्वे जन्मनां करेलां कर्मनी जेम चक्र रत्न तेनी पाछळने पाछळज गयुं. छेवटे पोताना रक्षण माटे तेणे विद्याना जोरथी वज्रनुं पांजरुं बनाव्युं अने तेमां ते पेठो. ते वखत चक्र रत्नना अधिष्ठायक देवोए तेने कह्युं के–"अरे ! तारा पराक्रमने फोगट केम लज्जित करे छे? " वज्रपिंजरमां रहेतां छ मास वीती गया. छ मासने अंते अभिमान आववाथी ते बहार नीकळ्यो. एटले चक्ररत्न तेनुं मस्तक कापीने चक्रीना हाथमां गयुं.

कर्यो अने बन्ने भाइओ पासे जइने कह्युं के–" हे युगादीशना पुत्रो ! तमारा पिताए आ विश्वनुं पालन कर्युं छे. तेनो संहार करवा माटे तमे केम तैयार थया छो? माटे तेम करवुं तमने उचित नथी. परंतु तमारे बळनी परीक्षा करवी होय तो तमो बेज जण परस्पर अमारां ठरावी आपेलां दृष्टि युद्ध, वाग् युद्ध, मुष्टि युद्ध, दंड युद्ध अने अस्त्र युद्ध–ए पांच प्रकारनां युद्ध करो. अमे मध्यस्थ रहीने जोइशुं." आ प्रमाणेनुं देवतानुं वचन बन्ने भाइओए अंगीकार कर्युं, एटले देवताओ तथा मनुष्यो साक्षी तरीके उभा रह्या. ते वखते चक्रीना सैनिकोए विचार्युं के–" आ बाहुबलीनी साथे द्वंद्व युद्ध करवामां इंद्र पण जीते के नहीं ते शकभरेलुं छे, तो अमारा स्वामीनो शी रीते जय थशे ? " आवा विचारो करता पोताना सुभटोने जोइने पोतानुं सामर्थ्य बतावबा माटे चक्रीए एक मोटो कूवो खोदाव्यो, अने ते कूवाने एक कांठे उभा रहीने चक्रीए पोताना डाबा हाथे लोढानी मोटी सांकळो बंधावी, पछी कूवामां सर्व सैनिकोने राखीने तेमने कह्युं के–"तमे सर्वे मळी आ सांकळ खेंचीने मने कूवामां पाडो." ते सर्वेए ते प्रमाणे तेने खेंच्यो पण चक्री जरा पण पोताना स्थानथी चलित थया नहीं. केमके आखा भरतखंडनां नर, नारी, हाथी, घोडा विगेरे सर्व प्राणीओ भेगा थइने खेंचे, तो पण तेओ एक तल मात्र चक्रीने खसेडवा समर्थ नथी, तो पछी सेना मात्रथी तो शुं थइ शके ? पछी चक्रीए हृदयपर लेप करवाने मिषे पोतानो हाथ जराक खेंच्यो, एटले सर्व सैन्य लता उपर रहेला पक्षिओनी जेम सांकळ साथे लटकी गयुं. आ प्रमाणे चक्रीनुं पराक्रम जोइने तेओ हर्ष पाम्या अने साक्षी थइने दूर उभा रह्या.

हवे चक्री तथा बाहुबळी प्रथम दृष्टियुद्ध करवा माटे सामसामा उभा रह्या, अने अनिमेष दृष्टिथी एक बीजानी सामुं जोवा लाग्या. ते वखते नेत्रो रक्त थवाथी तेओ भयंकर देखावा लाग्या. छेवट बाहुबलीनुं भयंकर नेत्रवाळुं मुख जोइने चक्रीना नेत्रमां आंसुं आवी गयां, तेथी ते तरत मींचाइ गयां. ते जोइने चक्री तथा तेनुं सैन्य नम्र मुखवाळुं (लज्जित) थयुं. चक्रीने लज्जित जोइने बाहुबलीए कह्युं के–" हे भाइ ! केम उद्वेग पामो छो ? हवे वचनयुद्ध करो. " तेथी चक्रीए अति घोर सिंहनाद कर्यो, जेथी आखुं सैन्य बधिर थइ गयुं. त्यार पछी बाहुबलीए पण क्रोधथी सिंहनाद कर्यो, तेनाथी सर्व सैन्य मूर्च्छित जेवुं थइ गयुं फरीथी चक्रीए अने पछी बाहुबलीए सिंहनाद कर्यो. ते वखते चक्रीनो शब्द दिवसना पहेला पहोरनी छाया माफक अने दुर्जननी मैत्रीनी माफक अनुक्रमे क्षीण थवा लाग्यो अने बाहुबलीनो शब्द वृद्धि पामवा लाग्यो. तेथी विलखा थयेला चक्री प्रत्ये बाहुबलीए कह्युं के–" हे भाइ !खेद पामशो नहीं. हुं काकतालीय न्यायथी

आव्यो, अने बाहुबळीनुं सर्व वृत्तांत भरत महाराजाने कह्युं. तेणे जणाव्युं के—"बाहुबळीने इंद्र पण जीतवा समर्थ नथी." ते सांभळीने भरत चक्री पोताना सवा करोड पुत्र अने सैन्य सहित तक्षशिला नगरी तरफ चाल्या. बाहुबळी पण पोताना पुत्रो तथा सैन्य सहित सामा आव्या. तेनो मोटो पुत्र **सोमयशा** एकलो पण त्रण लाख हाथी, घोडा अने रथनो जीतनार हतो; तेने त्रण लाख पुत्रो हता, तेमां सौथी नानो पुत्र पण एकलो एक **अक्षौहिणी**[1] सेना जीतवाने समर्थ हतो.

चक्रीना सैन्यमां चोराशी लाख डंकाओ, अढार लक्ष दुंदुभि अने सोळ लाख बीजां वाजित्रो हतां, ते बधांनो एकज वखते नाद थवा लाग्यो; ते सांभळीने उत्साह पामेला बन्ने पक्षना वीरो परस्पर युद्ध करवा लाग्या. निरंतर युद्ध चालतां एक दिवसे **अनिलवेग** नामनो विद्याधर के जे बाहुबळीनो भक्त हतो ते चक्रीना सेनापतिने अस्त्र विद्यावडे जीतीने आकाशमार्गे चक्रीनी हाथीनी सेनामां पेठो, अने दडानी जेम हाथीओने आकाशमां उछाळीने तेमने पृथ्वी पर पडतां मुष्टिथी हणवा लाग्यो. ते बीजा कोइ पण प्रकारथी पराजय नहीं पामे एम जाणीने चक्रीए तेनापर चक्र रत्न छोड्युं. चक्रने जोतांज ते भयथी नाठो. पछी ते मेरु पर्वतनी गुफाओमां के समुद्र विगेरेमां ज्यां ज्यां गयो त्यां त्यां पूर्व जन्मनां करेलां कर्मनी जेम चक्र रत्न तेनी पाछळने पाछळज गयुं. छेवटे पोताना रक्षण माटे तेणे विद्याना जोरथी वज्रनुं पांजरुं बनाव्युं अने तेमां ते पेठो. ते वखत चक्र रत्नना अधिष्ठायक देवोए तेने कह्युं के—"अरे! तारा पराक्रमने फोगट केम लज्जित करे छे?" वज्रपिंजरमां रहेतां छ मास वीती गया. छ मासने अंते अभिमान आववाथी ते बहार नीकळ्यो. एटले चक्ररत्न तेनुं मस्तक कापीने चक्रीना हाथमां गयुं.

आवी रीते युद्ध करतां बार वर्ष व्यतीत थइ गयां. एक दिवस चक्रीनो मोटो पुत्र **सूर्ययशा** बाहुबळीना सैन्यमां दावानळनी जेम प्रसर्यो अने थोडी वारमां काकानी पासे आवी पहोंच्यो. तेने जोइने बाहुबळीए कह्युं के—"हे वत्स! तुं नानो छतां मारी सेनामां पेठो, तेथी मने आनंद थाय छे. तारी जेवा पराक्रमी पुत्रथी अमारो वंश उद्योतने पाम्यो छे. परंतु त्रण लोकमां पण मारा क्रोधने सहन करवाने कोइ पण शक्तिमान नथी, माटे तुं मारी दृष्टिथी दूर जतो रहे." सूर्ययशा बोल्यो के—"हे काका! आजे तमारा विना मारो युद्धमनोरथ कोण पूर्ण करशे?" एम कहीने तेणे धनुषनो टंकार कर्यो. ते वखते आकाशमां रहीने युद्ध जोनारा देवताओए एकत्र थइने बन्ने पक्षना सुभटोने युद्ध करवानो निषेध

---

[1] अक्षौहिणी सेनामां २१८७० हाथी, तेटलाज रथो, ६५६१० घोडा अने १०९३५० पायदळ होय छे. बीजी रीते पण तेनुं प्रमाण कहेलुं छे.

कर्यो अने बन्ने भाइओ पासे जइने कह्युं के–" हे युगादीशना पुत्रो ! तमारा पिताए आ विश्वनुं पालन कर्युं छे. तेनो संहार करवा माटे तमे केम तैयार थया छो? माटे तेम करवुं तमने उचित नथी. परंतु तमारे बळनी परीक्षा करवी होय तो तमो बेज जण परस्पर अमारां ठरावी आपेलां दृष्टि युद्ध, वाग् युद्ध, मुष्टि युद्ध, दंड युद्ध अने अस्त्र युद्ध–ए पांच प्रकारनां युद्ध करो. अमे मध्यस्थ रहीने जोइशुं." आ प्रमाणेनुं देवतानुं वचन बन्ने भाइओए अंगीकार कर्युं, एटले देवताओ तथा मनुष्यो साक्षी तरीके उभा रह्या. ते वखते चक्रीना सैनिकोए विचार्युं के–" आ बाहुबलीनी साथे द्वंद्व युद्ध करवामां इंद्र पण जीते के नहीं ते शकभरेलुं छे, तो अमारा स्वामीनो शी रीते जय थशे ? " आवा विचारो करता पोताना सुभटोने जोइने पोतानुं सामर्थ्य बतावचा माटे चक्रीए एक मोटो कूवो खोदाव्यो, अने ते कूवाने एक कांठे उभा रहीने चक्रीए पोताना डाबा हाथे लोढानी मोटी सांकळो बंधावी, पछी कूवामां सर्व सैनिकोने राखीने तेमने कह्युं के–"तमे सर्वे मळी आ सांकळ खेंचीने मने कूवामां पाडो." ते सर्वेए ते प्रमाणे तेने खेंच्यो पण चक्री जरा पण पोताना स्थानथी चलित थया नहीं. केमके आखा भरतखंडनां नर, नारी, हाथी, घोडा विगेरे सर्व प्राणीओ भेगा थइने खेंचे, तो पण तेओ एक तल मात्र चक्रीने खसेडवा समर्थ नथी, तो पछी सेना मात्रथी तो शुं थइ शके ? पछी चक्रीए हृदयपर लेप करवाने मिषे पोतानो हाथ जराक खेंच्यो, एटले सर्व सैन्य लता उपर रहेला पक्षिओनी जेम सांकळ साथे लटकी गयुं. आ प्रमाणे चक्रीनुं पराक्रम जोइने तेओ हर्ष पाम्या अने साक्षी थइने दूर उभा रह्या.

हवे चक्री तथा बाहुबळी प्रथम दृष्टियुद्ध करवा माटे सामसामा उभा रह्या, अने अनिमेष दृष्टिथी एक बीजानी सामुं जोवा लाग्या. ते वखते नेत्रो रक्त थवाथी तेओ भयंकर देखावा लाग्या. छेवट बाहुबलीनुं भयंकर नेत्रवाळुं मुख जोइने चक्रीना नेत्रमां आंसु आवी गयां, तेथी ते तरत मींचाइ गयां. ते जोइने चक्री तथा तेनुं सैन्य नम्र मुखवाळुं (लज्जित) थयुं. चक्रीने लज्जित जोइने बाहुबलीए कह्युं के–" हे भाइ ! केम उद्वेग पामो छो ? हवे वचनयुद्ध करो. " तेथी चक्रीए अति घोर सिंहनाद कर्यो, जेथी आखुं सैन्य बधिर थइ गयुं. त्यार पछी बाहुबलीए पण क्रोधथी सिंहनाद कर्यो, तेनाथी सर्व सैन्य मूर्च्छित जेवुं थइ गयुं फरीथी चक्रीए अने पछी बाहुबलीए सिंहनाद कर्यो. ते वखते चक्रीनो शब्द दिवसना पहेला पहोरनी छाया माफक अने दुर्जननी मैत्रीनी माफक अनुक्रमे क्षीण थवा लाग्यो अने बाहुबलीनो शब्द वृद्धि पामवा लाग्यो. तेथी विलखा थयेला चक्री प्रत्ये बाहुबळीए कह्युं के–" हे भाइ !खेद पामशो नहीं. हुं काकतालीय न्यायथी

कदि वाग्युद्धमां तमने जीत्यो, तेथी शुं थयुं ? माटे हवे मुष्टियुद्ध करवा तैयार थाओ. आ प्रमाणेना बाहुबलीना वाक्यथी उत्साह पामेला चक्री मुष्टियुद्ध माटे तैयार थया. बन्ने जण हाथवडे स्कंध उपर आस्फोट करता कुदी कुदीने परस्पर आलिंगन करीने बाहुवडे एकबीजाने दबावता सता गर्जना करवा लाग्या. पछी बाहुबलीए चक्रीने हाथवडे पकडीने लीलामात्रमां दडानी जेम उंचे आकाशमां उछाळ्या. ते एटला उंचा गया के आकाशमां अदृश्य थइ गया. तेथी बन्ने सैन्यमां हाहाकार थइ गयो. बाहुबलीने पण विचार थयो के–" मारा बंधु अंतरिक्षथी भूमि पर पडीने विशीर्ण थइ न जाय त्यां सुधीमां हुं तेने अधरथीज झीली लउं. एम विचारीने तेमणे शय्यानी जेम बंने हाथ राख्या, अने उंची दृष्टि राखीने उभा रह्या. घणी वारे चक्री आकाशमांथी नीचे आव्या, एटले तेने बाहुबलीए पोताना हाथ उपर झीली लीधा. पछी चक्रीए क्रोधना आवेशथी बाहुबळीना मस्तकपर मुष्टिनो प्रहार कर्यो, जेथी ते मूर्च्छा पाम्या. घणीवारे चेतना पामीने तेणे चक्रीना हृदयमां मुष्टिघात करी तेने मूर्च्छा पमाडचा, क्षणवारमां संज्ञा पामवाथी चक्रीए क्रोधथी रक्त थइने दंडवडे बाहुबळीना माथामां प्रहार कर्यो, तेथी तेना मुकुटना सेंकडो ककडा थइ गया अने आंखो मिंचाइ गइ. थोडी वारे पाछा सज्ज थइने बाहुबळीए पण लोहना दंडथी चक्रीनुं कवच (बखतर) चूर्ण करी नाख्युं. फरीथी चक्रीए दंडाघातथी बाहुबलीने जानु सुधी पृथ्वीमां मग्न करी दीधा. क्षणवारमां भूमिमांथी नीकळीने तेणे लोहना दंडवडे चक्रीना मस्तकपर प्रहार कर्यो, तेथी ते कंठ सुधी भूमिमां खुंची गया. क्षणवारे चैतन्य पामी चक्री बहार नीकळ्या. पछी तेणे विचार्युं के–" चक्री कोइ राजाथी जीताय नहीं एवी शाश्वती स्थिति छे छतां हुं तो आ बाहुबळीवडे पांचे युद्धमां जीतायो. तेथी मारामां चक्रीपणुं नथी. " एम विचारतां तेना हाथमां चक्ररत्न आव्युं. ते लइने चक्रीए बाहुबलीने कह्युं के–" हे भाइ ! हजु सुधी तने कांइ नुकसान थयुं नथी, माटे मारी आज्ञा मान्य कर, नहींतो आ चक्रथी तुं यमराजनो अतिथि थइश. " बाहुबळीए कह्युं के–" वृथा वाणीनो आडंबर शुं काम करो छो? हजु बाकी होय तो ते चक्रनुं बळ पण देखाडो. " इत्यादि वाक्योथी निर्भ्रंछना करायेला चक्रीए कोपथी तेना पर चक्र मूक्युं. ते चक्र बाहुबळीनी प्रदक्षिणा करीने पाछुं चक्रीना हाथमां आव्युं. केमके "गोत्रना कोइ सामान्य माणस उपर पण चक्रनी शक्ति चालती नथी. तो आवा चरम शरीरी उपर तो तेनुं पराक्रम शानुंज चाले ?" पछी बाहुबळी मुष्टि उपाडीने "आ हजार यक्ष सहित चक्रने अथवा तेना अधिपति चक्रीने चूर्ण करी नाखुं" एम विचारता चक्री सन्मुख दोड्या. वळी विचार थयो के "अवश्य आ मुष्टिथी तेनो नाश थशे, अने तेथी समग्र विश्वना लोको मने छ

खंडना नाथने हणनार कहेशे, माटे अहंकारवडे अनेक पाप उपार्जन करनार मने धिक्कार छे! अने प्रथमथीज पिताश्री पासे जइने दीक्षा ग्रहण करनार मारा लघु बंधुओने धन्य छे. हजु सुधी पण पापकर्ममां तत्पर थयेला मने वारंवार धिक्कार छे!" इत्यादि विचारीने बाहुबळीए तेज उंची करेली मुष्टिवडे पोताना मस्तक परथी केशनो लोच कर्यो. तेज वखत देवोए 'साधु, साधु' एम बोलीने तेमना पर पुष्पवृष्टि करी.

तेमने निःस्पृही थयेला जोइने लज्जाथी नम्र मुखवाळो चक्री पोतानी निंदा अने तेमनी प्रशंसा करतो बोल्यो के–"हे बंधु! हुं पापीओमां मुख्य छुं, अने तुं कृपाळुमां मुख्य छे, प्रथम तें मने अनेक प्रकारे जीत्यो, हमणां व्रत रूपी शस्त्रवडे रागादिक शत्रुओने पण तें जीत्या, माटे त्रण लोकमां ताराथी अधिक बळवान कोइ नथी. हे बंधु! मारो अपराध क्षमा कर." इत्यादि स्वनिंदा अने बाहुबलीनी स्तुति करी. बाहुबली मुनिए विचार्युं के–" हुं आम छद्मस्थपणे पिता पासे जइश, तो प्रथमथी दीक्षित थयेला मारा लघु बंधुओने मारे वंदना करवी पडशे, तेथी मारुं लघुपणुं थशे, माटे केवळज्ञान पाम्या पछीज जइश." एम विचारीने ते त्यांज कायोत्सर्गे रह्या.

पछी चक्री बाहुबलीना ज्येष्ठ पुत्र सोमयशानी साथे बहलि देशमां गया, त्यां तक्षशिला नगरीना उद्यानमां हजार आरावाळुं अने विविध प्रकारना मणि तथा रत्नथी जडित धर्मचक्र अने तेज नामनो प्रासाद जोयो. तेनी अंदर रहेला प्रभुने नमस्कार करीने चक्रीए सोमयशाने ते प्रासादनुं वृत्तांत पूछ्युं. एटले सोमयशाए कह्युं के–" पूर्वे ऋषभदेव पिता विहार करतां करतां संध्यासमये अहीं पधार्या हता. ते समाचार जाणीने आपना लघु बंधु बाहुबलीए विचार्युं के–' अत्यारे रात्रिनो समय थयो छे. माटे प्रातःकाळे मोटा उत्सव पूर्वक पिताश्रीने वांदीश.' एम निश्चय करीने सर्व सामग्री सज्ज करावी, प्रातःकाळ थतां मोटी धामधूमथी उद्यानमां आव्या. परंतु त्यां प्रभुने जोया नहीं, तेथी ते बहु रुदन करवा लाग्या. अने ' धर्मकार्यमां विलंब करनार एवा मने धिक्कार छे! हवे मने क्यारे पिताना दर्शन थशे? ' इत्यादि विलाप करवा लाग्या. तेने प्रधानोए विविध प्रकारे समजावी शांत कर्या. पछी वालुका (रेती) मां प्रतिबिंबित थयेला भगवानना पादने नमन करीने पितानी भक्तिथी प्रधानने कह्युं के–'आ पिताश्रीना पूज्य पगलांनो कोइ स्पर्श न करो.' एम कही आठ योजनना विस्तारवाळो आ

सोमयशाने चोवीश हजार राणीओ हती, अने श्रेयांस आदि बोंतेर हजार पुत्रो हता. पछी भरत राजा छ खंड पृथ्वीमां पोतानी अखंड आज्ञा प्रवर्तावीने अयोध्या तरफ चाल्या.

अहीं बाहुबळी मुनि निद्रा अने आहार विगेरेनो त्याग करीने जे वनमां कायोत्सर्ग ध्याने रह्या हता, त्यां तेमना मस्तकना केशमां, कर्णमां अने दाढी विगेरेमां पक्षिओए माळा कर्या; वर्षाऋतुमां दर्भना अंकुरा पगनां तळीयांने विंधीने बहार नीकळ्या, लताओ तेमना शरीरने वींटाइ गइ अने तेमना तपोबळथी वाघ विगेरे हिंसक प्राणीओ पण शांत भावने पामी गया. एवी रीते एक वर्ष वीती गयुं. त्यारे तेमनो केवळज्ञाननी उत्पत्तिनो समय जाणीने तेमनुं मान छोडाववाने माटे श्री ऋषभदेव भगवाने ब्राह्मी अने सुंदरी नामनी बे साध्वीओ, के जे बाहुबलीनी बहेनो थती हती तेने मोकली. ते साध्वीओ त्यां आवीने लताना समूह मध्ये रहेला तेमने जेम तेम शोधी काढीने बोली–" हे बंधु बाहुबली! अमारी पासे पिताश्री तमने कहेवरावे छे के–मदोन्मत्त हाथी पर चढवाथी केवळज्ञान शी रीते मळशे? तेथी आ मत्त हस्ती उपरथी नीचे उतर. जो तारे मतंगज उपर चढीने ज्ञाननी वांछा हती तो तक्षशिलानुं राज्य शामाटे मूकी दीधुं? " आ प्रमाणे सांभळीने बाहुबळीए विचार्युं के–" अहो! आ मारी बहेनो आम केम बोले छे? हुं सर्वथा परिग्रह रहित छतां मारुं हस्ती पर चडवुं शी रीते संभवे? पछी जरा वधारे विचार करतां तेमना समजवामां आव्युं के–" अहो! जाण्युं, मान रूपी मतंगज उपर हुं चडेलो छुं. आटलो वधो काळ में फोगट कष्टमां गुमाव्यो; केमके मान छतां शी रीते केवळनी प्राप्ति थाय? माटे गुणथी अधिक एवा मारा पूज्य लघु बंधुओने जइने नमस्कार करुं. " इत्यादि विचार करीने जेवो पोतानो पग उपाडे छे तेवुंज तेने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी देवताए आपेला यतिलिंगने धारण करी भगवानना समवसरणमां गया. त्यां " नमस्तीर्थाय " तीर्थने नमस्कार थाओ–एम कही जिनेश्वरनी प्रदक्षिणा करीने केवळीनी सभामां बेठा.

" खरेखर बाहुबलीनेज महा बळवान जाणवा के जेणे प्रथम छ खंडना नाथने जीती लीधा अने पछी विश्वमां कंटक रूप मान रूपी महा मल्लने हणीने परमानंदपद प्राप्त कर्युं. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य
द्विचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४२ ॥

व्याख्यान २४३ मुं.

मायापिंड विषे.

भक्तादिहेतवे कुर्वन्नानारूपाणि मायया ।
साधुर्वंचयते श्राध्धान्, मायापिंडः स उच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" साधु भात पाणी विगेरेने माटे मायावडे नाना प्रकारना रूपो करीने श्रावकोने छेतरे तेने **मायापिंड** कहेवाय छे. " तेनी उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणेः–

अषाढभूति मुनिनुं दृष्टांत.

राजगृही नामनी नगरीमां सिंहरथ नामे राजा राज्य करतो हतो. त्यां एकदा विविध ज्ञानवाळा, तपस्वी अने बुद्धिमान् धर्मरुचि आचार्य पधार्या. गोचरीने अवसरे तेमना शिष्य अषाढभूति गुरुनी आज्ञा लइने एकला गोचरी माटे नगरमां गया. मध्यान्ह समय थतां महर्द्धिक नामना नटने घेर पहोंच्या. त्यां ते नटनी भुवनसुंदरी अने जयसुंदरी नामनी बे कन्याए सुगंधी द्रव्यवाळो एक मोदक वहोराव्यो. ते लइने बहार नीकळी ते मुनिए विचार्युं के–" आ एक लाडु तो मारा गुरुने आपवो जोइशे. " एम धारीने तत्काळ युवावस्थावाळुं बीजुं रूप धारण करी फरी ते नटना घरमां प्रवेश करी धर्मलाभ आप्यो. एटले ते कन्याओए बीजो एक मोदक वहोराव्यो. ते लइने बहार पोळना दरवाजा सुधी जइ तेणे वळी विचार्युं के–" आ बीजो मोदक तो मारा धर्माचार्यने आपवो पडशे." एम विचारी काणी आंखवाळुं अतिवृद्ध साधुनुं रूप धारण करी त्यां जइने त्रीजो मोदक लीधो. वळी बहार आवीने " आ तो उपाध्यायने आपवो पडशे ". एम धारी कुबडुं रुप धारण करीने चोथो मोदक लीधो. ते पण " संघाडाना साधुने आपवो पडशे" एम धारीने कोढीयाने रूपे पांचमो लाडु लीधो. "आ पण वडील गुरु भाइने आपवो पडशे" एम धारीने पोताने माटे बार वर्षना बाळसाधुनुं रूप धारण करीने छठ्ठो लाडु लीधो. आ प्रमाणे पोतानो मनोरथ सिद्ध करी ते गुरु पासे आव्या.

सोमयशाने चोवीश हजार राणीओ हती, अने **श्रेयांस** आदि बोंतेर हजार पुत्रो हता. पछी भरत राजा छ खंड पृथ्वीमां पोतानी अखंड आज्ञा प्रवर्तावीने अयोध्या तरफ चाल्या.

अहीं बाहुबळी मुनि निद्रा अने आहार विगेरेनो त्याग करीने जे वनमां कायोत्सर्ग ध्याने रह्या हता, त्यां तेमना मस्तकना केशमां, कर्णमां अने दाढी विगेरेमां पक्षिओए माळा कर्या, वर्षाऋतुमां दर्भना अंकुरा पगनां तळीयांने विंधीने बहार नीकळ्या, लताओ तेमना शरीरने वींटाइ गइ अने तेमना तपोबळथी वाघ विगेरे हिंसक प्राणीओ पण शांत भावने पामी गया. एवी रीते एक वर्ष वीती गयुं. त्यारे तेमनो केवळज्ञाननी उत्पत्तिनो समय जाणीने तेमनुं मान छोडाववाने माटे **श्री ऋषभदेव भगवाने ब्राह्मी** अने **सुंदरी** नामनी बे साध्वीओ, के जे बाहुबलीनी बहेनो थती हती तेने मोकली. ते साध्वीओ त्यां आवीने लताना समूह मध्ये रहेला तेमने जेम तेम शोधी काढीने बोली–" हे बंधु बाहुबली! अमारी पासे पिताश्री तमने कहेवरावे छे के–मदोन्मत्त हाथी पर चढवाथी केवळज्ञान शी रीते मळशे? तेथी आ मत्त हस्ती उपरथी नीचे उतर. जो तारे मतंगज उपर चढीने ज्ञाननी वांछा हती तो तक्षशिलानुं राज्य शामाटे मूकी दीधुं? " आ प्रमाणे सांभळीने बाहुबळीए विचार्युं के–" अहो! आ मारी बहेनो आम केम बोले छे? हुं सर्वथा परिग्रह रहित छतां मारुं हस्ती पर चढवुं शी रीते संभवे? पछी जरा वधारे विचार करतां तेमना समजवामां आव्युं के–" अहो! जाण्युं, मान रूपी मतंगज उपर हुं चढेलो छुं. आटलो बधो काळ में फोगट कष्टमां गुमाव्यो; केमके मान छतां शी रीते केवळनी प्राप्ति थाय? माटे गुणथी अधिक एवा मारा पूज्य लघु बंधुओने जइने नमस्कार करुं. " इत्यादि विचार करीने जेवो पोतानो पग उपाडे छे तेवुंज तेने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी देवताए आपेला यतिलिंगने धारण करी भगवानना समवसरणमां गया. त्यां " नमस्तीर्थाय " तीर्थने नमस्कार थाओ–एम कही जिनेश्वरनी प्रदक्षिणा करीने केवळीनी सभामां बेठा.

" खरेखर बाहुबलीनेज महा बळवान जाणवा के जेणे प्रथम छ खंडना नाथने जीती लीधा अने पछी विश्वमां कंटक रूप मान रूपी महा मल्लने हणीने परमानंदपद प्राप्त कर्युं. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य द्विचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४२ ॥

व्याख्यान २४३ मुं.

माया पिंड विषे.

भक्तादिहेतवे कुर्वन्नानारूपाणि मायया ।
साधुर्वंचयते श्राध्धान्, मायापिंडः स उच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—"साधु भात पाणी विगेरेने माटे मायावडे नाना प्रकारना रूपो करीने श्रावकोने छेतरे तेने मायापिंड कहेवाय छे." तेनी उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणेः—

अषाढभूति मुनिनुं दृष्टांत.

राजगृही नामनी नगरीमां सिंहरथ नामे राजा राज्य करतो हतो. त्यां एकदा विविध ज्ञानवाळा, तपस्वी अने बुद्धिमान् धर्मरुचि आचार्य पधार्या. गोचरीने अवसरे तेमना शिष्य अषाढभूति गुरुनी आज्ञा लइने एकला गोचरी माटे नगरमां गया. मध्यान्ह समय थतां महर्द्धिक नामना नटने घेर पहोच्या. त्यां ते नटनी भुवनसुंदरी अने जयसुंदरी नामनी बे कन्याए सुगंधी द्रव्यवाळो एक मोदक वहोराव्यो. ते लइने बहार नीकळी ते मुनिए विचार्युं के—"आ एक लाडु तो मारा गुरुने आपवो जोइशे." एम धारीने तत्काळ युवावस्थावाळुं बीजुं रूप धारण करी फरी ते नटना घरमां प्रवेश करी धर्मलाभ आप्यो. एटले ते कन्याओए बीजो एक मोदक वहोराव्यो. ते लइने बहार पोळना दरवाजा सुधी जइ तेणे वळी विचार्युं के—"आ बीजो मोदक तो मारा धर्माचार्यने आपवो पडशे." एम विचारी काणी आंखवाळुं अतिवृद्ध साधुनुं रूप धारण करी त्यां जइने त्रीजो मोदक लीधो. वळी बहार आवीने "आ तो उपाध्यायने आपवो पडशे". एम धारी कुबडुं रुप धारण करीने चोथो मोदक लीधो. ते पण "संघाडाना साधुने आपवो पडशे" एम धारीने कोढीयाने रूपे पांचमो लाडु लीधो. "आ पण वडील गुरु भाइने आपवो पडशे" एम धारीने पोताने माटे बार वर्षना बाळसाधुनुं रूप धारण करीने छठ्ठो लाडु लीधो. आ प्रमाणे पोतानो मनोरथ सिद्ध करी ते गुरु पासे आव्या.

आ साधुनुं सर्व चरित्र बारीमां बेठेला नटे जोयुं. तेथी तेणे विचार्युं के-" अहो ! आ घणो सारो नट थइ शके तेम छे. " पछी तेणे पोतानी स्त्रीने तथा बंने कन्याओने कह्युं के-" आ साधुने खावा पीवानुं सारी रीते आपीने तेने लोभ पमाडजो, केमके ते आपणेमाटे सुवर्णपुरुष छे. ते अनेक रीते रूपनुं परावर्तन करवानी लब्धि जाणे छे. माटे ते आपणे घेर निरंतर आव्या करे तेवी रीते तेनी सेवा बजावजो. ते रसनो लोभी छे, एटले तरत फसाइ जशे. मायावीने मायाज बतावयी."पछी बीजे दिवसे पण अषाढभूति साधु त्यां वहोरवा आव्या, एटले तेने घणा मोदक आपीने तेणे कह्युं के-" हे पूज्य ! आप हंमेशां अहीं पधारजो. आपना पसायथी अमारा घरमां घणी समृद्धि छे." ए प्रमाणे नटना कहेवाथी ते साधु हंमेशां त्यां आववा लाग्या अने नित्यपिंड ग्रहण करवा लाग्या. वहोरावती वेळाए नटनी कन्याओ हाव भाव विलास पूर्वक हास्य करती, उत्तम वस्त्र धारण करती, अने कोइ कोइ वखत कटाक्ष पूर्वक मर्म वचन बोलती. ते सर्व जोइने वशीभूत थयेला साधु रागदृष्टिथी तेनी आकृति, केशपास अने पगनी पानी विगेरे वारंवार जोता हता. एक दिवस ते कन्याओए तेने कह्युं के-" हे स्वामी ! आपनुं स्वरूप तथा श्रेष्ठ चातुर्य जोइने अमे आपना उपर आसक्त थयेली छीए. हजु सुधी अमे कुमारी छीए तेथी कृपा करीने अमारा अंगमां व्याप्त थयेली कामज्वरनी पीडानो तमे नाश करो, अहीं चित्रशाळामांज रहीने आकडाना तूल जेवी कोमळ शय्यामां अमारी साथे विषयसुख भोगवो अने उत्तम मोदकोनो स्वाद चाखो. जे माणस प्रत्यक्ष मळेलां सुखोने मुकीने परोक्ष एवा परलोकना सुखनी वांछा करे छे ते मूर्ख छे. " मुनिए कह्युं के-" हुं मारा गुरुनी तथा धर्माचार्यनी रजा लइने पछी आवीश. " ते कन्याओ बोली के-" हवे अमे आपना विरहनी व्यथा सहन करवा शक्तिमान नथी. माटे अमने सत्य वचन आपो, के जेना आधारथी अमे घडी, मुहूर्त विगेरे काळ निर्गमन करीए. " ते सांभळीने तेमनी चेष्टा इष्ट करीने चारित्र चेष्टाथी भ्रष्ट थयेला ते मुनि पाछा आववानुं वचन आपीने गुरु पासे गया अने गुरु प्रत्ये कह्युं के-" हे पूज्य गुरु! में बाल्यावस्थामांज दीक्षा ग्रहण करी हती, तेथी आज सुधी पंचेंद्रियनुं सुख कांइ पण जोयुं नथी. हालमां देवांगना जेवी बे नटकन्याओ मने चाहे छे, माटे हुं त्यां जाउं छुं. मने आज्ञा आपो अने आ तमारां रजोहरण, मुखवस्त्रिका विगेरे ग्रहण करो."ते सांभळी सूरिए विचार्युं के-"अहो! मायापिंडथी आहार ग्रहण करवानुं आ फळ छे. केमके उत्तर गुणनी हानि थवाथी मूळ गुण पण परिणामे नष्ट थाय छे. परंतु आ नटपुत्री पासेथी नीकळीने अहीं आज्ञा लेवा आव्यो छे, तेथी कांइक आज्ञावर्ती जणाय छे, पण भ्रष्ट थयेला संयमना परिणामथी ते जाणतो

नथी के सावद्य वचन नहीं बोलनारा मुनिओ सावद्य कर्ममां प्रवर्तवानी आज्ञा शी रीते आपशे ? तो पण तेनी स्थिरतानी परीक्षा करुं के ते सर्वथा व्रतथी भ्रष्ट थयो छे के कांइक न्यूनता छे?" एम विचारीने सूरि बोल्या के–" हे शिष्य ! व्रताराधनथी प्राप्त थनारां इंद्रादिकना सुखने मुकीने तुं नटपुत्रीना अंगसंगमां आसक्त थयो छे. तो पण तारे मद्य तथा मांस खावुं नहीं ए बेना प्रत्याख्यान कोइ वखत पण छांडवा नहीं, अने तेना खानारनो पण संग करवो नहीं." आटलुं मारुं वचन प्रमाण कर." आ प्रमाणे गुरुवचन सांभळीने ते विनयथी नम्र थइने बोल्यो के–" हे गुरु ! जीवन पर्यंत आपनुं आ वचन हुं धारण करीश." गुरुए विचार्युं के–" आटलाथीज आने मोटो लाभ थशे. केमके ते सर्वथा श्रद्धारहित हजु थयो नथी, तेथी जो के संयमगुणठाणाथी कर्मवशे भ्रष्ट थयो छे तोपण अल्प मात्र विरतिनुं रक्षण करवाथी ते देशविरति रहेशे, अने तेथी पण तेनो पुनः उद्धार थशे."

पछी ते अषाढभूति चारित्रनो त्याग करी, चरित्रनो[1] रसिक थइने नटने घेर आव्यो, अने तेना घरनां सर्व माणसोने कह्युं के–"तमो सर्वे मद्यमांसनो सर्वथा त्याग करो तो हुं तमारे त्यां रहुं, अन्यथा नहीं." नटे तेनुं वाक्य अंगीकार करी पोतानी बन्ने कन्या तेने परणावी. तेमनी साथे ते सुखविलास भोगववा लाग्यो. पछी राजानी पासे जे जे नटो आवता तेमने पोतानी कलाथी जीतीने अनेक धन, वस्त्र विगेरे मेळवी तेणे पोताना ससरानुं घर भरी दीधुं; तेथी समग्र नटकुळमां तेनी अत्यंत प्रशंसा थवा लागी.

आ प्रमाणे निरंतर सुखमां मग्न रहेता तेणे बार वर्ष निर्गमन कर्यां. तेवामां कोइ एक नट अषाढ नटनी अनेक प्रकारनी प्रशंसा सांभळीने ते सहन न थवाथी तेने जीतवा माटे राजसभामां आव्यो; तेणे वादमां अनेक नटोने जीत्या हता, अने तेमनी संख्या करवा माटे चोराशी सुवर्णनां पुतळां तेने पगे बांधेलां हतां. तेणे राजा प्रत्ये विज्ञप्ति करी के–" तमारा राजनटने बोलावो, तेने मारी कळा देखाडीने हुं जीती लइश." राजाए अषाढ नटने बोलाव्यो, एटले ते राजसभामां आव्यो अने ते परदेशी नटनी साथे तेणे सरत करी के–" आपणामां जेनो पराजय थाय ते पोतानुं सर्वस्व छोडीने जतो रहे." आ प्रमाणे बन्ने जणाए सर्व जन समक्ष अंगीकार कर्युं. पछी अषाढे पोताने घेर जइ स्वजनोने कह्युं के–" हुं ते नटने जीतवा माटे जाउं छुं." त्यारे तेनी बन्ने प्रियाओ बोली के–" कार्य साधीने वहेला आवजो." पछी ते सर्व सामग्री लइने राजसभामां गयो. तेना गया पछी तेनी स्त्रीओए विचार्युं के–" अहो ! मद्य मांस खाधा विना

1 स्त्रीचरित्रमां रसिक.

आपणे घणा दिवसो निर्गमन कर्या, माटे आजे तो हवे इच्छा पूर्वक खाइए; आपणा पति तो नटनी साथे वाद करवा गया छे, ते छ मासे आवशे." एम विचारीने तेमणे पुष्कळ मद्यपान कर्युं, तेथी तेओ उन्मत्त थइ गइ. अहीं राजसभामां परदेशी नटे प्रथम पोतानी कळा देखाडी. एटले अषाढे लीलामात्रमां अनेक कळाओ देखाडीने तत्काळ तेने जीती लीधो; तेथी अहंकार रहित थयेलो ते नट पूतळां विगेरे पोतानी सर्व लक्ष्मी मूकीने लज्जाथी नासी गयो.

अषाढ नट तरतज पोताने घेर आव्यो. त्यां आवीने जुए छे तो बन्ने स्त्रीओने मदोन्मत्त थइने पडेली, दुर्गंधी मुखवाळी अने माखीओ जेना मोढा उपर बणबणी रहीछे एवी तेमज माखीओथी आखे शरीरे व्याप्त थयेली दीठी. तेने जोइने अषाढे विचार्युं के—" धिक्कार छे मने के हुं आवी मायावी अने अनेक माखीओए जेना मुखनुं चुंबन कर्युं छे एवी स्त्रीओ उपर अंधनी जेम आसक्त थइने उभय[1] भ्रष्ट थयो." इत्यादि विचार करतां गुरुनुं वाक्य याद आववाथी तेने वैराग्य उत्पन्न थयो. एटले तरतज मेडी उपरथी नीचे उतरी सर्वेनी समक्ष ते बोल्यो के—" अनेक पापनां स्थान रूप स्त्रीओनां विचित्र चरित्र जोइने मोहमां लपटाइ गयेला में हाथमां रहेला चारित्ररत्ननुं रक्षण कर्युं नहीं. तथा सीमंतीनीओनो[2] सीमंत (सेंथो) प्रथम नरकना सीमंत नामना पहेला नरकावासाने आपनार छे, एवुं निष्कारण जगद्वत्सल जिनेश्वरनुं वचन में अज्ञानीए व्यर्थ कर्युं, परंतु हवे " चरित्र " शब्दना पहेला अक्षरने बीजी मात्रा सहित[3] करुं. प्रथम तेने (चारित्रने) मात्रा रहित कर्यो हतो ते योग्य कर्युं नहोतुं." आ प्रमाणेनां तेनां वाक्यो सांभळीने ते नटकन्याओ भयभीत थइ गइ; जेथी तेने मद्यनो केफ उतरी गयो, एटले तेओ दीनमुखे आंखमांथी अश्रुपात करती पगे लागीने बोली के—" हे स्वामी ! हे प्राणनाथ ! आ दासीओनो एक अपराध क्षमा करो. अमारुं अबळानुं उगतुं यौवन केम व्यर्थ करो छो ?" ते बोल्यो के—" एवा सुखभोग अनंतवार भोगव्या छतां पण भोगनी आशा परमात्मानो मार्ग पाम्या विना वृद्ध थती नथी अर्थात् नाश पामती नथी." इत्यादि घणे प्रकारे तेणे धर्मनो उपदेश कर्यो, पण ते स्त्रीओ कांइ पण धर्म पामी नहीं, अने उलटो धनोपार्जन करवानो उपाय माग्यो. छेवटे कह्युं के—"हे प्राणनाथ ! पुष्कळ धन आपीने पछी जाओ, नहीं तो जवा नहीं दइए." त्यारे अषाढ सिंहरथ राजा पासे गयो अने कह्युं के—"हे राजा ! तमने भरत चक्रवर्तीनुं नाटक बतावुं."

---

१ आलोक तथा परलोकना सुखथी भ्रष्ट. २ स्त्रीओनो. ३ बीजी मात्रा एटले काना सहित करवाथी चारित्र थाय.

राजाए ते वात अंगीकार करी, तेथी तेणे सात दिवसमां भरत चक्रवर्तीनुं नाटक नवुं तैयार कर्युं. पछी नाटकना प्रारंभमां पांचसो राजपुत्रोने तैयार करी तेओने कह्युं के–" हुं जे प्रमाणे करुं तेज प्रमाणे तमारे पण करवुं." पछी पोते भरत थयो; अने चक्रनी उत्पत्ति, छ खंडनुं साधवुं, बत्रीश हजार मुकुटबद्ध राजा, चोराशी लाख हाथी, चोराशी लाख घोडा अने चोराशी लाख रथनुं निर्माण करवुं, छन्नुं करोड सुभटो सहित त्रण खंड जीत्या पछी विद्याधरनी कन्याने स्त्रीरत्न तरीके परणवी, ऋषभकूट पर्वते जइ पोतानुं नाम लखवुं, एक लाख अने बाणुं हजार स्त्रीओने लइने अयोध्यामां आववुं अने राज्याभिषेकनुं करवुं–इत्यादि सर्व यथाविधि भजवीने अनुक्रमे ते आदर्श भुवनमां गयो. त्यां आंगळीमाथी वींटी पडी गइ. ते जोइनेज तेने भरतनी जेम सर्व अनित्यादि भावनाओ भावतां केवळज्ञान प्राप्त थयुं. एटले त्यांज पंचमुष्टि लोच करी देवताए आपेलो मुनिवेश धारण करीने नीकळ्यो, अने राजा विगेरेने प्रतिबोध करी नाटकना पात्र रूप करेला पांचसो राजपुत्रोने बोध पमाडी दीक्षा आपी, तथा बीजा अनेक भव्य प्राणीओने पण बोध पमाड्यो. नाटकने माटे रत्नादिक सर्व वस्तु एकठी करी हती ते सर्व तेना ससरा नटे लइ लीधी; तेथी तेनुं जीवन पर्यंतनुं निर्धनपणुं टळी गयुं.

हवे अषाढभूति मुनिए पांचसो साधु सहित अन्यत्र विहार कर्यो. केवलज्ञान प्राप्त थयेलुं होवाथी ते पोताना गुरुने पण वांदवा योग्य थया. ते स्वरूप जाणीने तेना गुरु विगेरे वारंवार मस्तक धुणावीने तेनी प्रशंसा करवा लाग्या के–"अहो! देवताओ पण चक्रीना जेवी संपत्ति विकुर्वे छे, तथा बहारनां स्वरूपो यथास्थित देखाडे छे, तेमां कांइ आश्चर्य नथी. परंतु आ अषाढमुनिए तो बाह्य रूपो एवी रीते कर्यां के जेथी आंतर स्वरूप पण भेद रहित प्रगट करी बताव्युं, तेज मोटुं आश्चर्य छे."

" आ अषाढ मुनि मायापिंडनुं भोजन करवाथी भ्रष्टचित्त थया, तो पण मात्र एक मद्यमांस त्याग रूप नियमनी शुद्धिथी तेणे पोताना आत्माने तार्यो अने बाधकारी स्थाने रहीने पण भरत चक्रीनुं नाटक करीने तेणे आत्मानुं मूळ स्वरूप प्रगट कर्युं. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य त्रिचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४३ ॥

व्याख्यान २४४ मुं.

लोभ विषे.

पुमाननर्थं प्राप्नोति, लोभक्षोभितमानसः ।
यतो लोभपराभूतः सागरः सागरेऽपतत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनुं मन लोभथी क्षोभ पामेलुं छे ते मनुष्य अनर्थने पामेछे. केमके लोभथी पराभव पामेलो सागर श्रेष्ठी समुद्रमां पड्यो."

अति लोभो न कर्त्तव्यो, लोभो नैव च नैव च ।
अतिलोभाभिभूतात्मा, सागरः सागरं गतः ॥ २ ॥

" अति लोभ न करवो, लोभ नज करवो, नज करवो, अतिलोभथी पराभव पामेलो सागरशेठ समुद्रमां गयो. "

सागर श्रेष्ठीनुं दृष्टांत.

समुद्रने कांठे ध्यानसागर नामे एक शहेर हतुं. तेमां चोवीश करोड सोनैयानो पति सागर नामे श्रेष्ठी रहेतो हतो. ते जमनी जेवो क्रूर दृष्टिवाळो हतो, जुगारीनी जेम सर्वने ठगतो हतो, तेनुं वचन कागडानी जेवुं कठोर हतुं, तेनी गति (रीतभात) सर्पनी जेवी कुटिल हती अने पामर माणसनी जेम ते सर्वदा कलहप्रिय हतो. तेने चार पुत्रो हता. तेमने एकेक स्त्री परणावेली होवाथी घरमां चार वधूओ हती. अन्यदा श्रेष्ठीनी स्त्री मरण पामी. त्यारथी श्रेष्ठी अति कृपण होवाथी तथा अविश्वासु होवाथी घेरज रहेवा लाग्यो, अने तेनी नजरे घरमां कोइ पण सारुं भोजन करे, सारां वस्त्र पहेरे, के स्नान दान विगेरे करे तो तेनी साथे ते हमेशां कलह करवा लाग्यो. भिक्षुको तेने घेर जता नहीं एटलुंज नहीं पण कागडा विगेरे पक्षिओए पण तेनुं द्वार तजी दीधुं हतुं. पोषण करवा लायकनुं पोषण नहीं करवाथी गृहस्थाश्रमी लोकाचाररहित कहेवाय छे अने तेथी तेनी शोभा तथा महिमा नाश पामे छे अने अपयश प्राप्त थाय छे. कह्युं छे के—

वृद्धौ मातापितरौ, साध्वी भार्या लघूनि शिशूनि ॥
अप्युपायशतं कृत्वा पोष्याणि मनुरब्रवीत् ॥ १ ॥

भावार्थ–" वृद्ध माता पिता, सती स्त्री अने नानां बाळको सेंकडो उपाय करीने पण पोषण करवा लायक छे, एवुं मनुए कहेलुं छे. "

सागर श्रेष्ठीनी आवी रीतभातथी तेनुं बधुं कुटुंब दुःखी थतुं हतुं, पण तेना पुत्रनी स्त्रीओ तो रात्रे शेठना सुता पछी स्वछंदपणे खाती हती अने क्रीडा करती हती. एक वखत कोइ योगिनी आकाशमार्गे जती हती, तेणे ससराने घेर रहेतां छतां तेनी प्रीति नहीं होवाथी म्लान मुखवाळी तेनी वहुओने गोखमां बेठेली जोइ, तेथी कौतुकवडे ते तेमनी पासे आवी एटले तेओए तेमने गोत्रदेवीनी जेम नमस्कार कर्यो, तथा मोदक विगेरे आपीने खुब संतुष्ट करी. एटले ते योगिनी मात्र पाठ करवाथीज सिद्ध थाय एवी आकाशगामी विद्या तेमने आपीने पक्षीनी जेम आकाशमां उडी गइ.

एकदा रात्रिए पति विगेरे सर्व सुइ गया त्यारे चारे वहुओ पेला मंत्रवडे एक लाकडुं अधिवासित करी तेना पर चढीने रत्नद्वीपे गइ. त्यां सर्वत्र क्रीडा करीने पाछली रात्रे पाछी आवी, अने ते लाकडुं ज्यां त्यां मूकीने पोतपोताने ठेकाणे सुइ गइ. ए प्रमाणे हमेशां रात्रिए करवा लागी. एक दिवस पशुओने बांधवा छोडवानुं तथा दोहवानुं काम करनार चाकरे ते लाकडुं हमेशां आडुं अवळुं थतुं जोइने तेनुं कारण जाणवानी इच्छाथी रात्रे गुप्त रीते जोयुं. एटले तेणे वहुओनुं चारित्र जाणी लीधुं. पछी तेणे विचार्युं के–" आ हमेशां क्यां जाय छे ? ते काले जोइश. " पछी बीजे दिवसे रात्रे ते पोतानुं सर्व कार्य करीने ते काष्ठनी पोलाणमां संताइ रह्यो. समय थतां हमेशनी जेम ते काष्ठ उडीने सुवर्णद्वीपे गयुं. चारे स्त्रीओ लाकडा परथी उतरीने चोतरफ फरवा गइ, एटले चाकर पण बहार नीकळ्यो, त्यां तो सर्व पृथ्वी सुवर्णमय जोइने ते विस्मय पाम्यो. पछी ते वहुओने आववानो वखत थयो. एटले त्यार पहेलां ते चाकर थोडुंक सुवर्ण लइने पूर्वनी जेम काष्ठना पोलाणमां भराइ गयो. थोडी वारे ते स्त्रीओ पण आवी अने मंत्रशक्तिथी ते काष्ठसहित क्षणवारमां पोताने ठेकाणे आवीने सुइ गइ. आ प्रमाणे केटलोक काळ गयो. पेलो चाकर सुवर्ण लाव्यो हतो, तेथी शेठना घरनुं कामकाज करवामां अनादर करवा लाग्यो अने श्रेष्ठी तेने कांइ कहे तो सामुं बोलवा लाग्यो. तेथी धूर्तमां शिरोमणि श्रेष्ठीए विचार्युं के–" द्रव्यवान थया विना आम बोले नहीं, तेथी आणे मारा घरमांथी कांइक चोरी लीधुं जणाय छे." एम धारीने एक दिवस

व्याख्यान २४४ मुं.

लोभ विषे.

पुमाननर्थं प्राप्नोति, लोभक्षोभितमानसः ।
यतो लोभपराभूतः सागरः सागरेऽपतत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनुं मन लोभथी क्षोभ पामेलुं छे ते मनुष्य अनर्थने पामेछे. केमके लोभथी पराभव पामेलो **सागर** श्रेष्ठी समुद्रमां पड्यो. "

अति लोभो न कर्त्तव्यो, लोभो नैव च नैव च ।
अतिलोभाभिभूतात्मा, सागरः सागरं गतः ॥ २ ॥

" अति लोभ न करवो, लोभ नज करवो, नज करवो, अतिलोभथी पराभव पामेलो सागरशेठ समुद्रमां गयो. "

सागर श्रेष्ठीनुं दृष्टांत.

समुद्रने कांठे **ध्यानसागर** नामे एक शहेर हतुं. तेमां चोवीश करोड सोनैयानो पति **सागर** नामे श्रेष्ठी रहेतो हतो. ते जमनी जेवो क्रूर दृष्टिवाळो हतो, जुगारीनी जेम सर्वने ठगतो हतो, तेनुं वचन कागडानी जेवुं कठोर हतुं, तेनी गति (रीतभात) सर्पनी जेवी कुटिल हती अने पामर माणसनी जेम ते सर्वदा कलहप्रिय हतो. तेने चार पुत्रो हता. तेमने एकेक स्त्री परणावेली होवाथी घरमां चार वधूओ हती. अन्यदा श्रेष्ठीनी स्त्री मरण पामी. त्यारथी श्रेष्ठी अति कृपण होवाथी तथा अविश्वासु होवाथी घेरज रहेवा लाग्यो, अने तेनी नजरे घरमां कोइ पण सारुं भोजन करे, सारां वस्त्र पहेरे, के स्नान दान विगेरे करे तो तेनी साथे ते हमेशां कलह करवा लाग्यो. भिक्षुको तेने घेर जता नहीं एटलुंज नहीं पण कागडा विगेरे पक्षिओए पण तेनुं द्वार तजी दीधुं हतुं. पोषण करवा लायकनुं पोषण नहीं करवाथी गृहस्थाश्रमी लोकाचाररहित कहेवाय छे अने तेथी तेनी शोभा तथा महिमा नाश पामे छे. कह्युं छे के—

वृद्धौ मातापितरौ, साध्वी भार्या लघूनि शिशूनि ॥
अप्युपायशतं कृत्वा पोष्याणि मनुरब्रवीत् ॥ १ ॥

भावार्थ-" वृद्ध माता पिता, सती स्त्री अने नानां बाळको सेंकडो उपाय करीने पण पोषण करवा लायक छे, एवुं मनुए कहेलुं छे. "

सागर श्रेष्ठीनी आवी रीतभातथी तेनुं बधुं कुटुंब दुःखी थतुं हतुं, पण तेना पुत्रनी स्त्रीओ तो रात्रे शेठना सुता पछी स्वछंदपणे खाती हती अने क्रीडा करती हती. एक वखत कोइ योगिनी आकाशमार्गे जती हती, तेणे ससराने घेर रहेतां छतां तेनी प्रीति नहीं होवाथी म्लान मुखवाळी तेनी वहुओने गोखमां बेठेली जोइ, तेथी कौतुकवडे ते तेमनी पासे आवी एटले तेओए तेमने गोत्रदेवीनी जेम नमस्कार कर्यो, तथा मोदक विगेरे आपीने खुब संतुष्ट करी. एटले ते योगिनी मात्र पाठ करवाथीज सिद्ध थाय एवी आकाशगामी विद्या तेमने आपीने पक्षीनी जेम आकाशमां उडी गइ.

एकदा रात्रिए पति विगेरे सर्व सुइ गया त्यारे चारे वहुओ पेला मंत्रवडे एक लाकडुं अधिवासित करी तेना पर चढीने रत्नद्वीपे गइ. त्यां सर्वत्र क्रीडा करीने पाछली रात्रे पाछी आवी, अने ते लाकडुं ज्यां त्यां मूकीने पोतपोताने ठेकाणे सुइ गइ. ए प्रमाणे हंमेशां रात्रिए करवा लागी. एक दिवस पशुओने बांधवा छोडवानुं तथा दोहवानुं काम करनार चाकरे ते लाकडुं हंमेशां आडुं अवळुं थतुं जोइने तेनुं कारण जाणवानी इच्छाथी रात्रे गुप्त रीते जोयुं. एटले तेणे वहुओनुं चारित्र जाणी लीधुं. पछी तेणे विचार्युं के-" आ हंमेशां क्यां जाय छे ? ते काले जोइश. " पछी बीजे दिवसे रात्रे ते पोतानुं सर्व कार्य करीने ते काष्ठनी पोलाणमां संताइ रह्यो. समय थतां हंमेशनी जेम ते काष्ठ उडीने सुवर्णद्वीपे गयुं. चारे स्त्रीओ लाकडा परथी उतरीने चोतरफ फरवा गइ, एटले चाकर पण बहार नीकळ्यो, त्यां तो सर्व पृथ्वी सुवर्णमय जोइने ते विस्मय पाम्यो. पछी ते वहुओने आववानो वखत थयो. एटले त्यार पहेलां ते चाकर थोडुंक सुवर्ण लइने पूर्वनी जेम काष्ठना पोलाणमां भराइ गयो. थोडी वारे ते स्त्रीओ पण आवी अने मंत्रशक्तिथी ते काष्ठसहित क्षणवारमां पोताने ठेकाणे आवीने सुइ गइ. आ प्रमाणे केटलोक काळ गयो. पेलो चाकर सुवर्ण लाव्यो हतो, तेथी शेठना घरनुं कामकाज करवामां अनादर करवा लाग्यो अने श्रेष्ठी तेने कांइ कहे तो सामुं बोलवा लाग्यो. तेथी धूर्तमां शिरोमणि श्रेष्ठीए विचार्युं के-" द्रव्यवान थया विना आम बोले नहीं, तेथी आणे मारा घरमांथी कांइक चोरी लीधुं जणाय छे." एम धारीने एक दिवस

तेने एकांत बोलावीने श्रेष्ठीए युक्तिपूर्वक एवी रीते पूछयुं के तेणे पेटना अजीर्णनी जेम सर्व वृत्तांत कही दीधुं. शेठे कह्युं के-"आजे मारे जवुं छे, तुं कोइने वात करीश नहीं." एम चाकरने कहीने शेठ रात्रिने समये ते काष्ठनी पोलाणमां भराइ गया. प्रथमनी जेम लाकडुं सुवर्णद्वीपमां गयुं अने वहुओ उतरीने फरवा गइ. एटले श्रेष्ठी पण बहार नीकल्यो. त्यां सर्व पृथ्वी सुवर्णमय दीठी. एटले लोभथी तेणे लाकडामां माय तेटलुं सुवर्ण भरी दीधुं, अने पोते पण खोळामां रखाय तेटलुं सुवर्ण राखीने तेना पोलाणमां अंगनो संकोच करीने पेठो. समय थतां चारे वहुओ आवी, अने हंमेशनी रीते बे वहुओ उपर बेठी अने बे वहुओए लाकडुं उपाड्युं. परंतु उपाडनारी वहुओने तेनो भार बहु लाग्यो. तो पण जेम तेम करीने ते समुद्रना मध्य भागउपर आवी एटले ते वहुओ थाकी गइ. तेथी तेणे कह्युं के-"आ लाकडामां तो बहु भार लागे छे. माटे आने समुद्रमां मुकी दइने पेलुं पाणी उपर तरतुं लाकडुं लइए." ते सांभळीने पोलाणमां रहेलो श्रेष्ठी बोल्यो के- "हे वहुओ! हुं मांहे बेठो छुं माटे आ लाकडुं मुकी देशो नहीं." ते सांभळीने वहुओ बोली के-"तमे चोवीश करोड द्रव्यना स्वामी छतां तमारे शुं ओछुं हतुं के अहीं आव्या?" एम कही औषध विना व्याधि जाय छे एम धारीने तेणे लाकडासहित सागरशेठने समुद्रमां फेंकी दीधो अने बीजा लाकडापर बेसीने तेओ पोताने घेर आवी. समुद्रमां पडेलो सागर श्रेष्ठी बंने प्रकारे नीचे गयो. अर्थात् आकाशमांथी नीचे पड्यो अने मरण पामीने नरके गयो. कह्युं छे के:-

लोभाभिभुतान् प्रभवंति जीवान्,
दुःखान्यसंख्यानि पदे पदेऽपि ।
तृष्णा हि कृष्णाहिवधूरिवोग्रा,
निर्हंति चैतन्यमशेषमाशु ॥ १ ॥

भावार्थ—"लोभथी पराभव पामेला प्राणीओने पगले पगले असंख्य दुःखो प्राप्त थाय छे, अने काळी नागणना जेवी उग्र तृष्णा सर्व प्रकारना चैतन्यनो शीघ्रपणे नाश करेछे."

वामदेवेन मित्रेण, रूपदेवो वनांतरे ।
घोरनिद्रावशीभूतो, लक्षलोभेन मारितः ॥ २ ॥

भावार्थ—"वनमां घोर निद्राने वश थयेला रूपदेवने तेना मित्र वामदेवे एक लाख द्रव्यना लोभथी मारी नाख्यो."

वळी लोभ ए सर्व पापनो बाप छे. कह्युं छे के—

जनकः सर्वदोषाणां, गुणग्रसनराक्षसः ।
कंदो व्यसनवल्लीनां, लोभः सर्वार्थबाधकः ॥ ३ ॥

भावार्थ—"लोभ सर्व दोषोनो बाप (उत्पन्न करनार) छे, सर्व गुणोनो नाश करवामां राक्षस समान छे, दुःख रुपी लतानो कंद (मूळ) छे. अने धर्मादिक चारे पुरुषार्थने बाध करनार छे." तेनी उपर शुभंकर ब्राह्मणनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

पृथ्वीपुर नामना नगरमां **शुभंकर** नामे एक ब्राह्मण रहेतो हतो. तेने धर्मनुं मर्म जाणनारी जैनमति **गुणवती** नामे भार्या हती. एकदा ते ब्राह्मण विद्याभ्यास करवा माटे परदेशमां गयो. त्यां तेणे चार वेद, अढार पुराण, व्याकरण, अलंकार, न्याय, साहित्य, कोश विगेरे सर्व शास्त्रोनो अभ्यास कर्यो. पछी स्थाने स्थाने अनेक विद्वानोने वादमां जीतीने जयवंत थयो सतो ते पोताने घेर आव्यो. त्यां पण पोतानो शास्त्रज्ञाननो आडंबर सर्व लोकने अत्यंत देखाडवा लाग्यो. ते जोइ तेनी जैन-धर्मी भार्याए विचार्युं के—"आ मारो पति मिथ्यात्वीओनां एकांतवादी शास्त्रो भणेलो छे; परंतु स्याद्वादमार्गने नहीं जाणनार मनुष्य वस्तुनुं योग्यायोग्य विवेचन जाणतो नथी माटे हुं तेने कांइक पूछुं." एम धारी तेणे पोताना पतिने पूछ्युं के—"हे स्वामी ! सर्व पापनो बाप कोण?" ब्राह्मणे कह्युं के—"हे प्रिया ! हुं शास्त्रमां जोइने कहीश." पछी ते जेटलां शास्त्र भण्यो हतो ते सर्व तेणे जोयां, पण तेमांथी पापनो बाप क्यांइ नीकळ्यो नहीं. तेथी तेणे खेद पामीने स्त्रीने कह्युं के—"हे प्रिया ! तारा प्रश्ननो जवाब तो कोइ शास्त्रमांथी नीकळतो नथी, पण तें आ प्रश्न क्यांथी सांभळ्यो ?" ते बोली के—"में रस्ते जतां कोइ जैनमुनिना मुखथी सांभळ्युं हतुं के—'सर्व पापनो एक पिता छे,' तेथी हुं तमने तेनुं नाम पूछुं छुं." विप्र बोल्यो के—"हुं ते साधु पासे जइने पूछुं अने संदेहरहित थाउं." पछी ते विप्र साधु पासे जइने बेठो अने संस्कृत भाषामां केटलाक प्रश्नो कर्या; तेना यथास्थित उत्तर मळवाथी ते बहु खुशी थयो. पछी तेणे पूछ्युं के—"हे स्वामी ! पापना बापनुं नाम कहो." गुरुए कह्युं के—"संध्यासमये तमे अहीं आवजो ते वखते तेनुं नाम हु कहीश." एटले ब्राह्मण पोताने घेर गयो. गुरुए विचार्युं के—"जरुर आ ब्राह्मणने प्रतिबोध करवा माटे तेनी भार्याए मोकल्यो जणाय छे, माटे कोइ पण उपायथी तेने प्रतिबोध पमाडुं." एम धारीने एक श्रद्धालु श्रावकने गुरुए कह्युं के—"तमारे

घेरथी बे अमूल्य रत्नो लावीने मने आपो, मारे तेनुं काम छे; अने बीजुं कोइ चांडाळ पासे एक गधेडानुं मडदुं उपडावीने आ उपाश्रयथी सो हाथ दूर कोइ एकांत जग्याए मुकावो." श्रावके ते काम शीघ्र करी दीधुं. पछी संध्यासमय थतां पेलो ब्राह्मण गुरु पासे आव्यो. एटले गुरुए तेने एकांतमां कह्युं के–"अमारुं एक काम करवानुं कबुल करो तो आ एक रत्न आपुं, अने कार्य करी रह्या पछी आ बीजुं रत्न पण आपीश."ब्राह्मणे रत्न जोइ हर्षथी कह्युं के–"हे पूज्य! काम बतावो." गुरुए कह्युं के–"आ उपाश्रय नजीक एक गधेडानुं शब पडयुं छे तेथी ते पडयुं होय त्यां सुधी अमने स्वाध्याय विगेरे धर्मकार्यमां विघ्न थाय छे अर्थात् करी शकता नथी, तेथी तेने उपाडीने तुं गाम बहार नांखी आव." ब्राह्मणे विचार्युं के–"हमणां अंधारुं थइ गयुं छे, तेथी मने वेदपारगामीने अत्यारे कोण ओळखे तम छे? माटे स्वार्थ साधी लउं." एम विचारीने ते चांडाळ जेवो वेष करी, पेलुं शब खांधे चढावी, यज्ञोपवीत संताडीने, तेने बहार मूकी आव्यो. पछी स्नान करीने जलदी गुरु पासे आव्यो अने कह्युं के–"हे स्वामी! आपनुं कार्य करी आव्यो, माटे तमारुं वचन तमे पाळो." एटले सूरिए तेने बीजुं रत्न पण आपी दीधुं. पछी ब्राह्मणे सूरिने पोताना प्रश्ननो उत्तर पूछयो. त्यारे गुरुए कह्युं के–"हजु सुधी तारा प्रश्ननो जवाब तुं समज्यो नथी?" ते सांभळीने ते लघुकर्मी होवाथी, सुलभबोधी होवाथी तथा अनेक शास्त्रनां ज्ञानवाळो होवाथी सारी रीते विचार करतां तेने समजायुं के–"अहो! हुं 'ब्राह्मण' के जेनो अर्थ 'ब्रह्म तत्त्व जाणनार' थाय छे, तथा हुं गायत्रीनो जप करनार, छतां पण लोभना परवशपणाथी आवी निंद्य दशाने पाम्यो. धर्मशास्त्रादिकमां कह्युं छे के–

> लोभश्चेदतिपापकर्मजनको यद्यस्ति किं पातकैः ।
> सत्यं चेत्तपसा च किं शुचिमनो यद्यस्ति तीर्थेन किम् ॥
> सौजन्यं यदि किं निजैश्च महिमा यद्यस्ति किं मंडनैः ।
> सद्विद्या यदि किं धनैरपयशो यद्यस्ति किं मृत्युना ॥ १ ॥

भावार्थ–"अत्यंत पापकर्मने उत्पन्न करनार पापनो बाप जो लोभ होय तो बीजा पापथी शुं? जो सत्य होय तो तपनी शी जरुर छे? जो मन पवित्र होय तो तीर्थ करवाथी शुं विशेष छे? जो सुजनता होय तो आप्त माणसनुं शुं काम छे? जो महिमा होय तो अलंकार पहेरवाथी शुं विशेष छे? जो सारी विद्या होय तो धननी शी जरुर छे? अने जो अपयश होय तो पछी मृत्युए करीने शुं वधारे छे? अर्थात् अपयश एज मृत्यु छे." (एम सर्वत्र जाणवुं.)

इत्यादि विचार करीने ते ब्राह्मण पोताने घेर आवी पोतानी स्त्रीने कहेवा लाग्यो के–"हे प्रिया ! जैन साधुए मने सारो बोध पमाड्यो. जैन धर्म सर्व धर्म-मां उत्तम अने लोकोत्तर छे. मात्र एक लोभने नहीं जीतवाथी सर्व धर्मकृत्यो व्यर्थ छे लोभी माणस सर्व प्रकारनां पापकर्मो करे छे." पछी ते ब्राह्मण फरीने गुरु पासे गयो, अने गुरुने कह्युं के–"हे स्वामी ! आपनी कृपाथी मने ज्ञान, दर्शन अने चारित्र रूपी त्रण रत्न प्राप्त थयां." इत्यादि गुरुनी प्रशंसा करीने तेनो अत्यंत उपकार मान्यो.

आ दृष्टांतनुं तात्पर्य ए छे के–'लोभनो नाश करवा जेवो बीजो कोइ धर्म नथी अने लोभने वश थवा जेवुं बीजुं कोइ पाप नथी.' जुओ, स्त्रीए मोकलेल ब्राह्मणने निःस्पृह गुरुए युक्तिथी प्रतिबोध पमाड्यो.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य चतुश्चत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४४ ॥

व्याख्यान २४५ मुं.

लोभना क्रम विषे.

आरभ्यते पूरयितुं, लोभगर्तो यथा यथा ।
तथा तथा महच्चित्रं, मुहुरेष विवर्द्धते ॥ १ ॥

भावार्थ—"लोभ रूपी गर्त (खाडो) जेम जेम पूर्ण करवा आरंभ करीए छीए, तेम तेम ते खाडो वारंवार वृद्धि पामे छे. ते एक मोटुं आश्चर्य छे."

अनंती वखत भोजन कर्यां, वस्त्रो पहेर्यां, विषयो सेव्या अने भवेभवमां द्रव्यनो पण संचय कर्यो छतां लोभ रूपी गर्तानो एक खूणो पण पूर्ण थयो नहीं. आ विषयमां **सुभूम** चक्रीनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

एकदा स्वर्गमां **विश्वानर** अने **धन्वंतरि** नामना बे देवो परस्पर मित्र

होवाथी पोतपोताना धर्मनी प्रशंसा करवा लाग्या. तेमां एक जैनधर्मी हतो अने बीजो शैवधर्मी हतो. पछी तेओ धर्मनी परीक्षा करवा माटे मृत्युलोकमां आव्या. ते वखते मिथिला नगरीनो पद्मरथ नामनो राजा वासुपूज्य स्वामी पासे दीक्षा लइने मार्गे चाल्यो जतो हतो. तेने जोइने तेनी परीक्षा करवा माटे ते देवोए अनेक प्रकारनां स्वादिष्ट अन्न विकुर्वीने आपवा मांड्यां. परंतु ते देवपिंड छे एम जाणवाथी क्षुधाथी पीडित छतां पण ते मुनिए ते ग्रहण कर्या नहीं अने पोताना नियमथी चलायमान थया नहीं. आगळ जतां बे मार्ग आव्या, तेमां एक रस्ता उपर तीक्ष्ण कांटा विकुर्व्या अने बीजा मार्ग उपर सूक्ष्म देडकां उत्पन्न कर्यां. त्रीजो मार्ग न होवाथी ते राजर्षि इर्यासमिति पाळवा माटे कांटावाळा मार्गे चाल्या. कांटा लागवाथी पगमांथी रुधिरनी धारा थवा मांडी, तोपण ते रस्तो तेमणे छोड्यो नहीं. त्यार पछी देवो अनेक स्त्रीओनां रूप विकुर्वीने गीत नृत्यादि करवा लाग्या, तोपण तेनुं मन क्षोभ पाम्युं नहीं. छेवट नैमित्तिकनुं रूप धारण करीने तेओए तेने कह्युं के–"हे मुनि ! अमे त्रिकाळज्ञानी छीए, तेथी अमे जाणीए छीए के–तमारुं आयुष्य हजु घणुं छे. माटे युवावस्थाना फळ रूप भोगविलास भोगवीने पछी वृद्धावस्थामां तप करजो." त्यारे मुनि बोल्या के–"जो आयुष्य घणुं हशे तो लांबा काळ सुधी चारित्र पळाशे; विषयभोग तो पूर्वे अनंतीवार भोगव्या, पण तेथी कांइ तृप्ति थइ नहीं, हवे जीवतां सुधी पण तेनी स्पृहा नथी." ते सांभळी देवोए जैनशासननी प्रशंसा करी.

पछी एक अरण्यमां जमदग्नि नामनो वृद्ध तापस चिरकाळथी तपस्या करतो हतो, त्यां जइ चकला चकलीनुं रूप विकुर्वीने तेनी दाढीमां माळो बांधीने रह्या. चकलाए मनुष्यवाणीथी चकलीने कह्युं के–"हे प्रिया ! हुं हिमवंत पर्वत उपर जाउं छुं, थोडा दिवसमां पाछो आवीश." चकली बोली के–"त्यां तमने कोइ बीजी चकली पर आसक्ति थाय, तो पछी हुं पति विनानी शुं करुं?" ते सांभळीने चकलाए पाछा आववा माटे गौहत्या विगेरेना सोगन खाधा. त्यारे चकली बोली के–"जो तमे पाछा न आवो तो आ ऋषिना पापथी लेपाओ, एवा सोगन खाओ तो जवा दउं." ते सांभळीने तापस क्रोधायमान थयो, अने ते पक्षिओने पकडवा माटे दाढीमां हाथ नांखी तेने पकडीने कह्युं के–"अरे पक्षिओ ! हुं पापी शी रीते ? ते कहो." त्यारे पक्षिओ बोल्या के–"हे तपोनिधि! क्रोध करशो नहीं. तमारुं शास्त्र जुओ. तेमां कह्युं छे के–

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैव च नैव च ।
तस्मात् पुत्रमुखं वीक्ष्य, सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—"अपुत्रनी गति थती नथी; तेमज स्वर्ग तो मळतुंज नथी. माटे पुत्रनुं मुख जोइने पछी सर्व कार्य साधवां."

"माटे हे ऋषि ! तमे पुत्ररहित छो. तेथी तमारी सद्गति केम थशे?" आ प्रमाणे सांभळीने ते तापसनुं मन क्षोभ पाम्युं; तेथी तपस्या छोडीने कोष्ठक नामना नगरमां गयो. त्यां जितशत्रु नामे राजा हतो. तेनी पासे जइने तेणे कन्यानी याचना करी. राजाए कह्युं के–" मारे सो कन्याओ छे, तेमांथी जे कन्या तमने परणवानी इच्छा करे तेने ग्रहण करो." पछी तापस कन्याओना अंतःपुरमां गयो. त्यां बधी कन्याओए तेने वृद्ध तथा संस्कारविनाना अंगवाळो होवाथी कुरुपी जोइने थू थू करी तेनी अवगणना करी. तेथी तापसे क्रोधथी ते सर्व कन्याओने कुबडी करी दीधी. त्यांथी पाछा वळतां राजभुवनना आंगणामां एक मुग्ध कन्याने धूळमां रमती जोइने तापसे एक बीजोरुं तेने देखाड्युं. ते लेवा माटे तेणे लांबो हाथ कर्यो. एटले 'आ कन्या मने इच्छे छे' एम कहीने तेने उपाडी लीधी. राजाए शापना भयथी हजार गायो तथा दासी सहित ते कन्याने आपी. त्यार पछी राजानी प्रार्थनाथी ते तापसे पेली सर्व कन्याओने सारी करी.

हवे ते रेणुका कन्याने लइने जमदग्नि तापस वनमां आश्रम करीने तेनुं लालनपालन करवा लाग्यो. अनुक्रमे ते कन्या युवावस्था पामी. त्यारे ते तेने विधि पूर्वक परण्यो. तेने ऋतुकाळ आवतां तेनी प्रार्थनाथी जमदग्निए ब्राह्मण तथा क्षत्रिय पुत्र उत्पन्न थाय तेवा बे चरु मंत्रीने तैयार कर्या. तेमांथी रेणुकाए ब्राह्मण चरु नहीं खातां क्षत्रिय चरु खाधो अने ब्रह्मचरु पोतानी बेन के जे **हस्तिनापुर-ना राजा अनंतवीर्यनी** पट्टराणी हती तेने मोकल्यो. ते तेणे खाधो. समय आवतां रेणुकाने राम नामनो अने तेनी बेनने कृतवीर्य नामनो पुत्र थयो. अन्यदा ते आश्रममां एक विद्याधर आव्यो, तेने अतिसारनो व्याधि थयो हतो. रामे तेनी सेवा करीने तेने साजो कर्यो. तेथी विद्याधरे तेने परशु विद्या आपी. राम ते विद्या साधीने परशुराम नामे प्रसिद्ध थयो अने देवाधिष्ठित परशु लइने चोतरफ फरवा लाग्यो.

एकदा रेणुका पोतानी बेनने मळवा माटे हस्तिनापुर गइ. त्यां पोताना बनेवीनी साथे तेणे भोग भोगव्या. तेनाथी तेने एक पुत्र थयो. रामे पोतानी माताने दुराचरणी जाणीने पुत्र सहित मारी नांखी. तेथी क्रोध पामेला अनंतवीर्ये तेनो आश्रम भांगी नांख्यो. ते जाणीने रामे तेने परशुवडे मारी नांख्यो. पछी तेना राज्य उपर प्रधानोए तेना पुत्र कृतवीर्यने बेसाड्यो. ते कृतवीर्य राजाए पितानुं वेर

लेवा माटे जमदग्निने मार्यो. तेथी क्रोधायमान थयेला रामे कृतवीर्यने मारीने तेनुं राज्य लइ लीधुं. ते वखते कृतवीर्यनी एक सगर्भा स्त्री नासीने तापसोना आश्रममां गइ. ते तापसोए तेने राजानी राणी जाणीने भोंयरामां गुप्त रीते राखी. रामने क्षत्रियजातिपर क्रोध थवाथी तेणे सात वार क्षत्रियरहित पृथ्वी करी, अने मारेला राजाओनी दाढो कढावी तेनो थाळ भरीने सभामां पोतानी पासे राख्यो.

एकदा कोइएक निमित्तिओ आव्यो. तेणे परशुरामना पूछवाथी कह्युं के–" जे माणसनी दृष्टिथी आ दाढो खीर रुप थइ जशे अने जे माणस ते खीर खाइ जशे तेना हाथथी तमारुं मृत्यु थशे. " ते सांभळीने रामे शत्रुनी खबर पडवा माटे एक दानशाळा करावी. तेमां एक सिंहासन राखी तेना पर ते थाळ मुक्यो. पछी ते क्षत्रियोनो वध करवा माटे चोतरफ भमवा लाग्यो. ज्यां ज्यां कोइ पण क्षत्रिय होय त्यां त्यां तेनी परशु (कुठार) मांथी अग्निनी ज्वाळा नीकळती, एटले तेने ते मारी नाखतो. फरतो फरतो एक दिवस ते पेला तापसोना आश्रममां गयो. त्यां कृतवीर्यनी राणीने भोंयरामां पुत्र प्रसव्यो हतो, तेनुं नाम **सुभूम** राखेलुं हतुं. ते क्षत्रियपुत्र होवाथी रामना परशुमांथी त्यां ज्वाळा नीकळी, एटले रामे तापसोने कह्युं के–" आ आश्रममां कोइ पण क्षत्रिय होवो जोइए. " तापसो बोल्या के–" अमे सर्वे तापसो मूळ क्षत्रियोज छीए. " ए प्रमाणे सांभळीने संदेहरहित थयेलो परशुराम पोताने स्थाने जइ राज्य करवा लाग्यो.

एकदा वैताढ्य पर्वतना स्वामी **मेघनाद** नामना विद्याधरे निमित्तियाने पूछ्युं के–"मारी कन्यानो पति कोण थशे ?" निमित्तियाए कह्युं के–" सुभूम नामे चक्रवर्ती तमारी पुत्रीनो पति थशे. " ते सांभळीने मेघनादे पोतानी पुत्री भोंयरामां ज रहेला सुभूमने परणावी. एक दिवसे सुभूमे पोतानी माताने पूछ्युं के–" हे माता! शुं पृथ्वी आटलीज छे ?" त्यारे माताए कह्युं के–" पुत्र ! पृथ्वी तो घणी छे, पण तारा पिताने परशुरामे मारी नांख्या, अने हमणा हस्तिनापुरनुं राज्य ते करेछे; तेना भयथी आपणे आ भोंयरामां आवीने रह्या छीए. " आ प्रमाणे सांभळीने सुभूमने बहु क्रोध चड्यो. तेथी तत्काळ बहार नीकळी मेघनादने साथे लइने ते हस्तिनापुरमां आव्यो. त्यां प्रथम ते दानशाळामां गयो. एटले पेली दाढो तेनी दृष्टि पडतांज ते खीर रुप थइ गइ, तेथी ते खावा लाग्यो. ते प्रमाणे जोइने रामे राखेला रक्षको तेने मारवा दोड्या. तेमने मेघनादे हराव्या. ते वृत्तांत जाणीने परशुराम पोते हाथमां परशु लइने तेने मारवा आव्यो. सुभूमे तेना पर थाळने भमावीने मूक्यो, के तेज थाळ हजार देवोथी अधिष्ठित चक्र बनी गयुं. तेनाथी राम मृत्यु पाम्यो. ते वखते देवताओए सुभूमना उपर पुष्पनी वृष्टि करी.

पूर्वेना वैरने लीधे सुभूमे एकवीश वखत ब्राह्मण विनानी पृथ्वी करी. अनुक्रमे ते छ खंडनुं चक्रवर्तीपणुं पाम्यो. तो पण लोभने लीधे तेने धातकीखंडमां आवेला भरत-क्षेत्रना छ खंड साधवानी इच्छा थइ. ते वखते देव, दानव अने विद्याधरोए तेने कह्युं के–"हे राजा! पूर्वे भरत चक्रवर्ती विगेरेए मात्र आ भरतक्षेत्रना छ खंडनेज पोतानी आज्ञामां राख्या हता. अनंतकाळमां अनंता चक्रीओ थइ गया, अनंता थवाना छे, ते सर्वेनी एवीज स्थिति अने नीति छे. कोइ धातकीखंडना भरतक्षेत्रने साधवा जतुं नथी." इत्यादि देवादिकना उपदेशनी अवगणना करीने सुभूम चक्री पोताना सैन्य सहित लवण समुद्रने कांठे आव्यो, अने पोताना चर्म रत्नने हाथनो स्पर्श करीने विस्तार्युं. तेनी उपर सर्व सैन्यने बेसाडीने लवण समुद्रने पेले पार जवा माटे चाल्यो. ते वारे सर्व देवोए पृथक् पृथक् पोतपोताना मनमां विचार कर्यो के–" आ राजाना घणा देवो सेवक छे, तेथी मारी एकलानी शक्ति शुं कामनी छे? हु जइश तो कांइ अटकी पडशे नहीं. " एम विचारीने एकी वखते सर्व देवोए तेने छोडी दीधो. एटले ते सर्व सेना सहित बे लाख जोजन विस्तारवाळा लवण समुद्रमां डूबी गयो अने मरीने सातमी नरके गयो.

" अति लोभ रुपी पिशाचे जेनुं चित्त ग्रस्त कर्युं छे एवा कया पुरुषो विपत्ति न पामे ? केमके चक्रवर्तीनुं पद पाम्या छतां पण सुभूम राजा लोभथीज सातमी नरके गयो. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य पंचचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४५ ॥

व्याख्यान २४६ मुं.

क्रोधपिंड तथा मानपिंड विषे.

उच्चाटनादि सामर्थ्यं शापमंत्रतपोबलम् ।
प्रदर्श्य क्रोधतो लाति, क्रोधपिंडः स उच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—"उच्चाटन, कामण, मारण, मोहन, वशीकरण विगेरेना सामर्थ्यथी शाप मंत्र तथा तपनुं बळ देखाडीने क्रोधथी जे आहारादिकनुं ग्रहण करे छे ते क्रोधपिंड कहेवाय छे."

दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

हस्तिकल्प नामना नगरमां कोइ साधु मासक्षपणने पारणे एक ब्राह्मणने घेर वहोरवा गया. त्यां कोइना मरणप्रसंगनी ज्ञाति जमती हती. जमवा बेठेला ब्राह्मणोने घेबर विगेरे पीरसाता हता. त्यां ते साधु घणी वार सुधी उभा रह्या, पण कोइए भिक्षा तो आपी नहीं, पण उलटा ब्राह्मणो "अहींथी नीकळ, अहींथी नीकळ" एम कहीने ते साधुनी अवगणना करवा लाग्या. त्यारे साधुए क्रोधथी कह्युं के—"आ प्रसंगे तमे मने अन्न आपता नथी, तो फरीने आवाज प्रसंगे हुं आवीश." एम कहीने साधु अन्य स्थाने गया. दैवयोगे थोडाज दिवसमां ते ब्राह्मणना घरमां बीजुं माणस मरी गयुं, अने तेवीज रीते तेना ज्ञातिभोजनने दिवसे ते साधु मासक्षपणने पारणे त्यां गया. ते दिवसे पण चिरकाळ उभा रह्या छतां भिक्षा न मळवाथी साधुए फरीने कोपथी कह्युं के—"फरीथी आवाज कार्यमां हुं आवीश." एम कहीने ते चालता थया. विधिना वशथी तेना घरमां त्रीजुं माणस मरी गयुं. तेना ज्ञातिभोजनने दिवसे वळी तेज रीते ते साधु आव्या. ते वखते पण भिक्षा नहीं मळवाथी साधु कोपथी बोल्या के—"आ कार्यमां आपता नथी, तो फरीथी पाछो आवाज कार्यमां आवीश." एम कहीने जतां रस्तामां द्वारपाळे ते साधुने जोइने घरधणीने कह्युं के—"आ साधु वारंवार भिक्षा न मळवाथी क्रोध करीने जाय छे; माटे तेनुं सन्मान करीने भिक्षा आपो." घरधणीए विचार्युं के—"आमां कांइ पण कारण होवुं जोइए, नहीं तो महिने महिने आम मरणप्रसंग क्यांथी आवे ? केमके आवा आवा खरच करीने हुं तो थाकी गयो. माटे आ

साधुने संतोष पमाडुं." एम धारीने तरत उभो थइ ते साधु पासे जइ तेने नमस्कार करीने बोल्यो के-"हे स्वामी! मारो अपराध क्षमा करो अने आ घेवर वहोरीने मारा पर अनुग्रह करो, तेमज जीवितदान आपो." ए रीते तेने बहुरीते खमावीने यथेच्छपणे घेबर वहोराव्या. आवी रीते लीधेलो आहार क्रोधपिंड कहेवाय छे. ते वृत्तांत गुरुए आलोयण आपती वेळाए जाण्यो; तेथी तेने योग्य आलोयण आपीने शुद्ध कर्यो.

हवे मानपिंड विषे कहे छे.

लब्धिपूर्णस्त्वमेवासीत्युत्साहितोऽन्यसाधुभिः ।
गृहिभ्यो गर्वितो गृह्णन् मानपिंडः स उच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ--' तमेज सर्व लब्धिथी पूर्ण छो. ' एम कहीने बीजा साधुओए उत्साह पमाडेलो कोइ साधु गर्व पामीने गृहस्थो पासेथी जे पिंड लइ आवे ते मानपिंड कहेवाय छे."

दृष्टांत नीचे प्रमाणे.

कोशल देशमां **गिरिपुष्प** नामना नगरमां सेव संबंधी कोइक ओछव हतो. तेथी ते दिवसे दरेक घरे सेवो करी हती. ते दिवसे युवान साधुओमां परस्पर वातो चालतां एक साधुए कह्युं के-"आजे तो गोचरीमां घणी सेवो मळशे, पण जे काले लावे ते लब्धिमान खरो." ते सांभळीने बीजा साधु बोल्या के-"अहो ! घी गोळ विनानी अने थोडी सेव लावे तो तेथी शुं?" तेवामां एक गर्वना पर्वत समान साधु बोल्या के-"काले हुं घणी सेव लावीश." एम प्रतिज्ञा करीने बीजे दिवसे ते साधु गोचरीए गया. त्यां एक गृहस्थने घेर सेव देखीने तेनी स्त्री पासे तेणे विविध उक्तिथी सेवनी याचना करी, तो पण तेणीए सेव आपी नहीं. त्यारे साधुए गर्वथी कह्युं के-"गमे तेम करीने पण हुं आ सेव लइश." ते स्त्री बोली के-"जो कदाच तने सेव आपुं तो मने नफट कहेजे." पछी ते साधु बहार नीकळ्या अने "ते स्त्रीनो पति बधुं मंडळ भराइने बेठुं छे त्यां गयो छे" एवा कोइ तरफथी खबर मळवाथी ते त्यां गया अने पूछ्युं के-"अहीं देवदत्त शेठ छे?" त्यारे कोइए जवाब आप्यो के-"ते शेठनुं शुं काम छे?" साधुए कह्युं के-"तेनी पासे कांइक मागवुं छे." त्यारे तेओ बोल्या के-"अहो! शुं कोइना शून्य घरमां कुमारिका जोइ छे?" आ प्रमाणे मश्करीनां वचन सांभळीने ते शेठ पोते बोल्यो के-"हुं ज देवदत्त छुं, तमारे शुं काम छे?" साधुए कह्युं के-"जो तमे छ पुरुषमांना

कोइ न हो, अने तेथी जूदा सातमा हो तो तमारी पासे मागुं." ते सांभळीने सर्व लोको विस्मय पाम्या; अने बोल्या के-"ते छ पुरुष कया?" त्यारे साधुए कह्युं के-

श्वेतांगुलिर्बकोड्डायी, तीर्थस्नाता च किंकरः।
हृदनो गृध्रपक्षीव, षडेते गृहिणीवशाः ॥ १ ॥

भावार्थ-" श्वेत आंगळीवाळो, बगलां उडाडनारो, तीर्थमां (तळावादिमां) स्नान करनारो, चाकर, गंधातो अने गीध पक्षी जेवो-ए छ माणसो स्त्रीने वश थयेला होय छे." तेनां दृष्टांत आ प्रमाणे-

(१) एक पुरुष पोतानी स्त्रीने वश हतो अने तेना हुकम प्रमाणे करनारो हतो. तेणे क्षुधा लागवाथी तेनी स्त्री पासे खावानुं माग्युं, त्यारे शय्यामां सुतेली तेनी स्त्री बोली के-" जो तमारे वहेलुं खावुं होय तो चूलामांथी राख काढीने बाळवा माटे लाकडां विगेरे लावी आपो, तो हुं उतावळी रांधीने तमने जमाडुं." ते सांभळीने तेणे हमेशां तेम करवा मांड्युं. ए प्रमाणे दररोज चूलामांथी राख काढवाथी तेनी आंगळीओ धोळी थइ गइ. तेथी लोकमां तेने सौ **श्वेतांगुली** कहेवा लाग्या.

(२) कोइ स्त्रीने आधीन थयेला पुरुषने तेनी स्त्रीए कह्युं के-"हमेशां तमारे तळावमांथी पाणी भरी लाववुं." एटले ते पुरुष दिवसे पाणी लेवा जतां लज्जा आववाथी रात्रे तलाव उपर पाणी भरवा जतो. तेथी तळावमां रहेलां बगलां उडी जतां हतां, माटे ते लोकोमां बगलाउडाडनारना नामथी प्रसिद्ध थयो.

(३) कोइ पुरुषे पोतानी स्त्री पासे न्हावा माटे पाणी माग्युं. त्यारे स्त्रीए कह्युं के-" धोतीयुं लइने तळावे स्नान करी आवो." तेणे हमेशां तेम करवा मांड्युं. एटले ते लोकमां तीर्थस्नाता नामथी प्रसिद्ध थयो.

(४) एक स्त्रीलुब्ध पुरुष हमेशां प्रातःकाळे उठीने " हे प्रिया ! शुं काम करुं ? " एम पुछतो; पछी स्त्री तेने काम बतावती. ते स्त्रीना कहेवा प्रमाणे दळवा, खांडवानुं काम करवा लाग्यो. एटले लोको तेने **किंकर** कहीने बोलाववा लाग्या.

आ उपर एक बीजुं दृष्टांत छे के- ब्रह्मदत्त चक्रीए तेनापर प्रसन्न थयेला कोइ देवता पासे सर्व जातिना तिर्यंचोनी बोली समजी शकाय एवी विद्या मागी; त्यारे देवताए कह्युं के-" हुं ते विद्या तमने आपुं पण ते वात तमे जो कोइने कहेशो तो तमारुं मृत्यु थशे." एम कहीने तेणे विद्या आपी. पछी एक दिवसे अंतः-

पुरमां राजा आव्यो, त्यारे तेने अंगे विलेपन करवा माटे राणी चंदननुं कचोळुं लावी. ते जोइने भींत उपर रहेली एक घरोळीए पोताना पतिने पोतानी भाषामां कह्युं के–" आमांथी चंदन मने लावी आपो." त्यारे तेणे कह्युं के– " राजा पासे हुं चंदन लेवा जाउं, तो राजा मने मारी नांखे." ते बोली के–" जो चंदन नहीं लावी आपो, तो हुं मरी जइश." आ वात सांभळवाथी चक्रीने हसवुं आव्युं. ते जोइने राणीए पूछयुं के–" कांइ पण कारण विना तमे केम हस्या ? माटे तेनुं कारण कहो, नहीं कहो तो हुं मरी जइश." राजाए कह्युं के–" चिता पासे चाल. केमके हसवानुं कारण हुं कहीश, त्यारे मारुं मृत्यु थशे." एम कहेवाथी पण राणीए हठ मूकी नहीं, त्यारे राजा चितामां प्रवेश करवा चाल्या. रस्तामां राजाना सेवको घोडाने माटे लीला जवनुं गाडुं भरीने आवता हता. ते जोइने कोइ बकरीए बकराने कह्युं के–" मने एक जवनो पूळो लावी आपो." बकरो बोल्यो के–" जो हुं तने ते लावी आपुं, तो राजाना सेवको मारा प्राण ले." बकरी बोली के–" जो तमे लावी आपशो नहीं, तो हुं मरीश." त्यारे बकरो बोल्यो के–" हुं कांइ आ चक्रीनी जेवो स्त्रीनो चाकर नथी के स्त्रीना वचनथी मरवा जाउं." ते सांभळीने चक्रीए विचार्युं के–" हुं पशु करतां पण वधारे मूर्ख बन्यो के जेथी स्त्रीना कहेवाथी मरवा चाल्यो." एम विचारी बकराने गुरु मानीने चक्री पाछो वळ्यो.

(५) कोइ स्त्रीआसक्त पुरुष स्त्रीना कहेवाथी छोकरां रमाडवां, तेमने मुत्रोत्सर्गादि कराववुं अने तेनां बाळोतीयां धोवां विगेरे काम करवा लाग्यो, तेथी तेनां वस्त्रो कायम दुर्गंध मारतां; एटले लोको तेने हदन (दुर्गंधि) कहेवा लाग्या.

(६) कोइ पुरुष भोजन करवा बेठो. ते वखत तेणे पोतानी स्त्री पासे शाक, छाश विगेरे माग्युं, त्यारे ते स्त्री घरना कामसां धुंचायेली होवाथी क्रोधवडे बोली के–" तमारे हाथे लइ ल्यो." तेथी ते पुरुष गीध पक्षीनी जेम कांइक बडबडतो बडबडतो हाथे लेवा लाग्यो." तेथी ते लोकमां गीध पक्षीनी जेवो कहेवावा लाग्यो.

माटे आ छ प्रकारना पुरुषो स्त्रीने आधीन छे. आ प्रमाणे साधुनां वचन सांभळीने सभाना माणसो बोल्या के–"हे साधु ! आ शेठ पण ते छमांथीज एक छे." त्यारे शेठ बोल्यो के–"हे साधु ! आ लोकोना कहेवाथी शुं ? तमारी मरजी प्रमाणे

मागो." साधुए कह्युं के–जो एम होय, तो तमारा घरमांथी घी गोळ सहित घणी सेव मने आपो" ते वात कबूल करीने शेठ घेर चाल्या. साधुए तेने तेनी स्त्रीनो वृत्तांत कह्यो. तेथी साधुने दरावाजा पासे राखीने ते घरमां गयो, अने पोतानी स्त्रीने कांइ कामना मिषथी मेडी उपर मोकली. मुनिए मागेली सर्व सामग्री वहोरावी. ते लइने साधुए पोतानुं नाक आंगळी वती घसीने ते शेठनी स्त्रीने "नकटी (नफट) थइ" एम सूचव्युं. पछी ते स्त्रीए साधुने पाछा बोलावीने वधारे सेव आपी. ते लइने तेओ संतुष्ट थया, अने उपाश्रये जइ सर्व साधुनी पासे पोताना गुण अने लब्धिनी प्रशंसा करवा लाग्या.

एकदा आलोयणने वखते गुरुए पूछ्युं के–"तें कोइ वखत मूळ गुण के उत्तर गुणनी कांइ पण खंडना करी छे?" तेणे कह्युं के–"में एक वखत देवदत्त शेठने घेरथी मोटो आडंबर करीने सेव लीधी हती." त्यारे गुरुए कह्युं के–"ए **मानपिंड** कहेवाय छे. माटे त्रण काळमां पण परवस्तु उपर आसक्ति नहीं राखनारा मुनिओए एवो पिंड लेवो योग्य नथी." ते सांभळीने तेणे पोताना आत्मानी निंदा करी अने ते कर्म आलोव्युं.

"जेम क्रोधपिंड लेवाथी मुनिधर्मनो उद्योत थतो नथी, तेमज मानपिंड पण निःस्पृही साधुओने लेवा योग्य नथी. तेथी पिंडशुद्धि माटे साधुओए निरंतर यतना करवी."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य षट्चत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४६ ॥

व्याख्यान २४७ मुं.

लोभ पिंड विषे[1].

स्निग्धं मनोहरं पिंडं, वीक्ष्यातिरसलोलुपः ॥
सर्वत्राटत्यनूचानो, लोभपिंडः स उच्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—"गोळ घी मिश्रित ते स्निग्ध अने स्वादिष्ट एवो आहार जोइने रसमां अत्यंत लोलुपी साधु तेवा आहारने माटे सर्वत्र उंचनीच कुळमां अटन करेछे. तेवी रीते मेळवेलो आहार ते **लोभपिंड** कहेवाय छे."

दृष्टांत नीचे प्रमाणे.

चंपा नगरीमां **सुव्रत** नामना कोइ साधु मासक्षपणने पारणे द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावथी चारे प्रकारना अभिग्रहने धारण करीने पहेली पोरशीमां ज गोचरी माटे नीकळ्या. ते अतितपस्वी होवाथी तेने सर्व काळ गोचरीने योग्य छे.

श्रीकल्पसूत्रमां समाचारी व्याख्यानमां कह्युं छे के—"निच्चभत्तस्स भिक्खुस्स कप्पति एगं गोयरकालं" इत्यादि. नित्य आहार करनार साधुने गोचरीनो काळ कल्पे छे. अर्थात् हंमेशां एकाशन करनार साधुने एकज गोचरीने समये श्रावकना घरमां पेसवुं ने नीकळवुं कल्पे छे, बीजी वार जवुं आववुं कल्पतुं नथी. पण जो कोइ साधु एकाशन करीने आचार्य, उपाध्याय के ग्लान साधु विगेरेनी वैयावच करवा शक्तिमान थइ शकता न होय तो तेने बे वार पण गोचरी करवा जवुं कल्पे छे. केमके तप करतां वैयावृत्यनुं फळ अधिक छे. वळी जे क्षुल्लक साधु छे, एटले जेने दाढी, मूछ तथा बगलना वाळ उग्या नथी तेने बे वार गोचरी करवा जतां पण दोष नथी. एकांतर उपवास करनार साधुने पारणाने दिवसे एक वार गोचरी करवाथी निर्वाह न थाय तो बे वार गोचरी करवा जवानी छूट छे. छठ्ठ (बे उपवास) करनार साधुने पारणाने दिवसे बे वार गोचरी करवा जवुं कल्पे छे, अने अठ्ठम (त्रण उपवास) के तेथी वधारे ४-५ विगेरे उपवास करनार साधुने पारणाने दिवसे सर्व काळ गोचरीनो छे. ज्यारे इच्छा थाय त्यारे गोचरी जइ शके, परंतु प्रातःकाळे लावेली गोचरी राखी मूकाय नहीं. केमके तेथी जीवसंसक्तादि दोषनो संभव छे.

---

१ मायापिंडनो अधिकार अषाढाभूतिना वृत्तांतमां समायेलो होवाथी क्रोध, मान पछी लोभपिंड विषेज कहे छे.

हवे ते साधु आहारने माटे नगरमां फरे छे, तेवामां श्रावकनी ज्ञातिमां सिंह केसरीआ लाडुनी लाणी थती जोइने तेणे विचार कर्यो के–"आजे मारे लाडुज वहोरवा, तेमां पण सिंहकेसरीआज लेवा." एवो अभिग्रह धारीने भिक्षा माटे कोइना घरमां पेठा. रसना लोलुप होवाथी बीजो आहार लीधो नहीं, अने सिंहकेसरीआ लाडु मळ्या नहीं; तेथी तेमनो क्लिष्ट अध्यवसाय थयो, अने ते सिंह केसरीआ लाडुनुंज ध्यान करतां अटन करवा लाग्या. मध्यान्ह समय थतां "मने आजे लाडु मळ्या नहीं" एम धारी चित्तमां खेद करवा लाग्या. ते लाडुना ज ध्यानमां तल्लीन थवाथी कोइना घरद्वारमां प्रवेश करता त्यारे "धर्मलाभ" कहवाने बदले "सिंहकेसरा" शब्दनो ज उच्चार थइ जतो. ए प्रमाणे आखो दिवस निर्गमन कर्यो. रात्रे पण तेज रीते बजारनी दुकानोमां तथा चकले चकले भमवा लाग्या. सांजनी पडिलेहण तथा प्रतिक्रमणनो समय पण स्मरणमां आव्यो नहीं. सूर्यनां किरणथी व्याप्त थयेला सर्व लोकना जवा आववाना मार्गमां जीवरक्षाने माटे अवलोकन करी राखवुं जोइए ते पण स्मरणमां रह्युं नहीं. ए प्रमाणे भमतां रात्रिना बे प्रहर व्यतीत थया. ते वखते कोइ श्रावकना गृहमां पेठा अने "धर्मलाभ"ने बदले "सिंहकेसरा" बोल्या. ते श्रावक पण विनयथी अभ्युत्थान विगेरे करीने "अयोग्य वखते मुनिनुं आगमन केम थयुं हशे?" तेनो विचार करवा लाग्यो. तेणे जाण्युं के–" आ साधु तपस्वी छे. आजे ज में एमने अप्रमत्त भाववाळा जोया हता. संसारीपणामां पण आ साधुए धन, धान्य, सुवर्ण, स्त्री, पुत्र, दास, दासी विगेरे संपूर्ण वैभवनो त्याग करीने वैराग्यथी ज दीक्षा ग्रहण करी छे. ते सर्व हुं जाणुं छुं. वळी आ मुनि गीतार्थ पण छे तो अकस्मात् रात्रिना समये अत्रे आववानुं शुं कारण हशे? जो कदाच तेमना प्रत्यक्ष जणाता दोष प्रगट करुं तो मारामां श्रावकपणुंज न कहेवाय. वळी अनेक सिद्धांतना पारगामी एवा आ मुनिनी पासे हुं कांइ पण बोलवा योग्य नथी; अथवा मारी जेवा विषयासक्त पुरुषोथी आवा महात्माओनुं चरित्र जाणी के कळी शकातुं नथी. माटे आनो परमार्थ तो ज्ञानी ज जाणी शके. केमके मननो भाव जाण्या विना बहारनी व्यवहारविरुद्ध चेष्टा जोवाथी गुणीना गुणो पण दोष रूपे देखाय छे. तोपण गुणग्राही बुद्धिथी आनी परीक्षा तो अवश्य करवी जोइए के–आ मुनि सर्वथा पडवाई भाववाळा थया छे के लेशमात्र थया छे?" आ प्रमाणे विचारीने वळी ते श्रावके तर्क करवा मांड्यो के–"आ मुनिनी कांइ पण चेष्टा विषयोन्मुख देखाती नथी, तेमज परधन हरण करवानी चेष्टा पण जणाती

---

१ दश दश जातिनां उत्तम मूळ, फळ, बीज, पुष्प ने पर्णनो रस अने दश जातिनी सुगंध तथा चार विगई मळीने ६४ प्रकार एकठां थवाथी सिंहकेसरिया लाडु थाय छे.

नथी, वळी बोलती वेळाए मुखवस्त्रिका मुख पासे राखे छे, अने चालती वेळाए जयणा पूर्वक पगलां भरे छे, माटे आ मूळ गुणनो घात करनार तो जणाता नथी, परंतु एमने आहारनी तीव्र अभिलाषा थइ जणाय छे." इत्यादि विचारीने तेणे नाना प्रकारनी रसवती, साकर, खांड, खाजां, घेबर, मोतीचूर, कपूर मिश्रित कूर (भात) तथा विविध प्रकारनी मीठाइ तेमनी पासे लावीने धरी अने लेवा जणाव्युं; परंतु मुनि तो दरेक चीज जोइने " मारे आनो खप नथी, मारे आनो खप नथी " एम वारंवार कहेवा लाग्या. तेथी ते श्रावके विचार्युं के-" हजु सुधी आ मुनि मार्गमां छे केमके पोताना अभिग्रह विनानी बीजी चीज ग्रहण करता नथी. तेमज जे चीजनी इच्छा छे तेनी याचना पण करता नथी. तो हवे तेनो अभिग्रह शो हशे ते केवीरीते जणाय ? तो पण अहीं प्रवेश करती वेळाए ते 'सिंहकेसरा' बोल्या हता, ते उपरथी एम जणाय छे के तेने सिंहकेसरीआ लाडुनी इच्छा हशे अने ते कोइ पण ठेकाणेथी तेमने मळ्या नहीं होय तेथी तेमनुं चित्त भ्रमित थयुं छे." एम धारी ते श्रावक लाणीमां आवेला सिंहकेसरीआ लाडुथी भरेलुं मोटुं पात्र तेमनी पासे धरीने बोल्यो के-" हे पूज्य ! आ मोदक ग्रहण करीने मने कृतार्थ करो." एटले मुनिए मोदक वहोर्या. तेथी तेनुं चित्त स्वस्थ थयुं. पछी श्रावके विचार्युं के-" मुनिओने आहारना चार भांगा छे. १ रात्रे लावीने रात्रेज वापरवुं, २ रात्रे लावीने दिवसे वापरवुं, ३ दिवसे लावीने रात्रे वापरवुं अने ४ दिवसे लावीने दिवसे वापरवुं; आ चार भांगामां छेल्लो भांगो योग्य छे. पहेला त्रण भांगा योग्य नथी. तेथी जो आ मुनि कदि जिव्हानी लोलुपताथी आ आहार करशे तो तेमना उत्तर गुणनी हानि थशे, अने तेथी अनुक्रमे मूळ गुणनो पण घात थशे; तेथी मोटी हानि थशे केमके रात्रिभोजनमां अनंत दोष रहेला छे. तेने आ मुनि गीतार्थ होवाथी जाणे छे तो पण अत्यारे तेमना चित्तमां तेनुं स्मरण थतुं नथी; तेथी हुं एवुं करुं के जेथी तेमने काळनो निर्णय थाय अने तेथी तेमने मोटो गुण थइ पडे." एम विचारीने ते श्रावके युक्ति पूर्वक विनय करीने कह्युं के-"हे स्वामी ! आजे जंगम कल्पवृक्ष समान तथा गुरु पासेथी बे प्रकारनी शिक्षाने धारण करनारा आप अकस्मात् मारे घेर पधार्या, तेथी हुं मारुं मोटुं भाग्य समजुं छुं. आपनुं शुद्ध चारित्रवाळुं स्वरूप जोइने जाणे में आजे पुंडरीक स्वामी विगेरे सर्व पूर्व मुनिओना दर्शन कर्या एम हुं मानुं छुं. तमारा संतोषामृतयुक्त आचरणने अने चरण करणने धन्य छे. हुं तो मोहजाळमां फसायेलो, लोभथी ग्रसायेलो, इंद्रियोना क्षणिक सुखमां मग्न थयेलो तथा स्त्रीपुत्रादिकमां आसक्त थयेलो छुं; तेथी एक मुखथी आपनी

हवे ते साधु आहारने माटे नगरमां फरे छे, तेवामां श्रावकनी ज्ञातिमां सिंह केसरीआ लाडुनी लाणी थती जोइने तेणे विचार कर्यो के–"आजे मारे लाडुज वहोरवा, तेमां पण सिंहकेसरीआज लेवा." एवो अभिग्रह धारीने भिक्षा माटे कोइना घरमां पेठा. रसना लोलुप होवाथी बीजो आहार लीधो नहीं, अने सिंहकेसरीआ लाडु मळ्या नहीं; तेथी तेमनो क्लिष्ट अध्यवसाय थयो, अने ते सिंह केसरीआ लाडुनुंज ध्यान करतां अटन करवा लाग्या. मध्यान्ह समय थतां "मने आजे लाडु मळ्या नहीं" एम धारी चित्तमां खेद करवा लाग्या. ते लाडुना ज ध्यानमां तल्लीन थवाथी कोइना घरद्वारमां प्रवेश करता त्यारे "धर्मलाभ" कहवाने वदले "सिंहकेसरा" शब्दनो ज उच्चार थइ जतो. ए प्रमाणे आखो दिवस निर्गमन कर्यो. रात्रे पण तेज रीते बजारनी दुकानोमां तथा चकले चकले भमवा लाग्या. सांजनी पडिलेहण तथा प्रतिक्रमणनो समय पण स्मरणमां आव्यो नहीं. सूर्यनां किरणथी व्याप्त थयेला सर्व लोकना जवा आववाना मार्गमां जीवरक्षाने माटे अवलोकन करी राखवुं जोइए ते पण स्मरणमां रह्युं नहीं. ए प्रमाणे भमतां रात्रिना बे प्रहर व्यतीत थया. ते वखते कोइ श्रावकना गृहमां पेठा अने "धर्मलाभ"ने बदले "सिंहकेसरा" बोल्या. ते श्रावक पण विनयथी अभ्युत्थान विगेरे करीने "अयोग्य वखते मुनितुं आगमन केम थयुं हशे?" तेनो विचार करवा लाग्यो. तेणे जाण्युं के–"आ साधु तपस्वी छे. आजे ज में एमने अप्रमत्त भाववाळा जोया हता. संसारीपणामां पण आ साधुए धन, धान्य, सुवर्ण, स्त्री, पुत्र, दास, दासी विगेरे संपूर्ण वैभवनो त्याग करीने वैराग्यथी ज दीक्षा ग्रहण करी छे. ते सर्व हुं जाणुं छुं. वळी आ मुनि गीतार्थ पण छे तो अकस्मात् रात्रिना समये अत्रे आववानुं शुं कारण हशे? जो कदाच तेमना प्रत्यक्ष जणाता दोष प्रगट करुं तो मारामां श्रावकपणुंज न कहेवाय. वळी अनेक सिद्धांतना पारगामी एवा आ मुनिनी पासे हुं कांइ पण बोलवा योग्य नथी; अथवा मारी जेवा विपयासक्त पुरुपोथी आवा महात्माओनुं चरित्र जाणी के कळी शकातुं नथी. माटे आनो परमार्थ तो ज्ञानी ज जाणी शके. केमके मननो भाव जाण्या विना बहारनी व्यवहारविरुद्ध चेष्टा जोवाथी गुणीना गुणो पण दोष रूपे देखाय छे. तोपण गुणग्राही बुद्धिथी आनी परीक्षा तो अवश्य करवी जोइए के–आ मुनि सर्वथा पडवाई भाववाळा थया छे के लेशमात्र थया छे?" आ प्रमाणे विचारीने वळी ते श्रावके तर्क करवा मांड्यो के–"आ मुनिनी कोइ पण चेष्टा विषयोन्मुख देखाती नथी, तेमज परधन हरण करवानी चेष्टा पण जणाती

---

१ दश दश जातिनां उत्तम मूळ, फळ, बीज, पुष्प ने पर्णनो रस अने दश जातिनी सुगंध तथा चार विगई मळीने ६४ प्रकार एकठां थवाथी सिंहकेसरिया लाडु थाय छे.

नथी, वळी बोलती वेळाए मुखवस्त्रिका मुख पासे राखे छे, अने चालती वेळाए जयणा पूर्वक पगलां भरे छे, माटे आ मूळ गुणनो घात करनार तो जणातो नथी, परंतु एमने आहारनी तीव्र अभिलाषा थइ जणाय छे." इत्यादि विचारीने तेणे नाना प्रकारनी रसवती, साकर, खांड, खाजां, घेबर, मोतीचूर, कपूर मिश्रित कूर (भात) तथा विविध प्रकारनी मीठाइ तेमनी पासे लावीने धरी अने लेवा जणाव्युं; परंतु मुनि तो दरेक चीज जोइने "मारे आनो खप नथी, मारे आनो खप नथी" एम वारंवार कहेवा लाग्या. तेथी ते श्रावके विचार्युं के-" हजु सुधी आ मुनि मार्गमां छे केमके पोताना अभिग्रह विनानी बीजी चीज ग्रहण करता नथी. तेमज जे चीजनी इच्छा छे तेनी याचना पण करता नथी. तो हवे तेनो अभिग्रह शो हशे ते केवीरीते जणाय ? तो पण अहीं प्रवेश करती वेळाए ते 'सिंहकेसरा' बोल्या हता, ते उपरथी एम जणाय छे के तेने सिंहकेसरीआ लाडुनी इच्छा हशे अने ते कोइ पण ठेकाणेथी तेमने मळ्या नहीं होय तेथी तेमनुं चित्त भ्रमित थयुं छे." एम धारी ते श्रावक लाणीमां आवेला सिंहकेसरीआ लाडुथी भरेलुं मोटुं पात्र तेमनी पासे धरीने बोल्यो के-" हे पूज्य ! आ मोदक ग्रहण करीने मने कृतार्थ करो." एटले मुनिए मोदक वहोर्या. तेथी तेनुं चित्त स्वस्थ थयुं. पछी श्रावके विचार्युं के-" मुनिओने आहारना चार भांगा छे. १ रात्रे लावीने रात्रेज वापरवुं, २ रात्रे लावीने दिवसे वापरवुं, ३ दिवसे लावीने रात्रे वापरवुं अने ४ दिवसे लावीने दिवसे वापरवुं; आ चार भांगामां छेल्लो भांगो योग्य छे. पहेला त्रण भांगा योग्य नथी. तेथी जो आ मुनि कदि जिव्हानी लोलुपताथी आ आहार करशे तो तेमना उत्तर गुणनी हानि थशे, अने तेथी अनुक्रमे मूळ गुणनो पण घात थशे; तेथी मोटी हानि थशे केमके रात्रिभोजनमां अनंत दोष रहेला छे. तेने आ मुनि गीतार्थ होवाथी जाणे छे तो पण अत्यारे तेमना चित्तमां तेनुं स्मरण थतुं नथी; तेथी हुं एवुं करुं के जेथी तेमने काळनो निर्णय थाय अने तेथी तेमने मोटो गुण थइ पडे." एम विचारीने ते श्रावके युक्ति पूर्वक विनय करीने कह्युं के-"हे स्वामी ! आजे जंगम कल्पवृक्ष समान तथा गुरु पासेथी बे प्रकारनी शिक्षाने धारण करनारा आप अकस्मात् मारे घेर पधार्या, तेथी हुं मारुं मोटुं भाग्य समजुं छुं. आपनुं शुद्ध चारित्रवाळुं स्वरूप जोइने जाणे में आजे पुंडरीक स्वामी विगेरे सर्व पूर्व मुनिओना दर्शन कर्या एम हुं मानुं छुं. तमारा संतोषामृतयुक्त आचरणने अने चरण करणने धन्य छे. हुं तो मोहजाळमां फसायेलो, लोभथी ग्रसायेलो, इंद्रियोना क्षणिक सुखमां मग्न थयेलो तथा स्त्रीपुत्रादिकमां आसक्त थयेलो छुं; तेथी एक मुखथी आपनी

सद्भावनानुं वर्णन करवाने असमर्थ छुं, तेम छतां पण आपे अहीं पधारी तेवा संसारमां खुंची गयेला मारा पर मोटी कृपा करी छे. हवे हुं आपने एक प्रश्न पूछुं छुं तेनो उत्तर आपवा कृपा करो के–हुं दररोज प्रातःकाळे बे त्रण तारा आकाशमां देखातां होय ते वखते नवकारसी विगेरे प्रत्याख्यान करुं छुं,आजे में पुरिमड्ढनुं पच्च-खाण कर्युं छे तो तेनो काळ पूर्ण थयो छे के नहीं ? " ते सांभळीने मुनिए श्रुत ज्ञाननो उपयोग दइ आकाशमां तारामंडळ तरफ जोयुं, तो जाण्युं के हजु रात्रिना बे पहोर व्यतीत थया छे तेथी मध्य रात्रिनो समय छे, उत्तराध्ययनना छवीशमा अध्ययनमां कह्युं छे के–

पढमपोरिसि सज्झायं, बीयं झाणं च झायइ ।
तइयाए निद्दमोक्खं तु, चउत्थिए भूयोवि सज्झायं ॥ १ ॥

भावार्थ—"रात्रिनी प्रथम पोरसीए स्वाध्याय करवो, बीजीए ध्यान धरवुं, त्रीजीए निद्रानो त्याग करवो अर्थात् निद्रा लेवी अने चोथी पोरसीए पाछो स्वाध्याय करवो."

रात्रिना चार पहोर जाणवाना उपाय.

जं नेइ जया रत्तिं, नक्खत्तं तम्हिह चउब्भाए ।
संपत्ते विरमिज्जा, सज्झायओ पओस कालंमि ॥ २ ॥

भावार्थ—ज्यारे जे नक्षत्र रात्रिने समाप्त करे, एटले के जे नक्षत्र जे ठे-काणे अस्त थवाथी रात्रि पूरी थती होय ते नक्षत्र[1] प्रदोषकाळे ज्यां देखायुं होय त्यांथी आकाशना चोथा भागे आवे. ते वखते (पहेलो पहोर पूरो थयो जाणी) सझायथी विराम पामवो. (ए प्रमाणे चारे पहोर माटे जाणी लेवुं)

आ प्रमाणे विचारतां ते साधुए पोताना मननुं भ्रमितपणुं पण जाण्युं अने मनमां विचारवा लाग्या के–" अहो ! में मूर्खे विरूप आचरण आचर्युं, लोभथी परा-भव पामेला मारा जीवितने धिक्कार छे.." एम विचारी ते श्रावक प्रत्ये कह्युं के–"हे जैन तत्त्वज्ञ श्रावक ! तुं धन्य छे अने कृतपुण्य छे. तें मने सिंहकेसरीआ आपीने अने पुरिमड्ढ पच्चखाण संबंधी प्रश्न करीने संसारमां डूबतां बचाव्यो छे. तारी चोयणा साची छे. वळी मने मार्गभ्रष्टने मार्ग पर चढाववाथी तुं मारो धर्म गुरु छे. तारी चतुराई तथा धैर्य वाणीथी कही शकाय तेम नथी. " इत्यादि पोतानी निंदा

१ आ नक्षत्र प्राये सूर्य नक्षत्रथी चौदमुं होयछे.

अने ते श्रावकनी श्लाघा करीने पछी रात्रि होवाथी चालवानो आचार नथी एम जाणी ते श्रावक पासे रहेवा माटे स्थान मागीने त्यां एकांते ध्यानमग्न रह्या.

प्रातःकाळे ते आहार परठववा माटे शुद्ध स्थंडिल भूमिए जइने विधि पूर्वक मोदकनुं चूर्ण करतां ढंढण मुनिना जेवी भावना भाववा लाग्या; अने शुक्ल ध्यान रूपी अग्निवडे कर्म रूपी इन्धनने बाळवा लाग्या. ए प्रमाणे एक क्षणमात्रमां समग्र घातिकर्मनो नाश थवाथी तेमने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. देवोए करेलां सुवर्ण कमळ उपर बेसीने तेमणे देशना आपी. पेलो श्रावक विगेरे सर्व लोको ते जोइने आश्चर्य पाम्या.

आ मुनिए लीधेला सिंहकेसरीआ लाडुनी जेम लोभपिंड शुद्ध न होवाथी ग्रहण करवा योग्य नथी एम समजवुं, अने श्रावकनां युक्तिवाळां वचनथी ते मुनिए पोताना गुणनुं स्मरण कर्युं तेमज व्रतना रागी हता तेथी तेओ परमात्मपदने पाम्या एम जाणवुं.

सद्भावनानुं वर्णन करवाने असमर्थ छुं, तेम छतां पण आपे अहीं पधारी तेवा संसारमां खुंची गयेला मारा पर मोटी कृपा करी छे. हवे हुं आपने एक प्रश्न पूछुं छुं तेनो उत्तर आपवा कृपा करो के–हुं दररोज प्रातःकाळे बे त्रण तारा आकाशमां देखातां होय ते वखते नवकारसी विगेरे प्रत्याख्यान करुं छुं,आजे में पुरिमड्ढनुं पच्चखाण कर्युं छे तो तेनो काळ पूर्ण थयो छे के नहीं ?" ते सांभळीने मुनिए श्रुत ज्ञाननो उपयोग दइ आकाशमां तारामंडळ तरफ जोयुं, तो जाण्युं के हजु रात्रिना बे पहोर व्यतीत थया छे तेथी मध्य रात्रिनो समय छे, उत्तराध्ययनना छवीशमा अध्ययनमां कह्युं छे के–

पढमपोरिसि सज्झायं, बीयं झाणं च झायइ ।
तइयाए निद्दमोक्खं तु, चउत्थिए भूयोवि सज्झायं ॥ १ ॥

भावार्थ—"रात्रिनी प्रथम पोरसीए स्वाध्याय करवो, बीजीए ध्यान धरवुं, त्रीजीए निद्रानो त्याग करवो अर्थात् निद्रा लेवी अने चोथी पोरसीए पाछो स्वाध्याय करवो."

रात्रिना चार पहोर जाणवाना उपाय.

जं नेइ जया रत्तिं, नक्खत्तं तम्हिह चउब्भाए ।
संपत्ते विरमिज्जा, सज्झायओ पओस कालंमि ॥ २ ॥

भावार्थ—ज्यारे जे नक्षत्र रात्रिने समाप्त करे, एटले के जे नक्षत्र जे ठेकाणे अस्त थवाथी रात्रि पूरी थती होय ते नक्षत्र प्रदोषकाळे ज्यां देखायुं होय त्यांथी आकाशना चोथा भागे आवे. ते वखते (पहेलो पहोर पूरो थयो जाणी) सझायथी विराम पामवो. (ए प्रमाणे चारे पहोर माटे जाणी लेवुं)

आ प्रमाणे विचारतां ते साधुए पोताना मननुं भ्रमितपणुं पण जाण्युं अने मनमां विचारवा लाग्या के–" अहो ! में मूर्खे विरूप आचरण आचर्युं, लोभथी पराभव पामेला मारा जीवितने धिक्कार छे.." एम विचारी ते श्रावक प्रत्ये कह्युं के–"हे जैन तत्त्वज्ञ श्रावक ! तुं धन्य छे अने कृतपुण्य छे. तें मने सिंहकेसरीआ आपीने अने पुरिमड्ढ पच्चखाण संबंधी प्रश्न करीने संसारमां डूबतां बचाव्यो छे. तारी चोयणा साची छे. वळी मने मार्गभ्रष्टने मार्ग पर चढाववाथी तुं मारो धर्म गुरु छे. तारी चतुराई तथा धैर्य वाणीथी कही शकाय तेम नथी." इत्यादि पोतानी निंदा

१ आ नक्षत्र प्राये सूर्य नक्षत्रथी चौदसुं होयछे.

अने ते श्रावकनी श्लाघा करीने पछी रात्रि होवाथी चालवानो आचार नथी एम जाणी ते श्रावक पासे रहेवा माटे स्थान मागीने त्यां एकांते ध्यानमग्न रह्या.

प्रातःकाळे ते आहार परठववा माटे शुद्ध स्थंडिल भूमिए जइने विधि पूर्वक मोदकनुं चूर्ण करतां ढंढण मुनिना जेवी भावना भाववा लाग्या; अने शुक्ल ध्यान रूपी अग्निवडे कर्म रूपी इन्धनने बाळवा लाग्या. ए प्रमाणे एक क्षणमात्रमां समग्र घातिकर्मनो नाश थवाथी तेमने केवळज्ञान उत्पन्न थयुं. देवोए करेलां सुवर्ण कमळ उपर बेसीने तेमणे देशना आपी. पेलो श्रावक विगेरे सर्व लोको ते जोइने आश्चर्य पाम्या.

आ मुनिए लीधेला सिंहकेसरीआ लाडुनी जेम लोभपिंड शुद्ध न होवाथी ग्रहण करवा योग्य नथी एम समजवुं, अने श्रावकनां युक्तिवाळां वचनथी ते मुनिए पोताना गुणनुं स्मरण कर्युं तेमज व्रतना रागी हता तेथी तेओ परमात्मपदने पाम्या एम जाणवुं.

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य सप्तचत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४७ ॥

व्याख्यान २४८ मुं.

दशमा अद्धा पच्चखाणना दश भेद अने तेनुं फळ.

प्रत्याख्यानानि दिग्भेदे, कालिकानि प्रचक्ष्यते ।
प्रत्याख्यानं प्रतीत्यैकं, वर्धमानफलं भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" प्रत्याख्यानना मुख्य दश भेद छे. तेमां काळ प्रत्याख्यानना पण दश भेद छे ते कहे छे. ए दरेक प्रत्याख्यान अधिक अधिक फळदायी छे."

पूर्वाचार्योए अद्धा पच्चखाणना दश भेद प्रत्याख्यान भाष्यमां कहेला छे ते आ प्रमाणे—

नवकारसहिय पोरिसी, पुरिमड्ढेगासणेगठाणेय ।
आयंबिल अब्भत्तट्ठे, चरमे अभिग्गहे विगई ॥ १ ॥

भावार्थ—" नवकारसी, पोरसी, पुरिमड्ढ, एकासणुं, एकलठाणुं, आंबिल, उपवास, भवचरिम अथवा दिवसचरिम, अभिग्रह अने विगइ. ए दश प्रकारना प्रत्याख्यान छे.

तेमां पहेलुं नवकारशीनुं पच्चखाण छे. तेमां प्रत्याख्यानना भंगनो दोष टाळवा माटे अनाभोग[1] तथा सहसात्कार[2] रूप बे आगार (अन्नथ्थणाभोगेणं, सहसागारेणं) जाणवा. अहीं कोइ शंका करे के–" नवकारशीना पच्चखाणमां काळनुं मान कांइ जणाव्युं नथी, तेथी ते संकेत पच्चखाण होवुं जोइए एम जणाय छे. तेने अध्धा (काळ) पच्चखाण केम कह्युं ? " तेनो जवाब ए छे के–"**नवकारसहिय** " ए पदमां सहित ए विशेषण छे. माटे विशेष्य तरीके मुहूर्त लेवाथी कांइ दोष नथी.

प्रश्न—अहीं मुहूर्त्त शब्द विशेष्य तरीके लख्यो नथी, तो शी रीते ते लइ शकाय ? केमके आकाशनुं पुष्प असत्य छे, तेथी तेने खुशबोदार, सुंदर विगेरे विशेषणो डाह्या पुरुषो शी रीते आपे ?

उत्तर—नवकारशीने अध्धा पच्चखाणमां प्रथम कहेल छे तेथी तेमज त्यार पछी बीजुं पच्चखाण पोरशीनुं कहेल छे, माटे पोरशीनी पहेलांनो काळ मुहूर्तज बाकी रह्यो, तेथी मुहूर्त शब्द विशेष्य राखवामां अयोग्य नथी.

---

१ अजाणपणुं. २ अकस्मातपणुं.

प्रश्न—कदि एम होय तो पण एकज मुहूर्त केम कहो छो ? बे त्रण मुहूर्त केम लेता नथी ?

जवाब—नवकारशीना पच्चखाणना आगार मात्र बेज छे अने पोरशीना छ छे, तेथी नवकारशीनो काळ घणो थोडो होवो जोइए, माटे एकज मुहूर्तनो काळ गणवो ए योग्य छे. वळी आ पच्चखाण नवकार सहितनुं छे. तेथी एक मुहूर्तनो काळ पूर्ण थया पछी पण नवकार गण्या विना पच्चखाण पूर्ण थतुं नथी तेमज तेटलो काळ पूर्ण थया पहेलां नवकार मंत्र गणीने पण पच्चखाण पारे तो पच्चखाण अपूर्ण रहेछे तेथी तेनो भंग जाणवो.

प्रश्न—त्यारे पहेलुंज मुहूर्त नवकारशीना पच्चखाणमां लेवुं तेनुं शुं कारण बीजुं त्रीजुं शामाटे नहीं ?

जवाब—पोरसीना पच्चखाणमां जेम " सूरे उग्गए " नो पाठ छे तेम नवकारशीमां पण " सूरे उग्गए " नो पाठ छे तेथी ए पच्चखाण सूर्योदयथीज थाय छे.

वळी नवकारशी, पोरसी विगेरे काळ पच्चखाण जो सूर्योदय पहेलां लेवामां आवे तोज ते शुद्ध कहेवाय छे, अने बीजां पच्चखाण सूर्योदय पछी पण करवामां आवे छे. जो नवकारशीनुं पच्चखाण सूर्योदय थया पहेलां कर्युं होय तो ते पच्चखाण पूरुं थया पछी पण पोरसी विगेरे काळ पच्चखाण थइ शके छे; परंतु नवकारशीनुं पच्चखाण कर्युं न होय, अने पोरसी आदि पच्चखाण सूर्योदय थया पछी करे तो ते शुद्ध थतुं नथी एटले पोतपोतानी अवधि पहेलां कर्युं होय तो पण ते अशुद्ध कहेवाय छे, तेमज सूर्योदय पहेलां पोरसी विगेरे पच्चखाण कर्युं होय अने नवकारशीनुं पच्चखाण कर्युं न होय, तो ते पोरसी आदि पच्चखाण पुरुं थया पछी बीजुं काळ पच्चखाण थइ शके नहीं परंतु ते ते पच्चखाण पूरुं थया अगाउ करे तो ते शुद्ध कहेवाय छे. इत्यादि वृद्ध व्यवहार चालतो आवे छे.

आ नवकारशीनुं पच्चख्खाण रात्रिभोजनना प्रत्याख्यान रूप व्रतना निर्णय रूप होवाथी रात्रिए चोवीहार करनारानेज करवुं सूझेछे.

बीजुं पोरसीनुं पच्चख्खाण एक पहोर सुधीनुं छे. ते विषे श्रीउत्तराध्ययनमां कह्युं छे के–" पुरुषना शरीर जेवडी छाया थाय त्यारे पोरसी पूरी थाय. " आ पच्चखाणमां छ आगार कहेला छे. तेज प्रमाणे सार्ध पोरसी पच्चख्खाणमां पण जाणवुं. केमके तेनो तेमां समावेश थाय छे.

त्रीजुं पुरिमड्ढनुं पच्चख्खाण दिवसना प्रथम बे पहोर सुधीनुं छे. तेमां पोरसीना कहेला छ आगार उपरांत एक महत्तरागार वधतो छे. एटले तेना सात आगार छे.

नवकारशीनुं पच्चख्खाण सूर्योदय पहेलां धार्युं न होय, तो पण पुरिमड्ढनुं पच्चख्खाण लइ शकाय छे. अवड्ढ पच्चख्खाण पण पुरिमड्ढनीज जेम पाछला बे पहोरनुं जाणवुं.

चोथुं एकासणुं एटले एकवार अशन कहेतां भोजन करवुं ते अथवा एक आसनपर बेसीने भोजन करवुं ते. आ एकासणाना पच्चख्खाणमां आठ आगार कहेला छे.

पांचमुं एकलठाणुं एकासणानी जेमज जाणवुं. तेमां फेर एटलो छे के–शरीरनो संकोच अने विकास कर्या विना एकज स्थाने शरीरने राखवुं ते एकस्थान (एकलठाणुं) पच्चख्खाण कहेवाय छे. तेथी तेमां आउट्टणपसारेणं आगार विना सात आगार छे. तेमां भोजन वखते प्रथम जेवी रीते शरीरनां अंगोपांग राख्यां होय तेने तेज स्थितिए भोजन थइ रहे त्यां सुधी राखवां; मात्र एक हाथ तथा मुख अशक्यपरिहार होवाथी चलाववानो निषेध नथी.

अहीं कोइ शंका करे के–" एकासणा विगेरेना पच्चख्खाणमां काळनो नियम जणातो नथी, तो तेने काळ पच्चख्खाण केम कह्यां? " तेनो उत्तर ए छे के–"एकासणादिक पच्चख्खाणो पण प्राये पोरसी आदि काळ पच्चख्खाण सहितज करवामां आवे छे तेथी ते काळ पच्चख्खाण कहेवाय छे."

छठ्ठुं आयंबिल. तेमां आचाम्ल एटले अवंश्रावण तथा आम्ल एटले चोथो रस (खाटो) तेनाथी निवर्तवुं ते आचाम्ल (आंबिल) कहेवाय छे. तेना त्रण प्रकार छे; ते चोखा, अडद अने साथवो–तेना आहारथी थाय छे; अथवा अवश्रावणनी जेम अन्नादिक स्वाद रहित करवामां आवे ते आचाम्ल जाणवुं. ए पच्चखाणमां पण आठ आगार छे परंतु एकासणाथी जुदा छे.

सातमुं अभक्तार्थ एटले उपवासनुं पच्चख्खाण. तेमां पांच आगार छे. जेमां भोजन करवानुं प्रयोजन नथी ते अभक्तार्थ एटले उपवास कहेवाय छे. आगळनी रात्रे चोवीहारनुं पच्चखाण कर्युं होय अने बीजे दिवसे उपवास करे. तो तेने चोथ पच्चख्खाण अपाय अने आगळनी रात्रे पच्चख्खाण कर्या विना बीजे दिवसे उपवास करे तेने पच्चखाणमां मात्र "अभत्तठ्ठ" कहीनेज पच्चख्खाण अपाय; चोथ कहेवाय नहीं. वळी आगळना तथा पाछळना दिवसे एकासणुं करी वच्चे उपवास करे, तेने चोथभक्त कहेवाय एवो वृद्ध संप्रदाय छे.

---

१ अवड्ढ पच्चख्खाण सूर्योदयथी त्रण पहोरनुं कहेवाय छे, आमां पूर्वार्द्ध (पुरिमड्ढ) नी जेम अवड्ढ (अपरार्द्ध) पण पाछला बे पहोरनुं कहे छे. तत्त्व बहुश्रुत जाणे.

२ ओसामण तरीके लोकोमां कहेवाय छे.

आठमुं चरिम एटले दिवसना पाछला भागे तथा आयुष्यना पाछला भागे जे पच्चख्खाण लेवामां आवे ते "दिवस चरिम" अथवा "भवचरिम" कहेवाय छे. तेमां चार आगार छे. साधुने जीवन पर्यंत हमेशां रात्रे त्रिविध त्रिविध भांगाए करीने चोवीहार पच्चख्खाण थाय छे; अने श्रावकोने शक्तिप्रमाणे चोवीहार, तेविहार विगेरे पच्चख्खाण थइ शके छे.

नवमुं अभिग्रह पच्चख्खाण छे. तेमां पण चार आगार कहेला छें. अंगुठी, मुठी, ग्रंथि (गांठ) विगेरे सहित करवामां आवतां सर्व अभिग्रह आ पच्चख्खाणमां आवी जाय छे. प्रमाद टाळवाने इच्छनारा मनुष्यने पच्चख्खाण विना एक क्षण पण रहेवुं योग्य नथी. माटे नवकारशी विगेरे काळ प्रत्याख्यान पूरुं थाय, त्यारे ग्रंथि अथवा मुष्टि सहित पच्चख्खाण धारवुं. वारंवार औषधादिक खानारा बाळक तथा रोगी विगेरेने पण आ पच्चख्खाण सुसाध्य छे अने अप्रमादनुं कारण छे. आ पच्चख्खाण करवाथी मोटां फळनी प्राप्ति थाय छे. मात्र एकजवार ग्रंथि सहित प्रत्याख्यान करनार मांस मद्यमां आसक्त एवो कुविंद वणकर कपर्दि नामनो यक्ष थयो हतो; तेनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

क्षितिपुर नगरमां मद्यमांस खानारो **कुविंद** नामे एक वणकर रहेतो हतो. तेने एक दिवस अनायासे **वज्रस्वामी** सूरिनो मेळाप थइ गयो. ते वखते गुरुए दश प्रकारना प्रत्याख्याननुं व्याख्यान आप्युं. तेमां गंठशीना पच्चख्खाणने प्रसंगे गुरुए कह्युं के—

जे निच्चमप्पमत्ता, गंठिं बंधंति गंठिसहियस्स ।
सग्गपवग्ग सुखं, तेहिं निबद्धं स गंठिंमि ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे अप्रमादी मनुष्यो हमेशां गंठशीना पच्चख्खाण सहित गांठ बांधे छे तेमणे ते ग्रंथिमां स्वर्ग तथा मोक्षनुं सुख बांधी लीधुं छे एम समजवुं."

भणिऊण नमुक्कारं, निच्चं विस्सरणवज्जियं धन्ना ।
पारंति गंठिसहियं, गंठिसह कम्मगंठि वी ॥ २ ॥

भावार्थ—"जे धन्य पुरुषो हंमेशां स्मरण पूर्वक नमस्कार भणीने गंठशी पच्चख्खाण पारे छे (गांठ छोडे छे) तेणे ते गांठ छोडवानी साथे कर्म रूपी ग्रंथी पण छोडी नाखी छे एम समजवुं."

---

१ वींटी विगेरे.

"रात्रे चार प्रकारना आहारनो त्याग करे, दिवसे एक स्थाने बेसीने तांबूल विगेरे वापरी मुख शुद्ध करे तथा गंठशी प्रत्याख्यान करे, तेवा पुरुषने हमेशां एकवार जमतो होय तो दरेक मासे ओगणत्रीश निर्जळ उपवासनुं अने बे टंक जमतो होय तो अठ्ठावीश निर्जल उपवासनुं फळ मळे. एवुं वृद्ध वाक्य छे. कारण के--भोजन, पाणी, तांबूल विगेरे वापरतां आखा दिवसमां आशरे बे घडी जाय, एटले महिनामां साठ घडी जतां एक दिवस खावा पीवानो गणायो. तेथी बाकीना ओगणत्रीश अने बेसणुं करनारने चार घडी जाय तो बे दिवस बाद करतां अठ्ठावीश दिवस उपवासवाळा थाय." इत्यादि उपदेश सांभळवाथी ते वणकर प्रतिबोध पाम्यो अने गंठशी पच्चख्खाण धारवानो नियम कर्यो. अनुक्रमे ते मरण पामीने कपर्दि नामे यक्ष थयो.

एकदा वज्रस्वामी चतुर्विध संघ सहित सिद्धगिरिनी यात्रा माटे चाल्या. मार्गमां शत्रुंजय गिरि उपर रहेनारा कोइ मिथ्यात्वी देवताए उपसर्ग कर्यो. तेमां सकल संघने दिङ्मूढ करी दीधुं अने महा विकट अने लांबो पर्वत विकुर्वीने जवानो मार्ग सर्वत्र रुंधी दीधो. ते वखते सूरिए शासनदेवतानुं स्मरण कर्युं. अहीं कपर्दि यक्ष तरतज उत्पन्न थयेल होवाथी तेणे विचार्युं के– "में पूर्वे भवमां शुं शुं पुण्य कर्युं छे के जेथी मने आवुं देवतानुं सुख प्राप्त थयुं ?" एम विचारी तेणे अवधिज्ञाननो उपयोग दीधो तो तत्काल गुरुए आपेला प्रत्याख्याननुं फळ प्रगटपणे देखवामां आव्युं. पछी ते गुरुने वांदवा माटे पूर्व भवनुं रूप धारण करीने तेमनी पासे आव्यो. गुरुने नमीने ते बोल्यो के–" हे पूज्य स्वामी ! आप मने ओळखो छो ?" त्यारे सूरिए दश पूर्वना ज्ञानी होवाथी उपयोग दीधो अने तेना पूर्व भवनुं वृत्तांत जाणीने कही बताव्युं. ते सांभळी कपर्दि बोल्यो के–" हे महाराज ! मने कांइक काम सेवा बतावो" सूरिए कह्युं के–"कोइ दुष्टे आ संघने उपद्रव कर्यो छे, माटे तुं तेनुं निवारण कर." ते सांभळीने तरतज कपर्दि यक्षे ते मिथ्यात्वी देवने जीतीने सिद्धगिरि उपरथी नीचे पाडी दीधो. ते दूर नासी जइने कोइक ठेकाणे गुप्त रीते रह्यो. पछी उपसर्ग रहित थयेला संघ सहित सूरि मोटा ओछव पूर्वक सिद्धाचळजी आव्या, अने त्यां कपर्दि यक्षने शत्रुंजय पर्वतना अधिष्ठायक तरीके स्थाप्यो. तेथीज पूर्व आचार्योए युगादीशनी स्तुति करतां तेनुं स्मरण कर्युं छे के–

यः पूर्वं तंतुवायः सुकृतकृतलवैर्दूरितैः पूरितोऽपि,
प्रत्याख्यानप्रभावादमरमृगदृशामातिथेयं प्रपेदे ।

सेवाहेवाकिशाली प्रथमजिनपदांभोजयोस्तीर्थरक्षा-
दक्षः श्रीयक्षराजः स भवतु भविनां विघ्नमर्दी कपर्दिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे यक्षराज पूर्वे भवमां तंतुवाय (वणकर) हतो ते वखते पापथी पूरित हतो. तो पण पुण्यना लेशवडे प्रत्याख्यानना प्रभावथी देवांगनाओनो अतिथि थयो; तथा जे आदीश्वरना चरणकमळनी निरंतर सेवा करवाथी शोभी रह्यो छे ते तीर्थ रक्षणमां चतुर एवो कपर्दि यक्ष भव्य प्राणीओना विघ्ननो नाश करनार थाओ. "

आ प्रमाणे ग्रंथिसहित अभिग्रह पच्चख्खाणनुं फळ छे.

दशमुं निविप्रत्याख्यान छे तेमां सर्व विगयनो त्याग करवो. ते पच्चख्खाणमां आठ अथवा नव आगार छे तेमां जे पिंड रूप (कठण वस्तु) माखण गोळ विगेरे उखेडी शकाय छे ते सहितनुं अर्थात् पिंड तथा द्रव रूप बन्ने विगयनुं पच्चख्खाण करे तेने उख्खित विवेगेणं नामना आगार सहित नव आगार समजवा; अने जे द्रव रूप एटले उखेडी न शकाय एवा एकला द्रव विगयनुं पच्चख्खाण करे तेने ते आगार विना बाकीना आठ आगार जाणवा. आ विषय उपर घणो विस्तार छे. ते प्रवचन सारोद्धारनी वृत्तिथी जाणी लेवो.

विगय वापरवानुं फळ पच्चखाण भाष्यमां कह्युं छे ते आ प्रमाणे—

विगइं विगइंभीओ, विगइगयं जो अ भुंजए साहू ।
विगइ विगईसहावा, विगई विगइं बला नेइ ॥ १ ॥

भावार्थ—"विगति जे नरकादिक गति–तेथी भय पामेलो एवो साधु पण जो विगय (दूध विगेरे) तथा विगयगत एटले निवियाता–तेनुं भोजन करे छे तो ते विगय विकृतिना स्वभाववाळी छे अर्थात् विकार करनारी छे तेथी ते बळात्कारे तेना खानारने विगति के० कुगतिमां लइ जाय छे. "

माटे कारण विना विगयनुं भोजन करवुं नहीं. आ प्रमाणे काळ प्रत्याख्यानना दश प्रकार कह्या. तेनुं फळ मात्र अर्धी गाथावडे कह्युं छे. तेनो भावार्थ एवो छे के–नरकना जीव अकाम निर्जराए करीने सो वर्षे जेटलां कर्म खपावे तेटलां कर्म मात्र नवकारशीना पच्चख्खाणथी श्रद्धाळु जीव खपावे छे. तेवीज रीते पोरसीना पच्चख्खाण

[1] दुध, दहीं, घी, तेल, गोळ ने पकवान्न ते विगय कहीए. ते दरेक विगयना पांच पांच निवीयाता छे, जेम दुध विगयना खीर; दुधपाक विगेरे छे तेम.

"रात्रे चार प्रकारना आहारनो त्याग करे, दिवसे एक स्थाने बेसीने तांबूल विगेरे वापरी मुख शुद्ध करे तथा गंठशी प्रत्याख्यान करे, तेवा पुरुषने हमेशां एकवार जमतो होय तो दरेक मासे ओगणत्रीश निर्जळ उपवासनुं अने बे टंक जमतो होय तो अठ्ठावीश निर्जल उपवासनुं फळ मळे. एवुं वृद्ध वाक्य छे. कारण के–भोजन, पाणी, तांबूल विगेरे वापरतां आखा दिवसमां आशरे बे घडी जाय, एटले महिनामां साठ घडी जतां एक दिवस खावा पीवानो गणायो. तेथी बाकीना ओगणत्रीश अने बेसणुं करनारने चार घडी जाय तो बे दिवस बाद करतां अठ्ठावीश दिवस उपवासवाळा थाय." इत्यादि उपदेश सांभळवाथी ते वणकर प्रतिबोध पाम्यो अने गंठशी पच्चख्खाण धारवानो नियम कर्यो. अनुक्रमे ते मरण पामीने कपर्दि नामे यक्ष थयो.

एकदा वज्रस्वामी चतुर्विध संघ सहित सिद्धगिरिनी यात्रा माटे चाल्या. मार्गमां शत्रुंजय गिरि उपर रहेनारा कोइ मिथ्यात्वी देवताए उपसर्ग कर्यो. तेमां सकल संघने दिङ्मूढ करी दीधुं अने महा विकट अने लांबो पर्वत विकुर्वीने जवानो मार्ग सर्वत्र रुंधी दीधो. ते वखते सूरिए शासनदेवतानुं स्मरण कर्युं. अहीं कपर्दि यक्ष तरतज उत्पन्न थयेल होवाथी तेणे विचार्युं के– "में पूर्व भवमां शुं शुं पुण्य कर्युं छे के जेथी मने आवुं देवतानुं सुख प्राप्त थयुं ?" एम विचारी तेणे अवधिज्ञाननो उपयोग दीधो तो तत्काल गुरुए आपेला प्रत्याख्याननुं फळ प्रगटपणे देखवामां आव्युं. पछी ते गुरुने वांदवा माटे पूर्व भवनुं रूप धारण करीने तेमनी पासे आव्यो. गुरुने नमीने ते बोल्यो के–" हे पूज्य स्वामी ! आप मने ओळखो छो ?" त्यारे सूरिए दश पूर्वना ज्ञानी होवाथी उपयोग दीधो अने तेना पूर्व भवनुं वृत्तांत जाणीने कही बताव्युं. ते सांभळी कपर्दि बोल्यो के–" हे महाराज ! मने कांइक काम सेवा बतावो" सूरिए कह्युं के–"कोइ दुष्टे आ संघने उपद्रव कर्यो छे, माटे तुं तेनुं निवारण कर." ते सांभळीने तरतज कपर्दि यक्षे ते मिथ्यात्वी देवने जीतीने सिद्धगिरि उपरथी नीचे पाडी दीधो. ते दूर नासी जइने कोइक ठेकाणे गुप्त रीते रह्यो. पछी उपसर्ग रहित थयेला संघ सहित सूरि मोटा ओछव पूर्वक सिद्धाचळजी आव्या, अने त्यां कपर्दि यक्षने शत्रुंजय पर्वतना अधिष्ठायक तरीके स्थाप्यो. तेथीज पूर्व आचार्योए युगादीशनी स्तुति करतां तेनुं स्मरण कर्युं छे के–

यः पूर्वं तंतुवायः सुकृतकृतलवैर्दूरितैः पूरितोऽपि,
प्रत्याख्यानप्रभावादमरमृगदृशामातिथेयं प्रपेदे ।

सेवाहेवाकिशाली प्रथमजिनपदांभोजयोस्तीर्थरक्षा-
दक्षः श्रीयक्षराजः स भवतु भविनां विघ्नमर्दी कपर्दिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे यक्षराज पूर्व भवमां तंतुवाय (वणकर) हतो ते वखते पापथी पूरित हतो. तो पण पुण्यना लेशवडे प्रत्याख्यानना प्रभावथी देवांगनाओनो अतिथि थयो; तथा जे आदीश्वरना चरणकमळनी निरंतर सेवा करवाथी शोभी रह्यो छे ते तीर्थ रक्षणमां चतुर एवो कपर्दि यक्ष भव्य प्राणीओना विघ्ननो नाश करनार थाओ. "

आ प्रमाणे ग्रंथिसहित अभिग्रह पच्चख्खाणनुं फळ छे.

दशमुं निविप्रत्याख्यान छे तेमां सर्व विगयनो त्याग करवो. ते पच्चख्खाणमां आठ अथवा नव आगार छे तेमां जे पिंड रूप (कठण वस्तु) माखण गोळ विगेरे उखेडी शकाय छे ते सहितनुं अर्थात् पिंड तथा द्रव रूप बन्ने विगयनुं पच्चख्खाण करे तेने उख्खित विवेगेणं नामना आगार सहित नव आगार समजवा; अने जे द्रव रूप एटले उखेडी न शकाय एवा एकला द्रव विगयनुं पच्चख्खाण करे तेने ते आगार विना बाकीना आठ आगार जाणवा. आ विषय उपर घणो विस्तार छे. ते प्रवचन सारोद्धारनी वृत्तिथी जाणी लेवो.

विगय[1] वापरवानुं फळ पच्चखाण भाष्यमां कह्युं छे ते आ प्रमाणे—

विगइं विगइंभीओ, विगइगयं जो अ भुंजए साहू ।
विगइ विगईसहावा, विगई विगइं बला नेइ ॥ १ ॥

भावार्थ—"विगति जे नरकादिक गति–तेथी भय पामेलो एवो साधु पण जो विगय (दूध विगेरे) तथा विगयगत एटले निवियाता–तेनुं भोजन करे छे तो ते विगय विकृतिना स्वभाववाळी छे अर्थात् विकार करनारी छे तेथी ते बळात्कारे तेना खानारने विगति के० कुगतिमां लइ जाय छे. "

माटे कारण विना विगयनुं भोजन करवुं नहीं. आ प्रमाणे काळ प्रत्याख्यानना दश प्रकार कह्या. तेनुं फळ मात्र अर्धी गाथावडे कह्युं छे. तेनो भावार्थ एवो छे के–नरकना जीव अकाम निर्जराए करीने सो वर्ष जेटलां कर्म खपावे तेटलां कर्म मात्र नवकारशीना पच्चख्खाणथी श्रद्धाळु जीव खपावे छे. तेवीज रीते पोरसीना पच्चख्खाण

---

[1] दुध, दहीं, घी, तेल, गोळ ने पकवान्न ते विगय कहीए. ते दरेक विगयना पांच पांच निवीयाता छे, जेम दुध विगयना खीर, दुधपाक विगेरे छे तेम.

वडे हजार वर्षनां पापकर्म खपावे छे. साढ पोरसीना पच्चख्खाणथी दश हजार वर्षनां अशुभ कर्म खपावे छे, सर्वत्र नारकी जीवनां कर्मनुं अनुसंधान जाणवुं. वळी नरकमां रहेलो जीव क्षुधा, तृषा तथा बीजी क्षेत्रादिक वेदना लाख वर्ष सुधी अनुभवीने अकाम निर्जरावडे पूर्वभवमां उपार्जन करेलां जेटलां निकाचित कर्मना बंधने छेदी नाखे छे तेटला वर्षनुं अशुभ कर्म मात्र एक पुरिमड्ढ पच्चखाणथी नाश पामे छे. ए प्रमाणे उत्तरोत्तर वधतां पच्चखाणथी दश दश गणुं कर्म खपे छे; एटले एकासणाथी दश लाख वर्षनुं कर्म, निविथी करोड वर्षनुं कर्म, एकलठाणाथी दश करोड वर्षनुं कर्म, आंबिलथी सो करोड वर्षनुं कर्म, उपवासथी दश हजार करोड वर्षनुं कर्म, बे उपवासथी लाख करोड वर्षनुं कर्म अने अठ्ठमथी (त्रण उपवासथी) दश लाख करोड वर्षनुं अशुभ कर्म क्षय पामे छे. इत्यादि प्रत्याख्याननुं फळ जाणीने योग्य जीवोने बळात्कारे पण पच्चखाण कराववुं उचित छे. ते उपर दृष्टांत कहे छे–

पाटलीपुर नगरमां **शकडाल** मंत्रीनो पुत्र **श्रीयक** नामे नंद राजानो मंत्री हतो. तेणे चिरकाळ सुधी राज्यनुं प्रधानपणुं करीने पछी दीक्षा लीधी हती. ते बहु क्षुधावाळो हतो, तेथी एकासणा जेवुं तप पण करी शकतो नहोतो, पण क्रियामां तत्पर रहेतो. एकदा पर्यूषण पर्वमां तेनी बहेन **यक्षा** नामनी आर्याए श्रीयक मुनिने कह्युं के– " हे बंधु! तमे पच्चखाणनुं फळ जाणो छो; वळी हालमां तो चारित्र ग्रहण कर्युं छे, तेथी आवा पर्यूषण पर्वमां तो विशेषे करीने तपस्या करवी जोइए. " इत्यादि पोतानी बहेन यक्षा आर्यानां वचनथी श्रीयक मुनि लज्जित थया. तेथी तेमणे पोरसीनुं पच्चखाण लीधुं. ते पच्चखाण पूरुं थवा आव्युं, एटले फरीथी यक्षा आर्याए कह्युं के– " तमे पुरिमड्ढनुं पच्चखाण करो. आ पर्व घणुं दुर्लभ छे, अने एटलो काळ तो चैत्य परिपाटी करतां सुखे चाल्यो जशे. " एवुं सांभळीने मुनिए तेम कर्युं. ते पच्चखाण पूरुं थयुं एटले फरीथी आर्याए कह्युं के– " हवे अवड्ढना काळ सुधी रहो. " तेथी तेणे ते पण अंगीकार कर्युं. ते काळ पण पूर्ण थतां फरीथी आर्याए कह्युं के– " हे बंधु ! हवे तो रात्रिनो समय नजीक आव्यो छे, अने रात्रि तो सुइ जवाथी सुखे जती रहेशे, माटे उपवासनुं पच्चखाण करो. " बहेनना आग्रहथी मुनिए तेम कर्युं. अर्ध रात्रि थतां क्षुधानी पीडा वधी पडवाथी देवगुरुनुं स्मरण करता सता मरण पामीने देवलोके गया. ते वात जाणीने यक्षा साध्वीए पोताने ऋषिहत्या लागी एवी शंकाथी चतुर्विध आहारनो त्याग कर्यो. ते वखते चतुर्विध

---

१ हजार करोड वर्ष माटे कर्युं पच्चखाण ते रही गयेल छे. कदि तिविहार उपवासनुं तेटलुं फल होय ने चौविहार उपवासनुं दश हजार करोड वर्षनुं होय तो होय.

संघे एकत्र थइने साध्वीने कह्युं के-"तमे शुद्ध भावथी उपवास कराव्यो हतो, तेथी तेनुं तमने कांइ पण प्रायश्चित्त नथी." साध्वीए श्रीसंघने कह्युं के-" जो साक्षात् जिनेश्वर मने कहे तो मारा मननी शंका दूर थाय, ते सिवाय मारुं मन शांत थशे नहीं." ते सांभळीने सर्व संघे कायोत्सर्ग कर्यो. एटले शासनदेवी आवीने बोली के-" जे काम होय ते कहो, हुं शुं काम करुं ?" संघे कह्युं के "आ साध्वीने सीमंधर स्वामी पासे लइ जाओ." देवीए कह्युं के-"तमे सर्व संघ मारी निर्विघ्न गति थवा माटे कायोत्सर्गमांज रहो." संघे फरीने कायोत्सर्ग अंगीकार कर्यो. एटले देवी ते साध्वीने जिनेश्वर पासे महाविदेह क्षेत्रमां लइ गइ. साध्वीए प्रभुने नमीने पोतानो वृत्तांत कह्यो. त्यारे प्रभुए कह्युं के-"हे साध्वी! तुं निर्दोष छे." ते साध्वीने जोइने त्यांना लोको अति आश्चर्य पाम्या. पछी जिनेश्वरे तेने कृपाथी बे चूलिका आपी. साध्वीनो संदेह नष्ट थयो, एटले शासनदेवी तेने पाछी पोताने स्थाने लावी. संघे कायोत्सर्ग पार्यो. पछी यक्षा आर्याए श्रीसंघने कह्युं के-" श्री सीमंधर स्वामीए मारा मुखथी संघने माटे पदो तथा चार अध्ययन मोकल्यां छे, ते विषे परिशिष्ट पर्वमां कह्युं छे के-

> भावना च विमुक्तिश्च, रतिकल्पमथापरम् ।
> तथा विविक्तचर्या च, तानि चैतानि नामतः ॥ १ ॥

भावार्थ--" भावना, विमुक्ति, रतिकल्प अने एकांत चर्या ए चार अध्ययनोनां नाम छे.

> अप्येकया वाचनया, मया तानि धृतानि च ।
> उद्गितानि च संघाय, तत्तथाख्यानपूर्वकम् ॥ २ ॥

भावार्थ--" में एकज वाचनाए करीने ते धारण करेलां छे, अने ते जेवां ग्रहण कर्यां हतां तेवांज में श्रीसंघनी पासे कही संभळाव्यां छे.

> आचारांगस्य चूले द्वे, आद्यमध्ययनद्वयम् ।
> दशवैकालिकस्यान्य-दथ संघे नियोजितम् ॥ ३ ॥

भावार्थ--" पूर्वोक्त चार अध्ययनमांना पहेला बे अध्ययन श्रीआचारांग सूत्रनी चूलिका रुपे अने बाकीना बे दशवैकालिक सूत्रनी चूळिकारुपे श्रीसंघे जोडी दीधां."

त्यार पछी हंमेशां यक्षा आर्या श्रीस्थूलभद्र विगेरे मुनिओनी पासे श्री सीमंधर स्वामीए कहेला सीयक मुनिना पच्चखाणना फळनुं वर्णन करती हती.

" श्रीयक मुनिए यक्षा आर्यानी प्रेरणाथी एक उपवास मात्र करवाथी शुभ गति प्राप्त करी. सीमंधर स्वामीए पण ते बन्नेनी प्रशंसा करी, माटे सौए तप करवुं, तथा बीजाने करावबुं."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य षट्चत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४८ ॥

व्याख्यान २४९ मुं.

दश प्रकारनां प्रत्याख्यान विषे.

प्रत्याख्यानं द्विधा प्रोक्तं, मूलोत्तरगुणात्मकम् ।
द्वितीयं दशधा ज्ञेयमनागतादिभेदकम् ॥ १ ॥

भावार्थ--" मूळ गुण तथा उत्तर गुण रूप बे प्रकारनां प्रत्याख्यान शास्त्रमां कहेलां छे, तेमां उत्तर गुण प्रत्याख्यानना अनागत विगेरे दश भेद कहेला छे."

प्रति एटले अविरति रूप प्रवृत्तिनुं प्रतिकूळपणे आख्यान कहेतां कहेवुं एटले विरति करवी. तेनुं नाम **प्रत्याख्यान** कहेवाय छे. तेना बे भेद छे. पहेलुं मूलगुण प्रत्याख्यान ते साधुने पंच महाव्रत रूप अने श्रावकोने पांच अणुव्रत रूप छे. बीजुं उत्तरगुण प्रत्याख्यान ते साधुने पिंडविशुद्धि विगेरे अने श्रावकोने गुणव्रत आदि छे. प्रत्याख्यान समये शिष्ये विनय पूर्वक सारी रीते उपयोग राखीने गुरुना वचनानुसार प्रत्याख्यान ग्रहण करवुं. ते प्रमाणे प्रत्याख्यान लेवाना चार भांगा छे. शिष्य पोते प्रत्याख्याननुं स्वरूप जाणतो होय अने तेवाज ज्ञानवाळा गुरुपासे पच्चखाण ले १, गुरु ज्ञानवान् होय अने शिष्य अजाण होय २, शिष्य जाणतो होय अने गुरु अजाण होय ३, अने शिष्य तथा गुरु बन्ने अजाण होय ४; आ चार भांगामां पहेलो भंग शुद्ध छे. बीजो पण शुद्ध छे, कारण के गुरु

ज्ञाता होय तो अजाण एवा शिष्यने संक्षेपमां समजावीने प्रत्याख्यान करावे अन्यथा तो ते भांगो अशुद्ध छे. त्रीजो भांगो पण अशुद्ध छे. परंतु तेवा ज्ञाता गुरु मळे नहीं तो गुरुना बहुमानथी गुरु, संबंधी, पिता, काका, मामा, भाइ के शिष्य विगेरे अजाणने पण साक्षी रूप करीने प्रत्याख्यान ले, तो ते पोते ज्ञाता होवाथी शुद्ध जाणवो अने चोथो भांगो तो सर्वथा अशुद्धज छे.

उत्तरगुण प्रत्याख्यानना दश प्रकार छे. ते हंमेशां उपयोगी होवाथी प्रथम तेनुं स्वरूप कहे छे.

अणागयमइक्कंतं, कोडीसहियं नियंटि अणागारं ।
सागार निरवसेसं, परिमाणकडं संकेय अध्धा ॥ १ ॥

शब्दार्थ—अनागत, अतिक्रांत, कोटी सहित, नियंत्रित, अनागार, सागार, निरवशेष, परिणामकृत, संकेत अने अध्धा ए दश प्रकार छे.

१ पर्यूषण विगेरे पर्व आगळ आववानां होय, तेमां अठ्ठम आदि तप करवुं होय परंतु पर्यूषणमां तप करवाथी गुरु, ग्लान विगेरेनी वैयावच्च करवामां अंतराय आवशे, एम लागतुं होय तो ते पर्व आव्या पहेलांज ते तप करी लेवुं ते अनागत तप कहेवाय छे. २ पर्यूषणादि पर्वमां गुरु विगेरेनी वैयावच्चमां व्याकुल रहेवाथी तप थइ शक्युं नहीं तेथी ते तप पर्व गया पछी करवुं ते अतिक्रांत तप कहेवाय छे. ३ प्रथम दिवसे प्रातःकाळे अभक्तनुं प्रत्याख्यान करीने ते दिवसे उपवास करे, अने बीजे दिवसे प्रातःकाळमां पण पहेले दिवसे जे वखते उपवासनुं पच्चखाण कर्युं होय तेज वखते बीजा उपवासनुं पच्चखाण ले, एटले बे उपवासनी कोटी मळवाथी ते कोटी सहित पच्चखाण कहेवाय छे. एवीज रीते पारणुं कर्या पहेलां आंबिल विगेरे तपनां पच्चखाण करवां ते पण कोटि सहित कहेवाय छे. ४ उपवासादिक करवानो जे दिवसने माटे निश्चय कर्यो होय ते दिवसे ग्लानत्वादिक अंतराय प्राप्त थया छतां पण नियम पूर्वक उपवासादिक करे ते नियंत्रित पच्चखाण कहेवाय छे. आवुं तप पूर्वे चौद पूर्वधर विगेरे तथा प्रथम संघयणवाळा, अने ते वखतना स्थविर कल्पीओ पण करता हता, परंतु सांप्रत समयमां ते तपनो विच्छेद थयो छे. ५ अनागार "एटले महत्तरागारेणं" विगेरे आगार रहित जे पच्चखाण करवुं ते **अनागार** कहेवाय छे. आ पच्चखाणमां पण " अन्नथ्थणाभोगेणं तथा सहसागारेणं " ए बे आगार तो आवेज छे; केमके कोइ वखत अजाणतां अथवा रभसताथी मुखमां आंगळी,

त्यार पछी हंमेशां यक्षा आर्या श्रीस्थूलभद्र विगेरे मुनिओनी पासे श्री सीमंधर स्वामीए कहेला सीयक मुनिना पच्चखाणना फळनुं वर्णन करती हती.

" श्रीयक मुनिए यक्षा आर्यानी प्रेरणाथी एक उपवास मात्र करवाथी शुभ गति प्राप्त करी. सीमंधर स्वामीए पण ते बन्नेनी प्रशंसा करी, माटे सौए तप करवुं, तथा बीजाने कराववुं."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य षट्चत्वारिंशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २४८ ॥

व्याख्यान २४९ मुं.

दश प्रकारनां प्रत्याख्यान विषे.

प्रत्याख्यानं द्विधा प्रोक्तं, मूलोत्तरगुणात्मकम् ।
द्वितीयं दशधा ज्ञेयमनागतादिभेदकम् ॥ १ ॥

भावार्थ––" मूल गुण तथा उत्तर गुण रूप बे प्रकारनां प्रत्याख्यान शास्त्रमां कहेलां छे, तेमां उत्तर गुण प्रत्याख्यानना अनागत विगेरे दश भेद कहेला छे."

प्रति एटले अविरति रूप प्रवृत्तिनुं प्रतिकूळपणे आख्यान कहेतां कहेवुं एटले विरति करवी. तेनुं नाम **प्रत्याख्यान** कहेवाय छे. तेना बे भेद छे. पहेलुं मूलगुण प्रत्याख्यान ते साधुने पंच महाव्रत रूप अने श्रावकोने पांच अणुव्रत रूप छे. बीजुं उत्तरगुण प्रत्याख्यान ते साधुने पिंडविशुद्धि विगेरे अने श्रावकोने गुणव्रत आदि छे. प्रत्याख्यान समये शिष्ये विनय पूर्वक सारी रीते उपयोग राखीने गुरुना वचनानुसार प्रत्याख्यान ग्रहण करवुं. ते प्रमाणे प्रत्याख्यान लेवाना चार भांगा छे. शिष्य पोते प्रत्याख्याननुं स्वरूप जाणतो होय अने तेवाज ज्ञानवाळा गुरुपासे पच्चखाण ले १, गुरु ज्ञानवान् होय अने शिष्य अजाण होय २, शिष्य जाणतो होय अने गुरु अजाण होय ३, अने शिष्य तथा गुरु बन्ने अजाण होय ४; आ चार भांगामां पहेलो भंग शुद्ध छे. बीजो पण शुद्ध छे, कारण के गुरु

ज्ञाता होय तो अजाण एवा शिष्यने संक्षेपमां समजावीने प्रत्याख्यान करावे अन्यथा तो ते भांगो अशुद्ध छे. त्रीजो भांगो पण अशुद्ध छे. परंतु तेवा ज्ञाता गुरु मळे नहीं तो गुरुना बहुमानथी गुरु, संबंधी, पिता, काका, मामा, भाइ के शिष्य विगेरे अजाणने पण साक्षी रूप करीने प्रत्याख्यान ले, तो ते पोते ज्ञाता होवाथी शुद्ध जाणवो अने चोथो भांगो तो सर्वथा अशुद्धज छे.

उत्तरगुण प्रत्याख्यानना दश प्रकार छे. ते हंमेशां उपयोगी होवाथी प्रथम तेनुं स्वरूप कहे छे.

अणागयमइक्कंतं, कोडीसहियं नियंटि अणागारं ।
सागार निरवसेसं, परिमाणकडं संकेय अध्धा ॥ १ ॥

शब्दार्थ—अनागत, अतिक्रांत, कोटी सहित, नियंत्रित, अनागार, सागार, निरवशेष, परिणामकृत, संकेत अने अध्धा ए दश प्रकार छे.

१ पर्यूषण विगेरे पर्व आगळ आववानां होय, तेमां अठ्ठम आदि तप करवुं होय परंतु पर्यूषणमां तप करवाथी गुरु, ग्लान विगेरेनी वैयावच्च करवामां अंतराय आवशे, एम लागतुं होय तो ते पर्व आव्या पहेलांज ते तप करी लेवुं ते अनागत तप कहेवाय छे. २ पर्यूषणादि पर्वमां गुरु विगेरेनी वैयावच्चमां व्याकुल रहेवाथी तप थइ शक्युं नहीं तेथी ते तप पर्व गया पछी करवुं ते अतिक्रांत तप कहेवाय छे. ३ प्रथम दिवसे प्रातःकाळे अभक्तनुं प्रत्याख्यान करीने ते दिवसे उपवास करे, अने बीजे दिवसे प्रातःकाळमां पण पहेले दिवसे जे वखते उपवासनुं पच्चखाण कर्युं होय तेज वखते बीजा उपवासनुं पच्चखाण ले, एटले बे उपवासनी कोटी मळवाथी ते कोटी सहित पच्चखाण कहेवाय छे. एवीज रीते पारणुं कर्या पहेलां आंबिल विगेरे तपनां पच्चखाण करवां ते पण कोटि सहित कहेवाय छे. ४ उपवासादिक करवानो जे दिवसने माटे निश्चय कर्यो होय ते दिवसे ग्लानत्वादिक अंतराय प्राप्त थया छतां पण नियम पूर्वक उपवासादिक करे ते **नियंत्रित** पच्चखाण कहेवाय छे. आवुं तप पूर्वे चौद पूर्वधर विगेरे तथा प्रथम संघयणवाळा, अने ते वखतना स्थविर कल्पीओ पण करता हता, परंतु सांप्रत समयमां ते तपनो विच्छेद थयो छे. ५ अनागार "एटले महत्तरागारेणं" विगेरे आगार रहित जे पच्चखाण करवुं ते **अनागार** कहेवाय छे. आ पच्चखाणमां पण " अन्नथ्थणाभोगेणं तथा सहसागारेणं " ए बे आगार तो आवेज छे; केमके कोइ वखत अजाणतां अथवा रभसताथी मुखमां आंगळी,

तृण विगेरे नाखी देवाय अथवा अचिंत्या मुखमां आवी पडे. माटे उपरना बे आगार सिवाय बीजा " महत्तरागारेणं " विगेरे आगार रहित पच्चखाण करे ते अनागार पच्चख्खाण कहेवाय छे. ६ महत्तरादिक आगार सहित जे पच्चख्खाण करवामां आवे ते **सागार** पच्चखाण कहेवाय छे. एमां महत्तराकार होवाथी कोइ महत् कार्यप्रसंगे गुरुनी आज्ञावडे पच्चख्खाण कर्या छतां पण कदाच भोजन करवुं पडे तो तेथी पच्चखाणनो भंग थतो नथी. ७ चार प्रकारना आहारनो सर्वथा त्याग करवो ते **निरवशेष** पच्चखाण कहेवाय छे, तेमां **अशन** एटले लाडु, मांडा, खाजा विगेरे, **पान** एटले पीवाय तेवी वस्तु, खर्जुरनो रस, द्राक्षरस विगेरे, **खादिम** एटले नाळीयेर विगेरे फळ तथा गोळ धाणा विगेरे अने स्वादिम एटले एलची, कपूर, लविंग, सोपारी विगेरे. ए चारे प्रकारना आहारनो त्याग करवामां आवे छे. आठमुं **पारिमाणकृत** नामनुं पच्चखाण छे, तेमां परिमाण एटले कवळ (कोळीआ) तथा भिक्षाना घर विगेरेनी संख्यानुं करवुं एटले नियम करवो ते. आ तपमां जेटलुं परिमाण कर्युं होय तेथी अधिक वस्तु वापरवी नहीं एम समजवुं.

९ नवमुं **संकेत** पच्चखाण छे. तेमां "संकेत" एटले " घर " सहित जे होय ते अर्थात् गृहस्थ; अथवा संकेत एटलेज गृहस्थो तेमने करवा लायक पच्चखाण ते **सांकेतिक** पच्चखाण कहेवाय छे. आ पच्चखाण प्राये गृहस्थोनेज होय छे अथवा " केत " एटले चिन्ह अने " स " एटले सहित अर्थात् कांइ पण चिन्ह सहित लेवामां आवे ते. जेमके–कोइ श्रावक पोरसी आदि पच्चखाण लइने क्षेत्र विगेरे अन्य स्थाने गयो होय अथवा घेर ज रह्यो होय. पछी प्रत्याख्याननो समय पूर्ण थयो होय पण भोजनसामग्री थइ न होय तेथी एक क्षणवार पण प्रत्याख्यान विना रहेवुं योग्य नथी एम धारीने ते अंगुठा विगेरेनुं चिन्ह करे, एटले के–"ज्यां सुधी मुठीमां अंगुठो राखी नवकार गणी बहार काढुं नहीं त्यां सुधी, अथवा मुठी वाळुं नहीं के गांठ छोडुं नहीं त्यांसुधी मारे भोजन करवुं नहीं." एवीज रीते " ज्यां सुधी घरमां पेसुं नहीं, अथवा परसेवाना बिंदु सुकाय नहीं, अथवा दीवो ओलवाय नहीं, त्यां सुधी मारे भोजन करवुं नहीं एवो नियम करी राखे ते संकेत पच्चख्खाण कहेवाय छे. केटलीक वखत पोरसी आदि पच्चखाण कर्युं न होय पण मात्र ग्रंथी विगेरेनुं चिन्ह धारी अभिग्रह करवामां आवे छे तो ते पण सांकेतिक पच्चखाण गणाय छे. आवी रीते साधु पण पच्चखाण करी शके छे.

१० दशमुं **अध्धा** पच्चखाण छे. अध्धा शब्दे काळ कहेवाय छे, तेमां मुहूर्त पहोर विगेरे काळनो नियम करीने पच्चखाण करवामां आवे छे तेथी तेने अध्धा पच्चखाण कहेलुं छे. तेनुं स्वरूप पाछला व्याख्यानमां आवी गयुं छे.

कांइ पण पच्चखाण लीधुं होय तो ते **दामन्नकनी** जेम बराबर पाळवुं. तेनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

हस्तिनापुरमां सुनंद नामे एक कुलपुत्र रहेतो हतो. तेने **जिनदास** नामना श्रेष्ठी साथे मैत्री हती. तेथी ते श्रेष्ठी पासे हमेशां पच्चखाणनो महिमा सांभळतो हतो. एकदा श्रेष्ठी तेने गुरु पासे लइ गया. गुरुए अनागत आदि प्रत्याख्याननुं स्वरूप तथा फळनुं वर्णन कर्युं. ते सांभळीने सुनंदे मद्यमांसनुं पच्चखाण शुद्ध भावथी ग्रहण कर्युं. पछी कोइ वखत सर्व स्थाळे मोटो दुष्काळ पड्यो; तेथी छठ्ठा आरानी जेम सर्व लोक प्राये मांस भक्षण करनारा थइ गया. सुनंदना स्वजनो क्षुधाथी अत्यंत पीडावा लाग्या, तेथी तेने एक दिवस घणो उपालंभ आपीने तेना साळा साथे माछलां लेवा माटे मोकल्यो. सुनंदे पाणीमां जाळ नांखी; परंतु जाळमां फसायेलां माछलां जोइने तेमने मूकी देतो हतो. ते जोइने तेना साळाए कह्युं के– "हे बनेवी ! तमे कोइ मुंडाना वाक्य रूपी जाळमां फसाया छो, तेथी तमारां स्त्रीपुत्रादिकने दुःख रूपी जाळमांथी शी रीते काढी शकशो ? जाण्युं तमारुं दयापणुं!" विगेरे कह्या छतां पण तेणे ते दिवसे एके माछलुं पकड्युं नहीं. तेवीज रीते बीजे दिवसे पण एके माछलुं पकड्युं नहीं, अने कहेवा लाग्यो के– "हुं शुं करुं ? कोइ वखत मने मत्स्य पकडवानो अभ्यास नथी." ते सांभळीने तेना स्वजनो तेने शीखववा लाग्या; परंतु तेना निर्मल धर्मनी भावना गइ नहीं. त्रीजे दिवसे तळाव पर जइने जाळ नांखी. तेमां एक माछलानी पांख त्रुटी गइ, ते जोइने सुनंद अत्यंत शोकातुर थयो. तेणे स्वजनोने कह्युं के "हुं कोइ वखत पण आवुं हिंसानुं काम करीश नहीं." एम कहीने प्रफुल्लित मनथी तेणे निरवशेष अनशननुं पच्चखाण कर्युं, अर्थात् आहारनो त्याग कर्यो. त्यांथी मरीने ते **राजगृह** नगरमां **मणिकार** श्रेष्ठीने घेर पुत्रपणे उत्पन्न थयो. मातापिताए तेनुं **दामनक** नाम राख्युं. अनुक्रमे वृद्धि पामतां ते आठ वर्षनो थयो; एटले मारीना उपद्रवथी तेनुं सर्व कुटुंब नाश पाम्युं; तेथी भयने लीधे ते पोताना घरमांथी नासी गयो. फरतां फरतां तेज नगरमां **सागरदत्त** नामना श्रेष्ठीने घेर आव्यो, ने नोकरी करीने आजीविका करवा लाग्यो.

एक दिवस कोइ बे मुनि गोचरी माटे ते शेठने घेर आव्या. तेमां मोटा साधु सामुद्रिक शास्त्रमां निपुण हता, तेणे दामनकने जोइने बीजा मुनिने कह्युं के- "आ दासपणानुं काम करनार माणस छे ते वृद्धि पामीने आज घरनो स्वामी थशे." आ प्रमाणेनुं साधुनुं वचन श्रेष्ठीए भींतनी ओथे उभा रहीने सांभळ्युं, तेथी

जाणे वज्रघात थयो होय तेम तेने घणो खेद उत्पन्न थयो. तेणे विचार्युं के-" आ बाळकने कोइ पण उपायथी आजे ज मारी नाखुं, एटले बीजनो नाश कर्या पछी अंकुर क्यांथी थशे ?" ए प्रमाणे विचारीने तेणे ते बाळकने लाडुनो लोभ बतावीने चांडाळने घेर मोकल्यो. त्यां एक चांडाळने ते श्रेष्ठीए प्रथमथी द्रव्य आपीने साधी राख्यो हतो अने तेने कह्युं हतुं के-" हुं तारी पासे मोकलुं ते बाळकने मारीने तेनी निशानी मने बतावजे." ते बाळकने मृगलाना बच्चानी जेवो मुग्ध आकृति (सुंदर आकृति) वाळो जोइने ते चांडाळने दया आवी, तेथी तेनी कनिष्टिका आंगळी कापी लइने ते बाळकने तेणे कह्युं के-"रे मुग्ध! जो तुं जीववाने इच्छतो होय तो अहींथी जलदी नासी जा." ते सांभळीने ते ज सागर श्रेष्ठीनुं गोकुळ जे गाममां हतुं ते गाममां गयो. त्यां गोकुळना रक्षण करनारे तेने विनयी जोइने पुत्र तरीके राख्यो. त्यां ते सुखे रहेवा लाग्यो; अनुक्रमे युवावस्था पाम्यो.

एकदा सागर श्रेष्ठी गोकुलमां आव्यो, त्यां छेदेली आंगळीना चिन्हथी तेणे दामनकने ओळख्यो. पछी कांइक कार्यनुं मिप करी गोकुळना रक्षकने कहीने श्रेष्ठीए पोताना पुत्र पर कागळ लखी दामनकने तेनी पासे मोकल्यो. दामनक कागळ लइने उतावळो राजगृहे पहोच्यो. अश्रांत चालवाने लीधे थाक लागवाथी गाम बहार उद्यानमां कामदेवना मंदिरमां ते विश्रांति लेवा बेठो. त्यां तेने थाकेलो होवाथी तरतज उंघ आवी गइ; तेवामां सागर श्रेष्ठीनी **विषा** नामनी पुत्री पतिनी इच्छाथी ते ज कामदेवना मंदिरमां आवी. त्यां दामनकनी पासे पोताना पितानी मुद्रा-वाळो कागळ जोइने ते कागळ तेणे धीरेथी लइ लीधो, अने कागळ खोलीने ते वांचवा लागी.

"स्वस्तिश्री गोकुळथी ली. श्रेष्ठी सागरदत्त समुद्रदत्त पुत्रने स्नेह पूर्वक फरमावे छे के-आ कागळ लावनारने वगर विलंबे तरतज **विष** आपजे, तेमां कांइ पण संदेह करीश नहीं."

आ प्रमाणेनो लेख वांचीने दामनकना रूपथी मोहित थयेली विषाए सळी वडे आंखनी मेषथी **विषं** उपरनुं बिंदु काढीने "ष" पासे कानो करी विषने बदले **विषा** कर्युं. पछी ते कागळ बंध करीने हतो तेम मूकी दइ हर्षथी ते पोताने घेर गइ. केटलीक वारे दामनक पण जागृत थयो. एटले गाममां जइने तेणे श्रेष्ठीपुत्रने ते कागळ आप्यो. ते पण कागळ वांची आनंद पाम्यो अने तेज वखते लग्न लइने मोटा आडंबरथी सर्व जन समक्ष पोतानी बेन विषाने तेनी साथे परणावी. दामनक तेनी साथे सुखेथी विलास करवा लाग्यो. केटलेक दिवसे

सागरश्रेष्ठी घेर आव्यो, एटले विषाना लग्ननी वात जाणी ते अति खेद पाम्यो. तेणे विचार्युं के- " अहो! मारुं चिंतवेलुं कार्य तो उलटुं थयुं अने आ तो मारो जमाइ थयो, तो पण प्रपंचथी तेने मारी नाखुं. पुत्री विधवा थाय ते सारुं, पण शत्रुनी वृद्धि थाय ते सारुं नहीं. " आ प्रमाणे विचार करीने तेणे पेला चांडाळ पासे जइने कह्युं के-" अरे ! ते दिवसे तें मने आंगळीनी निशानी आपीने छेतर्यो ते ठीक कर्युं नहीं. " चांडाळ बोल्यो के- " हे शेठजी ! हवे तेने देखाडो, हुं जरुर मारी नाखीश. " पछी श्रेष्ठी तेने मारवा माटे मातृका देवीना देरानो संकेत आपीने घेर आव्या अने दामनकने कह्युं के- " हे वत्स ! तुं आजे सांजे विषा सहित मातृका देवीना प्रासादमां पूजा करवा जजे, के जेथी देवीनी कृपावडे तमारा बन्नेनुं कुशळ थाय. " पछी सायंकाळ थतां ते दंपती पूजा करवा माटे चाल्या. मार्गमां तेनो साळो मळ्यो. तेणे कह्युं के- ' क्यां जाओछो ?' दामनके देवीनी पूजा करवा जवानुं कह्युं, एटले ते बोल्यो के- अत्यारे पूजानो समय नथी, केमके अंधकार प्रसरवानो समय नजीक होवाथी घणा दोषने उत्पन्न करनार प्रदोषनो समय छे. " एम कहीने ते बन्नेने त्यांज रोकीने पोते पूजानी सामग्री लइने पूजा करवा गयो. प्रथमथीज श्रेष्ठीनो संकेत होवाथी पेला चांडाळे तेने देरामां पेसतांज जाणे ते देवीने बळिदान देता न होय तेम तेने मारी नांख्यो. पुत्रनुं मरण सांभळीने सागर श्रेष्ठीनुं वक्षःस्थळ भेदाइ गयुं, तेथी ते पण मृत्यु पाम्यो. पछी राजाए दामनकने तेना घरनो स्वामी कर्यो.

एक वखत रात्रिना पाछला पहोरे मंगलपाठकना[1] मुखथी दामनके एक गाथा सांभळी. तेनो भावार्थ एवो हतो के—" निरपराधीने अनर्थमां नाखवा माटे कोइ अनेक प्रयत्नो करे तो ते उलटा तेने बहु गुणना करनारा थाय छे. दुःखनेमाटे करेल उपाय सुखनेमाटे थाय छे. केमके कृतांत (दैव) ज जेनो पक्ष करे तेने बीजो शुं करी शके ?

आ गाथा ते त्रण वार बोल्यो, एटले दामनके तेने त्रणलाख द्रव्य आप्युं. राजाए एटलुं बधुं दान आपवानुं कारण पूछ्युं, त्यारे दामनके पोतानो सर्व पूर्व वृत्तांत कह्यो.

एकदा ज्ञानी गुरु मळवाथी तेनी पासेथी पोताना पूर्व भवमां करेला प्रत्याख्याननुं फळ जाणीने जातिस्मरण थवाथी दामनक विशेषे धर्मनो रागी थयो. अनुक्रमे मरण पामीने देवलोकनुं सुख प्राप्त कर्युं. त्यांथी चवीने महाविदेह क्षेत्रमां उत्पन्न थइ क्रमे करीने सिद्धिपदने पामशे.

---

१ भाट चारण विगेरे.

आ गाथा हजार सोनामहोर लइने तुं वेचजे." जुगारी ते गाथा लइने बजारमां गयो. त्यां धनदत्ते ते गाथा वांचीने हजार सोनामहोर आपी ग्रहण करी. ते वात तेना पिताना जाणवामां आवी, एटले तेने घरमांथी काढी मूक्यो. धनदत्त उत्तर दिशा तरफ चाल्यो; रस्तामां चोरोए तेने पकडी लइने वणजाराने वेच्यो. वणजाराए तेने पारसकुळमां जइ वेच्यो. तेओए तेने लोहीने वास्ते वेचातो लीधो. पछी हंमेशां तेना शरीरमांथी लोही काढवाथी ते अत्यंत निःसत्व थइ गयो. एकदा अचेतन थइने पडेला तेने तेनुं शरीर लोहीथी खरडेलुं होवाथी भारंड पक्षीए उपाड्यो, अने सुवर्ण द्वीपमां मूकी दीधो. त्यां पण पेली गाथानो अर्थ संभारतो सतो सुखे रहेवा लाग्यो. एकदा रात्रिए अरणिनां लाकडां सळगावीने तेना अग्नि वडे ते ताप्यो. प्रातःकाळे ते स्थाननी पृथ्वी तेणे सुवर्णमय थयेली जोइ. तेथी तेणे ते माटीनी इंटो बनावी अने तेनी मध्यमां पोतानुं नाम राखीने तेना आठ हजार ने पांच संपुट बनाव्या. ते इंटो अग्निमां पकवतां सुवर्णमय थइ गइ. तेमनो तेणे एक ठेकाणे ढगलो कर्यो. एकदा कोइ वहाणवटी पाणी लेवा माटे ते किनारे उतर्यो. तेणे धनदत्तने पूछ्युं के-" तमे अहीं क्यांथी आव्या छो ? " धनदत्ते कह्युं के-" मारी सुवर्णनी इंटो लेवा आव्यो छुं, माटे आ इंटो जो तमे भाडुं ठरावीने लइ जाओ तो आमांथी चोथो भाग तमने आपीश." वहाणवटीए कबुल करीने ते इंटो वहाणमां भरावी. पछी विश्वास पमाडीने ते वहाणवटीए इंटोना लोभथी तेने एक कूवामां नाखी दीधो. धनदत्ते कूवामां पगथीयां जोयां. ते पगथीयांने रस्ते अंदर उतरतां तेणे एक मनुष्यविनानुं शून्य नगर जोयुं. त्यां चक्रेश्वरी देवीनुं मनोहर मंदिर जोइने ते अंदर गयो. देवीने वंदन करीने तेनी पूजा करी. भक्तिथी प्रसन्न थइने देवीए तेने पांच रत्न आप्यां; तेमां एक सौभाग्य आ-

आ गाथा हजार सोनामहोर लइने तुं वेचजे." जुगारी ते गाथा लइने बजारमां गयो. त्यां धनदत्ते ते गाथा वांचीने हजार सोनामहोर आपी ग्रहण करी. ते वात तेना पिताना जाणवामां आवी, एटले तेने घरमांथी काढी मूक्यो. धनदत्त उत्तर दिशा तरफ चाल्यो; रस्तामां चोरोए तेने पकडी लइने वणजाराने वेच्यो. वणजाराए तेने पारसकुळमां जइ वेच्यो. तेओए तेने लोहीने वास्ते वेचातो लीधो. पछी हंमेशां तेना शरीरमांथी लोही काढवाथी ते अत्यंत निःसत्व थइ गयो. एकदा अचेतन थइने पडेला तेने तेनुं शरीर लोहीथी खरडेलुं होवाथी भारंड पक्षीए उपाड्यो, अने सुवर्ण द्वीपमां मूकी दीधो. त्यां पण पेली गाथानो अर्थ संभारतो सतो सुखे रहेवा लाग्यो. एकदा रात्रिए अरणिनां लाकडां सळगावीने तेना अग्नि वडे ते ताप्यो. प्रातःकाळे ते स्थाननी पृथ्वी तेणे सुवर्णमय थयेली जोइ. तेथी तेणे ते माटीनी इंटो बनावी अने तेनी मध्यमां पोतानुं नाम राखीने तेना आठ हजार ने पांच संपुट बनाव्या. ते इंटो अग्निमां पकवतां सुवर्णमय थइ गइ. तेमनो तेणे एक ठेकाणे ढगलो कर्यो. एकदा कोइ वहाणवटी पाणी लेवा माटे ते किनारे उतर्यो. तेणे धनदत्तने पूछ्युं के–" तमे अहीं क्यांथी आव्या छो ? " धनदत्ते कह्युं के–" मारी सुवर्णनी इंटो लेवा आव्यो छुं, माटे आ इंटो जो तमे भाडुं ठरावीने लइ जाओ तो आमांथी चोथो भाग तमने आपीश." वहाणवटीए कबुल करीने ते इंटो वहाणमां भरावी. पछी विश्वास पमाडीने ते वहाणवटीए इंटोना लोभथी तेने एक कूवामां नाखी दीधो. धनदत्ते कूवामां पगथीयां जोयां. ते पगथीयांने रस्ते अंदर उतरतां तेणे एक मनुष्यविनानुं शून्य नगर जोयुं. त्यां चक्रेश्वरी देवीनुं मनोहर मंदिर जोइने ते अंदर गयो. देवीने वंदन करीने तेनी पूजा करी. भक्तिथी प्रसन्न थइने देवीए तेने पांच रत्न आप्यां; तेमां एक सौभाग्य आपनार, बीजुं रोगनो नाश करनार, त्रीजुं आपत्तिमांथी रक्षण करनार, चोथुं विष उतारनार अने पांचमुं लक्ष्मी आपनार हतुं. ते रत्नो तेणे पोतानी जंघा विदारीने तेमां गोपव्यां. पछी धनदत्त नगरमां आगळ चाल्यो, पण कोइ मनुष्य जोवामां आव्युं नहीं. चालतां चालतां ते राजमहेलमां गयो अने उपर चड्यो. त्यां तेणे एक सुंदर कन्या जोइ. ते कन्याए तेने सन्मान आप्युं. धनदत्ते तेने नगर शून्य थवानुं कारण पूछ्युं, एटले ते बोली के–"आ तिलकपुर नामनुं नगर छे. आ नगरमां मारो पिता महेन्द्र नामे राजा हतो.एक दिवसे शत्रुओए आवीने नगरने घेरी लीधुं, तेज रात्रिए कोइ व्यंतर मारा पिता पासे आव्यो. मारा पिताए तेने पूछ्युं के–" तुं कोण छे?" त्यारे व्यंतरे कह्युं के– " हुं तारो पूर्व भवनो मित्र छुं." मारा पिताए

1 लोहीनो रंग वनावनार वस्तोवाळो देश (बब्बरकूळ)

कह्युं के–"त्यारे तुं आ मारा नगरने ज्यां शत्रुनो भय न थाय एवे स्थाने मूक." ते सांभळीने व्यंतरे एक शहेर कूवा पासे बनाव्युं, अने आ बीजुं कूवाना मार्गे अहीं आण्युं. एकदा कोइ राक्षस अहीं आव्यो. तेणे बन्ने नगर सर्व लोकनुं भक्षण करीने मनुष्यरहित करी नाख्यां. मात्र एक मने ज परणवानी इच्छाथी जीवती राखी छे, ते आजेज मने परणवानो छे." आ प्रमाणे ते कन्या वात करेछे तेटलामां आकाशमां शब्द करतो ते राक्षस आव्यो. ते कन्याए धनदत्तने कह्युं के–"तमे अहीं गुप्त रीते रहो, नहीं तो तमने पण ते पापी मारी नांखशे." एम कहीने धनदत्तने चंद्रहास खड्ग बतावीने कह्युं के–"आ खड्गथी ते पापीष्ठने देवपूजाने वखते मारवो, तेथी तेनुं मृत्यु थशे; ते सिवाय तेनुं मृत्यु थाय तेम नथी." आ प्रमाणे संकेत करीने तेने गुप्त स्थाने संताडी राख्यो. राक्षस पूजा करवा बेठो ते वखते समय जोइने धनदत्ते खड्गवती तेने मारी नांख्यो. पछी धनदत्त ते कन्याने परण्यो अने रत्नादिक सार सार वस्तु लइने ते बन्ने कूवामां आव्या. ते वखते कोइ वहाणवटी ते कूवामांथी पाणी लेवा आव्यो. तेणे कूवामां मनुष्यो छे एम जाणीने ते बन्नेने बहार काढ्या. पछी धनदत्तना कहेवाथी वहाणवाळाए तेमने भाडुं लइने वहाणमां बेसाड्या. वहाणनो स्वामी ते स्त्रीनुं स्वरूप तथा द्रव्य जोइने मोह पाम्यो, तेथी मार्गमां धनदत्तने मैत्रीभावथी विश्वास पमाडीने समुद्रमां नाखी दीधो. धनदत्त तो सर्वत्र गाथानो अर्थ स्मरण करी सुख दुःखमां समान रहेतो हतो. समुद्रमां पडतांज तेना हाथमां एक पाटीयुं आव्युं, ते तेणे पकडी लीधुं. समुद्रना कल्लोल उपर ते तरतो हतो तेवामां एक मोटो मत्स्य तेने पाटीया सहित गळी गयो. त्यां तेने बहु खेद थयो अने घणी पीडा थइ, पण ते तो गाथानो अर्थ ज विचारवा लाग्यो के 'विधिए जेवां सुख दुःख लख्यां होय तेवां भोगववांज पडे छे.'

पेलो मत्स्य मनुष्यना भारथी खेद पामीने समुद्रने किनारे गयो. त्यां मच्छीमारे तेने पकड्यो. तेने चीरतां तेना उदरमांथी धनदत्त नीकळ्यो; ते मूर्च्छित थइ गयेलो हतो; तेथी मच्छीमारे तेने धीरे धीरे सज्ज कर्यो. पछी कनकपुरना राजाने सर्व वृत्तांत कहीने तेने राजा पासे आण्यो; राजाए तेने तेनो हेवाल पूछ्यो, एटले तेणे केटलोक वृत्तांत एकांतमां कह्यो; तेथी प्रसन्न थइने राजाए तेने घणा सत्कार पूर्वक थगीधर[1] बनाव्यो. त्यां तेणे मत्स्योदर नाम राख्युं.

एक दिवस जे वहाणवटीए तेने कूवामां नांखी दीधो हतो ते तेज नगरे वहाण सहित आव्यो अने राजानी पासे भेट मूकीने बेठो. त्यां ते थगीधरने जोइने तेणे ओळख्यो. तेथी ते वहाणवटीए विचार्युं

---

१ राजा जेनापर प्रसन्न थाय तेने तांबूल आपनार.

के-" आ नवो आवेलो हशे, तेथी तेनी जाति कुळ विगेरे कोइ जाणतुं नहीं होय, माटे जो तेने नीच जातिनो ठरावुं तो मारुं कष्ट नाश पामे." एम विचारीने तेणे चांडाळ पासें जइने कह्युं के-"हुं तने सुवर्णनी इंटो आपीश, पण तमारे राजसभामां जइने राजाना थगीधरने भेटीने तेने कहेवुं के-'हे भाइ! तुं अमने घणा दिवसे मळयो, आटला दिवसथी क्यां गयो हतो?' इत्यादि कहीने तेने तमारी जातनो ठराववो." चांडाळे ते वात कबुल करीने बीजे दिवसे ते प्रमाणे कर्युं. ते जोइने राजाए ते चांडाळने पूछयुं के-"आ शुं?" त्यारे चांडाळ बोल्यो के-" आ मारो भाइ छे, तेने में घणा दिवसे जोयो तेथी हुं रडुं छुं." ते सांभळीने राजाए थगीधरने पूछयुं के-"अरे रे! तुं मारे घेर क्यांथी आव्यो? तें अमने सर्वने चांडाळ जेवा कर्या." त्यारे तेणे कह्युं के-" हे स्वामी! सांभळो, ते विषे बहु लांबी वात छे." एम कहीने पोते गाथा लीधी त्यारथी आरंभीने सर्व हकीकत राजाने निवेदन करी, अने देवीए आपेलां पांचे रत्नो पोतानी जंघामांथी काढीने राजाने बताव्यां. पछी राजाने कह्युं के-" आ पांच रत्नो मारी पासे रह्यां छे, बाकी ते पहेलांनुं मारुं सर्व द्रव्य तेनी पासे छे." ते सांभळीने राजाए पेला चांडाळोने घणो मार मराव्यो त्यारे तेओए कबुल कर्युं के-" नवा आवेला वहाणवटीए सुवर्णनी इंटो आपीने आ प्रपंच अमारी पासे कराव्यो छे." एम कहीने राजाने ते इंटो बतावी. राजाए इंटो तोडी तो अंदरथी धनदत्तनुं नाम नीकळयुं. पछी राजाए ते वहाणवटीने बोलावीने पोताना सिपाइओने कह्युं के-"अरे! आ पापीए मत्स्योदरनुं सर्व धन कबजामां लइने तेने द्वेषबुद्धिथी कूवामां नांखी दीधो छे, माटे तेने मारी नाखो." एम कहीने तेनां सर्वे वहाणो लुंटी लइ तेने दरिद्र करी दीधो. पछी धनदत्ते राजाने विनंति करीने तेने जीवतो मूकाव्यो. राजाए तेने पोताना नगरमांथी काढी मूक्यो. पछी धनदत्तनी प्रशंसा करीने राजाए तेने पूछयुं के-" तुं कोनो पुत्र छे ते सत्य कहे." तेणे कह्युं के-"हे स्वामी! आज नगरमां रत्नसार नामें श्रेष्ठी छे ते मारा पिता छे." इत्यादि मूळ वृत्तांत कह्यो, एटले राजाए हर्ष पामीने तेने कह्युं के-"हवे तुं तारा पिताने घरे जा." त्यारे धनदत्ते कह्युं के-" हे स्वामी! हजु हुं एक बीजा वहाणवटीनी राह जोउं छुं." राजाए तेनुं कारण पूछ्युं, एटले तेणे पोतानी प्रिया संबंधी वृत्तांत कह्यो.

केटलाक दिवस गया पछी ते वहाणवटी देवदत्त शेठ पण तेज गाममां आव्यो. ते भेट लइने तिलकमंजरी सहित राजा पासे आव्यो. तेने जोइने धनदत्ते राजाने कह्युं के-" जे माणसनी हुं राह जोतो हतो तेज आव्यो छे, अने तेनी साथे जे स्त्री छे ते मारी प्रिया तिलकमंजरी छे." पछी राजाए ते शेठने पूछ्युं

के "आ किंनरीना जेवा रूपवाळी लाज काढीने उभेली सुंदरी कोण छे?" ते बोल्यो के "हे देव! आ स्त्रीने हुं कटाह द्वीपमांथी लाव्यो छुं; परंतु आ स्त्री कहे छे के जो मने राजा हुकम आपे तो हुं तारे घेर आवुं." ते सांभळीने राजाए ते स्त्रीने पूछयुं के-"आ शेठ शुं कहे छे? तेनुं इच्छित करवा तुं खुशी छे के नहीं?" ते बोली के-"हे राजा! मारा स्वामीने एणे समुद्रमां नांखी दीधो छे अने हुं पतिव्रता स्त्री छुं, माटे मने बळी मरवा माटे अग्नि आपो. आ शेठने छेतरीने आटला दिवस में मुश्केलीथी निर्गमन कर्या छे अने अहीं सुधी तेने हुं लइ आवी छुं. पूर्वे में मारा स्वामी पासे 'जं चिय विहिणा लिहियं' इत्यादि गाथानो अर्थ सांभळ्यो हतो तेनो मने पूरेपूरो अनुभव थयो छे, माटे हवे मारा मनमां कांइ पण शोक नथी." राजाए पूछयुं के-"हे पुत्री! तुं तारा स्वामीने शीरीते ओळखी शके तेम छे?" ते बोली के-"हे देव! मारा पतिने तो आ पापीए समुद्रमां नांखी दीधो छे,तेथी ते आज सुधी क्यांथी जीवता होय?" ते सांभळीने राजाए थगीधरने बताव्यो. ते जोइने ते बोली के "हे राजा! समान आकृतिवाळा घणा पुरुषो दुनियामां होय छे, तेथी आकृतिमात्रथी निश्चय केम थाय?" त्यारे धनदत्ते तिलकपुरनो वृत्तांत, राक्षसनुं मारवुं, कुवामांथी बहार नीकळवुं विगेरे सर्व कह्युं, एटले तेणे तेने बराबर ओळख्यो, अने राजाने कह्युं के "हे देव! आज मारा प्राणनाथ छे."पछी राजाए देवदत्त शेठनुं सर्वस्व लइ लीधुं अने तेने मारी नाखवानो हुकम आप्यो. ते वखते पण धनदत्ते विनंति करीने तेने बचाव्यो. पछी धनदत्त पोतानी प्रिया सहित राजानी आज्ञाथी मोटा ओच्छव पूर्वक पिताने घेर गयो. तेने जोइने तेना मातापिताने घणो हर्ष थयो.

एक दिवस धनदत्त राजानी साथे उद्यानमां मुनिने वांदवा गयो; त्यां धर्मदेशना सांभळीने तेणे गुरुने पूछयुं के-"हे भगवान्! में पूर्व भवमां केवां कर्म कर्यां हतां?" गुरु बोल्या के-"हे धनदत्त! तारा पूर्व भवनुं वृत्तांत सांभळ-रत्नपुर नगरमां **महण** नामे एक श्रेष्ठीपुत्र हतो. ते एकदा उद्यानमां गयो. त्यां कोइ मुनिने जोइने तेमने वांदीने तेनी पासे बेठो, ते वखते गुरुए कहेली धर्मदेशना सांभळीने तेणे समकित सहित गृहीधर्म अंगीकार कर्यो. गुरुने नमीने ते पोताने घेर आव्यो. पछी घणुं धन खरचीने तेणे एक मोटुं चैत्य कराव्युं; पण पाछो तेने विचार थयो के-"धर्मना रसमां पराधीन थइने में आटलो बधो धननो व्यय केम कर्यो?" इत्यादि भावनाथी भ्रष्ट थया छतां पण पाछी लोकलज्जाथी तेणे प्रतिमा भरावी. एकदा तेणे धारणा करी के-"जेटलुं द्रव्य हुं उपार्जन करुं तेमांथी चोथो हिस्सो धर्ममार्गे मारे वापरवो." ए प्रमाणे वर्ततां वळी तेने विचार थयो के-"में जे धारणा

करी तेनुं फळ मने आ भवमां ज मळशे के नहीं ? केमके शास्त्रमां तो थोडानुं पण अधिक फळ संभळाय छे." इत्यादि शंका वारंवार कर्या करतो हतो, अने देवपूजा विगेरे पण फळनी शंका सहित करतो हतो. एक दिवस कोइ बे मुनिने वहोरावीने तेणे विचार्युं के–" कदाच आ साधुओ सुंदर वेष पहेरे तो तेथी जैन धर्ममां शुं दूषण आवे?" वळी फरीथी विचार करवा लाग्यो के–" अरे! में खोटो विचार कर्यो. केमके सारां वस्त्र पहेरवां, देहनी परिचर्या करवी तथा तेनी शुश्रूषा करवी ते सर्वे कामदेवने वधारवाना उपाय छे; माटेज साधुओ तेवुं काम करता नथी." इत्यादि शुभ तथा अशुभ परिणामथी आंतरे आंतरे शुभ तथा अशुभ कर्म तेणे बांध्युं. छेवट आयुष्यने अंते मरण पामीने ते भुवनपति देवता थयो; त्यांथी चवीने तुं धनदत्त थयो छे. तें पूर्व भवमां धर्मकार्यो कर्यां, पण तेमां दूषण लगाड्यां तेथी तेनां फळ रूपे तने दुःख सहित सुख आभवमां प्राप्त थयुं." आ प्रमाणे सांभळीने धनदत्त मूर्छित थयो. पछी संज्ञामां आवीने जातिस्मरण थवाथी मातापितानी आज्ञा लइने वैराग्यवडे राजा सहित तेणे दीक्षा ग्रहण करी. त्यांथी मरण पामी वैमानिक देवतानुं सुख भोगवीने ते महाविदेह क्षेत्रमां उत्पन्न थयो, अने धर्मनुं आराधन करीने अनुक्रमे मोक्षे गयो.

" दश दृष्टांते दुर्लभ एवो मनुष्यभव तथा बीजी आर्यदेशादि सामग्री पामीने तथा संसारनी असारता जाणीने निरंतरनुं सुख (मोक्ष) इच्छनारा पुरुषोए निरंतर धर्मकार्यो करवां."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य पञ्चाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५० ॥

व्याख्यान २५१ मुं.

मौन एकादशीनी कथा.

प्रणम्य श्रीमद्वामेयं, पार्श्वयक्षादिपूजितम् ।
माहात्म्यं स्तौमि श्रीमौनैकादश्या गद्यपद्यभृत् ॥ १ ॥

भावार्थ--"श्री वामा माताना पुत्र, पार्श्व यक्षादिकोए पूजेला एवा श्री पार्श्वनाथ प्रभुने नमस्कार करीने गद्यपद्यात्मक एवुं मौन एकादशीनुं माहात्म्य कहुंछुं."

एकदा द्वारका नगरीमां श्री नेमनाथ स्वामी समवसर्या. ते समाचार वनपाळना मुखथी सांभळीने श्री कृष्ण अति हर्षित थया. पछी ते वनपाळने योग्य दान आपीनें सर्व समृद्धि सहित कृष्ण शिवा राणीना पुत्र श्री नेमनाथ प्रभुने वांदवा गया. विधि पूर्वक वांदीने योग्य स्थाने बेसी नीचे प्रमाणे भगवाननी देशना सांभळी.

एगदिने जे देवा, चवंति तेसिं पि माणुसा थोवा ।
कत्तो मे मणुय भवो, इति सुरवरो दुहिओ ॥ १ ॥

भावार्थ-"एक दिवसमां जेटला देवो चवे छे ते करतां पण आ पृथ्वी उपर माणसो ओछा छे. तेथी देवताओ चिंतवे छे के "अमने मनुष्यभव क्यांथी मळे ?' माटे तेओ दुःख धारण करेछे. एवी रीते देवने पण दुर्लभ मनुष्यभव जाणीने प्रमाद करवो नहीं."

अन्नाण संसओ चेव, मिच्छत्ताणं तहेव य ।
रागो दोसो मइब्भंसो, धंमंमि य अणायरो ॥ १ ॥
जोगाण दुप्पणिहाणं, पमाओ अठ्ठ महा भवे ।
संसारुत्तारकामेणं, सव्वहा वज्जियवओ ॥ २ ॥

भावार्थ—"अज्ञान, संशय, मिथ्यात्व, राग, द्वेष, मतिनी भ्रष्टता, धर्म उपर अनादर अने जोगनुं दुःप्रणिधान–ए रीते प्रमाद आठ प्रकारना छे; तेथी संसारथी मुक्त थवा इच्छनाराए तेनो सर्वथा त्याग करवो."

इत्यादि धर्मदेशना सांभळीने श्रीकृष्णे प्रभुने कह्युं के—" हे भगवन् ! हुं अहर्निश राजकार्यमां व्यग्र होवाथी निरंतर धर्म शीरीते करी शकुं ? माटे आखा वर्षमां एक उत्तम दिवस सार रूप होय ते बतावो!" भगवाने कह्युं के—"हे कृष्ण! जो तमारी एवी इच्छा होय तो मार्गशीर्ष मासनी शुक्ल एकादशीनुं उत्तम रीते आराधन करो. ते दिवसे वर्तमान चोवीशीनां त्रण तीर्थंकरना मळीने पांच कल्याणक थयां छे. ते विषे कह्युं छे के—

अस्यां चक्रिपदं हित्वा, ग्रहीदरजिनो व्रतम् ।
जन्म दीक्षां च सज्ज्ञानं, मल्ली ज्ञानं नमीश्वरः ॥ १ ॥

भावार्थ—"आ एकादशीने दिवसे श्री अरनाथ प्रभुए चक्रवर्तिपणुं छोडीने चारित्र अंगीकार कर्युं हतुं; मल्लीनाथनां जन्म, दीक्षा अने केवळज्ञान ए त्रण कल्याणक थयां हतां, अने नमिनाथनुं केवळज्ञान कल्याणक थयुं हतुं."

आ प्रमाणे नियम पूर्वक ते दिवसे पांच भरतमां तथा पांच ऐरवतमां त्रण त्रण तीर्थंकरोनां मळीने पांच पांच कल्याणको थवाथी पचास कल्याणको थयां छे; तेमज अतीत, अनागत अने वर्तमान समयना भेदथी एकसो पचास कल्याणको त्रीश चोवीशीमां थइने नेवुं तीर्थंकरोनां थयां छे. तेथी आ दिवस सौथी उत्तम छे.

अर्क पुराण नामना शैवी शास्त्रमां पण आ एकादशीनुं माहात्म्य वर्णव्युं छे के—" हे अर्जुन ! हेमंत ऋतुने विषे मार्गशीर्ष मासनी कल्याणकारी शुक्ल एकादशीने दिवसे जरुर उपवास करवो, केमके जे हमेशां पोताने घेर बे लाख ब्राह्मणोने भोजन करावे छे तेने जेटलुं फळ मळे छे तेटलुं फळ मात्र आ एकादशीना एक उपवासथी मळे छे. जेम केदारनाथ तीर्थमां उदकपान करवाथी पुनर्जन्म थतो नथी, तेम आ एकादशीना उपवासथी पण पुनःजन्म थतो नथी. हे अर्जुन! आ एकादशी गर्भवासनो नाश करे छे, तेथी ते व्रतना पुण्य समान बीजुं कोइ पुण्य थयुं नथी अने थशे पण नहीं. हे अर्जुन ! हजार गायोनुं दान करवाथी जेटलुं पुण्य थाय छे तेथी अधिक पुण्य एक ब्रह्मचारीनी भक्तिथी थाय छे, हजार ब्रह्मचारीनी भक्ति करतां जेटलुं पुण्य थायछे तेथी अधिक पुण्य एक वानप्रस्थाश्रमीनी भक्तिथी थाय छे, हजार वानप्रस्थाश्रमीनी भक्ति करतां अधिक पुण्य पृथ्वीनुं दान करवाथी थाय छे, भूमिदानथी दशगणुं पुण्य सर्व अलंकार सहित कन्यादान देवाथी थाय छे; कन्यादानथी दशगणुं पुण्य विद्यादानथी थाय छे, विद्यादानथी सोगणुं पुण्य भुख्याने अन्न आपवाथी थाय छे, तेथी सोगणुं पुण्य गोमेध यज्ञथी, तेथी सोगणुं अश्वमेध यज्ञथी, तेथी सोगणुं नरमेध

यज्ञथी अने तेथी हजारगणुं केदारनाथनी यात्रा करवाथी थाय छे. परंतु आ एकादशीना पुण्यनी तो संख्या ज नथी;तेथी ब्रह्मादि देवो पण ए व्रत आचरे छे." इत्यादि लौकिक शास्त्रोमां पण हे कृष्ण ! आ एकादशीनुं माहात्म्य वर्णव्युं छे. "

आ प्रमाणे लोकोत्तर फळ आपनारुं मौन एकादशीनुं वर्णन नेमीश्वर प्रभुना मुखथी सांभळीने श्रीकृष्णे फरीने पूछ्युं के-"हे स्वामी! आ एकादशीनुं आराधन पूर्वे कोणे कर्युं छे ते कहो." त्यारे प्रभुए सुव्रत श्रेष्ठीनुं जे दृष्टांत कह्युं ते आ प्रमाणे-

"धातकीखंडमां आवेला विजयपत्तनमां सुर नामे एक श्रेष्ठी रहतो हतो. राजा पण तेने बहु मान आपतो अने गामना सर्व व्यापारीओमां ते अग्रेसर हतो. तेने सुरमती नामनी शीलवती पत्नी हती. एक वखत ते श्रेष्ठी सुखे सुतो हतो. पाछली रात्रे निद्रा दूर थइ ते वखते तेने विचार थयो के-" हुं पूर्व जन्मना पुण्योदयथी सुखमां मग्न थइने दिवसो निर्गमन करुं छुं; परंतु परलोकनुं हितकर कार्य कंइ पण करवुं जोइए, केमके ते विना सर्व निरर्थक छे. " ए प्रमाणे विचार करतां सूर्योदय थयो, एटले शय्यामांथी उठी पोतानुं नित्यकर्म करीने ते श्रेष्ठी गुरुने वांदवा गयो. गुरुने वांदीने यथायोग्य स्थाने धर्मदेशना सांभळवा बेठो. गुरुए देशना आरंभी.

आलस्स मोह वन्ना, थंभा कोहा पमाय किविणत्ता।
भय सोगा अन्नाणा, वक्खेव कुऊहला रमणा ॥ १ ॥

भावार्थ-"आलस्य, मोह,वर्णना, स्तब्धता (अहंकार), क्रोध, प्रमाद (निद्रा), कृपणता, भय, शोक, अज्ञान,विकथा, कुतूहल अने रमण (रति) ए तेर काठीआनो त्याग करवो."

आ काठीआनो जे त्याग करतो नथी ते नरकगतिमां उत्पन्न थाय छे. कह्युं छे के-

पण कोडि अडसट्ठि, लक्खा नवनवइ सहस्स पंचसया।
चूलसी अहीय नरए, अपइट्ठाणंमि वाहिओ ॥ १ ॥

भावार्थ-" पांच करोड, अडसठ लाख, नवाणुं हजार, पांचसो ने चोराशी व्याधीओ अप्रतिष्ठान नामना सातमी नरकने छेल्ले पाथडे छे."

माटे हे श्रेष्ठी ! आवां नरकनां दुःखनो नाश करवा माटे हंमेशां धर्म करवो, केमके पुण्यनो महिमा अचिंत्य छे. कह्युं छे के-

भरहे य केइ जीवा मिच्छादिठी य भद्दवा भावा ।
ते मरिऊण नवमे, वरिसंमि हुंति केवलिणो ॥ १ ॥

भावार्थः-"आ भरतक्षेत्रमां केटलाएक भद्र परिणामी मिथ्यादृष्टि जीवो पण छे के जे अहींथी मरीने नवमे वरसे (महाविदेहमां) केवली थाय छे."

हे श्रेष्ठी ! "सुलभ बोधी जीवने कांइ पण दुष्कर नथी." इत्यादि सांभळीने श्रेष्ठी बोल्यो के-"हे महाराज! गृहकार्यमां खुंचेलो रहेवाथी हंमेशां धर्म करवानी मारी शक्ति नथी, तेथी मने एक एवो दिवस बतावो के जेथी ते एक दिवसना आराधनथी आखा वर्ष जेटलुं पुण्य मळे." त्यारे गुरुए कह्युं के-" मार्गशीर्ष मासनी शुक्ल एकादशीने दिवसे उपवास पूर्वक आठ प्रहरनो पोसह लेवो अने ते दिवसे सावद्य वाणीनो व्यापार तद्दन बंध करीने मौनपणे रहेवुं. ए प्रमाणे अगियार मार्गशीर्ष मास सुधी एकादशीने दिवसे पूर्वोक्त विधि पूर्वक तप करीने पछी मोटा उत्सवथी तेनुं उद्यापन करवुं." आ प्रमाणे सांभळीने ते श्रेष्ठीए अति हर्षथी भाव पूर्वक परिवार सहित ते व्रत अंगीकार कर्युं; अने तप पूर्ण थयुं त्यारे विधि पूर्वक तेनुं उद्यापन कर्युं. त्यार पछी पंदर दिवसे तेने एकाएक शुलनो व्याधि उत्पन्न थयो तेथी मृत्यु पामीने ते अग्यारमा आरण नामना देवलोकमां उत्पन्न थयो.

अग्यारमा देवलोकमां एकवीश सागरोपमनुं आयुष्य भोगवी त्यांथी चवीने आ भरतक्षेत्रमां सोरिपुर नामना नगरमां समृद्धिदत्त श्रेष्ठीनी भार्या प्रीतिमतिनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. गर्भना महिमाथी प्रीतिमतिने दोहद थयो के-" हुं श्रावकना बार व्रत ग्रहण करुं, महाव्रतने धारण करनार मुनिओने अशनादि वहोरावीने तेमनी भक्ति करुं, सर्व संसारी जीवोने व्रतधारी करुं, तेमज नृत्य, गीत, वाजित्र तथा वार्ताविनोदमां सम्यक् प्रकारे व्रत पाळनाराओना गुणोनुं श्रवण करुं." इत्यादि दोहद श्रेष्ठीए पूर्ण कर्यो पछी समय आवतां प्रीतिमतिए रूप अने लावण्यथी भरपूर एवा पुत्रने प्रसव्यो. नाळ दाटवा माटे पृथ्वी खोदतां तेमांथी निधान प्रगट थयुं. पिताए सुव्रत नाम राख्युं. अनुक्रमे ते गुरुनी साक्षी मात्रथीज समग्र कळाओ शीख्यो. युवावस्था पामतां पिताए तेने महोत्सव पूर्वक अगियार कन्याओ परणावी. पछी आयुष्य पूर्ण थतां तेनो पिता मरण पाम्यो एटले ते सुव्रत अगियार करोड द्रव्यनो स्वामी थयो. एकदा ते गुरुने वंदन करवा गयो. ते गुरु पांच समिति तथा त्रण गुप्तिथी युक्त हता, पांच महाव्रतनी पचीश भावनानुं अंतःकरणमां मनन करनारा हता, पांच महाव्रतनो भार धारण करवामां धुरंधर हता. देव, मनुष्य, तिर्यंच अने पोताथी उत्पन्न थता भयंकर उपसर्ग रूपी शत्रुओने तथा बावीश परीषह रूपी शत्रुओनी सेनाने जीतनारा हता, सतावीश गुणोथी

यज्ञथी अने तेथी हजारगणुं केदारनाथनी यात्रा करवाथी थाय छे. परंतु आ एकादशीना पुण्यनी तो संख्या ज नथी;तेथी ब्रह्मादि देवो पण ए व्रत आचरे छे." इत्यादि लौकिक शास्त्रोमां पण हे कृष्ण ! आ एकादशीनुं माहात्म्य वर्णव्युं छे."

आ प्रमाणे लोकोत्तर फळ आपनारुं मौन एकादशीनुं वर्णन नेमीश्वर प्रभुना मुखथी सांभळीने श्रीकृष्णे फरीने पूछयुं के-"हे स्वामी ! आ एकादशीनुं आराधन पूर्वे कोणे कर्युं छे ते कहो." त्यारे प्रभुए सुव्रत श्रेष्ठीनुं जे दृष्टांत कह्युं ते आ प्रमाणे-

"**धातकीखंडमां आवेला विजयपत्तनमां सुर** नामे एक श्रेष्ठी रहतो हतो. राजा पण तेने बहु मान आपतो अने गामना सर्व व्यापारीओमां ते अग्रेसर हतो. तेने **सुरमती** नामनी शीलवती पत्नी हती. एक वखत ते श्रेष्ठी सुखे सुतो हतो. पाछली रात्रे निद्रा दूर थइ ते वखते तेने विचार थयो के-" हुं पूर्व जन्मना पुण्योदयथी सुखमां मग्न थइने दिवसो निर्गमन करुं छुं; परंतु परलोकनुं हितकर कार्य कंइ पण करवुं जोइए, केमके ते विना सर्व निरर्थक छे." ए प्रमाणे विचार करतां सूर्योदय थयो, एटले शय्यामांथी उठी पोतानुं नित्यकर्म करीने ते श्रेष्ठी गुरुने वांदवा गयो. गुरुने वांदीने यथायोग्य स्थाने धर्मदेशना सांभळवा बेठो. गुरुए देशना आरंभी.

आलस्स मोह वन्ना, थंभा कोहा पमाय किविणत्ता।
भय सोगा अन्नाणा, वक्खेव कुऊहला रमणा ॥ १ ॥

भावार्थ-"आलस्य, मोह,वर्णना, स्तब्धता (अहंकार), क्रोध, प्रमाद (निद्रा), कृपणता, भय, शोक, अज्ञान,विकथा, कुतूहल अने रमण (रति) ए तेर काठीआनो त्याग करवो."

आ काठीआनो जे त्याग करतो नथी ते नरकगतिमां उत्पन्न थाय छे. कह्युं छे के-

पण कोडि अडसट्ठि, लक्खा नवनवइ सहस्स पंचसया।
चूलसी अहीय नरए, अपइट्ठाणंमि वाहिओ ॥ १ ॥

भावार्थ-" पांच करोड, अडसठ लाख, नवाणुं हजार, पांचसो ने चोराशी व्याधीओ अप्रतिष्ठान नामना सातमी नरकने छेल्ले पाथडे छे."

माटे हे श्रेष्ठी ! आवां नरकनां दुःखनो नाश करवा माटे हंमेशां धर्म करवो, केमके पुण्यनो महिमा अचिंत्य छे. कह्युं छे के-

भरहे य केइ जीवा मिच्छादिठी य भद्दवा भावा ।
ते मरिऊण नवमे, वरिसंमि हुंति केवलिणो ॥ १ ॥

भावार्थः-"आ भरतक्षेत्रमां केटलाएक भद्र परिणामी मिथ्यादृष्टि जीवो पण छे के जे अहींथी मरीने नवमे वरसे (महाविदेहमां) केवली थाय छे."

हे श्रेष्ठी ! "सुलभ बोधी जीवने कांइ पण दुष्कर नथी." इत्यादि सांभळीने श्रेष्ठी बोल्यो के-"हे महाराज! गृहकार्यमां खुंचेलो रहेवाथी हंमेशां धर्म करवानी मारी शक्ति नथी, तेथी मने एक एवो दिवस बतावो के जेथी ते एक दिवसना आराधनथी आखा वर्ष जेटलुं पुण्य मळे." त्यारे गुरुए कह्युं के-"मार्गशीर्ष मासनी शुक्ल एकादशीने दिवसे उपवास पूर्वक आठ प्रहरनो पोसह लेवो अने ते दिवसे सावद्य वाणीनो व्यापार तद्दन बंध करीने मौनपणे रहेवुं. ए प्रमाणे अगियार मार्गशीर्ष मास सुधी एकादशीने दिवसे पूर्वोक्त विधि पूर्वक तप करीने पछी मोटा उत्सवथी तेनुं उद्यापन करवुं." आ प्रमाणे सांभळीने ते श्रेष्ठीए अति हर्षथी भाव पूर्वक परिवार सहित ते व्रत अंगीकार कर्युं; अने तप पूर्ण थयुं त्यारे विधि पूर्वक तेनुं उद्यापन कर्युं. त्यार पछी पंदर दिवसे तेने एकाएक शुलनो व्याधि उत्पन्न थयो तेथी मृत्यु पामीने ते अग्यारमा आरण नामना देवलोकमां उत्पन्न थयो.

अग्यारमा देवलोकमां एकवीश सागरोपमनुं आयुष्य भोगवी त्यांथी चवीने आ भरतक्षेत्रमां सोरिपुर नामना नगरमां समृद्धिदत्त श्रेष्ठीनी भार्या प्रीतिमतिनी कुक्षिमां पुत्रपणे उत्पन्न थयो. गर्भना महिमाथी प्रीतिमतिने दोहद थयो के-"हुं श्रावकना बार व्रत ग्रहण करुं, महाव्रतने धारण करनार मुनिओने अशनादि वहोरावीने तेमनी भक्ति करुं, सर्व संसारी जीवोने व्रतधारी करुं, तेमज नृत्य, गीत, वाजित्र तथा वार्तविनोदमां सम्यक् प्रकारे व्रत पाळनाराओना गुणोनुं श्रवण करुं." इत्यादि दोहद श्रेष्ठीए पूर्ण कर्या पछी समय आवतां प्रीतिमतिए रूप अने लावण्यथी भरपूर एवा पुत्रने प्रसव्यो. नाळ दाटवा माटे पृथ्वी खोदतां तेमांथी निधान प्रगट थयुं. पिताए सुव्रत नाम राख्युं. अनुक्रमे ते गुरुनी साक्षी मात्रथीज समग्र कळाओ शीख्यो. युवावस्था पामतां पिताए तेने महोत्सव पूर्वक अगियार कन्याओ परणावी. पछी आयुष्य पूर्ण थतां तेनो पिता मरण पाम्यो एटले ते सुव्रत अगियार करोड द्रव्यनो स्वामी थयो. एकदा ते गुरुने वंदन करवा गयो. ते गुरु पांच समिति तथा त्रण गुप्तिथी युक्त हता, पांच महाव्रतनी पचीश भावनानुं अंतःकरणमां मनन करनारा हता, पांच महाव्रतनो भार धारण करवामां धुरंधर हता. देव, मनुष्य, तिर्यंच अने पोताथी उत्पन्न थता भयंकर उपसर्ग रूपी शत्रुओने तथा बावीश परीषह रूपी शत्रुओनी सेनाने जीतनारा हता, सतावीश गुणोथी

विराजमान शिष्ट मुनिओना नायक हता, अतिचार रहित पांच प्रकारना आचारने पालन करनारा हता,संसारी जीवोने मूर्छा पमाडनार विषयसमूहथी विरमेला हता, त्रण भुवनना लोकोने किंकर रूप करवाथी अति गर्विष्ठ थयेला कामदेवना विकारने जेमणे दूर करेलो हतो, अर्हत्प्रणीत शास्त्रमां कहेला अतिसूक्ष्म विचारोनो सारी रीते बोध होवाथी सर्व भव्य प्राणीओनां हृदयने आनंद पमाडता हता, चंचळ एवा पांच इंद्रियो रूपी उद्धत अश्वोने तेणे नियममां राखेला हता, अमृत समान धर्म-देशना वडे सर्व भव्य प्राणीओनां जीवित रूप हता, सम्यक् दर्शन वडे करीने तेणे मिथ्या दर्शन रूपी उग्र विषनो नाश कर्यो हतो, दुर्जन पुरुषोनां दुर्वचनोनी रचना रूपी प्रचंड वायु प्रसरतां छतां पण अकंप हता, क्षमा, मार्दव, आर्जव अने मुक्ति[1] आदि दश प्रकारना साधु धर्मनुं आराधन करवामां सावधान हता, पोताना अंतः-करण रूपी घरमांथी शल्य रूप नव प्रकारनां नियाणांने तेमणे दूर काढी मूक्यां हतां, नव प्रकारनी ब्रह्मचर्य गुप्तिनुं सारीरीते पालन करवामां तत्पर हता, दुष्ट कर्म रूपी राक्षससमूहनो नाश करवामां नारायण जेवा हता, हास्यादि षट्कने तेमणे दूरथीज तजी दीधुं हतुं, चंदनादिकथी पूजा करनार उपर तेमज शस्त्रादिथी छेदन करनार उपर तेमनो समान मनोविलास हतो, सर्वथा ममता रहित होवाथी तेमणे शोकनो निरास कर्यो हतो, अनुपम वचनकळाथी सर्व लोकने रंजित कर्या हता, अरिहंतप्रणीत समग्र आगमना पारगामी हता, तीर्थंकरोए तथा गणधरोए स्वी-कारेला सम्यक् मार्गना अनुयायी हता, आ लोक तथा परलोक आश्रित सर्व च-राचर प्राणीओए करेलां मान अथवा अपमान, प्रशंसा अथवा निंदा, लाभ अथवा अलाभ, सुख अथवा दुःख इत्यादिमां तेमनी चित्तवृत्ति समान हती, श्रीमत् आर्हत् मतनुं स्थापन करवामां असाधारण कुशलता रूपी सूर्यना उदयथी तेमणे चोतरफ प्रसरेला मिथ्यात्व रूप अंधकारनो नाश कर्यो हतो, अप्रशस्त आश्रव द्वारनो निरोध कर्यो हतो, अनेक भव्यसमाजोने बोध पमाडनारा हता, आठ प्रकारना मदनो त्याग कर्यो हतो, बार प्रकारना तप रूपी औषधनी क्रियावडे दुर्भेद्य दुष्ट कर्म रूपी व्याधिनो तेमणे भेद (नाश) कर्यो हतो, पांच प्रकारनो स्वाध्यायविधि करवामां तथा करावावमां सावधान हता, जगत्ना सर्व जीवोने तेमणे अभयदान आप्युं हतुं, सागर जेवा गंभीर हता, मेरु पर्वतनी जेवा अचल (धीर) हता, शंखनी जेवा निरंजन (निर्मल) हता, अज्ञान रूपी अंध-कारथी आच्छादित थयेला नेत्रोवाला भव्य प्राणीओनां नेत्रोने उघाडवा तथा नि-र्मल करवा माटे श्रेष्ठ ज्ञान रूपी अंजनना आंजनारा हता, काचबानी जेम गुप्तेंद्रिय हता, महामोह राजानो तेमणे पराजय कर्यो हतो, भारंड पक्षीनी जेम सर्वदा अप्र-मत्त हता, कमलना पत्रनी जेम तेमनुं चित्त लेपरहित हतुं, सूर्यनी जेम दिप्ततेज

1 निर्लोभता.

हता, राग द्वेष रूपी महा मल्लने जीतवा माटे तेमणे घणुं वीर्य फोरव्युं हतुं, चंद्रनी जेम सौम्य गुणोवडे परिपूर्ण होवाथी समग्र साधु पुरुषोने आनंदकारी हता, सिंहनी जेवा दुर्धर्ष हता छतां सर्वलोकने गमन योग्य हता, हाथीनी जेम शौर्य गुणथी युक्त हता, समग्र दोषथी मुक्त हता, वृषभनी जेवा बलवान हता, अनेक वादीओने जीतवाथी अधिक तेजस्वी थयेला हता, समुद्रना जलनी जेवुं तेमनुं हृदय अति शुद्ध हतुं, संसाररूपी कारागृहमां रहेला मोहरूपी मोटा चोरे पकडेला प्राणीओनुं रक्षण करवामां ते अत्यंत दयालु हता, आकाशनी जेम अवलंबन रहित हता, महानंद (मोक्ष) रूपी महा नगरे जवानी निश्रेणिए चडवामां विलंब विनाना हता, शून्य घरनी जेम शरीरनी परिचर्याथी रहित हता. अन्य प्राणीओए करेला राफडामां रहेनारा सर्पनी जेम पराश्रयमां रहेनारा हता, सांसारिक सर्व संबंधनो त्याग कर्यो हतो, पवननी जेम अप्रतिबद्धविहारी हता, जीवनी जेम अप्रतिहत गतिवाळा हता, जिनप्रवचनने अनुसरती मतिवाळा हता, अने पक्षीनी जेम सर्वथी मुक्त हता. किं बहुना ! ते मुनिराजनां सर्व आचरणो साधु सामाचारीने संपूर्ण योग्य हतां, जाणे जंगम कल्पवृक्ष होय. तेवा ते **श्रीमान् धर्मघोष** नामना गुरुने समवसरेला जोइने श्रेष्ठीपति सुव्रत जाणे पोतानो पुण्यसमूह मूर्ति धारण करीने प्रगट थयो होय एम जाणी पोताना आत्माने धन्य मानतो सतो विनय सहित विधि पूर्वक गुरुने नम्यो. त्यार पछी गुरुए आपेली सकल भव्य जीवोना चित्तने हर्षथी व्याप्त करवामां सावधान, मन वचन कायाए करीने बांधेलां तद्भवी कर्मसमूह तथा पूर्वे घणा भवमां उपार्जन करेलां अशुभ कर्मसमूह रूपी मोटां वृक्षोने मूल सहित उखेडी नांखवामां प्रथम मेघ समान, जलधर वृष्टिथी वृद्धि पामेला जलना महा प्रवाहमां प्राणीओना अंतरनी विषय कषायरूपी लील विगेरेने खेंची जनार, सर्व श्रोता जनना कर्णने पवित्र करवामां मंत्रसहित महाविद्या समान, संयोग वियोगादि जिनमतसूचित महादुःखोरूपी उर्मिना समूहथी व्याकुळ अने महा साहसिक पुरुषोने पण दुर्ग्राह्य एवा दुरंत संसार रुपी महासागरने तरवामां वहाण जेवी अने चोराशी लाख जीवायोनीमां परिभ्रमण करवाथी दिग्मूढ थइ गयेला प्राणीओने महा वैराग्यने उत्पन्न करनारी, तथा मुख्यत्वे करीने पांच पर्वणीना आराधननुं उत्तम फळ देखाडनारी एवी देशना सांभळीने सुव्रत श्रेष्ठीने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी तेणे गुरुने पूछ्युं के–"हे पूज्य ! में पूर्व भवमां मौन एकादशीनुं तप कर्युं हतुं. तेना प्रभावथी हुं अग्यारमा देवलोकमां उत्पन्न थयो हतो अने त्यांथी चवीने अहीं पण आगियार क्रोड सुवर्णनो स्वामी थयो छुं तो हवे हुं शुं सुकृत करुं के जेथी असाधारण फळनो भोक्ता थाउं." गुरुए कह्युं के–"हे श्रेष्ठी !

विराजमान शिष्ट मुनिओना नायक हता, अतिचार रहित पांच प्रकारना आचारने पालन करनारा हता, संसारी जीवोने मूर्छा पमाडनार विषयसमूहथी विरमेला हता, त्रण भुवनना लोकोने किंकर रूप करवाथी अति गर्विष्ठ थयेला कामदेवना विकारने जेमणे दूर करेलो हतो, अर्हत्प्रणीत शास्त्रमां कहेला अतिसूक्ष्म विचारोनो सारी रीते बोध होवाथी सर्व भव्य प्राणीओनां हृदयने आनंद पमाडता हता, चंचळ एवा पांच इंद्रियो रूपी उद्धत अश्वोने तेणे नियममां राखेला हता, अमृत समान धर्मदेशना वडे सर्व भव्य प्राणीओनां जीवित रूप हता, सम्यक् दर्शन वडे करीने तेणे मिथ्या दर्शन रूपी उग्र विषनो नाश कर्यो हतो, दुर्जन पुरुषोनां दुर्वचनोनी रचना रूपी प्रचंड वायु प्रसरतां छतां पण अकंप हता, क्षमा, मार्दव, आर्जव अने मुक्ति[1] आदि दश प्रकारना साधु धर्मनुं आराधन करवामां सावधान हता, पोताना अंतःकरण रूपी घरमांथी शल्य रूप नव प्रकारनां नियाणांने तेमणे दूर काढी मूक्यां हतां, नव प्रकारनी ब्रह्मचर्य गुप्तिनुं सारीरीते पालन करवामां तत्पर हता, दुष्ट कर्म रूपी राक्षससमूहनो नाश करवामां नारायण जेवा हता, हास्यादि षट्कने तेमणे दूरथीज तजी दीधुं हतुं, चंदनादिकथी पूजा करनार उपर तेमज शस्त्रादिथी छेदन करनार उपर तेमनो समान मनोविलास हतो, सर्वथा ममता रहित होवाथी तेमणे शोकनो निरास कर्यो हतो, अनुपम वचनकळाथी सर्व लोकने रंजित कर्या हता, अरिहंतप्रणीत समग्र आगमना पारगामी हता, तीर्थंकरोए तथा गणधरोए स्वीकारेला सम्यक् मार्गना अनुयायी हता, आ लोक तथा परलोक आश्रित सर्व चराचर प्राणीओए करेलां मान अथवा अपमान, प्रशंसा अथवा निंदा, लाभ अथवा अलाभ, सुख अथवा दुःख इत्यादिमां तेमनी चित्तवृत्ति समान हती, श्रीमत् आर्हत् मतनुं स्थापन करवामां असाधारण कुशलता रूपी सूर्यना उदयथी तेमणे चोतरफ प्रसरेला मिथ्यात्व रूप अंधकारनो नाश कर्यो हतो, अप्रशस्त आश्रव द्वारनो निरोध कर्यो हतो, अनेक भव्यसमाजोने बोध पमाडनारा हता, आठ प्रकारना मदनो त्याग कर्यो हतो, बार प्रकारना तप रूपी औषधनी क्रियावडे दुर्भेद्य दुष्ट कर्म रूपी व्याधिनो तेमणे भेद (नाश) कर्यो हतो, पांच प्रकारनो स्वाध्यायविधि करवामां तथा कराववामां सावधान हता, जगत्‌ना सर्व जीवोने तेमणे अभयदान आप्युं हतुं, सागर जेवा गंभीर हता, मेरु पर्वतनी जेवा अचल (धीर) हता, शंखनी जेवा निरंजन (निर्मल) हता, अज्ञान रूपी अंधकारथी आच्छादित थयेला नेत्रोवाला भव्य प्राणीओनां नेत्रोने उघाडवा तथा निर्मल करवा माटे श्रेष्ठ ज्ञान रूपी अंजनना आंजनारा हता, काचबानी जेम गुप्तेंद्रिय हता, महामोह राजानो तेमणे पराजय कर्यो हतो, भारंड पक्षीनी जेम सर्वदा अप्रमत्त हता, कमलना पत्रनी जेम तेमनुं चित्त लेपरहित हतुं, सूर्यनी जेम दिप्ततेज

---

१ निर्लोभता.

हता, राग द्वेष रूपी महा मल्लने जीतवा माटे तेमणे घणुं वीर्य फोरव्युं हतुं, चंद्रनी जेम सौम्य गुणोवडे परिपूर्ण होवाथी समग्र साधु पुरुषोने आनंदकारी हता, सिंहनी जेवा दुर्धर्ष हता छतां सर्वलोकने गमन योग्य हता, हाथीनी जेम शौर्य गुणथी युक्त हता, समग्र दोषथी मुक्त हता, वृषभनी जेवा बलवान हता, अनेक वादीओने जीतवाथी अधिक तेजस्वी थयेला हता, समुद्रना जलनी जेवुं तेमनुं हृदय अति शुद्ध हतुं, संसाररूपी कारागृहमां रहेला मोहरूपी मोटा चोरे पकडेला प्राणीओनुं रक्षण करवामां ते अत्यंत दयालु हता, आकाशनी जेम अवलंबन रहित हता, महानंद (मोक्ष) रूपी महा नगरे जवानी निश्रेणिए चडवामां विलंब विनाना हता, शून्य घरनी जेम शरीरनी परिचर्याथी रहित हता. अन्य प्राणीओए करेला राफडामां रहेनारा सर्पनी जेम पराश्रयमां रहेनारा हता, सांसारिक सर्व संबंधनो त्याग कर्यो हतो, पवननी जेम अप्रतिबद्धविहारी हता, जीवनी जेम अप्रतिहत गतिवाळा हता, जिनप्रवचनने अनुसरती मतिवाळा हता, अने पक्षीनीं जेम सर्वथी मुक्त हता. किं बहुना ! ते मुनिराजनां सर्व आचरणो साधु सामाचारीने संपूर्ण योग्य हतां, जाणे जंगम कल्पवृक्ष होय तेवा ते **श्रीमान् धर्मघोष** नामना गुरुने समवसरेला जोइने श्रेष्ठीपति सुव्रत जाणे पोतानो पुण्यसमूह मूर्ति धारण करीने प्रगट थयो होय एम जाणी पोताना आत्माने धन्य मानतो सतो विनय सहित विधि पूर्वक गुरुने नम्यो. त्यार पछी गुरुए आपेली सकल भव्य जीवोना चित्तने हर्षथी व्याप्त करवामां सावधान, मन वचन कायाए करीने बांधेलां तद्भवी कर्मसमूह तथा पूर्वे घणा भवमां उपार्जन करेलां अशुभ कर्मसमूह रूपी मोटां वृक्षोने मूल सहित उखेडी नांखवामां प्रथम मेघ समान, जलधर वृष्टिथी वृद्धि पामेला जलना महा प्रवाहमां प्राणीओना अंतरनी विषय कषायरूपी लील विगेरेने खेंची जनार, सर्व श्रोता जनना कर्णने पवित्र करवामां मंत्रसहित महाविद्या समान, संयोग वियोगादि जिनमतसूचित महादुःखोरूपी ऊर्मिना समूहथी व्याकुळ अने महा साहसिक पुरुषोने पण दुर्ग्राह्य एवा दुरंत संसार रुपी महासागरने तरवामां वहाण जेवी अने चोराशी लाख जीवायोनीमां परिभ्रमण करवाथी दिग्मूढ थइ गयेला प्राणीओने महा वैराग्यने उत्पन्न करनारी, तथा मुख्यत्वे करीने पांच पर्वणीना आराधननुं उत्तम फळ देखाडनारी एवी देशना सांभळीने सुव्रत श्रेष्ठीने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी तेणे गुरुने पूछ्युं के-"हे पूज्य ! में पूर्व भवमां मौन एकादशीनुं तप कर्युं हतुं. तेना प्रभावथी हुं अग्यारमा देवलोकमां उत्पन्न थयो हतो अने त्यांथी चवीने अहीं पण आगियार करोड सुवर्णनो स्वामी थयो छुं तो हवे हुं शुं सुकृत करुं के जेथी असाधारण फळनो भोक्ता थाउं." गुरुए कह्युं के-"हे श्रेष्ठी !

जेनाथी तने आटलुं सुख प्राप्त थयुं छे तेज एकादशीनुं सेवन कर. केमके जेनाथी देह व्याधि रहित थयो होय तेज औषध सेववुं जोइए. वळी कह्युं छे के—

विधिना मार्गशीर्षस्यैकादश्यां धर्ममाचरेत् ।
य एकादशभिर्वर्षैरचिरात् स शिवं भजेत् ॥ १ ॥

भावार्थः—"जे पुरुष मार्गशीर्षनी शुक्ल एकादशीने दिवसे विधि पूर्वक अगियार वर्ष सुधी धर्म आचरण करे छे ते थोडा वखतमांज मोक्षने मेळवे छे."

इत्यादि गुरुमुखथी सांभळीने सुव्रत श्रेष्ठीए पोतानी पत्नी सहित मौन एकादशीनुं तप अंगीकार कर्युं. एक दिवस श्रेष्ठी पोताना कुटुंब सहित आठ पहोरनुं पौषध व्रत लइने पौषधशाळामां रह्यो हतो, ते दिवसे ते हकीकत जाणीने चोर लोको रात्रिए तेना घरमां पेठा, अने घरमांथी सर्व धन लइने तेनी गांसडीओ बांधी घर वच्चे ढगलो कर्यो. पछी ते गांसडीओ उपाडी जवानो विचार करे छे तेवामां शासनदेवीए तेमने स्तंभित कर्या. थोडी मुदते शोरबकोर थवाथी राजाना सिपाइओ आवी ते चोरोने पकडी राजा पासे लइ गया. प्रातःकाळे श्रेष्ठी पोसह पाळी घणा धननी भेट लइने राजा पासे गया, अने कह्युं के—"हे राजन् ! आ लोको मारा घरना कामकाज करनारा छे, तेथी घरमां आडांअवळां पडेलां रत्नादिकने एकठां करीने घर वच्चे ढगलो कर्यो, अने पगे अथडातां हतां तेमने साचवी राख्यां. माटे आ मारा चाकरो मारवाने योग्य नथी." इत्यादि कहीने राजा पासेथी ते चोरोने छोडाव्या. ते वात जाणी नगरना लोकोए श्रेष्ठीनी अत्यंत प्रशंसा करी. त्यार पछी श्रेष्ठीए पारणुं कर्युं.

फरीथी बीजी एकादशीने दिवसे पण श्रेष्ठीए पौषध अंगीकार कर्यो हतो, ते रात्रिए दावानळनी जेम आखा नगरमां अग्नि प्रसरी गयो. तेने बुझाववानो उपाय नहीं चालवाथी सर्व लोको जुदी जुदी दिशाओमां नासी गया. ते वखते कोइए श्रेष्ठीने कह्युं के—"हे शेठ ! जैन मतमां दरेक व्रतो आगार सहित होय छे, माटे तमे अत्यारे व्रत तजी दो." इत्यादि कह्या छतां व्रतभंगनी भीतिथी श्रेष्ठी उव्याज नहीं. व्रतना प्रभावथी तेनां घर, दुकानो, वखारो विगेरे कांइ पण समुद्रमां रहेला बेटनी जेम अग्निथी बळ्युं नहीं. ते जोइने सर्व नगरना लोको तेना व्रतनी प्रशंसा करवा लाग्या.

एकादशीनुं समग्र व्रत पूर्ण थयुं त्यारे अगियार अगियार वस्तुओ एकठी करीने विधि पूर्वक मोटा ओछवथी शेठे उद्यापन कर्युं, अने संघ पूजादिक सात क्षेत्रमां द्रव्यनो व्यय करी पोतानो जन्म कृतार्थ कर्यो. ते श्रेष्ठीने एकादशी व्रतना पुण्यथी स्त्रीओ पण अगियार प्राप्त थइ हती, तेमज ते दरेक स्त्रीथी दश दश पुत्र अने एक

एक पुत्री थयेल हती. एकदा चार ज्ञानने धारण करनारा विजयशेखर सूरि ते नगरमां पधार्या, तेनी वैराग्यमय देशना सांभळीने श्रेष्ठी प्रतिबोध पाम्या. एटले तेमणे पोतानी अगियार स्त्रीओ सहित मोटा महोत्सवथी सर्वविरति ग्रहण करी, अने घरनो सर्व भार छोकराओने सोंप्यो. अतिचार रहित चारित्रनुं पालन करतां तेमणे द्वादशांगी कंठे करी. एक छ मासी तप कर्युं, चार चोमासी तप कर्यां, अने सो अठ्ठम तथा बसो छठ्ठ कर्यां. तेनी अगियारे स्त्रीओ मास मासनी संलेखना करी केवळज्ञान पामी मोक्षे गइ.

एक दिवस एकादशी होवाथी सुव्रत मुनिए मौनव्रत धारण कर्युं हतुं, ते दिवसे एक साधुने कानमां तीव्र वेदना थवा लागी. तेवामां कोइ मिथ्यात्वी व्यंतर देवता ए सुव्रत मुनिने व्रतथी चळाववा माटे ते मांदा साधुना शरीरमां प्रवेश कर्यो अने रात्रिने समये अधिक वेदना करवा लाग्यो. तेथी ते साधुए सुव्रत मुनिने कह्युं के–"तमे कोइ श्रावकने घेर जइने मारा शरीरनी व्यथानी वात कहो, के जेथी ते मारा व्याधिनी चिकित्सा करे." ते सांभळी सुव्रत मुनिए विचार्युं के– "में आजे उपाश्रयनी बहार जवानो निषेध कर्यो छे अने वळी मौन धारण कर्युं छे; तेथी शी रीते श्रावक पासे जाउं ने वात करुं?" इत्यादि विचार करे छे तेवामां ते साधुए सुव्रत मुनिने क्रोधनां वचनो कहेवा पूर्वक धर्मध्वज (ओघा) वडे मार्या. त्यारे सुव्रत मुनिए विचार्युं के–" आ महात्मानो आमां कांइ पण दोष नथी, मारोज दोष छे; केमके हुं तेनी चिकित्सा करावतो नथी." इत्यादि लोकोत्तर भावना उपर चडेला अने मेरु पर्वतनी जेम निश्चल थयेला तेमने जोइने ते देवता धर्ममां स्थिर थइ पोताने स्थानके गयो. सुव्रत मुनि तो शुभ भावना भावतां लोकालोकमां प्रकाश करनार केवळज्ञान पाम्या. ते वखते पासेना देवोए केवळज्ञाननो महिमा कर्यो. त्यां सुवर्णना कमळ उपर बेसीने सुव्रत केवळीए दयामय धर्मदेशना आपी. पछी पृथ्वीपर विचरतां घणा भव्य जीवोने प्रतिबोध पमाडी अंते अनशन करीने मोक्षे गया."

आ प्रमाणे नेमिनाथ भगवानना मुखथी एकादशीनुं उज्वळ माहात्म्य सांभळीने समग्र नगरना लोक सहित श्रीकृष्णे एकादशीनुं व्रत अंगीकार कर्युं.

" शास्त्रोक्त विधि पूर्वक जे लोको पोतानी शक्ति अनुसार एकादशीनुं व्रत आदरे छे तेओ स्वर्गनां सुख भोगवीने अंते मोक्षपदने पामे छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य
एकपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५१ ॥

व्याख्यान २५२ मुं.

समकितमां शंका न करवा विषे.

नास्ति जीवो न स्वर्गादि, भूतकार्यमिहेष्यते ।
इति प्रभृति शंकातो, सम्यक्त्वं खलु पात्यते ॥ १ ॥

भावार्थः–" आ जगतमां जीव एवी कोइ वस्तुज नथी, तेमज स्वर्ग, नरक विगेरे पण कांई नथी; मात्र पंच महाभूतनुंज सर्व कार्य छे. इत्यादि शंका करवाथी समकित नाश पामे छे. " ते उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणे–

आषाढाचार्यनुं दृष्टांत.

कोई साधुओना संघाडामां पूर्वे आषाढ नामे आचार्य थइ गया छे. ते अंतावस्था प्राप्त थयेला दरेक शिष्यने निझामता हता अने तेने कहेता हता के–" हे शिष्य ! तुं स्वर्गमां देवता थाय तो जरूर मने दर्शन आपजे. " आ प्रमाणे घणा शिष्योने कह्या छतां स्वर्गे गयेलामांथी कोइ पण शिष्य आव्यो नही. एक वखत पोताना अतिवल्लभ शिष्यने निझामणा करावीने कह्युं के– " हे वत्स ! तुं तो जो देव थाय तो अवश्य मने दर्शन आपजे. " ए प्रमाणे अति आग्रहथी कह्युं. तेणे पण ते अंगीकार कर्युं. पछी ते शिष्य काल करीने देवता थयो, परंतु देवकार्यमां गुंथाइ जवाथी जल्दी आवी शक्यो नहीं. तेथी गुरुए विचार्युं के–" में अनेक शिष्योने निझाम्या तेमज तेमणे मारी पासे आववानुं मारुं वचन अंगीकार कर्युं छतां तेमांथी एक पण मारी पासे आव्यो नहीं; तेथी जणाय छे के स्वर्ग के नरक कांइ पण नथी. आज सुधी में वृथा क्रियाकष्ट कर्युं. " इत्यादि विचार करी मिथ्याभाव पामी गच्छनो त्याग करीने ते चाली नीकळ्या. तेवामां ते शिष्यदेवे अवधिज्ञानवडे गुरुनुं स्वरूप जाणीने विचार्युं के–"आ आचार्य मोहमां फसाइने दुष्कर्म करे नहीं तेटला माटे त्यार अगाउ तेने बोध पमाडीने सन्मार्गमां लावुं. " एम विचारीने ते देवे गुरुना जवाना मार्गमां एक गाम पासे दिव्य नाटक विकुर्व्युं. आचार्य ते नाटक जोवा उभा रह्या. जोतां जोतां छ महिना निर्गमन कर्या, परंतु देवना अनुभावथी तेमने क्षुधा, तृषा, श्रम विगेरे कांइ पण जणायुं नहीं. पछी ते देवे नाटक संहरी लीधुं. एटले आचार्य आगळ चाल्या. चालतां चालतां तेणे विचार्युं के–" अहो ! आजे एक क्षण वार सुख जोयुं. " पछी ते देवे विचार्युं के– " आनी पासे कांइ पण व्रत रह्युं छे के सर्वथा भ्रष्ट थया छे तेनी परीक्षा करुं. " एम विचारीने तेणे उत्तम अलंकारथी शोभितो एक राजकुमार विकुर्व्यो. सूरिए

तेने जोइने कह्युं के-" हे बालक ! तुं एकलो आवा अघोर वनमां केम भमे छे ? तारुं नाम शुं छे ? " बालक बोल्यो के-" मारुं नाम पृथ्वीकायिक छे. हुं आपने शरणे आव्यो छुं. चोर, श्वापद विगेरेना उपद्रवथी मारुं रक्षण करो.

बालं मां दीनताप्राप्तं, पाहि पाहि प्रभो ततः ।
तैरेव भूषिता भूर्ये, रक्षेयुः शरणागतम् ॥ १ ॥

भावार्थः-" हे पूज्य ! दीनता पामेला आ बालकनुं आप रक्षण करो, रक्षण करो, केमके जेओ शरणे आवेलानुं रक्षण करे छे तेओनावडेज आ पृथ्वी शोभे छे. "

आ प्रमाणे ते बाळके नम्रताथी कह्या छतां ते लोभी आचार्य जेवामां ते बालकनी डोक मरडी नाखवा जाय छे तेवामां ते बालके फरीथी कह्युं के- " हे भगवान् ! एक दृष्टांत सांभळो. पछी जेम योग्य लागे तेम करजो. कोइ गाममां एक कुंभार रहेतो हतो. ते एक दिवस माटी खोदतां माटीनी खाण पोतापर पडती जोइने बोल्यो के-

यत्प्रसादाद्बलिभिक्षा, ददे ज्ञातींश्च पोषये ।
साप्याक्रामति भूमिर्मां, तज्जातं शरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थः-" जेनी कृपाथी हुं बलिदान अने भिक्षा आपुं छुं तथा कुटुंबनुं पोषण करुं छुं तेज पृथ्वी आजे मने दाटी दे छे. तेथी जेनुं शरण हतुं तेनाथीज मने भय प्राप्त थयुं. "

" हे पूज्य आचार्य ! तेवीज रीते हुं पण भय पामीने आपने शरणे आव्यो, परंतु आपज मने मारवा तैयार थया; तेथी मने पण जेनुं शरण तेनाथीज भय प्राप्त थयुं. " आ प्रमाणे सांभळीने पण ते आचार्ये " हे बालक ! तुं चतुर छे. " एम कहीने ते बालकने मारी नाख्यो, अने तेनां अलंकारो लइने पोतानां पात्रांमां नांख्यां.

आगल चालतां अप्कायिक नामना बीजा बाळकने प्रथमनी जेमज जोयो, तेनां अलंकारो पण लेवा माटे आचार्य तेवीज रीते तेने मारवा तैयार थया. ते वखत ते बालके पण एक दृष्टांत कह्युं के-" कोइ एक पुरुष सुभाषितमां चतुर हतो. ते एक वखत गंगा नदी उतरतां तेना प्रवाहमां तणायो, ते वेलाए नदीने कांठे उभेला लोकोए तेने कह्युं के-" हे भाइ ! कांइक सुभाषित बोल. " त्यारे ते बोल्यो के-

येन रोहंति बीजानि, येन जीवंति कर्षकाः ।
तस्य मध्ये विपद्यंते, जातं मे शरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थः—" जेना वडे सर्व बीजो उगे छे अने जेना वडे खेडुतो जीवे छे ते ज पाणीमां हुं मरण पामुं छुं. तेथी मने जेनुं शरण हतुं तेनाथीज भय थयुं. "

ते सांभळीने सूरिए कह्युं के—" हे वत्स! तुं बहु सारुं भण्यो जणाय छे." एम बोलीने तेने पण मारी नाखी तेनां अलंकार लइ लीधां.

आगळ जतां तेजस्कायिक नामना त्रीजा बाळकने जोइने तेनां पण अलंकार लेवा तैयार थया. त्यारे ते बाळके पण पूर्वनी जेम पोतानुं नाम प्रगट करीने दृष्टांत कह्युं के—" कोइ आश्रममां एक अग्निहोत्री तापस रहेतो हतो. ते हंमेशां विधि पूर्वक अग्निनुं पूजन करतो हतो. एकदा ते अग्नि वडे तेनुं झुंपडुं बळवा लाग्युं. ते जोइने ते तापस बोल्यो के—

यमहं मधुसर्पिर्भ्यां, तर्पयामि दिवानिशम् ।
दग्धस्तेनैवोटजो मे, जातं तच्छरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थः—" जेने हुं रात्रि दिवस मध तथा घी वडे तृप्त करुं छुं तेज अग्निए मारुं झुंपडुं बाळ्युं. माटे मने शरणथीज भय थयुं. "

माटे हे पूज्य ! तमारे पण तेम करवुं योग्य नथी. इत्यादि कह्या छतां सूरिए तेने मारीने अलंकार लइ लीधां.

त्यांथी आगळ चालतां वायुकायिक नामना चोथा बाळकने जोयो. तेनां पण अलंकारो लेवाने सूरि तैयार थया. एटले ते बाळके पूर्वनी जेम पोतानुं नाम प्रगट करीने एक दृष्टांत कह्युं के—"पहेलां कोइ जुवान पुरुष घणो बळवान हतो. तेने वायुनो व्याधि थवाथी तेनां अवयवो कंपवा लाग्यां. ते जोइने तेने कोइए पूछ्युं के—"तुं पहेलां तो बहु दोडतो हतो तेथी पवन जेवो उद्योगी हतो; अने हवे लाकडीना टेकाथी केम चाले छे ? " त्यारे ते बोल्यो के—

सोवादीद्यो मरुज्ज्येष्ठाषाढयोः, सौख्यदोऽभवत् ।
स एव बाधतेऽङ्गं मे, जातं हि शरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थः— ते जुवान बोल्यो के— "जे पवन मने ज्येष्ठ तथा अषाढ मासमां सुख आपतो हतो, तेज अत्यारे मारा अंगने पीडे छे. माटे मने शरणथीज भय थयुं."

इत्यादि कह्या छतां सूरिए तेने पण मारीने तेना अलंकार लइ पात्रामां नांख्यां.

आगळ चालतां "वनस्पतिकाय" नामना पांचमा बाळकने जोइने सूरिए तेना अलंकार लेवानी इच्छा करी. त्यारे ते बाळके पण एक दृष्टांत कह्युं के— कोइ एक अरण्यमां वृक्ष उपर माळा बांधीने केटलांक पक्षीओ रहेतां हतां. अन्यदा ते वृक्षना मूळमांथी एक लता उगीने वृक्षने वींटाती उपर गइ. ते लताना आधार वडे वृक्ष उपर चढीने कोइ सर्प ते पक्षीओनां बच्चांओने खाइ जवा लाग्यो. ते जोइने ते वृक्षना पक्षीओ परस्पर बोल्या के—

अद्य यावत् सुखं वृक्षे, स्थितमत्रानुपद्रवे ॥
अस्मादेव लतायुक्तादद्याभूच्छरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"आज सुधी आपणे आ वृक्ष उपर उपद्रव रहित सुखे वस्या हता, तेज वृक्ष लतायुक्त थवाथी आपणने आजे जेनुं शरण हतुं तेनाथीज भय थयुं."

सूरिए कथा सांभळी "हे बाळक ! तुं बुद्धिमान छे" एम कही निर्दयपणाथी तेने मारी नाखीने भूषणो लइ लीधां.

आगळ जतां तेमणे छट्ठो बाळक जोयो, तेनुं नाम पूछ्युं, त्यारे ते बाळक बोल्यो के—"मारुं नाम त्रसकायिक छे." ते सांभळीने सूरि तेनां अलंकार लेवा उत्सुक थया. एटले ते बाळके कह्युं के—मारी वात सांभळीने पछी जेम योग्य लागे तेम करजो. कोइ गामने शत्रुओए आवीने घेरो घाल्यो. त्यारे गाममां रहेता सर्व लोको पोतपोतानुं धन लइने बहार नीकळवा लाग्या, अने गाम बहार रहेता चांडाल विगेरे गाममां पेसवा लाग्या. ते जोइने कोइ पुरुषे चांडालोने कह्युं के —

भीताः पौराः कर्षयंति, युष्मान्निघ्नंति च द्विषः ॥
तत्क्वापि यात मातंगा, जातं शरणतो भयम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"हे चांडालो ! पुरना लोको तो भय पामीने पोतानुं धन बहार काढे छे, अने तमे तो गाममां पेसो छो पण तमने शत्रुओ मारी नांखशे. माटे तमे बीजे स्थळे जाओ. केमके जे गामनुं शरण हतुं तेज गामथी आजे भय प्राप्त थयुं छे."

आ प्रमाणे उपनय सहित दृष्टांत कह्या छतां सूरिए तेने छोड्यो नहीं. त्यारे ते बाळके बीजुं दृष्टांत आप्युं के—कोइ नगरमां राजा पोतेज पोताना माणसो पासे चो-

री करावतो हतो, अने ते विषे लोको फर्यादे जता तो राजानो पुरोहित सर्व लोको-ने गाळो देतो हतो, तेथी सर्व लोको खेद पामीने परस्पर कहेवा लाग्या के—

यत्र राजा स्वयं चौरो, भांडकश्च पुरोहितः ।

यात पौराः पुराद्‌स्माज्जातं हि शरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"हे पुरना लोको! ज्यां राजा पोतेज चोरी करे छे, अने ज्यां पुरोहित गाळो भांडे छे ते नगर छोडीने तमे बीजे स्थाने जाओ. केमके जेनुं शरण हतुं तेनाथीज भय थयुं छे."

आ कथा कहेवाथी पण सूरिए पोतानी दुष्टता छोडी नहीं, त्यारे ते बाळके त्रीजुं दृष्टांत कह्युं के—कोइ नगरमां एक कामांध ब्राह्मण रहेतो हतो. तेने पोतानी रूपवंती पुत्रीने जोइने तेनी साथे क्रीडा करवानी इच्छा थइ, परंतु लज्जाथी ते दुष्ट इच्छा पार पाडी शक्यो नहीं, तेथी तेनुं शरीर बहु क्षीण थइ गयुं. ते जोइने तेनी स्त्रीए तेने घणा आग्रहथी क्षीण थवानुं कारण पूछ्युं, एटले तेणे खरुं कारण कही दीधुं. ते सांभळीने ते स्त्रीए पोताना पतिना प्राण बचाववा सारु पुत्रीने कह्युं के—" हे पुत्री ! आपणा कुळनो एवो रीवाज छे के दरेक कुमारी कन्याने प्रथम यक्ष भोगवे, त्यार पछी तेनो विवाह करवामां आवे छे, माटे तुं काळीचतुर्दशीनी रात्रिए यक्षना देरामां जजे पण त्यां दीवो राखीश नहीं, केमके तेथी यक्षने क्रोध चढे छे." ते सांभळीने ते पुत्रीए मातानुं वचन अंगीकार कर्युं. परंतु जती वखते शरावमां दीवो संताडीने लइ गइ. पछी तेनी माताए ते ब्राह्मणने यक्षना देरामां मोकल्यो; ते पण त्यां गयो, अने पोतानी पुत्रीने निःशंकपणे भोगवीने सुखे सुइ गयो. थोडी वार पछी ते पुत्रीए कौतुकथी दीवा वडे जोयुं तो पोताना पिताने दीठो. ते जोइ तेणे विचार्युं के–" अहो! मारी माए पण मारा उपर माया करी, तो हवे आजथी आज मारो पति छे. में नर्तकीए नाच करवा मांड्यो, तो पछी शामाटे घुंघटो ताणवो?" एम विचारी ते पुत्री पण क्रीडाथी श्रमित थयेली हती, तेथी निरांते तेनी साथे सुइ गइ. प्रातःकाल थतां सुधी पण बेमांथी एके जाग्या नहि, एटले तेनी माताए त्यां आवीने कह्युं के—"हे पुत्री! केम हजु सुधी जागती नथी ? " पुत्री बोली के—" हे मा ! में तारा कह्या प्रमाणे कर्युं. तेथी यक्षे मने आनेज पति तरीके आप्यो छे; माटे हवे तुं बीजो पति शोधी ले." ते सांभळीने माता बोली के—

विण्मूत्रे च चिरं यस्या, मर्दिते सापि नंदिनी ।
मत्कांतमहरत्तस्मे, जातं शरणतो जयम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"जेनां विष्ठा तथा मूत्र में घणा काळ सुधी धोयां छे तेज पुत्रीए मारो पति हरण कर्यो, तेथी मने जेनुं शरण हतुं तेनाथीज भय थयुं."

आ प्रमाणे ते बाळके दृष्टांत कह्या छतां पण गुरु विराम पाम्या नहीं, एटले वळी तेणे चोथुं दृष्टांत कह्युं के—कोइ नगरमां एक मूर्ख ब्राह्मणे धर्मबुद्धियी सरोवर खोदाव्युं, अने ते तळावने कांठे तेणे घणा बकराना यज्ञो कर्या. अनुक्रमे ते ब्राह्मण मरण पामीने बकरो थयो. एक दिवसे ते ब्राह्मणना पुत्रो तेज बकराने यज्ञ माटे तळाव पर लइ गया. त्यां पोते करावेलुं तळाव विगेरे जोइने तेने जातिस्मरण थयुं, तेथी ते वारंवार "बु बु" शब्द करवा लाग्यो. ते जोइने कोइ ज्ञानी मुनिए तेनो पूर्व भव जाणीने कह्युं के—

खानितं हि त्वयैवेदं, सरो वृक्षाश्च रोपिताः
प्रवर्तिता मखाश्चापि, किं बु बु कुरुषे पशो ॥ १ ॥

भावार्थ—"हे पशु! तेंज आ सरोवर खोदाव्युं छे, तेंज आ वृक्षो वाव्या छे, अने तेंज अहीं यज्ञो कर्या छे, तो हवे केम "बु बु" शब्द करे छे?"

ते सांभळीने तेना पुत्रोए तेनुं वृत्तांत पूछ्युं, एटले मुनिए तेनो पूर्व भव कह्यो. ते सांभळी ते पुत्रो बोल्या के—"आ अमारा पिता होय, तो तेणे पूर्वे जे धन भूमिमां दाट्युं छे ते जो बतावे तो अमे सत्य मानीए." ते सांभळीने ते बकराए तत्काळ जइने दाटेलुं द्रव्य बताव्युं. ते जोइने सर्वे निःशंक थया अने यज्ञ नहीं करवानो नियम कर्यो. बकरो पण अनशन करीने स्वर्गमां गयो.

प्रेत्य मे शरणं भावीत्याशया स द्विजो यथा ।
तटाकादि व्यधात्तच्च, तस्याशरणतामगात् ॥ १ ॥

भावार्थ—"जेम ते ब्राह्मणे 'मरण पछी मारुं शरण थशे' एवी आशाथी जे तळाव वगेरे कराव्यां तेज तेने अशरण रूप थयां."

एवं मयापि भीतेन, भवतः शरणीकृताः ।
चेल्लुब्धंति तदा सेऽपि, त्राणमत्राणतां गतम् ॥ २ ॥

री करावतो हतो, अने ते विषे लोको फर्यादे जता तो राजानो पुरोहित सर्व लोको-
ने गाळो देतो हतो, तेथी सर्व लोको खेद पामीने परस्पर कहेवा लाग्या के—

यत्र राजा स्वयं चौरो, भांमकश्च पुरोहितः ।

यात पौराः पुरात्तस्माज्जातं हि शरणाद्भयम् ॥ १ ॥

भावार्थ–"हे पुरना लोको! ज्यां राजा पोतेज चोरी करे छे, अने ज्यां पुरोहित गा-
ळो भांमे छे ते नगर छोमीने तमे बीजे स्थाने जाओ. केमके जेनुं शरण हतुं तेनाथीज
भय थयुं छे."

आ कथा कहेवाथी पण सूरिए पोतानी दुष्टता छोमी नहीं, त्यारे ते बाळके त्री
जुं दृष्टांत कह्युं के—कोइ नगरमां एक कामांध ब्राह्मण रहेतो हतो. तेने पोतानी रूप-
वंती पुत्रीने जोइने तेनी साथे क्रीमा करवानी इच्छा थइ, परंतु लज्जाथी ते दुष्ट इच्छा
पार पामी शक्यो नहीं, तेथी तेनुं शरीर बहु क्षीण थइ गयुं. ते जोइने तेनी स्त्रीए तेने
घणा आग्रहथी क्षीण थवानुं कारण पूछ्युं, एटले तेणे खरुं कारण कही दीधुं. ते सां-
भळीने ते स्त्रीए पोताना पतिना प्राण बचाववा सारु पुत्रीने कह्युं के—" हे पुत्री ! आ-
पणा कुळनो एवो रीवाज छे के दरेक कुमारी कन्याने प्रथम यक्ष भोगवे, त्यार पछी
तेनो विवाह करवामां आवे छे, माटे तुं काळीचतुर्दशीनी रात्रिए यक्षना देरामां जजे
पण त्यां दीवो राखीश नहीं, केमके तेथी यक्षने क्रोध चढे छे." ते सांभळीने ते पुत्री-
ए मातानुं वचन अंगीकार कर्युं. परंतु जती वखते शरावमां दीवो संतामीने लइ गइ. प-
छी तेनी माताए ते ब्राह्मणने यक्षना देरामां मोकल्यो; ते पण त्यां गयो, अने पोतानी
पुत्रीने निःशंकपणे भोगवीने सुखे सुइ गयो. थोमी वार पछी ते पुत्रीए कौतुकथी दी-
वा वमे जोयुं तो पोताना पिताने दीठो. ते जोइ तेणे विचार्युं के–" अहो! मारी माए
पण मारा उपर माया करी, तो हवे आजथी आज मारो पति छे. में नर्तकीए नाच क-
रवा मांड्यो, तो पछी शामाटे घुंघटो ताणवो?" एम विचारी ते पुत्री पण क्रीमाथी श्र-
मित थयेली हती, तेथी निरांते तेनी साथे सुइ गइ. प्रातःकाल थतां सुधी पण बेमांथी
एके जाग्या नहि, एटले तेनी माताए त्यां आवीने कह्युं के—"हे पुत्री! केम हजु सुधी
जागती नथी ? " पुत्री बोली के—" हे मा ! में तारा कह्या प्रमाणे कर्युं. तेथी यक्षे
मने आनेज पति तरीके आप्यो छे; माटे हवे तुं बीजो पति शोधी ले." ते सांभळी-
ने माता बोली के—

विण्मूत्रे च चिरं यस्या, मर्दिते सापि नंदिनी ।
मरुकांतमहस्तम्भे, जातं शरणतो भयम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनां विष्टा तथा मूत्र में घणा काळ सुधी धोयां छे तेज पुत्रीए मारो पति हरण कर्यो, तेथी मने जेनुं शरण हतुं तेनाथीज भय थयुं. "

आ प्रमाणे ते बाळके दृष्टांत कह्या छतां पण गुरु विराम पाम्या नहीं, एटले वळी तेणे चोथुं दृष्टांत कह्युं के—कोइ नगरमां एक मूर्ख ब्राह्मणे धर्मबुद्धियी सरोवर खोदाव्युं, अने ते तळावने कांठे तेणे घणा बकराना यज्ञो कर्या. अनुक्रमे ते ब्राह्मण मरण पामीने बकरो थयो. एक दिवसे ते ब्राह्मणना पुत्रो तेज बकराने यज्ञ माटे तळाव पर लइ गया. त्यां पोते करावेलुं तळाव विगेरे जोइने तेने जातिस्मरण थयुं, तेथी ते वारंवार " बु बु " शब्द करवा लाग्यो. ते जोइने कोइ ज्ञानी मुनिए तेनो पूर्व भव जाणीने कह्युं के—

खानितं हि त्वयैवेदं, सरो वृक्षाश्च रोपिताः
प्रवर्तिता मखाश्चापि, किं बु बु कुरुषे पशो ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे पशु ! तेंज आ सरोवर खोदाव्युं छे, तेंज आ वृक्षो वाव्या छे, अने तेंज अहीं यज्ञो कर्या छे, तो हवे केम " बु बु " शब्द करे छे ? "

ते सांभळीने तेना पुत्रोए तेनुं वृत्तांत पूछ्युं, एटले मुनिए तेनो पूर्व भव कह्यो. ते सांभळी ते पुत्रो बोल्या के—" आ अमारा पिता होय, तो तेणे पूर्वे जे धन भूमिमां दाट्युं छे ते जो बतावे तो अमे सत्य मानीए." ते सांभळीने ते बकराए तत्काळ जइने दाटेलुं द्रव्य बताव्युं. ते जोइने सर्व निःशंक थया अने यज्ञ नहीं करवानो नियम कर्यो. बकरो पण अनशन करीने स्वर्गमां गयो.

प्रेत्य मे शरणं भावीत्याशया स द्विजो यथा ।
तटाकादि व्यधात्तच्च, तस्याशरणतामगात् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम ते ब्राह्मणे ' मरण पछी मारुं शरण थशे ' एवी आशाथी जे तळाव वगेरे कराव्यां तेज तेने अशरण रूप थयां. "

एवं मयापि भीतेन, भवंतः शरणीकृताः ।
चेत्क्रुध्यंति तदा सेऽपि, त्राणमत्राणतां गतम् ॥ २ ॥

भावार्थ—" एवीज रीते में पण भय पामीने आपनुं शरण कर्युं छे, तेथी जो आपज मने लुंटी लेवा धारो छो, तो मारे पण शरणज अशरण रूप थयुं."

इत्यादिक घणी रीते ते बाळके सूरिने समजाव्या, पण ते लोभी सूरि समज्या नहीं, अने तेने पण मारीने तेनां आभरण लइ लीधां.

ए प्रमाणे छए कुमारोनां आभरणो पोतानां पात्रमां नांखीने आगळ चालतां मार्गमां एक गर्भिणी साध्वीने सर्व अलंकारथी भूषित तथा नेत्रमां अंजन आंजेली जोइ. तेने जोइने सूरिए कह्युं के—" जैन शासननी हीलना करनारी हे दुष्ट साध्वी! तुं अहीं क्यांथी आवी ? " ते सांभळी साध्वी बोली—

साह रे सर्षपमात्राणि, परच्छिद्राणि पश्यसि ।

आत्मनो बिल्वमात्राणि, पश्यन्नपि न पश्यसि ॥ १ ॥

भावार्थ—" ते साध्वी बोली के अरे ! बीजानां सरसवना दाणा जेवडा सूक्ष्म छिद्रोने पण तमे जुओ छो, अने तमारां मोटां बीलां जेवडां छिद्रने जोतां छतां पण देखता नथी."

" वळी हे आचार्य ! तमे शुद्ध हो तो मारी पासे आवो, केम ऊंचा कान करीने नासो छो ? तमारां पात्रां मने बतावो. " एवां वाक्यो सांभळीने सूरि तत्काळ त्यांथी नासीने आगळ चाल्या. थोडे दूर जतां कोइ राजानुं सैन्य जोवामां आव्युं. तेना भयथी ते सैन्यना मार्गने छोडीने बीजे रस्ते चाल्या. त्यां तो दैवयोगे राजानीज समक्ष आवी पहोंच्या. तेने जोइने राजा पण हाथी उपरथी उतरीने तेने नम्यो अने बोल्यो के–" हे गुरु ! मारा मोटा भाग्य के मने अहीं आपना दर्शन थया, तो हवे मारा पर कृपा करीने एषणीय मोदक विगेरे ग्रहण करो. " ते सांभळीने सूरिए विचार्युं के—" जो हुं मोदक लेवा माटे पात्रां बहार काढीश, तो मारी चोरी प्रगट थशे. " एम विचारीने ते सूरि बोल्या के—" आजे तो मारे उपवास छे. " राजाए कह्युं के—"मारा भावनुं खंडन न करो." एम कहीने सूरिनी झोळीमांथी बळात्कारे पात्रां बहार काढी तेमां मोदक नांखवा जाय छे, तेवामां तो तेमां अलंकारो जोयां, तेथी ते राजा कोपायमान थइने बोल्यो के—" अरे साधुना वेषने विटंबना पमाडनार दुष्ट ! मारा पुत्रोने मारीने तुं जीवतो शी रीते जइश ? " ते सांभळीने सूरि नीचुं मुख राखी विचार करवा लाग्यो के–" मारुं पाप आ राजाए जाण्युं, तेथी ते हवे मने जीवतो जवा देशे नहीं, कु-

मरणे मारशे; में घणुं दुष्ट काम कर्युं. योग तथा भोग बन्नेथी हुं भ्रष्ट थयो. हवे मारी शी गति थशे ?" इत्यादि चिंता करता सूरिने जाणीने ते देवताए पोतानी माया संहरी लीधी, अने प्रत्यक्ष थइने कह्युं के—"हे पूज्य ! हुं ते ज आपनो शिष्य छुं के जेनुं आपे वचन लीधुं हतुं. आपना वचनथी बंधाएलो होवाथी हुं अहीं आव्यो छुं. स्वर्गे गया पछी देवकार्यमां व्याकुळ रहेवाथी अहीं आवतां मने विलंब थयो छे. परंतु "संकंति दिव्व पेमा०" अने "चत्तारि पंच जोयण सयाइं०" एटले "संक्रमेला—प्राप्त थएला दिव्य प्रेमादिकना कारणथी देवताओ तेमां लुब्ध थइ जायछे, तेथी पृथ्वी उपर आवता नथी. वळी चारसो पांचसो जोजन सुधी उंचे मनुष्यलोकनी दुर्गंध जाय छे तेथी पण देवताओ पृथ्वी पर आवता नथी." इत्यादि आगमनां वाक्यो जाणतां छतां आपे आवुं कर्म केम आरंभ्युं ? वळी दिव्य नाटक जोवामां लुब्ध थइने हुं ने हुं आपे पण छ मास व्यतीक्रमाव्या छे छतां तेटला काळने आपे एक मुहूर्त समान जाण्यो छे." आ प्रमाणे देवनी वाणी सांभळीने सूरिनो सर्व संशय नष्ट थयो, अने पोताना दुराचारने निंदवा लाग्या. पछी तेमणे देवने कह्युं के—"तमेज भाववंधुपणाथी मने मोक्षमार्ग बताव्यो छे. केमके तमे मने धर्मथी भ्रष्ट थएलाने फरीथी धर्म पमाड्यो छे, माटे तमारुं अनृणय[1] माराथी थइ शकशेज नहीं. आथी वधारे हुं शुं कहुं ?" सूरिनां आवां वचनोथी संतोष पामी पोतानो अपराध खमावीने देवता स्वर्गमां गयो. पछी सूरिए आलोयण लइने उग्र तप कर्युं.

"आ प्रमाणे आषाढ सूरि प्रथम समकितथी भ्रष्ट थया अने चित्तमां संशय कर्यो, पण पछीथी शुद्ध भाव धारण कर्यो; माटे सर्व साधुए शंकारहितपणे निरंतर निरतिचार चारित्रनुं पालन करवुं."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य
द्विपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५२ ॥

---

1 देणदाररहितपणुं.

भावार्थ—" एवीज रीते में पण भय पामीने आपनुं शरण कर्युं छे, तेथी जो आपज मने लुंटी लेवा धारो छो, तो मारे पण शरणज अशरण रूप थयुं."

इत्यादिक घणी रीते ते बाळके सूरिने समजाव्या, पण ते लोभी सूरि समज्या नहीं, अने तेने पण मारीने तेनां आभरण लइ लीधां.

ए प्रमाणे छए कुमारोनां आभरणो पोतानां पात्रामां नांखीने आगळ चालतां मार्गमां एक गर्भिणी साध्वीने सर्व अलंकारथी भूषित तथा नेत्रमां अंजन आंजेली जोइ. तेने जोइने सूरिए कर्युं के—" जैन शासननी हीलना करनारी हे दुष्ट साध्वी! तुं अहीं क्यांथी आवी ? " ते सांभळी साध्वी बोली—

साह रे सर्षपाभानि, परच्छिद्राणि पश्यसि ।

आत्मनो बिल्वमात्राणि, पश्यन्नपि न पश्यसि ॥ १ ॥

भावार्थ—" ते साध्वी बोली के अरे ! बीजानां सरसवना दाणा जेवडा सूक्ष्म छिद्रोने पण तमे जुओ छो, अने तमारां मोटां बीलां जेवडां छिद्रने जोतां छतां पण देखता नथी."

" वळी हे आचार्य ! तमे शुद्ध हो तो मारी पासे आवो, केम ऊंचा कान करीने नासो छो ? तमारां पात्रां मने बतावो. " एवां वाक्यो सांभळीने सूरि तत्काळ त्यांथी नासीने आगळ चाल्या. थोडे दूर जतां कोइ राजानुं सैन्य जोवामां आव्युं. तेना भयथी ते सैन्यना मार्गने छोडीने बीजे रस्ते चाल्या. त्यां तो दैवयोगे राजानीज समक्ष आवी पहोंच्या. तेने जोइने राजा पण हाथी उपरथी उतरीने तेने नम्यो अने बोल्यो के—" हे गुरु ! मारा मोटा भाग्य के मने अहीं आपना दर्शन थया, तो हवे मारा पर कृपा करीने एषणीय मोदक विगेरे ग्रहण करो. " ते सांभळीने सूरिए विचार्युं के—" जो हुं मोदक लेवा माटे पात्रां बहार काढीश, तो मारी चोरी प्रगट थशे. " एम विचारीने ते सूरि बोल्यो के—" आजे तो मारे उपवास छे. " राजाए कर्युं के—"मारा भावनुं खंडन न करो." एम कहीने सूरिनी झोळीमांथी बळात्कारे पात्रां बहार काढी तेमां मोदक नांखवा जाय छे, तेवामां तो तेमां अलंकारो जोयां, तेथी ते राजा कोपायमान थइने बोल्यो के—" अरे साधुना वेषने विटंबना पमाडनार दुष्ट ! मारा पुत्रोने मारीने तुं जीवतो शी रीते जइश ? " ते सांभळीने सूरि नीचुं मुख राखी विचार करवा लाग्यो के—" मारुं पाप आ राजाए जाण्युं, तेथी ते हवे मने जीवतो जवा देशे नहीं, कु-

मरणे मारशे; में घणुं दुष्ट काम कर्युं. योग तथा भोग बन्नेथी हुं भ्रष्ट थयो. हवे मारी शी गति थशे ? " इत्यादि चिंता करता सूरिने जाणीने ते देवताए पोतानी माया संहरी लीधी, अने प्रत्यक्ष थइने कह्युं के—" हे पूज्य ! हुं ते ज आपनो शिष्य छुं के जेनुं आपे वचन लीधुं हतुं. आपना वचनथी बंधाएलो होवाथी हुं अहीं आव्यो छुं. स्वर्गे गया पछी देवकार्यमां व्याकुळ रहेवाथी अहीं आवतां मने विलंब थयो छे. परंतु " संकंति दिव्व पेमा० " अने " चत्तारि पंच जोयण सयाइ० " एटले " संक्रमेला—प्राप्त थएला दिव्य प्रेमादिकना कारणथी देवताओ तेमां लुब्ध थइ जायछे, तेथी पृथ्वी उपर आवता नथी. वळी चारसो पांचसो जोजन सुधी ऊंचे मनुष्यलोकनी दुर्गंध जाय छे तेथी पण देवताओ पृथ्वी पर आवता नथी. " इत्यादि आगमनां वाक्यो जाणतां छतां आपे आवुं कर्म केम आरंभ्युं ? वळी दिव्य नाटक जोवामां लुब्ध थइने उभा ने उभा आपे पण छ मास व्यतीक्रमाव्या छे छतां तेटला काळने आपे एक मुहूर्त समान जाण्यो छे." आ प्रमाणे देवनी वाणी सांभळीने सूरिनो सर्व संशय नष्ट थयो, अने पोताना दुराचारने निंदवा लाग्या. पछी तेमणे देवने कह्युं के—" तमेज भावबंधुपणाथी मने मोक्षमार्ग बताव्यो छे. केमके तमे मने धर्मथी भ्रष्ट थएलाने फरीथी धर्म पमाड्यो छे, माटे तमारुं अनृणय[1] माराथी थइ शकशेज नहीं. आथी वधारे हुं शुं कहुं ? " सूरिनां आवां वचनोथी संतोष पामी पोतानो अपराध खमावीने देवता स्वर्गमां गयो. पछी सूरिए आलोयण-लइने उग्र तप कर्युं.

" आ प्रमाणे आषाढ सूरि प्रथम समकितथी भ्रष्ट थया अने चित्तमां संशय कर्यो, पण पछीथी शुद्ध भाव धारण कर्यो; माटे सर्व साधुए शंकारहितपणे निरंतर निरतिचार चारित्रनुं पालन करवुं. "

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य द्विपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५२ ॥

१ देणदाररहितपणुं.

व्याख्यान २५३ मुं.

मिथ्यात्वना भेद कहे छे.

एकधा द्विविधा नूनं, चतुर्धा त्रिविधा मतम् ।
दशधा पंचधा चैव, मिथ्यात्वं बहुधा स्मृतम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" मिथ्यात्वना एक, बे, चार, त्रण, दश अने पांच विगेरे अनेक प्रकारो कहेला छे."

श्री वीतरागना वचन उपर अविश्वास तथा जीवादि पदार्थो उपर अश्रद्धा, ते एक प्रकारे मिथ्यात्व कहेलुं छे.

मिथ्यात्व व्यक्त अने अव्यक्त एम बे प्रकारे छे. तेमां प्रमाणवाक्यो वडे तथा युक्ति वडे एकांत पक्षनी पुष्टि करनारा एवा स्पष्ट चैतन्यवाळा संज्ञि पंचेंद्रियादि जीवोने जे मिथ्यात्व होय छे, ते व्यक्त मिथ्यात्व कहेवाय छे; अने अनादि काळथी मोहनीय कर्मनी प्रकृति रूप मिथ्यात्व, के जे सम्यक् दर्शन आदि आत्माना गुणोनुं आच्छादन करनार छे अने जीवनी साथे सर्व काळ अविना भावे रहेलुं छे, ते अव्यक्त मिथ्यात्व कहेवाय छे. आ अव्यक्त मिथ्यात्व असंज्ञि एकेंद्रियादि जीवोने तथा निगोदना जीवोने होय छे.

द्रव्य भावथी पण बे प्रकारे मिथ्यात्व कहेलुं छे. तेमां बाह्य वृत्तियी मिथ्यात्वना आचरण करे, पण अंतरंग वृत्तिमां निर्मळपणुं (समकित) ज होय ते द्रव्य मिथ्यात्व जाणवुं.आवुं द्रव्य मिथ्यात्व कुमारपाळ राजाना आग्रहथी सोमेश्वर महादेवनी यात्रा करनारा श्री हेमचंद्र आचार्यनी जेम, तथा राजाना उपरोधथी गैरिक तापसनी भक्ति करनार कार्तिक श्रेष्ठीनी जेम समजवुं; अने भाव मिथ्यात्व ते निरंतर त्रिकाळज्ञानी एवा तीर्थंकरोनां वचन उपर जे अनादर करवो ते समजवुं. तेवीज रीते व्यवहार मिथ्यात्व तथा निश्चय मिथ्यात्व एवा बे भेदो पण अनुक्रमे द्रव्य मिथ्यात्व अने भाव मिथ्यात्व प्रमाणेज जाणवा.

चार प्रकारे मिथ्यात्व कहेलुं छे ते आ प्रमाणे—लौकिक देवगत मिथ्यात्व, लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व, लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व अने लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व. तेमां ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, गणपति, गोत्रदेवी, क्षेत्रपाळ विगेरे लौकिक देवोनुं पूजनादि करवुं, ते लौकिक देवगत मिथ्यात्व जाणवुं; वेरागी, सन्यासी, जोगी, जंगम ता-

पस, ब्राह्मण, विगेरे लौकिकगुरुनी पूजा, सत्कार विगेरे करवुं ते लौकिक गुरुगत मिथ्यात्व जाणवुं; वीतराग देवनी यात्रादिक मानता करवी. जेमके—" हे अमुक प्रभु ! जो मारुं अमुक कार्य सिद्ध थशे, तो हुं श्रीफळ, स्नात्र, दीपक, नित्य दर्शन, अष्टप्रकारी पूजा विगेरे करीश." इत्यादि संसारना सुखने अर्थे मानता करवी. अथवा—" हे प्रभु ! मारा विवाह विगेरे दुर्लभ कार्य तमेज सिद्ध कर्या छे. हवे मारा पुत्रने तथा वहुने कुशळ राखजो." इत्यादि विविध प्रकारे स्तुति करवी ते लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व जाणवुं. ए प्रमाणे मानता तथा स्तुति करीने घणा लोको अविकारी, अविनाशी अने वीतराग प्रभुने दूषण आपे छे. अरे ! जे मूढ प्राणीना चित्तमां मिथ्यात्व व्यापी रह्युं छे तेने धिक्कार छे ! कह्युं छे के—लोकोत्तर देवमां लौकिक देवनां जे चिन्हो छे तेनुं आरोपण करवुं ते मिथ्यात्व छे. अर्थात् 'आपनी इच्छा प्रमाणेज सुख दुःख प्राप्त थाय छे, तमेज सुखदुःखना आपनारा छो.' इत्यादि लौकिक देवनी जेम लोकोत्तर देव पासे कहेवुं ते पण मिथ्यात्व छे. आ प्रमाणे लोकोत्तर देवगत नामनुं त्रीजुं मिथ्यात्व जाणवुं, अने पासथ्यादिकने गुरुबुद्धिथी वंदनादिक करवुं, ते लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व जाणवुं; अथवा लोकोत्तर देवगत मिथ्यात्व एवी रीते जाणवुं के—परतीर्थिकोए ग्रहण करेली जिनप्रतिमाने वंदन, पूजन आदि करवुं, रात्रिने समये श्राविकाओए जिन मंदिरमां जवुं, साधुओए जिन मंदिरमां निवास करवो अथवा रात्रिए प्रभुनी स्नात्रादिक पूजा करवी, अथवा तंबोलादिकनुं भक्षण करवुं, जळक्रीडा करवी, हींचका खावा, नाटकादिक जोवुं; विगेरे लौकिक देवना मंदिरनी जेम जिनेश्वरना मंदिरमां पण तेवी रीते करवुं. ते सर्व लोकोत्तरदेवगत मिथ्यात्व कहेवाय छे. लोकोत्तर गुरुगत मिथ्यात्व पण पक्षांतरे पूर्वाचार्योए कह्युं छे के—

जे लोगुत्तमलिंगा, लिंगिअदेहावि पुप्फतंबोलं ।
आहाकम्मं सव्वं, जलं फलं चेव सच्चित्तं ॥ १ ॥
भुंजंति थीपसंगं, वव्वहारं गंथसंगहं भूसं ।
एगागित्तं भमणं, सच्छंदविहिअं वयणं ॥ २ ॥
चेइअ मढइ वासं, वसहीसु निच्चमेव संगाणं ।
गेअं निअवरणाण अच्चावणमवि कणयकुसुमेहिं ॥ ३ ॥

तिविहं तिविहेणय, मिच्छत्तं वज्जियं जहिं दूरं ।
निच्छयउ ते सड्ढा, अन्ने भए नामउ चेव ॥ ४ ॥

भावार्थ—" जे लोकोत्तर लिंगवाळा (साधु) यतिवेष धारण कर्या छतां पुष्प, तंबोल, आधाकर्मी सर्व वस्तु तथा सचित्त जळ अने फळ खाय तथा स्त्रीप्रसंग करे, व्यापार करे, द्रव्यादिकनी गांठडीओ बांधे, वींटी विगेरे आभूषण धारण करे, एकला भमे, स्वच्छंदपणे वर्त्ते, मरजी प्रमाणे वचन बोले, चैत्यमां मठवासीनी जेम रहे, वसतीमां हंमेशां स्थिति करे, गायनमां पोतानां वखाण गवरावे अने सोनैया वडे तथा पुष्पो वडे पोतानी पूजा करावे. आ प्रमाणे मिथ्याभावमां वर्तता वेषधारी साधुओने जे त्रिविधे त्रिविधे दूरथीज वर्जेछे, तेओ निश्चे खरेखरा श्रावक छे; ते शिवाय बीजा तो मात्र नामनाज श्रावक छे. "

हवे त्रण प्रकारे मिथ्यात्व ते मन, वचन ने कायाथी जाणवुं. ते विषे पूर्वाचार्योए कह्युं छे के—

एयं अणंतरुत्तं, मिच्छं मनसा न चिंतइ करेमि ।
सयमेव नो करेउ, अन्नेण कए न सुठ्ठु कयं ॥ १ ॥
एवं वाया न भणइ, करेमि अन्नं च न भणइ करेह ।
अन्नकयं न पसंसइ, न कुणइ सयमेव काएण ॥२॥
करसन्न भमुहखेवाइहिं, न य कारवेइ अन्नेणं ।
अन्नयकयं न पसंसइ, अन्नेण कए न सुठ्ठु कयं ॥ ३ ॥

भावार्थ—" आ अनंतर कही गयेला मिथ्यात्वने माटे मनमां चिंतवे नहीं के–हुं पोतेज आ काम करुं, अथवा कोइ पासे करावुं, अथवा कोइए कर्युं होय ते सारुं कर्युं, एम अनुमोदन आपुंः एज प्रमाणे वचन वडे एवुं बोले नहीं के ' हुं आ कार्य करुं. ' बीजाने कहे नहीं के 'तुं कर' अने कोइए कर्युं होय तो ' तेणे सारुं कर्युं' एम बोली ते तेनी प्रशंसा करे नहीं. तेज प्रमाणे कायाए करीने पोते करे नहीं, हाथनी संज्ञा तथा भमरनुं हलाववुं–तेणे करीने बीजा पासे करावे नहीं, अने बीजाए करेलुं होय तो तेने ' आणे ठीक कर्युं' एम संज्ञादिकथी प्रशंसा करे नहीं." (आथी विपरीत वर्त्ते तो मिथ्यात्व जाणवुं).

मिथ्यात्वना दश प्रकार कह्या छे. ते आ प्रमाणे—अधर्ममा धर्म संज्ञा, धर्ममां अधर्म संज्ञा, उन्मार्गमां मार्ग संज्ञा, मार्गमां उन्मार्ग संज्ञा, अजीवमां जीव संज्ञा, जीवमां अजीव संज्ञा, कुसाधुमां सुसाधु संज्ञा, सुसाधुमां कुसाधु संज्ञा, अमुक्तमां मुक्त संज्ञा अने मुक्तमां अमुक्त संज्ञा. तेनी समजुती नीचे प्रमाणे—

(१) शुभ लक्षण रहित होवाथी वेदवाक्य अनागम छे, तेमां धर्म एटले आगम बुद्धि राखवी, ते अधर्ममां धर्म संज्ञा जाणवी.

(२) सर्व कर्मनो नाश करनार अने शुद्ध सम्यक्त्व पमाडनार आप्तवचनमां अनागमनी (अधर्मनी) बुद्धि राखवी. अथवा एम बोलवुं के " सर्व पुरुषो अमारी जेवाज मनुष्यो होवाथी रागादिक सहितज होय छे, कोइ सर्वज्ञ नथी. इत्यादि अनुमान प्रमाणथी कोइ पण आप्त नथी." एवी कुयुक्ति करीने आप्तप्रणीत आगममां अनागम बुद्धि राखवी, ते धर्ममां अधर्म संज्ञा जाणवी.

(३) मोक्षपुरीनो अमार्ग एटले वस्तुतत्त्वनी अपेक्षाए विपरीत श्रद्धानयुक्त ज्ञान अने क्रिया करवी, ते उन्मार्ग कहेवाय छे. तेमां मार्ग बुद्धि राखवी, ते उन्मार्गमां मार्ग संज्ञा जाणवी.

(४) मोक्षपुरीना मार्गमां एटले शुद्ध श्रद्धाथी ज्ञान अने क्रिया करवामां उन्मार्गपणानी बुद्धि राखवी, ते मार्गमां उन्मार्ग संज्ञा जाणवी.

(५) अजीवने विषे एटले आकाश, परमाणु विगेरेमां जीव छे एम मानवुं, आ शरीरज आत्मा छे एम मानवुं अथवा पृथ्वी, जळ, वायु, अग्नि, यजमान, आकाश, चंद्र अने सूर्य ए आठ महादेवनी मूर्तिओ छे इत्यादि मानवुं, ते अजीवमां जीव संज्ञा जाणवी.

(६) पृथ्वी आदि जीवोमां घडानी जेम उच्छ्वास विगेरे जीवना धर्म जणाता नथी, माटे ते पृथ्वी आदि अजीव छे. एवी युक्ति वडे जीवमां अजीव बुद्धि राखवी, ते जीवमां अजीव संज्ञा जाणवी.

(७) छ काय जीवनी हिंसामां प्रवर्त्तेला असाधुमां साधु बुद्धि राखवी, ते असाधुमां साधु संज्ञा जाणवी.

(८) "आ पुत्र रहित होवाथी तथा स्नानादिक नहीं करवाथी तेमनी सद्गति नथी" इत्यादि कुतर्क करीने पंच महाव्रतादिक पालन करनारा सुसाधुमां

असाधु बुद्धि राखवी, ते साधुमां असाधु संज्ञा जाणवी.

(९) कर्मवाळा अने लौकिक व्यवहारमां प्रवृत्त थयेला असुक्त पुरुषोने मुक्त मानवा, एटले के अणिमादि अष्ट सिद्धिना ऐश्वर्यने पामेला कुशळ पुरुषो सदा आनंदमां वर्ते छे, तेओज निवृत्तात्मा (मुक्त) छे, अने तेओज दुस्तर संसारने तरी गयेला छे इत्यादि मानवुं, ते अमुक्तमां मुक्त संज्ञा जाणवी.

(१०) समग्र कर्मना विकारथी रहित, तथा अनंत ज्ञान, दर्शन, चारित्र अने वीर्यवाळा मुक्त पुरुषोने अमुक्त मानवा, ते मुक्तमां अमुक्त संज्ञा जाणवी.

हवे मिथ्यात्वना पांच प्रकार कहे छे—

(१) पोताना मतनेज प्रमाण रूप माननारा कुदृष्टिवासित माणसोने जे मिथ्यात्व होय छे, ते अभिग्रहिक मिथ्यात्व जाणवुं.

(२) सर्व देवने अने सर्व गुरुओने नमस्कार करवो, सर्व धर्म करवा, एवी रीते धर्म अधर्मनी ओळखाण विना सर्व धर्मने सरखा मानवा, ते अनभिग्रहिक मिथ्यात्व जाणवुं.

(३) श्रीमत अरिहंतना मतनुं कोइ यथास्थितपणे वर्णन करे, तेना परना मत्सरने लीधे तेनुं जाणी बुजीने खंडन करवुं ते अभिनिवेशिक मिथ्यात्व जाणवुं; अथवा अजाणतां प्रथम उत्सूत्र प्ररूपणा थइ गइ, पछी खरुं तत्त्व जाण्या छतां पण पोतानाज मतने आग्रहथी स्थापन कर्या करे, अथवा अजाणपणे सूत्रना भावार्थनी उत्सूत्र प्ररूपणा करे, पछी तेने कोइ समजावीने निवारे, तो पण पोताना आग्रहने मूके नहीं, ते पण अभिनिवेशिक मिथ्यात्व जाणवुं.

(४) सूत्रमां, अर्थमां के सूत्रार्थमां कांइ शंका थाय, पण कोइने तेनुं समाधान पूछे नहीं, ते सांशयिक मिथ्यात्व जाणवुं.

(५) अने जेओ कांइ पण तत्त्वातत्त्वनो विचार जाणता नथी तेवा एकेंद्रियादि जीवोने अज्ञानरूप अनाभोगिक मिथ्यात्व जाणवुं.

आ प्रमाणे मिथ्यात्वना बहु भेद कहेला छे. विधिकौमुदीमां तोंतेर भेद कह्या छे, कोइ ठेकाणे एकवीश भेद पण कह्या छे. विगेरे अनेक भेदो ते ते ग्रंथोमांथी जाणी लेवा. हवे ए मिथ्यात्वनी स्थिति केटली छे ते कहे छे—

अभव्याश्रितमिथ्यात्वेऽनाद्यनंता स्थितिर्भवेत् ।
सा भव्याश्रितमिथ्यात्वेऽनादिसांता पुनर्मता ॥ १ ॥

भावार्थ—" अभव्य प्राणीने आश्रयीने मिथ्यात्वनी स्थिति अनादि अनंत छे, अने भव्य प्राणीने आश्रयीने अनादि सांत स्थिति मानेली छे".

आ श्लोकना उपलक्षणथी मिथ्यात्वनी स्थितिना काळनो विचार करतां चार भांगा थाय छे. अनादि अनंत, अनादि सांत, सादि अनंत अने सादि सांत. तेमां अभव्य प्राणीओने विपरीत रुचि रूप मिथ्यात्व अनादि अनंत होय छे. केमके अनादि काळथी मिथ्यात्व लागेलुं छे अने तेनो हवे पछी कोइ पण काळे अंत आववानो नथी, भव्य प्राणीओने मिथ्यात्व अनादि सांत होय छे. केमके भव्य प्राणी पण अनादि काळथी मिथ्यादृष्टि होय छे, पण ते भव्य होवाथी कोइ पण वखत समकित पामे छे; एटले ते वखत मिथ्यात्वनो अंत थशे, तेथी तेनुं मिथ्यात्व अनादि सांत छे. वळी अनादि मिथ्यादृष्टि भव्य जीव समकित पामीने पछी कोइ पण कारणथी फरीने मिथ्यात्व पामे, तो तेने मिथ्यात्व सादि थयुं. आ[1] मिथ्यात्वमां जघन्यथी अंतर्मुहूर्त अने उत्कृष्टो आशातनादिक घणा पापने लीधे अर्ध पुद्गल परावर्त सुधी रहीने ज्यारे फरीथी सम्यक्त्व पामे त्यारे ते मिथ्यात्व सांत थयुं, तेने सादि सांत जाणवुं. आ चार भांगामां सादि अनंत नामनो त्रीजो भांगो जे छे ते कोइ पण जीवने लागु पडतो नथी, तेथी शून्य जाणवो. केमके सादि मिथ्यात्व भव्य प्राणीनेज होइ शके छे, एटले ते मिथ्यात्व अनंत थइ शके नहीं. अर्ध पुद्गल परावर्त्तमां तो तेनो अंत थायज.

आ प्रसंगे भव्य तथा अभव्यनुं स्वरूप जाणवानी इच्छाथी शिष्ये प्रश्न करतां गुरु कहे छे—जेनी पर्याय वडे मुक्ति थशे, एटले जे मुक्तिने योग्य छे ते भव्य, अवश्य मुक्तिए जाय तेज भव्य एम नहीं. कारण के केटलाक भव्य प्राणीओ पण सिद्धिने पामता नथी, माटेज "सिद्धिने योग्य ते भव्य" एम कह्युं छे. वळी "भव्वा वि न सिज्झिसंति केइ" "केटलाक भव्य प्राणीओ पण सिद्धिने पामशे नहीं" एवुं वचन छे; अने भव्यथी जे विपरीत एटले जेओ कदापि पण संसारसमुद्रनो पार पाम्या नथी, पामता नथी अने पामशे पण नहीं, ते अभव्य जाणवा. अहीं भव्य तथा अभव्यनुं लक्षण जाणवा माटे वृद्धो एम कहे छे के—जे कोइ प्राणी संसारथी

---

१ समकित पाम्या पछी मिथ्यात्व थयेलुं.

विपक्षभूत मोक्षने माने छे अने मोक्षनी प्राप्ति माटे अभिलाष राखीने मनमां एवुं विचारे छे के—" हुं भव्य हइश के अभव्य ? जो भव्य होउं तो सारुं, पण कदाच अभव्य होउं तो मने धिक्कार छे. " आवो विचार कोइ पण वखत करे ते प्राणी भव्य जाणवो; अने जे प्राणीने कोइ पण वखत आवो विचार थयो न होय, थतो न होय तथा थवानो पण नहीं ते प्राणी अभव्य जाणवो. श्री आचारांग सूत्रमां कह्युं छे के " अभव्यस्य हि भव्याभव्यशंकाया अभावः " " अभव्य प्राणीने हुं भव्य छुं के अभव्य ? एवी शंका पण थती नथी. " आ प्रसंगे महा पापी पालक नामना अभव्यनुं दृष्टांत संक्षेपथी कहीए छीए—

श्रावस्ति नगरीना राजाना पुत्र स्कंदके श्री मुनिसुव्रत स्वामी पासे श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो हतो. एक दिवसे कुंभकार नामना नगरथी पालक नामनो पुरोहित त्यां आव्यो. तेनी साथे राजसभामां विवाद करतां स्कंदके तेनो पराजय कर्यो. त्यार बाद केटलोक वखत गया पछी स्कंदकने वैराग्य थवाथी तेणे श्री जिनेश्वर पासे दीक्षा लीधी.एकदा तेणे प्रभुने कह्युं के "हे स्वामी! जो आपनी आज्ञा होय तो हुं मारी बेनना देशमां जाउं. " प्रभुए कह्युं के—" जो तमे त्यां जशो तो मोटो उपसर्ग थशे, अने तमारा विना बीजा सर्वे आराधक थशे." त्यारे स्कंदकाचार्ये कह्युं के—साधुने जे उपसर्ग छे तेज मोक्षनुं साधन छे. तेथी तपस्विओने कांइ पण उपसर्गज नथी. मोक्षना आनंदने इच्छनारा मुनिओने जे कांइ दुःख आवे ते मोटा आनंदने माटेज छे. " इत्यादि कहीने स्कंदक आचार्य पांचसे साधुओ सहित विहार करतां करतां कुंभकार नगरना उद्यानमां आव्या. ते समाचार जाणीने पालके पूर्वना वैरने लीधे ते उद्याननी धूळमां गुप्त रीते शस्त्रो दाटीने राजाने कह्युं के—" हे राजा ! आ साधुओ तमने मारीने तमारुं राज्य लेवाने आव्या छे. " एम कही राजानी खात्री माटे दाटेलां शस्त्रो बताव्यां; तेथी क्रोध पामीने राजाए ते साधुओने मारवानी आज्ञा आपी. पछी राजानो हुकम मेळवीने पालक ते साधुओने प लवा माटे मनुष्यने पीलवानी घाणी पासे लइ गयो. तेमां चारसो नवाणुं साधुओने पील्या पछी स्कंदक आचार्ये तेने कह्युं के—" तुं आ बाळक साधुने बाकीमां राखीने प्रथम मने पील. " तोपण ते पालके आचार्यने वधारे दुःखी करवाना हेतुथी प्रथम ते बाळकनेज पील्यो. ते सर्वेने सूरिए निर्यामणा करावीने मुक्ति पमाडया. पछी सूरिए ते पालक सहित आखा देशने भस्म करवानुं नियाणुं कर्युं त्यांथी काळधर्म पामीने आचार्य वह्निकुमार देवता थया. तेणे पोतानुं वेर

लेवा माटे त्यां आवीने पालक सहित आखा देशने बाळी जस्म कर्यो. ते स्थान आजे पण दंमकारण्यना नामथी ओळखाय छे.

ते साधुओने पीलती वखते "हुं पहेलो, हुं पहेलो" एम बोलतां तेओ काळनी सन्मुख गया परंतु जरा पण खेद पाम्या नही, तेमज अनेक प्रकारनी लब्धिवाळा हता तोपण अंतःकरणमां लेश मात्र क्रोध कर्यो नहीं, "तेथी धन्य छे तेओना वीतरागीपणाने!"

"आ महा पापी पालकने अनादि अनंत जांगे मिथ्यात्व हतुं. ते मरीने सातमी नरके गयो. जे लोको मिथ्यात्व रूपी मदिरानुं पान करता नथी तेओ मोक्ष रूपी वधूने पामे छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंजस्य
त्रिपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५३ ॥

व्याख्यान २५४ मुं.

मिथ्यात्वना दुस्त्यजपणा विषे.

अनंतज्ञानसंपूर्णदर्शनचरणान्वितम् ।
गुरुं प्राप्य न मिथ्यात्वं, त्यजंति मूढबुद्धयः ॥ १ ॥

जावार्थ—"अनंत अने संपूर्ण ज्ञान, दर्शन तथा चारित्रथी युक्त एवा गुरुने पामीने पण मूढबुद्धिवाळा जीवो मिथ्यात्वने गेमता नथी." ते उपर दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

मंखलीपुत्र गोसाळानुं दृष्टांत.

एकदा श्री वीरजगवान श्रावस्ति नगरीना उद्यानमां समवसर्या हता, ते वखते अत्यंत अजिमान धरावतो गोशाळो वाद करवा माटे त्यां आवे छे, एम ज्ञानवमे जाणीने प्रजुए गौतम विगेरे मुनिओने कह्युं के—"अहीं मंखलीपुत्र (गोशाळो) आ-

वे छे, माटे तमारे तेनी दृष्टिए रहेवुं नहीं." आ प्रमाणे भगवानना आदेश थतां सुनक्षत्र ने सर्वानुभूति मुनि विना बीजा सर्व दूर गया. तेवामां ते गोशाळो आवीने जिनेश्वरने कहेवा लाग्यो के—"हुं सर्वज्ञ छुं. अमारा शास्त्रमां कर्मना पांच लाख साठ हजार छसो अने त्रण भेद छे. तेटलां कर्मनो क्षय थाय, त्यारे ते जीव सिद्धि मेळवे छे. वळी हे काश्यपगोत्री! तमारो शिष्य एक गोशाळा नामनो हतो ते तो मरी गयो छे, अने हुं तो अति बुद्धिमान होवाथी सात शरीरमां परावर्तन करीने आ शरीरमां आव्यो छुं. प्रथम हुं राजगृह नगरमां उदायी राजा हतो, ते शरीरनो त्याग करीने एणजग ना देहमां बावीश वर्ष सुधी रह्यो. त्यार पछी ते शरीर मूकीने दंडपुर नगरमां मल्लरामना देहमां एकवीश वर्ष रह्यो, त्यांथी चंपापुरीमां मंडितना देहमां वीश वर्ष रह्यो, ते शरीर पण मूकीने वाराणशी नगरीमां राहुना शरीरमां ओगणीश वर्ष रह्यो, त्यांथी आलंभिका नगरीमां भारदना शरीरमां अढार वर्ष रह्यो, तेनो पण त्याग करीने विशाला नगरीमां अर्जुनना शरीरमां सत्तर वर्ष रह्यो, तेनुं शरीर पण मूकीने श्रावस्ति नगरीमां मंखलीपुत्रनुं शरीर परीषहने सहन करवामां समर्थ जोइने तेमां आव्यो छुं, ते सोळ वर्ष सुधी रहेवानो छुं. हे काश्यपगोत्री! आ प्रमाणे एकसो तेत्रीश वर्षमां सात शरीर बदलवा जोइए एवुं अमारा शास्त्रमां कहेलुं छे." आ प्रकारे गोशाळानां वचन सांभळी प्रभु बोल्या के—"जेम कोइ चोर पोताना शरीरने छुपाववानी इच्छाथी ऊनना एक तंतुए करीने अथवा रुना पुंभडाए करीने अथवा एक तृणे करीने पोताना शरीरने आच्छादन करे तेवी रीते तुं फोगट तारा आत्माने शा माटे छुपावे छे?" प्रभुनां आवां वचन सांभळीने गोशाळो क्रोध करी वीतराग प्रभुनी अयोग्य वचनो बोलीने आशातना करवा लाग्यो. ते सांभळी नहीं शकवाथी भगवानना पूर्णभक्त सर्वानुभूति मुनिए गोशाळाने कह्युं के—"हे मंखलीपुत्र! शामाटे जुठुं बोले छे? अने तेजोलेश्यादिक विद्याना आपनारा गुरुनी शामाटे आशातना करे छे?" ते सांभळीने अति क्रोध पामेला गोशाळाए सर्वानुभूति मुनिने तपना तेजथी (तेजोलेश्याथी) भस्मसात् करीने फरीथी स्वामीनी आशातना करवा मांडी. त्यारे प्रभुना शिष्य सुनक्षत्र मुनिए तेने कह्युं के—"अरे! त्रण भुवनना गुरुनी अवज्ञा केम करे छे? आवा आचरणथी तारी नरकगति थशे." ते सांभळीने गोशाळाने वधारे क्रोध चड्यो. तेथी तेजोलेश्या वडे ते साधुने पण बाळी दीधा, अने फरीथी प्रभुने अयोग्य वाक्य वडे निंदवा लाग्यो. त्यारे श्री जिने-

श्वर बोल्या के—" आवी कुबुद्धिथी अने मिथ्यात्वथी तुं आवा दुर्लभ मनुष्यजन्मने हीन गतिमां केम नांखे छे ? " ते सांभळीने पण तेने क्रोध चड्यो; तेथी तेणे सात आठ पगलां पाछा हठीने प्रभुना उपर पण तेजोलेश्या मूकी. परंतु तेजोले- श्या भगवाननी प्रदक्षिणा करीने पाछी फरी, अने गोशाळाना शरीरमां पेठी. ते वखते प्रभुना शरीरना बहारना देखावमां काळाश जोइने गोशाळाए भगवानने कह्युं के—" मारा तपना तेजथी छ मासमां तमारुं मृत्यु थशे. " त्यारे प्रभु बोल्या के—" हुं तो हजु सोळ वर्ष सुधी केवळी अवस्थाए विचरीश, परंतु तुं तो पित्तज्वरना व्या- धियी सात दिवसमांज छद्मस्थपणे मरण पामीश. " पछी प्रभुए गोतम आदि मुनि ओने बोलावीने कह्युं के "तमे धर्मवाक्यो वडे आने उपदेश आपो. " ते सांभळीने गौतमादि गणधरो तेने उपदेश आपवा लाग्या. परंतु ते तो उलटो तेथी कोप पामीने ते मुनिओने बाधा उपजाववानो उपाय चिंतववा लाग्यो; पण तेनी शक्तिनो नाश थइ गयेलो होवाथी ते सर्व प्रयत्नमां निष्फळ थयो. पछी तेना शरीरमां दाह थवाथी " अ- रे रे ! आ महापुरुषनुं वाक्य निष्फळ नहीं थाय " एम विचारतो, दीर्घ निसासा ना- खतो अने अरे रे आ शुं थयुं ! एम बोलतो त्यांथी नीकळ्यो. मार्गमां पृथ्वी पर पग पछाडतो ते शीतोपचारने माटे कुंभकारने घेर गयो, अने मद्यपान करीने तथा हाथमां आम्रफळ राखीने ते नृत्य करवा लाग्यो, ते वखते जिनेश्वरे सर्व साधुओने कह्युं के— " आ गोशाळाए मारा वधनिमित्ते जे तेजोलेश्या मुकी हती ते सोळ देश बाळी नांखे तेवी उग्र मूकी हती, परंतु ते तेनाज शरीरमां पेठी छे, तेनी वेदनाथी ते हाथमां शीत उपचार करे छे. "

हवे गोशाळाए भगवंतनां कहेलां वचनोथी पोतानुं मृत्यु नजीक जाणीने आ- जीविक मतवाळा पोताना भक्त श्रावकोने छेल्लो उपदेश आप्यो, अने पोताना शिष्यो- ने कह्युं के—" हुं मरण पामुं त्यारे मारा शरीरने सुगंधी जळ वडे स्नान करावी, गो- शीर्ष चंदन वडे विलेपन करी, अने हजार पुरुषोए वहन कराती शिबिकामां बेसाडीने श्रावस्ति नगरीनी दरेक बजारमां लइ जइ तमारे मोटा शब्दथी उद्घोषणा करवी के— "आ मंखलीपुत्र जिन नहीं छतां 'हुं जिन छुं' एम बोलनारो चरम तीर्थंकरनी आशातना करनारो, बे मुनिनो घात करनारो, तथा अनेक जीवोने मिथ्यात्वी बनावनारो ते पोतानीज तेजोलेश्याथी महात्मानां वचन वडे सातमी रात्रिए छद्मस्थपणे मरण पाम्यो छे. " आ प्रमाणे वारंवार बोलवुं. पछी जो तमे मारा शिष्य हो तो मारे भावे

पगे दोरडुं बांधीने त्रण वार मारा मुखमां थुंकीने श्रावस्ति नगरीनी बजारमां सर्वत्र मने घसडवो, अने त्यार पछी मारा देहनो संस्कार करवो." आवी रीते ते गोशाळो अंत्य अवस्थामां कांइक समकित पाम्यो, अने वीतरागनां वचन उपर विश्वासवाळो थयो. छेवटे पोताना सर्व शिष्य समक्ष अरिहंतनुं शरण करीने काळधर्म पाम्यो. पछी तेना शिष्योए पोतानुं महत्व तथा पूजा सत्कार विगेरेनी हानि थवाना भयथी गुरुनुं वचन पाळवा माटे पोतानाज उपाश्रयमां द्वार बंध करीने श्रावस्ति नगरीनो आळेख काढी पूर्वे कहेली सर्व क्रियाओ करी, अने त्यार पछी तेना देहनो संस्कार करवा तेने बहार काढ्यो एटले श्रावकोए अग्निसंस्कार कर्यो.

हवे श्रीवीरभगवान विहारना क्रमथी मेढक नामना नगरे पधार्या. त्यां तेमना शरीरने पित्तज्वरथी व्याप्त जोइने चारे वर्णना लोको बोलवा लाग्या के— "गोशाळाए मुकेली तेजोलेश्याथी शरीर दग्ध थवाने लीधे प्रभु छ महीने काळ करशे." ते वात सांभळी सिंह नामना भगवानना शिष्य के जे निरंतर छट्ठ तप करता हता, तथा सूर्य सन्मुख दृष्टि राखीने आतापना लेता हता तेमणे ते आतापनाने अंते विचार्युं के— मारा धर्मगुरु श्री जिनेश्वरने पित्तज्वर उत्पन्न थयो छे, तेथी जो ते छ महिनामां काळधर्म पामशे तो अन्य दर्शनीओ कहेशे के—"गोशाळानी तेजोलेश्याथी हणायेला महावीर छद्मस्थपणेज काळधर्म पाम्या." आ प्रमाणे तेनी भद्रक प्रकृति होवाथी तेणे विचारणा करी, अने तेना मनमां घणुं दुःख उत्पन्न थयुं. ते बहुज खेद करवा लाग्यो. पछी ते मालुककच्छ नामना निर्जन वनमां जइने मोटा शब्दथी रुदन करवा लाग्यो. ते जाणीने भगवाने स्थविर साधु मोकलीने तेने पोतानी पासे बोलाव्यो अने कह्युं के—"हे सिंह मुनि! तें तारा मनमां जे विकल्प कर्यो छे तेम थवानुं नथी. केमके देशे उणा सोळ वर्ष सुधी मारे केवळज्ञाननो पर्याय भोगववानो छे. तेथी तुं नगरमां जा अने रेवती नामनी श्राविकाए मारे माटे कोळानो पाक बनाव्यो छे ते तुं लावीश नहीं, केमके ते ग्रहण योग्य नथीः पण तेणेज घेर तेना अश्वने माटे बीजोरानो पाक बनाव्यो छे ते लइ आव." आ प्रमाणे भगवानना कहेवाथी सिंह मुनि रेवती श्राविकाने घेर गया.

रेवती श्राविका निर्विकार मुनिने आवतां जोइने अति हर्ष पामी अने आसन परथी उठी सात आठ पगलां सन्मुख जइ वंदना करीने बोली के "हे स्वामी! आप शा प्रयोजनथी अत्रे पधार्या छो ते कृपा करीने कहो." एटले सिंह मुनिए भगवा-

नतुं कहेलुं योग्य औषध माग्युं, अने अयोग्य औषधनो निषेध कर्यो. रेवतीए पोताना आत्माने सफल मानीने मागेलुं औषध वहोराव्युं. ते लइने मुनिए भगवंतना हाथमां आप्युं. भगवाने पण वीतरागपणाथीज उदरमां क्षेपव्युं. तेज क्षणे भगवानना व्याधि नाश पाम्यो. तेथी मुनिवर्गमां आनंद व्यापी रह्यो अने देवादिक पण हर्ष पाम्या. ते वखते रेवती श्राविका पण त्रिकालज्ञानी परमात्मानी स्तुति करती सती तीर्थंकरपदने योग्य अध्यवसायने धारण करती हवी.

हवे गौतम गणधरे श्री वीर प्रभुने नमस्कार करीने पूछ्युं के—" हे स्वामी! आपनो सर्वानुभूति शिष्य गोशाळानी तेजोलेश्याथी दग्ध थयो सतो कइ गतिने पाम्यो?" भगवान बोल्या के—" ते साधु सहस्रार नामना आठमा कल्पमां अढार सागरोपमना आयुष्यवाळो देव थयो छे. त्यांथी चवीने महाविदेह क्षेत्रमां मनुष्य थइ मोक्षगतिने पामशे." गौतमस्वामीए फरीथी पूछ्युं के—" हे भगवन्! आपनो शिष्य सुनक्षत्र मुनि कइ गतिने पाम्यो?" प्रभुए कह्युं के—" ते साधु आलोचना प्रतिक्रमण करीने अच्युत कल्पमां मोटा आयुष्यवाळो देवता थयो छे. त्यांथी चवीने महाविदेह क्षेत्रमां मनुष्य थइ सिद्धिपदने पामशे." फरीथी गणधरे पूछ्युं के— " हे प्रभु! मंखलीपुत्र कइ गति पाम्यो?" प्रभुए कह्युं के—" अंत्य समये कांइक श्रद्धा पामेलो ते बारमा देवलोकमां बावीश सागरोपमना आयुष्यवाळो देवता थयोछे."

हवे ग्रंथकार कहे छे के—

किंकरोति गुरुः प्राज्ञः, मिथ्यात्वमूढचेतसां ।
शिष्याणां पापरक्तानां, मंखलीपुत्रसादृशां ॥ १ ॥

भावार्थ—" पापकर्ममां रक्त अने मिथ्यात्व वडे मूढ चित्तवाळा गोशाळा जेवा शिष्योने ज्ञानी गुरु पण शुं करी शके?" गोशाळो जन्मथी आरंभीने मिथ्यात्वी हतो परंतु पछीथी तेने वीतरागनुं वचन सत्य जाण्युं हतुं, अने तेथीज तेणे " हुं जिन नथी, महावीरज जिन छे" एवी रीते पोताना शिष्योने कह्युं हतुं. प्रथम पण गोशाळो " आपनी दीक्षा मने हो" एम पोतानी इच्छाएज कहीने भगवाननो शिष्य थयो हतो. भगवाने पण पोतानो शिष्य जाणीने तेने उपदेश कर्यो हतो परंतु ते तेणे मान्यो नहोतो, तोपण छेवटे प्रभुए मर्मवचनथी तेने रुडी बुद्धि आपी हती.

"गोशाळा जेवा क्रूरना क्रोधीपणाने कदापि पण सं्भार्या शिवाय उलटी तेने शुद्ध बुद्धि आपी, माटे हे प्रभु ! तारी वीतरागताने धन्य छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य
चतुष्पंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५४ ॥

व्याख्यान २५५ मुं.

भगवाननी आशातनानां फळ विषे.

प्रभोराशातनां तन्वन्नल्पधीर्मंखलीसुतः ।
निजात्मानं भवौघेषु, न्यधादहो कुतर्कता ॥

भावार्थ"–प्रभुनी आशातना करीने तुच्छ बुद्धिवाळा मंखलीपुत्रे पोतानो आत्मा संसारसमुद्रमां नांख्यो, ए केवुं कुतर्कपणुं !"

श्री गौतम गणधरे त्रण भुवनना शरण रूप अने वांछित आपनारा श्री महावीर स्वामीने पूछ्युं के "हे प्रभु ! मंखलीपुत्रनुं देवलोकमां गया पछीनुं भावी चरित्र कहो." त्यारे भगवान बोल्या के आ भरतक्षेत्रमां आवेला शतद्वार नामना नगरमां सुमति नामे राजा थशे. तेने सुभद्रा नामनी राणी थशे, तेना उदरमां बारमा देवलोकथी च्यवीने ते गोशाळो महापद्म नामे पुत्र थशे. ते देवसेन तथा विमलवाहनना नामथी पण प्रसिद्ध थशे. तेने एक वखत चार दांतवाळो श्वेत हाथी प्राप्त थशे. त्यार पछी तेने राज्य गादी मळशे, एटले ते राजा मिथ्यात्वी होवाथी अनेक साधुओनी कदर्थना करशे. ते जोइने तेना प्रधानो तेने विनय पूर्वक कहेशे के "हे राजा ! प्रजानाथ थइने आवुं कृत्य करोछो ते योग्य नथी." तेथी ते राजा कांइक पापकर्मथी पाछो हठशे. ते एक दिवस उद्याननी शोभा जोवा जशे, त्यां एक स्थाने तीर्थंकरना शिष्यना शिष्य त्रण ज्ञानने धारण करनारा तथा निरंतर छठ्ठ तप करनारा सुमंगल नामना साधुने आतापना करतां देखशे. तेने जोइने ते विमलवाहन राजाने क्रोध उत्पन्न थशे, एटले सिंहनी जेम वांकी दृष्टिथी ते मुनिने ध्यानमां तत्पर रहेला जोशे. पछी तत्काल घोडाने त्व-

राथी हांकीने पोतानो रथ ते साधु उपर चलावशे, एटले साधु पमी जशे, पाछा उन्ना थशे, एटले फरीथी पण एज प्रमाणे रथ हांकशे. बीजी वार उन्ना थया पछी ते साधु मनमां विचार करशे के " अहो ! आ जीव महानिर्दय केम जणाय छे ? " एम विचारीने अवधिज्ञानथी जोतां तेने गोशाळानो जीव जाणीने कहेशे के " हे महापद्म ! आजथी त्रीजे जवे तुं गोशाळो हतो ते वखते तें तारी तेजोलेश्याथी श्री महावीर जगवानना सर्वानुनूति तथा सुनक्षत्र नामना बे शिष्योने दग्ध करी दीधा हता. परंतु ते साधुओ क्षमा धारण करवामां महा समर्थ हता. केमके इंद्रादिक देवोनुं सामर्थ्य पण तेनी पासे कुंथुवा जेवुं हतुं, तो तारा जेवानी तो शी गणत्री ! परंतु तेमने धन्य छे के तओए तारो करेलो प्राणांत उपसर्ग सहन कर्यो, पण नेत्रना प्रांतजागमां पण क्रोधनो लेश सरखो लाव्या नहि; तेमज समग्र संसारी जीवो करतां पण अनंत बळवाळा श्री वीर परमात्मा उपर तें तेजोलेश्या मूकी तो पण तेमणे जरा पण क्रोध कर्यो नहि अने उलटो तने प्रतिबोध आप्यो, परंतु तुं बोध पाम्यो नहि. हुं तो सुमंगळ छुं, पूर्वना साधु जेवो क्षमावान नथी ; तेथी तुं मने वधारे दुःख आपीश तो हुं तपना तेज वमे रथ, घोमा अने सारथि सहित तने जस्मसात् करी नांखीश. " आ प्रमाणे ते साधुए कह्या छतां ते राजा त्रीजीवार तेना पर रथ चलावी ते मुनिने पृथ्वी पर पामी देशे. ते वखते मुनि क्रोधथी तैजस् समुद्घात करीने सात आठ पगलां पाछा हठी तेजोलेश्यावमे रथ, घोमा अने सारथि सहित विमलवाहन राजाने जस्मीनूत करी नांखशे. त्यार पछी ते साधु अनेक प्रकारनां छठ, अठ्ठम आदि तप सहित घणां वर्ष सुधी चारित्र पाळीने अंते एक मासनुं अनशन करी सर्व पाप आलोइ पमिक्कमीने सर्वार्थसिद्ध विमानमां देवपणे उत्पन्न थशे.

विमलवाहन राजा मरीने सातमी नरके तेत्रीश सागरोपमना उत्कृष्ट आयुष्यवाळो नारकी थशे. त्यांथी नीकळीने मत्स्ययोनिमां उत्पन्न थशे. त्यांथी मरीने फरीथी सातमी नरकमां जशे. पाछो मत्स्ययोनिमां उत्पन्न थशे. त्यां घणुं दुःख जोगवीने छठी नरकमां उत्कृष्ट आयुष्यवाळो नारकी थशे. त्यांथी नीकळी स्त्रीपणुं पामीने फरीथी छठी नरकमां उत्पन्न थशे. त्यांथी नीकळीने फरीथी स्त्रीपणुं पामी घणी कदर्थना पामशे. त्यांथी पांचमी नरकमां जइ अत्यंत दुःख पामी उरःपरिसर्पमां उत्पन्न थशे. त्यां वध बंधन आदि अनेक कष्ट पामी फरीथी पांचमी नरके जशे. त्यांथी नीकळी उरःपरिसर्प थइ चोथी नरके जशे. त्यांथी नीकळी सिंहयोनिमां उत्पन्न थइने फरीथी चोथी

नरके जइ पाछो सिंहयोनिमां उत्पन्न थशे. त्यांथी त्रीजी नरकमां जइ दुःख भोगवीने पछी पक्षीमां उत्पन्न थशे. त्यांथी फरीने त्रीजी नरकमां जइने पाछो पक्षीना भवमां आवशे. त्यांथी मरीने बीजी नरकमां उत्पन्न थशे. त्यांथी नीकळी भुजपरिसर्प थइने फरी बीजी नरके उत्पन्न थशे. त्यांथी नीकळी फरीथी भुजपरिसर्पमां उत्पन्न थइ प्रथम नरकमां दुःख भोगवशे. त्यांथी नीकळी असंज्ञि पंचेंद्रियमां उत्पन्न थइने फरीथी प्रथम नरकमां जशे ए प्रमाणे उपर कहेला क्रमवडे असंज्ञि विगेरे रत्नप्रभा (प्रथम) नरक विगेरेमां उत्पन्न थइ शके छे. तेना क्रम विषे कह्युं छे के-—

असन्नी सरिसीव पक्खी, सीह उरग त्थी जंति जा छट्ठी।

कमसो उक्कोसेण, सत्तमी पुढवी मणुअ मच्छा ॥

भावार्थ—" असंज्ञि, भुजपरिसर्प, पक्षी, सिंह, उरपरिसर्प अने स्त्री—ए जीवो अनुक्रमे पहेलीथी छठ्ठी नरक सुधी उत्पन्न थइ शके छे, अर्थात् असंज्ञि उत्कृष्टा पहेली नरके जाय, भुजपरिसर्प उत्कृष्टा बीजी नरके जाय, इत्यादि. तथा मनुष्य अने मत्स्य उत्कृष्टा सातमी नरक सुधी जइ शके छे. "

त्यार पछी ते चामाचीडीया, वडवागुली विगेरे चर्मज पक्षीमां उत्पन्न थशे. त्यांथी राजहंस विगेरे लोमज पक्षीमां तथा भुजपरिसर्पमां हजारो भव करशे. त्यार पछी अजगर, अलसीया विगेरे उरःपरिसर्पमां हजारो भव करशे. अलसीयानो जीव गाम नगर अने चक्रवर्तीना आखा सैन्यनो पण नाश करे तेवडो मोटो थाय छे. ते घोडानी लाद विगेरेमां उत्पन्न थाय छे. ते जीव पृथ्वीमां अंगुलना असंख्यातमा भागथी आरंभीने उत्कृष्टो बार योजन जेटलो मोटो थाय छे. ते संमूर्छिम अने मिथ्यात्वी होय छे. ते ज्यारे पोताना शरीरनुं पासुं फेरवे छे त्यारे पृथ्वीमां मोटो खाडो पडी जाय छे, तेथी तेना उपर वसेलुं सैन्य तथा गाम विगेरे तेमां पडीने नाश पामे छे. ते पर्याप्तो थइने अंतर्मुहूर्तना आयुषे विनाश पामे छे. केटलाएक आ अलसीयाने बेइंद्रिय पण कहे छे, परंतु अत्रे तो भगवती सूत्रने अनुसारे पंचेंद्रिय कहेलो छे.

त्यार पछी ते गोशाळानो जीव एक खरीवाळा, बे खरीवाळा, गेंडा, हस्ती तथा नखवाळा (सिंह विगेरे) आदि जीवोमां सेंकडो अने हजारो भव करशे. त्यारपछी जळचरमां, चतुरिंद्रियमां, तेइंद्रियमां, बेइंद्रियमां, वनस्पतिकायमां, वायुकायमां, तेजस्कायमां, अप्पकायमां अने पृथ्वीकाय विगेरे सर्व जातिमां लाखो वखत उत्पन्न

थशे, त्यारपछी राजगृह नगरमां जघन्य, मध्यम अने उत्कृष्ट एवा वेश्याना त्रण भव करशे. त्यारपछी ब्राह्मणनी पुत्री थशे. तेना लग्न मोटा ओछवथी तेना मातापिता करशे. अनुक्रमे ते तेने सासरे जइने गर्भवती थशे. त्यांथी पोताना पिताने घेर जवा नीकळशे. तेने अशुभ शुकनो थशे. प्रयाण करतां रस्तामां रात्रिना समये दावानळनी ज्वाळाथी पीडा पामशे. त्यां बीजुं कोइ शरण नहि मळवाथी तेमज नासवा भागवानुं स्थान पण नहि मळवाथी अत्यंत विलाप करती सती भस्मसात् थइ जशे. पूर्वे गोशाळाए अनेक मुनिओनां अंतःकरणो बाळी दीधां हतां, ते कर्मनो अहीं उदय थशे. जीव जे जे कर्म करे छे ते पोते तो विसरी जाय छे, पण समये समये करेलां कर्म ते जीवने विसरी जतां नथी. जीव गमे त्यां रह्यो होय, पण तेने घसडीने कर्म तेने योग्य स्थाने लइ जाय छे.

त्यार पछी ते अग्निकुमार देवपणे उत्पन्न थशे. त्यांथी मनुष्यपणुं पामी साधुना संगथी समकित पामीने चारित्र ग्रहण करशे. ते भवमां चारित्रनी विराधना करशे, तेथी मरीने दक्षिण तरफनी असुरकुमार निकायमां देवपणे उत्पन्न थशे. जो चारित्रनी विराधना करी न होय तो साधुनी उत्पत्ति वैमानिकमांज थाय छे. पछी त्यांथी नीकळीने मनुष्यपणुं पामशे. त्यांथी दक्षिण बाजुना नागकुमारमां उत्पन्न थशे. पाछो ते मनुष्यभव पामशे त्यांथी मरीने दक्षिण बाजुमां सुवर्णकुमार देव थशे. त्यांथी मनुष्यभव पामी दक्षिण बाजुए स्तनितकुमार निकायमां उपजशे. त्यांथी मनुष्यभव पामी चारित्र लेशे. ते भवमां पण संयमनी विराधना करवाथी ज्योतिषी देवता थशे. त्यांथी मनुष्य थइ संयम पाळीने प्रथम देवलोकमां देवांगना थशे ; केमके ते भवमां संयमनी आराधना करशे. आराधना एटले जे समये चारित्र ग्रहण कर्युं होय त्यारथी आरंभीने मरण पर्यंत अतिचार रहित तेनुं पालन करवुं ते. त्यांथी मनुष्यपणुं पामीने त्रीजा देवलोकमां देवता थशे, त्यांथी अनुक्रमे एक एक भव मनुष्यनो करीने पांचमा, सातमा, नवमा अने अगियारमा देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थशे. त्यांथी मनुष्यभव पामीने तथा चारित्रनुं संपूर्ण प्रतिपालन करीने सर्वार्थसिद्ध विमानमां देवपणे उत्पन्न थशे. त्यांथी च्यवीने महाविदेह क्षेत्रमां समृद्धिथी संपूर्ण उच्च कुळमां मनुष्यपणे उत्पन्न थशे. त्यां सद्गुरुना समागमथी सम्यक् दर्शन पामीने सर्वोत्कृष्ट चारित्र पाळी केवळज्ञान प्राप्त करशे. केवळज्ञानना महोच्छवमां सर्व संघने बोलावीने ते पोतानुं गोशाळाना भवथी आरंभीने सर्व चरित्र प्रगट करशे अने कहेशे के " हे आर्यो ! अरिहंत, आचार्य

अने उपाध्याय विगेरेनी आशातना करवाथी हुं अनंत काळ सुधी संसारमां भटक्यो छुं, माटे तेवी रीते तमारे करवुं नहि ; में तो अज्ञानपणाथी महा मूर्खता करी हती. अरे! त्रण भुवनने तारवामां समर्थ अने त्रिलोकना समस्त पदार्थसमूहने जोनारा अने अनंत गुणयुक्त एवा श्री महावीर तीर्थंकर गुरु तरीके मळ्या छतां पण में मनमां कांइ पण शुभ ध्यान कर्युं नहि. ते जगत्गुरुए अनेक भव्य जीवोना बंने प्रकारना दारिद्र्यनो नाश कर्यो, पण हुं निर्भाग्यशेखर कांइ पण ग्रहण करी शक्यो नहीं, तोपण ए क्षमासागरे परिणामे पण मारे विषे शुभ अध्यवसायनो अवकाश आप्यो छे. तेना प्रभावथीज हुं आ भवमां पण चारित्र अने केवळज्ञान पामी शक्यो छुं." इत्यादि देशनामां पोतानुं चरित्र कहीने अनेक भव्य जीवोने आप्तधर्ममां रसिक करशे. ते भवमां अनुक्रमे अनशन ग्रहण करीने ते गोशाळो अनंत सुखना स्थान रूप मोक्षपदने पामशे.

आ प्रमाणे गोशाळानुं वृत्तांत सांभळीने शिष्यजनोए हेय वस्तुनो त्याग करवो अने मन वचन तथा कायाए करीने गुरुजननी अल्प पण आशातना करवी नहि.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ सप्तदशस्तंभस्य
पञ्चपञ्चाशदुत्तर द्विशततमः प्रबंधः ॥ २५५ ॥

श्री उपदेश प्रासाद

स्तंभ १८ मो.

व्याख्यान २५६ मुं.

ज्ञानाचारना आठ प्रकारमांनो पहेलो काळ नामनो आचार कहे छे—

पठनीयं श्रुतं काले, व्याख्यानं पाठनं तथा ।

आचारः श्रुतधर्मस्य, चाद्यो यद्भिख्यते बुधैः ॥ १ ॥

भावार्थ—" योग्य काळे श्रुत भणवुं, भणाववुं तथा व्याख्यान करवुं, ते श्रुतधर्मनो पहेलो आचार पंडित पुरुषोए कहेलो छे. "

अग्यार अंग अने उत्तराध्ययन विगेरे कालिक श्रुत कहेवाय छे. ते दिवसे तथा रात्रे पहेली अने चोथी पोरसीमां भणवुं गणवुं अने दश वैकालिक विगेरे तथा दृष्टिवाद उत्कालिक श्रुत कहेवाय छे, तेनो भणवा विगेरेनो काळ सर्व पोरसीनो छे. तेमां सूत्रनी पोरसीमां सूत्र भणवुं, अने अर्थनी पोरसीमां अर्थ अथवा उत्कालिक श्रुत विगेरे भणवुं. दिवस तथा रात्रिनी पहेली अने छेल्ली पोरसीमां अस्वाध्याय (असज्झाय) ने अभावे भणाय तेथी तेनुं नाम कालिक कहेवाय छे. कालिकनो शब्दार्थ एवो छे के योग्य काळेज भणवुं ते; अने मात्र काळ वेळा सिवाय बधी पोरसीमां भणाय तेने उत्कालिक कह्युं छे. कालिक तथा उत्कालिक बन्ने श्रुतनो लघु अनध्याय काळ बे घडीनो छे. तेवी काळवेळा प्रत्येक अहोरात्रमां चार आवे छे, तेटलो वखत तजवो. ते चार वखत आ प्रमाणे—१ संध्या वखते (सायंकाळे), २ मध्य रात्रिए, ३ प्रभाते तथा ४ मध्यान्ह वखते. ए चार काळ वेळाए तो कोइ पण दिवस स्वाध्याय करवो नहीं; पण प्रतिलेहण विगेरे बीजी क्रिया करवानो निषेध नथी. अन्य धर्ममां पण काळने वखते संध्यावंदन विगेरे क्रियाओ करवामां आवे छे. ब्राह्मणो हमेशां त्रण संध्याए मळीने त्रणसो चोवीश वार गायत्री मंत्रनो जाप पूर्ण करे छे. दुष्ट काळ वखते सर्व शास्त्रोमां सूत्रादिकनुं पठन पाठन सर्वथा निषेध करेलुं छे. ते विषे अन्य दर्शनमां कह्युं छे के—

चत्वारि खलु कर्माणि, संध्याकाले विवर्जयेत् ।
आहारो मैथुनं निद्रा, स्वाध्यायं च विशेषतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" आहार, मैथुन, निद्रा अने विशेषे करीने स्वाध्याय, ए चार कर्म संध्या वखते त्याग करवां. "

आहाराज्जायते व्याधिः, क्रूरगर्भश्च मैथुनात् ।
निद्रातो धननाशश्च, स्वाध्याये मरणं भवेत् ॥ २ ॥

भावार्थ—" संध्या वखते आहार (भोजन) करवाथी व्याधि उत्पन्न थाय छे, मैथुन करवाथी क्रूर गर्भ उत्पन्न थाय छे, निद्रा लेवाथी धननो नाश थाय छे, अने स्वाध्याय करवाथी मृत्यु थाय छे."

तेमज काळ वखते स्वाध्याय करवाथी—" अहो ! आ साधुओ स्वाध्यायनो काळ पण जाणता नथी " एम कहीने लोको पण निंदा करे छे ; तथा ते वखते पठनादिकमां व्यग्र रहे तो मुमुक्षु साधुने अवश्य करवा लायक आवश्यकादिक क्रियामां अने शुद्ध श्रावकने त्रिकाळ देववंदन, पूजन विगेरेमां उपयोग रहे नहीं, तेथी वखतसर करवानी कहेली क्रियाथी भ्रष्टपणुं प्राप्त थाय.

वळी निरंतर स्वाध्याय करवाथी खेद थयो होय तेने तेटलो वखत विश्राम पण थाय; माटे ते काळे तो आवश्यकादि क्रियाओज करवी. कोइ वखत कारणविशेषे वखतनो अतिक्रम थइ जाय तो तेनो दोष नथी.

अहीं कोइ शिष्य शंका करे छे के—" जेम शुभ ध्यान मोक्षनो हेतु होवाथी सर्व काळे करवानुं कह्युं छे; तेम श्रुतज्ञान पण मोक्षनो हेतु छे, माटे तेनुं सर्व काळे पठनादि शामाटे न थाय ? जे मोक्षनुं कारण छे त्यां काळ अथवा अकाळनी व्यवस्था शी ? " आ शंकाना समाधान माटे गुरु कहे छे के—हे शिष्य! तारी शंका खरी छे; परंतु शुभध्यान तो सर्व धर्मक्रियामां रहेलुं छे, अने ते मानसिक छे, तेथी शुभ ध्यान वडे कोइ पण क्रियानो बाध थतो नथी. पण उलटी सर्व क्रियाने पुष्टि मळे छे. अने श्रुतज्ञान तो पठन, गुणन विगेरेथी सिद्ध थाय छे. तेथी ते सांज सवारना प्रतिक्रमणनी जेम नियत काळेज करवा योग्य छे. जो सर्व काळ श्रुतनो ज अभ्यास करे, तो

अन्योन्य पुण्यक्रियानो बाध थाय, तेम थवुं योग्य नथी. वळी जे मोक्षनो हेतु होय त्यां काळनो विभाग करवो योग्य नथी, एवुं जे तें कह्युं ते व्यर्थ छे; केमके साधुने आहार विहार विगेरे पण मोक्षना हेतु छे; तोपण त्यां काळनो विभाग कहेलो छे. आगममां कह्युं छे के "तइयाए पोरसीए भत्तपाणं गवेसए" "त्रीजी पोरसीए भातपाणीनी गवेषणा करवी." तथा—

अकाले चरसि भिक्खु, काले न पडिलेहसि ।
अप्पाणं च किलामेसि, संनिवेसं च गरिहसि ॥ १ ॥

भावार्थ—"हे साधु! तुं अकाळे विचरे छे, योग्य काले पडिलेहण करतो नथी. तारा आत्माने तुं कीलामणा पमाडे छे, अने गामना लोकोनी निंदा करे छे." तेथी श्रुतनुं पठनादिक योग्य काळेज करवुं. कोइ अहंकारादिकने लीधे तेनो व्यत्यय करे, तो सगर नामना आचार्यनी जेम मोटी लज्जाने पामे.

सागराचार्यनुं दृष्टांत.

उज्जयिनी नगरीमां श्रीकालिकाचार्य नामना आचार्य उग्र विहारी हता. तेनी पासेना शिष्यो सर्व पासत्था थइ जवाथी साधुनो आचार पाळवामां पण शिथिळ थयेला हता. तेमने आचार्य हमेशां शिखामण आपता हता; पण तेओ तो कुतराना पूंछडानी जेम वक्रताने छोडता नहोता. तेथी आचार्ये खेद पामीने विचार्युं के—"आ शिष्योने सारणादि करतां मारो स्वाध्याय सीदाय छे–बराबर थइ शकतो नथी, अने तेओने मारा वाक्यथी कांइ पण गुण थतो नथी; माटे तेनो कांइ बीजो उपाय करवो जोइए."

अहीं वृद्ध वाक्यने अनुसारे एवो संबंध छे के—एक वखते सीमंधर स्वामीने इंद्रे पूछयुं के—"हे स्वामी! हालमां भरतक्षेत्रमां एवो कोइ विद्वान् छे, के जेने पूज्यवाथी आवे वर्णन कर्युं तेवुं निगोदनुं स्वरूप यथार्थ वर्णवे ?" त्यारे प्रभुए कह्युं के—"हे इंद्र! हालमां भरतक्षेत्रमां आर्य कालकसूरि छे, के जे श्रुत पाठना बळथी में कह्युं तेवी ज रीते निगोदनुं स्वरूप कही शके तेवा छे." ते सांभळीने इंद्र तेनी परीक्षा करवा माटे जराथी जीर्ण थयेलुं शरीर विकुर्वीने धीमे धीमे लाकडीने टेके चालतां सूरि पासे आव्या; अने लुहारनी धमणनी जेम श्वासोश्वास लेतां तेणे गुरुने वंदना करीने पूछयुं के—"हे स्वामी! हुं वृद्ध छुं, अने वृद्धावस्थाथी पीडाउं छुं. हजु मारुं केटलुं आयुष्य

चत्वारि खलु कर्माणि, संध्याकाले विवर्जयेत् ।
आहारो मैथुनं निद्रा, स्वाध्यायं च विशेषतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" आहार, मैथुन, निद्रा अने विशेषे करीने स्वाध्याय, ए चार कर्म संध्या वखते त्याग करवां."

आहाराज्जायते व्याधिः, क्रूरगर्भश्च मैथुनात् ।
निद्रातो धननाशश्च, स्वाध्याये मरणं भवेत् ॥ २ ॥

भावार्थ—" संध्या वखते आहार (भोजन) करवाथी व्याधि उत्पन्न थाय छे, मैथुन करवाथी क्रूर गर्भ उत्पन्न थाय छे, निद्रा लेवाथी धननो नाश थाय छे, अने स्वाध्याय करवाथी मृत्यु थाय छे."

तेमज काळ वखते स्वाध्याय करवाथी—" अहो ! आ साधुओ स्वाध्यायनो काळ पण जाणता नथी " एम कहीने लोको पण निंदा करे छे; तथा ते वखते पठनादिकमां व्यग्र रहे तो मुमुक्षु साधुने अवश्य करवा लायक आवश्यकादिक क्रियामां अने शुद्ध श्रावकने त्रिकाल देववंदन, पूजन विगेरेमां उपयोग रहे नहीं, तेथी वखतसर करवानी कहेली क्रियाथी भ्रष्टपणुं प्राप्त थाय.

वळी निरंतर स्वाध्याय करवाथी खेद थयो होय तेने तेटलो वखत विश्राम पण थाय; माटे ते काळे तो आवश्यकादि क्रियाओज करवी. कोइ वखत कारणविशेषे वखतनो अतिक्रम थइ जाय तो तेनो दोष नथी.

अहीं कोइ शिष्य शंका करे छे के—" जेम शुभ ध्यान मोक्षनो हेतु होवाथी सर्व काळे करवानुं कह्युं छे; तेम श्रुतज्ञान पण मोक्षनो हेतु छे, माटे तेनुं सर्व काळे पठनादि शामाटे न थाय ? जे मोक्षनुं कारण छे त्यां काळ अथवा अकाळनी व्यवस्था शी ? " आ शंकाना समाधान माटे गुरु कहे छे के—हे शिष्य! तारी शंका खरी छे; परंतु शुभध्यान तो सर्व धर्मक्रियामां रहेलुं छे, अने ते मानसिक छे, तेथी शुभ ध्यान वडे कोइ पण क्रियानो बाध थतो नथी. पण उलटी सर्व क्रियाने पुष्टि मळे छे. अने श्रुतज्ञान तो पठन, गुणन विगेरेथी सिद्ध थाय छे. तेथी ते सांज सवारना प्रतिक्रमणनी जेम नियत काळेज करवा योग्य छे. जो सर्व काल श्रुतनो ज अभ्यास करे, तो

अन्योन्य पुण्यक्रियानो बाध थाय, तेम थवुं योग्य नथी. वळी जे मोक्षनो हेतु होय त्यां काळनो विभाग करवो योग्य नथी, एवुं जे तें कह्युं ते व्यर्थ छे; केमके साधुने आहार विहार विगेरे पण मोक्षना हेतु छे; तोपण त्यां काळनो विभाग कहेलो छे. आगममां कह्युं छे के "तइयाए पोरसीए भत्तपाणं गवेसए" "त्रीजी पोरसीए भातपाणीनी गवेषणा करवी." तथा—

अकाले चरसि भिक्खु, काले न पडिलेहसि ।
अप्पाणं च किलामेसि, संनिवेसं च गरिहसि ॥ १ ॥

भावार्थ—"हे साधु! तुं अकाळे विचरे छे, योग्य काळे पडिलेहण करतो नथी, तारा आत्माने तुं कीलामणा पमाडे छे, अने गामना लोकोनी निंदा करे छे." तेथी श्रुतनुं पठनादिक योग्य काळेज करवुं. कोइ अहंकारादिकने लीधे तेनो व्यत्यय करे, तो सगर नामना आचार्यनी जेम मोटी लज्जाने पामे.

सागराचार्यनुं दृष्टांत.

उज्जयिनी नगरीमां श्रीकालिकाचार्य नामना आचार्य उग्र विहारी हता. तेनी पासेना शिष्यो सर्व पासत्था थइ जवाथी साधुनो आचार पाळवामां पण शिथिल थयेला हता. तेमने आचार्य हमेशां शिखामण आपता हता; पण तेओ तो कुतराना पूंछडानी जेम वक्रताने छोडता नहोता. तेथी आचार्ये खेद पामीने विचार्युं के—"आ शिष्योने सारणादि करतां मारो स्वाध्याय सीदाय छे—बराबर थइ शकतो नथी, अने तेओने मारा वाक्यथी कांइ पण गुण थतो नथी; माटे तेनो कांइ बीजो उपाय करवो जोइए."

अहीं वृद्ध वाक्यने अनुसारे एवो संबंध छे के—एक वखते सीमंधर स्वामीने इंद्रे पूछ्युं के—"हे स्वामी! हालमां भरतक्षेत्रमां एवो कोइ विद्वान् छे, के जेने पूछवाथी आपे वर्णन कर्युं तेवुं निगोदनुं स्वरूप यथार्थ वर्णवे ?" त्यारे प्रभुए कह्युं के—"हे इंद्र! हालमां भरतक्षेत्रमां आर्य कालकसूरि छे, के जे श्रुत पाठना बळथी में कह्युं तेवीज रीते निगोदनुं स्वरूप कही शके तेवा छे." ते सांभळीने इंद्र तेनी परीक्षा करवा माटे जराथी जीर्ण थयेलुं शरीर विकुर्वीने धीमे धीमे लाकडीने टेके चालतां सूरि पासे आव्या; अने लुहारनी धमणनी जेम श्वासोश्वास लेतां तेणे गुरुने वंदना करीने पूछ्युं के—"हे स्वामी! हुं वृद्ध छुं, अने वृद्धावस्थाथी पीडाउं छुं. हजु मारुं केटलुं आयुष्य

बाकी छे ते आप मारी हस्तरेखा जोइने शास्त्रने आधारे कहो. मारा पर कृपा करो. मारा पुत्रोए तथा स्त्रीए मने काढी मूक्यो छे. तेथी हुं एकलो महा कष्टथी दिवसो निर्गमन करुं छुं. आप छ जीव निकायपर दया करवामां तत्पर छो, तेथी मारापर कृपा करो." आ प्रमाणे तेनां दीन वचनो सांभळीने गुरु तेनो हाथ जोतां जोतां कांइक तेनी चेष्टा तथा यथार्थ भाषण उपरथी अने कांइक श्रुतनो उपयोग आपवाथी तेने सौधर्म देवलोकना इंद्र जाणीने मौन रह्या, त्यारे फरीथी ते वृद्ध बोल्यो के—"हे स्वामी हुं जराथी पीडित छुं, तेथी वधारे वखत अहीं रहेवाने अशक्त छुं, माटे जलदी उत्तर आपो के हवे मारुं आयुष्य केटलुं बाकी छे? पांच वर्ष बाकी छे? के तेथी न्यूनाधिक छे?" गुरुए कह्युं के—"तेथी घणुं अधिक छे." वृद्धे पूछ्युं के—"शुं दश वर्षनुं छे?" गुरुए कह्युं-—"तेथी पण घणुं अधिक छे." वृद्धे कह्युं—"शुं त्यारे वीश वर्ष के त्रीश वर्ष के चाळीश वर्ष बाकी छे? हे गुरु! सत्य कहो." गुरुए कह्युं के—"वारंवार शुं पूछो छो? तमारुं आयुष्य अंकनी गणतरीमां आवे तेवुं नथी. केमके ते अपरिमित (असंख्यात) छे. मुनिसुव्रत स्वामीना शासनमां तमे इन्द्र थया छो, वर्तमान चोवीशीना छेल्ला चार तीर्थंकरोना पांच कल्याणकनो उत्सव तमे कर्यो छे, अने आवती चोवीशीना केटलाक तीर्थंकरोनी वंदना तथा पूजा तमे करशो. तमारुं आयुष्य बे सागरोपममां कांइक ओछुं बाकी रहेलुं छे." आ प्रमाणे गुरुनां वचन सांभळीने इंद्र घणो हर्ष पाम्या. पछी ते निगोदनुं स्वरूप पूछी निःशंक थया, अने श्री सीमंधर स्वामीए करेली प्रशंसा कही बतावीने तेणे कह्युं के—"हे स्वामी! मारा सरखुं कार्य बतावो." त्यारे गुरु बोल्या के—"धर्ममां आसक्त थयेला संघनुं विघ्न निवारो." पछी इन्द्र पोतानी इच्छाथी पोताना आव्यानी निशानी तरिके दिव्य अने मनोहर एवुं उपाश्रयनुं एक द्वार बीजी दिशामां करीने तरत स्वर्गे गया.

त्यारपछी सूरिना शिष्यो के जेओ आहारने माटे नगरमां गया हता तेओ आव्या. तेमणे गुरुने कह्युं के—"हे स्वामी! आ उपाश्रयनुं द्वार बीजी दिशामां केम थइ गयुं? आप पण विद्यानो चमत्कार जोवामां स्पृहा राखो छो, तो पछी अमारा जेवानो तेम करवामां शो दोष?" ते सांभळीने गुरुए इन्द्रनुं आगमन विगेरे सर्व वृत्तांत यथार्थ कही आप्युं. त्यारे ते शिष्यो बोल्या के—"अमने पण इन्द्रनुं दर्शन करावो." गुरुए कह्युं के—"देवेन्द्र मारा वचनने आधीन नथी. ते तो पोतानी इच्छाथी आव्या हता अने गया. ते विषे तमारे दुराग्रह करवो उचित नथी." आ प्रमाणे गुरुए क-

ह्या छतां ते विनय रहित शिष्योए दुराग्रह मूक्यो नही, अने विनयरहितपणे आहार विगेरे करवा करावबा लाग्या. तेथी गुरु उद्वेग पामीने एक दिवस रात्रिना पाछला पहोरे सर्व शिष्योने सुता मूकीने शय्यातर श्रावकने परमार्थ समजावीने नगरी बहार नीकळी गया. अनुक्रमे विहार करतां करतां ते सुवर्णभूमिए आवी पहोंच्या. त्यां महा बुद्धिमान सागर नामना पोताना शिष्यना शिष्य रहेता हता. तेनी पासे आवीने इर्यापथिकी प्रतिक्रमीने तथा पृथ्वी प्रमार्जीने रह्या. सागर मुनिए तेमने कोइ वखत जोया नहोता, माटे तेने ओळख्या नहीं. अने तेथीज ते उज्या थया नहीं तेमज वंदना पण करी नहीं. तेमणे सूरिने पूछ्युं के—"हे वृद्ध मुनि! तमे कया स्थानथी आवो छो?" त्यारे गांभीर्यना समुद्र समान गुरु कोपायमान थया शिवाय बोल्या के—"अवन्ती नगरीथी." पछी तेमने ज्ञान पूर्वक समग्र क्रिया करतां जोइने सागर मुनिए विचार्युं के—"खरेखर आ वृद्ध मुनि बुद्धिमान छे." पछी तेणे पोताना शिष्योने वाचना आपतां बुद्धिना मदथी सूरिने कह्युं के—"हे वृद्ध! हुं श्रुतस्कंध जणावुं छुं ते तमे सांभळो." ते सांभळी गुरु तो मौनज रह्या. पछी सागरमुनि पोतानी बुद्धिनी कुशळता बताववा माटे घणी सूक्ष्म बुद्धिवाळाथी ग्रहण थइ शके तेवी व्याख्यानो विस्तार करवा लाग्या. व्याख्यानना रसमां तल्लीन थवाथी अकाळ वेळाने—अनध्यायना समयने पण जाण्यो नहीं. "अहो! अज्ञान ए मोटो शत्रु छे."

अहीं उज्जयिनी नगरीमां प्रातःकाळे पेला शिष्यो उठ्या. त्यां गुरुने जोया नहीं, तेथी तेओ अत्यंत आकुळव्याकुळ थइ गया, अने संभ्रांत चित्ते वसतिना स्वामी शय्यातर श्रावक पासे जइने पूछ्युं के—"अमने मूकीने अमारा गुरु क्यां गया?" त्यारे ते श्रावके कोप करीने कह्युं के—"श्रीमान् आचार्ये तमने घणो उपदेश आप्यो, घणुं समजाव्या, प्रेरणा करी, तोपण तमे सदाचारमां प्रवर्त्या नहीं, त्यारे तमारा जेवा प्रमादी शिष्योथी गुरुनी शी अर्थसिद्धि थवानी हती? तेथी ते तमने तजीने चाल्या गया." ते सांभळीने तेओ लज्जित थइ गया अने कह्युं के—"तमे अमारा पर प्रसन्न थइने अमारा गुरुए पवित्र करेली दिशा बतावो, के जेथी अमे ते तरफ जइ तेमने पामीने सनाथ थइए. अमे जेवुं कर्युं, तेवुं फळ अमे पाम्या." एवी रीते ते शिष्योए घणा आग्रह पूर्वक पूछ्युं, एटले ते श्रावके गुरुना विहारनी दिशा बतावी. पछी तेओ सर्वे त्यांथी चाल्या. अनुक्रमे गुरुने शोधतां शोधतां सागरमुनि पासे आव्या अने तेमने पूछ्युं के—"पूज्य एवा आर्य कालकाचार्य क्यां छे?" सागरमुनिए जवाब आप्यो

के—" ते तो मारा पितामह गुरु थाय, तेओ अहीं तो आव्या नथी; पण जेमने हुं ओळखतो नथी एवा कोइ एक वृद्ध मुनि उज्जयिनी नगरीथी अहीं आवेला छे. तेने तमे जुओ, तेओ आ स्थळे छे." पछी ते शिष्यो सागरमुनिए बतावेला स्थाने गया. त्यां गुरुने जोइने दीन मुखवाळा थया, अने पोताना अपराधनी वारंवार क्षमा मागी. ते जोइ सागरमुनिए लज्जाथी नम्र मुखवाळा थइने विचार्युं के—" अहो ! आ गुरुना गुरु पासे में पांडित्य कर्युं, ते योग्य कर्युं नहीं. में सूर्यनी कांति पासे खद्योतना जेवुं अने आंबाना वृक्षपर तोरण बांधवा जेवुं कर्युं." एम विचारीने तेणे उठीने विनय पूर्वक गुरुने खमावीने गुरुना चरणकमळमां मस्तक राखी कह्युं के " हे गुरु ! विश्वने पूज्य एवा आपनी में अज्ञानना वशथी आशातना करी, तेनुं मने मिथ्या दुष्कृत हो."

पछी आचार्ये ते सागरमुनिने प्रतिबोध करवा माटे एक प्यालो भरीने नदीनी रेती तथा एक चाळणी मंगावी. ते रेतीने गुरुए चाळणीमां नांखीने चाळी तो झीणी रेती तेमांथी नीकळी गइ, अने चाळणीमां मोटा कांकरा बाकी रह्या. तेने दूर नांखी दइने पछी ते रेतीने कोइक स्थाने नांखी. पछी फरीथी ते रेतीने त्यांथी लइने बीजे स्थाने नांखी. त्यांथी पण लइने त्रीजे स्थाने नांखी. एवी रीते वारंवार जुदे जुदे स्थाने नांखीने लीधी. तेथी प्रांते रेती घणीज थोडी बाकी रही. आ प्रमाणे रेतीनुं दृष्टांत बतावीने गुरुए सागरमुनिने कह्युं के—"हे वत्स ! जेम नदीमां स्वाभाविकज घणी रेती छे, तेम तीर्थंकरोमां संपूर्ण ज्ञान रहेलुं छे. जेम प्यालावडे नदीमांथी थोडी रेती लीधी, तेम गणधरोए जिनेंद्रो पासेथी थोडुं श्रुत ग्रहण कर्युं, अने जेम ते रेतीने जुदे जुदे स्थाने नांखवाथी अने पाछी लेवाथी नवी नवी भूमिना योगे क्षीण थती थती घणी थोडी रही, तेम श्रुत पण गणधर थकी चालती परंपराए अनुक्रमे कालादिकना दोषथी अल्प अल्पतर बुद्धिवाळा शिष्योना विषे विस्मृति विगेरेना कारणथी क्षीण थतुं थतुं हालमां घणुंज थोडुं रह्युं छे. तेमां चाळणीनो उपनय एवी रीते करवानो छे के—सूक्ष्म ज्ञान सर्व नाश पाम्युं छे, अने हालमां स्थूल ज्ञान रह्युं छे. तेथी हे वत्स ! तुं श्रुत सारी रीते भण्यो छे, पण श्रुत ज्ञाननो पहेलो आचार तें बराबर धार्यो नथी. केमके तुं अकाळे पण स्वाध्याय करे छे, ते विषे श्री निशीथ चूर्णिमां कह्युं छे के—

संझा चौति—अणुदिए सूरिए, मझ्झण्हिं, अथ्थमणे,
अध्धरत्ते, एआसु चउसु सझ्झायं न करिंति ॥

"चार संध्या आ प्रमाणे—१ सूर्योदय पहेलां, २ मध्यान्ह समये, ३ सूर्यास्त समये अने ४ अर्धरात्रे. ए चार संध्या वखते स्वाध्याय न करवो." इत्यादि उपदेश गुरुना मुख थकी सांभळीने सागर आचार्य ते संबंधी मिथ्या दुष्कृत आपीने गुरुने नम्या, अने पछी विशेषे करीने तेमनी वैयावृत्य करवा लाग्या.

"जे कोइ सागर आचार्यनी जेम अहंकारथी योग्य काळनो अतिक्रम करीने श्रुतादिक भणे छे, ते विद्वान् साधुनी सभामां घणे प्रकारे लज्जा तथा निंदाने पामे छे."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य षट्पंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥२५६॥

व्याख्यान २५७ मुं.

अस्वाध्याय काळे स्वाध्याय करवो नहीं ते विषे.

अस्वाध्यायक्षणेष्वज्ञः, स्वाध्यायं कुरुते सदा ।
यतः क्रियाः फलन्त्येव, यथोक्तसमयकृताः ॥१॥

भावार्थ—"मूर्ख माणस हमेशां अनध्याय वखते स्वाध्याय करे छे; परंतु योग्य वखते करेली क्रियाओज फळीभूत थाय छे."

अनध्यायनो समय घणा प्रकारनो छे. तेनुं यथार्थ स्वरूप आवश्यक निर्युक्तिनी वृत्तिमां प्रतिक्रमण अध्ययनथी तथा प्रवचनसारोद्धारना बसें अडसठमा द्वारथी जाणी लेवुं. अहीं पण तेनुं कांइक स्वरूप लखीए छीए.

ज्यारे आकाशमांथी सूक्ष्म रज पडे त्यारे जेटलो काळ पडे तेटलो अस्वाध्याय काळ जाणवो; तेमज धुंअर (धुंवाड) जेटलो काळ पडे तेटलो अस्वाध्याय काळ जाणवो. तेमां विशेष एटलुं के—धुंअर पडतो होय तेटलो वखत मुनिए अंगोपांगनी चेष्टा कर्या विना मकानमांज बेसी रहेवुं; तथा [1]गंधर्व नगर, उल्कापात, दिशाओनो दा-

१ आकाशमां नगर जेवुं देखाय ते

ह अने विद्युत्पात थाय त्यारे तेटला वखत उपरांत एक पहोर सुधी अस्वाध्याय काळ जाणवो. अकाळे (वर्षाऋतु विना) विद्युतनो चमकारो थाय, अथवा अकाळे मेघनी गर्जना थाय तो बे पहोर सुधी अस्वाध्याय काळ जाणवो. अषाढ चोमासानुं तथा कार्तिक चोमासानुं प्रतिक्रमण कर्या पछी प्रतिपदा (एकम—पडवा) सुधी अस्वाध्याय काळ जाणवो. आशो तथा चैत्र शुदी पांचमना मध्यान्ह समयथी आरंभीने कृष्णपक्षनी प्रतिपदा सुधी अस्वाध्याय काळ जाणवो. बीजने दिवसे स्वाध्याय करवो योग्य छे. राजा अने सेनापति विगेरेनुं परस्पर युद्ध थतुं होय तो ते वखत अस्वाध्याय काळ जाणवो. होळीना पर्वमां ज्यांसुधी रज शांत न थाय त्यांसुधी अस्वाध्याय जाणवो. गामनो राजा मरण पामे तो ज्यांसुधी बीजा राजानो अभिषेक थाय नहीं, त्यांसुधी अस्वाध्याय जाणवो. उपाश्रयथी सात घर सुधीमां कोइ प्रसिद्ध माणस मृत्यु पाम्यो होय तो एक अहोरात्री[1] नो अनध्याय काळ जाणवो. उपाश्रयथी सो हाथ सुधीमां कोइ अनाथ मृत्यु पाम्यो होय तो तेनुं शब ज्यांसुधी लइ न जाय, त्यांसुधी अस्वाध्याय जाणवो. स्त्रीना रुदननो शब्द ज्यांसुधी संभळाय त्यांसुधी स्वाध्याय करवो नहीं. जळचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय मत्स्य विगेरे (विकलेन्द्रिय नहीं) नां रुधिर, मांस के हाडकां उपाश्रयथी साठ हाथ सुधीमां पड्यां होय तो ते तथा कोइ पक्षीनुं इंडुं पडयुं होय पण भांग्युं न होय तो ते काढी नांख्या पछी स्वाध्याय थइ शके, अने जो इंडुं फुटी गयुं होय तो त्रण पोरसी सुधी स्वाध्याय कल्पे नहीं. तेमां पण जो इंडुं फुटेलुं होय अने तेमांथी रसनुं बिंदु भूमि उपर पडयुं होय तो ते साठ हाथनी बहार लइ जइने ते भूमि धोया पछी स्वाध्याय कल्पे. माखीना पग जेटलुं पण इंडाना रसनुं अथवा लोहीनुं बिंदु भूमि पर पडयुं होय तो स्वाध्याय कल्पे नहीं. गाय विगेरेनुं जरायु[2] ज्यांसुधी लागेलुं होय त्यांसुधी अस्वाध्याय जाणवो, अने जरायु पड्या पछी त्रण पोरसी सुधी अस्वाध्याय जाणवो. बिलाडी विगेरेए उंदर विगेरे मार्यो होय तो एक अहोरात्री अस्वाध्याय जाणवो. तेटलो काळ नंदिसूत्र विगेरे भणवुं नहीं. एज प्रमाणे मनुष्यना संबंधमां पण जाणवुं. विशेष एटलुं के —उपाश्रयथी सो हाथ सुधीमां मनुष्यना अवयवो अथवा चर्म, मांस, रुधिर, हाडकुं विगेरे पड्यां होय तो अस्वाध्याय जाणवो; पण जो उपाश्रय अने ते अवयव विगेरे पडेला स्थानती वच्चे मार्ग होय तो स्वाध्याय थइ शके.

१ एक रात्रि ने एक दिवस ते अहोरात्री २ जरायु एटले वीयाया पछी ओर पडे छे ते.

स्त्रीओने ऋतु आवे त्यारे त्रण दिवस सुधी स्वाध्याय कल्पे नहि, पण जो प्रदरनो रोग थयो होय, तो अधिक काळ सुधी स्वाध्याय कल्पे नहि. कोइ गर्भवतीने पुत्र प्रसव थयो होय तो सात दिवस सुधी अस्वाध्याय अने जो पुत्री थइ होय तो अथवा रक्त अधिक जतुं होय तो आठ दिवस सुधी अस्वाध्याय जाणवो, नवमे दिवसे कल्पे. सो हाथ सुधीमां कोइ बाळक विगेरेनो दांत पड्यो होय तो ते शोधवो, अने जो दांत जोवामां न आवे तो "दंत ओहडावणियं करेमि काउस्सग्गं" एम कहीने एक नवकारनो कायोत्सर्ग करवो. त्यार पछी स्वाध्याय कल्पे. दांत विना बीजा कोइ अंग अथवा उपांगनुं हाडकुं सो हाथ सुधीमां पड्युं होय तो [1]बार वर्ष सुधी वाचनादिक स्वाध्याय कल्पे नहि, पण मनमां अर्थनी विचारणानो कोइ स्थाने निषेध नथी. आर्द्रा नक्षत्रथी आरंभीने स्वाति नक्षत्र सुधी विद्युत् तथा मेघगर्जना थाय तो स्वाध्यायनो निषेध नथी. भूमिकंप थयो होय तो आठ पहोर सुधी स्वाध्याय कल्पे नहि. अग्निनो उपद्रव थयो होय तो ते उपद्रव रहे तेटलो वखत स्वाध्याय कल्पे नहि. चंद्रग्रहणमां उत्कृष्ट बार पहोर सुधी अने सूर्यग्रहणमां उत्कृष्ट सोळ पहोर सुधी अस्वाध्याय जाणवो, पाखीनी रात्रिए पण स्वाध्याय सूझे नहीं.

इत्यादि अस्वाध्यायनुं स्वरूप संप्रदायने अनुसारे जाणीने स्वाध्याय करवो. केमके अयोग्य काळे वाचनादिक करवाथी मूर्खपणुं प्राप्त थाय छे. ते उपर एक दृष्टांत छे के—कोइ एक साधु संध्यावखत वीत्या पछी कालिक श्रुतनो समय अतीत थया छतां पण तेनो काळ नहि जाणवाथी तेनुं परावर्तन करता हता. ते जोइने कोइ सम्यक्दृष्टि देवताए विचार्युं के—"हुं आने समजावुं के जेथी कोइ मिथ्यादृष्टि देवता एने छळे नहि." एम विचारीने ते महीयारीनुं रूप करी माथे छाशनो भरेलो घडो मूकी ते साधुनी पासे थइने जा आव करवा लागी अने "छाश ल्यो छाश" एम वारंवार मोटेथी बोलवा लागी. तेथी अत्यंत उद्वेग पामीने पेला साधुए कह्युं के—"अरे शुं तारे छाश वेचवानो आ वखत छे?" त्यारे महीयारी बोली के—"अहो शुं त्यारे तमारे पण आ स्वाध्यायनो वखत छे?" ते सांभळीने साधुने विस्मय थयो, अने उपयोग दइने अकाळ जणावाथी मिथ्या दुष्कृत दीधुं. पछी "अयोग्य वखते स्वाध्याय करवाथी मिथ्यादृष्टि देवताए करेलो छळ थाय छे, माटे फरीथी एम करशो नहि." एवी ते देवताए साधुने शिखामण आपी, माटे योग्य वखतेज स्वाध्याय करवो उचित छे.

---

[1] अहिं चार वर्षनो अस्वाध्याय कह्यो छे. तेनो परमार्थ बहुश्रुतगम्य छे.

यथोक्त वखते करेली क्रियाओ अवश्य फळीभूत थाय छे. क्रिया बे प्रकारनी छे. एक प्रशस्त अने बीजी अप्रशस्त. तेमां सिध्धान्त मार्गमां कहेली सर्व क्रियाओ प्रशस्त छे, अने खेती, व्यापार विगेरे अप्रशस्त छे. चर्या—जवुं आववुं अने भाषणादि सर्व क्रियाओ काळे करेलीज सफळ थाय छे; तेथीज नीतिशास्त्रमां अकाळचर्याने श्रेष्ठ कहेल नथी. कह्युं छे के—

अकालचर्या विषमा च गोष्टिः, कुमित्रसेवा न कदापि कार्या ।
पश्यांडजं पद्मवने प्रसुप्तं, धनुर्विमुक्तेन शरेण ताडितम् ॥१॥

भावार्थ—" अकाळचर्या, विषम गोष्ठी अने कुमित्रनी सेवा—ए कदी पण करवां नहीं. जुओ नीचनी संगत करवाथी पद्मवनमां सुतेलो हंस धनुषथी छूटेला बाणवडे मराणो. " ते दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

कोइएक वनने विषे पद्मसरोवरमां मंदरक्त नामनो हंस रहेतो हतो. त्यां एक वखत कोइ घुवड आव्यो, तेने हंसे पूछ्युं के—" तुं कोण छे ? अने आ वनमां क्यांथी आव्यो छे ?" घुवड बोल्यो के—" तमारा गुण सांभळीने हुं तमारी साथे मित्राइ करवा आव्यो छुं." एम कहेवाथी हंसे तेने रहेवा दीधो. अनुक्रमे साथे क्रीडा करतां मित्राइ बंधाणी. परंतु हंसे मनमां विचार न कर्यो के—'कल्याणने इच्छनार पुरुषे नीचनो परिचय करवो नहीं. ' कह्युं छे के—

हुं तुंही वारु साधु जण, दुज्जण संग नीवार;
हरे घडी जल झल्लरी, मत्थे पडे प्रहार. १

' हे साधु जन! हुं तने वारुंछुं के तुं दुर्जननी संगति नीवार, केमके जळने घडी हरण करे छे; पण प्रहार झालरने माथे पडे छे.' वळी

नीच सरिस जो कीजे संग, चडे कलंक होय जसभंग;
हाथ अंगार ग्रहे जो कोय, के दाझे के काळो होय २

(अर्थ सुगम छे)

पछी एक दिवस घुवड हंसनी रजा लइने पोताने स्थाने गयो. ते वखत हंसने कह्युं के—"तमारे पण एक वखत मारे स्थाने आववुं. " पछी हंस पण एक वखत घुवडने स्थाने गयो पण त्यां तेने जोयो नहिं. घणे स्थाने तेनी शोध करतां कोइ वृक्षना कोटरमां पेठेलो दीठो. तेने हंसे कह्युं के—"हे भाइ! बहार आव, बहार आव, हुं हंस

तने मळवा आव्यो छुं." घुवड बोल्यो के—"हुं दिवसे बहार नीकळवा शक्तिमान नथी, माटे तुं अहीं रहे. आपण रात्रे गोष्ठी करशुं." पछी रात्रे बन्ने जण मळ्या, अने कुशळ वार्ता करी. ते रात्रे हंस तेनी साथेज सुतो. हवे ते वनमां ते रात्रे एक सार्थ रात्रिवासो रह्यो हतो. ते पाछली रात्रे त्यांथी चालवा तैयार थयो. ते वखते घुवडे मोटा विस्तारथी शब्द कर्यो, अने पोते नदीना कोटरमां पेसी गयो. हंसने तेमनो तेम त्यां सुतोज रहेवा दीधो. घुवडनो शब्द सांभळीने सार्थपतिने क्रोध चड्यो, तेथी ते अपशुकननी निवृत्ति करवा माटे तेणे शब्दवेधी बाण मार्युं, ते वागवाथी हंस मृत्यु पाम्यो. माटे विषमगोष्ठि करवी नहीं. वळी अकाळे विचरवुं नहीं, अर्थात् अकाळचर्यानो त्याग करवो. ते उपर मार्गानुसारीना गुणोमां कह्युं छे के—

धर्मार्थस्वात्मनां श्रेयोऽभिवाञ्छन् स्थैर्यभृत्सदा ।
अदेशाकालयोश्चर्यां, विचारज्ञो विवर्जयेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—"हमेशां स्थिरताने धारण करनार अने धर्म, अर्थ तथा पोताना आत्मानुं कल्याण इच्छनार विचारवाळा पुरुषे देशने अयोग्य अने काळने अयोग्य चर्यानो त्याग करवो."

वळी भाषण पण समयने योग्य करवुं. समयोचित भाषण अनेक मनुष्योना मनने सुख करनार थाय छे. ते विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

श्री चांपानेर गढमां महमद बेगडो नामे वृद्ध बादशाह राज्य करतो हतो. तेनो अत्यंत मानीतो [1]लघुक नामनो ब्राह्मण हतो. तेणे सरस्वती पासेथी वरदान मेळव्युं हतुं. एक दिवस काजी, मुल्ला, आखुन, बारहजारी तथा सुबा विगेरेए बादशाहने विज्ञप्ति करी के—"हे दीन दुःखीना बादशाह! आपणा कुरानमां एवुं कह्युं छे के—"प्रातःकाळे हिंदुनुं दर्शन थाय तो दोजखमां जवुं पडे, अने चालीश रोजानुं फळ जाय; तेथी आ लहुआनुं प्रातःकाळे दर्शन करवुं योग्य नथी." ते सांभळीने बादशाहे तेओने प्रसन्न करवा माटे लहुआनुं बिलकुल आववुं बंध कर्युं. पछी एक दिवस बादशाहे काजी, मुल्ला, शेख, सुबा विगेरेने चार प्रश्न पूछ्या के—"सर्वनुं बीज शुं? सर्व रसमां श्रेष्ठ रस कयो? कृतज्ञ (करेला कामनो जाणनार) कोण? अने कृतघ्न (करेला कामनो हणनार) कोण? ए चार प्रश्ननो जवाब आपो." तेओए विचारीने ते-

[1] जे लहुओ—लवो एवा नामथी प्रख्यात छे; परंतु ते तो वाणीओ हतो एवी लोकोक्ति छे.

नो जवाब आप्यो, पण बादशाहे ते कबुल कर्यो नहीं. पछी बादशाहे लहुआने बोलावीने ते काजी विगेरेनी रुबरुमांज उपरना चार प्रश्न पूछ्या, एटले लहुआए तरतज जवाब आप्यो के—" हे स्वामी ! सर्वनुं बीज जळ छे, सर्व रसमां श्रेष्ठ रस लवण छे, कृतज्ञ कूतरो छे, अने कृतघ्न जमाइ छे. कह्युं छे के—

द्रुतमानय पानीयं, पानीयं पंकजानने ।
पानीयेन विना सर्वं, सद्यः शुष्यति दग्धवत् ॥१॥

भावार्थ—" हे कमलाक्षी ! पीवा लायक पाणी जलदीथी लाव, केमके पाणी विना सर्व वस्तु दग्ध थयेलानी जेम तत्काळ सुकाइ जाय छे. "

प्राथम्यमुदधिष्वासीत्, सत्यं ते लवणोदधे ।
यद्रसेन विना सर्वरसो न स्वादमर्हति ॥२॥

भावार्थ—" हे लवणसमुद्र ! सर्व समुद्रोमां तारुं प्रथमपणुं छे ते योग्य छे. केमके जेना (तारा) रस विना कोइ पण रस स्वाद आपतो नथी."

अशनमात्रकृतज्ञतया गुरोर्न पिशुनोऽपि शुनो लभते तुलाम् ।
अपि बहूपकृते सखिता खले, न खलु खेलति खे लतिका यथा॥३॥

भावार्थ—"स्वामीनुं अन्न मात्र खावाना कृतज्ञपणाथी चाडीयो कूतरानी पण तुलना पामतो नथी. जेम आकाशमां लता क्रीडा करती नथी अर्थात् आधार विना रही शकती नथी, तेम बहु उपकार करेला खळ पुरुषनी साथे पण मित्रता थइ शकती नथी. "

क्षणं रुष्टः क्षणं तुष्टो, नानापूजां च वांछति ।
कन्याराशिस्थितो नित्यं, जामाता दशमो ग्रहः ॥४॥

भावार्थ—"जमाइ क्षणमां रोष पामे छे, क्षणमां संतोष पामे छे, अने नाना प्रकारनो सत्कार चाहे छे; माटे ते हमेशां कन्या राशिमां रहेला दशमा ग्रह समान छे."

आ प्रमाणे बराबर पोताना प्रश्नोना जवाब सांभळीने काजी विगेरेनी समक्ष बादशाहे तेनी घणी प्रशंसा करी. त्यारपछी कोइएक दिवसे फरीथी काजी विगेरेए बादशाह पासे लहुआनी चाडी करी के—"हे स्वामी ! काफर एवा हिंदु लहुआनी

साथे निरंतर मंत्र (विचार) करवो योग्य नथी. आपना राज्यमां तेनी जेवा वाणीमां प्रवीण घणा माणसो छे." ते सांभळीने बादशाह तेओने फरी चार प्रश्न पूछ्या के—"जगत्मां मोटो पुत्र कोनो? जगत्मां मोटा दांत कोना? जगत्मां मोटुं उदर कोनुं? अने जगत्मां मोटो डाह्यो कोण?" ते सांभळीने तेओ विचारीने बोल्या के—"हे स्वामी! जगत्मां बादशाहनो पुत्रज मोटो पुत्र छे, जगत्मां मोटा दांत अने मोटुं उदर हाथीनुं छे, तथा विश्वमां आपना जेवो बीजो कोइ डाह्यो नथी." आ प्रमाणे सांभळीने बादशाहे तेओनो तिरस्कार करी लहुआने बोलावीने ते चारे प्रश्नो पूछ्या, एटले ते तरतज बोल्यो के—"हे स्वामी! विश्वमां गायना पुत्र जेवो बीजो कोइ मोटो नथी, केमके ते खेती करी आववा वडे आखी पृथ्वीने जीवाडे छे. मोटा दांत हळना जाणवा केमके तेनावडे पृथ्वीमां बीज ववाय छे ने उगे छे. मोटुं उदर पृथ्वीनुं जाणवुं, केमके ते सर्व वस्तुनुं रक्षण करे छे, तेमज सर्वनो स्पर्श पण सहन करे छे. तथा मोटो डाह्यो ते छे के जे समयने योग्य एवुं सारुं भाषण करे छे." ते सांभळीने बादशाह अति प्रसन्न थयो अने लहुआने पोतानुं प्रीतिपात्र कर्यो. आ दृष्टांत कांइक उपयोगी होवाथी अत्रे लख्युं छे.

आ प्रमाणे होवाथी ज्ञानाचारनुं पालन करनार साधुए जिनेश्वरनी आज्ञाने अनुसरीने सर्व क्रियाओ योग्य काळेज करवी.

"श्री जिनेश्वरनी आज्ञाने अनुसारे अस्वाध्यायनुं वर्णन सांभळीने स्वाध्यायने वखतेज श्रुतनो अनुयोग आचरवो."

॥ इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य सप्तपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥२५७॥

व्याख्यान २५८ मुं.

हवे बीजो विनयाचार वर्णवे छे.

श्रुतस्याशातना त्याज्या, तद्विनयः श्रुतात्मकः ।
शुश्रूषादिक्रियाकाले, तत्कुर्याज्ज्ञानिनामपि ॥१॥

भावार्थ—" श्रुतनी आशातना करवी नहि, कारणके तेनो विनय श्रुतस्वरूप छे. तेथी करीने शुश्रूषादिक क्रिया करवाने वखते श्रुतज्ञानवाळानो पण विनय करवो."

श्रुतना द्रव्य अने भाव एवा बे प्रकार छे. तेमां पुस्तक अक्षर विगेरे द्रव्यश्रुत कहेवाय छे. पग अडाडवो तथा थुंकवडे लखेलो अक्षर बगाडवो विगेरे द्रव्यश्रुतनी आशातना जाणवी; अने परमात्माए कहेला पदार्थमां पोतानी बुद्धि चलावीने तेनो अन्यथा अर्थ करवो ते भावश्रुतनी आशातना जाणवी. प्रतिक्रमण आवश्यकमां तेत्रीश आशातनाना वर्णनमां कह्युं छे के—"सुअस्स आसायणाए सुअदेवयाए आसायणाए" श्रुतनी आशातना, श्रुतना अधिष्ठायक देवतानी आशातना विगेरे. अहीं कोइने शंका थाय के—"श्रुत देवतानी आशातना छेज नहि अथवा तो ते श्रुत देवता कशा कामनी नथी." तेनो जवाब कहे छे के—जिनेन्द्रे कहेल आगम देवताना अधिष्ठाता विनाना छेज नहि माटे श्रुतदेवता छे, अने तेथी तेनी आशातना पण छे. "ते श्रुतदेवता कशा कामनी नथी" एम पण शंका करवी नहि. केमके श्रुतदेवतानुं अवलंबन करीने प्रशस्त मनवाळा जीवोनो कर्मक्षय जोवामां आवे छे.

श्रुतमां कहेला वचननुं उल्लंघन करवुं ते पण भावश्रुतनी आशातना जाणवी. श्री जिनेंद्रोए श्रुतमां एवुं कह्युं छे के—मंत्रादि विद्या शासननुं मोटुं कार्य होय तोज उपयोगमां लेवी; पण बीजा कोइ कारणे तेनो उपयोग करवो नहि. जे कोइ प्रमाद विगेरे कारणथी अथवा आश्चर्य बताववानी इच्छाथी स्थूलभद्र मुनिनी जेम लब्धि विद्यानो उपयोग करे छे ते श्रुतनी आशातना करे छे, अने तेम करवाथी मोटी हानि प्राप्त थाय छे. ते संबंधमां स्थूलभद्रनो प्रबंध कहे छे—

पाटलिपुर नगरमां श्री श्रमणसंघ एकत्र थइने विचार करवा लाग्यो के—"हालमां महा भयंकर दुष्काळ प्रवर्त्ते छे, तेथी बुद्धिमान साधु पण अभ्यास न राखवाथी अने भणेलुं न गणवाथी घणुं श्रुत वीसरी गया छे. माटे हवे श्रुतनो उद्धार करवो

जोइए." एम विचारीने श्री संघे अगियार अंग संबंधी अध्ययन, उद्देशा विगेरे जे हता ते सर्वे मेळव्या. पछी दृष्टिवाद मेळववा माटे कांइक विचार करवा लाग्या. विचारतां नेपाल देशमां रहेला श्रुतकेवळी भद्रबाहु स्वामीने जाणीने तेमने बोलाववा माटे संघे बे मुनिओने मोकल्या. ते मुनिओ त्यां जइ तेमने वांदीने बोल्या के—" हे स्वामी! आपने श्री संघ त्यां आववा माटे आज्ञा करे छे." ते सांभळीने सूरिए कह्युं के—"में महाप्राणायाम ध्यान आरंभ्युं छे, ते बार वर्षे सिद्ध थाय छे तेथी हुं आवी शकीश नहि. महाप्राणायाम सिद्ध थया पछी कोइ पण कार्य आवी पडे तो चौदे पूर्वो सूत्र तथा अर्थ सहित एक मुहूर्त मात्रमां गणी शकाय छे." ते सांभळीने ते बन्ने साधुओए पाछा आवीने सूरिनुं कहेलुं वचन श्री संघने कह्युं. पछी संघे बीजा बे मुनिने बोलावीने आज्ञा आपी के—" तमारे सूरि पासे जइने कहेवुं के श्री संघनी आज्ञा न माने तेने शो दंड करवो ते अमने कहो. जो ते सूरि एम कहे के तेवाने संघ बहार करवो. तो तमारे ऊंचे स्वरे सूरिने कहेवुं के हे आचार्य महाराज! आप पोते ते दंडने योग्य थया छो." पछी ते बन्ने मुनिए त्यां जइने सूरिने तेज प्रमाणे कह्युं. एटले सूरि बोल्या के—"पूज्य संघे एवुं न करवुं पण मारा उपर कृपा करीने बुद्धिमान साधुओने अहीं मोकलवा, तेओने हुं सात वाचना आपीश. तेमां एक वाचना आहार लइने आव्या पछी आपीश, त्रण वाचना त्रण वखतनी काळ वेळाए आपीश अने त्रण वाचना सांजनुं प्रतिक्रमण कर्या पछी आपीश. एम करवाथी संघनुं काम थशे ने मारुं पण थशे." ते सांभळीने ते बन्ने मुनिए पाछा आवीने संघने ते प्रमाणे कह्युं, तेथी संघ प्रसन्न थयो अने स्थूलभद्र विगेरे पांचसो साधुने सूरि पासे मोकल्या. तेमने सूरि भणाववा लाग्या. तेमां स्थूलभद्र विना बीजा सर्व साधुओ थोडी वाचनाथी भणवामां असंतुष्ट थइने पोतपोताने स्थाने आवता रह्या. स्थूलभद्रमुनि महा बुद्धिमान हता ते एकला रह्या. तेणे आठ वर्षमां आठ पूर्वनो अभ्यास कर्यो. एकदा अल्प वाचनाथी उद्वेग पामेला जोइने सूरि बोल्या के—" हे वत्स! मारुं ध्यान पूर्ण थवा आव्युं छे, त्यार पछी तने तारी इच्छा मुजब वाचना आपीश." स्थूलभद्रे पूछ्युं "के हे स्वामी! हवे मारे केटलुं भणवुं बाकी रह्युं छे?" गुरुए जवाब आप्यो के—" बिंदु जेटलुं तुं भण्यो छे, अने समुद्र जेटलुं बाकी रह्युं छे." पछी महा प्राणध्यान पूर्ण थतां स्थूलभद्र बे वस्तुए ऊणा एवा दश पूर्व सुधी भण्या. तेवामां स्थूलभद्रनी बहेनो यक्षा विगेरे साध्वीओ तेमने वंदना करवा माटे आवी. प्रथम सूरिने वांदीने तेओए पूछ्युं के—" हे प्रभु! स्थूलभद्र

क्यां छे ?" सूरिए कह्युं के—"नाना देवकुळमां छे." एम सांभळीने साध्वीओ ते तरफ चाली, तेमने आवती जोइने स्थूलभद्रे आश्चर्य देखाडवा माटे पोतानुं रूप फेरवीने सिंहनुं रूप धारण कर्युं. ते साध्वीओ सिंहने जोइने भय पामी अने सूरि पासे आवीने ते वात कही. सूरिए उपयोगथी ते हकीकत जाणीने कह्युं के—" तमे जइने वांदो, त्यां तमारो मोटो भाइज छे, सिंह नथी." एटले ते साध्वीओ फरीथी त्यां गइ, ते वखते स्थूलभद्र पोतानेज स्वरूपे हता तेने वंदना करी. पछी तेना भाइ श्रीयकना स्वर्गगमननुं वृत्तांत कहीने तेमज पोतानो संशय टाळीने ते साध्वीओ पोताने स्थाने गइ. पछी स्थूलभद्र वाचना लेवा माटे गुरु पासे गया, ते वखते सूरिए वाचना आपी नहि अने बोल्या के—" तुं वाचनाने अयोग्य छे." अचानक गुरुनुं आवुं वचन सांभळीने स्थूलभद्र दीक्षाना दिवसथी आरंभीने पोताना अपराध संभारवा लाग्या. पछी ते बोल्या के—"हे पूज्य गुरु! में कांइ पण अपराध कर्यो जणातो नथी, पण आप कहो ते खरुं." गुरु बोल्या के—" शुं अपराध करीने कबुल करतो नथी? तेथी शुं पाप शांत थइ गयुं? " पछी स्थूलभद्र सिंहनुं रूप करवा वडे करेली श्रुतनी आशातनानुं स्मरण करीने गुरुना चरणकमळमां पड्या अने बोल्या के—" फरीथी आवुं काम नहि करुं, क्षमा करो. " सूरि बोल्या के—"तुं योग्य नथी." पछी स्थूलभद्र सर्व संघ पासे गया अने तेमने प्रार्थना करी गुरु पासे मोकली गुरुने मनाववा लाग्या. केमके " मोटानो कोप मोटाज शांत करी शके. "सूरिए संघने कह्युं के—"जेम आ स्थूळभद्रे हमणा पोतानुं रूप विकुर्व्युं तेम बीजा पण करशे. वळी हवे पछी मनुष्यो मंद सत्ववाळा थशे." तोपण संघे वधारे आग्रहथी स्थूलभद्रने भणाववा कह्युं, त्यारे गुरुए उपयोग आप्यो तो जाण्युं के—" बाकीना पूर्वनो माराथी अभाव नथी माटे आ स्थूलभद्रने बाकीना पूर्वो भणावुं." एम विचारीने गुरुए "तारे बीजा कोइने बाकीनां पूर्वो भणाववां नहि " एवो अभिग्रह करावीने स्थूलभद्रने वाचना आपी, तेथी ते चौद पूर्वना धारण करनारा थया.

वीर भगवानना मोक्ष पछी एकसो सीत्तेर वर्षे भद्रबाहु स्वामी पण समाधिथी स्वर्गे गया. आ दृष्टांतनो उपनय हृदयमां धारण करीने श्रुतनी आशातना तजवी. ए श्रुतनो विनय कह्यो.

वळी शुश्रूषा विगेरे करवाने अवसरे ज्ञानीनो पण विनय करवो. ते विषे सूत्रमां कह्युं छे के—

न पक्खओ न पुरओ, नेव किच्चाण पिट्ठओ ।
न जुंजे ऊरुणा ऊरं, सयणे नो पडिस्सुणे ॥ १ ॥

अक्षरार्थ—"नमस्कारादिक करवा योग्य गुरुनी बहु नजीकमां पडखे बेसवुं नहीं, सन्मुख बेसवुं नहीं, पाछळ बेसवुं नहीं, ढींचणे ढींचण अडकाडीने बेसवुं नहीं, तेमज शय्यामां रहीने गुरुवाक्य सांभळवुं नहीं. वाक्य सांभळतांज ऊभा थइ जवाब देवो."

विशेषार्थ—डावे तथा जमणे पडखे बेसवुं नहीं; तेम बेसवाथी गुरुनी सरखा आसने बेसवा रूप अविनय थाय. सन्मुख बेसवुं नहीं; तेम करवाथी वंदना करनार लोकोने गुरुनुं मुख देखाय नहीं, तेथी तेमने अप्रीति थाय. तेमज गुरुनी पाछळ बेसवुं नहीं; तेम करवाथी बन्नेनुं मुख जोवाय नहीं, तेथी तेवो रस आवे नहीं. पोताना ढींचण साथे गुरुनो ढींचण अडकाडवो नहीं, तथा शय्यामां सूता अथवा बेठा गुरुनुं वाक्य सांभळवुं नहीं; पण गुरु बोले के तरतज तेमनी पासे जइने तेना चरणकमळमां नमीने 'मारा पर गुरुनी बहु कृपा छे' एम मनमां मानीने 'भगवन् ! इच्छामो अनुशिष्टिं' 'हे गुरु ! शी आज्ञा छे ?' एम पूछवुं. तेमज शिष्ये विनयगुणवडे गुरुने प्रसन्न करवा. कह्युं छे के—

अणासवा थूलवया कुसीला, मिउं पि चंडं पकरंति सीसा ।
चित्ताणुआ लहु दक्खोववेआ, पसायए ते हु दुरासयंपि ॥१॥

भावार्थ—"गुरुना वचनने नहीं माननारा, विचार्या विना बोलनारा अने खराब शीलवाळा शिष्यो कोमळ गुरुने पण प्रचंड करे छे, अने गुरुना चित्तने अनुसरनार तथा चातुर्य गुणथी युक्त एवा शिष्यो दुरासद (अति क्रोधवाळा) गुरुने पण प्रसन्न करे छे. ते उपर चंडरुद्र आचार्यनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

चंडरुद्र आचार्यनुं दृष्टांत.

अवंति नगरीना उद्यानमां चंडरुद्र आचार्य परिवार सहित आवीने समोसर्या. ते पोताना साधुना न्यूनाधिक क्रिया मात्रना दोषने जोइ जोइने वारंवार कोप करता हता. तेनी प्रकृतिज क्रोधी हती. अन्यदा ते आचार्ये विचार्युं के—"आ वधानुं निवारण मारा एकलाथी थइ शकतुं नथी, तेमज अधिक रोष करवाथी मारुं पोतानुं पण हित थतुं नथी." एम विचारीने ते ध्यान करवा माटे एकांत स्थाने बेठा. ते अवसरे उज्जयिनी नगरीना रहेवासी कोइ शेठनो पुत्र तरतज परणेलो होवाथी हाथे बांधेला मींढळ

क्यां छे ?" सूरिए कह्युं के—"नाना देवकुळमां छे." एम सांभळीने साध्वीओ ते तरफ चाली, तेमने आवती जोइने स्थूलभद्रे आश्चर्य देखाडवा माटे पोतानुं रूप फेरवीने सिंहनुं रूप धारण कर्युं. ते साध्वीओ सिंहने जोइने भय पामी अने सूरि पासे आवीने ते वात कही. सूरिए उपयोगथी ते हकीकत जाणीने कह्युं के—" तमे जइने वांदो, त्यां तमारो मोटो भाइज छे, सिंह नथी." एटले ते साध्वीओ फरीथी त्यां गइ, ते वखते स्थूलभद्र पोतानेज स्वरूपे हता तेने वंदना करी. पछी तेना भाइ श्रीयकना स्वर्गगमननुं वृत्तांत कहीने तेमज पोतानो संशय टाळीने ते साध्वीओ पोताने स्थाने गइ. पछी स्थूलभद्र वाचना लेवा माटे गुरु पासे गया, ते वखते सूरिए वाचना आपी नहि अने बोल्या के—"तुं वाचनाने अयोग्य छे." अचानक गुरुनुं आवुं वचन सांभळीने स्थूलभद्र दीक्षाना दिवसथी आरंभीने पोताना अपराध संभारवा लाग्या. पछी ते बोल्या के–"हे पूज्य गुरु! में कांइ पण अपराध कर्यो जणातो नथी, पण आप कहो ते खरुं.' गुरु बोल्या के—" शुं अपराध करीने कबुल करतो नथी? तेथी शुं पाप शांत थइ गयुं? " पछी स्थूलभद्र सिंहनुं रूप करवा वडे करेली श्रुतनी आशातनानुं स्मरण करीने गुरुना चरणकमळमां पड्या अने बोल्या के—" फरीथी आवुं काम नहि करुं, क्षमा करो. " सूरि बोल्या के—"तुं योग्य नथी." पछी स्थूलभद्र सर्व संघ पासे गया अने तेमने प्रार्थना करी गुरु पासे मोकली गुरुने मनाववा लाग्या. केमके " मोटानो कोप मोटाज शांत करी शके. "सूरिए संघने कह्युं के—"जेम आ स्थूळभद्रे हमणा पोतानुं रूप विकुर्व्युं तेम बीजा पण करशे. वळी हवे पछी मनुष्यो मंद सत्ववाळा थशे." तोपण संघे वधारे आग्रहथी स्थूलभद्रने भणाववा कह्युं, त्यारे गुरुए उपयोग आप्यो तो जाण्युं के—" बाकीना पूर्वनो माराथी अभाव नथी माटे आ स्थूलभद्रने बाकीना पूर्वो भणावुं." एम विचारीने गुरुए "तारे बीजा कोइने बाकीनां पूर्वो भणाववां नहि "एवो अभिग्रह करावीने स्थूलभद्रने वाचना आपी, तेथी ते चौद पूर्वना धारण करनारा थया.

वीर भगवानना मोक्ष पछी एकसो सीत्तेर वर्षे भद्रबाहु स्वामी पण समाधिथी स्वर्गे गया. आ दृष्टांतनो उपनय हृदयमां धारण करीने श्रुतनी आशातना तजवी. एश्रुतनो विनय कह्यो.

वळी शुश्रूषा विगेरे करवाने अवसरे ज्ञानीनो पण विनय करवो. ते विषे सूत्रमां कह्युं छे के—

न पक्खओ न पुरओ, नेव किच्चाण पिट्ठओ ।
न जुंजे ऊरुणा ऊरं, सयणे नो पडिस्सुणे ॥ १ ॥

अक्षरार्थ—"नमस्कारादिक करवा योग्य गुरुनी बहु नजीकमां पडखे बेसवुं नहीं, सन्मुख बेसवुं नहीं, पाछळ बेसवुं नहीं, ढींचणे ढींचण अडकाडीने बेसवुं नहीं, तेमज शय्यामां रहीने गुरुवाक्य सांभळवुं नहीं. वाक्य सांभळतांज ऊभा थइ जवाब देवो."

विशेषार्थ—डावे तथा जमणे पडखे बेसवुं नहीं; तेम बेसवाथी गुरुनी सरखा आसने बेसवा रूप अविनय थाय. सन्मुख बेसवुं नहीं; तेम करवाथी वंदना करनार लोकोने गुरुनुं मुख देखाय नहीं, तेथी तेमने अप्रीति थाय. तेमज गुरुनी पाछळ बेसवुं नहीं; तेम करवाथी बन्नेनुं मुख जोवाय नहीं, तेथी तेवो रस आवे नहीं. पोताना ढींचण साथे गुरुनो ढींचण अडकाडवो नहीं, तथा शय्यामां सूता अथवा बेठा गुरुनुं वाक्य सांभळवुं नहीं; पण गुरु बोले के तरतज तेमनी पासे जइने तेना चरणकमळमां नमीने 'मारा पर गुरुनी बहु कृपा छे' एम मनमां मानीने 'भगवन् ! इच्छामो अनुशिष्टिं' 'हे गुरु ! शी आज्ञा छे ?' एम पूछवुं. तेमज शिष्ये विनयगुणवडे गुरुने प्रसन्न करवा. कह्युं छे के—

अणासवा थूलवया कुसीला, मिउं पि चंडं पकरंति सीसा ।
चित्ताणुआ लहु दक्खोववेआ, पसायए ते हु दुरासयंपि ॥१॥

भावार्थ—"गुरुना वचनने नहीं माननारा, विचार्या विना बोलनारा अने खराब शीलवाळा शिष्यो कोमळ गुरुने पण प्रचंड करे छे, अने गुरुना चित्तने अनुसरनार तथा चातुर्य गुणथी युक्त एवा शिष्यो दुरासद (अति क्रोधवाळा) गुरुने पण प्रसन्न करे छे. ते उपर चंडरुद्र आचार्यनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

चंडरुद्र आचार्यनुं दृष्टांत.

अवंति नगरीना उद्यानमां चंडरुद्र आचार्य परिवार सहित आवीने समोसर्या. ते पोताना साधुना न्यूनाधिक क्रिया मात्रना दोषने जोइ जोइने वारंवार कोप करता हता. तेनी प्रकृतिज क्रोधी हती. अन्यदा ते आचार्ये विचार्युं के—"आ बधानुं निवारण मारा एकलाथी थइ शकतुं नथी, तेमज अधिक रोष करवाथी मारुं पोतानुं पण हित थतुं नथी." एम विचारीने ते ध्यान करवा माटे एकांत स्थाने बेठा. ते अवसरे उज्जयिनी नगरीना रहेवासी कोइ शेठनो पुत्र तरतज परणेलो होवाथी हाथे बांधेला मींढळ

सहित पोताना मित्रो साथे त्यां आव्यो. तेना मित्रोए साधुओने कह्युं के—" हे साधुओ ! आ अमारो मित्र संसारथी विरक्त थइने तमारी पासे दीक्षा लेवा इच्छे छे, माटे तमे तेने दीक्षा आपो." ते सांभळीने ते साधुओए तेने गंध, माल्य तथा उत्तम वस्त्रथी शणगारेलो जोइ विवाहकार्यमां प्रवर्त्तेलो जाणीने तेना मित्रो हास्य करे छे एम धारी तेमने गुरु पासे मोकल्या. त्यां पण तेओए तेज प्रमाणे कह्युं. त्यारे गुरुए कोपथी तेओने कह्युं के—" हे भाविक श्रावको ! एम होय तो राख लावो." त्यारे ते मश्करा राख पण लाव्या. पछी गुरुए जाते तेना माथानो लोच कर्यो. त्यारे ते शेठना पुत्रे लघुकर्मी होवाथी मनमां विचार्युं के—" अहो ! में जातेज दीक्षा ग्रहण करी, तेम गुरुनो शो दोष ? इंद्रादिकने पण दुर्लभ एवुं आ चारित्र मने विना प्रयासे मळ्युं, अने आचार्ये पोतेज आप्युं, माटे हवे तेनो त्याग करवो उचित नथी." कह्युं छे के—

प्रमादसंगतेनापि, या वाक् प्रोक्ता मनस्विना ।
सा कथं दृषदुत्कीर्णाक्षरालीवान्यथा भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" मनस्वी पुरुषे प्रमादना वशथी पण जे वाणी कही होय ते वाणी पथ्थरमां कोतरेला अक्षरनी पंक्तिनी जेम अन्यथा (मिथ्या) केम थाय ? "

एम विचारीने तेणे मित्रोने कह्युं के—" तमे घेर जाओ, मारे हवे घरनुं कांइ प्रयोजन नथी." ते सांभळीने तेना मित्रोए तेने संसारना भोगने माटे घणुं समजाव्यो, पण तेणे ग्रहण करेलुं व्रत छोड्युं नहीं, तेथी विलखा थइने तेओ पोतपोताने घेर गया."

हवे ते श्रेष्ठीपुत्र नवो दीक्षित थयेलो हतो; तोपण मनना परिणामे करीने तो जाणे घणा काळनो दीक्षित होय तेवो लागतो हतो. तेणे गुरुने कह्युं के—"हे भगवन् ! मारा स्वजनोने खबर पडशे एटले तेओ अहीं आवशे, अने मारुं चारित्र मूकावशे; तेथी आपणे बीजे कांइ जता रहीए." गुरुए कह्युं के" हे महानुभाव ! हुं रात्रे देखतो नथी, माटे तुं प्रथम रस्तो जोइ आव." ते सांभळीने ते मार्ग शोधीने तरत पाछो आव्यो, गुरुने विज्ञप्ति करी के—" गुरुजी ! पधारो. " एटले गुरु पण तत्काळ रात्रिने विषे तेनी साथे चाल्या. अंधकारथी व्याप्त थयेला मार्गमां ऊंचा नीचा प्रदेशोमां चालतां पगले पगले स्खलना पामवाथी पृथ्वी पर पडता गुरु शिष्यना उपर कोप पामीने तेने आक्रोश करवा लाग्या के—" हे पापीष्ट ! तें केवो रस्तो शोध्यो ? " एम कहीने दांडावती तेनापर प्रहार कर्यो तोपण ते सुशिष्य मनमां चिंतववा लाग्यो के—

थयो उत्कट कोपवाळा गुरुने पण मोक्ष आपनारा थाय छे.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य

अष्टपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५८ ॥

व्याख्यान २५९ मुं.

त्रीजा ज्ञानाचार बहुमान विषे.

विद्या फलप्रदावश्यं, जायते बहुमानतः ।

तदाचारस्तृतीयोऽतो, विनयतोऽधिको मतः ॥ १ ॥

भावार्थ—"गुरु आदिकनुं बहुमान करवाथी विद्या अवश्य फळदायक थाय छे; तेथी ते त्रीजो आचार विनयथी पण अधिक मानेलो छे."

विनय तो वंदना, नमस्कार विगेरे बाह्याचारथी पण थइ शके छे, अने बहुमान तो अंतरनी प्रीतिथीज थाय छे. ते बहुमान होय तो एकांते करीने गुरु विगेरेनी इच्छाने अनुसरवुं, गुणनुं ग्रहण करवुं, दोषनुं आच्छादन करवुं, तथा अभ्युदयनुं चिंतवन करवुं इत्यादि थाय छे. जे श्रुतना अर्थी होय तेणे तो गुरु विगेरेनुं बहुमान अवश्य करवुं; ते विना घणा विनयथी पण ग्रहण करेली विद्या फळदायक थती नथी. ते विषे गौतमपृच्छामां कह्युं छे के—

विज्जा विन्नाणं वा, मिच्छा विणएण गिण्हिउं जोउं ।

अवमन्नइ आयरिअं, सा विज्जा निप्फला तस्स ॥ १ ॥

भावार्थ—"विद्या अथवा विज्ञान जो मिथ्या [1]विनयथी ग्रहण करे, अने आचार्यनी अवगणना करे, तो ते विद्या तेने निष्फळ थाय छे."

---

[1] बहारथी देखाडवा मात्र वंदन नमस्कार करे ते मिथ्या विनय, अंतरमां प्रीति न होवाथी.

अहीं विनय तथा बहुमानना चार भांगा थइ शके छे. १ विनय होय, पण बहुमान न होय; ते उपर नेमिनाथ पासे प्रातःकाळमां उठीने वहेला जनारा पालक नामना वासुदेवना पुत्रनुं दृष्टांत जाणवुं. २ बहुमान होय, पण विनय न होय; ते उपर सांबनुं अथवा हमणां कहेवामां आवशे एवा बे नैमित्तिकनुं दृष्टांत जाणवुं. ३ कोइने विनय तथा बहुमान बन्ने होय; ते उपर कहेवामां आवशे एवा कुमारपाळ राजानुं दृष्टांत जाणवुं. ४ कोइने बेमांथी एक पण न होय; ते उपर कपिला दासीनुं अथवा कालसौकरिकादिकनुं दृष्टांत जाणवुं. प्रथम बे निमित्तियानुं दृष्टांत कहे छे—

कोइ गाममां कोइ एक सिद्धपुत्रना बे शिष्यो ज्योतिष शास्त्र भणता हता. तेमां एक शिष्य बहुमान पूर्वक गुरुनो विनय करतो हतो. जे कांइ गुरु कहे ते सर्व यथार्थ रीते अंगीकार करतो हतो, अने बीजा शिष्यमां ते गुण नहोतो. एक दिवस ते बन्ने तृण तथा काष्ठ लेवाने वनमां गया. रस्तामां तेमणे केटलांक मोटां पगलां जोयां. ते जोइने एक बोल्यो के—" आगळ हाथी जाय छे. " एटले बीजाए कह्युं के—" हाथी जतो नथी पण हाथणी जाय छे, ते पण डाबी आंखे काणी छे, अने तेनापर कोइक राणी बेठेली छे, ते सधवा छे अने वळी गर्भवती छे, तेने आज काल प्रसूतिनो समय छे, तेमां पण ते पुत्र प्रसवशे. " ते सांभळीने बीजाए कह्युं के—" आवुं नहीं जोयेलुं असंबद्ध केम बोले छे ? " त्यारे ते बोल्यो के—" ज्ञानथी सर्व जणाय छे, ते वातनी तने आगळ चालतां खात्री थशे. " पछी ते बन्ने केटलीक पृथ्वी आगळ चाल्या, तो तेज प्रमाणे सर्व जोयुं. तेटलामां कोइक दासी राजा पासे आवीने बोली के—" हे राजा ! राणीने पुत्र प्रसव थयो छे, तेनी वधामणी हुं आपुं छुं. " ते सांभळीने पेला शिष्ये बीजाने कह्युं के—" आ दासीनुं वचन सांभळ. " बीजो बोल्यो के—"तारुं ज्ञान सत्य छे. " पछी तेओ नदीने कांठे गया. त्यां कोइ वृद्ध स्त्री जळ भरवा आवी हती, तेणे तेमने चेष्टावडे निमित्तिया जाणीने पूछ्युं के—" मारो पुत्र देशांतर गयो छे, त्यांथी क्यारे पाछो आवशे ? " एम पूछतांज तेना माथा परथी घडो पडी गयो अने फुटी गयो. ते सांभळीने पेलो वगरविचारवाळो एकदम बोली उठ्यो के—"तारो पुत्र मरण पाम्यो छे. " पछी बीजो विचारवाळो बोल्यो के—" हे भाइ! एवुं बोल नहि, तेनो पुत्र घेर आव्यो छे. हे वृद्ध माता! तमे घेर जइने तमारा पुत्रने जुओ." ते सांभळीने ते वृद्ध स्त्री जलदीथी पोताने घेर गइ. त्यां पुत्र आवेलो हतो. तेने जोइने ते अत्यंत प्रसन्न थइ. पछी पुत्रनी रजा लइने बे वस्त्र तथा केटलाक रुपीया पेला सत्य बोल-

नारने तेणे आप्या. ते जोइ बीजाए खेद पामीने विचार्युं के—"खरेखर गुरुए मने सारी रीते भणाव्योज नथी. जो एम न होय तो हुं जाणतो नथी, अने आ क्यांथी जाणे? माटे तेमां गुरुनोज दोष छे." पछी तेओ गुरु पासे गया. तेमां पेलो सुज्ञ शिष्य गुरुनुं दर्शन थतांज मस्तक नमावीने तथा हाथ जोडीने बहुमान पूर्वक आनंदना अश्रुथी नेत्र भिंजावतो गुरुना चरणकमळमां मस्तक मूकीने नम्यो, अने बीजो शिष्य तो पथ्थरना स्तंभनी जेम जरापण गात्र नमाव्या विना उभोज रह्यो. त्यारे गुरुए तेने कह्युं के— "अरे! केम पगमां पडतो नथी?" ते बोल्यो के–"आपना सरखा पण पोताना शिष्यमां ज्यारे आवुं अंतर राखे त्यारे कोने उपको आपवो? ज्यारे चंद्रमांथी अंगारानी वृष्टि थाय त्यारे कोने कहेवुं?" ते सांभळी गुरु बोल्या के— "आम केम बोले छे? में कोइपण वखत विद्या आपवामां के तेनी आम्नाय कहेवा विगेरेमां तने छेतर्यो नथी." शिष्य बोल्यो के—"जो एम छे, तो मार्गमां हाथणी विगेरेनुं स्वरूप आणे सारी रीते जाण्युं अने में केम कांइ पण जाण्युं नहिं?" ते सांभळीने गुरुए पेला बीजा शिष्यने पूछ्युं के —"हे वत्स! तें शी रीते जाण्युं ते कहे." त्यारे ते बोल्यो के "आपना प्रसादथी में विचार करवा मांड्यो के आ कोइ हाथीनी जेवां पगलां तो प्रसिद्ध रीते जाणी शकाय तेम छे. पण शुं आ हाथीनां पगलां छे के हाथणीनां छे?" एम विशेष विचार कर्यो तो तेणे करेली लघुनीतिथी ते हाथणी छे एम में निश्चय कर्यो. मार्गमां जमणी बाजुना वेलाओ हाथणीए छेदेला हता अने डाबी बाजुना छेदेला नहोता तेथी "डाबी आंखे काणी छे" एम निश्चय कर्यो. पछी "हाथणी उपर चढीने आवा परिवार सहित राजा के तेना परिवारवाळा विना बीजो कोइ जवाने योग्य नथी; तेथी जरुर राजा अथवा तेनुं कोइ अंगत माणस होवुं जोइए" एम धार्युं. पछी तेणे कोइक ठेकाणे हाथणी उपरथी उतरीने शरीरचिंता करी हती, ते जोइने "राणी छे" एम निश्चय कर्यो. पासेना कोइ जाळामां ते राणीना राता वस्त्रनो छेडो लागेलो जोइने धार्युं के—"ते पतिवाळी छे" अने ते ज्यां पेशाब करवा बेठी हती त्यांथी पृथ्वी पर हाथ मूकीने उठी हती. ते जोइने "गर्भवती छे" एम निश्चय कर्यो. त्यांथी चालतां राणीए जमणो पग प्रथम मूक्यो हतो तेथी "गर्भमां पुत्र छे" एम जाण्युं अने चाल धणी मंद हती, तेथी "प्रसवकाळ नजीक छे" एम निश्चय कर्यो. वळी हे स्वामी! पेली वृद्ध स्त्रीए पोताना पुत्र संबंधी प्रश्न कर्यो के तरतज तेना मस्तक परथी घडो पडी गयो, तेथी में एवुं विचार्युं के—"जेम आ घडो ज्यांथी उत्पन्न थयो हतो त्यांज म-

ळी गयो माटे तेनो पुत्र पण घेर उत्पन्न थयो हतो तेथी ते घेरज आव्यो हशे." आ प्रमाणे तेनी अनुपम बुद्धिथी हर्ष पामीने गुरुए बीजा शिष्यने कह्युं के "हे वत्स! तें मारा प्रत्ये विविध प्रकारनो विनय कर्यो पण तेवुं बहुमान कर्युं नहीं अने आणे सारी रीते बहुमान कर्युं अने वैनयिकी बुद्धि बहुमान सहित विनय होय तोज स्फुरायमान थाय छे, तेथी आमां मारो दोष नथी." आ प्रमाणे विनय छतां पण बहुमान अने अबहुमाननुं तारतम्य जाणवुं.

हवे विनय अने बहुमान ए बन्नेथी युक्त श्री कुमारपाळ राजानुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

श्री पाटण नगरमां कुमारपाळ राजा राज्य करता हता. ते जिनेन्द्रोए कहेला आगमनी आराधना करवामां तत्पर हता, तेथी तेणे ज्ञानना एकवीश भंडार कराव्या. वळी त्रेसठ शलाका पुरुषनां चरित्रो सांभळवानी इच्छा थवाथी श्री हेमचंद्राचार्य गुरु पासे प्रार्थना करीने ३६००० श्लोक प्रमाण श्रीत्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्रनी रचना करावी. ते चरित्रने सुवर्ण तथा रुपाना अक्षरे लखावीने, पोताना महेलमां लइ जइ, त्यां रात्री जागरण करीने, प्रातःकाळे पट्टहस्ती उपर ते चरित्रना पुस्तकने पधरावी तेना पर अनेक छत्र धारण करावी, सुवर्णना दंडवाळा बोंतेर चामरथी वींजाता मोटा उत्सव पूर्वक उपाश्रये लइ गया. त्यां तेनी सुवर्ण, रत्न, पट्टकुळ विगेरेथी पूजा करीने बोंतेर सामंत राजाओ सहित विधि पूर्वक गुरु पासे तेनुं व्याख्यान सांभळ्युं. एज प्रमाणे अगियार अंग अने बार उपांग विगेरे सिद्धान्तोनी एक एक प्रत सुवर्ण विगेरेना अक्षरथी लखावी, अने गुरुना मुखथी तेनुं व्याख्यान सांभळ्युं. तथा योगशास्त्र अने वीतराग स्तवना मळीने बत्रीश प्रकाश सुवर्णना अक्षरथी हाथपोथी माटे लखावीने हमेशां मौनपणे एक वखत तेनो पाठ करवा लाग्या. ते पोथीनी दररोज देवपूजा वखते पूजा करवा लाग्या. तेमज " गुरुए करेला सर्व ग्रंथो मारे अवश्य लखाववा " एवो अभिग्रह लइने सातसो लहीयाने लखवा बेसाड्या. एक वखत प्रातःकाळे गुरुने तथा दरेक साधुने विधिपूर्वक वांदीने राजा लेखकशाळा जोवा गया. त्यां लहीयाओने कागळनां पानांमां लखतां जोइने राजाए गुरुने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे गुरुए कह्युं के—" हे चौलुक्य देव! हाल ज्ञानभंडारमां ताडपत्रोनी घणी खोट छे, माटे कागळनां पानांमां ग्रंथो लखाय छे." ते सांभळीने राजा लज्जित थयो, अने मनमां विचारवा लाग्यो के—" अहो! नवा ग्रंथो रचवामां गुरुनी अखंड शक्ति छे,

अने मारामां ते ग्रंथो लखाववानी पण शक्ति नथी, तो पछी मारुं श्रावकपणुं शुं?" एम विचारीने ते उभो थइने बोल्यो—" हे गुरु! उपवासनुं प्रत्याख्यान आपो." ते सांभळी " आजे शेनो उपवास छे"? एम गुरुए पूछयुं. त्यारे राजाए कह्युं के—"अत्यार पछी ज्यारे तालपत्र पूरां थाय त्यारेज मारे भोजन करवुं." ते सांभळीने गुरुए कह्युं के " श्रीताल[1]नां वृक्षो अहींथी घणा दूर छे तो ते शी रीते जलदी मळी शकशे ?" एम गुरुए तथा सामंतो विगेरेए बहु मान सहित घणा वार्या, तो पण तेमणे तो उपवास कर्यो. श्रीसंघे तेमनी स्तुति करी के—

अहो जिनागमे भक्तिरहो गुरुषु गौरवम् ।
श्रीकुमारमहीभर्तुरहो निःसीमसाहसम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" अहो ! श्रीकुमारपाळ राजानी जिनागमने विषे केवी भक्ति छे? तेमज अहो ! गुरुने विषे तेनुं बहुमान पण केवुं छे ? अने अहो ! तेनुं साहस पण निःसीम छे."

पछी श्रीकुमारपाळ राजा पोताना महेलना उपवनमां जइने त्यां रहेला खरताल वृक्षोनी चंदन, कर्पूर विगेरेथी पूजा करीने जाणे पोते मंत्रसिद्ध होय तेम बोल्यो के—

स्वात्मनीव मते जैने, यदि मे सादरं मनः ।
यूयं व्रजत सर्वेऽपि, श्रीतालद्रुमतां तदा ॥ १ ॥
कथयित्वेति गांगेयमयं ग्रैवेयकं नृपः ।
कस्याप्येकस्य तालस्य, स्कन्धदेशे न्यवीविशत् ॥ २ ॥
तस्थौ च सौधमागत्य धर्मध्यानपरो नृपः ।
श्रीतालद्रुमतां तांश्च निन्ये शासनदेवता ॥ ३ ॥

भावार्थ—" हे खरतालनां वृक्षो ! जो मारुं मन पोताना आत्मानी जेम जैन मतमां आदरवाळुं होय, तो तमे सर्वे श्रीतालनां वृक्षो थइ जाओ. १. एम कहीने राजाए कोइ एक खरताल वृक्षना स्कंध प्रदेश उपर पोतानो सुवर्णनो हार मुक्यो. २.

---

[1] ताडनां वृक्ष बे प्रकारनां होय छे. श्रीताड ने खरताड. तेमां श्रीताडनां पत्रो पुस्तक लखवाना उपयोगमां आवे छे.

पछी ए प्रमाणे करीने राजा महेलमां जइ धर्मध्यानमां तत्पर थइने रह्यो. एटले शासनदेवताए ते खरताडनां वृक्षोने श्रीताडनां वृक्षो बनावी दीधां." इ.

प्रातःकाले उपवनना रक्षकोए आवीने राजाने ते वृत्तांत निवेदन कर्युं. एटले राजाए पण तेओने इनाम आपीने आनंद पमाड्या. पछी तेनां पत्रो लइने गुरु पासे मुकी वंदना करी. गुरुए " आ क्यांथी? " एम पूछ्युं एटले राजाए विनयथी सर्व सभासदोने चमत्कार पमाडनार ते वृत्तांत निवेदन कर्युं. पछी हेमचंद्राचार्य कर्णने अमृत समान ते वृत्तांत सांभळीने राजा अने सभासदो सहित ते उपवनमां गया. त्यां राजाना कहेवा प्रमाणे पूर्वे नहीं सांभळेल तेवुं नजरे जोयुं. ते वखते ब्राह्मणो तथा देवबोधी (बौधाचार्य) विगेरे नगरना लोको पण खरताडनां वृक्षोने श्रीताडनां वृक्षो थयेलां जोइ विस्मय तथा आश्चर्य पाम्या. ते वखते श्री हेमाचार्य जैनमतनी प्रशंसा करवा माटे आ प्रमाणे बोल्या के—

अस्त्येवातिशयो महान् भुवनविद्धर्मस्य धर्मान्तरा-
द्यच्छक्त्यात्र युगेऽपि ताडतरवः श्रीताडतामागताः ।
श्रीखंडस्य न सौरभं यदि भवेदन्यद्रुतः पुष्कलं
तद्योगेन तदा कथं सुरभितां दुर्गन्धयः प्राप्नुयुः ॥ १ ॥

भावार्थ—" सर्वज्ञकथित जैन धर्मनो बीजा धर्म करतां महान् अतिशय (विश्वमां प्रसिद्ध) छे, के जेनी शक्तिथी आवा कलियुगमां खरताडनां वृक्षो श्रीताडनां वृक्षो थइ गयां. परंतु ते योग्य छे; कारण के बीजां वृक्ष करतां श्रीखंड वृक्षनो सुगंध अधिक न होय तो ते श्रीखंडना संबंधथी बीजां दुर्गंधवाळां वृक्षो पण सुगंधपणाने केम पामे?"

आ प्रमाणे सूरिए जिनधर्मनी प्रशंसा करीने पछी राजाने कह्युं के—" हे राजा! आ युगमां जो तमारी जेवा राजा न होय, तो जिनेंद्रना आगमनो विस्तार शी रीते थाय? त्रिकरण शुद्ध एवी श्रुतनी भक्ति तथा तेनुं बहुमान ते अहींआंज तमने फळप्राप्ति रूप थयुं." आ प्रमाणे गुरुए करेली पोतानी प्रशंसाने नम्र मुखथी सांभळीने अंतःकरणनी भक्तिथी अनेक प्रकारे ज्ञान तथा ज्ञानीनुं बहुमान करी एकज उपवासथी शासनदेवताए जेनो महिमा कर्यो छे, अने तेथी विशेष अभ्युदय पूर्वक जेनो प्रताप, प्रभाव अने वैभव विस्तार पाम्यो छे एवा ते उत्तम श्रावके पोताना महेलमां

जइने मोटा उत्सव पूर्वक पारणुं कर्युं. पछी ते उपवनमां उत्पन्न थयेलां विशाळ अने कोमळ अनेक तारुपत्रो उपर लहीयाओए गुरुना करेला अनेक ग्रंथो लख्या.

"ए प्रमाणे ज्ञान तथा ज्ञानीने विषे हर्षथी बहुमानने धारण करतो कुमारपाळ राजा लोकोत्तर एवुं शुद्ध श्रावकपणुं पाम्यो."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य नवपंचाशदधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २५९ ॥

व्याख्यान २६०मुं

उपधान वहन नामना चोथा आचार विषे.

उपधानतपस्तप्त्वा, आवश्यकं पठेद् गृही ।
योगैश्चागमान् साधुरित्याचारचतुर्थकः ॥ १ ॥

भावार्थ—"गृहस्थी (श्रावक) उपधान तप तपीने आवश्यक सूत्र भणे अने साधु योगवहन करीने सिध्धांत भणे ए चोथो ज्ञानाचार छे."

श्रुत भणवानी इच्छावाळा गृहस्थे उपधानतप करीने पछी भणवुं. अहीं "उपधान" शब्दनो अर्थ करे छे के "उप" एटले समीपे "धीयते" एटले धारण कराय, अर्थात् जे तपवडे धारण कराय ते "उपधान."

साधुने आवश्यकादि श्रुत भणवा माटे आगाढ अने अनागाढ एम बे प्रकारना योग सिध्धांतथी अविरोधीपणे पोतपोतानी सामाचारीने अनुसारे जाणवा. श्रावकोने पंचपरमेष्ठि नमस्कार विगेरे सूत्रना आराधन माटे श्री महानिशीथादि सूत्रमां कहेला छ उपधान प्रसिध्ध छे. जेम साधुने योगवहन कर्या विना सिध्धांतनुं अध्ययन सुझतुं नथी, तेम उपधान तप कर्या विना श्रावकोने पण नमस्कारादिक सूत्र भणवा गणवानुं सुझे नहीं. ते विषे श्री महानिशीथ सूत्रमां कह्युं छे के—"अकाळ, अविनय, अबहुमान अने अनुपधान विगेरे ज्ञान संबंधी आठ प्रकारना अनाचार मध्ये उपधाननुं

वहन न करवा रूप अनाचार मोटा दोषवाळो छे. जेओ उपधानवहन तथा योग-विधिने मानता नथी, तेओने पूर्वाचार्यो सूत्रनां वाक्यो बतावे छे.

श्री उत्तराध्ययनना चोत्रीशमा अध्ययनमां तथा श्री समवायांग सूत्रमां ३२मा समवायमां योगसंग्रहमां त्रीजा योगमां ए विषे स्पष्ट लेख छे. इच्छकोए त्यांथी जोइ लेवो.

अहीं कोइ एवी शंका करे के—"योग एटले मन, वचन अने कायाना जे योग छे ते अहीं जाणवा." तेनो उत्तर कहे छे के— जो 'योग' शब्दनो ए प्रमाणे मूळ अर्थ करीए तो पछी 'वहन' शब्दनो शुं अर्थ करवो ? माटे योग तथा वहन ए बन्ने शब्दनो समानाधिकरण अर्थ करवोज योग्य छे. श्री स्थानांग सूत्रना त्रीजा ठाणामां कह्युं छे के—" साधु त्रण स्थानकथी संपन्न थवा वडे अनादि अनंत चार गति रूप संसारकांतारनुं उल्लंघन करे छे. ते आ प्रमाणे—१ नियाणुं नहीं करवाथी, २ दृष्टि[1]संपन्नपणाथी अने ३ योगवहन करवाथी." वळी तेना दशमा ठाणामां कह्युं छे के—" जीवो दश स्थानकवडे भविष्यमां शुभ तथा भद्रक परिणाम पामे. ते आ प्रमाणे—१ नियाणुं नहीं करवाथी, २ दृष्टिसंपन्नपणाथी, ३ योगवहन करवाथी, ४ क्षमा गुण धारण करवाथी, इत्यादि.

वळी सर्व योगोद्वहन विधिना रहस्यभूत श्रीजा अनुयोगद्वारमां कह्युं छे के—मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव अने केवळ ए पांच प्रकारनां ज्ञान छे, तेमां चार ज्ञान स्थापनाए स्थापवा योग्य छे. ते चार ज्ञानना उद्देश, समुद्देश अने अनुज्ञा नथी; अने श्रुतज्ञानना उद्देश, समुद्देश, अनुज्ञा तथा अनुयोग छे इत्यादि. तथा योगविधि भगवती सूत्रना छेल्ला भागमां कहेलो छे. तेमज नंदीसूत्रमां श्रुतना उद्देश अने समुद्देशना काळ कहेला छे. श्री आचारांगमां कह्युं छे के—"अग्यार अंग पैकी पहेला अंगमां बे श्रुतस्कंध छे, पचीश अध्ययन छे, अने पचास उद्देश काळ छे. विगेरे." अहीं काळ शब्दे करीने काळग्रहणनो विधि जाणवो. केमके उत्तराध्ययनना छवीशमा अध्ययनमां कह्युं छे के—" चार काळग्रहण छे, ते योगविधिमांज योग्य छे."

अहीं कोइ श्रावकोने उपधानविधिनो तथा साधुओने योगविधिनो निषेध करीने " सर्वने श्रुतनो अभ्यास सर्वदा करवो " एम उपदेश करे छे, ते योग्य नथी. केमके तेथी तीर्थंकरनी आशातना थाय छे. वळी श्रावकोने आचारांग विगेरे सूत्रोनुं भणवुं

१ सम्यक् दृष्टिथी.

श्रुतमां निषिद्ध करेलुं छे. ते विषे सातमा अंगमां कह्युं छे के—" कामदेव नामनो श्रावक श्री महावीर भगवानना समवसरणने विषे गयो, ते वखते श्री वीरे सभा समक्ष तेने रात्रिमां थयेला त्रण उपसर्ग कही बताव्या. पछी श्रमण भगवान महावीरे घणा साधु अने साध्वीओने संबोधन करीने कह्युं के—" हे आर्यो ! ज्यारे श्रमणोपासक (श्रावक) गृहस्थी घरमां रह्या छतां पण देव, मनुष्य अने तिर्यंचना करेला उपसर्गो सम्यक् प्रकारे सहन करे छे; तो पछी द्वादशांगीनो अभ्यास करनारा एवा श्रमण निग्रंथे तो देव, मनुष्य अने तिर्यंचना करेला उपसर्गोने सम्यक् प्रकारे सहन करवाज जोइए. " अहीं सूत्रना आलावामां साधुओनेज द्वादशांगीना धारण करनार कह्या छे, पण श्रावकोने कह्या नथी. तथा पांचमा अंगमां कह्युं छे के—" त्यां तुंगीया नामनी नगरीमां घणा श्रावको वसे छे. तेओ ऋद्धिवाळा छे, यावत् कोइथी पराभव नहीं पामे तेवा, जीव अजीवादि नव तत्त्वने जाणनारा, निग्रंथप्रवचन जे जैनसिद्धांत तेमां निःशंक, (श्रुतना) अर्थने पामेला अने अर्थना ग्रहण करनारा, (भोजनसमये) घरनां द्वार उघाडां राखनारा तथा परघरमां प्रवेश नहीं करनारा छे. " इत्यादि. आ प्रमाणे श्रावकनुं वर्णन श्री उपासगदशांग, उववाइ तथा स्थानांग विगेरेथी पण जाणी लेवुं. परंतु ए सर्व ठेकाणे श्रावकने " लद्धठ्ठा "—(श्रुतना अर्थने पामेला) एवुं विशेषण कह्युं छे, पण कोइ सूत्रमां " लद्धसुत्ता "—(सूत्रने पामेला) एवुं कह्युं नथी. वळी सर्वत्र सिद्धांतोने ' निग्रंथप्रवचन' एटले ' मुनि संबंधी शास्त्र ' एम कह्युं छे, पण श्रावक संबंधी कह्युं नथी. वळी श्रावकोने करवाना त्रण प्रकारना मनोरथ कह्या छे तेमां श्रावकने सूत्र भणवानो मनोरथ पण थतो कह्यो नथी. ते विषे श्री स्थानांगसूत्रमां त्रीजा ठाणामां कह्युं छे के — साधु त्रण प्रकारे महा निर्जरा करीने भवना अंत लावे. तेमां एवा विचार करे के—' १ क्यारे हुं थोडुं अथवा घणुं श्रुत भणीश ? २ क्यारे हुं एकल्लविहार प्रतिमाने धारण करीने विहार करीश? अने ३ क्यारे हुं अंतसमयने योग्य संलेखना आदरीश ? ' श्रावक त्रण प्रकारे महा निर्जरा करीने भवनो छेडो लावे. तेमां एवा विचार करे के—' १ क्यारे हुं थोडो अथवा घणो परिग्रह छोडी दइश ? २ क्यारे हुं लोच करीने आगार (घर) छोडीने अणगार (साधु) थइश ? अने ३ क्यारे हुं फरीने मरण न करवुं पडे तेवी संलेखना आदरीने शुभ ध्यान ध्यातो सतो, भातपाणीना प्रत्याख्यान करीने, मरणने अणइच्छतो सतो पादपोपगमअणसण धारण करीने विचरीश ? " आ प्रमाणे मन, वचन अने कायाए करीने सदा जागृत रहे-

तो श्रावक महा निर्जरा करे, अने जवनो छेडो लावे." श्री सुगडांगसूत्रना नवमा अध्ययनमां कह्युं छे के—

गेहे दीवमपासंता, पुरीसादाणिआ नरा ।
ते धीरा बंधणुमुक्का, नावकंखंति जीविअं ॥ १ ॥

जावार्थ—गहस्थावासने विषे दीवो एटले जावश्रुतज्ञान तेने नहीं जोनारा पुरुषने विषे आदेय नामकर्मवाळा धीर पुरुषो संसारना बंधनथी नहीं मुकाया सता संयमरहित जीवितने इच्छता नथी, अर्थात् श्रुतज्ञानना अर्थी संयमनेज ग्रहण करे छे.

वळी योगने वहन करेला साधु विना बीजा कोइ साधु (योग वह्या विना) श्रुतनो अभ्यास करे, तो तेमने तीर्थंकरअदत्तनो दोष लागे छे. ते विषे श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रमां कह्युं छे के—"ते सर्व तीर्थंकरनुं सुजाषित दश प्रकारनुं छे. ते १ चौद पूर्वीओए प्रगटपणे जाण्युं, २ महा मुनिओने आप्युं, अने ३ देवेन्द्रने तथा नरेन्द्रने तेनो अर्थ समजाव्यो. इत्यादि." आ पाठमां प्रजुए साधुओने श्रुत आप्युं, अने सर्व देवताओ तथा मनुष्योने तेनो अर्थ कह्यो एम प्रगट रीते कह्युं छे. तेथी श्रावकोने सूत्र जणवानो अधिकार नथी एम सिद्ध थाय छे. तथा जे श्रुत जणवानी इच्छा करे छे तेणे प्रथम व्याकरणमां कहेला जेदने जाणवा जोइए. ते विषे प्रश्नव्याकरणमां "केवी रीते सत्य बोलवुं ?" एवो प्रश्न करीने तेना जवाबमां "द्रव्यथी सत्य बोलवुं, पर्याये करीने सत्य बोलवुं." इत्यादि कहेला पाठमां आगळ एवुं कह्युं छे के—"नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात, तद्धित, समास, सन्धि, पद, हेतु, यौगिक, उणादि, क्रियाविधान, धातु, स्वर, विजक्ति अने वर्ण—ए सर्व जेदने जे जाणे तेनेज सत्य वक्ता जाणवो, बीजाने नहीं." वळी जे विगय खावामां आसक्त होय ते श्रुत जणवामां अयोग्य छे (अधिकारी नथी). ते विषे श्री स्थानांग सूत्रमां कह्युं छे के—"त्रण जणा वाचनाने अयोग्य छे. १ विनय रहित, २ विगय वापरवामां आसक्त अने ३ क्रोधयुक्त चित्तवाळा; तथा त्रण जण वाचनाने योग्य छे. १ विनयी, २ विगयमां अनासक्त अने ३ क्रोधनो त्याग कर्यो छे जेणे एवा; तथा अठावीश अस्वाध्याय काळ कहेला छे, तेमां साधु साध्वीने श्रुत जणवानो निषेध कह्यो छे. ते ठेकाणे श्रावकनुं ग्रहण कर्युं नथी. ते विषे श्री स्थानांगसूत्रमां कह्युं छे के—"साधु साध्वीने चार महा पडवाने दि[1]-

१ पडवा ते वदि १ समजवी.

वसे स्वाध्याय करवो कल्पे नहीं. तेमां १ आषाढ मासनो पडवो, २ कार्तिक मासनो पडवो, ३ फाल्गुन मासनो पडवो, ४ आसो मासनो पडवो; तथा चार संध्यासमये स्वाध्याय करवो कल्पे नहीं, तेमां १ प्रभातकाळे, २ सायंकाळे, ३ मध्यान्ह समये अने ४ मध्य रात्रिए; तथा दश प्रकारनी अंतरिक्ष असज्झाय कही छे अने दश प्रकारनी औदारिक असज्झाय कही छे. एम सर्व मळीने ३८ प्रकारनी असज्झाय कही छे. इत्यादि सर्व जाणीने साधुओनेज अस्वाध्यायमां श्रुत भणवुं नहीं एम कह्युं छे. पण त्यां श्रावकनुं ग्रहण कर्युं नथी. वळी श्रीनिशीथसूत्रमां श्रावकोने वाचना आपनार साधुने माटे प्रायश्चित्त कहेलुं छे. ते आ प्रमाणे—" जे साधु अन्य तीर्थीने अथवा गृहस्थ श्रावकने वाचना आपे तेने प्रायश्चित्त लागे छे. "

अहीं कोइ शंका करे के—" जो योगवहन करीने पछी सूत्र भणे, तो घणो काळ व्यतीत थाय; अने धना नामना अणगारे थोडा समयमांज अगियार अंगनो अभ्यास कर्यो एम कहेलुं छे, तेथी ' योगवहन करीनेज श्रुताभ्यास करवो ' ए पाठ कल्पित भासे छे." तेनो उत्तर गुरु आपे छे के—" हे सिध्धान्तना परमार्थने नहीं जाणनारा ! श्री जिनेश्वरे सिध्धान्तमां पांच प्रकारना व्यवहार कहेला छे. तेमांथी जे काळे जे व्यवहार प्रवर्ततो होय ते काळे तेज व्यवहार प्रमाणे वर्तवुं; नहीं तो जिनेश्वरनी आज्ञानो भंग थाय. तेथी ते धना मुनि विगेरे आगम व्यवहारी हता, तेमनी तुलना वर्तमान समयमां करवी योग्य नथी. केमके हालना समयमां श्रुत केवळी विगेरेनो अभाव होवाथी जित व्यवहारज मुख्य छे. जुओ श्री नेमिनाथ भगवाने गजसुकुमालने दीक्षा आपी तेज दिवसे एकलविहार प्रतिमा धारण करवानी आज्ञा लाभ देखीने आपी हती. पण ते दाखलो वधे न लेवाय; माटे " अनुक्रमे क्रिया करवाथीज गुण वधे छे " एम विचारीने अन्यथा युक्तिओ करवी योग्य नथी.

वळी बीजी रीते कोइ शंका करे के—" सूत्रमां श्रावकोने ' सुअपरिग्गहिआ ' एटले ' श्रुतने ग्रहण करनारा ' एम कह्युं छे. माटे श्रावकने श्रुतनो अभ्यास करवो योग्य छे." तेना उत्तरमां गुरु कहे छे के—" आ पाठमां श्रुत एटले छ आवश्यक रूप सूत्र जाणवुं. ते पण उपधान वहन करवा पूर्वक भणवा योग्य छे. केमके ए पाठ नंदिसूत्रनो छे. तेमां " सुअपरिग्गहिआ " ए पाठ कह्या पछी तरतज " तवोवहाणाइं " (तप उपधाने करीने) ए पाठ कह्यो छे. " वळी ते पर फरी शंका करे छे के—" तो आवश्यक सूत्र भणवानुं पण केम निषिध्ध कर्युं नहीं ?" ते पर गुरु कहे छे के— ते

विषे अनुयोग द्वारमां कह्युं छे के—

समणेण सावएण वाऽवस्सकायव्वं हवइ जम्हा ।
अंतो अहनिसिस्सय, तम्हा आवस्सयं नाम ॥ १ ॥

भावार्थ—साधुने तथा श्रावकने रात्रि संबंधी अने दिवस संबंधी अवश्य करवा लायक छे, तेथी तेनुं नाम "आवश्यक" छे.

आ वचनथी आवश्यक सूत्र अवश्य विधि युक्त वांचवा भणवा योग्य छे. परंतु कारण होय तो छजीवनिका अध्ययन भणवामां पण दोष नथी, एवुं चूर्णिमां कह्युं छे.

अथवा "जे कोइ आ नियंत्रणाने न इच्छे अने विनय तथा उपधान वहन कर्या विना नवकार विगेरे श्रुतज्ञान भणे, भणावे अथवा भणताने अनुमोदन करे तेने प्रियधर्मा समजवो नहीं; अने तेणे गुरुनी, अतीत अनागत अने वर्त्तमान काळना सर्व तीर्थंकरोनी अने श्रुतनी आशातना करी छे एम समजवुं. तथा ते अनंतकाळ पर्यंत संसारमां परिभ्रमण करे अने अनेक प्रकारनी नियंत्रणाने चिरकाळ सहन करे एम जाणवुं." इत्यादि श्रीमहानिशीथ सूत्रना आलावाथी सर्वत्र उपधाननो विधि जाणवो.

वर्तमान समयमां तो द्रव्य, क्षेत्र अने कालादिकनी अपेक्षाए लाभालाभनो विचार करीने उपधान तप कर्या विनाज आवश्यक सूत्र भणवानी आचरणा चलावेली देखाय छे. परंतु ए आचरणा जिनेश्वरनी आज्ञा बराबरज छे. केमके ते विषे श्री चैत्यवंदन भाष्यमां कह्युं छे के—

असढाइण्णवज्जं, गीअत्थ अवारिअंति मज्झत्था ।
आयरणावि हु आणत्ति, वयणओ सुबहुमन्नंति ॥ १ ॥

भावार्थ—अशठ एटले पंडित पुरुषोए आदरेली, अनवद्य—पापरहित अने गीतार्थोए नहीं वारेली एवी मध्यस्थ आचरणा पण आणा—आज्ञाज छे. कारणके ते वचनने अत्यंत बहुमान आपनारा छे.

परंतु जेणे उपधान वह्या विना प्रथम नवकार विगेरेनो अभ्यास कर्यो होय, तेणे अवश्य पोतानी शक्ति प्रमाणे तप करीने पण उपधान वहेवा जोइए. कदाच गुरुने

योग न मळे तो दक्ष श्रावके स्थापनाचार्यनी समीपे उपधाननो सर्व विधि करवो, पण तेमां आळस विगेरे करवुं नहीं" एवुं हीरप्रश्नमां कहेलुं छे. घरना कामकाजमां अत्यंत व्यग्र रहेवाथी अथवा प्रमाद विगेरेथी जेओ उपधान वहन करता नथी, तेओनो नवकार गणवो, देववंदन करवुं, इर्यावही पडिक्कमवा, तथा प्रतिक्रमण करवुं विगेरे आखा जन्ममां कदापि पण शुद्ध (निर्दोष) थतां नथी, अने भवांतरमां पण तेओने ते क्रियानो लाभ मळवो असंभवित लागे छे. तेथी क्रियानी शुद्धिने इच्छनारा श्रावकोए छ उपधान अवश्य वहेवां, जेथी सर्वत्र सुखनी प्राप्ति थाय.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य
षष्ट्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २६० ॥

व्याख्यान २६१ मुं

योगना बहुमान विषे.

योगक्रियां विना साधुः, सूत्रं पठेन्न पाठयेत्।
दुष्कर्माणि विलीयन्ते, श्रुतदेवी वरदा सदा ॥ १ ॥

भावार्थ—" योग वहन कर्या विना साधुए सूत्र भणवुं के भणाववुं नहीं. केमके योग वहन करवाथी दुष्कर्मनो नाश थाय छे, अने शासनदेवता हमेशां वरदान आपनार थाय छे."

आ हकीकत उपर मासतुस मुनिनुं दृष्टांत कहे छे.

पाटलीपुरमां बे भाइओ वेपारी वसता हता. तेओ एकदा गुरु पासे धर्मोपदेश सांभळवा गया. त्यां " धम्मो मंगलमुक्किट्ठं " इत्यादि देशना सांभळीने वैराग्य थवाथी चारित्र ग्रहण कर्युं. तेमांथी एक भाइ क्षयोपशमना वशथी बहुश्रुत थया. तेने गुरुए योग्य जाणीने सूरिपद आप्युं. तेथी ते पांचसो साधुओना स्वामी थया, सर्व साधुओने ते वाचना आपता हता; ते साधुओ संदेह पडे त्यारे वारंवार आवी आवीने

प्रश्नो करता, तेथी रात्रे पण सूरिने निद्रानो अवकाश मळतो नहीं. आम थवाथी ज्ञानावरणीय कर्मना उदयने योगे तेने विचार थयो के—" शास्त्रना पार पामेला एवा मने धिक्कार छे, के जेथी हुं एक क्षण पण सुख पामतो नथी, अने मारा भाइने धन्य छे के जेथी ते निश्चिंत सुइ रहे छे." इत्यादि विचार करीने " मूर्खत्वं हि सखे ममापि रुचितं० " ए श्लोकनुं स्मरण करीने " हवे हुं आ क्लेशने तजुं " एम मनमां विचार कर्या करे छे. अन्यदा साधुओ आहार ग्रहण करवा विगेरे कार्य माटे बहार गया, त्यारे सूरिए विचार्युं के—" अहो ! घणा दिवसे आजे मने अवकाश मळ्यो, माटे अहींथी नीकळीने मारुं मनवांछित सिद्ध करुं." एम विचारीने सूरि नगरमांथी नीकळीने बहार चाल्या. नगर बहार जतां तेणे कौमुदीना महोत्सवमां एक स्तंभ (थांभलो) जोयो. ते स्तंभने विविध आभूषणोथी शणगार्यो हतो, अने तेनी फरतां बेसीने घणा माणसो संगीत करता हता. पछी महोत्सव समाप्त थयो एटले तेज स्तंभने शोभा रहित तथा कागडा विगेरे पक्षिओथी वींटाएलो जोयो. ते जोइने सूरिए विचार कर्यो के—" आ स्तंभने ज्यारे माणसोए शणगार्यो हतो अने सर्व तेनी फरतां वींटाइ वळ्या हता, त्यारे तेनो अत्यंत शोभा हती, पण अत्यारे ते कांइज शोभतो नथी; माटे खरेखर परिवारयुक्तनीज शोभा होय छे, एकलानी शोभा होती नथी. तो परिवारथी अने जैन धर्मथी भ्रष्ट थइ स्वेच्छाए विचरवाने इच्छनार एवा मने धिक्कार छे." इत्यादि विचार करीने ते सूरि पोताना उपाश्रये पाछा आव्या, अने पोताना मनथीज तेनी आलोचना (प्रायश्चित्त) लीधी. तो पण दुष्ट ध्यान करवाथी तेणे ज्ञानावरणीय कर्म बांध्युं हतुं ते निर्मूळ थयुं नहीं. पछी तेणे निर्मळ चारित्र पाळ्युं, अने आयुष्यने अंते अनशन करी मृत्यु पामीने स्वर्गे गया.

स्वर्गथी चवीने ते आभीर (रबारी) ना पुत्र थया. अनुक्रमे ते आभीरपुत्र युवावस्था पाम्यो, एटले तेना बापे तेने एक कन्या परणावी. तेने एक पुत्री थइ. ते स्वरूपे अत्यंत सौन्दर्यवान थइ. एकदा घणा आभीरो घीनां गाडां भरीने बीजे गाम वेचवा चाल्या. ते वखते आ रबारी पण घीनुं गाडुं भरीने पोतानी पुत्रीने गाडुं हांकवा बेसाडी तेओनी साथे चाल्यो. मार्गे चालतां बीजा गाडीवानो आ कन्याने जोइने मोह पाम्या, तेथी तेमनां मन व्यग्र थवाथी तेओ आडे मार्गे गाडां हांकवा लाग्या, एटले तेमनां गाडां भांगी गयां. ते वृत्तांत जाणीने पेली कन्याना बापे विचार कर्यो के—" आ संसारनी प्रवृत्तिने धिक्कार छे ! सर्व जीवो आवा असार अने मल, मूत्र तथा

पुरीषना पात्र रूप स्त्रीना शरीरने विषे कामांध थइने पोताना हितसाधनमां पण निरपेक्ष थइ मोह पामे छे." आ प्रमाणे अशुच्यादि भावना भावतां तेने वैराग्य उत्पन्न थयो. पछी ग्रामान्तरमां घी वेचीने ते पोताने घेर आव्यो. त्यां पोतानी पुत्रीने योग्य स्थाने परणावीने तेणे सद्गुरु समीपे दीक्षा ग्रहण करी. अनुक्रमे आवश्यक विगेरेना योग वहन करीने उत्तराध्ययनना योग वहन करतां तेणे त्रण अध्ययन पूर्ण कर्यां. पछी पूर्वसंचित ज्ञानावरणी कर्मनो उदय थवाथी तेने घणो प्रयास कर्या छतां पण श्रीउत्तराध्ययनना चोथा असंख्येय अध्ययननो एक अक्षर पण आवड्यो नहीं. तेथी तेणे गुरुने कह्युं के—" आ आवडतुं नथी." त्यारे गुरुए कह्युं के—" हे मुनि ! तमे आंबेलनो तप करो, अने " मा रुस मा तुस—रोष न करवो, तोष न करवो" ए रीते रागद्वेषनो निग्रह करवाना रहस्यवाळुं पद गोख्या करो." ते वात कबुल करीने 'मारे बीजो पाठ लेवाथी सर्युं' एम मानी ते मुनिए बीजो पाठ लीधो नहीं' अने तेनुं तेज पद मोटेथी गोखवा लाग्या. तोपण ते पद कंठे थयुं नहीं, अने अस्पष्ट (मासतुस, मासतुस) एवो उच्चार थवाथी लोको हसवा लाग्या. ते जोइ मुनि क्षमा धारण करीने उलटा पोताना कर्मनेज निंदवा लाग्या. तेमज " रे जीव ! तुं रोष करमा ने तोष करमा " ए रीते सर्व सिध्धान्तना सारभूत तेज पद गोखवा लाग्या. लोकोए तेनुं नाम मासतुस पाड्युं. ए प्रमाणे आत्मनिंदा अने आचाम्ल तप करतां ते मुनिए बार वर्ष व्यतीत कर्यां. बार वर्षने अंते तेज पद गोखतां ते मुनि शुद्ध ध्यानवडे क्षपक श्रेणि उपर आरूढ थइने सकल लोकालोकने प्रकाश करनार केवळज्ञानने पाम्या. देवोए केवळज्ञाननो महिमा कर्यो.

त्यार पछी पृथ्वीपर विहार करतां मासतुस केवळी घणा भव्य जीवोने प्रतिबोध करीने अनन्त चतुष्कमय शाश्वत स्थानने (मोक्षने) पाम्या.

"आ प्रमाणे मासतुस साधु शुद्ध भावना वडे सर्व पापनो क्षय करीने केवळज्ञान मेळवी शाश्वतपदने पाम्या."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य एकषष्ठ्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २६१ ॥

व्याख्यान २६२ मुं

योगवहनने स्थिर करवा माटे दृष्टांत कहे छे.

नलिनीगुल्मत एत्याचार्यजीवः सुरोत्तमः ।
योगवाहिस्वशिष्याणां, क्रियास्वविघ्नमातनोत् ॥ १ ॥

भावार्थ—"नलिनीगुल्म नामना विमानमां आचार्यनो जीव श्रेष्ठ देवता थयो हतो. तेणे त्यांथी पोताने स्थाने आवीने योगवहन करता एवा पोताना शिष्योने तेमनी क्रियामां निर्विघ्नपणुं कर्युं (विघ्ननो नाश कर्यो). " तेनुं दृष्टांत आगळ कहेशे.

स्थानांग सूत्रमां कह्युं छे के—" श्रमण भगवान महावीरना तीर्थमां सात प्रवचन निन्हव थशे, तेमां १ (बहुरता) बहु समये कार्यवादी, २ चरम प्रदेशे जीववादी, ३ अव्यक्तवादी, ४ समय सामुच्छेदीक (समये समये उच्छेद माननार), ५ एक समये बे क्रिया माननार, ६ त्रीराशीओ अने ७ अबद्धियतीक (स्पृष्ट कर्म माननार), ते सात प्रवचन निन्हवना सात धर्मगुरुओ छे. तेमनां नाम १ जमाली, २ तीस्सगुप्त, ३ आषाढ सूरिना शिष्य, ४ अश्वमित्र मुनि, ५ गंगदत्त मुनि, ६ छलुक (रोहगुप्त) अने गोष्ठामाहिल्ल. आ सात निन्हवो सूत्रमां सूचन मात्रथी कह्या छे. तेमां त्रीजो निन्हव योगक्रिया वहन कर्या पछी मिथ्यात्वना उदयथी उत्पन्न थयो छे. ए रीते अनेक ठेकाणे साधुओना उपधान तपनुं वर्णन करेलुं जोवामां आवे छे. अहो ! ते योगादिकनो जे अपलाप करे छे तेनी धृष्टता अकलित छे. केमके ते प्रत्यक्ष रीते सूत्र विरुद्ध बोले छे अने तेम थवाथी सूत्रमां कहेलुं अव्यक्तवादीनुं चरित्र व्यर्थ थइ जाय तेम छे. ते चरित्र संप्रदायथी आवेलुं नीचे प्रमाणे छे—

श्वेतांबिका नामनी नगरी पासे पोलास नामना वनमां आर्य आषाढसूरि गच्छ सहित समवसर्या. ते गच्छमां आगम जाणनारा घणा शिष्यो हता. तेओ आगाढ योग वहन करवानो निश्चय करी ते संबंधी क्रिया करवामां तत्पर थया. तेज दिवसे कोइ तेवा प्रकारनां कर्मोना उदयथी आचार्यने हृदयमां शूळनो व्याधि थयो, अने काळ करीने सौधर्म देवलोकमां नलिनीगुल्म नामना विमानने विषे देवपणे उत्पन्न थया. ते वृत्तांत आखा गच्छमां कोइना जाणवामां आव्युं नहीं. अहीं अवधिज्ञानना उपयोगथी ते

साधुओने आगाढ योगमां पडेला जाणीने तेमना पर दया आववाथी ते देवे त्यां आवीने तेज शरीरमां प्रवेश कर्यो. पछी ते साधुओने उठाडीने कह्युं के-"हे साधुओ! वैरात्रिक काळ ग्रहण करो." उत्तराध्ययनना छत्रीशमा अध्ययनमां काळग्रहण अने योगविधि योग्य अनुष्ठान बतावेलुं छे.

पोरसीए चउब्भाए, वंदित्ता तओ गुरुं ।

पडिक्कमित्ता कालस्स, सेज्जं तु पडिलेहए ॥१॥

भावार्थ—"रात्रिना प्रथम पहोरने चोथे भागे गुरुने वांदणां दइने काळ प्रतिक्रमवावाळो शय्या जे काळग्रहणनी भूमि तेने पडिलेहे." आ गाथामां वाघायिक कालग्रहण जाणवुं ; अने

तस्सेव य नक्खत्ते, गयणचौभागसावसेसंमि ।

वेरत्तिअंपि कालं, पडिलेहि मुणि कुज्जा ॥ १ ॥

भावार्थ—"वाघायिक काळग्रहणवखते जे नक्षत्र गगनने आठमे भागे दीठुं हतुं तेज नक्षत्रने गगनगति करतां गगननो चोथो भाग ज्यारे शेष रहे त्यारे वैरात्रिक कालग्रहण मंडलभूमिनो पडिलेहनार मुनि करे." आ गाथामां वैरात्रिक काळग्रहण कह्युं छे.

आ प्रमाणे सूत्रने अनुसारे देवना वचनथी साधुओए क्रिया करी. तेमज श्रुतना उद्देश, समुद्देश अने अनुज्ञा पण तेमनी पासे करी. ए रीते दिव्य प्रभावथी ते देवताए ते साधुओना काळभंग विगेरे विघ्ननुं निवारण करीने जलदीथी तेमना योग पूर्ण कराव्या. पछी ते शरीर मूकीने स्वर्गमां जती वखते ते देवताए कह्युं के—"हे पूज्य साधुओ ! क्षमा करजो. में असंयमीए तमोने वंदनादिक कराव्यां छे. तमे संयमी छो अने हुं तो अमुक दिवसे काळ करीने स्वर्गमां गयो हतो, पण तमारापर दया आववाथी अहीं आवीने तमारा योग पूर्ण कराव्या छे." इत्यादि कही तेमने खमावीने ते देवता स्वर्गे गयो. पछी ते साधुओए तेनुं शरीर परठवावीने विचार कर्यो के—"अहो! आ अविरति देवने आपणे घणा काळ सुधी वंदना करी, माटे ए प्रमाणे बीजे स्थाने पण शंका राखवी जोइए. केमके कोण संयमी छे अने कोण असंयमी देवता छे, ते कोण जाणे छे? माटे कोइने पण वंदना न करवी एज श्रेयनो रस्तो ज-

णाय छे; नहींतो असंयमीनी वंदना अने मृषावाद ए बे दोष लागे. " आ प्रमाणे तेवा प्रकारना त्यारे कर्मना उदयथी ते मिथ्या परिणामनी बुद्धिवाळा साधुओए अव्यक्तवादनो अंगीकार करीने परस्पर वंदनक्रियाने मूकी दीधी. बीजा स्थविर साधुए तेमने शिखामण आपी के—" जो तमारे बीजा सर्व उपर संदेह छे, तो जेणे तमने कह्युं के 'हुं देव छुं' त्यां पण तमने केम संदेह थयो नहीं के ते देव छे के अदेव छे ?"

वादी—तेणे पोतेज कह्युं के 'हुं देव छुं' तथा देवनुं रुप पण अमे प्रत्यक्ष जोयुं तेथी संदेह रह्यो नहीं.

प्रतिवादी—जो एम छे तो जेओ एम कहे छे के 'अमे साधु छीए ' तेमज साधुनुं रुप पण तमे प्रत्यक्ष जुओ छो तो तेओने विषे साधुपणानो शो संदेह के जेथी तमे परस्पर वंदना करता नथी ? वळी ' साधुना करतां देवनुं वाक्य वधारे सत्य होय ' एम पण तमारे धारवुं नहीं. केमके देवो तो क्रीडा विगेरेना कारणथी असत्य पण बोले, अने साधु तो तेवा असत्यथी पण विरमेला होवाथी असत्य बोले नहीं. वळी जो प्रत्यक्ष एवा यतिने विषे पण तमारे शंका छे, तो पछी परोक्ष एवा जीवाजीवादि पदार्थोने विषे तो घणीज शंका होवी जोइए. वळी यतिवेषवाळा मनुष्यमां साधुपणुं छे के नहीं, एवो तमने संदेह पडे छे, तो प्रतिमाने विषे तो निश्चयथीज जिनपणुं नथी; तो तेनी वंदना केम करवी ? अने साधुनी वंदनानो निषेध केम करवो ?

वादी—असंयमी देवताए प्रवेश करेला यतिवेषने वांदवाथी तेमां रहेला असंयम रुप पापनी अनुमति आवे, ते दोष प्रतिमाने विषे नथी.

प्रतिवादी—देवताए अधिष्ठित करेली प्रतिमाने विषे पण अनुमति रूप दोष रहेलोज छे.

वादी—शुद्ध अध्यवसायवाळो माणस जिनेश्वरनी बुद्धिथी प्रतिमाने वांदे छे, माटे ते दोष प्रतिमाने विषे लागतो नथी.

प्रतिवादी—जो एम छे तो शुद्ध अध्यवसायवाळाने यतिबुद्धिथी यतिरुपने वांदतां शो दोष के जेथी तमे परस्पर वंदना करता नथी ?

वादी—त्यारे तो विशुद्ध परिणामवाळो लिंगमात्रने धारण करनार पार्श्वस्थादिकने पण यतिबुद्धिथी नमे, तो तेने दोष लागतो नथी एम समजवुं.

साधुओने आगाढ योगमां पडेला जाणीने तेमना पर दया आववाथी ते देवे त्यां आवीने तेज शरीरमां प्रवेश कर्यो. पछी ते साधुओने उठाडीने कह्युं के–"हे साधुओ! वैरात्रिक काळ ग्रहण करो." उत्तराध्ययनना छत्रीशमा अध्ययनमां काळग्रहण अने योगविधि योग्य अनुष्ठान बतावेलुं छे.

पोरसीए चउप्भाए, वंदित्ता तओ गुरुं।
पडिक्कमित्ता कालस्स, सेज्जं तु पडिलेहए ॥१॥

भावार्थ—"रात्रिना प्रथम पहोरने चोथे भागे गुरुने वांदणां दइने काळ प्रतिक्रमवावाळो शय्या जे काळग्रहणनी भूमि तेने पडिलेहे." आ गाथामां वाघातिक कालग्रहण जाणवुं; अने

तम्मेव य नक्खत्ते, गयणचौभागसावसेसंमि।
वेरत्तिअंपि कालं, पडिलेहि मुणि कुज्जा ॥ १ ॥

भावार्थ—"वाघायिक काळग्रहणवखते जे नक्षत्र गगनने आठमे भागे दीठुं हतुं तेज नक्षत्रने गगनगति करतां गगननो चोथो भाग ज्यारे शेष रहे त्यारे वैरात्रिक कालग्रहण संबंधभूमिनो पडिलेहनार मुनि करे." आ गाथामां वैरात्रिक काळग्रहण कह्युं छे.

आ प्रमाणे सूत्रने अनुसारे देवना वचनथी साधुओए क्रिया करी. तेमज श्रुतना उद्देश, समुद्देश अने अनुज्ञा पण तेमनी पासे करी. ए रीते दिव्य प्रभावथी ते देवताए ते साधुओना काळभंग विगेरे विघ्ननुं निवारण करीने जलदीथी तेमना योग पूर्ण कराव्या. पछी ते शरीर मूकीने स्वर्गमां जती वखते ते देवताए कह्युं के—"हे पूज्य साधुओ! क्षमा करजो. में असंयमीए तमोने वंदनादिक कराव्यां छे. तमे संयमी छो अने हुं तो अमुक दिवसे काळ करीने स्वर्गमां गयो हतो, पण तमारापर दया आववाथी अहीं आवीने तमारा योग पूर्ण कराव्या छे." इत्यादि कही तेमने खमावीने ते देवता स्वर्गे गयो. पछी ते साधुओए तेनुं शरीर परठवीने विचार कर्यो के—"अहो! आ अविरति देवने आपणे घणा काळ सुधी वंदना करी, माटे ए प्रमाणे बीजे स्थाने पण शंका राखवी जोइए. केमके कोण संयमी छे अने कोण असंयमी देवता छे, ते कोण जाणे छे? माटे कोइने पण वंदना न करवी एज श्रेयनो रस्तो ज-

णाय छे; नहींतो असंयमीनी वंदना अने मृषावाद ए बे दोष लागे. " आ प्रमाणे ते-वा प्रकारना ज्यारे कर्मना उदयथी ते मिथ्या परिणामनी बुद्धिवाळा साधुओए अव्यक्तवादनो अंगीकार करीने परस्पर वंदनक्रियाने मूकी दीधी. बीजा स्थविर साधुए तेमने शिखामण आपी के—" जो तमारे बीजा सर्व उपर संदेह छे, तो जेणे तमने कह्युं के 'हुं देव छुं' त्यां पण तमने केम संदेह थयो नहीं के ते देव छे के अदेव छे ?"

वादी—तेणे पोतेज कह्युं के 'हुं देव छुं' तथा देवनुं रुप पण अमे प्रत्यक्ष जोयुं तेथी संदेह रह्यो नहीं.

प्रतिवादी—जो एम छे तो जेओ एम कहे छे के 'अमे साधु छीए ' तेमज साधुनुं रुप पण तमे प्रत्यक्ष जुओ छो तो तेओने विषे साधुपणानो शो संदेह के जेथी तमे परस्पर वंदना करता नथी ? वळी ' साधुना करतां देवनुं वाक्य वधारे सत्य होय ' एम पण तमारे धारवुं नहीं. केमके देवो तो क्रीडा विगेरेना कारणथी असत्य पण बोले, अने साधु तो तेवा असत्यथी पण विरमेला होवाथी असत्य बोले नहीं. वळी जो प्रत्यक्ष एवा यतिने विषे पण तमारे शंका छे, तो पछी परोक्ष एवा जीवाजीवादि पदार्थोने विषे तो घणीज शंका होवी जोइए. वळी यतिवेषवाळा मनुष्यमां साधुपणुं छे के नहीं, एवो तमने संदेह पडे छे, तो प्रतिमाने विषे तो निश्चयथीज जिनपणुं नथी; तो तेनी वंदना केम करवी ? अने साधुनी वंदनानो निषेध केम करवो ?

वादी—असंयमी देवताए प्रवेश करेला यतिवेषने वांदवाथी तेमां रहेला असंयम रुप पापनी अनुमति आवे, ते दोष प्रतिमाने विषे नथी.

प्रतिवादी—देवताए अधिष्ठित करेली प्रतिमाने विषे पण अनुमति रूप दोष रहेलोज छे.

वादी—शुद्ध अध्यवसायवाळो माणस जिनेश्वरनी बुद्धिथी प्रतिमाने वांदे छे, माटे ते दोष प्रतिमाने विषे लागतो नथी.

प्रतिवादी—जो एम छे तो शुद्ध अध्यवसायवाळाने यतिबुद्धिथी यतिरुपने वांदतां शो दोष के जेथी तमे परस्पर वंदना करता नथी ?

वादी—त्यारे तो विशुद्ध परिणामवाळो लिंगमात्रने धारण करनार पार्श्वस्थादिकने पण यतिबुद्धिथी नमे, तो तेने दोष लागतो नथी एम समजवुं.

प्रतिवादी—तारुं कहेवुं अयुक्त छे. केमके पार्श्वस्थादिकने विषे सम्यक् निर्ग्रंथपणानो अभाव छे. आहार विहार विगेरे वडे तेनामां निर्ग्रंथना लिंगनी प्राप्ति जणाती नथी, माटे प्रत्यक्ष दोषवाळा पार्श्वस्थादिकने वंदना करे, तो तेने सावद्यानुज्ञानो दोष लागे. कह्युं छे के—

जह वेलंबगलिंगं, जाणन्तस्स नमओ हवइ दोसो ।
निद्धंधसं पि नाऊण, वंदमाणे धुवो दोसो ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम भांडभवाये—विदुषके लीधेला वेषने जाणतो छतो तेने वंदना करे तो तेने दोष लागे छे, तेमज जेनामां निध्वंसपणुं वर्ते छे एवा वेषधारी मुनिने जाणता छतां वंदना करे तो अवश्य दोष लागे छे. "

वळी जो तमे प्रतिमाने पण वंदना न करो, तो तमारे सर्वत्र शंकाज रही. तेथी आहार, उपधि, शय्या विगेरे पण देवताना विकुर्वेला हशे के नहीं, तेनो निश्चय नहीं होवाथी ते आहारादिक पण तमारे ग्रहण करवा न जोइए. ए प्रमाणे अति शंका राखवाथी समग्र व्यवहारनो उच्छेद थशे. केमके निश्चयकारी ज्ञान विना कोण जाणे छे के आ भक्त छे के कीडा छे ? वस्त्रादिकमां माणिक्य छे के सर्प छे ? विगेरे सर्व स्थाने भ्रांतिज रहेशे, अने भक्तपानादि कांइ पण वापरी शकाशे नहीं. अथवा तो जेम आर्य आषाढ देवे धारण करेलुं यतिनुं रुप तमे जोयुं, तेवा बीजा केटला देवोने यतिरुपे तमे पूर्वे जोया हता के जेथी आ एकज दृष्टांतथी तमे सर्वत्र शंकाशील थया छो ? कोइ वखत कांइ आश्चर्यादिकना कारणथी कोइ ठेकाणे कोइ देवादिकने विषे तेवी रीते जोइने सर्व स्थाने तेवी शंका राखवी ए योग्य नथी. माटे व्यवहार नयनो आश्रय करीने तमारे एक बीजाने वंदना करवी युक्त छे. केमके छद्मस्थने सर्व प्रवृत्ति व्यवहारथीज करवी पडे छे. व्यवहारनो उच्छेद करवाथी तीर्थना उच्छेदनो प्रसंग प्राप्त थाय छे. सर्वज्ञो पण व्यवहारमार्गनो लोप करता नथी. ते विषे महाभाष्यमां श्री जिनभद्रगणिए कह्युं छे के—

संववहारो वि बली, जमसुद्धं पि गहियं सुयविहिए।
कोवेइ न सव्वण्णु, वदइय कयाइ छउमथ्थं[1] ॥ १ ॥

१ आ पद अशुध्ध जणाय छे.

भावार्थ—"श्रुत व्यवहार पण बळवान छे. जेथी श्रुतविधि प्रमाणे छद्मस्थे ग्रहण करेला शुद्ध पण केवळीनी बुद्धिए अशुद्ध आहारने पण सर्वज्ञ दूषित करता नथी (वापरे छे), अने ते संबंधी कांइ कहेता नथी अर्थात् तेने प्रमाण करे छे."

इत्यादि युक्तिओवमे ते स्थविर साधुए तेमने समजाव्या, तोपण तेओए पोताना आग्रह छोड्यो नहीं. त्यारे ते स्थविर साधुओए तेमने कायोत्सर्ग[1] पूर्वक गच्छ बहार कर्या.

तेओ फरता फरता अन्यदा राजगृह नगरे गया. त्यां मौर्यवंशी बलभद्र नामनो राजा राज्य करतो हतो. ते शुद्ध श्रावक हतो. तेणे सांभळ्युं के—'अव्यक्तवादी निन्हवो अहीं आव्या छे, अने गुणशिल नामना वनमां रह्या छे.' पछी ते श्रावक राजाए तेमने बोध करवा माटे पोताना सुभटो पासे तेमने बांधीने पोतानी पासे अणाव्या, अने कृत्रिम कोप देखाडीने पोताना सुभटोने हुकम कर्यो के—"आ सर्वने तेलनी उकळती कडाइमां नांखो अने हाथीने पगे बांधी तेमनुं मर्दन करो." ते हुकम सांभळीने ते सुभटो हाथीओने तथा कडाइओने लाव्या. ते जोइने भय पामेला साधुओए राजाने कह्युं के—" हे राजन्! तमे श्रावक छतां अमने साधुओने केम हणो छो?" राजाए कह्युं के—"तमे चोर छो, हेरीक छो के साधु छो ते कोण जाणे छे?" तेओ बोल्या के—" हे राजन्! अमे साधुज छीए, बीजा कोइ नथी." त्यारे राजाए कह्युं के—" तमारा मतमां तो सर्व वस्तु अव्यक्त (संदेहवाळी) छे. तेथी तमे सत्य साधु छो एम कोण जाणे? तथा तमे पण केम कही शको? वळी तमारा मत प्रमाणे हुं श्रावक छुं के बीजो छुं, ते पण शंकित छे. तो तमे मने श्रावक केम कहो छो? तेम कहेवाथी परस्पर नहीं वांदता एवा तमारा अव्यक्तवादनी हानिनो प्रसंग आवे छे. तथापि हजु पण तमे व्यवहारनयने अंगीकार करो तो उत्तम श्रमण निर्ग्रंथ तरीके तमने हुं सर्दहुं (कबुल करुं)." ते सांभळीने ते साधुओ बहु लज्जा पाम्या, अने राजानी वाणीथी दृढ बोध पाम्या. पछी तेओए राजाने वचने कह्युं के—" श्रीमान् जिनेश्वरे कहेली क्रियायुक्त अने ज्येष्ठ लघुना व्यवहारे परस्पर वंदना करनारा अमे श्रमण निर्ग्रंथ छीए." ए प्रमाणे वारंवार बोलवा लाग्या. वळी तेओ बोल्या के—" हे साधुराज! अमने चिरकाळथी भ्रांति पामेलाने आजे तमे सन्मार्गे प्रमाड्या." ते सांभळीने राजा नम्रताथी बोल्यो के—तमोने प्रतिबो-

१ वोसिराववा पूर्वक.

ध करवा माटे में जे अयोग्य काम कर्युं ते सर्व क्षमा करजो." एम कहीने ते श्रेष्ठ राजाए सर्व साधुओने वंदना करी. ते साधुओ पण फरीथी बोध पामीने प्रथमनी जेम पृथ्वी पर विहार करवा लाग्या.

महावीर स्वामीना निर्वाण पछी वसें चौद वर्षे उत्पन्न थयेला त्रीजा निन्हवनी आ कथा कही छे.

सूत्रना योगवहननी क्रियामां पोताना शिष्योने विघ्न न थाओ. एम विचारीने श्रुतनी भक्तिमां आसक्त एवा आषाढदेवताए स्वर्गमांथी आवीने तेओनी क्रिया पूर्ण करावी.

"हे तपस्वीओ! आ प्रमाणे उपधान नामना शुभाचारनुं वर्णन सांभळीने आगमने अनुसारे ते उपधानविधिमां आदर करो."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य
द्विषष्ठ्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २६२ ॥

व्याख्यान २६३ मुं.

अनिन्हव नामना पांचमा आचार विषे.

श्रुताक्षरप्रदातॄणां, गुरूणां च श्रुतादीनाम् ।
अनिन्हवोऽयमाचारः, पंचमः श्रीजिनैः स्तुतः ॥ १ ॥

भावार्थ—"श्रुतना अक्षरने आपनारा गुरुओनो अने श्रुतादीकनो अपलाप करवो नहीं. ए पांचमो आचार श्री जिनेश्वरोए कहेलो छे."

जेनी पासे कांइ पण अध्ययन कर्युं होय ते गुरु अप्रसिद्ध होय के जाति अथवा श्रुतादिकथी हीन होय, तो पण तेने गुरु तरीके मानवा (कहेवा), पण पोतानुं गौरव करवुं नहीं. पंथक नामना शिष्यनी जेम गुरुनुं बहुमान करवुं. तेना दोष ग्रहण करवा नहीं. निरंतर गुरुथी शंकाता रहेवुं (भय पामता रहेवुं); निःशंकपणुं धारण करवुं नहीं.

श्री आम राजाए मातंगी स्त्रीनो स्पर्श कर्यो ते वृत्तांत गुरुए जाण्युं, त्यारे राजाए मनमां विचार्युं के—" अहो ! मारुं अयोग्य कृत्य गुरुए जाण्युं. हवे हुं गुरुने मुख शी रीते बतावुं ? " पछी ते पापनी शुद्धि करवा माटे राजा तपावेली लोहनी पुतळीनो स्पर्श करवा तैयार थयो. ते वात जाणवाथी गुरुए तेने श्लोको मोकलीने बोध कर्यो. आ दृष्टांत विस्तारथी प्रथम लखी गया छीए.

वळी कुमारपाळ राजाए सुकां घेबर चावतां मांसभक्षणनो स्वाद संभार्यो हतो. पछी तरतज उपयोग आववाथी तेणे विचार्युं के—" अहो ! में आ अयोग्य चिंतव्युं. आ वात गुरु जाणशे तो मारुं जीवित धिक्कारपात्र थशे. " एम विचारीने राजा पोताना दांत पाडी नांखवा तैयार थयो, ते वखते तेमना श्रावक प्रधानोए तेमने उपदेश आपीने अटकाव्यो. पछी तेणे गुरुए आपेला प्रायश्चित्तमां घेबरना रंग अने आकारवाळो एक हजार ने चौद स्तंभथी युक्त नवीन प्रासाद कराव्यो. विगेरे दृष्टांतोथी गुरु विगेरेनो अपलाप करवामां मोटो दोष जाणवो. अन्य धर्ममां पण कह्युं छे के—

एकाक्षरप्रदातारं, यो गुरुं नाभिमन्यते ।
श्वानयोनिशतं गत्वा, चंडालेष्वभिजायते ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे माणस एक अक्षरने पण आपनार (भणावनार) एवा गुरुने गुरु तरीके मानतो नथी, ते सो वखत कूतरानी योनिमां जन्मीने चंडाळनी योनिमां उत्पन्न थाय छे. "

तेमज श्रुतादिकनो पण अपलाप करवो नहीं. जेनी पासे जेटलुं श्रुत भण्या होइए तेटलुंज कहेवुं, पण तेथी न्यूनाधिक कहेवुं नहीं. केमके तेम करवाथी मृषावाद, मननुं कालुष्य अने ज्ञानातिचार विगेरे दोषो प्राप्त थाय छे. गुरुनो अने श्रुतनो अपलाप करवाथी रोहगुप्त साधुनी जेम सर्व गुणनी हानि थाय छे.

रोहगुप्तनी कथा.

अन्तरिकापुरीना उपवनमां श्रीगुप्त आचार्य गच्छ सहित रह्या हता. ते पुरीमां बलश्री नामे राजा राज्य करतो हतो. आचार्यनो रोहगुप्त नामनो एक शिष्य बीजा गाममां रह्यो हतो, ते गुरुने वांदवा माटे ते पुरीमां आव्यो. त्यां कोइ एक तापस लोहना पाटाथी पोतानुं पेट बांधीने जांबुना वृक्षनी शाखा हाथमां राखीने नगरीमां भम-

तो हतो. ते जोइने " आ शुं ! " एम लोकोए पूछ्युं, त्यारे ते तापस बोल्यो के—" मारुं उदर घणा ज्ञानथी भराइ गयुं छे, माटे ते फाटी जवाना भयथी तेने लोहना पट्टथी बांधी लीधुं छे, अने आखा जंबूद्वीपमां मारो प्रतिवादी कोइ नथी एवुं जणाववा माटे आ जंबूवृक्षनी डाळी हाथमां राखी छे. " पछी ते तापसे " आखी नगरी शून्य छे. सर्वे परप्रवादी छे, पण मारो प्रतिवादी कोइ नथी " एवी घोषणा पूर्वक आखी नगरीमां पडह वगडाव्यो. ते पडह नगरीमां प्रवेश करतां रोहगुप्ते जोयो अने घोषणा सांभळी. तेथी " हुं तेनी साथे वाद करीश " एम कहीने रोहगुप्ते ते पडहने निवारण कर्यो. पछी तेणे गुरु पासे आवीने वंदना पूर्वक वाद करवानुं कबुल कर्यानो वृत्तांत कह्यो. ते सांभळीने गुरुए कह्युं के—"तें ए काम सारुं कर्युं नहीं, केमके ते घणी विद्याथी भरपूर छे. तेथी ते कदाच वादमां पराभव पामे छे तो मंत्रविद्याथी प्रतिवादीने उपद्रव करे छे. ते विद्या आ प्रमाणे—

वृश्चिकान् पन्नगानाखून्, मृगशूकरवायसान् ।
शकुनिकांश्च कुरुते, स हि विद्याभिरुद्भटान् ॥ १ ॥

भावार्थ—" ते तापस विद्यावडे अति उद्भट एवा वींछी, सर्प, उंदर, मृग, सुवर, कागडा अने समळीओ विगेरे विकुर्वे छे."

ते सांभळी रोहगुप्ते कह्युं के—" एम होय तोपण हवे क्यां नासीने जवाय एम छे ? ते पटह तो में निवारण कर्यो छे. हवे तो जे थवानुं होय ते थाओ. " गुरुए कह्युं के—" जो एवोज निश्चय होय, तो मात्र पाठ करवाथीज सिद्ध थाय एवी अने तेनी विद्यानो नाश करनारी आ सात विद्या तुं ग्रहण कर.

केकिनो नकुला ओतु—व्याघ्रसिंहाश्च कौशिकाः ।
श्येनाश्च याभिर्जायन्ते, तद्विद्याबाधकाः क्रमात् ॥ १ ॥

भावार्थ—"आ सात विद्याए करीने अनुक्रमे तेनी विद्याने बाध करनारा मोर, नोळिया, बिलाडा, वाघ, सिंह, घुवड अने बाज पक्षीओ उत्पन्न थाय छे. "

पछी ते सात विद्याओ आपी अने ते उपरांत ओघो मंत्रीने गुरुए तेने आप्यो अने कह्युं के—" जो कदाच ते तापस क्षुद्र विद्याथी बीजो कांइ पण उपद्रव करे, तो तेना निवारणने माटे आ ओघो तारे तारा माथा पर फेरववो. तेम करवाथी इन्द्र

पण तने जीती शकशे नहीं. " पछी ते रोहगुप्त राजसन्नामां गयो. त्यां तेणे कह्युं के "आ त्रिक्षुक तापसमां शुं ज्ञान छे ? तेथी प्रथम तेज पोतानी इच्छा प्रमाणे पूर्वपक्ष करे, तेनो हुं उत्तर आपीश. " ते सांभळीने तापसे विचार्युं के—" आ साधुओ घणा निपुण होय छे; माटे तेनाज संमत पक्षनो आश्रय करीने हुं बोलुं, के जेथी ते तेनुं निराकरण करीज शके नहीं. " एम विचारीने ते बोल्यो के—" आ दुनियामां जीव अने अजीव एवी बेज राशि छे, तेज प्रमाणे जोवामां आवे छे माटे. धर्म ने अधर्म, द्रव्य ने भाव इत्यादि बबे राशिनी जेम.[1] " ते सांभळीने रोहगुप्ते वादीनो पराभव करवा माटे पोताना समत पक्षने पण छोडी दइने तेने असत्य ठरावचा कह्युं के–" तें जे हेतु आप्यो छे ते बीजी रीते जोवामां आवे छे तेथी असिद्ध छे. दुनिआमां जीव, अजीव अने नोजीव एवी त्रण राशि जोवामां आवे छे. तेमां नारकी, तिर्यंच विगेरे जीव, परमाणु, घट विगेरे अजीव अने गरोळीनी कपायेली पूंछडी विगेरे नोजीव छे. तेथी जीव, अजीव अने नोजीव ए त्रण राशि सिद्ध थइ, तेज प्रमाणे देखाय छे माटे. अधम, मध्यम अने उत्तम राशिनी जेम." इत्यादि अनेक युक्तिओवडे तेना प्रश्नोना उत्तर आपीने ते तापसनो तेणे पराजय कर्यो. तेथी तापसे क्रोध पामीने वृश्चिकविद्यावडे रोहगुप्तनो विनाश करवा माटे वींछी मूक्या, ते वींछीओनो नाश करवा माटे रोहगुप्ते मयूरीविद्यावडे मोर छोड्या. तेओए वींछीने मारी नांख्या, त्यारे तापसे सर्प छोड्या, तेना पर रोहगुप्ते नोळीया छोड्या. ए प्रमाणे उंदर उपर बिलाडा, मृग उपर वाघ, सुवर उपर सिंह अने कागडा उपर घुवड मूक्या. तेथी अत्यंत क्रोध पामीने तापसे अति दुष्ट समळीओ मूकी, तेना पर साधुए बाज मूकीने तेमने हणावी. ते जोइने तापसे अति क्रोधथी [2]रासभी मूकी. तेने आवती जोइने साधुए पोताना शरीर फरतो ओघो फेरववा मांड्यो अने तेवती ते रासभीने मारी, तेथी प्रभाव रहित थइने ते रासभी तापस उपर मूत्र पुरीष करीने जती रही. ते सर्व जोइने सभापति राजाए तथा सभाना समग्र लोकोए ते तापसनी निंदा करीने तेने नगरमांथी काढी मूक्यो. रोहगुप्त मुनि विजय मेळवीने गुरुनी पासे आव्या अने सर्व वृत्तांत कह्यो. ते सांभळीने गुरुए कह्युं के—" तें तापसने जीती लीधो, ते बहु सारुं कर्युं. परंतु सभामांथी उठीने आवतां तें एम केम न कह्युं के—" मात्र वादीने जीतवा माटेज में त्रण रा-

१ अहीं वादी त्रण वाक्यो बोल्यो छे: तेमां पहेलुं वाक्य पक्ष, बीजुं हेतु अने त्रीजुं दृष्टांत कहेवाय छे, ते त्रणे मळीने अनुमान प्रमाण थयुं छे. ए प्रमाणे सर्वत्र जाणवुं. २ गधेडी.

शिनुं स्थापन कर्युं छे, पण वास्तविक रीते तो जीव अने अजीव एवी बेज राशि छे, माटे हजु पण सभामां जइने खरी वात कही आव." ए प्रमाणे गुरुए घणी वार घणी रीते कह्युं, त्यारे ते रोहगुप्ते जवाब आप्यो के—" हे सूरि ! मारो सिद्धांत पण सत्य छे. जो कदाच नोजीव नामनो त्रीजो राशि मानतां कांइ दोष आवतो होय तो ते सिद्धांत असत्य छे, पण तेमां कांइ दोष आवतो नथी. केमके गरोळीनी पूंछडी विगेरे जीवना देशभागने नोजीव कहीए तो तेमां शो दोष ? हुं तो एमां कांइ पण दोष जोतो नथी. सूत्रमां धर्मास्तिकाय विगेरेना दश प्रकार कह्या छे तेमां ते धर्मास्तिकायना प्रदेशने पृथग् वस्तुपणे कहेलुंज छे; नहींतो दश प्रकार घटे नहीं. तेज प्रमाणे गरोळीनी पूंछडी अने छेदायेला एवा मनुष्यना हाथ विगेरे अवयवो ते छेदायेला होवाथी जीवथी भिन्न छे, अने ते अवयवो स्फुरणायमान थाय छे तेथी अजीवथी पण भिन्न छे माटे अवश्य ते अवयवो जुदीज वस्तु छे, एम सिद्ध थाय छे." ते सर्व सांभळीने गुरु तेने साथे लइने राजसभामां गया. त्यां सत्य मार्गनी प्ररुपणा करीने शिष्ये करेला प्रश्नोनुं आगमने अनुसारे आ प्रमाणे निवारण कर्युं के—" सूत्रमां जीव अने अजीव एवा बेज राशि कहेला छे. वळी धर्मास्तिकाय विगेरेना प्रदेश ते धर्मास्तिकायादिकथी कांइ जुदा नथी, परंतु विवक्षा मात्रथीज तेनी भिन्न वस्तुपणानी कल्पना करी छे. तेवीज रीते पुच्छादिक पण गरोळी विगेरे जीवोथी अभिन्न छे. ते जीव संबंधी होवाथी जीवज छे, नोजीव नथी. ते विषे श्री भगवती सूत्रमां कह्युं छे के—" हे भगवंत! काचबो के काचबानी श्रेणी, गरोळी के गरोळीनी श्रेणी, वृषभ के वृषभनी श्रेणी, मनुष्य के मनुष्यनी श्रेणी, पाडो के पाडानी श्रेणी तेना बे खंड, त्रण खंड यावत् संख्याता खंड छेदीने करवामां आवे तो तेना आंतरामां जीवप्रदेश प्रगट (स्फुट)पणे छे ? प्रभु कहे छे—हा गौतम ! प्रगटपणे छे. फरी गौतम स्वामी पूछे छे के—हे भगवंत ! कोइ पुरुष ते आंतरामां रहेला जीवप्रदेशने हाथ वडे, पग वडे, काष्ठ वडे, तीक्ष्ण शस्त्र वडे छेदतो सतो अथवा अग्निकाय वडे बाळतो सतो तेने कांइ अल्प बाधा के विशेष बाधा उपजावी शके ? प्रभु कहे छे—हे गौतम ! ए अर्थ समर्थ नहीं, निश्चये तेने आक्रमण करी न शके."

अहीं शिष्ये प्रश्न कर्यो के—" गरोळीना देह अने पूंछडीनी वचमां पण जीवना प्रदेशो रहेला छे एम सूत्रमां कह्युं, तो ते वचमां रहेला जीवना प्रदेशो केम जणाता नथी ? " गुरुए उत्तर आप्यो के—" जीवप्रदेशो अरुपी होवाथी दे-

खाता नथी. जेम दीवानां किरणो पृथ्वी, भींत के कोइ पात्र विगेरे मूर्त्तिमान व-स्तु उपर पड्यां होय तो ते देखवामां आवे छे. पण केवळ आकाशमां फेलाएला होय ते ग्रही शकातां नथी. तेज प्रमाणे वचमां रहेला जीवप्रदेशो पण जोवामां आवता नथी. बोलवुं, श्वासोश्वास लेवा, दोडवुं, वळगवुं, स्फुरवुं, विगेरे क्रियाओ देहने विषेज जणाय छे पण वचमां जणाती नथी, माटे सूक्ष्मकार्मणदेहथी युक्त छतां पण ते जीवप्रदेशो औदारिक देह विनाना होवाथी देखाता नथी; अथवा हे शिष्य ! तुं जेने जीव कहे छे, तेना प्रदेशो जीवथी भिन्न छे के अभिन्न छे ? जो ' भिन्न छे ' एम कहे तो ते जीवनी साथे फरीथी तेनो संगम केम थाय ? केमके भि-न्न प्रदेश बीजे ठेकाणे पण परमाणुनी जेम मळी जाय छे अने ते प्रदेशोनो बीजा जीव साथे संगम थवाथी ते बन्ने जीवोना कर्मनो संकर थयो, तेथी बन्ने जीवना सुख दुःखादिक पण मळी जवा जोइए, पण तेम तो छेज नहीं. माटे ' भिन्न छे ' एम क-ही शकाशे नहीं. ' हवे ते प्रदेशो जीवथी अभिन्न छे ' एम तुं कहे तो, ते प्रदेश जीवनाज अंतर्गत छे एम कहेवुं जोइए; माटे बेज राशि सिद्ध थया, पण त्रण थया न-हीं. " वळी शिष्ये प्रश्न कर्यो के—" ते प्रदेश अभिन्न छे तोपण स्थाननो भेद थयो, माटे तेने नोजीव कहेवो. जेम आकाश एक छतां स्थानना भेदथी घडामां रहेलुं आ-काश ' घटाकाश ' अने घरमां रहेलुं आकाश ' गृहाकाश ' कहेवाय छे, तेम स्थान-ना भेदथी नोजीव कहेवामां शुं बाध छे ? " गुरुए उत्तर आप्यो के—" जो एम क-हीश तो ' नोअजीव ' नामनो चोथो राशि पण तारे अंगीकार करवो पडशे. केमके आकाशादिक अजीव छे, तेना पण प्रदेशो संभवे छे, तेथी ते प्रदेशोने स्थानभेदनी विवक्षाथी नोअजीव कहेवा पडशे, अने तेम करवाथी चार राशि थशे. परंतु जेम लक्ष-णना समानपणाथी नोजीव जीवथी भिन्न नथी तेमज समान लक्षण होवाथी नोअजी-व पण अजीवथी भिन्न नथी. "

आ प्रमाणे ते गुरु शिष्यने वाद करतां छ मास व्यतीत थया,-त्यारे राजाए गु-रुने कह्युं के—" हे स्वामी ! हवे वाद समाप्त करो, केमके हमेशां आनी व्यग्रताथी मारां राजकार्यो सीदाय छे. " त्यारे गुरु बोल्या के—" आटला दिवस सुधी में आ शिष्यने मात्र क्रीडा करावी छे, पण हवे प्रातःकाळे तेनो हुं अवश्य निग्रह करीश. " पछी बीजे दिवसे गुरुए राजाने कह्युं के—" आ दुनियामां जेटली वस्तु छे ते सर्व कुत्रिकनी दुकाने मळे छे, ते तमे तथा सर्व लोक जाणो छो. माटे आपणे त्यां जइए अने नोजीवनी मागणी करीए. "

(अहीं ' कुत्रिक ' शब्दनो अर्थ एवो थाय छे के—' कु ' एटले पृथ्वी अने ' त्रिक ' एटले त्रण, अर्थात् स्वर्ग, मृत्यु अने पाताळ ए त्रण पृथ्वीनुं नाम ' कुत्रिक ' थयुं. ते नामनी दुकान होवाथी ' कुत्रिकापण ' शब्द थाय छे. आ दुकाने बेठेला वणिक गृहस्थे मंत्रादिकना आराधनथी कोइ व्यंतरदेवने साध्यो छे. ते देवता ग्राहकने इच्छित दरेक वस्तु कोइ पण स्थानथी लावीने आपे छे अने तेनी कींमत ते वणिक् ले छे. अहीं कोइनो मत एवो पण छे के—आ वणिक्नी दुकानज देवाधिष्ठित छे, तेथी वस्तुनी कींमत ते देवताज लइ जाय छे). पछी गुरु सर्व परिवार सहित ते कुत्रिकापणे जइने रोहगुप्तने पूछीने कुत्रिकापणना व्यंतरदेवने कह्युं के " जीव आप. " त्यारे तेणे पोपट, मेना विगेरे जीव आप्या. पछी गुरुए अजीव माग्यो त्यारे तेणे पत्थरना खंभ विगेरे आप्या. पछी नोजीव माग्यो, त्यारे पण पत्थर विगेरेज आप्या. केमके ' नो ' शब्दनो अर्थ निषेध वाचक छे. अर्थात् अजीव अने नोजीवमां कांइ भेद नथी. छेवट गुरुए नोअजीव माग्यो, त्यारे तेनो अर्थ जीव करीने ते देवताए पोपट विगेरे आप्या. केमके " नो " अने " अ " ए बे निषेध वाचक होवाथी अजीव नहीं ते जीव कहेवाय. एवो " नो अजीव " शब्दनो अर्थ थाय छे. नोजीव मागती वखते ते देवताए जीवनो कांइ पण ककडो आप्यो नहीं. माटे जीव अने अजीव ए बेज राशि सिद्ध थया. पण खरना शृंगनी जेम त्रीजो राशि असत् होवाथी सिद्ध थयो नहीं. पछी गुरुए शिष्यने कह्युं के—" हे भाइ ! हवे तुं तारो दुराग्रह छोडी दे. जो कदाच जगतमां नोजीव वस्तु जूदी होत तो ते देवता केम न आपत ? " ए रीते एकसो ने चुमाळीश प्रश्नो करीने राजानी समक्ष गुरुए ते शिष्यनो निग्रह कर्यो.

अहीं द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष अने समवाय ए छ मूळ पदार्थोनी भेदकल्पना करी, तेमां पांच [1]महाभूत, काळ, दिशा, आत्मा अने मन ए नव प्रकार द्रव्यना कर्या; रुप, रस, संख्या, बुद्धि, द्वेष विगेरे सत्तर भेद गुणना कर्या, [2]उत्क्षेपण, [3]अपक्षेपण, [4]आकुंचन, [5]प्रसारण अने [6]गमन ए पांच भेद कर्मना कर्या; त्रण प्रकार सामान्यना कर्या; अने एक एक प्रकार विशेष तथा समवायनो ग्रहण कर्यो. ते सर्व मळीने छत्रीश भेद थया. ते सर्वना [7]प्रकृति, [8]अकार, [9]नोकार अने व-

१ पृथ्वी, जळ, अग्नि, वायु अने आकाश ए पांच महाभूत कहेवाय छे. २ उंचुं फेंकवुं ते. ३ नीचुं फेंकवुं ते. ४ संकोचाइ जवुं ते. ५ विस्तारवुं ते. ६ जवुं ते. ७ मूळ शब्द. ८ अल्प निषेध वाचक. ९ सर्वथा निषेध वाचक.

नेनो निषेध[1] एम चार चार प्रकार कर्या, एटले सर्व भेद एकसो ने चुमाळीश थया. पछी कुत्रिकापण देव पासे जइने पृथ्वी मागी. त्यारे तेणे पाषाण आप्यो. कारणके ते प्रकृति जात उपपद रहित शुद्ध पृथ्वी छे. अपृथ्वी मागी त्यारे जळ विगेरे आप्युं, नोपृथ्वी मागी त्यारे "नो" शब्दना 'थोडो निषेध' अने 'सर्वथा निषेध' एवा बे अर्थ करीने थोडो निषेध धारीने पाषाणनो ककडो आप्यो अने सर्वथा निषेध धारीने जळ विगेरे आप्युं, अने नोअपृथ्वी मागी, त्यारे तेणे पृथ्वी (पाषाण विगेरे) आपी. केमके नोअजीवनी जेम नोअपृथ्वीनो अर्थ पृथ्वीज थाय छे. ए प्रमाणे जळ विगेरेमां पण चार चार भेद जाणवा. निश्चयनयना मते तो जीव अने अजीव ए बेज पदार्थो छे. आवी रीते अनेक प्रकारे गुरुए तेने समजाव्यो, पण ज्यारे तेणे पोतानो दुराग्रह मूक्यो नहीं, त्यारे गुरुए बळखा नांखवानी कुंडीमांथी भस्म लइने तेना मस्तक पर नांखी, अने गच्छनी बहार कर्यो. राजा ते शिष्यनुं शाठ्य जोइने क्रोध पाम्यो, तेथी तेणे नगरमां एवी उद्घोषणा करावी के—"गुरुना प्रतिपक्षी थयेला रोहगुप्तने जे मान्य करशे ते राजद्रोही गणाशे." पछी ते रोहगुप्ते पोतानी बुद्धिथी वैशेषिक शास्त्र रच्युं.

श्री महावीर स्वामीना निर्वाण पछी पांचसो चुमाळीश वर्षे आ छठो निन्हव थयो, तेनुं वृत्तांत कह्युं.

"आखुं जगत षट् द्रव्यथी पूर्ण छे एम जिनेश्वरे जोयुं छे तेनुं उत्थापन करतो अने द्रव्य, गुण विगेरे छ प्रकारने सत्यपणे छरावी विस्तारतो तथा पोताना त्रण राशिना पक्षने स्थापन करतो एवो वैशेषिक छठो निन्हव थयो छे."

देव, गुरु अने श्रुतादिकने उथापतो ते वैशेषिक मोटी हानि पाम्यो माटे आ पांचमा श्रुताचारथी सूत्रना अर्थो शिष्योए भ्रष्ट थवुं नहीं.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य
त्रिषष्ट्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २६३ ॥

---

[1] निषेधनो निषेध (मूळ वस्तु)

व्याख्यान २६४ मुं.

व्यंजन नहीं ओळववा विषेनो छठ्ठो श्रुताचार कहे छे.

नाधीतव्यं श्रुतं चोक्तवर्णैर्न्यूनाधिकादिभिः ।
व्यंजनानिन्हवाह्वोऽयमाचारः षष्ठमः स्तुतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" कहेला वर्णो (अक्षरो) मांथी न्यूनाधिक अक्षरो बोलीने सूत्र भणवुं नहीं. ए [1]व्यंजनानिन्हव नामनो छठ्ठो आचार कहेलो छे. "

व्यंजनभेदतोऽर्थानां, क्रियाभेदोपजायते ।
तेनाभावश्च मुक्तेः स्यात्के के दोषा भवंति न ॥२॥

भावार्थ—" व्यंजनना भेदथी अर्थनो भेद थाय छे अने अर्थना भेदथी क्रियानो भेद थाय छे, क्रियाना भेदे करीने मुक्तिनो अभाव थाय छे. एवी रीते व्यंजनभेदथी कया कया दोषो उत्पन्न थता नथी ? अर्थात् सर्व दोषो उत्पन्न थाय छे. "

व्यंजननो भेद एटले अक्षरोने अन्यथा करवा ते. तेम करवाथी अनेक दोषो उत्पन्न थाय छे. श्री आवश्यक सूत्रमां चौद प्रकारे श्रुतनी आशातना कही छे. तेमां प्रथम व्याविद्ध के० आमां अवळां रत्नो नांखीने गुंथेली रत्ननी माळानी जेम आमां अवळा अक्षरो बोलवाथी थयेली ज्ञाननी आशातनाए करीने जे अतिचार थयो होय तेनुं मिथ्या दुष्कृत छे. (ते रीते सर्वत्र जाणवुं). ते चौद प्रकार नीचे प्रमाणे—

१ एकना एक पदने बे त्रण वार बोलवुं ते आम्रेडित, २ अक्षर ओछो बोलवो ते हीनाक्षर, ३ अक्षर अधिक बोलवो ते अधिकाक्षर, ४ पद काढी नांखीने बोलवुं ते पदहीन, ५ विनय रहित बोलवुं ते विनयहीन, ६ उदात्त विगेरे घोष रहित बोलवुं ते घोषहीन, ७ योग वहन कर्या विना भणवुं ते योगहीन, ८ गुरुए बराबर नहीं दीधेलुं ते सुष्ठु अदत्त, ९ गुरुए बराबर दीधा छतां दुष्टपणुं बतावतुं ते दुष्ट प्रतिच्छित, १० मलिन अंतःकरणथी श्रुत पाठ करवो, ११ अकाळे स्वाध्याय करवो, १२ काळे स्वाध्याय न करवो, १३ अस्वाध्याय वखते स्वाध्याय करवो, अने १४ स्वाध्याय वखते स्वाध्याय न करवो.

---

[1] व्यंजनने ओळववो नहीं ते.

'व्यंजननुं अन्यथा करवुं' तेना पांच प्रकार छे. प्रथम तो प्राकृत सूत्र होय तेने संस्कृत भाषामां बोलवुं ते. जेमके संयोगाविप्पमुक्कस्स ने ठेकाणे संयोगाद्विप्रमुक्तस्य एम कहेवुं. बीजुं पदोने पश्चानुपूर्वीए बोलवा अथवा उलट सुलट बोलवा, जेमके विप्पमुक्कस्स संयोगा. त्रीजुं कहेला पदो नहीं बोलतां तेज अर्थवाळा बीजा पर्यायी शब्दो बोलवा, जेमके [1]संबंधा विवज्जिअस्स. चोथुं एक वर्णने बदले बीजो वर्ण बोलवो, जेमके संयोगना सकारने बदले गमे ते अक्षर बोलवो. पांचमुं वर्णनुं विपरीतपणुं करवुं, जेमके संयोगने बदले (संयोगनो अर्थ संबंध छे, अने विप्रमुक्तनो अर्थ विवर्जित छे) वियोग शब्द बोलवो. आ प्रमाणे अर्थमां तेमज व्यंजनार्थ उभयमां अन्यथा करवाथी तेमज न्यूनाधिक करवाथी उत्पन्न थता दोषो जाणी लेवा. तेमां व्यंजनने अन्यथा करवाना संबंधमां "चैत्यवंदनना प्राकृत सूत्रोने हुं संस्कृत भाषामां करुं" एम सिद्धसेन दीवाकर बोल्या हता, तेथी तेने पारांचित प्रायश्चित्त करवुं पड्युं हतुं. ते दृष्टांत प्रथम कही गया छीए.

व्यंजन अधिक वापरवाना संबंधमां कुमारपाळ राजानुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

एकदा पाटण नगरमां कुमारपाळ राजा सामंतो, मंत्रीओ अने शेठ सार्थवाहादिके परवरेला राजसभामां बेठा हता. ते वखते तेमणे श्री जयसिंह राजाना वृद्ध मंत्रीओने पूछ्युं के—"हुं सिद्धराजथी गुणमां हीन छुं, अधिक छुं के समान छुं ?" ते सांभळीने ते मंत्रीओ बोल्या के–"महाराज! सिद्धराजमां अठाणुं गुण हता अने बेज दोष हता, अने आपने विषे तो बे गुण अने अठाणुं दोष रहेला छे." आ प्रमाणे मंत्रीनां वचन सांभळीने ते राजाने पोताना दूषित आत्मा उपर खेद थयो, तेथी तेणे खड्ग उपर दृष्टि करी. तत्क्षणमां तेना अभिप्रायने जाणी गयेला ते मंत्रीओ बोल्या के–"हे स्वामिन्! अमे विचार्या विना मात्र बहिर्वृत्तिनीज वात करी छे. पण तत्त्वदृष्टिथी जोतां तो आप तेनाथी अधिक छो." ते सांभळीने राजाए तेनुं कारण पूछ्युं, त्यारे तेओ बोल्या के–"सिद्धराजमां जे अठाणुं गुण हता ते युद्धमां कायरपणुं तथा स्त्रीलंपटपणुं ए बे दोषथी ढंकाइ गया हता, अने आपना जे कृपणता विगेरे अठाणुं दोष छे ते संग्रामशूरता अने परनारीसहोदरता ए बे गुणोथी ढंकाइ गया छे, माटे सत्त्वपणुं तथा परस्त्रीबांधवता ए बे गुणोना आधारभूत होवाथी आपज सर्व गुणीजनोमां शिरोमणि छो." आ प्रमाणे मंत्रीनां वचन

[1] उपला पदोना आ पदो पर्याय थाय छे.

सांभळीने राजानो अंतरात्मा संतोष पाम्यो, ते वखते कोइ विद्वान राजाने उद्देशीने एक श्लोक बोल्यो के—

> पर्जन्य इव भूतानामाधारः पृथिवीपतिः ।
> विकलेऽपि हि पर्जन्ये, जीव्यते न तु भूपतौ ॥ १ ॥

भावार्थ—"प्राणीओनो मेघनी जेम राजाज आधार छे; परंतु कदि मेघनी अकृपा थइ होय तोपण जीवाय छे, पण राजानी अकृपा थइ होय तो जीवातुं नथी."

ते सांभळीने "अहो ! राजाने मेघनी उपम्या ठीक आपी" ए प्रमाणे कुमारपाळ राजाए कह्युं. ते उपम्या शब्द व्याकरणादिकनी रीते अशुध्ध छतां बीजा सर्व सभ्यजनोए तो तेनी प्रशंसा करी, पण कपर्दी नामनो मंत्री घणो विद्वान होवाथी तेणे लज्जा पामीने नीचुं मुख कर्युं. ते जाणीने राजाए तेने तेम करवानुं कारण पूछ्युं, त्यारे ते मंत्री बोल्यो के—"हे राजन् ! आप उपम्या शब्द बोल्या ते शास्त्रविरुध्ध छे. माटे अमारे ते सांभळीने नीचुं मुख करवुंज योग्य छे. केमके राजा विनानुं जगत सारुं, पण मूर्ख राजा सारो नहीं. मूर्ख राजा होवाथी शत्रु राजाओमां पण अपकीर्ति प्रसरे छे. उपम्या शब्दने ठेकाणे उपमान, औपम्य अने उपमा इत्यादि शब्दो शुध्ध छे." आ प्रमाणे ते मंत्रीनां वचनथी प्रेराएला राजाए लगभग पचास वर्षनी वये पहोंच्या छतां शब्द व्युत्पत्तिनो बोध थवा माटे श्री देवगुरुना चरणकमळनी सेवा करीने गुरुमहाराजे कृपा करीने आपेला सिद्ध सारस्वत मंत्रनुं आराधन कर्युं, तथा सरस्वतीचूर्णनुं सेवन कर्युं. इत्यादिक्रमे सरस्वती देवी प्रसन्न थवाथी तेना प्रसादे करीने एक वर्षमां त्रणवृत्ति व्याकरण तथा द्व्याश्रय विगेरे काव्यो भणीने तेमणे चोवीश तीर्थंकरोनी स्तुति रुप बत्रीशी रची. तेनो पहेलो श्लोक आ प्रमाणे—

> यत्राखिलश्रीश्रितपादपद्मं, युगादिदेवं स्मरता नरेण ।
> सिद्धिर्मयाप्यर जिन तं भवन्तं, युगादिदेवं प्रणतोऽस्मि नित्यम्॥१॥

भावार्थ—"हे जिनेश्वर ! समग्र लक्ष्मीए जेना चरणकमळनो आश्रय कर्यो छे एवा युगादि देवने स्मरण करनार माणस मुक्ति पाम्यो छे तथा मने पण सिद्धि मळी छे, तेवा आप युगादि देवने हुं निरंतर प्रणाम करुं छुं."

पछी ते राजाए "शास्त्रविचारचतुर्मुख" ए नामनुं बिरुद मेळव्युं. व्यंजनना अधिकपणामां बीजुं अशोक राजानुं दृष्टांत कहे छे.

अशोक राजानुं दृष्टांत.

पाटलीपुत्र नगरना नवमा नंद राजाने प्रतिज्ञा पूर्वक चाणाक्य नामना ब्राह्मणे राज्यथी पदभ्रष्ट करीने मयूरपोषक नामना ग्राममां रहेनारा महत्तरना दौहित्र (दिकरीना दिकरा) चंद्रगुप्तने राज्यासने बेसाड्यो. तेने बिंदुसार नामे पुत्र थयो. ते बिंदुसारने अशोकश्री नामे पुत्र थयो. ते राज्यासन उपर हतो, ते वखते तेणे पोताना कुणाल नामना पुत्रने तेनी बाल्यावस्था छतां तेने भोगववा माटे अवन्ति नगरी आपी. पछी " अहीं पाटलीपुत्र नगरमां रहेवाथी बोजी सावकी मातानो उपद्रव थशे " एम धारीने ते कुणाल अवन्तिए जइने रह्यो. त्यां राजाए मोकलेला अनुजीवीओए पोतानो जीवनी जेम तेनुं रक्षण कर्युं. अनुक्रमे कुमार आठ वर्षनो थयो. त्यारे राजाए पोताना माणसो द्वारा 'कुमारनुं वय विद्या ग्रहण करवाने योग्य थयुं छे ' एम जाणीने पोते कुमारना उपर एक पत्र लख्यो के " हे कुमार ! त्वयाऽधीतव्यमिति मदाज्ञाऽचिरेण विधेया—हे कुमार ! तारे हवे अभ्यास करवो, आ मारी आज्ञा तारे तत्काळ मान्य करवी. " ए प्रमाणे पत्रमां लखीने राजा कोइ बीजा कार्यमां गुंथायो, तेवामां कुमारनी सापत्न माता त्यां आवी चढी. तेणे ते पत्र वांचीने मनमां विचार्युं के " ज्यांसुधी कुणाल कुमारना सर्व अवयवो शुध्ध हशे, त्यांसुधी मारा पुत्रने राज्य मळशे नहीं, माटे आ पत्रमां कांइक विरूप लखुं तो ठीक. " एम विचारीने ते पत्रमां राजाए जे अधीतव्यम् लख्युं हतुं तेना पहेला अक्षर (अ) उपर नेत्र आंजवानी सळीने थूंकथी भीनी करी तेनावडे नेत्रमांथी अंजन लइने अनुस्वार कर्यु. माथे अनुस्वार करवाथी अधीतव्यं ने बदले अंधीतव्यं थयुं. अहो ! अनुस्वार रुपी एक मात्रा वधवाथी एकांत अहितकारी अर्थ थइ गयो.

पछी अशोक राजाए ते कागळने प्रमादथी फरी वांच्या विनाज बीडी दीधो, अने अवन्ति नगरीए मोकल्यो. कुमारे पण पितानी नाममुद्राथी अंकित ते लेखने पोताना बे हाथे ग्रहण करीने मस्तके चडाव्यो. पछी ते लेख वांचीने अत्यंत खेद पाम्यो, नेत्रोमां अश्रु आव्यां, अने लेखनो अर्थ कोइने कही शक्यो नहीं, एटले तेना बीजा अनुचरोए ते लेख वांच्यो. तेथी तेओ पण खेद पामीने बोल्या के " हे कुमार ! शा माटे खेद पामो छो ? फरीथी अमे आ कागळनो निर्णय करशुं. " ते सांभळीने कुमार बोल्यो के "आज सुधी मौर्य वंशमां कोइ पण गुरुनी आज्ञा उल्लंघन करनार थयो नथी; माटे जो कदाच हुंज प्रथम आज्ञालोपी थाउं, तो में चलावेला मार्गने बीजा पण अनुसरशे. " एम कहीने कुमार पोतेज तपावेली शलाकाने

पोतानी आंखमां नांखीने अंध थयो. केटलेक दिवसे अशोक राजाए ते वृत्तांत जाणीने विचार्युं के " कूट लेख लखनार तेमज फरीथी बराबर वांच्या विना लेख मोकलनार एवा मने धिक्कार छे ! " एम पोताना आत्माने निंदवा लाग्यो. पछी अनुक्रमे राजाना जाणवामां आव्युं के 'कुमारनी सापत्न माताए आ दुष्ट काम कर्युं छे.' ते उपरथी स्त्रीजातिनुं दुष्टपणुं जाणीने राजाए विचार्युं के " आ पुत्र अंध थवाथी हवे ते राज्यने अथवा मांगलिकपणाने पण योग्य नथी. अहो ! मारे विषे जेनी आवी भक्ति छे तेनेज आवुं अंधपणुं प्राप्त थयुं." पछी राजाए कुणालने घणो समृद्धिवाळो ग्रास आप्यो अने तेनी सापत्न माताना कुमारने अवन्तिनुं राज्य आप्युं. अनुक्रमे कुणाल कुमारने शरदश्री नामनी पत्नीथकी बत्रीश लक्षणवाळो पुत्र थयो. ते पुत्र मोटो थयो, त्यारे कुणाल राज्य मेळववानी इच्छाथी पाटलीपुत्र नगरे प्रच्छन्नपणे आव्यो. त्यां राजपुत्रपणे प्रसिद्ध थया विना संगीतविनोद करतो अने स्वेच्छाथी नगरमां भमतो ते सर्व लोकने अति प्रिय थइ पड्यो. ते कुमार ज्यां ज्यां जइने संगीत करतो हतो, त्यां त्यां संगीतथी [1]कुरंगनी जेम आकर्षाइने पौरजनो दोडी जता हता. लोकना मुखथी ते नरने गांधर्वकळामां कुशळ सांभळीने राजा पण तेनुं संगीत श्रवण करवामां उत्सुक थयो, एटले राजाए ते अंध माणसने बोलाव्यो. तेणे जवनिकामां[2] रहीने गावानुं स्वीकार्युं. राजाए ते प्रमाणे गोठवण करी गावानो हुकम कर्यो, त्यारे ते कुणाल पण यथास्थान मंद्र, मध्य ने तार ए त्रण ग्राम तथा सात स्वर विगेरे सहित रागनुं पोषण करतो सतो मध्यमां आ पद्य बोल्यो—

प्रपौत्रश्चंद्रगुप्तस्य, बिन्दुसारस्य नप्तृकः ।
एषोऽशोकश्रियः पुत्रो, अन्धो मार्गति काकिणीम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" चंद्रगुप्तनो प्रपौत्र, बिन्दुसारनो पौत्र अने अशोकश्रीनो पुत्र आ आंधळो काकिणी मागे छे. "

पद्यप्रबंधना मध्यमां गवायेला आ अर्थने सांभळीने राजाए पूछ्युं के—' हे गायक ! तारुं नाम शुं ? ' ते बोल्यो के—

स उवाच तवैवास्मि, कुणालो नाम नंदनः ।
त्वदाज्ञालेखमीक्षित्वा, योंऽधःस्वयमजायत ॥

१ हरणनी जेम. २ पडदामां.

" हुं आपनोज कुणाल नामनो पुत्र छुं के जे आपनो आज्ञापत्र जोइने जातेज अंध थयो छे. "

ते सांभळीने जवनिकाने एकदम दूर करीने पोताना पुत्रने ओळखीने नेत्रथी अश्रुपात करतो तेने भेटी पड्यो. पछी राजाए कह्युं के ' हे पुत्र ! हुं तने शुं आपुं ? ' ते बोल्यो के ' हे स्वामी ! हुं काकिणी मागुं छुं. ' तेनो अर्थ नहीं समजायाथी राजाए मंत्रीने पूछ्युं के ' आ शुं मागे छे ? ' मंत्रीए कह्युं के ' हे स्वामी ! राजपुत्रोने काकिणी शब्दे करीने राज्य कहेवाय छे. ' त्यारे राजाए पुत्रने कह्युं के ' हे वत्स ! तुं राज्यने शुं करीश ? दैवयोगे तारां नेत्र नाश पाम्यां छे तेथी तने ते योग्य नथी. ' त्यारे ते कुमारे राजाने विनंति करी के ' हे पिता ! मारे पुत्र थयो छे, तेनो राज्यपर अभिषेक करो. ' राजाए पूछ्युं के ' तारे क्यारे पुत्र थयो छे ? ' ते बोल्यो के ' हे स्वामी ! संप्रति (हमणां) ज थयो छे. ' पछी राजाए ते बाळकने मंगावीने पोताना खोळामां बेसाड्यो अने तेनुं " संप्रति " नाम राख्युं. पछी पोताना राज्यपर तेने बेसाड्यो.

अनुक्रमे संप्रति राजा वय, विक्रम अने लक्ष्मीथी वृद्धि पाम्यो. ते जन्मथीज परम श्रावक हतो अने तेणे दक्षिण भरतार्ध साध्युं हतुं. आ दृष्टांत सांभळीने श्री सिद्धान्तना वाक्यमां अथवा पदमां कोइ पण वखत वर्णनुं आधिक्य करवुं नहीं.

कोइ वखत वर्णनुं अधिकपणुं करवाथी ते श्रेय करनारुं पण थाय छे, ते विषे पादलिप्त सूरिनुं दृष्टांत प्रथम कही गया छीए, माटे ते फरीने अहीं लखता नथी.

हवे वर्णने न्यून करवाथी पण मोटो दोष प्राप्त थाय छे, अने विद्याधरनी जेम चिंतवेलुं फळ प्राप्त थतुं नथी. तेनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

विद्याधरनुं दृष्टांत.

राजगृह नगरमां एकदा श्री महावीर स्वामीने वांदवा माटे श्रेणिक राजा जता हता. तेवामां मार्गमां एक विद्याधरने आकाशमां ऊडी ऊडीने पडतो जोयो. तेथी विस्मय पामीने राजाए श्रीवीर भगवानने पासे जइ पूछ्युं के " हे प्रभु ! आ विद्याधर अधुरी पांखो आवेला पक्षिनी जेम आकाशमां थोडेक ऊडे छे अने पाछो पृथ्वीपर पडे छे, तेनुं शुं कारण ? " भगवाने कह्युं के ' ते विद्याधर विद्यानो एक अक्षर भूली गयो छे, माटे तेम थाय छे. ' ते सांभळीने अभयकुमारे ते विद्याधर पा-

से जइने कह्युं के " हे विद्याधर ! जो तुं मने तारी पासेनी सघळी विद्या सिध्ध करावे, तो हुं तारी विद्यानो भूली गयेलो अक्षर तने बतावुं."

विद्याधरे तेनुं कहेवुं कबूल कर्युं. अभयकुमारने एक पद उपरथी अनेक पद तर्क करीने कहेवानी शक्ति हती. केमके तेनी बुध्धि पदानुसारी हती. तेथी तेनी विद्यामां विस्मृत थयेला अक्षरो पूर्ण कर्या. तेने बराबर पूर्ण थयेला जाणीने ते विद्याधर हर्ष पाम्यो. पछी तेणे अभयकुमारने विद्या सिध्ध करवाना उपाय बताव्या अने तेनी साथे दृढ मैत्री करीने पोताने स्थाने गयो. आ दृष्टांत उपरथी न्यून अक्षर भणवाथी यथार्थ फल पण प्राप्त थतुं नथी एम समजवुं. वळी अशुद्ध उच्चार करवाथी एटले सने स्थानके श विगेरे बोलवाथी पण पांमित्यपणुं पमातुं नथी ते उपर दृष्टांत कहे छे—

अशुद्ध उच्चार करवा उपर ब्राह्मणनी कथा.

कोइ एक विद्वान ब्राह्मण काशीथी नीकळीने कोइ नाना गाममां आव्यो. त्यां लोकोना मुखथी ते गामना रहीश कोइ ब्राह्मणनी प्रशंसा सांभळीने ते विद्वान वाद करवा माटे तेने घेर गयो. ते ब्राह्मण पण मोटा आमंबरथी लोकमां पोतानुं पांमित्य बतावनारो हतो. तेथी नवीन विद्वानने आवतो जोइने मोटा शब्दथी बोल्यो के " हे ब्राह्मण ! शा निमित्ते तमे आ गाममां आव्या छो? जो तमारे कांइ 'शंदेह' होय तो ते खुशीथी पूछो " ते सांभळीने पेला महा पंमिते विचार्युं के—" अहो ! आ कुत्सित पंमित शब्दनी शुध्धि (शुद्ध उच्चार) विना देमकानी जेम बरामा मारे छे, माटे तेने कांइक उपदेश आपुं." एम विचारीने ते बोल्यो के—

> शंदेहोऽस्ति त्वया प्रोक्तः, संदेहा बहवोऽभवन् ।
> ते सर्वे विलयं जग्मुः, किमन्यत्पृच्छिम ते जम ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे जम ! मने घणा संदेह हता, पण तुं संदेहने ठेकाणे शंदेह बोल्यो, ते सांभळी मारा सर्व संदेहो नष्ट थइ गया; बीजुं तने शुं कहुं !"

आ दृष्टांत सांभळीने कंठ, ओष्ठ्य विगेरे दरेक वर्णना स्थानने अनुसरीनेज व्यंजननो उच्चार करवो.

"वर्णने न्यूनाधिक करीने सूत्रनो पाठ करवाथी अर्थ क्रियानो भेद अवश्य

थाय छे, माटे गुरुनी सेवा करीने तेमनी पासेथी सिद्धांतना पाठनो शुद्ध उच्चार शीखवो."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य चतुष्षष्ठ्यधिकद्विशततमः प्रबंधः॥ २६४ ॥

व्याख्यान २६५ मुं.

अर्थानिन्हव नामना सातमा आचार विषे कहे छे.

शब्दार्थानामलोपाह्व, आचारः सप्तमः शुभः ।
तल्लोपेन महत्पापं, पुण्यं वर्यं तदाश्रयात् ॥ १ ॥

भावार्थ—"शब्दना अर्थनो लोप न करवो, ते नामनो सातमो आचार शुभ छे. अर्थनो लोप करवाथी मोटुं पाप लागे छे, अने अर्थनो आश्रय करवाथी श्रेष्ठ पुण्य थाय छे."

शब्दना अर्थना अनिन्हव (लोप न करवो ते) उपर श्री हेमचंद्राचार्यनुं दृष्टांत छे. ते आचारनो लोप करवाथी वचनवडे न कही शकाय तेवुं मोटुं पाप लागे छे. ते उपर वाराहरीने जाणनारा जरमानुं दृष्टांत छे, अने ते आचारनो आश्रय करवाथी श्रेष्ठ पुण्य थाय छे, ते उपर पण जरमानुं दृष्टांत छे ते दृष्टांतो कहे छे—

श्री हेमचंद्रसूरिनुं दृष्टांत.

अणहिल्लपुर पाटणमां राजा सिद्धराज जयसिंह राज्य करता हता. ते वखते कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचंद्राचार्य पांडवचरित्र वांचता हता. ते चरित्र सांभळीने केटलाक दुर्जनोए राजा पासे जइने विज्ञप्ति करी के "हे राजन्! पांच पांडवो हिमालयमां गळी जइने सिद्धि पाम्या छे, एवी वेदव्यासनी वाणीने हेमचंद्राचार्य 'शत्रुंजय उपर तेओ सिद्धि पाम्या छे' एम कहीने दूषण आपे छे ते घटित नथी." ते सांभळीने राजाए आचार्यने बोलाव्या, एटले आचार्य राजसभामां आव्या. राजाए पूछ्युं के "हे

भगवन् ! आजकाल वणिक्जन पासे व्याख्यानमां शुं वंचाय छे ? ” आचार्ये कह्युं के ‘ पांडवचरित्र वंचाय छे. ’ राजाए पूछ्युं के ‘ तेमां पांडवो क्यां सिद्धि पाम्या छे ? ’ त्यारे पोते स्वीकार करेला श्री जिनेश्वरना आगमना अर्थनो आश्रय करीने आचार्ये कह्युं के “ निर्मळ चारित्र अने तपस्या वडे आठ प्रकारनां दुष्ट कर्मोनो नाश करीने अनशनवडे अनेक मुनिओ सहित पांडवो सिध्धाद्रि उपर सिद्धि पाम्या छे. ” ते सांभळीने राजाए कह्युं के “ हिमालय उपर पांडवो सिद्धि पाम्या छे, ए व्यासवाक्यना प्रमाणपणाथी आपनुं वाक्य अप्रमाण छे. ” त्यारे सूरि बोल्या के हे राजन् ! भारतमां जे कह्युं छे ते सांभळो—रणसंग्राममां अर्जुनना बाणावलिथी वींधायेला अने पृथ्वीपर पडेला एवा जन्मथीज दान देवाना शीलवाळा (दानेश्वरी) श्री कर्ण राजाना दातारपणानी परीक्षा करवा माटे विश्वेश्वर श्रीकृष्ण भगवान् ब्राह्मणनुं रूप धारण करीने ‘ हे कर्ण राजा ! मने कांइक आपो ’ एम बोलता तेनी पासे आव्या. कर्ण राजा पण ते वखते पोतानी पासे बीजुं कांइ न होवाथी हाथमां पाषाण लइने सुवर्णनी रेखावाळा पोताना दांत पाडी तेमांनुं सुवर्ण आपवा तैयार थयो. ते जोइ ‘ हुं तारापर प्रसन्न थयो छुं ’ एम बोलता श्री पुरुषोत्तम प्रगट थया. ते जोइने कर्ण बोल्यो के “ हे परमेश्वर ! आपना दर्शन थवाथी मने सिद्धि तो मळशेज; परंतु जो आप तुष्ट थया हो तो जे स्थाने कोइनी दाहक्रिया थइ न होय, त्यां मारी दाहक्रिया करजो. ” ते सांभळीने श्री कृष्ण कर्णना शरीरने लइने तेवुं स्थान शोधवा लाग्या. परंतु कोइ जग्याए तेवुं स्थान न मळवाथी समुद्रमां स्तंभनी जेवुं एक पर्वतनुं शिखर हतुं, तेने तेवुं स्थान मानीने त्यां कर्णने माटे चिता करवा तैयार थया, तेवामां आकाशवाणी थइ के—

अत्र द्रोणशतं दग्धं, पांडवानां शतत्रयम् ।
दुर्योधनसहस्रं च, कर्णसंख्या न विद्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—“आ स्थाने सो द्रोण, त्रणसो पांडवो अने एक हजार दुर्योधननो दाह थयो छे, अने केटला कर्णनो दाह थयो छे तेनी तो संख्याज नथी.”

तेथी हे राजन् ! जो त्रणसो पांडवो त्यां बळ्या होय, तो अमारा पांच पांडवो शत्रुंजय उपर सिद्ध थया, अने आपना पांडवो हिमालयमां सिद्धि पाम्या, एम मानवामां शुं खोटुं छे?” आ प्रमाणे श्री हेमाचार्यनी युक्तिथी राजा प्रसन्न थयो, अने श्री हेमाचार्य राजाए विसर्जन करवाथी पोताना उपाश्रये आव्या.

आ दृष्टांत सांभळीने मोटुं कष्ट उत्पन्न थाय तोपण बुद्धिमान माणस सिद्धान्तना शब्दार्थने दूषण लगाडे नहीं. ए प्रमाणे परम मुनिओए परम रहस्य निर्णित कर्युं छे, ते आदरवुं.

बाराक्षरी भणनार भरडानुं द्रष्टांत.

धनसार नामना गाममां अति मूर्ख एवा घणा भरडाओ रहेता हता. पोताना मध्ये कोइ पण पंडित नथी एम धारीने तेओ सर्वेए एकठा थइने एक भरडाना 'नंदन' नामना पुत्रने कोइ पंडित पासे भणवा मोकल्यो. ते नंदन जातिए भरडो होवाथी अत्यंत मूर्ख हतो, तेथी त्रण वर्षे मात्र ते बाराक्षरी भण्यो. पछी " आ नंदन वेदमाता भण्यो छे " एम कहीने ते पंडिते भरडाओने पाछो सोंप्यो. ते महाजड भरडाओ पण ' आ नंदन वेदमाता भण्यो छे ' एम मानीने तेने बहु मानवा लाग्या. वधारे शुं कहेवुं ! पण जे कांइ नंदन बोलतो ते काम विचार कर्या विनाज सर्व भरडाओ करता हता. एकदा रात्रिए समग्र गाम अग्निथी बळी गयुं. ते वखते एक घर पासेना वृक्ष नीचे बळेला कागडाओ पड्या हता. ते जोइने तेओए नंदन पंडितने पूछ्युं के ' आ बळी गयेला कागडा खवाय के नहीं ? ' त्यारे नंदन बोल्यो के " वेदमातामां (क) एटले कागडा अने (ख) एटले खावा लायक छे एम कह्युं छे तेथी एने जलदीथी खाइ जाओ. " ते सांभळीने तेओ सर्वे खावाने तैयार थया. तेवामां कोइ परदेशी पंडिते तेमने जोया अने पूछ्युं के ' आ शुं करो छो ? ' त्यारे तेओए नंदननुं कहेलुं कही आप्युं. ते सांभळीने ' अहो ! आ महा मूर्खाओ छे. ' एम मानीने तेणे नंदनने पूछ्युं के ' हे भरडा ! आवुं अयोग्य कार्य केम करे छे ? ' त्यारे नंदन वेदमातामां कहेला वाक्यार्थने पोतानी बुद्धिथी कल्पना करीने बोल्यो के ' क ' एटले कागडा, ' ख ' एटले खावा योग्य, ' ग ' एटले गण (समूह), 'घ' एटले घणा पुष्ट थयेला. आ प्रमाणे अनेक पापकारी शब्दोथी दूषण पामेलां तेनां वचनो सांभळीने ते पंडितनुं हृदय दयार्द्र थयुं. तेथी तेणे कह्युं के—" हे नंदन ! दयाधर्मनी निंदा करीने आवा अनर्थो केम करे छे ? वेद मातानो अर्थ तें बराबर धारण कर्यो नथी. माटे हुं ते अर्थ बतावुं छुं ते सांभळ ' त थ ' एटले तथैव तेज प्रमाणे सत्य छे. ' द ध ' एटले दग्धाः काकाः (बळेला कागडाओ). ' न ' एटले न भक्षणीयाः (भक्षण न करवा). आ प्रमाणेना सत्य अर्थ छोडीने पोतानी कल्पनाथी अनर्थनुं जल्पन करवुं योग्य नथी. " इत्यादि युक्तिथी प्रतिबोध पामेला ते भरडाओ

अयोग्य कार्यथी निवृत्त थया अने सर्वेए ते परोपकारी पंमितनो उपकार मान्यो तेमज ते-
नी पूजा करी. कह्युं बे के—

यो यथात्र समुपैति बोधं, तं तथैव हि नयेद्विबोधम्।
यत्कखेति वचनाद्द्विकनक्ती, बोधितस्तथदधेति न वाक्यात्॥१॥

नावार्थ—" जे माणस जे प्रमाणे बोध पामे तेम होय ते माणसने तेज रीते
बोध पमामवो. केमके ' क ख ' ना वचनथी कागमाने खावा तैयार थयेला ते 'त थ द
ध न ' ना वचनथी बोध पाम्या. "

आ दृष्टांतमां नंदने करेलो अर्थ तजवा योग्य बे, अने पंमिते करेलो अर्थ
ग्रहण करवा योग्य छे. एम समजवुं.

माह्यो माणस शुद्ध अर्थ ग्रहण करवा माटे सारी रीते प्रयत्न करे बे ते विषे
कहे बे—

यथार्थं श्रोतुं समीहा, भृशं कार्या दृढादरैः ।
श्रमणोपासकैर्नित्यं, सुज्ञे गुरावुपागते ॥ १ ॥

नावार्थ—" ज्ञानी गुरुनो जोगवाइ थाय त्यारे अति आदरवाळा श्रावकोए
हमेशां शुध्ध अर्थ सांनळवा माटे अत्यंत इच्छा राखवी." ते उपर कुंमलीक श्रावकनुं
दृष्टांत कहे बे.

कुंमलीक श्रावकनुं दृष्टांत.

कोइ एक नगरमां सकलशास्त्रनिपुण अने स्वपर शास्त्रना रहस्यने जाणनार श्री
'रत्नाकरसूरि' रहेता हता. ते निरंतर राजसनामां जता हता. त्यां साहित्य, न्याय, बंद,
व्याकरण अने अंतर्लापिका विगेरेमां कुशळ अनेक विद्वानोने तेमणे जीत्या हता तेथी
ते विद्वानो रत्नाकरसूरिनुं नाम सांनळीने मौन धारण करी जता हता. आचार्य पण एक
पद लइने तेना अनेक अर्थ करता हता. तेथी राजसनामां राजाए तेमने 'अनेकार्थवादी'
एवुं बिरुद आप्युं हतुं. ते सूरि हमेशां पालखीमां बेसीने राजसनामां जता हता. ए प्रमाणे
थवाथी अनुक्रमे तेओ चारित्रगुणथी हीयमान थता गया अने राजा, मंत्री तथा सामंत
विगेरेनुं आपेलुं अन्न, वस्त्र विगेरे पण लेवा लाग्या. एम करतां करतां तो राजादिकने
प्रसन्न करीने मणि, माणिक्य, मुक्ताफळ विगेरे पण लेवा मांमयुं. तेथी घणुं द्रव्य

तेमणे मेळव्युं. एटले ते त्रण गारववमे युक्त थइ गया. तोपण ते कदाचित् पण वीतराग-ना वचननी अपेक्षा छोमता नहीं, अने प्रमाद विगेरेना कारणथी पण श्रीतीर्थंकर जगवंते यथार्थ अवलोकन करीने प्ररुपण करेला तत्त्वने कोइ वखत दूषण लगामता नहीं. तेमनो प्ररुपणा पक्ष अति निर्मळ हतो.

एकदा कोइ अन्य गामनो रहेनार जीवाजीवादि तत्त्वने जाणनार अने साधुओने पिता तथा जाइ समान माननार एक श्रावक घी वेचवा माटे ते नगरमां आव्यो. ते घीना जरे-लां अनेक कुमलां वेचवा लाग्यो तेथी लोकमां तेने सौ कुमलीओ कहेवा लाग्या. एक वखत तेणे मार्गमां अनेक वादी ब्राह्मणोथी परिवृत थयेला अने पालखीमां बे-ठेला तथा राजसेवकोथी सेवाता रत्नाकरसूरिने जोइने विचार्युं के—" अहो ! आ शासनना प्रजावक अने गुणी एवा सूरि प्रमादमग्न थइ गया लागे छे. तेनी पासे मारे कांइ पण बोलवुं योग्य नथी, केमके अज्ञाने जणवानो विधि कोण शीखवी श-के ? तो पण जोउं तो खरो के आ आचार्य सर्वथी भ्रष्ट थया छे के देशथी भ्रष्ट थ-या छे. " एम विचारीने राजमार्गमांज विधि पूर्वक तेमने नमीने ते स्तुति करवा ला-ग्यो के—

गोयम सोहम जंबू पजवो सिज्जंजवो अ आयरिआ ।
अन्नेवि जुगप्पहाणा, तुह दिठे सव्वेवि ते दिठा ॥ १ ॥

जावार्थ—" आपने जोवाथी गौतमस्वामी, सौधर्मस्वामी, जंबूस्वामी, प्रजव-स्वामी अने सय्यंजवस्वामी तथा बीजा पण युगप्रधान एवा सर्व आचार्योने में जो-या एम हुं मानुं छुं "

आ प्रमाणे सांजळीने गुरुए नीचुं मुख करीने तेने कह्युं के " कागमाने हं-सनी उपमा शोजती नथी, केमके ते महागुणी आचार्योना अध्यवसायमांथी मात्र एक समय पुरतो शुद्ध अध्यवसाय पण जो मारा आखा जवने विषे थाय तो तेथी हुं निर्मळ थइ जाउं. " ए प्रमाणे सांजळीने ते श्रावके विचार्युं के " अहो ! आ सू-रिने धन्य छे. अनेक मिथ्यात्वीओनो संबंध छतां पण श्री तीर्थंकरना वचननी स्वल्प अपेक्षा पण तजता नथी, माटे ते सर्वथा भ्रष्ट थयेला नथी. " पछी ज्यारे गुरु उ-पाश्रये आव्या त्यारे ते श्रावके त्यां आवीने विधिपूर्वक वंदना करीने तेमनी देशना सांजळी. पछी ते श्रावके " दोससयमूलजालं० " आ उपदेशमालामांथी श्री वी-

रस्वामीना शिष्य जिनदास गणिए रचेली गाथानो अर्थ पूछयो, त्यारे सूरिए पोतानी बुद्धिथी व्याकरण, नाममाळा विगेरेने अनुसारे सर्व पंडितो मान्य करे एवो नवीन अर्थ कर्यो. ते सांभळीने नम्रता पूर्वक ते श्रावक बोल्यो के—" हे स्वामी ! आपनी बुद्धिने धन्य छे, के जेथी आपे आवो नवीन अर्थ कर्यो ; परंतु काले तेनो मूळ अप्रकाशीने मारा आत्माने कृतार्थ करजो. " एम कही गुरुने वांदीने ते पोताने कामे गयो.

बीजे दिवसे आवीने तेज गाथानो मूळ अर्थ तेणे पूछयो त्यारे सूरिए मनमां विचार्युं के—" मूळ अर्थमां बतावेली प्रवृत्तिनो व्यवहार मारे विषे बाह्यथी पण शुद्ध नथी, तो अंतर्वृत्तिथी तो क्यांथीज होय ? माटे तेमां बतावेला अर्थनी शुद्ध प्रवृत्ति विना ते अर्थनुं वर्णन करवुं शोभे नहीं; तेम ते मूळ अर्थमां दोष आपवो, ते पण योग्य नहीं. " एम विचारीने तेणे ते दिवसे पण बीजो नवीन अर्थ शब्दपर्यायने अनुसारे कर्यो. ते सांभळीने पेलो श्रावक पण तेज रीते प्रशंसा करीने गयो. त्रीजे दिवसे पण श्रावके जइने तेज गाथानो मूळ अर्थ पूछयो. त्यारे सूरिए कोइ वखत नहीं सांभळेलो एवो कोइ नवीन अर्थ कर्यो. ए प्रमाणे छ मास सुधी नवा नवा अर्थ करवामां तत्पर रहेला सूरिनो अक्षय ज्ञानभंडार जाणीने ते श्रावके गुरुने विज्ञप्ति करी के " हे स्वामी ! जेम गंगा नदीनी रेतीना कणीया गणवामां अनंतज्ञानी विना बीजा कोइनी शक्ति नथी, तेवीज रीते आपना गुणनुं वर्णन करवामां पण मारा जेवो कोइ पण माणस समर्थ नथी. हे गुरु ! घी वेचीने उपार्जन करेलुं सर्व धन आजे समाप्त थइ रह्युं छे, तेमज आजे नवुं कार्य पण आव्युं छे तेथी हवे हुं मारे घेर जइश. परंतु मारा मनमां आटलीज वात खटके छे के—आपनी जेवा गीतार्थ गुरु पासे पण जो ते गाथानो यथार्थ अर्थ मने प्राप्त न थयो तो पछी ते अर्थ मने बीजे क्यांथी प्राप्त थशे ? नहींज थाय. " त्यारे सूरि बोल्या के " तारे काले सवारे अहीं अवश्य आववुं. " ते सांभळीने तेने हर्ष थयो, अने ते पोताने उतारे गयो.

पछी सूरिए विचार कर्यो के " विषयो जेम जेम वृद्धि पामे छे, तेम तेम आत्मा तेनो वधारे वधारे लोभ करे छे. परंतु शास्त्रमां कह्युं छे के ' मुक्ताः श्रियः कामदुघा ततः किं ' जो लक्ष्मीनो त्याग कर्यो, तो पछी कामदुघानुं शुं काम छे ? इत्यादि भावना भावीने सूरिए मुक्ताफळ विगेरे एकठुं करेलुं सर्व धन तजी दीधुं अने द्रव्य तथा भाव बन्ने प्रथमना सूरि जेवा थइने पोताना आत्माने तारवा माटे त्रण र-

त्नने अंगीकार करीने रह्या. पछी प्रातःकाळे ते श्रावक आव्यो. त्यारे तेणे समस्त पापने जेणे दूर कर्यां छे, तथा जेणे अपूर्व संयमगुण धारण कर्यो छे एवा सूरिने जोइने तेमनी त्रण प्रदक्षिणा करी, प्रणाम पूर्वक स्तुति करीने ते बोल्यो के " हे स्वामी! आजे हुं आपना दर्शनथीज ते गाथानो मूळ अर्थ समजी गयो. आपना सघळा अवयवोमां ते अर्थ स्पष्ट देखाय छे. अहो! आपनी योग्यता लोकोत्तर छे. आपे 'मूळ स्वरूपे करीनेज मूळ अर्थनो हुं प्रकाश करीश' एवी प्रतिज्ञाने सारी रीते पाळी छे. मारा मनोरथ पूर्ण करवाथी मारो भव आजे सफळ कर्यो छे. वळी आपनी क्षमा पण अकलित छे. केमके छ महिना पर्यंत एक ने एक गाथानो अर्थ पूछया छतां कोइ वखत पण आपे कोपनो आवेश मात्र पण कर्यो नथी. उलटो ज्यारे ज्यारे हुं प्रश्न करतो त्यारे त्यारे सुधादृष्टिनी वृष्टियी मने पवित्र कर्यो छे." आ प्रमाणे सूरिनी स्तुति करीने तेणे फरीने वंदना करी. पछी सूरिए ते गाथानो मूळ अर्थ कह्यो.

दोससयमूलजालं, पुव्वरिसिविवज्जिअं जइ वंतं ।
अत्थं वहसि अणत्थं, कीस अणत्थं तवं चरसि ॥ १ ॥

भावार्थ—" सेंकडो दोषोने उत्पन्न करवामां मूळ जाळ समान अने पूर्वना सूरिओए वर्जित करेला तेमज वमी नाखेला एवा अनर्थकारी अर्थ (धन)ने जो तुं वहन करे छे, तो पछी निरर्थक तप शा माटे करे छे? अर्थात् धनने ग्रहण करे छे तो पछी तपस्या करवी ए निष्फळ छे."

विवेचन—रागादिक दोषोने उत्पन्न करवामां मूळ एटले कारण रूप अने मत्सनी जाळनी जेम बंधना हेतुभूत होवाथी दोषोनी जाळ समान अर्थ (धन) छे, तेथीज पूर्वे थइ गयेला वैरस्वामी विगेरे आचार्योए तेनो त्याग करेलो छे. वळी ते धन नरकमां गमन कराववा विगेरे अनेक अनर्थनुं हेतु छे. तेवा धनने जो तुं वहन करे छे तो पछी निष्प्रयोजन एवुं अनशनादिक तप शा माटे आचरे छे? कारण के पूर्वापरनो विचार करतां धनसंग्रह अने तप ए बन्ने साथे घटतां नथी.

आ प्रमाणे ते गाथानो मूळ अर्थ यथार्थ सांभळीने ते श्रावक अति हर्ष पाम्यो अने पोताने स्थाने गयो. पछी सूरि पण पोताना पापनी आलोचना करवा माटे श्री सिद्धगिरि उपर जइने श्रीजिनेश्वर पासे "श्रेयः श्रियां मंगलकेलीसद्म" इत्यादि वैराग्यगर्भित स्तुति[1] करीने पोताना आयुष्यनो अंत समीप जाणी चारे आहारना

[1] आ स्तोत्र रत्नाकरपच्चीशी तरीके हालमां प्रचलित छे.

પ્રત્યાખ્યાન કરવા રૂપ અણસણ કરીને સ્વર્ગે ગયા.

સૂરિએ મુક્તાફળ વિગેરે જે ધન પ્રથમ ગ્રહણ કર્યું હતું તે સર્વને ગૃહસ્થોએ ઘંટીમાં દળાવીને કોઇ ઠેકાણે ઉમાભી દીધું. કેમકે તે કોઇ પણ કાર્યમાં ન કલ્પે એવું દ્રવ્ય હતું. આ પ્રમાણે વૃધ્ધના મુખથકી સાંભળ્યું છે તેજ પ્રમાણે મેં અહીં લખ્યું છે. બાકી તત્ત્વ તો શોધન કરીને બહુશ્રુત પાસેથી જાણી લેવું.

" સદ્‌ગુરુને પામીને તે શ્રાવકે આગ્રહપૂર્વક ગાથાનો યથાર્થ અર્થ સાંભળવાની સ્પૃહા કરી, અને નિન્હવપણાના દોષથી રહિત તે સૂરિએ પોતાની બુધ્ધિથી મૂળ અર્થને ગુપ્ત રાખી નવા નવા અર્થો કર્યા, પણ છેવટ તે શ્રાવકે સૂરિને અર્થાનિન્હવ નામના સાતમા આચારથી યુક્ત કર્યા. "

ઇત્યબ્દદિનપરિમિતોપદેશપ્રાસાદવૃત્તૌ અષ્ટાદશસ્તંભસ્ય
પઞ્ચષષ્ટ્યધિકદ્વિશતતમઃ પ્રબંધઃ॥ ૨૬૫ ॥

વ્યાખ્યાન ૨૬૬ મું.

સૂત્રાર્થના અનિન્હવ રૂપ આઠમા આચાર વિષે.

સૂત્રાર્થયોર્દ્વયોર્નૈવ, નિન્હવં કુરુતે સુધીઃ ।

અષ્ટમઃ સ્યાત્તદાચારઃ, શ્રુતવદ્ભિઃ શ્રુતે સ્તુતઃ ॥ ૧ ॥

ભાવાર્થ—" બુધ્ધિવંત માણસ સૂત્ર તથા અર્થ એ બન્નેનો નિન્હવ કરતો નથી, તે આચારને શાસ્ત્રજ્ઞ અચાર્યોએ શાસ્ત્રને વિષે આઠમો આચાર કહ્યો છે. " આ આચાર ઉપર દૃષ્ટાંત કહે છે.

શ્રી અભયદેવસૂરિનું દૃષ્ટાંત.

શ્રી અભયદેવસૂરિ સોળ વર્ષની અંદર બાલ્યાવસ્થામાંજ જૈન મતના તથા અન્ય મતના સર્વ શાસ્ત્રોના પારગામી થયા હતા. એકદા વ્યાખ્યાનમાં પાંચમા અંગમાં વર્ણવેલા રથમુશલ અને મુશલ વિગેરે ચેટકરાજા તથા કોણીક વચ્ચે થયેલા સંગ્રામોનું વર્ણન કરતાં રૌદ્ર અને વીર રસનું એવું વર્ણન કર્યું કે તે સાંભળીને વ્યાખ્યાનમાં આવે-

ला केटलाक शस्त्रधारी क्षत्रियो परस्पर युद्ध करवा माटे त्यांज सन्नद्धबद्ध थइ गया. ते जोइने अवसरना जाण एवा अभयदेव मुनिना गुरुए तरतज नागनत्तुआनुं वर्णन करीने एवो शांत रस विस्तार्यो के ते सांभळीने सर्व स्वस्थ थइ गया, अने मनमां विचारवा लाग्या के "अहो! अमने धिक्कार छे, के व्याख्यानना समयमां अमे प्रमादथी उन्मत्त थइ गया, अमे ते योग्य कर्युं नहीं, पण आ गुरुए वर्णन करेला नागनत्तुक श्रावकने धन्य छे, के जेणे संग्राममां पण पोताना आत्म धर्मनी पुष्टि करी." पछी गुरुए अभयदेवने शिखामण आपी के "हे शिष्य! तारी बुद्धिनो विस्तार वाणीथी अगोचर छे, परंतु तारे सर्वत्र लाभालाभनो विचार करीने वर्णन करवुं." त्यार पछी एक दिवस सायंकाळनुं प्रतिक्रमण थइ रह्या पछी कोइ एक शिष्ये श्रेणिक राजाना पुत्र नंदिषेण ऋषिए अथवा नेमिनाथजीना गणधर नंदिषेणजीए श्री सिद्धाचळ उपर रचेला अजितशांति स्तवनमांथी "अंबरंतरविआरणिआहिं" इत्यादि चार गाथानो अर्थ पूछ्यो त्यारे श्री अभयदेवे कह्युं के "अनेक प्रकारना शुभ नेपथ्यने धारण करनारी देवसुंदरीओए जेमना चरणकमळनी वंदना करी तोपण जेनुं मन जरा पण क्षोभ पाम्युं नहीं तेवा श्री अजितनाथने हुं प्रणाम करुं छुं." आ प्रमाणे ते देवसुंदरीओना जे बीजां सर्व विशेषणो ते गाथाओमां हतां तेनुं शृंगाररसथी भरेलुं विस्तारथी वर्णन कर्युं. ते वखते उपाश्रयनी पासेनाज मार्गेथी चाली जती शृंगाररसमां निपुण एवी कोइ कुमारी राजपुत्रीए ते वर्णन सांभळ्युं. कोइ वखत नहीं सांभळेलुं एवुं अद्भुत वर्णन सांभळीने तेणे विचार कर्यो के "जो आ पंडितशिरोमणि मारो स्वामी थाय तो मारो जन्म तथा जीवित सफळ थाय, अने हर्ष पूर्वक लीलाए करीने तथा शृंगारशास्त्रना विनोदे करीने दिवसो निर्गमन थइ शके. माटे हुं त्यां जइने ए श्रेष्ठ नरने प्रार्थना करीने क्षोभ पमाडुं." एम विचारी ते उपाश्रयना बारणा पासे आवी, अने मंजुल स्वरथी बोली के "हे शृंगारशास्त्रने जाणनार! हे श्रेष्ठ बुद्धिमान! बारणा उघाडो. हुं मदनमंजरी नामनी राजपुत्री गुणगोष्ठी करवा माटे तमारी पासे आवी छुं." आ प्रमाणे अकाळे स्त्रीनो शब्द सांभळीने गुरुए अभयदेवने ठपको आप्यो के "प्रथम तमने जे शिखामण आपी हती ते सर्व भूली गया, अने ज्यां त्यां चातुर्य देखाडो छो पण शुं तमने लज्जा आवती नथी? हवे शुं करशो? तमारा गुणथी आकर्षाइने सीमंतपाथडाए[1] पहोचाडनारी आ सीमंतीनी[2] आवी छे. ते वियोगीनी जेम वारंवार बोलावे छे." ते सांभळीने अभयदेव

१ पहेली नरकनो पहेलो नरकावासे. २ स्त्री.

बोल्या के " हे पूज्य ! मारा वाक्यथी ते जेम विभ्रम पामी सती आशाए आवी छे, तेमज आपनी कृपाथी ते ससंभ्रम थइने आशारहित पाछी जती रहेशे; माटे ते बाबत आप खेद करशो नहीं. " एम कहीने अभयदेवे द्वार उघाडी राज्यकन्याने कह्युं के " हे राजपुत्री ! अमे साधु छीए, तेथी अमे एक मुहूर्त मात्र पण एकांतमां स्त्री साथे धर्म संबंधी वार्ता पण करता नथी, तो अमे गोष्ठिनी पुष्टी तो शानीज करीए? वळी अमे कोइ पण दिवस दातण करता नथी, मुख धोता नथी तथा स्नान विगेरे बाह्य देहशुद्धिने इच्छता नथी, तेमज निर्दोष एवुं अंतप्रांत अने लुखुं अन्न भिक्षा मागीने लावीए छीए अने मात्र देहना निर्वाहने माटेज खाइ रहीए छीए. आ शरीर अस्थि, मल, मूत्र अने विष्टा विगेरेथी भरेलुं महा दुर्गंधमय बिभत्स छे. तेमां सारभूत शुं छे ? कुत्सित पुरुषोज एवा बिभत्स विषयसुखनी इच्छा राखे छे. अमारा शरीरनी सारवार बाल्यावस्थामां मातपिताएज करी हशे त्यार पछी अमे तो बीलकुल करी नथी; माटे आवा अमारा दुर्गंधमय शरीरनो स्पर्श तारा जेवी राजपुत्रीने स्वप्नमां पण करवा जेवा नथी. " आ प्रमाणे बिभत्स रसनुं वर्णन सांभळीने ते राजपुत्री तरतज जती रही. अभयदेव उपसर्गरहित थइने गुरु पासे आव्या. गुरुए कह्युं के "तारी बुद्धिनी कुशळता समुद्रना पूरनी जेवी अधिकतर छे; परंतु वर्तमान समयमां तेने शमाववी योग्य छे. तेथी तेम करवा माटे तारे छाशमां करेलो जुवारनो धुमरो तथा कालिंगडानुं शाक शोधी वहोरी लावीने वापरवुं, जेथी तारी बुद्धि न्यून थशे. कह्युं छे के—

> तडबूजं कलिंगं च, भोज्यं शीतं च वातुलम् ।
> कपित्थं बदरीजंबूफलानि घ्नंति धीषणाम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" तडबूच, कालिंगडुं, ठंडुं तथा वायु करनार भोजन, कोठुं, बोर अने जांबू ए सर्व वस्तु बुद्धिनो नाश करनार छे. "

गुरुना वचननो तेणे स्वीकार कर्यो, अने तेज प्रमाणे घणे भागे आहार करवा मांड्यो. गुरुए तेने अत्यंत योग्य जाणीने सूरिपद आप्युं. पछी अभयदेवसूरि विहार करतां करतां अनुक्रमे थंभनपुर आव्या. त्यां अति तुच्छ आहार करवाथी कुष्टना महा व्याधिथी ते एवा पीडित थइ गया के हाथ पग हलाववानी पण तेनामां शक्ति रही नहीं. एक दिवस सायंकाळनुं प्रतिक्रमण करीने सूरिए श्रावकोने कह्युं के " आ

व्याधिनी पीडा बहु वधी पडवाथी हुं एक क्षण पण ते सहन करी शकवा समर्थ नथी तेथी काले अनशन करीश." ते सांभळीने सर्वने अति खेद थयो. पछी रात्रिमां शासनदेवीए आवीने सूरिने कह्युं के "हे गुरु! उंघो छो के जागो छो?" गुरुए कह्युं के "जागुं छुं." देवीए कह्युं के "उठो, आ नव सूत्रनी कोकडी उखेळो." गुरु बोल्या के "आवा शरीरे हुं शी रीते उखेळी शकुं?" देवीए कह्युं के "नव अंगनी[1] वृत्ति करवानुं हजु तमारे आधीन छे. अर्थात् तमे करवाना छो तो तेनी पासे आ ते कोण मात्र छे? माटे आ हाथमां ल्यो. हजु तमे चिरकाळ सुधी जीवशो." गुरु बोल्या के "आवा शरीरे हुं श्रीजिनेश्वरना आगमनी नवांगनी टीका शी रीते करीश?" देवी बोली के "छ मास सुधी आचाम्ल तप करो." पछी शासनदेवीना निर्देशथी सूरिए छ मास सुधी आचाम्ल तप कर्यो, अने कठिन शब्दोनी टीका करीने नवांगवृत्ति पूर्ण करी.[2] तेवामां शरीरने विषे फरीथी महा रोग उत्पन्न थयो. ते वखते श्री धरणेन्द्रे श्वेत सर्पनुं स्वरूप धारण करी त्यां आवीने सूरिना शरीरने चाटीने नीरोगी कर्युं. पछी धरणेन्द्रे सूरिने कह्युं के "सेढी नदीने तीरे श्री थंभन पार्श्वनाथनी प्रतिमा पृथ्वीमां गुप्त रहेली छे, तेने तमे प्रगट करो. त्यां ओचिंती एक गाय आवीने ते प्रतिमा जे स्थाने छे ते स्थानपर दूध झरशे. ते चिन्हथी ते मूर्तिनुं स्थान निश्चित जाणजो." आ प्रमाणे कहीने धरणेन्द्र अदृश्य थया. पछी प्रातःकाळे अभयदेवसूरि संघ सहित सेढी नदीने कांठे आव्या. त्यां गायने दूध झरती जोइने गोवाळना बाळकोए बतावेली भूमि पासे प्रतिमाना स्थाननो निश्चय थवाथी सूरिए पार्श्वप्रभुनी स्तुतिने माटे नवीन [3]स्तोत्र रचवा मांडयुं. तेनां बत्रीश काव्य कह्यां पछी तेत्रीशमुं काव्य कहेतां तरतज श्री पार्श्वनाथनुं बिंब प्रगट थयुं. ते तेत्रीशमुं काव्य सूरिए देवताना आदेशथी गोपवी दीधुं छे.[4] ते प्रतिमाना दर्शन मात्रथीज सर्वे व्याधि मूळथी नाश पाम्या. पछी श्री संघे गुरुने ते प्रतिमानी उत्पत्ति पूछी, त्यारे गुरुए कह्युं के "पूर्वे श्री वरुणदेवे अगियार लाख वर्ष सुधी आ प्रतिमानुं पूजन कर्युं हतुं. त्यार पछी* वर्ष सुधी रामचंद्रे तेने पूजी; त्यार पछी एंशी हजार

१ श्री आचारांगने सुयगडांगनी वृत्ति श्री शीलांकाचार्ये करी हती. बाकीना नव अंगनी वृत्ति करवी बाकीमां हती. २ स्थंभन पार्श्वनाथनी मूर्त्ति प्रगट कर्या पछी टीकाओ कर्यानुं बीजे स्थाने कहेलुं छे. ३ आ स्तोत्र 'जयतिहुअण' नामे प्रसिद्ध छे. ४ जयतिहुअणनी टीकानी पीठीकामां ३२ मांथी बे काव्य छेल्लां गोपव्यानी हकीकत छे ने अत्यारे ३० काव्यज वर्त्ते छे.

* नवाहरधिकान् यावत् एवो अहीं पाठ छे ते अशुद्ध जणावाथी केटला वर्ष ते लखी शकायुं नथी.

वर्ष सुधी तक्षक नागे तेनी पूजा करी, त्यार पछी घणा काळ सुधी सौधर्मेन्द्रे पूजी, त्यार पछी द्वारका नगरीमां कृष्ण वासुदेवे श्री नेमीनाथना मुखथी मोटा अतिशयवाळी ते प्रतिमानी कथा सांभळीने मोटा प्रासादमां तेनुं स्थापन करीने पूजा करी. द्वारकानो दाह थया पछी ते नगरीने समुद्रे डुबावी दीधी, एटले प्रतिमा तेमज स्थितिमां समुद्र मध्ये रही. त्यार पछी केटलेक काळे कांती नगरीनो निवासी धनपति नामनो श्रेष्ठी त्यांथी जतो हतो तेवामां तेनां वहाणो देवताना अतिशयथी स्खलित थयां. तेथी श्रेष्ठी विचारमां पड्यो. तेवामां आकाशवाणीथी "अहीं जिनेश्वरनी प्रतिमा छे" एम तेणे जाण्युं. पछी श्रेष्ठीना निर्देशथी खलासीओए समुद्रमां सुतर नाखीने सात काचा तांतणाथी ते प्रतिमाने बांधीने बहार काढी. पछी तेने कांति नगरीमां लइ जइने श्रेष्ठीए मोटा प्रासादमां स्थापी. ते प्रासादमां ते प्रतिमा बे हजार वर्ष रही.

ढंकपुरना राजानी पुत्री भोपलदेवी अद्भुत स्वरुपवान हती. तेना पर आसक्त थइने वासुकी देवता तेने भोगववा लाग्यो. तेनाथी नागार्जुन नामे तेने पुत्र थयो. तेनापरना वात्सल्यथी ते नागेंद्रे सर्व महौषधीओनां फळ मूळ अने पांदडां तेने खवराव्यां. तेना प्रभावथी ते सिद्ध पुरुष थइने शालिवाहन[१] राजानो गुरु थयो. पछी श्री पादलिप्तसूरिना प्रसादथी ते नागार्जुन आकाशगामी विद्या पामीने रसने[२] सिद्ध करवा उत्सुक थयो. तेने माटे तेणे अनेक उपायो कर्या, पण रस बंधायो नहीं. तेथी तेणे गुरुने तेनो उपाय पूछ्यो. गुरुए कह्युं के "महा महिमावाळी श्री पार्श्वनाथनी प्रतिमानी पासे ते प्रतिमानी दृष्टिए सर्व लक्षणवाळी सती स्त्री ते रसनुं मर्दन करे तो ते रस स्थिर थइने कोटीवेधी थाय." ते सांभळीने नागार्जुने पोताना पिता वासुकीनुं ध्यान धरीने तेने बोलाव्यो. पछी तेना पूछवाथी वासुकीए कह्युं के "कांति नगरीमां अति महिमावाळी प्राचीन श्री पार्श्वनाथनी प्रतिमा छे." नागार्जुने कांति नगरीथी ते प्रतिमानुं हरण करीने सेढी नदीने कांठे एकांतमां लावीने तेने स्थापी. पछी तेनी पासे रससाधन करवा माटे शालिवाहन राजानी पतिव्रता स्त्री चंद्रलेखाने हंमेशां रात्रे सिद्ध थयेला व्यंतर मारफत मंगावीने ते चंद्रलेखा पासे रसनुं मर्दन कराववा लाग्यो. छ मासे ते रस स्थिर थयो. ते ठेकाणे रस करतां पण अधिक महिमावाळुं अने समग्र लोकोना इच्छित अर्थने पूर्ण करनारुं स्तंभन नामे श्रीपार्श्वनाथ स्वामीनुं तीर्थ थयुं. पछी अनुक्रमे देवना वचनथी 'ते प्रतिमा अहीं छे' एम जाणीने "जयतिहुअण

१ सात वाहन एवुं पण तेनुं बीजुं नाम हतुं. २ स्वर्णसिद्धिरस.

वरकप्परुक्ख० " इत्यादि काव्योवडे में तेनी स्तुति करी, एटले ते प्रतिमा प्रगट थइ छे. प्रथम आ प्रतिमा कोणे भरावी छे ते सांभळ्युं नथी. " आ प्रमाणे श्री अभयदेवसूरिए कहेलो महिमा सांभळीने श्रीसंघे तेज स्थाने प्रासाद करावी त्यां स्तंभनपुर नामे गाम वसाव्युं. सर्व लोको त्यां मोटा मोटा महोत्सवो करवा लाग्या. पछी ज्यारे संवत १३६८ नी सालमां दुष्ट म्लेच्छोए गुजरातमां उपद्रव कर्यो त्यारे वर्तमान स्तंभतीर्थनुं स्थापन थयुं छे. अत्यारे ते प्रतिमा स्तंभतीर्थ बंदरे (खंभातमां) विद्यमान छे.

प्रथम शिलाचार्ये पहेला बे अंगनी वृत्ति करी हती. त्यारपछीना नव अंगनी टीका श्री अभयदेवसूरिए शासनदेवीना वचनथी पोतानी मतिकल्पनानो उपयोग कर्या शिवाय करी छे. त्यार पछी संवत ११३५ मां श्री अभयदेवसूरि स्वर्गे गया छे. केटलाक ११३९ ना संवतमां स्वर्गे गयानुं कहे छे.

"स्थानांगसूत्र विगेरे नव अंगनी टीका करनारा श्री अभयदेवसूरि थया. ते आठमा आचारने पाळनारा श्री अभयदेवसूरिने श्री स्तंभन पार्श्वनाथ स्वामीए नवांग आप्या छे अर्थात् ते प्रभुना प्रसादथीज तेनी टीका रचवाने भाग्यशाळी थया छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य

षट्षष्ठ्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २६६ ॥

व्याख्यान २६७ मुं.

शुभाशुभ श्रुतनो सम्यग्अर्थ करवा विषे.

अप्रशस्तं प्रशस्तं वा, शास्त्रं यत्समुपागतम् ।

प्रशस्तार्थे प्रयोक्तव्यं, मौनीन्द्रागमवेत्तृभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अप्रशस्त (अशुभ) अथवा प्रशस्त (शुभ) गमे तेवुं शास्त्र प्राप्त थाय, तोपण तेनी जिनागमने जाणनारा पंडितोए प्रशस्त अर्थमांज योजना करवी, अर्थात् तेनो शुभ अर्थज करवो."

प्रशस्त श्रुत एटले स्याद्वादथी लांछित–स्याद्वादयुक्त शास्त्र, अने अप्रशस्त एटले शृंगारादिक शास्त्र. ते सर्व शास्त्रने प्रशस्त अर्थमां–अनेकांत पक्षवाळा अर्थमां वैराग्योत्पादक अर्थमां जोडी देवां.

अत्र क्षुल्लक मुनिनुं दृष्टांत कहे छे.

चंपानगरीमां सिंहसेन राजा राज्य करतो हतो. तेने राहुगुप्त नामे जैन धर्मी मंत्री हतो. एकदा राजाए सभामां बेसीने धर्म संबंधी प्रश्न कर्यो अर्थात् धर्मविचार पूछ्यो के खरो धर्म शुं छे? ते वखते जेओने जे धर्म अभिमत हतो, तेओ ते धर्मनुं प्रतिपादन करवा लाग्या. तेमां केटलाक एकांत हिंसाए करीने, केटलाक एकांत अहिंसाए करीने, केटलाक आत्मारामने पीडा नहीं आपतां यथेच्छ भोगादिके करीने अने केटलाक तद्दन निस्पृहताए करीने, इत्यादि पोतपोतानी मतिकल्पनाए करीने धर्मनुं स्थापन करवा लाग्या. ते सर्व सांभळीने मंत्री तो मौनज रह्यो. तेथी राजाए मंत्रीने कह्युं के " तमे केम कांइ धर्म संबंधी निर्णय जणावता नथी ? " मंत्रीए कह्युं के " हे स्वामी! आवां पक्षपातनां वाक्योथी शो निर्णय थाय ? विचारपूर्वक युक्तिवाळा प्रश्नोत्तरो जाणीने पोतानी जातेज धर्मनी परीक्षा करवी योग्य छे. " पछी मंत्रीए राजानी संमतिथी " सकुंडलं वा वदनं न वत्ति " "मुख कुंडल सहित छे के नहीं ?" ए चोथुं पादं समस्यापूर्तिने माटे आखा नगरमां प्रसिद्ध कर्युं. ते साथे कहेवराव्युं के ते आखी गाथा राजाना भंडारमां छे. वळी नगरमां आघोषणा करावी के " जे कोइ आ समस्या पूर्ण करशे, तेने राजा इच्छित दान आपशे अने तेनो भक्त थशे. " ते सांभळीने सर्व लोक ते गाथानुं पाद गोखवा लाग्या. पछी सातमे दिवसे राजाए ते समस्यापूर्तिने माटे सभा भरी. तेमां प्रथम एक परिव्राजक बोल्यो के—

> भिक्खापविठ्ठेन मएज्ज दिठ्ठं, पमयामुहं कमलविसाललनेत्तं ।
> वक्खित्तचित्तेण न सुठ्ठु दिठ्ठं, सकुंडलं वा वदनं न वत्ति ॥१॥

भावार्थ—" में भिक्षाने माटे आजे कोइने घेर प्रवेश कर्यो. त्यां कमळना सरखा विशाळ नेत्रवाळुं एक स्त्रीनुं मुख जोयुं, पण मारुं चित्त व्याक्षिप्त होवाथी में बराबर दीठुं नहीं के ते मुख कुंडळ सहित हतुं के नहीं ? "

आ प्रमाणे सांभळीने मंत्रीए राजाने कह्युं के " हे स्वामी ! आ परिव्राजक परमार्थिक धर्म जाणतो नथी, केमके बराबर न जोवाना कारणमां चित्तनी व्याक्षिप्तता

(व्याकुळता) बतावी छे, पण वीतरागपणुं बताव्युं नथी. भोजनप्राप्तिना अभावे उपवास थयो, तो तेथी कांइ उपवासनुं फळ न होय." ते सांभळीने राजाए ते गाथा विसंवादी अर्थवाळी जाणीने ते परिव्राजकने तिरस्कारपूर्वक काढी मूक्यो. पछी बीजो तापस बोल्यो के—

फलोदयेणंमि*गिहे पविट्ठो, तत्थासणत्था पमया निरिक्खिया।
वक्खित्तचित्तेण न सुट्ठु दिट्ठं, सकुंडलं वा वदनं न वत्ति ॥२ ॥

भावार्थ—"हुं प्रातःकाळे कोइना घरमां पेठो. त्यां एक प्रमदाने में आसनपर बेठेली जोइ, पण मारुं चित्त व्याकुळ होवाथी में बराबर जोयुं नहीं के तेनुं मुख कुंडळ सहित हतुं के नहीं ?"

ते सांभळीने राजाए तथा मंत्रीए विचार्युं के "आ गाथामां पण तेणे अज्ञानना कारणमां कार्यनी व्यग्रता बतावी छे, पण तत्त्वार्थ जणाव्यो नथी." त्यार पछी त्रीजो बौधनो शिष्य बोल्यो के—

मालाविहारे मइ अज्ज दिट्ठा, उवासिआ कंचणभूसिअंगी।
वक्खित्तचित्तेण न सुट्ठु नायं, सकुंडलं वा वदनं न वत्ति ॥ ६ ॥

भावार्थ—"बौद्ध साधुने रहेवाना मठमां में आजे कंचनादिनां अनेक आभूषणो पहेरी वस्त्रालंकारथी विभूषित थइने बेठेली एक उपासिका—स्त्रीने जोइ, पण व्याक्षिप्त चित्त होवाथी में बराबर जोयुं नहीं के तेनुं मुख कुंडळ सहित हतुं के नहीं ?"

ते सांभळीने राजाए तथा मंत्रीए विचार्युं के "आ गाथामां पण तेणे स्त्रीना नेपथ्य जोवामां व्यग्रपणुं बताव्युं छे, पण ज्ञानतत्त्व जणाव्युं नथी." एज रीते सर्व धर्मीओए कहेल गाथाओ जाणी लेवी. तेमां जैनधर्मी कोइ आवेल न होवाथी राजाए मंत्रीने कह्युं के "आमां जैनधर्मी कोइ आवेल नथी." ते सांभळीने मंत्रीए विचार्युं के "'जैनधर्मी पण सर्वे आवाज हशे' एम राजानुं मानवुं थशे, माटे कोइ साधु अहींथी नीकळे तो बोलावुं." एम विचार करे छे, तेटलामां कोइ क्षुल्लक साधु भिक्षा माटे ते तरफ नीकळ्या, तेने मंत्री सभामां तेडी लाव्यो. ते क्षुल्लक मुनि राजाए कहेलुं चोथुं पद सांभळीने बोल्या के—

* आ पद अशुद्ध लागे छे.

खंतस्स दंतस्स जिइंदिअस्स, अप्पप्पजोगे गयमाणसस्स ।
किं मज्झ एएण विचिंतिएणं, सकुंडलं वा वदनं न वत्ति ॥४॥

भावार्थ—" क्षमावान, दांत, जितेन्द्रिय अने जेनुं मन अध्यात्मना चिंतवनमां लीन थयेलुं छे एवा मारे 'आ मुख कुंडल सहित छे के नहीं ?' एवा विचारे करीने शुं ? अर्थात एवो विचार शामाटे करवो जोइए ?"

आ गाथामां कुंडळना अज्ञानपणामां क्षांत्यादिकनुं कारण बताव्युं छे पण चित्तनी व्याकुळता बतावी नथी. तेथी गाथामां क्षांति, दम, जितेन्द्रियता अने अध्यात्म योगअधिगता कारण रूपे कहेल होवाथी राजाने धर्म पूछवानो उल्लास थयो तेथी; तेणे धर्म संबंधी प्रश्न कर्यो के तरतज क्षुल्लके प्रथमथीज पोतानी पासे राखेला आर्द्र तथा शुष्क एवा माटीना बे गोळा भींत उपर फेंक्या अने त्यांथी चालवा मांड्युं. तेने जतां जोइने राजाए पूछ्युं के " हे पूज्य ! आ शुं ? में धर्म संबंधी प्रश्न कर्यो, तेनो उत्तर केम आपता नथी ?" मुनि बोल्या के " हे मुग्ध ! शुष्क तथा आर्द्र एवा बे गोळाना दृष्टांतथीज तमारा प्रश्ननो जवाब आवी गयो छे, तोपण ते स्फुट करुं छुं ते सांभळो—

उल्लो सुक्को अ दो छूढा, गोलया मट्टिआमया ।
दोवि आविय कुड्डे, जो उल्लो तत्थ लग्गइ ॥ १ ॥

भावार्थ—" सूको अने आर्द्र एवा बे माटीना गोळा फेंक्या, ते भींत साथे अफळातां तेमां जे आर्द्र हतो ते त्यां चोंट्यो. "

आ गाथानो उपनय एवो छे के परमात्माना स्वरूपनुं ध्यान करवामां व्यग्र थयेलो आत्मा बाह्यात्मावडे कामिनीना मुखादिक जोइ शकतो नथी, अने तेवा ध्यानथी जेनो आत्मा बहिर्मुख होय ते जोइ शके छे. जे कामांध पुरुषो छे ते सार्द्र छे अने सार्द्र होवाथी कर्मरूपी पंकमां चोंटी जाय छे, अर्थात् कर्मरूपी कादवथी ते खरडाय छे; अने जेओ क्षांति विगेरे गुणोने धारण करनारा तेमज संसारना क्षणिक सुखथी पराङ्मुख सुका काष्ठ जेवा मुनिओ छे तेओ शुष्क गोळानी जेम कोइ पण स्थाने वळगता नथी, अर्थात् तेने कर्म पण चोंटतां नथी.

एवं लग्गंति दुम्मेहा, जे नरा कामलालसा ।
विरताउ न लग्गंति, जहा से सुक्कगोलए ॥ १ ॥

भावार्थ—" ए प्रमाणे काममां लुब्ध अने दुष्ट बुद्धिवाळा मनुष्यो ज्यां त्यां वळगे छे, पण सर्वथी विरति पामेला तो शुष्क गोळानी जेम कोइ पण स्थाने वळगता नथी. "

जह खलु कुसिरं कट्ठं, सुचिरं सुक्कं लहु म्हइ अग्गी ।
तह खलु खवंति कम्मं, सम्मं चरणट्ठिया साहू ॥१॥

भावार्थ—" जेम पोलाणवाळां अने घणा काळनां सुकां लाकडांने अग्नि जलदीथी बाळी नांखे छे, तेम सम्यक् प्रकारे चारित्रधर्ममां रहेला साधु कर्मने जलदीथी खपावे छे—नाश करे छे. "

आ प्रमाणे सांभळीने राजा प्रतिबोध पाम्यो अने हमेशां मंत्रिनी पासे क्षुल्लक मुनिना धर्मनी प्रशंसा करवा लाग्यो.

आवी युक्तिथी राहुगुप्त मंत्रीए राजाने यथार्थ धर्ममां आसक्त कर्यो, ते प्रमाणे बीजाओए पण करवुं.

अहीं पापरहित क्षुल्लक मुनिए शृंगाररसवाळी समस्याने पण निरवद्य (निर्दोष) मार्गमां स्थापन करी, अने कुवादीओना शास्त्र करतां जैन शास्त्रने सत्य करी बताव्युं. ए प्रमाणे बीजा पंडितोए पण करवुं. परंतु मिथ्यात्व शास्त्रनी युक्तिओवडे एकांतवादीना कहेला सूत्रार्थो प्ररूपीने अनेकांत आगमने [1]कंथारूप न करवो. ते संबंधमां कह्युं छे के—

मिथ्यात्वशास्त्रयुक्त्याद्यैः, कंथीकार्या न सूत्रवाक् ।
सूत्रार्थोभयनैन्ह्व्यसमं पापं न भूतले ॥ १ ॥

भावार्थ—" सूत्रनी वाणीने मिथ्यात्व शास्त्रनी युक्तिओए करीने कंथारूप करवी नहीं, केमके सूत्र तथा अर्थ ए बन्नेना निन्हव समान बीजुं कोइ मोटुं पाप पृथ्वी पर नथी. " कंथारूप करवानुं स्वरूप बताववा माटे [2]भेरीनुं दृष्टांत कहे छे.

भेरीनुं दृष्टांत.

द्वारकापुरीमां श्री कृष्ण वासुदेव राज्य करता हता, त्यारे देवताओ पासेथी मेळवेली गोशिर्षचंदनना काष्ठनी त्रण भेरीओ तेमनी पासे हती. १ सांग्रामिकी,

---

[1] कंथा एटले घणां थीगडां दीधेलुं गोदडुं विगेरे. [2] भेरी एटले नगारुं.

खंतस्स दंतस्स जिइंदिअस्स, अप्पप्पजोगे गयमाणसस्स ।
किं मज्झ एएण विचिंतिएणं, सकुंडलं वा वदनं न वत्ति ॥४॥

भावार्थ—"क्षमावान, दांत, जितेन्द्रिय अने जेनुं मन अध्यात्मना चिंतवनमां लीन थयेलुं छे एवा मारे 'आ मुख कुंडल सहित छे के नहीं?' एवा विचारे करीने शुं? अर्थात एवो विचार शामाटे करवो जोइए?"

आ गाथामां कुंडळना अज्ञानपणामां क्षांत्यादिकनुं कारण बताव्युं छे पण चित्तनी व्याकुळता बतावी नथी. तेथी गाथामां क्षांति, दम, जितेन्द्रियता अने अध्यात्म योगअधिगता कारण रूपे कहेल होवाथी राजाने धर्म पूछवानो उल्लास थयो तेथी तेणे धर्म संबंधी प्रश्न कर्यो के तरतज क्षुल्लके प्रथमथीज पोतानी पासे राखेला आर्द्र तथा शुष्क एवा माटीना बे गोळा भींत उपर फेंक्या अने त्यांथी चालवा मांड्युं. तेने जतां जोइने राजाए पूछ्युं के "हे पूज्य! आ शुं? में धर्म संबंधी प्रश्न कर्यो, तेनो उत्तर केम आपता नथी?" मुनि बोल्या के "हे मुग्ध! शुष्क तथा आर्द्र एवा बे गोळाना दृष्टांतथीज तमारा प्रश्ननो जवाब आवी गयो छे, तोपण ते स्फुट करुं छुं ते सांभळो—

उल्लो सुक्को अ दो छूढा, गोलया मट्टिआमया ।
दोवि आविय कुड्डे, जो उल्लो तत्थ लग्गइ ॥ १ ॥

भावार्थ—"सूको अने आर्द्र एवा बे माटीना गोळा फेंक्या, ते भींत साथे अफळातां तेमां जे आर्द्र हतो ते त्यां चोंट्यो."

आ गाथानो उपनय एवो छे के परमात्माना स्वरूपनुं ध्यान करवामां व्यग्र थयेलो आत्मा बाह्यात्मावडे कामिनीना मुखादिक जोइ शकतो नथी, अने तेवा ध्यानथी जेनो आत्मा बहिर्मुख होय ते जोइ शके छे. जे कामांध पुरुषो छे ते सार्द्र छे अने सार्द्र होवाथी कर्मरूपी पंकमां चोंटी जाय छे, अर्थात् कर्मरूपी कादवथी ते खरडाय छे; अने जेओ क्षांति विगेरे गुणोने धारण करनारा तेमज संसारना क्षणिक सुखथी पराङ्मुख सुका काष्ठ जेवा मुनिओ छे तेओ शुष्क गोळानी जेम कोइ पण स्थाने वळगता नथी, अर्थात् तेने कर्म पण चोंटतां नथी.

एवं लग्गंति दुम्मेहा, जे नरा कामलालसा ।
विरताउ न लग्गंति, जहा से सुक्कगोलए ॥ १ ॥

न्नावार्थ—" ए प्रमाणे काममां लुब्ध अने दुष्ट बुद्धिवाळा मनुष्यो ज्यां त्यां वळगे ठे, पण सर्वथी विरति पामेला तो शुष्क गोळानी जेम कोइ पण स्थाने वळगता नथी."

जह खलु फुसिरं कठं, सुचिरं सुक्कं लहु रुहइ अग्गी ।
तह खलु खवंति कम्मं, सम्मं चरणठ्ठिया साहू ॥३॥

न्नावार्थ—" जेम पोलाणवाळां अने घणा काळनां सुकां लाकडांने अग्नि जलदीथी बाळी नांखे ठे, तेम सम्यक् प्रकारे चारित्रधर्ममां रहेला साधु कर्मने जलदीथी खपावे छे—नाश करे ठे."

आ प्रमाणे सांन्नळीने राजा प्रतिबोध पाम्यो अने हमेशां मंत्रिनी पासे क्षुल्लक मुनिना धर्मनी प्रशंसा करवा लाग्यो.

आवी युक्तिथी राहुगुप्त मंत्रीए राजाने यथार्थ धर्ममां आसक्त कर्यो, ते प्रमाणे बीजाओए पण करवुं.

अहीं पापरहित क्षुल्लक मुनिए शृंगाररसवाळी समस्याने पण निरवद्य (निर्दोष) मार्गमां स्थापन करी, अने कुवादीओना शास्त्र करतां जैन शास्त्रने सत्य करी बताव्युं. ए प्रमाणे बीजा पंमितोए पण करवुं. परंतु मिथ्यात्व शास्त्रनी युक्तिओवमे एकांतवादीना कहेला सूत्रार्थो प्ररुपीने अनेकांत आगमने [1]कंथारूप न करवो. ते संबंधमां कह्युं ठे के—

मिथ्यात्वशास्त्रयुक्त्याद्यैः, कंथीकार्या न सूत्रवाक् ।
सूत्रार्थोभयनैन्हव्यसमं पापं न भूतले ॥ १ ॥

न्नावार्थ—" सूत्रनी वाणीने मिथ्यात्व शास्त्रनी युक्तिओए करीने कंथारूप करवी नहीं, केमके सूत्र तथा अर्थ ए बन्नेना निन्हव समान बीजुं कोइ मोटुं पाप पृथ्वी पर नथी." कंथारूप करवानुं स्वरूप बताववा माटे [2]न्नेरीनुं दृष्टांत कहे ठे.

न्नेरीनुं दृष्टांत.

द्वारकापुरीमां श्री कृष्ण वासुदेव राज्य करता हता, त्यारे देवताओ पासेथी मेळवेली गोशिर्षचंदनना काष्ठनी त्रण न्नेरीओ तेमनी पासे हती. १ सांग्रामिकी,

---

१ कंथा एटले घणां थीगडां दीधेलुं गोदडुं विगेरे. २ भेरी एटले नगारुं.

२ औद्भूतिकी अने ३ कौमुदिकी. तेमां पहेली भेरी युद्धना समये सामंतादिकने खबर आपवा माटे वगाडवामां आवती, बीजी भेरी कोइ अकस्मात् कार्यप्रसंग आवी पडे त्यारे सामंत, मंत्री विगेरेने जणाववा माटे वगाडवामां आवती अने त्रीजी भेरी कौमुदी महोत्सव विगेरे उत्सवो जणाववा माटे वगाडवामां आवती. ते शिवाय तेवीज गोशिर्षचंदनमय एक चोथी भेरी पण हती, ते छ छ मासे वगाडवामां आवती. जे माणस ते भेरीनो शब्द सांभळे तेने आगळ पाछळना छ छ मासना उपद्रवो शांत थता हता. आ चोथी भेरी चालता प्रसंगमां उपयोगी छे, तेथी ते भेरीनी उत्पत्ति लखीए छीए.

कोइ वखत सौधर्म देवलोकमां समग्र देवोनी सभा भराइ हती, ते वखते सर्व देवोनी समक्ष इंद्रे कह्युं के " अहो ! कृष्ण विगेरे एवा सत्पुरुष छे के जेओ लक्ष दोषमांथी पण गुणनेज ग्रहण करे छे, तथा नीच युद्धथी युद्ध करता नथी. " ते सांभळीने एक देवताने तेना वाक्य पर श्रद्धा बेठी नहीं, तेथी तेणे विचार्युं के " एवुं केम संभवे ? परदोषनुं ग्रहण कर्या विना कोइ माणस रही शकतुंज नथी. " एम विचारीने ते देवता मृत्युलोकमां आव्यो अने द्वारका नगरीना राजमार्गमां एक भयंकर अने अति दुर्गंधवाळा काळा कूतरानुं मृतक विकुर्वीने मूक्युं. ते कूतराना मुखमां कुंद पुष्पना जेवा श्वेत अने सुशोभित दंतपंक्ति विकुर्वी. तेवामां श्री नेमिनाथने वांदवा माटे कृष्ण वासुदेव सर्व सैन्य सहित नीकळ्या. राजमार्गमां चालता सैनिको दूरथीज ते श्वाननी दुर्गंध आववाथी आमे मार्गे चाल्या. वासुदेवे तेनुं कारण पूछ्युं, त्यारे तेओए कूतरानुं मृतक बताव्युं. ते जोइने कृष्णे कह्युं के "पुद्गलना नाना प्रकारना स्वभावो होय छे, तेमां हर्ष शोक करवा जेवुं नथी. परंतु जुओ, एनुं शरीर तो कृष्ण वर्णनुं छे; पण दांत श्वेत छे, तेथी ते [1]मरकतमणिना भाजनमां गोठवेली मुक्तावळीनी जेवा शोभे छे. " ते सांभळीने पेला देवताए विचार्युं के " खरेखर आ वासुदेवनुं सेंकडो दोषोने मूकीने परगुणग्राहीपणुं सत्य छे. " पछी ते देव बीजा गुणनी परीक्षा करवा माटे वासुदेवना अश्वरत्ननुं हरण करीने भाग्यो. तेनी पाछळ सैन्य सहित वासुदेव पण गया. युद्ध करतां देवताए वासुदेवनुं समग्र सैन्य जीती लीधुं. पछी वासुदेवे ते देवताने कह्युं के " मारा अश्वरत्नने तुं केम हरी जाय छे? " देवता बोल्यो के " युद्धमां जीतीने तमारो अश्व लइ ल्यो. " कृष्णे कह्युं के " हुं रथमां बेठो छुं अने तुं भूमि उपर रहेलो छे, माटे तुं मारो रथ अंगीकार कर. जेथी

१ मरकतमणि कृष्ण वर्णना होय छे.

आपणुं समान युध्ध थाय." देवे कह्युं के "मारे रथनी जरुर नथी." त्यारे वासुदेवे हस्ति पर तेमज अश्व पर बेसीने युध्ध करवानुं कह्युं, ते पण तेणे अंगीकार कर्युं नहीं. पछी बाहुयुध्ध करवानुं कह्युं तेनो पण देवताए निषेध कर्यो, त्यारे कृष्णे कह्युं के "त्यारे तारे कया युध्धथी युध्ध करवुं छे?" देवताए कह्युं के "आपणे नीच लोकोनी जेवा हलका युद्धथी[1] युध्ध करीए." ते सांभळीने कृष्णे कह्युं के "हुं एवा नीच युद्धथी युद्ध नहीं करुं. मारा अश्वरत्नने तुं सुखेथी लइ जा." आ प्रमाणे वासुदेवनुं साहस जोइने ते सुर संतुष्ट थयो, अने इंद्रे करेली प्रशंसानो विश्वास बेठो. पछी तेणे पोतानुं स्वरूप प्रगट करीने वासुदेवने कह्युं के "देवदर्शन निष्फळ होय नहीं, माटे कांइक वरदान मागो." वासुदेवे माग्युं के "उपद्रवने शांत करनारी भेरी मने आपो." त्यारे देवे चंदननी एक भेरी आपीने तेनुं फळ कह्युं के "आ भेरीनो शब्द जे कोइ सांभळशे तेना छ मासना थयेला ने थवाना ज्वरादिक रोगो नाश पामशे. तेथी छ छ मासे फरीथी वगाडवी, एटले प्रथम नहीं सांभळेला माणसोना उत्पन्न थयेला सर्व रोगो पण नाश पामशे." पछी ते भेरी कृष्णे छ छ मासे वगडाववा मांडी.

एकदा कोइ एक दाहज्वरथी पीडा पामतो वणिक् भेरीना रक्षक पासे आव्यो अने तेने कह्युं के "हुं तने एक लक्ष रुपीआ आपुं, अने तुं मने आ भेरी कापीने तेनो एक ककडो आप. केमके जे वखते भेरी वागी, ते वखते हुं हाजर नहोतो, अने हवे तो राजानी आज्ञाथी छ मासे वागशे. तेटला वखत सुधी हुं दुःख सहन करी शकुं तेम नथी, माटे मने एक ककडो आप." ते सांभळीने भेरीना रक्षके लोभाधीन थइने एक ककडो कापी आप्यो, अने तेने स्थाने बीजा चंदनथी थीगडुं दीधुं. एवी रीते बीजाओने पण लोभने वश थइने ते ककडाओ आपवा लाग्यो, अने तेने स्थाने बीजां थीगडां देवा लाग्यो. तेथी ते भेरी कंथारूप थइ गइ. पछी छ मास पूर्ण थया त्यारे कृष्णे ते भेरी वगडावी पण कंथारूप थइ गयेली होवाथी ते भेरीनो शब्द वासुदेवनी सभा मात्रमां पण प्रसर्यो नहीं; तेथी तपास करी तो तेने कंथारूप करवानुं वृत्तांत जणायुं, एटले भेरीना रक्षकने काढी मूक्यो अने फरीने अष्टम तप करीने कृष्णे ते देवता पासेथी बीजी भेरी मेळवी, अने तेनो रक्षक बीजाने कर्यो.

आ दृष्टांतनो उपनय एवी रीते समजवो के "जे शिष्य सूत्रने अथवा तेना

१ अहीं अधिक्षण युद्धेन पृतघातैः युद्धावः एवो पाठ छे तेनो अर्थ बराबर लागतो नथी.

अर्थने परमतना शास्त्र साथे अथवा स्वमतना बीजा ग्रंथो साथे मिश्र करीने कंथारूप करे अर्थात् अहंकारथी परमतादिक साथे मिश्र करीने सूत्र अथवा अर्थने संपूर्ण करे ते अनुयोग श्रवणने योग्य नथी. एज प्रमाणे गुरु पण जो सूत्रार्थने कंथारूप करे, तो ते पण अनुयोग भणाववाने योग्य नथी. "हुं सारी रीते भणेलो छुं, मारे बीजाने शा माटे पूछवुं जोइए ?" एवो अहंकार आणीने जे पडेलो अथवा विस्मरण थयेलो पाठ स्वमतिकल्पनाथी पूर्ण करे ते सर्वथा अयोग्य छे.

"लोभथी, अहंकारथी, कदाग्रहथी, हठथी के शाठ्यथी सूत्र तथा अर्थने कंथारूप करे, तो तेने सूत्रार्थनो निन्हव करनार जाणवो, माटे साधु विगेरे सुज्ञ पुरुषोए तेम करवुं नहीं."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य

सप्तषष्ठ्यधिकद्विशततमः प्रबंधः॥ २६७ ॥

॥ इति ज्ञानाचारः ॥

व्याख्यान २६८ मुं.

दर्शनाचारना पहेला आचार विषे.

ज्ञानाद्यनन्तसंपूर्णैः, सर्वविद्भिर्यदाहितम् ।
तत्तथ्यं दर्शनाचारो, निःशंकाख्योऽयमादिमः ॥१॥

भावार्थ—"अनंत ज्ञानादिके करीने संपूर्ण एवा सर्वज्ञोए जे कहेलुं छे ते सत्य छे एम जे मानवुं ते 'निःशंक' नामनो पहेलो दर्शनाचार जाणवो."

जिनोक्ततत्त्वसंदेहः, सा च शंकाऽभिधीयते ।
शंकातो भिद्यते श्रद्धा, दोषोऽयं स्यान्महांस्ततः ॥२॥

भावार्थ—"श्री जिनेश्वरे कहेला तत्त्वमां जे संदेह लाववो ते शंका कहेवाय छे, शंका थवाथी श्रद्धा भेद पामे छे; अर्थात् श्रद्धारहित थवाय छे, अने तेथी परिणामे मोटो दोष प्राप्त थाय छे."

शंका करवाथी सम्यक्त्व तत्त्व श्रद्धान भेद पामे छे, ते उपर श्री गंगाचार्यनुं दृष्टांत कहे छे—

गंगाचार्यनुं दृष्टांत.

महागिरिना शिष्य धनगुप्त अने धनगुप्तना शिष्य गंग नामे आचार्य थया. ते गंगाचार्य एकदा उल्लूका नदीना पूर्व कांठा पर चतुर्मास रह्या हता ने तेमना गुरु धनगुप्ताचार्य तेज नदीना पश्चिम कांठे चतुर्मास रह्या हता. एक वखत शरद् ऋतुमां गंगाचार्य पोताना गुरुने वांदवा जतां मार्गमां उल्लूका नदी उतरता हता ते वखते तेमना मस्तकमां टाल होवाथी सूर्यना किरणोना स्पर्शने लीधे तेमनुं मार्थु तपी गयुं, अने पाणीमां चालता होवाथी पगने शीतळता जणाइ. ते वखते पूर्वे बांधेला मिथ्यात्व मोहनीनो उदय थवाथी तेमने एवो विचार आव्यो के " सिद्धांतमां एक काळे बे क्रियानो अनुभव न होय एम कह्युं छे; पण मने तो अत्यारे एकज समये बे क्रियानो अनुभव थाय छे. हुं शीत ने उष्ण बंनेने वेदुं छुं. माटे अनुभवथी विरुद्ध होवाने लीधे आगमनुं ए वचन यथार्थ लागतुं नथी. " एवी शंका धरावता सता गंगाचार्य गुरु पासे आव्या, अने पोताने थयेली शंका निवेदन करी. ते सांभळीने गुरुए शिखामण आपी के " हे वत्स ! छाया अने आतप जेम समकाळे न होय तेम एक काळे बे क्रियानो अनुभव अन्योन्य विरुद्ध होवाथी थइ शकेज नहीं; केमके जे अनुभव थाय छे ते अनुक्रमेज थाय छे; परंतु समयावलिकादिक काळ घणो सूक्ष्म होवाथी अने मन पण अति चपळ, अति सूक्ष्म अने घणीज त्वरावाळुं होवाथी ते अनुभवनो अनुक्रम तारा जाणवामां आव्यो नहीं. मन ए इंद्रियोथी ग्रहण न थइ शके एवा सूक्ष्म पुद्गलना स्कंधोथी थयेलुं छे. ते मन इंद्रियोए ग्रहण करेला स्पर्शनादिक द्रव्य साथे जे वखते संबंध पामे छे, ते वखते इंद्रियोने ते द्रव्यनुंज मात्र ज्ञान कराववामां कारणभूत थाय छे. अन्य पदार्थमां उपयोग राखनारो प्राणी पासे ऊभेला हस्तिने पण जोइ शकतो नथी. तेथी एक पदार्थमां उपयोगवाळुं मन कदापि बीजा अर्थनो उपयोग धरावी शकेज नहीं. जेम एक मुनि एकाग्र ध्यानमां मग्न थइने कायोत्सर्ग रह्या हता, तेवामां तेनी पासे थइने एक चक्रवर्ती पोताना समग्र सैन्य तथा चोसठ हजार अंतेउरीओ सहित नीकळ्यो. ते वखते सैन्यमां रहेलां संख्याबंध वाजित्रो पण वागतां हतां. चक्रवर्तीए ते मुनिने जोइने विचार्युं के " अहो ! आ मुनिनुं चित्त केवुं एकाग्र छे के जेथी मारुं सैन्य शब्द, रूप, रस, गंध अने

स्पर्श ए पांचे इंद्रियोने सुख आपनारां साहित्योथी संपूर्ण छतां पण आ मुनि मन पूर्वक तेने जोता पण नथी." पछी ज्यारे ते मुनिनुं ध्यान पूर्ण थयुं, त्यारे तेने नमीने चक्रीए पूछ्युं के "हे स्वामी! हस्ति, अश्व, रथ, वाजित्र अने स्त्रीओ विगेरे पांचे इंद्रियोने अनुकूळ वस्तुओथी युक्त मारुं सैन्य आपनी पासे थइने गयुं, ते सर्व आपे जोयुं के नहीं?" गुरुए जवाब आप्यो के "तमारा सेवकोए मने प्रणाम विगेरे कर्या हशे, पण हुं तो परमात्माना ध्यानमांज उपयोगासक्त हतो, तेथी में ते कांइ पण जोयुं, सांभळ्युं के जाण्युं नथी." ते सांभळीने गुरुना उपयोगनी वारंवार स्तुति करतो ते चक्री प्रतिबोध पामीने बोल्यो के "पोतानी पासे इंद्रियोथी ग्रहण थाय एवा अनेक पदार्थो रह्या होय, तोपण मननी प्रवृत्ति विना कोइ पण पदार्थ ग्रहण थतो नथी, ते सत्य वात छे." तो हे शिष्य! प्राणी जे इंद्रियना उपयोगमां वर्ततो होय, तेज इंद्रियना विषयमां ते तल्लीन थाय छे तेथी ते बीजा पदार्थमां लीन थइ शकतो नथी." शिष्ये प्रश्न कर्यो के "हे स्वामी! जो एक काळे बे क्रियानो उपयोग न थतो होय तो में शीत ने उष्ण एक साथे केम वेदी?" गुरु बोल्या के "समयावलिकादि काळनो जे विभाग कहेलो छे ते अति सूक्ष्म छे, माटे जूदे जूदे काळे थयेलुं बे क्रियानुं ज्ञान कमळना शत पत्रना वेधनी जेम एकज वखते थयेलुं तुं माने छे. कमळना सो पत्र उपरा उपर राखीने कोइ बळवान माणस अति तीक्ष्ण सूची (सोय)थी ते पत्रोने वींधे, तोपण ते एक काळे वींधी शकशे नहीं. केमके काळना भेदे करीने असंख्यात असंख्यात समये एक एक पत्रनो वेध थाय छे अने उपरनुं पत्र वींधाया विना नीचेनुं पत्र विंधी शकातुं नथी, तोपण ए पत्रोने वींधनार माणस एम मानशे के "में एकज काळे आ बधां पत्रो वींध्यां छे. केमके काळनो भेद घणोज सूक्ष्म होवाथी ते जाणी शकतो नथी. वळी अलातचक्रने[१] घणीज त्वराथी गोळ फेरवीए तोपण ते चक्र काळना भेदे करीने जुदी जुदी दिशाओमां अनुक्रमे अनुक्रमेज फरे छे. तोपण फेरववानो काळ घणो सूक्ष्म होवाथी ते जाणवामां आवतो नथी, माटे आपणने ते गोळ कुंभाळुंज लागे छे, तेवीज रीते प्रकृतमां पण शीत तथा उष्ण क्रियाना अनुभवनो काळ भिन्न छतां पण सूक्ष्म होवाथी ताराथी जाणी शकायो नथी, तेथी ते बन्ने क्रियानो अनुभव एकज काळे थयो, एम तारा

१ अलातचक्र एटले उंबाडीयुं विगेरे छेडे सळगावेला काष्ठादिक समजवा.

मानवामां आव्युं छे. वळी चित्त पण बधी इंद्रियोनी साथे एक काळे संबंध राखतुं नथी, पण अनुक्रमेज संबंध राखे छे, तेज रीते उपलक्षणथी मस्तक, हाथ, पग विगेरे स्पर्शेन्द्रियना जूदा जूदा अवयवो साथे पण चित्त एक काळे संबंध राखतुं नथी. जेमके कोइ माणस लांबी अने सुकी आंबली खाय छे, तेने चक्षुवमे जोवाथी तेना रूपनुं ज्ञान थयुं, नासिकावमे सुंघवाथी गंधनुं ज्ञान थयुं, खावाथी जीह्वाने रसनुं ज्ञान थयुं, स्पर्श करवाथी स्पर्शनुं ज्ञान थयुं, अने तेने चाववाथी शब्द उत्पन्न थयो, ते कर्णवमे सांजळवाथी शब्दनुं ज्ञान थयुं. परंतु ते पांचे ज्ञान अनुक्रमेज थाय छे, नहीं तो [1]सांकर्य दोष प्राप्त थाय, अने मतिज्ञान विगेरेना उपयोग वखते अवधि विगेरे ज्ञानना उपयोगनी पण प्राप्ति थइ जाय; अने तेम थवाथी एक घटादिक पदार्थनी कल्पना करतां अनंता घटादिक पदार्थोनी कल्पनानी प्रवृत्तिनो प्रसंग प्राप्त थाय, अने तेम तो छे नहीं. वळी श्रीमज्जिनेश्वर परमात्माना गुणनुं स्मरण करीने ध्यानमां उपयोग राखती वेळाए पण मिथ्यात्वना तर्क अने असुरादिकना ध्यानना उपयोगनी प्राप्ति थवी जोइए. माटे तारा मत प्रमाणे तो उपर कहेला उपरांत बीजा पण अनेक दोषो प्राप्त थशे, अने तेथी चिंतित अर्थ प्राप्त थशे नहीं. माटे उपयोग एक काळे एकज वस्तुमां थाय छे, पण अनेक वस्तुमां थतो नथी. तेज प्रमाणे कर्मबंध अने तेनी निर्जरा विगेरे पण घटाववां. आ संबंधमां प्रसन्नचंद्रना दृष्टांतनी जावना करवी. श्रेणिक राजाए श्रीमहावीर स्वामीने प्रसन्नचंद्र मुनिनी गतिनुं स्वरूप पूछ्युं, ते वखते प्रजुए ते मुनिना चित्तमां रहेला प्रशस्त अने अप्रशस्त उपयोगना परावर्तमानपणाने अनुसारे वारंवार जुदुं जुदुं गतिनुं स्वरूप कह्युं हतुं. पण जो एक काळे अनेक उपयोग वर्तता होत तो जिनेश्वर पण एक काळे अनेक गति कहेत, परंतु तेम होइ शकतुं नथी, माटे एक काळे एकज उपयोग वर्त्ते ए पक्ष सत्य छे. कह्युं छे के—

> यदा स्यात् प्राणिनां शीतोपयोगव्यापृतं मनः ॥
> तदा नोष्णोपयोगे तद्व्याप्रियेत विरोधतः ॥ १ ॥

जावार्थ—" ज्यारे प्राणीनुं मन शीत उपयोगमां व्यापारवाळुं होय छे त्यारे ते मन उष्ण उपयोगमां व्यापार करतुं नथी. केमके ते परस्पर विरोधी छे."

---

[1] एक बीजा साथे मळी जवुं ते सांकर्य कहेवाय छे.

यौगपद्याभिमानस्तूपयोगयुगलस्य यः ।
स तु मानससंचारक्रमस्यानुपलक्षणात् ॥ २ ॥

भावार्थ—" आ प्रमाणे छतां पण बे उपयोग समकाळे वर्तवानुं जे अभिमान थाय छे ते मनना संचारनो क्रम जाणवामां आवतो नथी तेथी थाय छे. "

फरीथी शिष्ये प्रश्न कर्यो के " हे स्वामी ! मतिज्ञानना ३४० भेदनुं वर्णन करती वखते आपेज बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिश्रित, असंदिग्ध, ध्रुव अने तेथी इत्तर अबहु, अबहुविध, अक्षिप्र, निश्रित, संदिग्ध, अध्रुव—ए प्रमाणे बार बार भेद अवग्रहादि मतिज्ञानना कहेवाने अवसरे एक वस्तुमां जुदा जुदा अनेक उपयोग होय एम कह्युं हतुं ते केम ? " तेनो गुरुए उत्तर आप्यो के " ते बहु बहुविधादि रूप वस्तुमां अनेक पर्यायो होय छे, तेमनुं सामान्य रूपे करीने ग्रहण मात्र करवुं, तेज मात्र ज्ञानमां उपयोगता छे एवी व्यवस्था बतावेली छे पण एक वस्तुमां एक काळे अनेक उपयोग कोइ पण स्थाने होयज नहीं. जेम ' सैन्य जाय छे ' ए वाक्य सामान्य छे. केमके तेमां कोइनो विशेष निर्देश कर्यो नथी. तेनुं नाम एक उपयोगपणुं कहेवाय छे परंतु ते (सैन्य) मां दरेक वस्तु भिन्न भिन्न करीए. जेमके आ हस्तिओ छे, आ अश्वो छे, आ पत्तिओ छे, आ ध्वजाओ छे, आ उंटो छे इत्यादिक विभाग करीए, तो ते भेदना अध्यवसाय रूप अनेक उपयोगता कहेवाय. तेज प्रमाणे हे शिष्य ! एक काळे घणां विशेषनुं ज्ञान थाय नहीं. केमके ते सर्वेनां लक्षण भिन्न भिन्न छे. लक्षण एटले शीत, उष्ण विगेरे विशेष वस्तुनुं स्वरूप कहेवुं ते. ते लक्षण परस्पर भिन्न भिन्न होवाथी तेने ग्रहण करनारां ज्ञानो पण भिन्न भिन्न छे, तेथी ते ज्ञानो एक काळे थाय नहीं. वळी सामान्यनुं लक्षण एवुं छे के जे अनेक विषयवाळुं होय, अने जे अनेकनो आधार होय (अनेकनो बोध करतुं होय) ते सामान्य कहेवाय छे. तो सामान्यनुं प्रथम ज्ञान थया विना विशेष ज्ञाननी उत्पत्तिज थती नथी. माटे एक काळे विशेष ज्ञान न थाय एवुं सिद्ध थयुं. आनुं तात्पर्य एवुं छे के प्रथम "वेदना थाय छे." एम सामान्यनुं ग्रहण करीने पछी इहा[1] मां प्रवेश करवाथी " पगमां शीत वेदना थाय छे. " एम वेदनानो विशेष निश्चय थाय छे. मस्तकना विषे पण प्रथम सामान्य रीते वेदनानुं ग्रहण थया

1 इहा एटले विचारणा, क्यां अने केवी वेदना थाय छे विगेरे चिंतववुं ते.

पछी इहामां प्रवेश करवाथी "मस्तके उष्ण वेदना थाय छे" एवो विशेपनो निश्चय थाय छे. वळी घट विशेपनुं ज्ञान थया पछी अनंतरज पटना आश्रयभूत सामान्यनुं ग्रहण कर्या विना पट विशेपनुं ज्ञान थशेज नहीं. वळी हे शिष्य ! एकज प्राणी एक काळे क्रियाओ तो घणी करी शके छे. जेम नर्त्तकी अभ्यासनी चतुराइने लीधे मुखथी हा, हा, विगेरे शब्दो बोले छे, नेत्रथी कटाक्ष फेंके छे वा नेत्र नमावे छे, हाथ पगनुं आकुंचन प्रसारण करे छे, आंगळीओ हलावे छे, शरीरने गमे तेम वाळे छे इत्यादि हावभाव एकज काळे करे छे पण तेनो उपयोग तो एक काळे एक क्रियामांज होय छे. वळी कोइ जिनेश्वरनी भक्ति करनारो माणस एक हाथे चामर वींजे छे, बीजे हाथे धूप लइने प्रभुने अंगे धूमावळि विस्तारे छे, मुखवडे अद्भुत रचनावाळी प्रभुनी स्तुति बोलीने जिनेश्वरना गुणोनुं गान करे छे, नेत्रवडे परमेश्वरनी अद्भुत प्रतिमा जोइने मस्तक धुणावे छे तथा चालतां पृथ्वीपर उपयोग पूर्वक विधियुक्त पादन्यास करे छे, इत्यादि अनेक क्रिया समकाळे करे छे परंतु तेनो उपयोग समकाळे बधी क्रियामां वर्त्ततो नथी. उपयोग तो एक क्रियामांज वर्त्ते छे. आ प्रमाणे अनेक प्रकारनी युक्तिओथी गुरुए तेने बहु समजाव्यो, तोपण ज्यारे ते शिष्ये पोतानो कदाग्रह छोड्यो नहीं, त्यारे तेने गुरुए गच्छ बहार कर्यो.

पछी ते विहार करतो करतो राजगृह नगरे आव्यो. त्यां ते पोताना असत्य मतनुं प्रतिपादन करीने बीजा मुनिओना चित्तने पण व्युद्ग्राहित करवा लाग्यो. केमके दुराग्रही माणस हडकाया कूतरानी जेम बीजाने पण पोतानी जेवा करवा इच्छे छे.

राजगृहीमां महातपस्तीरप्रभाव नामे एक ह्रद हतो. तेनी पासे मणिनाग नामना यक्षनुं चैत्य हतुं. त्यां रहीने गंगाचार्य पर्षदानी समक्ष समकाळे बे क्रिया वेदवारूप पोताना असत् पक्षनी प्ररुपणा करवा लाग्यो. ते सांभळीने मणिनाग यक्षने कोप चड्यो. तेथी तेणे कह्युं के "अरे दुष्ट ! आवी असत् प्ररुपणा करीने अनेक प्राणीओना मनमां संशय केम उत्पन्न करे छे ? आज स्थाने श्री वर्धमान स्वामीनुं समवसरण थयुं हतुं, ते वखते प्रभुए एक समये एकज क्रियानुं वेदवुं होय एम प्रतिपादन कर्युं हतुं. ते वखते में आ चैत्यमां रहीने सांभळ्युं हतुं. केवळज्ञानीने पण प्रथम समये ज्ञान एटले विशेपात्मक उपयोग होय छे, अने बी-

यौगपद्याभिमानस्तूपयोगयुगलस्य यः ।
स तु मानससंचारक्रमस्यानुपलक्षणात् ॥ ३ ॥

भावार्थ—" आ प्रमाणे छतां पण बे उपयोग समकाळे वर्तवानुं जे अभिमान थाय छे ते मनना संचारनो क्रम जाणवामां आवतो नथी तेथी थाय छे. "

फरीथी शिष्ये प्रश्न कर्यो के " हे स्वामी ! मतिज्ञानना ३४० भेदनुं वर्णन करती वखते आपेज बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिश्रित, असंदिग्ध, ध्रुव अने तेथी इत्तर अबहु, अबहुविध, अक्षिप्र, निश्रित, संदिग्ध, अध्रुव–ए प्रमाणे बार बार भेद अवग्रहादि मतिज्ञानना कहेवाने अवसरे एक वस्तुमां जुदा जुदा अनेक उपयोग होय एम कह्युं हतुं ते केम ? " तेनो गुरुए उत्तर आप्यो के " ते बहु बहुविधादि रूप वस्तुमां अनेक पर्यायो होय छे, तेमनुं सामान्य रूपे करीने ग्रहण मात्र करवुं, तेज मात्र ज्ञानमां उपयोगता छे एवी व्यवस्था बतावेली छे पण एक वस्तुमां एक काळे अनेक उपयोग कोइ पण स्थाने होयज नहीं. जेम ' सैन्य जाय छे ' ए वाक्य सामान्य छे. केमके तेमां कोइनो विशेष निर्देश कर्यो नथी. तेनुं नाम एक उपयोगपणुं कहेवाय छे परंतु ते (सैन्य) मां दरेक वस्तु भिन्न भिन्न करीए. जेमके आ हस्तिओ छे, आ अश्वो छे, आ पत्तिओ छे, आ ध्वजाओ छे, आ उंटो छे इत्यादिक विभाग करीए, तो ते भेदना अध्यवसाय रूप अनेक उपयोगता कहेवाय. तेम प्रमाणे हे शिष्य ! एक काळे घणां विशेषनुं ज्ञान थाय नहीं. केमके ते सर्वेनां लक्षण भिन्न भिन्न छे. लक्षण एटले शीत, उष्ण विगेरे विशेष वस्तुनुं स्वरूप कहेवुं ते. ते लक्षण परस्पर भिन्न भिन्न होवाथी तेने ग्रहण करनारां ज्ञानो पण भिन्न भिन्न छे, तेथी ते ज्ञानो एक काळे थाय नहीं. वळी सामान्यनुं लक्षण एवुं छे के जे अनेक विषयवाळुं होय, अने जे अनेकनो आधार होय (अनेकनो बोध करतुं होय) ते सामान्य कहेवाय छे. तो सामान्यनुं प्रथम ज्ञान थया विना विशेष ज्ञाननी उत्पत्तिज थती नथी. माटे एक काळे विशेष ज्ञान न थाय एवुं सिद्ध थयुं. आनुं तात्पर्य एवुं छे के प्रथम "वेदना थाय छे." एम सामान्यनुं ग्रहण करीने पछी इहा[1] मां प्रवेश करवाथी " पगमां शीत वेदना थाय छे. " एम वेदनानो विशेष निश्चय थाय छे. मस्तकन विषे पण प्रथम सामान्य रीते वेदनानुं ग्रहण थया

---

१ इहा एटले विचारणा, क्यां अने केवी वेदना थाय छे विगेरे चिंतवडुं ते.

पछी इहामां प्रवेश करवाथी "मस्तके उष्ण वेदना थाय छे" एवो विशेषनो निश्चय थाय छे. वळी घट विशेषनुं ज्ञान थया पछी अनंतरज पटना आश्रयभूत सामान्यनुं ग्रहण कर्या विना पट विशेषनुं ज्ञान थशेज नहीं. वळी हे शिष्य! एकज प्राणी एक काळे क्रियाओ तो घणी करी शके छे. जेम नर्त्तकी अभ्यासनी चतुराइने लीधे मुखथी हा, हा, विगेरे शब्दो बोले छे, नेत्रथी कटाक्ष फेंके छे वा नेत्र नमावे छे, हाथ पगनुं आकुंचन प्रसारण करे छे, आंगळीओ हलावे छे, शरीरने गमे तेम वाळे छे इत्यादि हावभाव एकज काळे करे छे पण तेनो उपयोग तो एक काळे एक क्रियामांज होय छे. वळी कोइ जिनेश्वरनी भक्ति करनारो माणस एक हाथे चामर वींजे छे, बीजे हाथे धूप लइने भक्तिने अंगे धूमावळि विस्तारे छे, मुखवडे अद्भुत रचनावाळी भक्तिनी स्तुति बोलीने जिनेश्वरना गुणोनुं गान करे छे, नेत्रवडे परमेश्वरनी अद्भुत प्रतिमा जोइने मस्तक धुणावे छे तथा चालतां पृथ्वीपर उपयोग पूर्वक विधियुक्त पादन्यास करे छे, इत्यादि अनेक क्रिया समकाळे करे छे परंतु तेनो उपयोग समकाळे बधी क्रियामां वर्तता नथी. उपयोग तो एक क्रियामांज वर्त्ते छे. आ प्रमाणे अनेक प्रकारनी युक्तिओथी गुरुए तेने बहु समजाव्यो, तोपण ज्यारे ते शिष्ये पोतानो कदाग्रह छोड्यो नहीं, त्यारे तेने गुरुए गच्छ बहार कर्यो.

पछी ते विहार करतो करतो राजगृह नगरे आव्यो. त्यां ते पोताना असत्य मतनुं प्रतिपादन करीने बीजा मुनिओना चित्तने पण व्युद्ग्राहित करवा लाग्यो. केमके दुराग्रही माणस हडकाया कूतरानी जेम बीजाने पण पोतानी जेवा करवा इच्छे छे.

राजगृहीमां महातपस्तीरप्रभाव नामे एक ध्रह हतो. तेनी पासे मणिनाग नामना यक्षनुं चैत्य हतुं. त्यां रहीने गंगाचार्य पर्षदानी समक्ष समकाळे बे क्रिया वेदवारूप पोताना असत् पक्षनी प्ररुपणा करवा लाग्यो. ते सांभळीने मणिनाग यक्षने कोप चड्यो. तेथी तेणे कह्युं के "अरे दुष्ट! आवी असत् प्ररुपणा करीने अनेक प्राणीओना मनमां संशय केम उत्पन्न करे छे? आज स्थाने श्री वर्धमान स्वामीनुं समवसरण थयुं हतुं, ते वखते प्रभुए एक समये एकज क्रियानुं वेदवुं होय एम प्रतिपादन कर्युं हतुं. ते वखते में आ चैत्यमां रहीने सांभळ्युं हतुं. केवळज्ञानीने पण प्रथम समये ज्ञान एटले विशेषात्मक उपयोग होय छे, अने बी-

जे समये दर्शन एटले सामान्यात्मक उपयोग होय छे, तो तुं वीरस्वामी करतां पण शुं अधिक ज्ञानी थयो छे के जेथी तेमनुं वचन पण अन्यथा करवा तत्पर थाय छे ? माटे आ दुष्ट वासना मूकी दे, अने प्रभुना वचनने अंगीकार कर; नहींतो हमणां तने आ मुद्गरवडे शिक्षा करीश. प्रत्यक्ष सिद्ध अर्थने पण तुं गोपवे छे ते योग्य नथी. जेम कोइ अष्टावधान साधनार प्राज्ञ माणस श्लोक रचवाने वखते नवीन श्लोक रचे छे, वाजित्रना ताल गणे छे, वात सांभळे छे, पृष्ठ उपर लखेला अक्षरो कहे छे. विगेरे आठ प्रकारनां अवधान साधे छे; ते सर्व शीघ्र गतिवाळा मनोविज्ञानने आधारेज करे छे. परंतु अज्ञानी माणसो अने बाळको आश्चर्य पामवाथी कहे छे के 'अहो! आ साधके समकाळे आ बधुं साध्युं.' परंतु एम कहेवुं युक्त नथी. कारणके अनुक्रमे परंतु अति शीघ्रपणे सर्व ग्रहण करीने पछी ते बोले छे." इत्यादि युक्तिथी ते नागयक्षे तेने समजाव्यो, एटले गंगाचार्ये तेनुं कहेवुं अंगीकार कर्युं अने मिथ्यादुष्कृत दीधो. पछी गुरु पासे जइ ते पापनी आलोचना लइने प्रतिक्रम्यो. ते विषे श्री महाभाष्यमां कह्युं छे के—

अट्ठावीसा दोवाससया, तइया सिद्धिंगयस्स वीरस्स ।
दोकिरियाणं दिट्ठि, उल्लूगतीरे समुप्पन्ना ॥ १ ॥

भावार्थ—" श्री महावीर स्वामीना निर्वाण पछी बसो ने अठावीश वर्षे उल्लूक नदीने कांठे बे क्रियानी दृष्टि (गंगाचार्यने) उत्पन्न थइ."

मणिनागेणारद्धो, भउवत्ति पडिसेहिउ वोत्तुं ।
इच्छामो गुरुमूलं, गंतुण तउ पडिक्कंतो ॥

भावार्थ—" मणिनागे प्रेरणा करीने भगवंतना वचनथी विरुद्ध कहेतो रोक्यो एटले ते गुरुमहाराज पासे जइने ते अपराधने पडिकम्यो."

" आ प्रमाणे नागयक्षे शंका दूर करावीने बोध पमाडेलो गंगाचार्य दर्शनना निन्हवपणाने छोडीने गंगाजळनी जेम निर्मळ थयो."

व्याख्यान २६९ सुं.

निष्कांक्षा नामना बीजा आचार विषे.

निष्कांक्षित्वमनेकेषु, दर्शनेष्वन्यवादिषु ।
द्वितीयोऽयं दर्शनाचारो, अंगीकार्यः शुभात्मभिः ॥१॥

भावार्थ—" अन्य वादीओना अनेक दर्शनोने विषे आकांक्षारहित थवुं, ए बीजा दर्शनाचारने सत्पुरुषे अंगीकार करवो. "

हित्वा स्याद्वादपक्षं यः, कांक्षति परशासनम् ।
कांक्षादोषान्वितः स स्यादन्यान्यदर्शनोत्सुकः ॥२॥

भावार्थ—" जे माणस स्याद्वाद पक्षने छोडीने परशासननी आकांक्षा राखे छे तेने कांक्षा दोषवाळो जाणवो, अने ते अन्य अन्य दर्शनमां वारंवार उत्कंठित थया करे छे. " आ हकीकत दृष्टांतवडे पुष्ट करे छे—

क्षुल्लक शिष्यनुं दृष्टांत.

वसंतपुरमां देवप्रिय नामे श्रेष्ठी रहेतो हतो. युवावस्थामां तेनी भार्या मरण पामवाथी तेने वैराग्य थयो, तेथी पोताना आठ वर्षना पुत्र सहित तेणे दीक्षा ग्रहण करी. ते क्षुल्लक (बाळक) शिष्य परीसहोने सहन करी शकतो नहीं, तेथी तेणे पिताने कह्युं के " हे पिता ! हुं उपानह (जोडा) विना चाली शकतो नथी. मने तो ब्राह्मणोनुं दर्शन श्रेष्ठ लागे छे के जेमां पगना रक्षणने माटे उपानह राखवानो विधि छे. " ते सांभळीने गुरुए विचार्युं के " आ शिष्य बाळकबुद्धि छे, माटे कदाचित् तेने उपान नहीं आपावुं तो ते कदाचित् सर्वथा धर्मरहित थइ जशे. " एम धारीने तेणे कोइ श्रावक पासे याचना करीने तेने माटे उपान करावी आप्या. पछी एकदा पुत्रे कह्युं के " हे पिता ! तडकावडे मारुं माथुं तपी जाय छे, तेथी माराथी चाली शकातुं नथी तो तापसोनुं दर्शन श्रेष्ठ लागे छे के जेमां छत्र धारण करी शकाय छे. " ते सांभळीने सर्वथा धर्मपराङ्मुख थवानी भीतिथी पिताए छत्रनी पण अनुमति आपी. वळी एकदा क्षुल्लके कह्युं के " हे तात ! भिक्षा माटे हुं अटन करी शकतो नथी. मने तो पंचाग्नि साधन करनारनो आचार श्रेष्ठ लागे

छे. केमके घणा लोको सन्मुख आवीने तेमने भिक्षादिक आपी जाय छे." पिताए पूर्वनी जेम विचार करीने पोतेज भिक्षा लावी आपवा मांडी. ए प्रमाणे अन्यदा पृथ्वीपर संथारो करवाने अशक्तिमान थयेला पुत्रे प्रातःकाळे उठीने सुवा माटे पलंग माग्यो अने तेने माटे शाक्य मतना आचारनी प्रशंसा करी, त्यारे पिताए लाकडानी पाट सुवा माटे आपी. पछी स्नान कर्या विना पुत्रने ठीक पड्युं नहीं तेथी शौच-मूळ धर्मनी प्रशंसा करी. त्यारे पिताए प्रासुक जळ लावीने तेनाथी स्नान करवानी अनुज्ञा आपी. ए प्रमाणे लोचने सहन नहीं करवाथी क्षौर कराववानी पण अ-नुज्ञा आपी. वळी एकदा पुत्रे कह्युं के "हे पिता! हुं ब्रह्मचर्य पाळवा समर्थ न-थी." एम कहीने गोपी तथा कृष्णनी लीलानी प्रशंसा करी. ए सांभळीने पि-ताए विचार्युं के "खरेखर आ पुत्र सर्वथा अयोग्य छे, किंचित् पण परमार्थ जाण-तो नथी. आटला दिवस तेणे जे माग्युं ते में मोहने लीधे आप्युं, पण आ मागणी तेनी कबुल राखुं तो तेनी साथे हुं पण नरकेज जाउं. संसारमां अनंत काळथी अटन करतां जीवोने अनंता पुत्रो थया छे, तो आनापर शामाटे मोह राखवो जोइए?" इत्यादि विचारीने ते पुत्रने तेणे गच्छ बहार कर्यो. अनुक्रमे ते मृत्यु पामीने पाडो थयो अने तेनो पिता स्वर्गलोकमां देवता थयो.

ते देवताए अवधिज्ञानवडे पुत्रने पाडो थयेलो जाणीने सार्थवाहनुं रूप धारण कर्युं, अने तेज पाडाने पाणी लाववा माटे खरीद कर्यो. पछी तेना पृष्ठपर घणुं पाणी भरीने पखाल मूकी उंची नीची पृथ्वीवाळा रस्ते तेने हांकवा लाग्यो अने उपरथी कोरडाना प्रहार करवा लाग्यो, तेथी ते पाडो मोटेथी बराडा पाडवा लाग्यो, एटले तेणे कह्युं के "अरे! केम बराडा मारे छे? पूर्व जन्ममां करेला कर्मनुं आ फळ छे." एम कहीने ते देवता "हे पिता! हुं आम करवा शक्तिमान नथी, तेम करवा शक्तिमान नथी" विगेरे पूर्व जन्ममां कहेलां वचनो वारंवार संभळाववा लाग्यो, तेथी पाडाने जातिस्मरण थयुं. पूर्वजन्म स्मरण करीने ते वारंवार नेत्रमांथी अश्रुपात करतो विचारवा लाग्यो के "पूर्व भवे पिताना कहेवा मुजब में चारित्र पाळ्युं नहीं, तेथी हुं मरीने पाडो थयो." पछी देवताए कह्युं के "हुं तारो पूर्व भवनो पिता छुं, अने तने पूर्वभवनुं स्मरण कराववा आव्यो छुं. हजु पण जो तारे शुभ गतिनी इच्छा होय तो अनशन ग्रहण कर." ते सांभळीने ते पाडाए अनशन ग्रहण कर्युं, अने त्यांथी मरीने वैमानिक देवता थयो, माटे

शुद्ध रीते व्रत पाळवुं; अने क्षुल्लक मुनिनी जेम बीजा बीजा दर्शनोना आचारनी आकांक्षा करवी नहीं. केमके जे आचार श्री जिनेश्वरे प्ररूपेल छे तेज सत्य छे, एम जाणवुं. आ संबंधमां बीजी पण एक कथा कहे छे—

अश्वमित्र मुनिनी कथा.

मिथिला नगरीमां लक्ष्मी देवीना चैत्यवाळा उद्याननने विषे श्री महागिरि नामना सूरि समवसर्या. तेने कौडिन्य नामे शिष्य हता, अने ते कौडिन्यने अश्वमित्र नामे शिष्य हतो. ते दशमुं पूर्व जाणता हता. तेमां नैपुणिक वस्तु जाणतां एवो अर्थ आव्यो के "वर्त्तमान समयना सर्व नारकी जीवो बीजे समये नाश पामे छे. एज प्रमाणे वैमानिकना जीवो माटे पण जाणवुं, अने एज प्रमाणे बीजा समय विगेरेना नारकी विगेरे जीवो माटे पण जाणवुं." आवुं सांभळीने ते अश्वमित्रने शंका थइ के "उत्पत्ति थया पछी तरतज सर्व वस्तु सर्वथा नाश पामे छे." आ प्रमाणेनो बोध थवाथी ते बीजाओने पण भमाववा लाग्यो अने कहेवा लाग्यो के "सर्वथा सर्व वस्तु इंद्रधनुष्, वीजळी अने मेघनी जेम प्रतिक्षणे उत्पन्न थाय छे अने नाश पामे छे." तेने गुरुए कह्युं के "दरेक वस्तु प्रतिक्षणे नाश पामे छे, एवुं मात्र बौद्धमतवाळाज माने छे, अने तेवो ऋजुसूत्र नामना चोथा नयनोज मत छे, सर्व नयनो एवो मत नथी. अहीं तो मात्र अपर अपर (जूदा जूदा) पर्यायनी उत्पत्ति तथा नाश थाय छे, एवी अपेक्षाए कोइ पण प्रकारे वस्तुनो प्रतिक्षणे नाश कहेलो छे. जे समये नारकी विगेरे वस्तु प्रथम समयना नारकीपणे क्षय पामे छे, तेज समये बीजा क्षणना नारकीपणे ते उत्पन्न थाय छे; पण जीवद्रव्यपणे तो स्थायीज छे. माटे मात्र काळनाज पर्यायथी क्षय थयो छे. तेथी सर्वथा वस्तुनो क्षय मानवो, ए केम घटे? केमके दरेक वस्तुना पर्यायो अनंता छे, तेमांथी मात्र एक पर्यायनो नाश थवाथी सर्वथा वस्तुनोज नाश मानवो, ए तो केवळ विरुद्धज छे. वळी हे शिष्य! कदाच तुं सूत्रना आलावाथी भ्रांति पाम्यो हो तो सूत्रनुंज वचन हुं तने कहुं छुं ते सांभळ—

नेरइयाणं भंते किं सासया असासया? । गोयमा!
सिय सासया सिय असासया । सेकेणट्ठेणं । गोयमा!
दव्वट्ठयाए सासया भावट्ठयाए असासयात्ति ।

अर्थ—' हे ભगवान ! नारकी जीवो शाश्वता छे के अशाश्वता छे ? ' त्यारे ભगवान कहे छे के ' हे गौतम ! कोइ प्रकारे शाश्वता छे अने कोइ प्रकारे अशाश्वता छे.' फरी गौतम स्वामीए पूछ्युं के ' ते शी रीते ? ' ભगवाने कह्युं के ' हे गौतम ! द्रव्य नयने आधारे शाश्वता छे, अने ભाव नयनी अपेक्षाए अशाश्वता छे.' इत्यादि. हे शिष्य ! आ सूत्रमां पण नारकादिनो सर्वथा नाश कहेलो नथी. पण प्रथम समयना नारकीपणे नाश पामे छे, सर्वथा द्रव्यपणे नाश पामता नथी ; केमके द्रव्यपणे तो शाश्वता छे. जो कदाच सर्वथा नाश मानीये, तो प्रथम समयोत्पन्न नारकीनो सर्वथा नाश थवाथी द्वितीय समयोत्पन्न नारकी ए विशेषणज शी रीते घटशे ? अथवा तो हे शिष्य ! अमे तनेज पूछीए छीये के ' सर्व वस्तु क्षणिक छे ' एम तें शाथी जाण्युं ? जो ' श्रुतथी जाण्युं ' एम कहेतो हो तो सूत्रथी थता अर्थनुं ज्ञान तो असंख्य समयवडे उत्पन्न थयेला सूत्रार्थ ग्रहण करवाना परिणामथीज थाय छे. जो प्रतिक्षणे नाश मानीश तो ए शी रीते घटशे ? आनुं तात्पर्य एवुं छे के चित्तनी स्थिति असंख्य समय सुधी रहे छे, पण सर्व क्षणिक नथी. केमके सूत्रमां जे पदो (शब्दो) रहेला छे ते सावयव छे, अने ते पदना दरेक अक्षरनो उच्चार असंख्याता असंख्याता समये करी शकाय छे तेथी ते पदोनुं ज्ञान पण असंख्याता समये थाय छे. ते सर्व क्षणवादी पक्षमां घटेज नहीं. वळी हे शिष्य ! क्षणिकवादीना पक्षमां बीजा पण घणा दोषो आवे छे ते सांભळ. कोइ एक माणस ભोजन करवा बेठो, पण ते क्षणिक होवाथी दरेक कवळनो खानार जूदो जूदो माणस थशे, अने ભोजनने अंते खानारो पण क्षणिक होवाथी रह्यो नथी. तेथी छेल्लो कवळ खानार कोइ जूदोज छे माटे तेने मात्र एकज कवळथी शी रीते तृप्ति थशे ? वळी ભोजन करी रह्या पछी ભोजन करनारनोज अભाव छे, माटे ભोजननी तृप्ति कोने थइ ? एज प्रमाणे मार्गे गति करनार माणस पण क्षणे क्षणे नवो नवो थवाथी तेने कोइ पण वखत श्रम लागशे नहीं. विगेरे दोषो स्वबुद्धिथी जाणी लेवा. आवा दोषो आववाथी समग्र लोकव्यवहारनो उच्छेद थशे. कह्युं छे के—

> भुक्तिप्रारंभकोऽन्यः स्यात्तृप्तिरन्यस्य जायते ।
> अन्यो गच्छति पंथानमन्यस्य ભवति श्रमम् ॥ १ ॥
> पश्यत्यन्यो घटाद्यर्थाञ्ज्ञानमन्यस्य जायते ।
> अन्यः प्रारभते कार्यं, कर्ता चान्यो ભवेज्जनः ॥ २ ॥

अन्यः करोति दुष्कर्म, नरके याति चापरः ।

चारित्रं पालयत्यन्यो, मुक्तिमन्योऽधिगच्छति ॥ ३ ॥

भावार्थ—" भोजनक्रियानो आरंभ अन्य करे छे अने तृप्ति बीजा माणसने थाय छे. मार्गे कोइ माणस चाले छे, अने तेनो श्रम कोइ बीजाने लागे छे. (१) घटादिक पदार्थोने जोनार कोइ माणस छे अने ते पदार्थनुं ज्ञान बीजाने थाय छे. एक माणस कार्यनो आरंभ करे छे, अने ते कार्यनो कर्ता बीजो माणस थाय छे. (२) कोइ माणस दुष्कर्म करे छे अने तेना फळरूप नरकमां बीजो माणस जाय छे, अने कोइ माणस चारित्र पाळेछे ने तेना फळरूप मोक्ष प्रत्ये बीजो माणस जाय छे. (३)"

वळी दरेक वस्तु सर्वथा क्षणिक होय तो पदार्थना मूळ स्वरूप विना ते पदार्थ देखायज केम ? कदी 'वासनानी परंपराए करीने वस्तु देखाय छे' एम कहीए तो ते वासनासंतान पण क्षणिक वादमांज डुबी जाय छे. 'विनाश थया छतां पण अनेक क्षण सुधी वासना रहे छे' एम कहीए तो तो ए तारा मतमांज मोटी हानि आवशे, माटे हे शिष्य ! हृदयमां मिथ्यात्वने केम वधारे छे ? केमके कोइ पण वस्तु एकांते करीने पर्यायमय पण नथी, अने एकांते करीने द्रव्यरूप पण नथी. पण उत्पाद, व्यय अने ध्रौव्यरूप होवाथी अनेक पर्यायवाळी छे. भुवन, विमान, द्वीप, समुद्र विगेरे सर्व वस्तु नित्यानित्यपणाथी विचित्र परिणामी अने अनेक स्वरूपी छे एम श्रीजिनेश्वरे कहेलुं छे. वळी सूत्रमां भगवंते कोइ ठेकाणे व्यवहारनयने उद्देशीने वाक्य कहेलुं होय छे, कोइ ठेकाणे निश्चयनयने उद्देशीने कहेलुं होय छे, अने कोइ ठेकाणे बन्ने नयने उद्देशीने कहेलुं होय छे. ते सर्व यथार्थ बुद्धिथी स्वीकारवुं; पण जिनेश्वरना वचनमां पोताना मतनी कल्पना करवी नहीं. माटे एकला पर्याय नयनेज अंगीकार करीए तो—" सुख, दुःख, बंध, मोक्ष विगेरे कांइ पण घटे नहीं. (आ पक्ष वाक्य कहेवाय छे). उत्पत्ति थया पछी तरतज तेनो सर्वथा नाश थाय छे माटे (आ हेतु छे). मरेलानी जेम (आ दृष्टांत छे), तेमज केवळ द्रव्यार्थिक नयनो आश्रय करीए तोपण सुखदुःखादि घटे नहीं. केमके ते मतमां सर्व वस्तु एकांतपणे नित्य होवाथी सर्व वस्तु आकाशनी जेम अविचळ थशे, तेथी तेनी विचित्रता घटशे नहीं. माटे बन्ने पक्ष मानवाथीज सर्व घटी शके छे, अने एकांतवादीनो पक्ष तो लाखो दोषथी भरपूर होवाथी त्याग करवा लायकज छे."

व्याख्यान २७० मुं.

निर्विचिकित्सा नामे त्रीजो दर्शनाचार वर्णवे छे.

विचिकित्सा ससंदेहा, धर्मक्रियाफलं प्रति ।
तद्दोषः सर्वथा त्याज्यो, दर्शनाचारचारिभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" धर्मक्रियाना फळमां संदेह तेनुं नाम विचिकित्सा. ए मोटो दोष छे, माटे ते दोषने दर्शनाचारने आचरण करनारा माणसोए सर्वथा तजवो. " ते उपर दृष्टांत कहे छे—

भोगसारनुं दृष्टांत.

कांपिल्यपुरमां भोगसार नामे बार व्रतने धारण करनारो श्रावक रहेतो हतो. तेणे श्री शांतिनाथ स्वामीनो प्रासाद कराव्यो हतो. त्यां हमेशां निराशी भावथी ते भगवाननी त्रण काळ भक्तिपूर्वक पूजा करतो हतो. एकदा तेनी स्त्री आयुष्य पूर्ण थये मृत्यु पामी. त्यारे " ते स्त्री विना घरनो निर्वाह चालशे नहीं " एम मानी ते बीजी स्त्री परण्यो. ते स्त्री स्वभावे अति चपळ हती, तेथी गुप्त रीते धन एकठुं करीने जुदी गांठ करवा लागी, अने पोतानी इच्छा प्रमाणे खावा पीवा लागी. अनुक्रमे श्रेष्ठीनुं सर्व धन नाश पाम्युं, तेथी ते बीजा गाममां रहेवा गयो. पण बन्ने प्रकारनी[1] जिनपूजा ते कदी चूकतो नहीं. तेमां पण भाव पूजा तो हमेशां त्रिकाळ करतो. एकदा तेनी स्त्रीए तथा बीजा लोकोए तेने कह्युं के " हे श्रेष्ठी ! निग्रह के अनुग्रहना फळने नहीं आपनारा एवा वीतराग देवने तमे शा माटे भजो छो ? तेनी भक्ति करवाथी तो उलटुं तमने प्रत्यक्ष दारिद्र्य प्राप्त थयुं. माटे हनुमान, गणपति, चंडिका, क्षेत्रपाळ विगेरे प्रत्यक्ष देवोनी सेवा करो, के जेथी तेओ प्रसन्न थइने तत्काळ इच्छित तो पूर्ण करे. "

आ प्रमाणे सांभळीने श्रेष्ठीए विचार कर्यो के " अहो ! आ लोको परमार्थना अजाण छे, अने मोह रूपी मदिरानुं पान करेलुं होवाथी गमे तेम बोले छे. पूर्व जन्ममां न्यून पुण्य करीने आ जन्ममां संपूर्ण पुण्यनुं फळ भोगववानी स्पृहा करे छे,

१ द्रव्य भाव.

हुं पण तमारी साथे लणवानुं काम करीश." एम कहीने देवीशक्तिथी तेणे वधुं खेतर लणीने टुंका वखतमां एकत्र कर्युं. पछी मामाए कह्युं के "आ बधा चोळा शी रीते घेर लइ जइशुं ?" ते सांभळीने ते देवता सर्वे चोळा उपाडीने घर तरफ चाल्यो. तेमने आवता जोइने पेली स्त्रीए पोताना घरमां आवेला जारने गमाणमां संताडी दीधो, अने लापसी विगेरे मिष्टान्न एक कोठीमां संताडी दीधां. एटलामां भाणेजे आवीने मामीने जुहार करीने कह्युं के "मामा आव्या छे, तेनी आगतास्वागता करो." एम बोलता बोलता तेणे चोळानो भारो जोरथी गमाणमां नांख्यो, अने दाणा काढवा माटे चोळाने कुटवा लाग्यो. तेना प्रहारथी पेलो जार पुरुष जर्जरित थइ गयो, अने पोते हमणांज मृत्यु पामशे एम मानवा लाग्यो. पछी भोगवतीए पोताना जारने मृतप्राय थइ गयेलो जाणीने भाणेजने कह्युं के "तमे बन्ने थाकी गया हशो, माटे प्रथम भोजन करी ल्यो." ते सांभळीने मामो भाणेज जमवा बेठा. एटले मामी चोळा विगेरे कुत्सित अन्न पीरसवा लागी, त्यारे भाणेज बोल्यो के "आवुं खराब अन्न हुं नहीं खाउं." मामी बोली के "सारुं खावानुं क्यांथी आपुं ?" भाणेज बोल्यो के "हे मामी ! हुं अहीं बेठो बेठो पेली कोठीमां लापसी प्रत्यक्ष जोउं छुं, ते तमे केम पीरसता नथी ? स्वामीथी अधिक कोइ नथी एम निश्चे जाणवुं." ते सांभळीने मामी तो चकितज थइ गइ. पछी लापसी पीरसीने तेणे विचार्युं के "अहो ! आ तो मोटुं

ते सर्व मिथ्यात्वनी मूढतानुं चेष्टित बे. अहीं हनुमान, गणेश विगेरे देवो शुं न्याल करी दे बे ? 'जेवुं वावीए तेवुंज लणाय बे.' तेमां कोइनो दोष नथी. परंतु संसारनां दुःखनुं विस्मरण करवा माटे परमात्मानुं स्मरण अहर्निश करवुं जोइए. केमके वीतरागना गुणो संन्नार्या विना संसारनो मोह केम नाश पामे ? मिथ्यात्वमां मग्न थयेला मूढ पुरुषोने धिक्कार बे, के जेओ सांसारिक इच्छा पूर्ण करवा माटे प्रथम अथवा पूर्ण थया पबी परमात्मानी स्तुतिनां वाक्योवमे स्तुति करे छे के 'अहो! आ नगवान सत्य छे. तेणे मारुं कार्य तरत पार पाम्युं. मारां पुत्रपुत्रीना विवाहादिक संबंधो क्यांइथी पण लावीने मेळवी आप्या.' केटलाएक एम पण बोले बे के 'परमेश्वरे आ युद्धमां मने मोटो यश आप्यो.' इत्यादि पोतपोतानां सांसारिक कार्योमां मिथ्या प्रजुनो प्रयत्न माने बे." आम विचारीने श्रेष्ठीए पोताना मनमां जरा पण विचिकित्सा धारण करी नहीं. पबी श्रेष्ठीए धनना अन्नावने लीधे खेती करवा मांमी. तेनी स्त्री हमेशां पक्वान्न विगेरे खाय बे अने श्रेष्ठीने चोळा विगेरे कुत्सित अन्न आपे छे. तेथी श्रेष्ठी तो मात्र नामथीज नोगसार रह्यो, पण तेनी स्त्री तो खरेखरी नोगवती थइ. अनुक्रमे ते कुलटा थइ, अने पर पुरुष साथे यथेच्छ नोग नोगववा लागी.

एकदा श्री शांतिनाथना अधिष्ठायक देवे विचार्युं के " हालमां अनेक लोकोना मनने आनंद आपनारी अने उदार एवी नगवाननी धूपादिक सुगंधी द्रव्य वमे पूजा केम थती नथी?" पछी अवधिज्ञानना उपयोगथी नोगसारनुं दरिद्रपणुं तेना कारणनूत जाणीने तेणे विचार्युं के " आ श्रेष्ठी जिनेश्वरनो पूर्ण नक्त छे, तेने आज चोळानुं खेतर लणवानो वखत आव्यो बे; अने तेनी स्त्री कुलटा थइ छे, तेथी श्रेष्ठी उपर जरा पण नक्तिनाव राखती नथी, माटे मारे आ श्रेष्ठीनुं सांनिध्य करवुं जोइए." एम विचारीने ते देवताए श्रेष्ठीना नाणेजनुं रूप लीधुं, अने मामाने घेर जइने मामीने प्रणाम कर्यो अने पूब्युं के " मारा मामा क्यां गया बे?" मामी बोली के " तारा मामा खेतर गया बे, त्यां खेतर खेमता हशे." ते सांनळीने ते खेतरे गयो, त्यां मामाने प्रणाम करीने बेठो, त्यारे मामाए पूब्युं के " तुं शामाटे आव्यो बे ?" नाणेज रूपे देवता बोल्यो के " तमने सहाय करवा माटे आव्यो बुं." मामाए कह्युं के " घेर जइने खाइ ले." नाणेज बोल्यो के "आपणे साथेज जमशुं." मामाए कह्युं के " आजे खेतरमां लणवानुं काम चाले बे, तेथी घणुं मोमुं थशे, त्यां सुधी तुं बाळक बे माटे क्षुधा शी रीते सहन करी शकीश ?" नाणेज बोल्यो के " कांइ हरकत नहीं

हुं पण तमारी साथे लणवानुं काम करीश." एम कहीने दैवीशक्तिथी तेणे बधुं खेतर लणीने टुंका वखतमां एकत्र कर्युं. पछी मामाए कह्युं के "आ बधा चोळा शी रीते घेर लइ जइशुं ?" ते सांभळीने ते देवता सर्वे चोळा उपाडीने घर तरफ चाल्यो. तेमने आवता जोइने पेली स्त्रीए पोताना घरमां आवेला जारने गमाणमां संताडी दीधो, अने लापसी विगेरे मिष्टान्न एक कोठीमां संताडी दीधां. एटलामां भाणेजे आवीने मामीने जुहार करीने कह्युं के "मामा आव्या छे, तेनी आगतास्वागता करो." एम बोलता बोलता तेणे चोळानो भारो जोरथी गमाणमां नांख्यो, अने दाणा काढवा माटे चोळाने कुटवा लाग्यो. तेना प्रहारथी पेलो जार पुरुष जर्जरित थइ गयो, अने पोते हमणांज मृत्यु पामशे एम मानवा लाग्यो. पछी भोगवतीए पोताना जारने मृतप्राय थइ गयेलो जाणीने भाणेजने कह्युं के "तमे बन्ने थाकी गया हशो, माटे प्रथम भोजन करी ल्यो." ते सांभळीने मामो भाणेज जमवा बेठा. एटले मामी चोळा विगेरे कुत्सित अन्न पीरसवा लागी, त्यारे भाणेज बोल्यो के "आवुं खराब अन्न हुं नहीं खाउं." मामी बोली के "सारुं खावानुं क्यांथी आपुं ?" भाणेज बोल्यो के "हे मामी ! हुं अहीं बेठो बेठो पेली कोठीमां लापसी प्रत्यक्ष जोउं छुं, ते तमे केम पीरसता नथी ? स्वामीथी अधिक कोइ नथी एम निश्चे जाणवुं." ते सांभळीने मामी तो चकितज थइ गइ. पछी लापसी पीरसीने तेणे विचार्युं के "अहो ! आ तो मोटुं आश्चर्य ! मारुं गुह्य आणे शी रीते जाण्युं ? खरेखर आनामां कोइ भूत, प्रेत, व्यंतर के शाकिनीपणुं होवुं जोइए, नहीं तो ए गुप्त राखेलुं शी रीते जाणी शके ?" पछी ते बन्ने जमीने सुइ गया. ते वखते लाग जोइने पेलो जार पुरुष नीकळी गयो. ते सर्वे देवता तो जाणे छे; तोपण तेणे मौनज राख्युं. पछी भाणेजे मामाने पूछ्युं के "आ तमारा शामलना लग्न केम करता नथी ?" त्यारे मामाए कह्युं के "हे भाणेज ! ए मनोरथ धन विना शी रीते पूर्ण थाय ?" भाणेज बोल्यो के "हे मामा ! उठो. हुं तमने पृथ्वीमां दाटेलुं धन बतावुं." एम कहीने ते स्त्रीना देखतां तेणे पृथ्वीमां दाटेलुं धन काढी आप्युं. ते जोइने ते स्त्री विलखी थइ गइ अने मनमां बोली के "में चोरी करीने जेटलुं धन गुप्त राख्युं हतुं ते सर्व आणे प्रगट कर्युं. माटे आ खरेखर कोइ शाकीनीज छे, नणंदनो दीकरो नथी. ए वळी अहीं क्यांथी आव्यो ? तोपण हवे तो एनो अनुनय सारी रीते करुं, नहीं तो ए कोप्यो सतो मारी बधी गुप्त वात प्रगट करशे." एम विचारीने ते अंदरथी कालुष्य भाव रा-

खीने वहारथी मीठी वाणीए बोली के " हे भाणेज! तमारी बुद्धिने धन्य छे. अमारुं दरिद्रपणुं तमे नाश पमाड्युं. " पछी शुभ दिवसे श्रेष्ठीए पुत्रना विवाहनो उत्सव आरंभ्यो, ते वखते पोताना इष्ट जारपतिने ते स्त्रीए निमंत्रण कर्युं अने कह्युं के "तारे स्त्रीवेष धारण करीने बधी स्त्रीओ साथे जमवा आववुं. " तेथी लग्नने दिवसे भोजन वखते ते जार स्त्रीनो वेष लइने जमवा आव्यो. तेने स्त्रीओना मध्यमां बेठेलो जोइने भाणेज बोल्यो के " मामा! आजे तो हुं पीरसवा माटे रहीश. " मामाए कह्युं के " बहु सारुं." एटले ते पीरसवा लाग्यो. पीरसतां पीरसतां ज्यारे ते पेला जार पासे गयो, त्यारे तेणे धीमेथी कह्युं के " तुं गमाणमां जर्जरित थयो हतो तेज के ? " त्यारे तेणे 'ना' कही. ए प्रमाणे बे त्रण वार कह्युं, त्यारे बीजाओए भाणेजने पूछ्युं के " तुं वारंवार ए मुग्ध बाळाने शुं पूछे छे ? " त्यारे भाणेज बोल्यो के " आ स्त्रीने हुं पीरसवा जाउं छुं त्यारे ते कांइ पण लेती नथी, अने सर्व पक्वान्ननो निषेध करे छे. " त्यारे हुं तेने कहुं छुं के " हे स्त्री! ज्यारे तुं जरा पण जमती नथी, त्यारे स्त्रीओनी मध्ये बेसवुं तारे योग्य नथी. तुं थोडी भूखी जणायछे." आ प्रमाणे बोलीने ते देवताए तेने कांइ पण पीरस्युं नहीं, त्यारे भोगवतीने तेना विषे घणो उचाट थयो. पछी कांइ मिष करीने भोगवती उठी, अने गुप्त रीते लाडवा लइने तेना भाणामां पीरसी दीधा. तेमांथी ते जारे थोडा खाधा, अने चार मोदक पोतानी कुक्षिमां संताड्या. पछी सर्व स्त्रीओ जमी उठी, त्यारे भाणेज बोल्यो के " दरेक स्त्रीए मारा मामाना मांडवाने अक्षतथी वधाववो." ते सांभळीने ज्यारे बधी स्त्रीओए मांगलिक माटे ते मांडवो वधाव्यो त्यारे ते जार स्त्री मांडवो वधाववा आवी नहीं. तेथी भाणेज बोल्यो के " हे माता! तमे केम वधावता नथी ? स्त्रीओनी पंक्तिमां जमवा बेठा अने हवे पंक्तिथी जूदा पडवुं योग्य नथी." ते सांभळीने ते पण मंडप वधाववा लागी, एटले तेनी कुक्षिमांथी संताडेला मोदक नीचे सरी पड्या. तेथी ते शरमाइने एकदम जतो रह्यो. पछी मामाए भाणेजने पूछ्युं के " आ मोदक क्यांथी आव्या ? " ते बोल्यो के " तमारा पुत्रविवाहना उत्सवमां मांडवाए मोदकनी वृष्टि करी." मामो बोल्यो के " हे भाणेज! तुं आवो ज्ञानी क्यांथी थयो ? " ते बोल्यो के " सर्व वात एकांते कहीश. " पछी विवाहनुं काम सर्व पूर्ण थयुं, त्यारे तेणे पोतानुं देवस्वरूप प्रगट करीने श्रेष्ठीने सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी श्रेष्ठीनी स्त्रीने देवताए कह्युं के " हे स्त्री! तारो पति केवो परमात्मानी भक्तिमां तत्पर छे ? तेवी तुं पण था. तुं जारपति साथे हमेशां क्रीडा करे छे, ते [illegible]

हुं सर्व जाणुं छुं. परंतु त्रण भुवनना अद्वितीय शरणरूप श्री वीतरागना भक्तनी तुं भार्या छे तेथी आज सुधी में तारी उपेक्षा करी छे. माटे हवेथी तुं समग्र दंभ छो-डीने धर्मकार्यमां प्रवृत्ति कर. मनुष्यो पूर्वे अनंतीवार भोग भोगव्या छतां पण अ-ज्ञान तथा भ्रमने लीधे धारे छे के " में हजु कोइ पण वखत भोग भोगव्याज नथी. " एम होवाथी मूर्ख माणसोनी कामभोग संबंधी तृष्णा कोइ पण वखते शांत थती न-थी. तेओने वैराग्य थवो ते पण अति दुर्लभज छे. श्री अध्यात्मसारमां कह्युं छे के—

सौम्यत्वमिव सिंहानां, पन्नगानामिव क्षमा ।
विषयेषु प्रवृत्तानां, वैराग्यं खलु दुर्लभम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम सिंहोने सौम्यपणुं दुर्लभ छे अने सर्पोने क्षमा दुर्लभ छे, तेम विषयमां प्रवृत्त थयेला जीवोने वैराग्य दुर्लभ छे. "

तेथी हे स्त्री ! आत्माने विषे वैराग्य धारण करीने अनेक भवमां उपार्जन करेला पापकर्मनो क्षय करवा माटे अने अनादि काळनी भ्रांतिना नाशने माटे सर्वथा द्रव्य अने भावथी दंभनो त्याग करीने अनेक उत्तम अने शुभ कार्योने विषे उद्यम कर. दंभ ए सर्व पापनुं मूळ छे, तथा अनेक सद्गुणोनो नाश करनार छे. कह्युं छे के—

सुत्यजं रसलांपट्यं, सुत्यजं देहभूषणम् ।
सुत्यजाः कामभोगाश्च, दुस्त्यजं दंभसेवनम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जिह्वाना रसनी लोलुपता तजी शकाय छे, शरीरपरनां अलंकार-नो मोह तजी शकाय छे, तेमज काम भोग पण तजी शकाय छे, परंतु दंभनुं सेवन तजवुं ए घणुंज मुश्केल छे. "

किं व्रतेन तपोभिर्वा, दंभश्चेन्न निराकृतः ।
किमादर्शेन किं दीपैर्यद्यांध्यं न दृशोर्गतम् ॥ २ ॥

भावार्थ—" जो दंभनो त्याग कर्यो नहीं तो व्रत अने तप करवाथी शुं ? केमके जो नेत्रनी अंधता गइ नथी तो आदर्श अने दीपनुं शुं प्रयोजन छे ? कांइज नथी. "

अहो मोहस्य माहात्म्यं, दीक्षां भागवतीमपि ।
दंभेन यद्विलुंपति, कज्जलेनैव रूपकम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—"अहो मोहनुं माहात्म्य केवुं छे ! के जेथी दंभवडे करीने काजळ वडे शरीरना रूपनी जेम भगवान संबंधी दीक्षानो पण प्राणी लोप करे छे."

अध्यात्मरतचित्तानां, दंभः स्वल्पोऽपि नोचितः ।
छिद्रलेशोऽपि पोतस्य, सिंधूल्लंघयतामिव ॥ ४ ॥

भावार्थ—"जेम समुद्रने ओळंगनारा पुरुषोने नावमां एक लेश मात्र पण छिद्र होय तो ते बुडवानुं कारण छे, तेम जेनुं चित्त अध्यात्मध्यानमां आसक्त छे तेओने थोडो पण दंभ राखवो उचित नथी, केमके ते संसारमां बुडाडनार छे."

दंभलेशोऽपि मल्ल्यादेः, स्त्रीत्वानर्थनिबंधनम् ।
अतस्तत्परिहाराय, यतितव्यं महात्मना ॥ ५ ॥

भावार्थ—"मल्लीनाथ स्वामी विगेरेने लेशमात्र दंभ पण स्त्रीपणा रूप अनर्थनुं कारण थयो हतो, तेथी ते दंभ तजवा माटे महात्मा पुरुषे अवश्य यत्न करवो."

इत्यादि उपदेश सांभळीने ते स्त्री प्रतिबोध पामी, अने तेणे श्रावकनां व्रत अंगीकार कर्यां. पछी देवता लक्ष सोनैया श्रेष्ठीने आपीने अंतर्धान थयो.

अनुक्रमे भोगसार श्रेष्ठी पोतानी पत्नी सहित श्रावकधर्म पाळीने स्वर्गे गया. त्यांथी अनुक्रमे थोडाज भव करीने ते श्रेष्ठी मुक्तिसुखने पामशे.

"भोगसार श्रेष्ठीनी जेम धर्मक्रियामां विचिकित्सानो त्याग करवो. तेवा जीवोने देवताओ पण सेवकनी जेम सांनिध्य करे छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ अष्टादशस्तंभस्य
सप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७० ॥

॥ समाप्तोऽयमष्टादशस्तंभः ॥
॥ श्रीरस्तु । शुभं भवतु ॥

श्री उपदेश प्रासाद.

स्तंभ १९ मो.

व्याख्यान २७१ मुं.

अमूढदृष्टि नामना चोथा दर्शनाचार विषे.

मिथ्यादृशां तपःपूजाविद्यामंत्रप्रभावनाम् ।

दृष्ट्वा मुह्यति यो नैव, सोऽमूढदृष्टिः संमतः ॥ १ ॥

भावार्थ—" मिथ्यादृष्टिओनां तप, पूजा, विद्या अने मंत्रादिकनो प्रभाव जोइने जे माणस तेमां मोह पामतो नथी ते अमूढदृष्टि कहेवाय छे. " आ गाथानो भावार्थ लेपश्रेष्ठीना दृष्टांतथी जाणी लेवो.

लेपश्रेष्ठीनुं दृष्टांत.

राजगृह नगरमां लेप नामे एक श्रेष्ठी रहेतो हतो, ते मिथ्यात्व धर्ममां आसक्त हतो. तेनो गुरु शिवभूति नामे हतो. तेना उपदेशथी ते श्रेष्ठीए वाव, कूवा, तळाव या कुंड विगेरे कराव्यां हतां. त्यां ते हमेशां स्नान करतो, यज्ञादि करतो, वेदवाक्यना रहस्यनुं श्रवण करतो तथा मिथ्यात्वनां जे भाशी[१] आचरणो छे, ते सर्व धर्मबुद्धिथी करतो हतो. ज्यारे तेना गुरु बीजा देशथी आवता त्यारे ते मोटी ऋद्धिवडे चार पांच योजन सुधी तेनी सन्मुख जतो हतो.

एकदा राजगृह नगरना उपवनमां श्री महावीर स्वामी समवसर्या. ते वखते ते लेपश्रेष्ठी पोताना मित्र जिनदत्त श्रावकनी प्रेरणाथी भगवानने वांदवा तथा आश्चर्य जोवा गयो. श्री भगवाननुं सर्वत्र अस्खलित ज्ञान जाणीने लेपश्रेष्ठीए आ प्रमाणेना प्रश्नो कर्या के " हे भगवान ! मारा गुरु अध्यात्म स्वरूपनुं वर्णन करे छे ते सत्य छे के असत्य ?" प्रभुए कहुं के "हे श्रेष्ठी ! अध्यात्म नाम, स्थापना, द्रव्य अने भाव एम चार प्रकारे छे. तेमांना पहेला त्रण भेदो भाव अध्यात्मनां कारण रूप छे. जे पुरुषमां भाव अध्यात्म रहेलुं होय तेमनां संपूर्ण कार्य सिद्ध थाय छे. बीजा त्रण भेदवाळाना सिद्ध थतां नथी. कोइ माणस एम कहे के " हुं अध्यात्म जाणुं छुं अने

१ लौकिक देवगुरु मिथ्यात्वना ८३ भेद अर्थदीपिकामां कहेला छे.

तेनुं सुख अनुभवुं छुं " ते योग्य नथी. केमके ते शब्द अध्यात्मने विषे अध्यात्मनी भजना जाणवी. अध्यात्म ए कोइ घटपटादिकनी जेवो मूर्तिमान पदार्थ नथी, के जेनो आपवा लेवामां व्यवहार थइ शके. माटे तेवा शब्द अध्यात्मने विषे अध्यात्मनी भजना जाणवी; एटले अध्यात्म होय वा न होय, परंतु अर्थ अध्यात्मने विषे निर्विकल्प स्वरूप (सत्य अध्यात्म) रहेलुं छे, अने तेवा सत्य अध्यात्म विना बीजुं कोइ तेवुं आत्माने उपकारी नथी. अध्यात्म ज्ञानना स्वाद रूपी सुखसागरनी पासे इंद्रनुं तथा दोगुंदुकादि देवादिकनुं सुख एक बिंदु मात्र पण नथी. तर्कशास्त्र अने वैराग्यशास्त्र विगेरेनी युक्तिओने जाणनारा माणसो सत्य अध्यात्मना ज्ञान विना अनेक प्रकारनी शुष्क युक्तिओ करे छे; परंतु ते सर्व संसारनी वृद्धिने माटेज जाणवी. " ते सांभळीने लेपश्रेष्ठीए पूछ्युं के " हे भगवान ! आप जेनुं आवुं वर्णन करो छो ते अध्यात्म केवुं होयछे ?" भगवान बोल्या के "हे श्रेष्ठी ! मिथ्यात्वना अधिकारनो त्याग करीने आत्माने अवलंबी जे शुद्ध क्रियाधर्ममां प्रवर्तवुं, ते अध्यात्म कहेवाय छे. कह्युं छे के—

> अपूनर्बंधकाद्यावद्गुणस्थानं चतुर्दशम् ।
> क्रमशुद्धिमती तावत्, क्रियाध्यात्ममयी मता ॥ १ ॥

भावार्थ—" अपूनर्बंधक नामना चोथा गुणस्थानकथी आरंभीने चौदमा गुणस्थानक सुधी अनुक्रमे अनुक्रमे जे शुद्ध शुद्ध क्रिया थाय छे ते अध्यात्ममय क्रिया मानेली छे. "

अपूनर्बंधक नामनुं चोथुं गुणस्थानक प्राप्त थाय त्यारे संपूर्ण सत् योग प्रगट थाय छे; अने नवमा गुणस्थानकथी चौदमा गुणस्थान पर्यंत अनुक्रमे जे विशेष शुद्धिवाळी क्रियाओ निपजे छे ते अध्यात्म क्रिया जाणवी. परंतु भवाभिनंदी माणस आहार, उपधि, पूजा विगेरेना गौरवने माटे जे क्रिया करे छे ते क्रिया तो अध्यात्मवैरिणी एटले अध्यात्म गुणनो नाश करनारी जाणवी. तेथीज शांत, दांत अने मोक्षार्थी प्राणी यथार्थ प्ररुपणा करनार सद्गुरुनेज भजे छे. पूर्वाचार्योए चोथा गुणस्थानथी आरंभीने अग्यार गुणश्रेणीओ कही छे ते आ प्रमाणे—

> सम्म देस सव्वविरई, अणविसंजोअ दंसखवगेअ ॥
> मोहसम संत खवगे, खीण सजोगीअर गुणसेढी ॥८२॥

पंचम कर्मग्रंथ.

भावार्थ—" १ सम्यक्त्व प्रत्ययिकी, २ देशविरति प्रत्ययिकी, ३ सर्वविरति प्रत्ययिकी, ४ अण के० अनंतानुबंधी विसंयोजना संबंधी, ५ दर्शनमोहनी क्षपक, ६ चारित्र मोहनी क्षपक, ७ उपशांत मोहनीय, ८ क्षपक श्रेणी, ९ क्षीणमोह गुणश्रेणी, १० सयोगी केवळी गुणश्रेणी अने ११ अयोगी केवळी गुणश्रेणी एम अग्यार गुणश्रेणी जाणवी.

यथाक्रममसी प्रोक्ता, असंख्यगुणनिर्जराः ।
यतितव्यमतोऽध्यात्मवृद्ध्ये कलयापि हि ॥ १ ॥

भावार्थ—" क्रमे क्रमे आ गुणश्रेणीओ असंख्यगुणी निर्जरा करनारी कही छे, तेथी अध्यात्मनी वृद्धि करवा माटे थोडो थोडो पण यत्न करवो. "

सम्यक् ज्ञानसंयुक्त क्रिया पांचमा गुणस्थानकथी आरंभीनेज थाय छे. चोथे गुणस्थानके तो शुश्रूषा[१] विगेरे उचित क्रियाओ प्रवर्ते छे. ते शुश्रूषादिक क्रिया पण सुवर्णना अलंकारने अभावे रुपाना अलंकारनी जेवी शुभ जाणवी. " ते सांभळीने श्रेष्ठीए फरीथी वैराग्यनो अर्थ अने तेनुं स्वरूप पूछ्युं, त्यारे भगवान बोल्या के " संसारना कारणभूत विषयोमां नहीं लुब्ध थवाथी भवनी निर्गुणताने देखाडनार निराबाध वैराग्य उत्पन्न थाय छे.

अकृत्वा विषयत्यागं, यो वैराग्यं दिधीर्षति ।
अपथ्यमपरित्यज्य, स रोगोच्छेदमिच्छति ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे माणस विषयोनो त्याग कर्या विना वैराग्य धारण करवा इच्छे छे ते कुपथ्यनो त्याग कर्या विना रोगनी शांतिने इच्छे छे, एम जाणवुं. "

जेओ लज्जाथी अथवा बगवृत्तिथी[२] नीचुं जुए छे, पण दुर्ध्यानने तजतो नथी. ते धार्मिकाभासो[३] पोताना आत्माने नरकरूपी कूपमां नांखे छे, अने जेओ सम्यक् ज्ञानवाळा छे तेओ विषयोने जुए छे तोपण पोताना वैराग्यने तजता नथी. कह्युं छे के—

दारुयंत्रस्थपांचालीनृत्यतुल्याः प्रवृत्तयः ।
योगिनो नैव बाधायै, ज्ञानिनो लोकवर्तिनः ॥ १ ॥

---

१ धर्मश्रवणेच्छा. २ बगलानी जेवी प्रपंची वृत्तिथी.
३ मात्र धर्मनो दंभज राखनारा, धार्मिकना जेवा देखाता, पण वास्तविक धर्मी नहीं.

भावार्थ—"योगीओनी विषयो संबंधी प्रवृत्तिओ काष्ठयंत्रमां रहेली पांचालीना नृत्य समान छे, तेथी ते प्रवृत्तिओ ज्ञानीने लोकमां वर्ततां छतां बाध करी शकती नथी."

औदासीन्यफले ज्ञाने, परिपाकमुपेयुषि ।

चतुर्थेऽपि गुणस्थाने, तद्वैराग्यं व्यवस्थितम् ॥ २ ॥

भावार्थ—"उदासीनता रूपी जेनुं फळ छे एवुं ज्ञान ज्यारे परिपाक अवस्थाने पामे छे, त्यारे चोथा गुणस्थानकमां पण ते वैराग्य रहे छे."

वैराग्यना त्रण प्रकार छे. १ दुःखगर्भित, २ मोहगर्भित अने ३ ज्ञानगर्भित. तेमां जे पुत्र, मित्र, धन धान्यादि सुखने आपनार मानेली इष्ट वस्तु प्राप्त न थाय अथवा प्राप्त थइने नाश पामे, त्यारे मनमां दुःख उत्पन्न थवाथी संसारपर उद्वेग थवा रूप जे वैराग्य थाय ते दुःखगर्भित वैराग्य कहेवाय छे. जेने आ वैराग्य थयो होय तेने कदाचित् चिंतित वस्तु प्राप्त थाय छे, तो तरतज ते वैराग्यथकी भ्रष्ट पण थाय छे. तेवा वैराग्यवाळो माणस शुष्कतर्क, साहित्य, दोधक, गीत, रूपक विगेरे जे कांइ बोले छे, सांभळे छे के चिंतवे छे, ते सर्व पोताने इच्छित विषयनी अप्राप्तिथीज जाणवुं. वळी तेओ लोको पासे एवी भावना भावे छे के अहो ! आ संसारमां कोइ कोइनुं नथी. दैवे मारुं सर्व हरण कर्युं, नाश कर्युं, मृत्युए सर्वनो ग्रास कर्यो. माटे आ दुःखमय संसारने धिक्कार छे. ए प्रमाणे वारंवार बोले छे. पण ते सर्व चिंतित पदार्थनी अप्राप्तिथी ज बोले छे तेथी ते सर्व व्यर्थ छे. आ वैराग्य पारमार्थिक नथी. आवो वैराग्य तो अनेक जीवोने अनेक प्रकारे प्राप्त थाय छे. अहीं कोइ शंका करे के "आ दुःखगर्भित वैराग्यने व्यर्थ कह्यो, तो तेने वैराग्यनी गणनामांज शामाटे गण्यो ?" ते उपर भगवान उत्तर आपे छे के "बीज रूप आ वैराग्ये करीने पण कोइ वखत कोइ जीव पारमार्थिक वैराग्यने पण पामे छे, तेथी तेने वैराग्यमां गण्यो छे.

बीजो मोहगर्भित वैराग्य कह्यो छे, ते कुशास्त्रना अभ्यासथी उत्पन्न थयेला भवनैर्गुण्यना दर्शनथी बाळ तपस्विओने प्राप्त थाय छे. तामलितापस, पूरण, वल्कलचीरि अने प्रसन्नचंद्रना पिता सोमचंद्र विगेरेने आ वैराग्य थयो हतो. पृथ्वी विगेरे जीवोना स्वरूपनुं वस्तुतत्त्वथी विपर्ययपणे ग्रहण करवाथी तेओनो वैराग्य अज्ञान (मोह) गर्भित छे. जैनोमां पण जेओ विरुद्ध अर्थना बोलनारा छे, सिद्धांतनो अभ्यास करीने ते उपर जेओ आजीविका चलावे छे, अने अल्प शक्तिवाळा छतां पण

पोतानो अनाचार गुप्त राखवा माटे मोटी शक्तिथी क्रियानो देखाव करे छे तेओनो पण पारमार्थिक वैराग्य नथी. केमके—

अमीषां प्रशमोऽप्युच्चैर्दोषपोषाय केवलम् ।
अंतर्निलीनविषमज्वरानुभवसन्निभः ॥ १ ॥

भावार्थ—" शरीरनी अंदर रहेला विषम [जीर्ण] ज्वरना अनुभवनी जेम आमनो वैराग्य मात्र घणा दोषोनुं पोषण करनारज छे. "

त्रीजो ज्ञानगर्भित वैराग्य कह्यो छे, ते वैराग्य जे स्याद्वाद समजनारनी बुद्धि स्वपर आगममां यथास्थित प्रवर्तती होय तेने थाय छे. कोइ जीवने विरक्त छतां पण शास्त्रार्थना अल्प बोधथी कोइ एक पक्षमां तणाइ जइ एकांत नय मानवानो कदाग्रह थाय छे तेनो वैराग्य ज्ञानगर्भित जाणवो नहीं. कह्युं छे के—

उत्सर्गे चापवादेऽपि, व्यवहारेषु निश्चये ।
ज्ञाने कर्मणि वादं चेन्न तदा ज्ञानगर्भता ॥ १ ॥

भावार्थ—" जो उत्सर्गमां, अपवादमां, व्यवहारमां, निश्चयमां, ज्ञानमां अने कर्ममां (क्रियामां) वादविवाद होय, तो तेने ज्ञानगर्भपणुं जाणवुं नहीं. "

जेओ परना अपवादनी चेष्टा करवामां मूक, अंध अने बधिर जेवा छे, जेओ माध्यस्थ बुद्धिवाळा होइने सर्वत्र हितचिंतक छे, अने जेओ आज्ञारुचिवाळा छे तेओज ज्ञानगर्भित वैराग्यने अनुभवे छे. कह्युं छे के—

स्वभावान्नैव चलनं, चिदानंदमयात् सदा ।
वैराग्यस्य तृतीयस्य, स्मृतेयं लक्षणावलिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" सर्वदा चिदानंदमय स्वभावथी चलित न थवुं, ए त्रीजा वैराग्यनुं लक्षण कहेलुं छे. "

आ सर्व हकीकत सांभळीने लेपश्रेष्ठीए पूछ्युं के " हे भगवन् ! आपे प्रथम अध्यात्मनुं वर्णन कर्युं हतुं ते भाव अध्यात्म कया वैराग्यवाळाने होय ? " त्यारे प्रभुए कह्युं के हे श्रेष्ठी !

विषयेषु गुणेषु च द्विधा, भुवि वैराग्यमिदं प्रवर्तते ।
अपरं प्रथमं प्रकीर्तितं, परमध्यात्म बुधैर्द्वितीयकम् ॥१॥

भावार्थ—"योगीओनी विषयो संबंधी प्रवृत्तिओ काष्ठयंत्रमां रहेली पांचालीना नृत्य समान छे, तेथी ते प्रवृत्तिओ ज्ञानीने लोकमां वर्ततां छतां बाध करी शकती नथी."

औदासीन्यफले ज्ञाने, परिपाकमुपेयुषि ।

चतुर्थेऽपि गुणस्थाने, तद्वैराग्यं व्यवस्थितम् ॥ २ ॥

भावार्थ—"उदासीनता रूपी जेनुं फळ छे एवुं ज्ञान ज्यारे परिपाक अवस्थाने पामे छे, त्यारे चोथा गुणस्थानकमां पण ते वैराग्य रहे छे."

वैराग्यना त्रण प्रकार छे. १ दुःखगर्भित, २ मोहगर्भित अने ३ ज्ञानगर्भित. तेमां जे पुत्र, मित्र, धन धान्यादि सुखने आपनार मानेली इष्ट वस्तु प्राप्त न थाय अथवा प्राप्त थइने नाश पामे, त्यारे मनमां दुःख उत्पन्न थवाथी संसारपर उद्वेग थवा रूप जे वैराग्य थाय ते दुःखगर्भित वैराग्य कहेवाय छे. जेने आ वैराग्य थयो होय तेने कदाचित् चिंतित वस्तु प्राप्त थाय छे, तो तरतज ते वैराग्यथकी भ्रष्ट पण थाय छे. तेवा वैराग्यवाळो माणस शुष्कतर्क, साहित्य, दोधक, गीत, रूपक विगेरे जे कांइ बोले छे, सांभळे छे के चिंतवे छे, ते सर्व पोताने इच्छित विषयनी अप्राप्तिथीज जाणवुं. वळी तेओ लोको पासे एवी भावना भावे छे के अहो ! आ संसारमां कोइ कोइनुं नथी. दैवे मारुं सर्व हरण कर्युं, नाश कर्युं, मृत्युए सर्वनो ग्रास कर्यो. माटे आ दुःखमय संसारने धिक्कार छे. ए प्रमाणे वारंवार बोले छे. पण ते सर्व चिंतित पदार्थनी अप्राप्तिथी ज बोले छे तेथी ते सर्व व्यर्थ छे. आ वैराग्य पारमार्थिक नथी. आवो वैराग्य तो अनेक जीवोने अनेक प्रकारे प्राप्त थाय छे. अहीं कोइ शंका करे के "आ दुःखगर्भित वैराग्यने व्यर्थ कह्यो, तो तेने वैराग्यनी गणनामांज शामाटे गण्यो ?" ते उपर भगवान उत्तर आपे छे के "बीज रूप आ वैराग्ये करीने पण कोइ वखत कोइ जीव पारमार्थिक वैराग्यने पण पामे छे, तेथी तेने वैराग्यमां गण्यो छे.

बीजो मोहगर्भित वैराग्य कह्यो छे, ते कुशास्त्रना अभ्यासथी उत्पन्न थयेला भवनैर्गुण्यना दर्शनथी बाळ तपस्विओने प्राप्त थाय छे. तामलितापस, पूरण, वल्कलचीरि अने प्रसन्नचंद्रना पिता सोमचंद्र विगेरेने आ वैराग्य थयो हतो. पृथ्वी विगेरे जीवोना स्वरूपनुं वस्तुतत्त्वथी विपर्ययपणे ग्रहण करवाथी तेओनो वैराग्य अज्ञान (मोह) गर्भित छे. जैनोमां पण जेओ विरुद्ध अर्थना बोलनारा छे, सिद्धांतनो अभ्यास करीने ते उपर जेओ आजीविका चलावे छे, अने अल्प शक्तिवाळा छतां पण

पोतानो अनाचार गुप्त राखवा माटे मोटी शक्तिथी क्रियानो देखाव करे छे तेओनो पण पारमार्थिक वैराग्य नथी. केमके—

अमीषां प्रशमोऽप्युच्चैर्दोषपोषाय केवलम् ।
अंतर्निलीनविषमज्वरानुभवसन्निभः ॥ १ ॥

भावार्थ—" शरीरनी अंदर रहेला विषम [जीर्ण] ज्वरना अनुभवनी जेम आमनो वैराग्य मात्र घणा दोषोनुं पोषण करनारज छे. "

त्रीजो ज्ञानगर्भित वैराग्य कह्यो छे, ते वैराग्य जे स्याद्वाद समजनारनी बुद्धि स्वपर आगममां यथास्थित प्रवर्तती होय तेने थाय छे. कोइ जीवने विरक्त छतां पण शास्त्रार्थना अल्प बोधथी कोइ एक पक्षमां तणाइ जइ एकांत नय मानवानो कदाग्रह थाय छे तेनो वैराग्य ज्ञानगर्भित जाणवो नहीं. कह्युं छे के—

उत्सर्गे चापवादेऽपि, व्यवहारेषु निश्चये ।
ज्ञाने कर्मणि वादं चेन्न तदा ज्ञानगर्भता ॥ १ ॥

भावार्थ—" जो उत्सर्गमां, अपवादमां, व्यवहारमां, निश्चयमां, ज्ञानमां अने कर्ममां (क्रियामां) वादविवाद होय, तो तेने ज्ञानगर्भपणुं जाणवुं नहीं. "

जेओ परना अपवादनी चेष्टा करवामां मूक, अंध अने बधिर जेवा छे, जेओ माध्यस्थ बुद्धिवाळा होइने सर्वत्र हितचिंतक छे, अने जेओ आज्ञारुचिवाळा छे तेओज ज्ञानगर्भित वैराग्यने अनुभवे छे. कह्युं छे के—

स्वभावान्नैव चलनं, चिदानंदमयात् सदा ।
वैराग्यस्य तृतीयस्य, स्मृतेयं लक्षणावलिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" सर्वदा चिदानंदमय स्वभावथी चलित न थवुं, ए त्रीजा वैराग्यनुं लक्षण कहेलुं छे. "

आ सर्व हकीकत सांभळीने लेपश्रेष्ठीए पूछ्युं के " हे भगवन् ! आपे प्रथम अध्यात्मनुं वर्णन कर्युं हतुं ते भाव अध्यात्म कया वैराग्यवाळाने होय ? " त्यारे प्रभुए कह्युं के हे श्रेष्ठी !

विषयेषु गुणेषु च द्विधा, भुवि वैराग्यमिदं प्रवर्तते ।
अपरं प्रथमं प्रकीर्तितं, परमध्यात्म बुधैर्द्वितीयकम् ॥१॥

भावार्थ—" जगतने विषे विषयोमां अने गुणोमां एम बे प्रकारे आ वैराग्य प्रवर्ते छे, तेमां पहेला [विषयमां प्रवर्तेला वैराग्य] ने हलकुं अने बीजाने उत्कृष्ट अध्यात्म पंडितोए कह्युं छे. "

विवेचन—पहेलामां इच्छित वस्तुनी अप्राप्तिथी वैराग्य थाय छे, अने बीजामां गुण उत्पन्न थवाथी वैराग्य थाय छे; माटे पहेलाने मिथ्यात्वादिक पापना हेतु सहित होवाथी अनुत्कृष्ट कह्युं छे. आ अध्यात्ममां पूर्वे कहेला प्रथमना बे वैराग्य [दुःख अने मोहगर्भित] नो समावेश थाय छे अने बीजुं अध्यात्ममय छे के जे त्रीजा ज्ञानगर्भित वैराग्यथी उत्पन्न थाय छे, तेने उत्कृष्ट कहेलुं छे.

उत्कृष्ट वैराग्यवाळा योगिओ सर्वदा विषयोथी पराङ्मुख होय छे. कह्युं छे के—

न मुदे मृगनाभिमल्लिका, लवलीचंदनचंद्रसौरभम् ।
विदुषां निरुपाधिबाधित, स्मरशीलेन सुगंधिवर्ष्मणाम् ॥१॥

भावार्थ—" निरुपाधिक गुणवडे कंदर्पना आचारनो बाध करेलो होवाथी जेनुं शरीर सदाने माटे सुगंधी थयेलुं छे एवा विद्वानोने कस्तुरी, मालती, लवली अने श्वेतचंदन विगेरेना सुगंध हर्ष आपता नथी. अर्थात् कस्तुरी, मालतीपुष्प अने चंदनादिवडे चर्चित करेला शरीरनो सुगंध ज्ञानीओने हर्षने माटे थतो नथी.

वळी ज्ञानी पुरुषो सम्यक् उपयोगनो पण त्याग करता नथी. ते विषे कह्युं छे के—

उपयोगमुपैति यच्चिरं, हरते यन्न विभावमारुतः ।
न ततः खलु शीलसौरभादपरस्मिन्निह युज्यते रतिः ॥१॥

भावार्थ—" जे शीलरूपी सुगंध निरंतर उपयोगमां आवे छे अने जेने चिरकाळे पण विभाव रूपी वायु हरण करी शकतो नथी, ते शीलरूपी सुगंधने तजीने बीजाने विषे प्रीति राखवी योग्य नथी. "

मधुरैर्न रसैरधीरता, क्वचनाध्यात्मसुधालिहां सताम् ।
अरसैः कुसुमैरिवालिनां, प्रसरत्पद्मपरागभोजिनाम् ॥ २ ॥

भावार्थ—" जेम प्रसरता एवा पद्मना परागनो स्वाद लेनारा भ्रमरो रस विनानां पुष्पोथी अधीर थता नथी, तेम अध्यात्म रूपी अमृतनुं पान करनारा सत्पुरुषो पण बीजा मधुर रसोथी अधीर थता नथी, अर्थात् तेमनुं मन अस्थिर थतुं नथी. "

हृदि निर्वृतिमेव बिभ्रतां, न मुदे चंदनलेपनाविधिः ।
विमलत्वमुपेयुषां सदा, सलिलस्नानकलापि निष्फला ॥३॥

भावार्थ—" (मिथ्यात्व, अविरति अने कषाय विगेरे मळनो त्याग करीने) हृदयमां निवृत्तिनेज धारण करनारा पुरुषोने चंदनलेप हर्ष आपतो नथी. तेमज (वैराग्यथीज) निर्मळपणाने पामेला तेओने सदा जळस्नाननो विधि पण निष्फळज छे."

तदिमे विषयाः किलैहिका, न मुदे केऽपि विरक्तचेतसाम् ।
परलोकसुखेऽपि निःस्पृहाः, परमानंदरसालसा अमी ॥ ४ ॥

भावार्थ—" विरक्त चित्तवाळाने आ लोकना विषयो (विषयसुख) हर्षने माटे थता नथी. तेमज तेओ परमानंदना रसने पामेला होवाथी आळसु थया छे, तेथी परलोकना सुखमां पण तेओ स्पृहा राखता नथी."

विपुलर्द्धिपुलाकचारणप्रबलाशीविषमुख्यलब्धयः ।
न मदाय विरक्तचेतसां, मनुषं गोपनताः पलालवत् ॥५॥

भावार्थ—" विरक्त चित्तवाळाने विपुलमति ऋद्धि, पुलाक लब्धि, चारण लब्धि तेमज प्रबलाशीविष विगेरे लब्धिओ पण भाराती साथे प्राप्त थयेला पलायना घासनी जेम आनुषंगिक होवाथी मद करनार थती नथी."

हृदये न शिवेऽपि लुब्धता, सदनुष्ठानमसंगमंगति ।
पुरुषस्य दशेयमिष्यते, सहजानंदतरंगरंगिता ॥ ६ ॥

भावार्थ—" विरक्त पुरुषना हृदयमां मोक्ष मेळववानो पण लोभ होतो नथी. तेमज तेनुं शुभ क्रियानुं अनुष्ठान असंगपणाने पामे छे, अर्थात् असंगानुष्ठानना बळवडे ते क्रिया करे छे. तेवा पुरुषनी अवस्थाज सहजानंदना तरंगोथी रंगित इच्छेली छे."

आ प्रमाणे भगवान पासेथी तत्त्वस्वरूप सांभळीने लेपश्रेष्ठी बोध पाम्यो अने बोल्यो के " हे स्वामी ! आपे (श्री जिनेश्वरेज) प्रत्यक्ष कहेलुं आवुं आत्मतत्त्व छोडीने बीजा अनेक पंडितो अने तापसादिको जीवादिक तत्त्वोने जाण्या विना 'अमे धर्मक्रिया करीए छीए ' एम माने छे. ते सर्वे आकाशना बाचका भरवा जेवुं

छे." प्रभुए कह्युं के "हे श्रेष्ठी ! केटलाएक उत्तम जीवो पूर्व भवथी पुण्य लइने आवे छे अने आ भवमां पण पुण्य उपार्जन करे छे, तेओ भरतचक्री, बाहुबळी, अभयकुमार विगेरेनी जेम परलोकमां अविनाशी (मोक्ष) सुखने पामे छे. केटलाएक जीवो पूर्व भवथी पुण्य लइने आवे छे, पण आ भवमां पुण्य कर्या विनाज कौणिक विगेरेनी जेम खाली पाछा जाय छे. केटलाएक जीवो परलोकथी पुण्यरहित आवे छे, पण कालिक कसाइना पुत्र सुलसनी जेम अहीं पुण्य उपार्जन करीने जाय छे; तथा केटलाक जीवो पुण्यरहित आवे छे, अने दुर्भागी पुरुषनी जेम पुण्य उपार्जन कर्या विनाज पाछा जाय छे, तेओ तो आलोक अने परलोक बंनेमां अति दुःखी थाय छे."

इत्यादि धर्मोपदेश सांभळीने ते श्रेष्ठीए श्रावकधर्म अंगीकार कर्यो, अने मिथ्यात्वनी सर्व क्रियाओ छोडी दीधी. ते जोइने तेना प्रथमना साधर्मिक मित्रो कहेवा लाग्या के "आ श्रेष्ठी मूर्ख छे, केमके कुळक्रमथी आवेला धर्मने तजी दइने जैनधर्मनी क्रियाओ करे छे." ए प्रमाणे सांभळीने पण श्रेष्ठीए तेवा अनेक एकांतवादीओना मतने बीलकुल अंगीकार कर्यो नहीं. पोताने इष्ट एवा जैनधर्ममांज प्रवृत्त रह्यो. कह्युं छे के—

सर्वथा स्वहितमाचरणीयं, किं करिष्यति जनो बहुजल्पः ।
विद्यते स न हि कश्चिदुपायः, सर्वलोकपरितोषकरो यः ॥१॥

भावार्थ—"मनुष्ये सर्वथा आत्माने जे हितकर होय तेज कार्य करवुं. भिन्न भिन्न बोलनारा माणसो शुं करनार छे ? केमके एवो कोइ पण उपाय छेज नहीं के जे सर्व लोकने संतोषकारी थाय."

त्यार पछी एकदा शिवभूति तापस के जे ते श्रेष्ठीनो प्रथम गुरु हतो ते त्यां आव्यो. श्रेष्ठी तेनी पासे गयो नहीं, तेथी तापसे विचार्युं के "ते श्रेष्ठी मारुं आगमन सांभळीने तरतज पांच जोजन सामो आवतो अने अनेक प्रकारनी सेवा बजावतो. आ वखते तो कुशळ प्रश्न पण पूछवा आवतो नथी तेनुं शुं कारण ?" एम विचारीने पोताना बीजा भक्तोने पूछतां तेओना मुखथी तेने जगद्गुरु श्री वीरपरमात्माथी धर्म पामीने जैनधर्मी थयेलो जाणी पोताना एक शिष्यने तेने बोलाववा माटे मोकल्यो. ते शिष्य श्रेष्ठी पासे जइ गुरुए कहेलो आशीर्वाद आपीने बोल्यो के "अमारा गुरु तमने वारंवार याद करे छे." श्रेष्ठीए कह्युं के "जे पृथ्वी विगेरे छकाय अने छ द्रव्यथी

व्याप्त थयेला लोकना स्वरूपने कहे तथा शुद्ध अध्यात्मादिक तत्त्वनो जे उपदेश करे, तेमज तेने अनुसरती पोतानी चेतना करीने जे तेवा धर्मनुं प्रतिपालन करे तेज गुरु कहेवाय, तेनेज हुं गुरु मानुं छुं; बीजा कोइ गुरु होइ शकेज नहीं. तेथी शामाटे तमारा गुरु मने याद करे छे? जो अन्न विगेरे जोइतुं होय तो पहेलांना करतां पण अधिक लइ जाओ. पहेलां तो में कंदमूळ, शाक, पान विगेरे सदोष तथा अल्प मूल्यवाळी वस्तुओथी भक्ति करी हती; पण हवे तो घणा मूल्यवाळा अने निर्दोष-कालातिपातादिक दोषरहित घी विगेरेथी बनेला पक्वान्नो ग्रहण करो; केमके मारा गुरुए अनुकंपादान आपवानो निषेध कर्यो नथी, तेथी हुं महादानी थयो छुं. पण तमारे महात्मा (जिनेश्वर) ना धर्मनी हिलना करवी नहीं." ते सांभळीने शिष्य गुरु पासे आव्यो, अने श्रेष्ठीए कहेलुं सर्व वृत्तांत कहीने बोल्यो के "श्रेष्ठीनी वाणीनो विवेक तो पहेलांना करतां पण अधिक छे. तेनुं चातुर्य आश्चर्यकारी छे." पछी शिवभूति जाते श्रेष्ठीने घेर गयो अने तेने कह्युं के "हे श्रेष्ठी! कया धूर्ते तने छेतर्यो छे के जेथी मारा आवतां तुं उभो पण थयो नहीं? ते तें योग्य कर्युं नथी. मारुं सामर्थ्य तें हजी जोयुं नथी. पण मारा भक्तोने प्रत्यक्ष रीते स्वर्गनुं सुख थयुं छे, अने बीजाओ नरकवासी थया छे, ते तुं तारां नेत्रोथीज जो." एम कहीने ते शिवभूतिए विद्याना बळथी स्वर्गनरकादि सर्व बताव्युं. ते जोइने श्रेष्ठीए विचार्युं के "खरेखर आ इंद्रजाळ ज छे, स्वर्गमां जवुं के नरकमां पडवुं, ए तो पोतपोतानां करेलां कर्मने आधारेज बने छे; परंतु श्री वीतराग परमात्मानुं केवुं धैर्य छे! के जेनी पासे अनंत लब्धिओ छतां पण ते लेश मात्र मान के अहंकारादि धरावता नथी." एम विचारीने तेणे तापसने कह्युं के "विपुलर्द्धि, पुलाकलब्धि तथा चारण विगेरे लब्धिओ प्राप्त थया छतां पण जो ममतानो त्याग थयो न होय तो ते सर्व अयोग्यज छे; केमके निष्कारण विश्ववत्सल एवा श्री जिनेश्वरे कह्युं छे के—

> विषयैः किं परित्यक्तैर्जागर्ति ममता यदि ।
> त्यागात् कंचुकमात्रस्य, भुजंगो न हि निर्विषः ॥ १ ॥

भावार्थ—"जो ममता जागृत होय, तो विषयमात्रने त्याग करवाथी शुं फळ? केमके मात्र कंचुक (कांचळी) नो त्याग करवाथी सर्प काइ विषरहित थइ जतो नथी."

कष्टेन हि गुणग्रामं, प्रकटीकुरुते मुनिः ।
ममताराक्षसी सर्वं, भक्षयत्येकक्रीडया ॥ २ ॥

भावार्थ—"मुनि महा प्रयत्नथी गुणसमूहने प्रगट करे छे, ते सर्वने ममतारूपी राक्षसी क्रीडामात्रमांज भक्षण करी जाय छे."

वळी हे तापस ! कामरु देशनी स्त्रीओनी जेम जीवरूपी भर्तारने पशुरूप बनावीने रागरूपी विद्या तथा औषधीना बळथी ममतारूपी स्त्रीओ क्रीडा करे छे; माटे हे तपोधन ! तमे ममताना संगथी अध्यात्मनो एक लेश पण जाणता नथी, अने स्नानादिकने धर्म मानी ते करो छो, करावो छो अने तेनुं अनुमोदन करो छो, तेथी तमे दुःखी थशो; परंतु अढार पापस्थानरहित एवा विरति धर्ममां तमे प्रवृत्त थाओ. आ मनुष्यजन्मने संसाररूपी खाडामां फोगट शामाटे नांखी द्यो छो ?" आ प्रमाणेनां ते श्रेष्ठीनां वचनो सांभळीने शिवभूति तापस तेने दृढ जैनधर्मी जाणी पोताने आश्रमे पाछो गयो.

लेपश्रेष्ठी सर्व प्रकारनां गृहकार्य करे छे, तोपण ज्ञानधर्मने कदापि पण तजतो नथी, सर्वत्र सापेक्ष राखे छे. एम वर्ततां तेणे पोताना समग्र कुटुंबने धर्मना आचारवाळुं कर्युं. पछी पोताने दीक्षा पाळवामां समर्थ जाणीने तेणे चारित्र ग्रहण कर्युं. अनुक्रमे सर्व कर्मनो क्षय करी केवळज्ञान पामीने मोक्षपद मेळव्युं.

" ते लेपश्रेष्ठी श्री जिनेश्वरे दूषणयुक्त बतावी आपेला एकांत पक्षने छोडीने शुद्ध अध्यात्म तथा वैराग्यथी भूषित थयो. पछी ते अमूढदृष्टि थयो सतो मिथ्यात्वीओना संगथी पण कुदृष्टिवाळो थयो नहीं, पण उलटो समकितमां वधारे प्रीतिवाळो थयो.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य

एकसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७१ ॥

व्याख्यान २७२ मुं.

प्रशंसा नामना पांचमा दर्शनाचार विषे.

धर्मोद्योतो महान् येन, विहितो जैनशासने ।
तस्योपबृंहणा कार्या, गुरुभिर्भावबृद्धये ॥ १ ॥

भावार्थ—" कोइए जैनशासनने विषे मोटो धर्मनो उद्योत कर्यो होय तो तेना भावनी वृद्धिने माटे गुरुजनोए तेनी प्रशंसा करवी. "

श्लाघिता एव तुष्यंति, सुरादयो नरादयः ।
स्वेष्टकार्यं च कुर्वंति, लोके लोकोत्तरेऽपि च ॥२॥

भावार्थ—" देवतादिक तथा मनुष्यादिकनी जो श्लाघा करी होय तो तेओ प्रसन्न थाय छे, अने लौकिक तथा लोकोत्तर विषयमां पोतानुं इच्छित कार्य साधी आपे छे. "

लोकमां पण सारुं काम करनारनी प्रशंसा करवामां आवे छे तो ते बहु गुणकारी थाय छे. प्रायः तो प्रशंसावडेज लोकमां अनेक कार्यमां निर्वाह थतो जोवामां आवे छे. सेवक विगेरे प्रशंसा करवाथीज प्रायः सारी रीते मन दइने काम करे छे. कर्ण, भोज अने विक्रम विगेरेनी जेम राजादिक प्रशंसावाळी कविताओ विगेरे सांभळीने संतोष पाम्या सता सहस्र अने लाखो रुपीआ आपे छे तथा सुरप्रिय यक्ष विगेरेनी जेम देवताओ पण स्तोत्र स्तुति विगेरेथी प्रशंसा करी होय तोज प्रसन्न थाय छे; तेवीज रीते लोकोत्तरमां पण तप, स्वाध्याय, कविता, दुष्कर विहार, वादीनो जय तथा परीषहनुं सहन करवुं विगेरे धर्मकार्य जेणे कर्युं होय तेनी यथायोग्य प्रशंसा गुरु विगेरेए अवश्य करवी. जे गुरुओ प्रमादथी अद्भुत धर्मक्रिया करनारनी प्रशंसा करता नथी तेओनो गच्छ रुद्रसूरिनी जेम सीदाय छे. कह्युं छे के—

जो पुण पमायउ दप्पउ अ, उववूहणे न वट्टिज्जा ।
नासिज्जइ अप्पाणं, मुणिजणं च सो रुद्दसूरि व्व ॥१॥

भावार्थ—" जेओ प्रमादथी अथवा अहंकारथी बीजानां करेलां उत्कृष्ट धर्मकार्यनी प्रशंसा करवामां प्रवृत्ति करता नथी तेओ रुद्रसूरिनी जेम पोतानो तथा

पोताना गच्छना मुनिजनोनो विनाश करे छे. ”

श्री महावीर स्वामीए पण सभा समक्ष श्री कामदेव श्रावकनी प्रशंसा करी हती. ते विषे सातमा अंगमां कह्युं छे ते आ प्रमाणे—

कामदेव श्रावकनी कथा.

चंपा नगरीमां कामदेव नामे मोटो गृहस्थ रहेतो हतो. तेने भद्रा नामनी पत्नी हती. ते महाधनी होवाथी तेणे छ कोटी द्रव्य पृथ्वीमां निधानरूप कर्युं हतुं, छ कोटी द्रव्य व्यापारमां राख्युं हतुं, अने छ कोटी द्रव्य घर, घरवकरी अने वस्त्राभूषणादिमां रोक्युं हतुं ; तेने दश दश हजार गायोवाळां छ गोकुळ हतां.

एकदा श्री महावीर स्वामी पूर्णभद्र नामना चैत्यमां समवसर्या. ते वखते श्री जिनेश्वरने वांदवा माटे सर्व लोक जता हता, ते जोइने कामदेव पण गयो. त्यां श्री वीरस्वामीने प्रणाम करीने तेनी पासे देशना सांभळी, तेथी कामदेव प्रतिबोध पाम्यो अने आनंद श्रावकनी जेम ते वखत श्राद्धधर्म ग्रहण कर्यो. पछी पोताने घेर आवीने उल्लास पूर्वक पोताने धर्म प्राप्त थयानुं वृत्तांत पोतानी पत्नीने कह्युं. ते सांभळीने तेणे पण मोटी समृद्धि पूर्वक प्रभु पासे जइने शिवनंदानी जेम श्रावकधर्म ग्रहण कर्यो.

निरंतर श्रावकधर्मनुं प्रतिपालन करतां ते कामदेवने चौद वर्ष व्यतीत थयां. पंदरमा वर्षमां एकदा मध्य रात्रिए धर्मजागरिकाए जागतां कामदेवने विचार थयो के-“ घरनो समग्र कार्यभार पुत्रो उपर नांखीने हवे हुं श्रावकनी अग्यार प्रतिमा वहन करुं. ” पछी प्रातःकाळे उठीने पोताना पुत्रोने घरनो सर्व कार्यभार सोंपी पोते पौषधशाळामां रही दर्भना संथारापर बेसी श्रीजिनेश्वरनुं ध्यान करतां आनंद श्रावकनी जेम प्रतिमा वहन करवा लाग्यो. एकदा रात्रिए कामदेव ध्यानमां बेठो छे, ते वखते सौधर्मेन्द्रे पोतानी सभामां कामदेवनी प्रशंसा करी. तेपर श्रद्धा नहीं राखतो कोइ देव तेनी परीक्षा करवा आव्यो. ते देव दैवीशक्तिथी घणां भयंकर रूपो विकुर्वीने तेने भय पमाडवा लाग्यो. वळी ते बोल्यो के “ जो तुं धर्मने छोडी नहीं दे तो तीक्ष्ण खड्गना प्रहारवडे तारुं अकाळे जीवित हरी लइश, जेथी तुं आर्तध्यानथी पीडाइने अनंत दुर्गतिनुं दुःख पामीश. ” आ प्रमाणे तेणे वारंवार कह्युं पण ते श्रेष्ठी जरा पण भय न पाम्यो, त्यारे ते देवे क्रोधथी तेनापर खड्गना प्रहार कर्या,

तेथी पण श्रेष्ठी क्षोभ पाम्यो नहीं. त्यारे तेणे एक भयानक हस्तीनुं रूप विकुर्व्युं अने बोल्यो के " हे दंभना सागर ! आ सूंढथी तने आकाशमां उछाळीने ज्यारे पृथ्वीपर पाडीश त्यारे चारे पगोथी दाबीने चूर्ण करी नाखीश. " एम कहीने ते देवताए पोतानी सर्व शक्तिथी हस्तिरूपे तेने परीषह कर्यो. तेथी पण ते श्रेष्ठी जरा पण क्षोभ पाम्यो नहीं, त्यारे फरीथी तेने क्षोभ पमाडवा माटे तेणे महा भयंकर अनेक फणावाळुं सर्पनुं रूप विकुर्व्युं अने बधी फणाए फुंफाडा मारतो सतो ते बोल्यो के " अरे अप्रार्थ्य [मृत्यु]नी प्रार्थना करनार ! श्री वीरभूतेना धर्मने छोडीने मने प्रणाम कर; नहीं तो हुं एवो डंश मारीश के जेना विषनी वेदनाथी पीडाइने तुं दुर्गति पामीश." आवां वचनो बे त्रण वार कहेवाथी पण ते श्रेष्ठी क्षोभ पाम्यो नहीं त्यारे ते भयंकर सर्पे तेना शरीरपर त्रण भरडा दइने तेना कंठ उपर निर्दयताथी डंश दीधो. ते विषनी वेदनाने पण श्रेष्ठीए सम्यक् प्रकारे सहन करी, अने मनमां श्री महावीर परमात्मानुं स्मरण करतो सतो अधिक अधिक शुभ ध्यान ध्यावा लाग्यो. देवताए बीजी पण अनेक रीते पोतानी शक्ति प्रमाणे सर्व वीर्य फोरव्युं तोपण ते श्रेष्ठीना द्रव्यभावनी शक्तिनो अल्प मात्र पण नाश करवाने ते समर्थ थयो नहीं. छेवटे ते देवता थाक्यो, त्यारे श्रेष्ठीने प्रणाम करीने बोल्यो के " हे श्रावक ! तने धन्य छे. मायारूपी पृथ्वीनुं दारण करवामां हळ समान एवा परम धीर श्री महावीर स्वामीए कहेला धर्ममार्गमां रसिक थयेलो तुं साचो छे. तारा आवा सुदृढ समकितरूप आदर्श [अरीसो] मां जोवाथी मारुं पण सम्यग् दर्शन स्वरूप प्रगट थयुं छे, अने अनादि काळनुं मिथ्यात्व नाश पाम्युं छे. तारा धर्माचार्य तो श्री महावीर भगवान छे, पण मारो धर्माचार्य तो तुंज छे. चंदनना वृक्षनी जेम तें परीषहो सहन करीने मने सम्यक्त्वरूपी सुगंध आपी छे, ते सर्व मारो अपराध क्षमा करजे. " इत्यादि ते श्रेष्ठीनी स्तुति करीने देवताए पोताने स्वर्गथी त्यां आववानुं कारण कही बताव्युं. वळी ते बोल्यो के " हुं स्वर्गथी सम्यक्त्व रहित अहीं आव्यो हतो, अने तेनाथी परिपूर्ण थइने पाछो स्वर्गे जइश. तें बहु सारुं कर्युं के एक मिथ्यात्वरूप वस्तुथी मने खाली कर्यो, अने एक सम्यक् दर्शनरूप वस्तुना दानथी मने भरपूर कर्यो. अहो ! तारुं चातुर्य अकल्पित छे. " एम कहीने ते देव श्रेष्ठीने त्रण प्रदक्षिणा दइ तेना उपकारनुं स्मरण करतो सतो स्वर्गे गयो.

पछी श्रेष्ठी कायोत्सर्ग पारीने त्यां पधारेला श्री महावीर स्वामीने वंदना करवा गयो. ते वखते बार पर्षदाओनी समक्ष प्रभुए कामदेवने कह्युं के "हे श्रावक ! तें आज रात्रिए महा भयंकर त्रण परीषहो बहु सारी रीते सहन कर्या, अने धर्मध्यानथी जरा पण चलित थयो नहीं. ते देवताए क्रोधथी पोतानी सर्व शक्ति प्रगट करी, अने तें पण आत्मवीर्य फोरवीने अदीन मनथी स्थिरता राखी. तारुं व्रतनुं पाळवुं मेरु पर्वतनी जेवुं अचलित छे. छेवट ते देवता तने खमावीने गयो. आ हकीकत बराबर छे ?" कामदेवे कह्युं के 'तेमज छे.' आ प्रमाणे प्रभुए तेनी धर्मनी दृढता वखाणीने सर्व साधु साध्वी विगेरेने उद्देशीने कह्युं के "हे गौतमादिक साधुओ ! ज्यारे श्रावक पण आवा उपसर्गो सहन करे छे, त्यारे तमारे तो तेथी पण वधारे सहन करवा जोइए; केमके तम तो उपसर्गरूपी सैन्यना समूहने जीतवा माटेज धर्मध्वज [रजोहरण] रूप वीरवलयने धारण करीने विचरो छो." ते सांभळीने सर्वेए "तहत्ति" एम बोलीने प्रभुनो उपदेश अंगीकार कर्यो, अने तेओ पण कामदेवनी प्रशंसा करवा लाग्या.

पछी कामदेव श्रेष्ठी पोताने घेर गयो, अने आनंद श्रावकनी जेम एकादश प्रतिमा पूर्ण करीने वीश वर्ष सुधी जैनधर्म पाळी आयुपने अंते एक मासनी संलेखणा करीने प्रथम देवलोकमां अरुणाभ विमानने विषे चार पल्योपमना आयुष्यवाळो वैमानिक देवता थयो. त्यांथी चवीने महाविदेह क्षेत्रमां उत्पन्न थइ सिद्धिपदने पामशे.

"भयंकर उपसर्गो आव्या छतां पण दृढ रीते व्रतमां तल्लीन रहेला कामदेवादिकने धन्य छे, के जेओनी तीर्थंकरे पण श्लाघा करी छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य

द्विसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७२ ॥

व्याख्यान २७३ मुं.

हजु प्रशंसा विषेज कहे छे.

संभूतिविजयेशेन, स्थूलभद्रो हि संस्तुतः ।

भूपामात्यादयो नूनं, श्लाघिता हेमसूरिभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" संभूतिविजय गुरुए स्थूलभद्रनी प्रशंसा करी हती, तेमज हेमचंद्र सूरिए राजा, अमात्य विगेरेनी प्रशंसा करी हती. "

स्थूलभद्र मुनि ज्यारे वेश्याने घेर चातुर्मास करीने गुरु पासे गया, त्यारे तेने दूरथीज जोइने श्री संभूतिविजय गुरुए " अहो ! दुष्कर काम करनार ! अहो ! दुष्कर काम करनार ! " एवा संबोधनथी बोलावीने तेनी श्लाघा करी हती. माटे दर्शनाचारनुं पालन करनारे अवश्य गुणीओना गुण वधारवा माटे तेनी प्रशंसा करवी. अहीं हेमसूरिनो संबंध कहे छे.

श्री हेमचंद्रसूरि प्रबंध.

एकदा श्री कुमारपाळ राजाए सोरठ देशना राजा समरने जीतवा माटे उदयन नामना प्रधानने मोकल्यो. ते पादलिप्त (पालीताणा) नगरमां श्री वीरने नमीने श्री ऋषभदेव भगवानने वांदवानी इच्छा थवाथी सामंतादिकने आगळ प्रयाण करवानुं कहीने पोते शत्रुंजय पर्वतपर चड्यो, त्यां द्रव्यस्तव संपूर्ण करीने अवग्रहनी बहार नीकळी त्रीजी निसीहि करीने चैत्यवंदना करवानी शरुआत करे छे, तेटलामां एक उंदर दीवानी सळगती वाट काष्ठना प्रासादमां पोताना दरने विषे लइ जवा लाग्यो. देराना पूजारीए तेने जोयो, तेथी ते वाट मूकावी. ते जोइने मंत्रीनी समाधिनो भंग थयो, अने काष्ठना प्रासादनो आवी रीते कोइ वखत नाश थवानो संभव जणावाथी दिलगीर थइने तेणे विचार कर्यो के "राजाओना अपार व्यापारमां गुंथाएला अमने धिकार छे के जेथी अमे आवा जीर्ण चैत्यनो उध्धार करी शकता नथी ! राजाओनी पापव्यापार वडे उपार्जन करेली लक्ष्मी शा कामनी छे ? के जे लक्ष्मी तेना अधिकारीओथी तीर्थादिकमां वापरीने कृतार्थ कराती नथी. " पछी जीर्णोद्धार करवानी इच्छावाळा मंत्रीए प्रभु समक्ष ब्रह्मचर्य, एकासणुं, पृथ्वीपर शयन अने तांबूलनो त्याग इत्यादि अभिग्रहो ग्रहण कर्या, अने सिद्धगिरि परथी उतरीने प्रयाण करतां पो-

ताना स्कंधावारनी भेळो थइ गयो. समरसेन राजा साथे युद्ध थतां पोतानुं सैन्य भांगवाथी पोते संग्राममां उतरीने शत्रुनुं सैन्य कापवा लाग्यो; तेमां पोते जोके शत्रुओना बाणथी जर्जरित थयो, तोपण तेणे अनेक बाणोवडे समर राजाने मारी नांख्यो. पछी तेना देशमां पोताना राजानी आज्ञा फेरवीने मंत्री स्वदेश तरफ पाछो वळ्यो.

मार्गमां शत्रुना प्रहारनी पीडाथी मंत्री आंखे अंधारा आववाथी मूर्छा खाइने पृथ्वीपर पड्यो; तेने पवन विगेरेना उपचारथी सज्ज कर्यो, एटले ते करुण स्वरे रोवा लाग्यो. ते जोइने सामंत विगेरेए तेने पूछयुं, त्यारे ते मंत्रीए पोताना मननां चार शल्य कह्यां. पोताना नाना पुत्र अंबडने सेनापतिपणुं अपाववुं, शत्रुंजय गिरिपर पथ्थरमय प्रासादनुं बनाववुं, गिरनार पर्वत उपर नवां पगथीयां करवां अने आ मृत्युसमये निर्यामणा करनार गुरुनो अभाव, आ चार शल्य सांभळीने सामंतादिक बोल्या के " हे मंत्रीश्वर ! प्रथमना त्रण मनोरथ तो तमारो मोटो पुत्र वाहडदेव पूर्ण करशे, तेमां अमे साक्षीभूत छीए, अने आराधना करवा माटे कोइ साधुने अमे हमणांज लावीए छीए." एम कहीने कोइ वंठ पुरुषने साधुनो वेष पहेरावीने मंत्री पासे लावी कह्युं के " आ गुरु आव्या. " मंत्री तेने गौतम स्वामीनी जेम नमी, समग्र प्राणीओने खमावी करेला पापने निंदी तथा पुण्यकरणीनुं अनुमोदन करी स्वर्गे गयो.

ते सर्व जोइने पेला वंठे विचार्युं के " अहो ! आ मुनिना वेषनो महिमा केवो छे ? हुं भिक्षुक छतां आ सर्व लोकनो पराभव करनार अने जगत् जेने वंदना करे छे एवा मंत्रीए मने वंदना करी; तेथी आ जगत्वंद्य वेषने हुं भावथी पण शरणरूप करुं छुं. " एम निश्चय करीने ते गिरनार पर्वतपर जइ बे मासना अनशनथी काळ करीने देवलोके गयो.

"उदयन मंत्रीए तथा सामंतादिके ते मुनिनी शुद्ध प्रशंसा करी, जे सांभळीने भिक्षुकनी श्रद्धा दृढ थइ, तेथी ते गिरनारपर जइने स्वर्गे गयो."

पछी सामंतादिक सैन्य सहित पाटण आव्या, अने श्री चौलुक्य [कुमारपाळ] राजाने शत्रुनी लक्ष्मी विगेरेनुं प्राभृत [भेटणुं] आपीने श्री उदयन प्रधानना शौर्यनी प्रशंसा पूर्वक तेनो सर्व वृत्तांत कह्यो. पछी राजा, सामंत विगेरे वाहड अने अंबडने घेर गया, अने तेमनो शोक उतरावीने बोल्या के—

युवां यदि पितुर्भक्तौ, धर्ममर्मविदावपि ।
उद्धियेथां तदा तीर्थे, गृहीत्वा तदभिग्रहान् ॥१॥

भावार्थ—" जो तमे बन्ने भाइओ खरेखरा पिताना भक्त हो अने धर्मना रहस्यने जाणता हो, तो तमारा पिताए ग्रहण करेला अभिग्रहोने ग्रहण करीने ते बन्ने तीर्थनो उद्धार करो."

ऋणमन्यदपि प्रायो, नृणां दुःखाय जायते ।
यद्देवस्य ऋणं तत्तु, महादुःखनिबंधनम् ॥२॥

भावार्थ—" बीजुं [लौकिक] ऋण पण घणुं करीने माणसोने दुःखदायी थाय छे, तो देवनुं ऋण तो महा दुःखनुं कारणभूत छे."

स्तुत्याः सुतास्त एव स्युः, पितरं मोचयंति ये ।
ऋणाद्देवऋणात्तातं, मोचयेथां युवां ततः ॥३॥

भावार्थ—" जेओ पोताना पिताने ऋणथी मुक्त करे छे ते पुत्रोज प्रशंसा करवा लायक छे, तेथी तमे तमारा पिताने देवऋणथी मुक्त करो."

सवितर्यस्तमापन्ने, मनागपि हि तत्पदम् ।
अनुद्धरंतस्तनया, निंद्यंते शनिवज्जनैः ॥४॥

भावार्थ—" सविता[1] अस्त पाम्ये सते तेना पुत्रो जो तेना स्थाननो जरा पण उद्धार न करे, तो तेवा पुत्रो शनिनी जेम लोकोवडे निंदाय छे."

आ प्रमाणेनां राजा विगेरेनां अमृत तुल्य वचनो सांभळीने उत्साह पामेला वाहड तथा अंबडे एक एक अभिग्रह ग्रहण कर्यो. पछी वाहडे पोताना ओरमान भाइ अंबडने सेनापतिनुं स्थान राजा पासे अपाव्युं, अने पोते राजानी आज्ञा लइने रैवतक [गिरनार] गयो. त्यां अंबिका देवीए जे मार्गे अक्षत छांट्या ते मार्गे त्रेसठ लाख द्रव्यनो व्यय करीने नवां सुगम पगथीआं कराव्यां. पछी त्यांथी शत्रुंजयनी तळेटीए जइने त्यां आवासस्थान करावी सैन्य सहित पडाव नाख्यो अने देश परदेशना कारीगरोने बोलाव्या. चैत्योद्धारना समाचार सांभळीने बीजा अनेक श्रावक गृहस्थो पण त्यां आव्या. ते वखते टीमाणक नामना गामनो रहीश भीम नामनो कुडलीओ वणिक् मात्र छ रुपीयानीज मुडीवडे घी लइने त्यां आ-

१ सविता एटले सूर्य तथा पिता ए बे अर्थ थवाथी—सूर्य अस्त पामे त्यारे जो तेना स्थानने शनि नामनो ग्रह जुए नहीं तो ते घणो रिष्ट गणाय छे, ए वात ज्योतिष शास्त्रमां प्रसिद्ध छे.

ज्यो, ते घी वाहडना सैन्यमां वेचीने शुद्ध व्यापारथी तेणे एक रूपीयाथी अधिक नफो उपार्जन कर्यो; पछी एक रूपीयानां पुष्पो लइने ते वडे प्रभुनी पूजा करी ते सैन्यमां आव्यो. त्यां आम तेम फरतां तेणे अनेक जनोथी सेवाता वाहड मंत्रीने जोया. ते वखते द्वारपाळो तेने धक्का मारीने दूर करता हता, छतां पण तेणे अंदर पेसी जोइने विचार कर्यो के—

अहो मर्त्यतया तौल्यमस्य मेऽपि गुणैः पुनः ।
द्वयोरप्यंतरं रत्नोपलयोरिव हा कियत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" अहो ! मनुष्यजातिथी तो मारुं तथा आ मंत्रीनुं तुल्यपणुं छे, पण गुणथी तो अमारा बेमां रत्न तथा पाषाणनी जेम हा इति खेदे ! केटलुं बधुं अंतर छे ? "

भीमवणिक एम विचारे छे तेटलामां द्वारपाळो त्यां आवी गळे हाथ दइने तेने काढी मूकवा लाग्या ते मंत्रीए जोयुं, एटले तेने पोतानी पासे बोलावीने पूछ्युं. भीमे घी वेचवाथी थयेला लाभवडे प्रभुनी पूजा कर्यानुं वृत्तांत कह्युं त्यारे मंत्री बोल्या के—

धन्यस्त्वं निर्धनोऽप्येवं, यज्जिनेन्द्रमपूजयः ।
धर्मबंधुस्त्वमसि मे, ततः साधर्मिकत्वतः ॥१॥

भावार्थ—" तने धन्य छे, के तें निर्धन छतां पण आ प्रमाणे जिनेश्वरनी पूजा करी, तेथी साधर्मिकपणाथी तुं मारो धर्मबंधु छे. "

आ प्रमाणे सर्व गृहस्थोनी समक्ष ते भीमनी प्रशंसा करीने तेने घणा आग्रहथी पोताना अर्ध आसनपर बेसाड्यो. ते वखते भीमने विचार थयो के " अहो ! जिनेश्वरना धर्मनो महिमा केवो छे अने जिनेश्वरनी पूजानी लीला पण केवी छे ! के जेथी हुं दरिद्रशिरोमणि छतां आवुं सन्मान पाम्यो. " ते वखते मोटा लक्षाधिपति गृहस्थोए मंत्रीने कह्युं के—

प्रभविष्णुस्त्वमेकोऽपि, तीर्थोद्धारेऽसि धीसख ।
बंधूनिव तथाप्यस्मान्, पुण्येऽस्मिन् योक्तुमर्हसि ॥१॥

भावार्थ—" हे मंत्रीश्वर ! आ तीर्थनो उद्धार करवामां तमे एकला पण समर्थ छो, तोपण आ पुण्यमां बंधुनी जेम अमने पण जोडवाने तमे योग्य छो. "

पित्रादयोऽपि वंच्यंते, कदापि क्वापि धार्मिकैः ।
न तु साधर्मिका धर्मस्नेहपाशनियंत्रणात् ॥ २ ॥

भावार्थ—" धार्मिक पुरुषो कोइ वखत कोइ प्रसंगे पिता विगेरेने पण छेतरे छे, परंतु धर्मस्नेह रूपी पाशथी बंधायेला होवाथी साधर्मिकने कदि पण छेतरता नथी." तेथी अमारुं धन पण आ तीर्थना उद्धारमां वापरीने अमने कृतार्थ करो."

आ प्रमाणे कहीने ते गृहस्थो सुवर्णादि द्रव्य आपवा लाग्या, एटले मंत्रीए चोपडामां तेओनां नाम लखवा मांड्यां, ते जोइ भीमे विचार्युं के "मारी पासे सात रुपीया छे, पण जो तीर्थमां उपयोगी थाय तो हुं कृतार्थ थाउं, परंतु आटली थोडी रकम शी रीते आपी शकाय ?" भीम आ प्रमाणे विचारे छे तेवामां मंत्रीए तेना आकार उपरथी जाणीने तेने कह्युं के "हे साधर्मिकबंधु! तमारी पण इच्छा होय तो कांइक आपो, आ तीर्थना उध्धारमां भाग लेवो ते मोटा पुण्यथीज बने तेम छे." मंत्रीए आ प्रमाणे कहेवाथी भीमे पोताना साते रुपीया आपी दीधा, ते लइने उचितपणामां प्रवीण मंत्रीए तेनुं नाम सर्व गृहस्थोनां नामनी उपर लख्युं. ते जोइने गृहस्थोए तेम करवानुं कारण पूछ्युं, त्यारे मंत्री बोल्या के "आणे तो पोतानुं सर्वस्व आप्युं छे, अने तमे तो तमारी पुंजीनो शतांश पण आप्यो नथी; माटे ते तमाराथी अधिक छे." ते सांभळी ते गृहस्थो हर्ष तथा लज्जा पाम्या.

पछी मंत्रीए भीमने पांचसो रुपीया अने त्रण पट्टकूल (वस्त्र) आपवा मांड्यां. पण भीमे एक कोडीना लाभथी कोटी धन गुमाववा जेवुं मानीने ते लीधुं नहीं अने पोताने घेर गयो. तेनी स्त्री पिशाचणी जेवी हती, तेथी ते तेनी पासे वात करतां भय पाम्यो ; तोपण सर्व वृत्तांत धीरे धीरे कह्यो. ते सांभळीने पुण्यना उदयथी स्त्रीए कह्युं के " तीर्थना उध्धारमां भाग लीधो ते सारुं कर्युं, अने मंत्री पासेथी कांइ लीधुं नहीं ते तो घणुंज सारुं कर्युं." पछी ते स्त्रीपुरुष गायने बांधवा माटे खीलो नांखतां हतां. त्यां पृथ्वी खोदतां तेमांथी चार हजार सुवर्ण द्रव्यनो कळश नीकळ्यो, ते जोइ " अहो ! केवो पुण्यनो उदय छे! आ कळश पण पुण्यकर्ममांज आपीए तो ठीक. " एम विचारीने पोतानी स्त्रीनी संमतिथी कळश लइने भीम मंत्री पासे आव्यो. मंत्रीने ते कळश संबंधी वृत्तांत कहीने तीर्थोध्धारने माटे ते आपवा लाग्यो. मंत्रीए लेवानी ना कही पण भीम बळात्कारे

आपवा लाग्यो, एम खेंचताण करतां रात्रि पडी. रात्रिए कपर्दी यक्षे आवीने भीमने कह्युं के " हे भीम! तें एक रुपीयाना पुष्प लइने आदीश्वरनी पूजा करी, तेनाथी प्रसन्न थइने में तने निधि आप्यो छे, माटे ते तुं स्वेच्छाथी भोगव." एम कहीने यक्ष अंतर्धान थयो. प्रातःकाळे भीमे मंत्रीने वात करी, पछी सुवर्ण तथा रत्नना पुष्पोथी आदीश्वरनी पूजा करीने ते कळश लइ भीम पोताने घेर आव्यो अने गृहस्थनी जेम पुण्यमार्गमां प्रवृत्त थयो.

अहीं मंत्रीए शुद्ध मुहूर्ते काष्ठनुं चैत्य दूर करावी सुवर्णनी वास्तुमूर्ति विधि पूर्वक पृथ्वीमां स्थापन करी, तेनी उपर मोटी शिला मुकी खातमुहूर्त कर्युं. पछी चैत्यनुं काम शरु कर्युं. ते पाषाणमय प्रासाद बे वर्षे संपूर्ण थयो. ते पूर्ण थयाना समाचार आपनारने मंत्रीए वधामणीमां बत्रीश सुवर्णनी जीभ आपी. ते संबंधी हर्षोत्सव चाले छे तेवामां बीजा माणसे आवीने कह्युं के " हे मंत्री ! कोइ पण कारणथी प्रासाद फाटी गयो." ते सांभळीने मंत्रीए तेने बमणी वधामणी आपी. ते जोइने पासे बेठेला माणसोए तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे मंत्री बोल्यो के " मारा जीवतां प्रासाद फाट्यो ते ठीक थयुं, केमके हुं फरीथी बीजीवार करावीश." पछी मंत्रीए सूत्रधारो (सलाटो)ने बोलावीने प्रासाद फाटवानुं कारण पूछ्युं. त्यारे तेओ बोल्या के " हे मंत्रीराज ! भमतीवाळा प्रासादनी भमतीमां पवन पेठो, ते नीकळी शक्यो नहीं, एटले तेना जोरथी प्रासाद फाट्यो छे, अने जो भमती विनानो प्रासाद करीए छीए तो करावनारने संतान न थाय एवो लेख छे." ते सांभळीने मंत्रीए विचार्युं के—

संतानः सुस्थिरः कस्य, स च भावी भवे भवे ।
सांप्रतं धर्मसंतान, एवास्तु मम वास्तवः ॥ १ ॥

भावार्थ—" कोनी संतति अचळ रही छे ? ते तो दरेक भवमां थयाज करे छे, माटे हाल तो मारे वास्तविक एवी धर्म संततिज हो."

एम विचारीने मंत्रीए फरतीनी बंन्ने भींतोनी वचमां मजबुत शिलाओ मुकावीने ते पूरी दीधी. ते प्रासाद त्रण वर्षे पूर्ण थयो. आ जीर्णोद्धार करावतां मंत्रीने बे करोड ने सताणुं लाख द्रव्यनो खर्च कारीगरोने आपवामां थयो छे एम पूर्व पुरुषो कहे छे.

पछी ते प्रासादनी प्रतिष्ठा करवा माटे श्री संघ सहित हेमचंद्राचार्यने बोलावीने मोटा उत्सव पूर्वक संवत १२११ नी सालमां (शनिवारने दिवसे) सुवर्णना दंड, कळश अने ध्वजानी प्रतिष्ठा करीने तेने प्रासाद उपर स्थापन कर्यां. त्यां देवपूजाने माटे चोवीश उद्यान तथा चोवीश गाम आपीने तळेटीमां वाहडपुर नामे गाम वसाव्युं. ते गाममां त्रिभुवनपाळविहार नामनो प्रासाद करावीने तेमां श्री पार्श्वनाथनुं बिंब स्थापन कर्युं. ते मंत्रीना आवा लोकोत्तर चरित्रथी प्रसन्न थइने श्री हेमचंद्राचार्य बोल्या के—

जगद्धर्माधारः सगुरुतरतीर्थाधिकरण—
स्तदप्यर्हन्मूलं स पुनरधुना तत्प्रतिनिधिः ।
तदावासश्चैत्यं सचिव भवतोध्धृत्य तदिदं
समं स्वेनोद्दध्रे भुवनमपि मन्येऽहमखिलम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जगतना धर्मनो आधार अने मोटा मोटा तीर्थोनुं अधिकरण अर्हतमूलक[1] छे. सांप्रत काळमां ते अरिहंतने बदले तेनी प्रतिमा छे, ते प्रतिमाना आवासरूप चैत्यनो तें उद्धार कर्यो, तेथी हुं मानुं छुं के हे सचिव ! तें तारा आत्मा सहित आखा भुवननो उद्धार कर्यो. "

ए प्रमाणे सकळ संघे स्तुति करायेला वाग्भट (वाहड) मंत्री पाटणमां आव्या, अने राजाने प्रसन्न कर्या.

हवे आम्रभटे (अंबडे) पण पिताना श्रेयने माटे श्री भृगुपुर (भरुच) मां शकुनिकाविहार नामनो प्रासाद कराववानो आरंभ कर्यो. तेने माटे खाडो खोदतां नर्मदा नदी पासे होवाथी तेनुं पाणी अकस्मात् तेमां भराइ गयुं. तेथी सर्व कारीगरो तेमां डूबी गया. ते हकीकत सांभळतां अनुकंपाना सविशेषपणाथी आम्रभटे पोताना आत्मानी निंदा करता सता स्त्रीपुत्र सहित तेमां झंपापात कर्यो. ए प्रमाणे पड्या छतां पण तेना अंगने कांइ पण नुकशान थयुं नहीं. आवुं तेनुं निःसीम सत्त्व जोइने प्रसन्न थयेली स्त्रीरूप कोइ देवीए तेने बोलाव्यो. एटले तेणे तेने पूछ्युं के " तमे कोण छो ? " ते बोली के " हुं आ क्षेत्रनी अधिष्ठात्री देवी छुं. तारा सत्त्वनी परीक्षा

१ अर्हन् जेनुं मूळ कारण छे तेवुं.

करवा माटे आ सर्व में कर्युं छे. हे वीर ! तुं खरेखर प्रशंसा करवाने योग्य छे, वीरपुरुषोमां अग्रणी छे, तारुं सत्त्व अति उत्कृष्ट छे, नहींतो बीजा घणा माणसो छतां थोडा माणसनुं मरण थवाथी तारी जेम आ प्रमाणे मरवाने कोण तैयार थाय ? आ तारा सर्वे कारीगरो अक्षतांगज छे, तेना विषे तुं चिंता करीश नहीं. हवे तारुं धारेलुं कार्य पूर्ण कर." इत्यादि कहीने देवी अंतर्धान थइ. मंत्री कुटुंब अने कारीगरो सहित बहार नीकळ्यो. पछी देवीने योग्य बळिदान आपीने अढार हाथ उंचो श्री मुनिसुव्रत स्वामीने प्रासाद कराव्यो, तथा शकुनिका, मुनि अने न्यग्रोध (वड) नी लेप्यमय मूर्त्तिओ करावी. आ शकुनिकाविहारनो उद्धार संवत १२२० नी सालमां अंबडे हर्ष पूर्वक कराव्यो. पछी प्रतिष्ठाने माटे राजाने, हेमाचार्यने तथा सकल संघने बोलावीने श्री सुव्रत स्वामीनी प्रतिष्ठा करी. पूर्वे श्री मल्लिकार्जुनने जीतीने अंबड मंत्री तेनो द्रव्यकोश लाव्यो हतो, ते कुमारपाळ राजाए तेनेज आप्यो हतो, तेमांथी बत्रीश घडी सुवर्णवडे कळश, सुवर्णदंड तथा पट्टकुळमय ध्वजा करावी तेनी यथाविधि प्रतिष्ठा करीने तेने प्रासाद उपर स्थापन कर्या. पछी अति हर्षना आवेशथी चैत्यना शिखरपर चडीने तेणे सुवर्ण अने रत्ननी वृष्टि करी. ते जोइने कवि लोको तेनी प्रशंसा करवा पूर्वक बोल्या के—

निरीक्षिता पुराप्यासीद्वृष्टिर्जलमयी जनैः ।
तदा तु ददृशे क्षौमस्वर्णरत्नमयी पुनः ॥ १ ॥

भावार्थ—" सर्व लोकोए पहेलां पण जळनी वृष्टि तो जोयेली हतीज, पण आज तो क्षौम (वस्त्र), सुवर्ण अने रत्ननी वृष्टि जोवामां आवी."

पछी शिखरपरथी उतरीने चौलुक्य राजानी प्रेरणाथी आम्रभट मंत्रीए आरति विगेरेनुं कार्य शरु कर्युं. ते वखते श्री सुव्रत स्वामीनी पासे कुमारपाळ राजा विधि करावनार तरीके रह्या. बोंतेर सामंतो सुवर्णना दंडवाळा चामरने धारण करीने उभा रह्या, अने वाग्भट विगेरे मंत्रीओ सर्व साहित्य तैयार करी आपनारा थया. पछी आरति उतारीने मंगळदीप प्रगट कर्यो, ते समये प्रभुना गुण गानारा गायकोने बत्रीश लक्ष द्रव्यनुं दान आप्युं. तेनुं आवुं लोकोत्तर चरित्र जोइने चित्तमां आश्चर्य उत्पन्न थवाथी जन्म पर्यंत मनुष्यनी स्तुति न करवानो नियम भूली जइने श्री हेमचंद्रसूरि बोल्या के—

किं कृतेन हि यत्र त्वं, यत्र त्वं किमसौ कलिः ।
कलौ चेद्भवतो जन्म, कलिरस्तु कृतेन किम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" हे मंत्री ! ज्यां तुं छे त्यां सत्ययुगे करीने शुं ? अर्थात् ज्यां तुं छे त्यां सत्ययुगज छे, अने ज्यां तुं छे त्यां आ कळियुग शुं छे ? अर्थात् कळियुगनुं कांइ चालतुंज नथी. तेथी जो तारो जन्म कळियुगमां होय तो एवो कळियुगज सर्व काळ रहो, सत्ययुगनुं कांइ काम नथी. "

कृते वर्षसहस्रेण, त्रेतायां हायनेन च ।
द्वापरे यच्च मासेन, अहोरात्रेण तत्कलौ ॥ २ ॥

भावार्थ—" जे कार्य सत्ययुगमां हजार वर्षे सिद्ध थाय छे, त्रेता युगमां एक वर्षे सिद्ध थाय छे अने द्वापरमां एक मासे सिद्ध थाय छे, ते कळियुगमां मात्र एक अहोरात्रमांज सिद्ध थाय छे. "

आ प्रमाणे आम्रभटनी प्रशंसा करीने गुरु तथा राजा पोताने स्थानके गया. (पाटण गया.)

अहीं गुरु तथा राजाना गया पछी आम्रभट मंत्रीने अकस्मात् कोइ देवीना दोषथी मरण तुल्य मूर्छा आवी. ते वात कोइए गुरु पासे जइने विनंति पूर्वक निवेदन करी, त्यारे गुरुए तरतज जाण्युं के " ते माहात्माए प्रासादना शिखर उपर चढीने हर्षथी नाच कर्यो. ते वखते कोइ मिथ्यादृष्टि देवीओनो दृष्टिदोष लागवाथी आ थयुं छे." एम जाणीने संध्याकाळे यशश्चंद्र नामना उपाध्यायने साथे लइने गुरु आकाशगतिथी अति अल्प काळमांज भरुचनी परिसरभूमिए आवी पहोंच्या. त्यां सिंधुदेवीना अनुनय माटे गुरुए कायोत्सर्ग कर्यो. ते देवीए जीह्वा बंध करीने गुरुनी अवगणना करी, त्यारे यशश्चंद्र गणिए खारणीयामां शाळ नांखीने तेनापर मुशळना प्रहार करवानुं शरु कर्युं. तेना प्रथम प्रहारथीज देवीना प्रासादनो प्रकंप थयो, बीजा प्रहारे देवीनी मूर्तिज तेना स्थानथी उठीने " वज्रप्रहारथी मारी रक्षा करो, रक्षा करो " एम बोलती प्रभुना चरणमां आवीने पडी. आ प्रमाणे निरवद्य विद्याना बळथी मिथ्यादृष्टि व्यंतर देवीओना दोषनो निग्रह करीने श्री आम्रभट मंत्रीने उल्लाप स्नानवडे सज्ज करीने गुरु स्वस्थाने गया.

" सध्धर्मनां कृत्यो करीने अंबडादिक सचिवो हेमचंद्रसूरिवडे प्रशंसा पाम्या; तेवीज रीते भावनी वृद्धि करवा माटे धर्मना प्रभावक श्रावक विगेरेनी प्रशंसा सर्वदा अवश्य करवी. "

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य

त्रिसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७३ ॥

व्याख्यान २७४ मुं.

स्थिरीकरण नामना छठ्ठा दर्शनाचार विषे कहे छे.

मनोविपरिणामेन, गुर्वादिष्टक्रियादिषु ।
स्थिरतापादनं तेषां, सीदतां स्मारणादिभिः ॥१॥

भावार्थ—" गुर्वादिके बतावेली क्रियाओमां मनना विपरीत परिणामे करीने सीदाता शिष्यादिकनी स्मारणादिकवडे स्थिरता कराववी. " आनो भावार्थ विवेचन तथा दृष्टांतवडे जाणी लेवो.

विवेचन—गुरुए बतावेली विनय, वैयावृत्य, दुष्कर विहार अने दुष्कर व्रतनुं पालन विगेरे क्रियाओमां प्रमाद विगेरेथी सीदाता शिष्यादिकोने योग्यता प्रमाणे भवना अपाय (कष्ट) नुं बताववुं विगेरे हितना उपदेश पूर्वक स्मारणा, वारणा, नोदना, प्रतिनोदना विगेरे करीने तेमनुं मन स्थिर करवुं.

जेम दीक्षा लीधी तेज दिवसनी रात्रे द्वारनी पासे संथारो आववाथी जता आवता साधुओना पगना संघट्टनथी मेघकुमारने खेद थयो, अने तेनुं मन विपरीत परिणाम पाम्युं. ते वखते तेने स्थिर करवा माटे श्री वीर भगवाने तेना पूर्व भवनो दृष्टांत कहीने तेने स्थिर कर्या तेम बीजाओए पण करवुं.

हवे सारणादिकनुं स्वरूप कहे छे—

पम्हुट्ठे सारणा वुत्ता, अणायारस्स वारणा ।
चुक्काणं चोअणा जुज्जो, निठ्ठुरं पमिचोअणा ॥१॥

भावार्थ—" व्रत पालन करवामां प्रमादीने माटे सारणा (स्मरणा) कहेली छे, अनाचारीने माटे वारणा (निवारणा) कहेली छे, भूल करनार माटे चोयणा (प्रेरणा) कहेली छे, अने निष्ठुरने माटे पमिचोयणा (वारंवार प्रेरणा) कहेली छे.

थिरकरणं पुण थेरो, पवत्ति वावारिएसु अथ्थेसु ।
जो जथ्थ सीअइज्जइ, संतबलो तं थिरं कुणइ ॥१॥

भावार्थ—" निरंतरना धर्मव्यापाररूप कार्यमां जे ज्यां सीदातो होय त्यां तेने स्थिर करवा रूप स्थविरनी प्रवृत्ति होय छे. तेथी ते बळ सते तेने स्थिर करे छे. " जेम श्री हेमचंद्राचार्ये धर्मनां वाक्योवमे करीने कुमारपाळ राजाने स्थिर कर्या. तेनो प्रबंध नीचे प्रमाणे—

कुमारपाळ राजानो प्रबंध.

श्री हेमचंद्रसूरि कुमारपाळ राजाना बत्रीश दांतनी शुद्धि माटे पोते रचेली जिनस्तुति रूप बत्रीशीनो[1] निरंतर प्रातःकाळे तेने पाठ करावता हता, अने पोते करेलुं बार प्रकाशवाळुं योगशास्त्र कुमारपाळ राजाने जणावता हता. तेमां गृहस्थोना चोथा व्रतना अधिकारमां एक एवो श्लोक आव्यो के—

प्राप्तुं पारमपारस्य, पारावारस्य पार्यते ।
स्त्रीणां प्रकृतिवक्राणां, स्त्रीचरित्रस्य नो पुनः ॥१॥

भावार्थ—" अपार एवा पारावार (समुद्र)नो पार पामवा माटे शक्तिमान थइ शकाय छे पण वक्र स्वभाववाळी स्त्रीओना स्त्रीचरित्रनो पार पामी शकातो नथी."

आ श्लोकनो अर्थ जाणीने राजाए गुरुने कह्युं के " हे भगवन्! कविजनो मेरुने कांकरा बराबर अने कांकराने मेरु बराबर करे छे, ते वात सत्य थइ. कह्युं छे के—

कविजन किमही न छेडीए, जो होय हयडे सान;
मेरु टाळी कर्कर करे, कर्कर मेरु समान. ॥ १ ॥

---

१ वीतराग स्तवना २० प्रकाश ने योगशास्त्रना १२ प्रकाश मळी ३२ प्रकाशनो कुमारपाळ निरंतर प्रातःकाळे पाठ करता हता एम कहेवाय छे.

" सद्धर्मनां कृत्यो करीने अंबडादिक सचिवो हेमचंद्रसूरिवडे प्रशंसा पाम्या; तेवीज रीते भावनी वृद्धि करवा माटे धर्मना प्रभावक श्रावक विगेरेनी प्रशंसा सर्वदा अवश्य करवी. "

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य

त्रिसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७३ ॥

व्याख्यान २७४ मुं.

स्थिरीकरण नामना छट्ठा दर्शनाचार विषे कहे छे.

मनोविपरिणामेन, गुर्वादिष्टक्रियादिषु ।
स्थिरतापादनं तेषां, सीदतां स्मारणादिभिः ॥१॥

भावार्थ—" गुर्वादिके बतावेली क्रियाओमां
सीदाता शिष्यादिकनी स्मारणादिकवडे स्थिरता कराव.
तथा दृष्टांतवडे जाणी लेवो.

विवेचन—गुरुए बतावेली विनय, वैयावृत्य, दुष्कर विह
पालन विगेरे क्रियाओमां प्रमाद विगेरेथी सीदाता शिष्यादिकोने थ
वना अपाय (कष्ट) नुं बतावबुं विगेरे हितना उपदेश पूर्वक स्मारणा,
प्रतिनोदना विगेरे करीने तेमनुं मन स्थि करवुं.

पम्हुट्ठे सारणा वुत्ता, अणायारस्स वारणा ।
चुक्काणं चोअणा जुज्जो, निट्ठुरं पडिचोअणा ॥१॥

जावार्थ—" व्रत पालन करवामां प्रमादीने माटे सारणा (स्मरणा) कहेली छे, अनाचारीने माटे वारणा (निवारणा) कहेली छे, जूल करनार माटे चोयणा (प्रेरणा) कहेली छे, अने निष्ठुरने माटे पडिचोयणा (वारंवार प्रेरणा) कहेली छे.

थिरकरणं पुण थेरो, पवत्ति वावारिएसु अथ्थेसु ।
जो जथ्थ सीअइज्जइ, संतबलो तं थिरं कुणइ ॥१॥

जावार्थ—" निरंतरना धर्मव्यापाररूप कार्यमां जे ज्यां सीदातो होय त्यां तेने स्थिर करवा रूप स्थविरनी प्रवृत्ति होय छे. तेथी ते बळ सते तेने स्थिर करे छे." जेम श्री हेमचंद्राचार्ये धर्मनां वाक्योवडे करीने कुमारपाळ राजाने स्थिर कर्या. तेनो प्रबंध नीचे प्रमाणे—

कुमारपाळ राजानो प्रबंध.

श्री हेमचंद्रसूरि कुमारपाळ राजाना बत्रीश दांतनी शुद्धि माटे पोते रचेली जिनस्तुति रूप बत्रीशीनो[1] निरंतर प्रातःकाळे तेने पाठ करावता हता, अने पोते करेलुं बार प्रकाशवाळुं योगशास्त्र कुमारपाळ राजाने जणावता हता. तेमां गृहस्थोना चोथा व्रतना अधिकारमां एक एवो श्लोक आव्यो के—

प्राप्तुं पारमपारस्य, पारावारस्य पार्यते ।
स्त्रीणां प्रकृतिवक्राणां, स्त्रीचरित्रस्य नो पुनः ॥१॥

जावार्थ—" अपार एवा पारावार (समुद्र)नो पार पामवा माटे शक्तिमान थइ शकाय छे पण वक्र स्वजाववाळी स्त्रीओना स्त्रीचरित्रनो पार पामी शकातो नथी."

आ श्लोकनो अर्थ जाणीने राजाए गुरुने कह्युं के " हे जगवन्! कविजनो मेरुने कांकरा बराबर अने कांकराने मेरु बराबर करे छे, ते वात सत्य थइ. कह्युं छे के—

कविजन किमही न छेडीए, जो होय हयडे सान;
मेरु टाळी कर्कर करे, कर्कर मेरु समान. ॥ १ ॥

---

१ वीतराग स्तवना २० प्रकाश ने योगशास्त्रना १२ प्रकाश मळी ३२ प्रकाशनो कुमारपाळ निरंतर प्रातःकाळे पाठ करता हता एम कहेवाय छे.

ते प्रमाणे आपे पण स्वजावथीज जीरु एवी अबलाओना चरित्रमां आटली बधी फुरवबोधता जणावी, ते सर्वथा कविजननी कविकळानी कुशळताज जणाय छे." आ प्रमाणे राजानो कदाग्रह जोइने गुरुए कह्युं के "हे राजा! तेमां कविजननी चतुराइ नथी, सत्य वात छे, ते विषे घणा प्राचीन आचार्योनुं प्रमाण छे. पूर्वे पण तेवा बहु बनावो बनेला छे ते सांजळोः—

उज्जयिनी नगरीमां परकाय प्रवेश विगेरे अनेक विद्याथी शोजतो विक्रम राजा राज्य करतो हतो. एकदा ते सजामां बेठो हतो, ते वखते कोइ पंमित आवीने एक श्लोक बोल्यो के—

अश्वप्लुतं माधवगर्जितं च, स्त्रीणां चरित्रं पुरुषस्य जाग्यं ।
अवर्षणं चापि च वर्षणं च, दैवो न जानाति कुतो मनुष्यः ॥

ते सांजळीने विद्वान एवो ते राजा बोल्यो के "हे पंमित! बीजी सर्व वात तो सत्य लागे छे, पण स्त्रीचरित्र न जाणी शकाय एम कह्युं ते विषे तो मारी श्रद्धा थती नथी." पंमिते कह्युं के "हे राजा! ते पद तो पूरेपूरुं सत्यज छे." राजाए कह्युं के "ते पदनी परीक्षा कर्या पछी तमने हुं दान आपीश." एम कहीने ते पंमितने राजाए रजा आपी. पछी रात्रे राजा निशाचर्या[1] जोवा माटे गाममां नीकळ्यो. फरतां फरतां एक महेलनी नीचे जतां कनकश्री अने तिलकश्री नामनी बे बाळाओने वातो करती तेणे सांजळी. तेमां तिलकश्रीए कनकश्रीने पूछ्युं के "तुं परणीने पतिने घेर जइश, त्यारे शुं करीश?" ते बोली के—

शय्योत्पाटनगेहमार्जनपयःपावित्र्यचुल्लीक्रिया–
स्थालक्षालनधान्यपेषणजिदा गोदोहतन्मन्थनैः ।
पाकैस्तत्परिवेषणैः समुदितैर्जाण्मादिशौचक्रिया–
कार्यैर्भर्तृननांदृदेवृविनयैः कष्टं वधूर्जीवति ॥ १ ॥

जावार्थ—"शय्या उपाडवी, घरमां वासीदुं वाळवुं, पाणी गळवुं, चूलो साफ करवो, वासण धोवां, अनाज दळवुं वीणवुं विगेरे, गाय दोवी, छाश करवी, रसोइ करवी, पीरसवुं, सर्व वासणो मांजवां, पति, नणंद अने दीयरनो विनय क-

[1] रात्रिए थती गामनी हकीकत.

खो विगेरे क्रिया करवाथी बहु घणां दुःखे जीवे छे अर्थात् बहुनुं जीवतर बहु दुःखी छे." "वळी पतिना चित्तने अनुसरीने हुं सर्व काम सारी रीते करीश." ते सांभळीने तीलकश्री बोली के "हे सखी! हुं तो तें कह्युं तेथी सर्व उलटुंज करीश."

आ प्रमाणे ते बाळाओनी वातो सांभळीने राजा पोताना महेलमां गयो. पछी प्रातःकाळे तिलकश्रीने परणीने स्त्रीचरित्रनी परीक्षा करवा माटे तेने एक स्तंभवाळा प्रासादमां राखी, अने तेने भोजन विगेरे साधेला वेताल मारफत मोकलवा लाग्यो, अर्थात् पुरुषप्रवेश तद्दन बंध कर्यो. एकदा ते एकस्तंभी सौध नीचे कामनंद नामनो कोइ सार्थवाह उतर्यो, तेने जोइने तिलकश्री कामातुर थइ. ते सार्थवाह पण तेने जोइने कामातुर थयो. पछी तिलकश्री राणीना संकेतथी कोइ दूर जग्याएथी सुरंग खोदावीने ते रस्ते राजा न होय त्यारे सार्थवाह तेनी पासे जवा लाग्यो, अने बन्ने सुखेथी भोग भोगववा लाग्यां.

एकदा राजा सभामां बेठो हतो, ते वखते एक धननाथ नामना योगीने भीक्षाने माटे चौटामां भमतां भमतां "सब जग भीना एकज कोरी" ए पद वारंवार बोलतो सांभळ्यो. ते सांभळी राजाए विचार्युं के "खरेखर आ जोगी एक पोतानीज स्त्रीने सती मानतो सतो आम बोले छे एम जणाय छे, तेथी तेनी चर्चा मारे जोवी जोइए." एम विचारीने सायंकाळे ज्यारे ते जोगी भिक्षा मागीने पोताना स्थान तरफ जतो हतो, त्यारे राजा मक्षिकानुं रूप लइने तेनी पाछळ चाल्यो. योगीए पण गाममांथी पुष्प, तांबूल, पक्वान्न विगेरे लइने गाम बहार जइ एक सिध्ध वडनी नीचे रहेली मोटी शिला उपाडी, अने तेनी नीचे भोंयरुं हतुं तेमां ते पेठो. तेनी पाछळ राजा पण मक्षिकारूपे पेठो. पछी योगीए पोतानी जटामांथी एक मृदंग (मादळीयुं) काढीने तेमां रहेली भस्ममांथी एक युवती स्त्री प्रगट करी, तेनी साथे यथेच्छ क्रीडा करीने ते योगी सुइ गयो. पछी ते युवतीए पण पोताना कंठमांथी मृदंग काढ्युं अने तेमांनी भस्मवडे एक युवान पुरुष प्रगट कर्यो. तेनी साथे आखी रात्रि क्रीडा करी. पछी योगीने जागवानो वखत थयो, त्यारे ते युवतीए ते पुरुषने पाछो भस्मरूप बनावी मृदंगमां नांखी कंठे बांधी लीधो. योगीए पण जागृत थइने ते स्त्रीने भस्मरूप बनावी मृदंगमां नाखी. ते सर्व चरित्र जोइने राजा चकित थइ गयो. पछी प्रातःकाळे राजा पोपटनुं रूप करीने तिलकश्री राणीना हाथमां गयो. तेने राणीए पांजरामां नाखी

कामनंदने बोलाववानी सांकळ खखमावी. तेथी कामनंद तरतज सुरंगमार्गे त्यां आव्यो. तेनी साथे राणी विलास करवा लागी. ते चरित्र जोइने " ते पंमितनुं पद सत्य डे " एम मानतो पोपट रूप राजा उमीने पोताने स्थाने गयो. पडी पोपटनुं रूप बदलीने राजाने स्वरूपे सन्नामां बेठो, एटलामां पेला योगीने तेज प्रमाणे बोलतां राजाए जोयो एटले तेने बोलावी नोजन माटे निमंत्रण आपीने राजा योगी सहित तिलकश्रीने घेर गयो. त्यां तेणे नोजन माटे ठ आसन (पाटला) नंखाव्यां. पडी योगीने राजाए कह्युं के " हे योगी ! तारी स्त्रीने प्रगट कर नहींतो आ असिथी तारो शिरश्छेद करीश. " ते सांनळीने नयनीत थयेला योगीए नस्ममांथी स्त्रीने प्रगट करी. ते स्त्रीने पण राजाए तेवीज धमकी आपी, एटले तेणे पण पोतानो पुरुष प्रकट कर्यो. पडी राजाए सांकळ खखमावी कामनंदने पण बोलाव्यो एटले ठए जण जमवा बेठा. नोजन कर्या पडी योगीए ते युवती पेला युवान पुरुषने आपी अने पोते सत्य योगी थयो. राजाए पण तिलकश्री कामनंदने आपीने पेला पंमितनो मणिमुक्ताफळ विगेरेथी सारो सत्कार कर्यो.

विक्रमप्रियतमापि यदेकस्तंनसौधमुषिता कुलटाभूत् ।
स्त्रीजनस्तडचितोऽप्यतियत्नात् स्वरतीं न विजहात्यतिलोलः ॥ १ ॥

नावार्थ—" एक स्तंनवाळा सौध उपर रहेली विक्रम राजानी प्रियतमा पण कुलटा थइ; तो स्त्रीओने अति प्रयत्नथी कबजे राखी होय, तोपण ते अति चपळ स्त्रीओ पोतानी परपुरुष प्रत्येनी प्रीति कदापि ठोमती नथी. "

आ प्रमाणे परशास्त्रनुं दृष्टांत कहीने श्री हेमचंद्र गुरुए कुमारपाळ राजाने कह्युं के " आ स्त्रीचरित्र विषे तमे पण आग्रह ठोमी द्यो. " तोपण राजाए आग्रह ठोड्यो नहीं, त्यारे गुरुए कह्युं के " जो तमारो संदेह दूर थतो न होय तो आजे सायंकाळे वसुदत्त नामे ब्राह्मण मरी जशे. तेनी पाठळ बळी मरवा माटे उत्सुक थयेली तेनी स्त्रीनुं चरित्र महादेवना देरामां जइने जोजो. " एम कहीने गुरुए तेने जवा माटे घणो निषेध कर्यो, तोपण हठथी राजा रात्रे महादेवना देरामां गयो; अने रात्रे मृतकनी दाहक्रिया थती न होवाथी ते स्त्री मृतपतिनुं मस्तक पोताना उत्संगमां राखीने बेठी हती. तेनुं चरित्र जोवा माटे ते कोइक गुप्त स्थाने उनो रह्यो. पडी ते कुलटा स्त्री मधुर स्वरथी गायन करता कोइ पुरुषना उपर मोह पामीने तेनी साथे विलास करवा

लागी. राजा तेनुं आवुं अत्यंत अयोग्य चरित्र जोइने गुरुने धन्यवाद आपतो पाछली राते घेर गयो. सूर्योदय थयो त्यारे ते स्त्री चिता रचावीने पति साथे वळी मरवा तैयार थइ. ते वखते राजाए आवी तेने उपदेश आप्यो के " हे सुभगे ! आवुं अज्ञानी माणसनुं आचरण तुं केम करे छे ? एक कविए कह्युं छे के—

कोइ कंत[1] कारण काष्ठ भक्षण करे, मीलशुं कंतने ध्याय;
ए मेळो कदिए नवि संभवे, मेलो ठाम न थाय. ॥ १ ॥

कदाच आवा सती थवाना आचरणथी चिंतित सफळ थतुं होय, तो दीवामां पडता पतंगीयानां पण चिंतित पूर्ण थवां जोइए; पण पूर्वे उपार्जन करेलां कर्मने अनुसारे ते दंपती उच्च नीच गतिने प्राप्त थाय छे, तेमने परस्पर संख्याता के असंख्याता योजननुं अंतर पडी जाय छे, अने भिन्न नाम, भिन्न देश, भिन्न स्थान तथा भिन्न जातिमां उत्पन्न थयेला ते दंपतीनुं परस्पर मेळाप रूप इप्सित कदापि सिद्ध थतुं नथी, तो शामाटे फोगट देहने बाळी नांखे छे ? अविनाशी परमात्मानुं ध्यान करवामां मनने जोड. " आ प्रमाणे राजाए तेने घणी समजावी पण ते स्त्रीए मान्युं नहीं, त्यारे राजाए तेना कर्णमां रात्रिए बनेलुं चरित्र कहीने उपालंभ पूर्वक कह्युं के " हवे सती थवा तैयार थइ छे ? " ते सांभळीने ते स्त्री राजाने दूर करीने सर्व लोकनी समक्ष बोली के " हे लोको ! आ कुमारपाळ राजा परम धार्मिक छे एम सौ कहे छे ते मिथ्या छे. केमके मारा कर्णमां तेणे एम कह्युं के ' हे सुंदरी ! तुं अग्निमां प्रवेश कर नहीं, मारा अंतःपुरमां तुं रहे. हुं तने पट्टराणी करीश.' परंतु हे राजा ! मारे तो भोगसुखनी किंचित् पण इच्छा नथी. हुं बाल्यावस्थाथीज पतिव्रता होवाथी एवुं अयोग्य काम करीश नहीं. तुं राजा थइने आवुं अश्राव्य वचन केम बोले छे ? आटलुं बधुं सुख पाम्या छतां पण हजु तने तृप्ति थइ नथी ? हुं तो सीतादिक सतीओना जेवी सतीव्रतवाळी छुं. " आ प्रमाणे गाढस्वरे पौरजन समक्ष बोलीने तेणे चितामां प्रवेश कर्यो. पछी राजा धिक् धिक्ना शब्दोथी लोकोदर्के निंदा पामीने, मेशथी लिप्त थयो होय तेम मुख ढांकीने अने हृदयमां वज्रथी हणायो होय तेम पीडा पामीने नगरमां प्रवेश करी पोताना महेलमां पेठो. " अग्निमां प्रवेश करवाने तैयार थयेली सतीने राजाए घणा अयोग्य वचन कह्यां " ए प्रमाणे स्थाने स्थाने लोकोए

---

१ कांत–पति.

वात करवा मांडी, अने ते वात जळमां तेलना बिन्दुनी जेम आखा शहेरमां प्रसरी. आ वृत्तांत गुरुना सांभळवामां आव्युं, तेथी राजमहेलमां जइने गुरुए राजाने कह्युं के "हे राजा ! स्त्रीचरित्र जोयुं ?" राजाए कह्युं के "हे भगवन् ! आपनी आज्ञा भंग करी, तेनुं फळ मने मळ्युं. हवे कलंकित थयेला आ प्राणनुं शुं काम छे ? माटे हुं अनशन करीने मारा प्राणनो त्याग करीश." गुरु बोल्या के "हे राजा ! आम खेद केम करो छो ? तमे जन्मथी आरंभीने परस्त्रीना बंधु छो. हवेथी श्री परमात्माना वचनने अनुसारे पोतानी कुमति कल्पनानो त्याग करीने शास्त्रोमां जे जे वाक्यो कह्यां होय ते सर्वपर दृढ श्रद्धा राखो. एक नानुं सरखुं वाक्य सांभळीने तमे आवी अस्थिरता बतावी तो पछी सूक्ष्म पदार्थोना स्वरूपमां तमारुं मन केम स्थिर थशे ?" राजाए कह्युं के "स्वामी ! मारो अपराध क्षमा करो, पण आ कलंक तो मारा मनमां बहु खुंचे छे; माटे ते कोइ प्रकारे दूर थाय तेम करो." त्यारे गुरु बोल्या के "ते महादेवना देरानो एक पंगु द्वारपाळ छे, ते आ सर्व वृत्तांत जाणे छे." एम कहीने सर्व लोकोनी समक्ष ते पंगुने बोलावीने गुरुए तेने रात्रे थयेलुं स्त्रीचरित्र पूछ्युं. एटले तेणे यथार्थ वात कही संभळावी. ते सांभळीने लोकोए ते स्वैरिणी स्त्रीनी धिक्कार पूर्वक निंदा करीने राजानी प्रशंसा करी.

"योगशास्त्रमां कहेलुं स्त्रीना चरित्र संबंधी वाक्य सांभळीने कुमारपाळ राजाए 'आ तो कविनी चतुराइ छे' एम कही अश्रद्धा करी, तेने हेमचंद्रसूरिए स्त्रीचरित्र बतावी स्थिर कर्यो, ए आ व्याख्याननुं तात्पर्य छे."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
चतुःसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७४ ॥

व्याख्यान २७५ मुं.

हजु स्थिरीकरण विषेज कहे छे.

सदनुष्ठानसम्यक्त्वमनोशुद्ध्यादयो गुणाः ।
तेषां तत्त्वार्थमाख्याय धर्मे क्ष्मापः स्थिरीकृतः ॥१॥

भावार्थ—" सत् अनुष्ठान (क्रिया), सम्यक्त्व अने मन शुद्धि विगेरे गुणोनुं तत्त्व समजावीने कुमारपाळ राजाने गुरुए धर्ममां स्थिर कर्यो हतो. "

कुमारपाळ राजानुं दृष्टांत.

पाटणमां श्री कुमारपाळ राजाने सांख्य, बौद्ध, कपिल, जैमिनीय, चार्वाक विगेरेना शास्त्रोना रहस्यो सांभळीने मनमां संशय उत्पन्न थयो; तेथी बाल्यावस्थाथीज ब्रह्मचर्य व्रत पाळनार श्री हेमचंद्रसूरिने तेणे पूछ्युं के " हे स्वामी ! सर्व मतवादीओ पोतपोताना पक्षनी प्रशंसा करे छे, अने पोतपोतानी क्रियाओ करे छे. तेमां कयो पक्ष प्रमाणरूप जाणवो?" गुरुए उत्तर आप्यो के सर्व एकांतवादीओने परमात्माए कहेला तत्त्वथी पराङ्मुख जाणवा. अनुष्ठान पांच प्रकारना छे, तेमां १ आहार, उपधि, पूजा अने ऋद्धि विगेरे आ लोक संबंधी सुखभोगनी इच्छाथी करेलुं जे अनुष्ठान ते शुभ चित्तने शीघ्र हणनार होवाथी विषानुष्ठान कहेवाय छे, जेम अफीण, वच्छनाग विगेरे स्थावर विष अने सर्पादिक जंगम विष जो भक्षण करवामां आव्युं होय तो ते तत्क्षण प्राणनो नाश करे छे, तेम आ अनुष्ठान पण सत्‌चित्तनो तत्काळ नाश करे छे. २ भवांतरमां देव संबंधी भोग प्राप्त थवानी इच्छाथी करेलुं अनुष्ठान ते गरलानुष्ठान कहेवाय छे, जेम हडकाया श्वाननुं विष तथा कुद्रव्यना संयोगथी उत्पन्न थयेलुं गरल जातिनुं विष कालांतरे हणे छे, तेम आ अनुष्ठान पण अदृष्ट पुण्यफळनी प्राप्ति थया छतां पण कालांतरे अशुभ फळदायी थाय छे. ३ [1]प्रणिधानादिकने अभावे संमूर्छिम जीवनी वृत्ति जेवुं जे अनुष्ठान, ते अन्योन्यानुष्ठान कहेवाय छे, आ त्रीजा भेदमां ओघसंज्ञा अने लोकसंज्ञा ए बे संज्ञानो समावेश थाय छे, तेमां सूत्र तथा गुरुना वाक्यनी अपेक्षा राख्या विना अध्यवसाय रहित शून्य चित्ते ज्ञान विना जे अनुष्ठान करवुं ते ओघसंज्ञा कहेवाय छे, अने ' वर्तमानकाळमां शुद्ध क्रिया शोधवा जइए तो

१ एकाग्र चित्त विगेरे.

तीर्थनो उच्छेद थवा संभव छे माटे जेम करतां हइए तेम करीए' एम कहीने सर्व लोक जेम करता होय तेम अनुष्ठान करे ते लोकसंज्ञा कहेवाय छे, पण तीर्थोच्छेदना भयथी अशुद्ध क्रिया करीने गतानुगतिक थवुं, तेथी तो सूत्रोक्त क्रियानोज लोप थाय. वळी 'आ धर्मक्रियाने घणा लोको करे छे, माटे अमे पण करीए छीए' एम कहेवुं, त्यारे तो मिथ्यादृष्टिनो धर्म कोइ वखत पण तजवा योग्य थायज नहीं, तेथी गतानुगतिए करीने सूत्रवर्जित ओघसंज्ञाथी अथवा लोकसंज्ञाथी जे क्रिया करवामां आवे ते अन्योन्यानुष्ठान पण असत् (अशुभ) समजवुं. आ अनुष्ठान अकाम निर्जरानुं कारण अने कायकष्टनो हेतु छे. ४ मार्गानुसारी थइने उपयोग पूर्वक शुभ क्रियामां रागसहित अनुष्ठान करे ते तध्धेतुअनुष्ठान कहेवाय छे. आ चोथुं अनुष्ठान एक पुद्गलपरावर्तन संसारशेष रहे त्यारेज प्राप्त थाय छे. ते चरमावर्तने धर्मनी युवावस्था जाणवी, तेनाथी अन्यने बाल्यावस्था जाणवी. जेम युवावस्थाने पामेला माणसने बाल्यावस्थामां करेली क्रियाओ लज्जारूप लागे छे, तेम धर्मरागवडे युवावस्था पामेला जीवने असत् क्रियाओ लज्जाने माटेज थाय छे. ५ स्याद्वाद पक्षनी आज्ञा मान्य करीने तथा अंतःकरणमां संवेग धारण करीने चित्तनी शुध्धिथी जे क्रियामां आदर थाय ते अमृतानुष्ठान कहेवाय छे. आ पांचमा अनुष्ठानवाळा जीवने सम्यक् प्रणिधान तथा कालादिक पांचे हेतुनुं यथार्थ ग्रहण होय छे.

सर्व शुभ क्रियाओ (अनुष्ठान) सम्यक्त्व सहित होय, तोज फळदायी थाय छे. कह्युं छे के—

> सम्यक्त्वसहिता एव, शुद्धा दानादिकाः क्रियाः ।
> तासां मोक्षफलं प्रोक्तता, यदस्य सहचारिता ॥ १ ॥

भावार्थ—" दानादिक सर्व क्रियाओ सम्यक्त्व सहित करी होय तोज ते शुध्ध छे, अने ते क्रियाओनुं मोक्ष रूप फळ कह्युं छे, कारणके ते क्रियामां सम्यक्त्वनुं सहचारीपणुं कह्युं छे."

सम्यक् क्रियानी इच्छावाळा पुरुषे अवश्य चित्तशुध्धि करवी जोइए. कह्युं छे के—

> उचितमाचरणं शुभमिच्छतां, प्रथमतो मनसः खलु शोधनम् ।
> गदवतां ह्यकृते मलशोधने, किमुपयोगमुपैति रसायनम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"उचित एवी शुभ क्रियाने इच्छनार पुरुषे प्रथम मननी शुद्धि करवी जोइए, केमके रोगी माणसनुं मलशोधन कर्या विना तेने रसायण आप्युं होय, तो ते पण शुं गुण करे छे ? नथी करतुं."

अहो ! मनरूपी पवन एटलो बधो बळवान छे के ते श्री जिनेश्वरना वचनरूपी घनसारनी चोरी करे छे, कामदेवरूपी अग्निने प्रदीप्त करे छे अने शुभ मति रूप वृक्षश्रेणीने उन्मूलन करे छे. मन ज्यारे अति चपळ थाय छे त्यारे वचन, नेत्र तथा हाथ विगेरेनी चेष्टा विपरीतज थाय छे. अहो ! गाढ दंभने धारण करनारा माणसोए आवी धूर्ततार्थीज आखा जगत्ने छेतर्युं छे, माटे प्रथम व्यवहारनयमां रहीने अशुभ विकल्पनी निवृत्ति करवी, केमके शुभ विकल्पमय व्रतनी सेवावडे जेम एक कांटो बीजा कांटाने काढे छे, तेम शुभ विकल्प अशुभ विकल्पने दूर करे छे. त्यार पछी सुवर्णनी जेवा निश्चयनयनी दृढता थवाथी व्यवहारनयनी मर्यादा दूर थाय छे, अने कांइ पण संकल्प विकल्प विना सर्व निवृत्तिओ समाधि माटेज थाय छे; परंतु कदाग्रहनो स्वीकार कर्ये सते चित्तनी शुद्धि थती नथी, मिथ्यात्वनी हानि थती नथी अने तत्त्वनी प्राप्ति पण थती नथी. केमके जेना अंतःकरणमां कदाग्रहरूपी अग्नि प्रज्वलित थइ रहेलो छे, त्यां तत्त्वविचारणारूप वल्ली क्यांथीज रहे ? तथा शांतिरूप पुष्प अने हितोपदेशरूप फळनी तो बीजेज शोध करवी, त्यां ते होयज नहीं. निन्हवोए अनेक व्रतो आचर्यां, अनेक प्रकारनी तपस्याओ करी, अने प्रयत्नथी पिंडशुद्धि पण करी, अर्थात् शुद्ध आहार ग्रहण कर्यो, तोपण तेमने कांइ पण फळ मळ्युं नहीं, तेमां मात्र कदाग्रहज अपराधी छे, माटे कदाग्रहना त्यागवडेज क्रियायोग अने ज्ञानयोगनी शुद्धि थाय छे. क्रियायोग शरीरादिकनी चपळता नाश करवामां समर्थ छे अने ज्ञानयोग इंद्रियोनुं दमन करीने आत्म स्वरूपमां रमण करनार छे. अप्रमत्त गुणठाणे वर्तता मुनिओ ध्यानथीज शुद्ध छे, तेथी तेमने आवश्यकादि क्रिया करवानुं नियतपणुं नथी. बीजां शास्त्रोमां पण कह्युं छे के—

यश्चात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे माणसने आत्माने विषेज आनंद छे, आत्माए करीनेज तृप्त छे, अने आत्माने विषेज जे संतुष्ट छे तेने कांइ पण कार्य बाकीमां नथी."

ज्ञानयोगमां रति के अरतिनो प्रवेशज नथी, ज्ञानयोगमां अरति ने आनंदनो अवकाश शास्त्रमां निषिद्ध कर्यो छे, कारणके तेने ध्याननुंज अवलंबन होवाथी रति अरतिरूप क्रियानो विकल्पज क्यांथी थाय ? वळी मात्र शरीरना निर्वाहने माटे भिक्षाचर्या विगेरे जे जे क्रियाओ ज्ञानी पुरुष करे छे, ते पोते असंग होवाथी तेना ध्याननो विघात करनारी थइ शकती नथी. एटला माटेज बुद्धिमान ज्ञानी मननी निश्चळता करीने समग्र विषयोनुं दमन करवा माटे शास्त्रोक्त क्रियाओ करे छे; बीजुं कांइ कारण नथी. केमके निश्चयमां तल्लीन थयेला ज्ञानीने क्रियानुं अति प्रयोजन नथी, पण व्यवहार दशामां रहेलाने तो ते क्रियाओज अत्यंत गुणकारी छे. ज्ञानयोग साधनार शुद्ध ध्यानमग्नता करे छे, ने आ प्रमाणे ज्ञानयोगवाळा मुनि निर्भयपणे, व्रतोमां स्थित थइने, सुखासन वाळी, नासिकाना अग्रभागे दृष्टि राखीने बेसे छे; अन्य दिशामां दृष्टि पण करतो नथी. शरीरना मध्य भागमां मस्तकने तथा ग्रीवाने सरल (सीधा) राखे छे, अने दांते दांत अफकाव्या विना बन्ने ओष्ठ भेळा करी राखे छे, आर्त अने रौद्र ध्याननो त्याग करीने प्रमाद रहितपणे धर्म तथा शुक्ल ध्यानमां बुद्धिने स्थिर करे छे.

आर्त ध्यानमां प्रथमनी त्रण लेश्याओनो संभव छे. ते अनतिक्लिष्ट भाववाळा कर्मना परिणामथी उत्पन्न थाय छे, ते ध्यानप्रमत्त गुणस्थानक सुधी होय छे, अने तिर्यंचनी गतिने आपनार छे; माटे सर्व प्रमादना कारणभूत ते आर्तध्याननो महात्माए त्याग करवो.

रौद्रध्यान तो अति संक्लिष्ट भाववाळा कर्मना परिणामथी उत्पन्न थाय छे, पहेली त्रण लेश्याए युक्त होय छे, तथा नरकनां दुःखने आपे छे. ते देशविरति गुणस्थानक सुधी रहे छे, ते ध्यान पण धीर पुरुषे तजवा लायक छे.

उत्तम जीवे लोकोत्तर अने प्रशस्त एवा छेल्ला बे ध्याननो स्वीकार करवो, तेवा शुभ ध्यानवाळाने इंद्रपदनी पण इच्छा थती नथी. कह्युं छे के—

यत्र गच्छति परं परिपाकं, पाकशासनपदं तृणकल्पम् ।
स्वप्रकाशसुखबोधमयं तद्ध्यानमेव भवनाशि भजध्वम् ॥१॥

भावार्थ—" जे ध्यानमां अति संतोष उत्पन्न थाय छे, जे ध्यान इंद्रना स्थानने पण तृण समान गणे छे, अने जे ध्यान आत्मप्रकाश रूप सुखना बोधमय छे,

एवुं भवनी परंपराने नाश करनारुं ध्यान हे भव्य जीवो ! तमे सेवो."

वळी रोगी तथा मूर्ख मनुष्यो पण साक्षात् विषयोनो सुखे त्याग करी शके छे, पण विषय उपरनो राग तजी शकता नथी; पण परमात्म स्वरूपने जोनार ध्यानी पुरुष तृप्त थयेल होवाथी फरीने तेना पर राग करतोज नथी, तेमज आत्मानो परमात्माने विषे भेद बुद्धिथी करेलो जे विवाद छे, ते विवादने ध्यानी पुरुष तजी दइने तरतज ते आत्मा तथा परमात्माना अभेदनेज करे छे. सर्व ध्यानमां आत्मध्यानज श्रेष्ठ छे, केमके आत्मध्याननुं फळ आत्म ज्ञान छे अने आत्मज्ञान मुक्तिने आपनारुं छे, तेथी महात्मा पुरुषे अहर्निश आत्मज्ञानने माटेज यत्न करवो. आत्मानुं ज्ञान थवाथी बीजुं कोइ ज्ञान अवशेष रहेतुंज नथी, अने आत्मज्ञान थयुं न होय तो बीजां सर्व ज्ञान व्यर्थ छे. नवतत्त्वोनुं ज्ञान पण आत्मज्ञानना प्रकाश माटेज छे, केमके अजीवादिक पदार्थोनुं स्वरूप जीवना भेदनोज संबंध धरावे छे अर्थात् जीवनुं स्वरूप पृथक् समजवा माटेज छे. धर्मास्तिकाय विगेरे अजीव पदार्थो गमनादिक क्रियामां जीवने सहायभूत होवाथी ते सर्वे पदार्थो आत्मानेज उपकारी छे. जेम रत्ननी कांति, निर्मळता अने शक्ति रत्नथी जूदां नथी, तेमज आत्मानां ज्ञान, दर्शन अने चारित्र रूपी लक्षणो पण आत्माथी भिन्न नथी. मात्र " आत्मानां ज्ञान, दर्शन अने चारित्र ए त्रण लक्षण तथा गुणो छे " ए वाक्यमां ' आत्मा ' शब्दने छट्ठी विभक्ति छे अने ज्ञानादिकने पहेली विभक्ति छे, तेथी व्यवहारदृष्टिथी भिन्नता जणाय छे, पण निश्चयथी तो अभिन्नज छे. तेनो भेद मानवाथी आत्मा अनात्मा थइ जाय, अने ज्ञानादिक गुणो पण जड थइ जाय, माटे निश्चय नयने आधारे चैतन्य लक्षणवाळो एक आत्माज महासत्तावाळो सामान्यथी जाणवो, पण व्यवहारनयने आधारे तो एकेंद्रियादिकना भेदथी अनेक प्रकारे आत्मा मानवामां आवे छे; ते निश्चय नयमां घटतुं नथी. ते सर्व नामकर्मथी करेलो भेद उपाधिजन्य जाणवो. वळी आत्मा कर्मनी साथे एकज क्षेत्रमां रह्यो सतो पण कर्मरूपपणाने पामतो नथी; केमके ते आत्मा धर्मास्तिकायनी जेम अभव्य स्वभाववाळो छे, अर्थात् आत्मानो स्वभाव बदलातो नथी. जेम उष्ण अग्निना संयोगथी ' घी उष्ण थयुं ' एवो भ्रम थाय छे, तेम मूर्तिमान् कर्मना योगथी आत्माने विषे मूर्तपणानो भ्रम थाय छे. केमके जे आत्मा दृष्टिथी जोइ शकातो नथी, हृदयथी ग्रहण करी शकातो नथी, अने वाणीथी वर्णवी शकातो नथी, तथा जेनुं स्वरूप स्वयं प्रकाश छे, एवो आत्मा मूर्तिमान शी रीते कही शकाय ? मनोवर्गणा, भा-

ज्ञानयोगमां रति के अरतिनो प्रवेशज नथी, ज्ञानयोगमां अरति ने आनंदनो अवकाश शास्त्रमां निषिद्ध कर्यो छे, कारणके तेने ध्याननुंज अवलंबन होवाथी रति अरतिरूप क्रियानो विकल्पज क्यांथी थाय ? वळी मात्र शरीरना निर्वाहने माटे भिक्षाचर्या विगेरे जे जे क्रियाओ ज्ञानी पुरुष करे छे, ते पोते असंग होवाथी तेना ध्याननो विघात करनारी थइ शकती नथी. एटला माटेज बुद्धिमान ज्ञानी मननी निश्चळता करीने समग्र विषयोनुं दमन करवा माटे शास्त्रोक्त क्रियाओ करे छे; बीजुं कांइ कारण नथी. केमके निश्चयमां तल्लीन थयेला ज्ञानीने क्रियानुं अति प्रयोजन नथी, पण व्यवहार दशामां रहेलाने तो ते क्रियाओज अत्यंत गुणकारी छे. ज्ञानयोग साधनार शुद्ध ध्यानमग्नता करे छे, ने आ प्रमाणे ज्ञानयोगवाळा मुनि निर्भयपणे, व्रतोमां स्थित थइने, सुखासन वाळी, नासिकाना अग्रभागे दृष्टि राखीने वेसे छे; अन्य दिशामां दृष्टि पण करतो नथी. शरीरना मध्य भागमां मस्तकने तथा ग्रीवाने सरल (सीधा) राखे छे, अने दांते दांत अडकाव्या विना बन्ने ओष्ठ भेळा करी राखे छे, आर्त अने रौद्र ध्याननो त्याग करीने प्रमाद रहितपणे धर्म तथा शुक्ल ध्यानमां बुद्धिने स्थिर करे छे.

आर्त ध्यानमां प्रथमनी त्रण लेश्याओनो संभव छे. ते अनतिक्लिष्ट भाववाळा कर्मना परिणामथी उत्पन्न थाय छे, ते ध्यानप्रमत्त गुणस्थानक सुधी होय छे, अने तिर्यंचनी गतिने अपनार छे; माटे सर्व प्रमादना कारणभूत ते आर्तध्याननो महात्माए त्याग करवो.

रौद्रध्यान तो अति संक्लिष्ट भाववाळा कर्मना परिणामथी उत्पन्न थाय छे, पहेली त्रण लेश्याए युक्त होय छे, तथा नरकनां दुःखने आपे छे. ते देशविरति गुणस्थानक सुधी रहे छे, ते ध्यान पण धीर पुरुषे तजवा लायक छे.

उत्तम जीवे लोकोत्तर अने प्रशस्त एवा छेल्ला बे ध्याननो स्वीकार करवो, तेवा शुभ ध्यानवाळाने इंद्रपदनी पण इच्छा थती नथी. कह्युं छे के—

यत्र गच्छति परं परिपाकं, पाकशासनपदं तृणकल्पम् ।
स्वप्रकाशसुखबोधमयं तद्ध्यानमेव भवनाशि भजध्वम् ॥१॥

भावार्थ—" जे ध्यानमां अति संतोष उत्पन्न थाय छे, जे ध्यान इंद्रना स्थानने पण तृण समान गणे छे, अने जे ध्यान आत्मप्रकाश रूप सुखना बोधमय छे,

एवुं भवनी परंपराने नाश करनारुं ध्यान हे भव्य जीवो ! तमे सेवो. "

वळी रोगी तथा मूर्ख मनुष्यो पण साक्षात् विषयोनो सुखे त्याग करी शके छे, पण विषय उपरनो राग तजी शकता नथी; पण परमात्म स्वरूपने जोनार ध्यानी पुरुष तृप्त थयेल होवाथी फरीने तेना पर राग करतोज नथी, तेमज आत्मानो परमात्माने विषे भेद बुद्धिथी करेलो जे विवाद छे, ते विवादने ध्यानी पुरुष तजी दइने तरतज ते आत्मा तथा परमात्माना अभेदनेज करे छे. सर्व ध्यानमां आत्मध्यानज श्रेष्ठ छे, केमके आत्मध्याननुं फळ आत्म ज्ञान छे अने आत्मज्ञान मुक्तिने आपनारुं छे, तेथी महात्मा पुरुषे अहर्निश आत्मज्ञानने माटेज यत्न करवो. आत्मानुं ज्ञान थवाथी बीजुं कोइ ज्ञान अवशेष रहेतुंज नथी, अने आत्मज्ञान थयुं न होय तो बीजां सर्व ज्ञान व्यर्थ छे. नवतत्त्वोनुं ज्ञान पण आत्मज्ञानना प्रकाश माटेज छे, केमके अजीवादिक पदार्थोनुं स्वरूप जीवना भेदनोज संबंध धरावे छे अर्थात् जीवनुं स्वरूप पृथक् समजवा माटेज छे. धर्मास्तिकाय विगेरे अजीव पदार्थो गमनादिक क्रियामां जीवने सहायभूत होवाथी ते सर्वे पदार्थो आत्मानेज उपकारी छे. जेम रत्ननी कांति, निर्मळता अने शक्ति रत्नथी जूदां नथी, तेमज आत्मानां ज्ञान, दर्शन अने चारित्र रूपी लक्षणो पण आत्माथी भिन्न नथी. मात्र " आत्मानां ज्ञान, दर्शन अने चारित्र ए त्रण लक्षण तथा गुणो छे " ए वाक्यमां 'आत्मा' शब्दने छट्टी विभक्ति छे अने ज्ञानादिकने पहेली विभक्ति छे, तेथी व्यवहारदृष्टिथी भिन्नता जणाय छे, पण निश्चयथी तो अभिन्नज छे. तेनो भेद मानवाथी आत्मा अनात्मा थइ जाय, अने ज्ञानादिक गुणो पण जड थइ जाय, माटे निश्चय नयने आधारे चैतन्य लक्षणवाळो एक आत्माज महासत्तावाळो सामान्यथी जाणवो, पण व्यवहारनयने आधारे तो एकेंद्रियादिकना भेदथी अनेक प्रकारे आत्मा मानवामां आवे छे; ते निश्चय नयमां घटतुं नथी. ते सर्व नामकर्मथी करेलो भेद उपाधिजन्य जाणवो. वळी आत्मा कर्मनी साथे एकज क्षेत्रमां रह्यो सतो पण कर्मरूपपणाने पामतो नथी; केमके ते आत्मा धर्मास्तिकायनी जेम अभव्य स्वभाववाळो छे, अर्थात् आत्मानो स्वभाव बदलातो नथी. जेम उष्ण अग्निना संयोगथी 'घी उष्ण थयुं' एवो भ्रम थाय छे, तेम मूर्तिमान् कर्मना योगथी आत्माने विषे मूर्त्तपणानो भ्रम थाय छे. केमके जे आत्मा दृष्टिथी जोइ शकातो नथी, हृदयथी ग्रहण करी शकातो नथी, अने वाणीथी वर्णवी शकातो नथी, तथा जेनुं स्वरूप स्वयं प्रकाश छे, एवो आत्मा मूर्तिमान शी रीते कही शकाय ? मनोवर्गणा, भा-

पा वर्गणा अने कार्मण वर्गणाना पुद्गळो आत्मानी समीपे होय ले अने धनादिकना पुद्गळो आत्माथी दूर होय छे, परंतु ते सर्व पुद्गळो आत्माथी एकसरखा न्निन्न जाणवा. आ रीते जेम आत्मा पांचे अजीव ड्व्यथी न्निन्न ले, तेम बीजा नयनी अपेक्षाए आत्मानुं अजीवपणुं पण मानेलुं ले. सिद्धना जीवो दश द्रव्यप्राण रूप जीवथी रहित ले अने ज्ञानादिक न्नावप्राणथी युक्त ले, माटे ते अजीव कहेवाय ले. वळी ते आत्मा पुद्गळात्मक पुण्य पापथी पण रहित ले. अहीं कोइ शंका करे के " पुण्यकर्म शुन्न ले, अने पापकर्म अशुभ ले, तो ते शुन्न कार्य जीवोने संसारमां केम नांखे ले ? अर्थात् तेनावमे पण जन्म मरणादि केम थाय ले? " तेनुं समाधान करे ले के "जेम कोइने लोढानी वेमीनुं बंधन होय, अने कोइने सुवर्णनी वेमीनुं बंधन होय, ते बन्नेने परतंत्रपणुं तो समान होवाथी तेना बंधनरूप फळमां कांइ पण न्नेद नथी; तेम सर्व पुण्यफळ पण कर्मोदय करनार होवाथी ड्ःखरूपज ले, परंतु मूढ पुरुषोने शुन्न कर्मना उदयथी ड्ःखनो प्रतीकार थाय ले तेथी तेने सुख रूप न्नासे ले. सेतुक नामना विप्रे पोताना पोषणने माटे पुष्ट करेला मोटा बकरानी जेम नरेश तथा देवेन्ड्ना सुख पण परिणामे दारुण परिपाकवाळा ले अर्थात् परिणामे ड्ःखदायी ले. लोहीनुं पान करवाथी सुख मानती जळोनी जेम विषयोथी सुख माननारा मनुष्यो परिणामे माठी दशाने पामे ले. जेम तीव्र अग्निना संयोगथी तपेला लोढा उपर नांखेलुं जळबिंड्ड तत्काळ सुकाइ जाय ले, तेम निरंतर उत्सुकताथी तपेल इंद्रियोने सुखनो लेश पण क्यांथी होय ? अर्थात् उत्सुकता रूप अग्निथी इंद्रियो निरंतर तप्त रहे ले, त्यां जळबिंड्ड जेवा सुखनी स्थिति केम रही शके ? जेम कोइ माणस पोताना एक स्कंध उपर न्नार उपामे ले, त्यां न्नार लागवाथी ते बीजा स्कंध उपर मूके ले. पण तत्त्वथी तेने न्नार उपामवानो ओलो थतो नथी; तेम ड्ःखनो त्याग थवाथी कांइक इंड्यिोए सुख प्रगट कर्युं, पण फरीने ते ड्ःख प्राप्त थवानुं होवाथी-ड्ःखना संस्कार गयेला न होवाथी तत्त्वथी तो तेनुं ड्ःख गयुंज नथी. इंद्रियोना सर्वे न्नोग क्रोधायमान थयेला सर्पना फणान्नोग जेवा ले, तेथी ते न्नोगथी उद्न्नवेल अखिल सुख विलासनां चिन्ह रूप लतां पण विवेकी माणसने तो न्नयनुंज कारण ले. आ प्रमाणे पुण्य तथा पाप फळ थकी न्निन्न नथी, एकरूप ले एम सिध्द थयुं, अने निश्चयथी चिदानंद स्वरूप आत्मा ते पुण्य पापथी न्निन्न ले ए पण सिद्ध थयुं. जेम वादळानुं आवरण नाश पामवाथी सूर्यनो उष्ण उद्योत प्रकाशे ले, तेम कर्मना आवरणनो नाश थवाथी आ-

त्मानुं चिदानंद स्वरूप तुरीय (चोथी) दशामां स्पष्ट प्रकाशमान थाय छे. अर्थात् ते आत्मस्वरूप अयोगी गुणस्थाने सर्व कर्मनो क्षय थवाथी उज्जागृता नामनी तुरीय दशामां प्राप्त थाय छे. वळी कर्मनो बंध रागद्वेषथी थाय छे, जेम चमकपाषाणना सन्निधिपणाथी लोढुं पोतानी क्रिया करे छे, अर्थात् ते पाषाण लोढाने खेंचे छे, एटले लोह आवीने तेने मळी जाय छे; तेम आत्मानी पासे राग द्वेष रह्या होय तो सर्व प्रकारनां कर्म आकर्षण पामीने आत्मानी साथे मळी जाय छे. जेम रक्त तथा कृष्ण पुष्पना संसर्गथी शुद्ध स्फाटिक मणि रक्त तथा कृष्ण थइ जाय छे, तेम पुण्य तथा पापना संसर्गथी आत्मा पण रागी तथा द्वेषी थाय छे. परमात्माना पुण्य पाप रहित शुद्ध स्वरूपनुं चिंतन करवुं, तेज तेनुं ध्यान, तेज तेनी स्तुति अने तेज तेनी भक्ति कहेली छे. भगवंतना शरीरना रूप लावण्यनुं वर्णन अने समवसरणमां रहेला त्रण किल्ला, छत्र, चामर अने ध्वजा विगेरे प्रातिहार्यादिकनुं वर्णन जे वीतराग जिनेन्द्रना संबंधमां करेलुं छे ते वास्तविक तेमना गुणनुं वर्णन नथी, ते तो मात्र व्यवहारथी स्तुति करेली छे; परंतु श्री जिनेन्द्रमां रहेला ज्ञानादि रत्नत्रयनुं जे वर्णन करवुं, तेज तेमनी वास्तविक स्तुति छे. तत्त्वथी निर्विकल्प तथा पुण्य पाप रहित एवा आत्मतत्त्वनुं निरंतर ध्यान करवुं, ते शुद्ध नयनी स्थिति छे.

आश्रव अने संवर ते आत्म विज्ञाननुं लक्षण नथी, अर्थात् आश्रव अने संवर कांइ आत्माने होता नथी. कर्म पुद्गलने ग्रहण करवा ते आश्रव कहेवाय छे, अने ते पुद्गलोनो निरोध करवो ते संवर कहेवाय छे. आत्मा जे जे भावे करीने कर्म पुद्गलोने ग्रहण करे छे ते ते मिथ्यात्व, अविरति, कषाय अने योग रूप आश्रव कहेवाय छे; अने बार भावना, दश प्रकारनो यतिधर्म, पांच प्रकारना चारित्र तथा बावीश परीषह सहन करवा विगेरे जे आश्रवनो नाश करनारा भावो छे ते आत्माने संबंधे भाव संवर कहेवाय छे. आश्रवनो निरोध करनार संवरना सत्तावन भेद छे. आश्रवनो रोध करनार जे क्रिया ते पण आत्मा नथी, केमके आत्मा तो पोताना भिन्न आशये करीने अन्यनी अपेक्षा राखतो नथी, ते तो सर्वदा पोतेज समर्थ छे. हिंसा, अहिंसादिक जे पर प्राणीना पर्यायो छे ते निमित्त मात्रज छे, पण आत्म फळना हेतु नथी. अर्थात् पर जीवनुं हिंसन करवुं ते हिंसा अने तेनुं रक्षण करवुं ते अहिंसा कहेवाय छे. इत्यादि हिंसा अहिंसादिक पर प्राणीना पर्यायो छे, तेथी परजीवनी हिंसा अहिंसा करवाना समये तेमां परनी अपेक्षा आवे छे

माटे ते आत्माना चिद्रूपने प्रगट करवामां कारणभूत नथी. आत्म स्वरूप प्रगट करवामां तो आत्मा पोतेज समर्थ छे, अन्यनी अपेक्षा करवी ते तेनो धर्म नथी, परंतु ते हिंसा अहिंसादिक निमित्तभूत छे तेथी तेनो सर्वथा निषेध कर्यो नथी.

व्यवहार नयमांज विमूढ–तेमांज मग्न रहेता जीवो आत्म स्वरूप प्रगट करवामां ते हिंसादिकनेज हेतु माने छे. तेथी तेओनुं चित्त बाह्य क्रिया करवामांज रक्त रहे छे, एटले तेओ तेना गूढ तत्त्वने जोइ शकता नथी. निश्चय पक्षवाळा तो शुभाशुभना कारणरूप ते हिंसादिकने हेतु रूपे कोइवार अंगीकार करे छे, अने कोइ वखत अंगीकार नथी पण करता. केमके जेटला आश्रवो कहेला छे तेटलाज परिश्रवो कहेला छे. अर्थात् जेटला बाधकनां कारणो छे, ते सर्वे कोइ वखत साधकपणे–संवरपणे परिणाम पामे छे अने कदापि अन्यथा पण परिणाम पामे छे; तेथी बाह्य हेतुमां कोइ पण जातनो नियम छेज नहीं. पण निश्चे आत्मा पोतेज भावना विचित्रपणाथी आश्रव संवररूप छे. व्यवहारकुशळ पुरुषो शास्त्र तथा गुरुना विनयने अने आवश्यकादिक क्रियाओने संवरना अंग रूप कहे छे. वळी तेओ प्रशस्त रागवाळा चारित्रादिक गुणोने विषे पण शुभ आश्रवनो आरोप करे छे अने तेना फळमां भेद कहे छे. आ प्रमाणे अशुध्ध नयने आधारे आश्रव अने संवरनो भेद छे, पण ते बन्ने संसारनुं कारण होवाथी शुध्ध नयमां तेवो भेद नथी, शुध्ध नये तो संसारी ने सिध्ध बंने सरखा छे.

कर्मनो नाश ए निर्जरा कहेवाय छे ते पण आत्मा नथी, कर्मनो पर्याय छे; पण जे भावे करीने कर्म निर्जराय छे, ते भाववस्तु आत्माज छे. जे शुद्ध ज्ञानथी युक्त छे, आत्मानी शक्तिथी उत्पन्न थयेलुं छे अने चित्तवृत्तिनो निरोध करनार छे ते तप कहेवाय छे. तेना बार भेद छे. जेमां कषायोनो निरोध थतो होय अने जेमां आत्मतत्त्वनुं अने जिनेश्वरनुं ध्यान थतुं होय ते तप शुद्ध जाणवुं; बाकी सर्व लंघन (लांघण) जाणवुं; केमके भुखे रहेवुं तथा देहने कृश करवो, ए कांइ तपनुं लक्षण नथी, पण तितिक्षा (परीषह सहन करवो ते), ब्रह्म गुप्ति, समिति विगेरे स्थाननुं जे ज्ञान ते तपना शरीररूप छे. 'कर्मने तपावनारुं जे ज्ञान तेज तप छे' एम जे पुरुष जाणतो नथी, ते अंतःकरण जेनुं हणायेलुं छे एवो पुरुष विपुळ निर्जरा शी रीते पामे? मुनिवरो ज्ञानयोगनेज शुध्ध तप कहे छे, अने तेवा तपथीज निकाचित कर्मनो पण क्षय थइ शके छे. केमके सम्यक्त्व प्राप्त थाय ते वखते अपूर्व करण अने शुध्ध श्रेणी प्राप्त थाय छे, ते वखते अवश्य पूर्व कर्मनो स्थितिक्षय थाय छे. तेथी करीने

ज्ञानमय शुद्ध तपस्वीज भाव निर्जरा करे छे; शुद्ध निश्चय नयथी जोतां तो सदा शुद्ध एवा तपस्वीने ते भाव निर्जरा पण कांइज नथी.

कर्म अने आत्मानो संश्लेश थवो ए द्रव्यबंध कहेवाय छे. ते द्रव्यबंधना चार प्रकार छे, अने ते बंधना हेतुरूप आत्माना अध्यवसायने भावबंध कहेवाय छे. जेम सर्प पोताना देहथीज पोताना देहने वींटे छे, तेज प्रमाणे ते ते भावथी परिणाम पामेलो आत्मा पोताना आत्माए करीनेज आत्माने बांधे छे. जेम शंखनो वर्ण श्वेत छतां नेत्रव्याधिना दोषथी[1] ते शंख पीळो मालम पडे छे. तेज प्रमाणे शास्त्रनुं ज्ञान छतां मिथ्याबुद्धिना संस्कारथी जीवने बंधनी बुद्धि थाय छे. जे पुरुषो सांभळीने, मानीने तथा वारंवार स्मरण करीने तत्त्वनो साक्षात् अनुभव करे छे तेओने बंधनी बुद्धि रहेती नथी, तेनो आत्मा बंधरहित प्रकाश पामे छे.

कर्मद्रव्यनो जे क्षय थवो ते द्रव्यमोक्ष कहेवाय छे. ते आत्मानुं लक्षण नथी; अने ते कर्मद्रव्यनो क्षय करवामां हेतुभूत जे रत्नत्रयीमय आत्मा ते भावमोक्ष कहेवाय छे. ते आत्मानुं लक्षण छे. ज्यारे ज्ञान, दर्शन अने चारित्रे करीने आत्मा एकत्वने पामे छे, त्यारे सर्व कर्मो जाणे कोप पाम्या होय तेम तत्काळ तेनाथी दूर जतां रहे छे. आथी करीने भिन्न लिंग धारण करनाराओ पण भावलिंगथी मोक्ष पामे छे, ए सिद्ध थाय छे. तेथी मनस्वी पुरुषे कदाग्रह मूकीने ते भावलिंगनी भावना करवी. आ उपरथी एवुं सिद्ध थाय छे के आत्माने बद्ध अने मुक्तनी व्यवस्था अशुद्ध नयने आधारेज घटे छे, पण शुद्ध नयने आधारे तो आत्माने बंध के मोक्ष कांइ पण घटतुं नथी.

आ प्रमाणे अन्वय अने व्यतिरेकथी आत्म तत्त्वनो निश्चय करेलो छे. एज प्रमाणे पंडिते नवे तत्त्वोथी आत्मतत्त्वनो निश्चय करवो. आ सूक्ष्मनयने आश्रय करनारुं गुह्यथी पण अति गुह्य तत्त्व कोइ अल्प बुद्धिवाळाने आपवुं नहीं. केमके अल्प बुद्धिवाळाने आ तत्त्व विडंबना करनारुंज थाय छे, अर्थात् तेओ अध्यात्म तत्त्वने दूषणज पमाडे छे. जेम क्षुधातुर थयेला दुर्बळ माणसने चक्रवर्तीनुं भोजन अहित करनारुं थाय छे, तेम अल्प बुद्धिवाळा माणसने आ अध्यात्म तत्त्व अहित करनारुंज थाय छे. जेम अशुद्ध मंत्रनो पाठ करवाथी सर्पनो मणि लेवानी इच्छा उलटी अनर्थ

१ नेत्रमां कमळा नामनो रोग थाय छे त्यारे सर्व वस्तु पीळी लागे छे.

करनार थाय छे, तेम लेश मात्र ज्ञानथी [1]दुर्विदग्ध थयेला कुपंडितोने आ अध्यात्म तत्त्व अनर्थकारीज छे. केमके तेओ परमार्थथी वस्तुतत्त्व जाणी शकता नथी.

वळी हे भव्य कुमारपाळ राजा! सर्व नयो पोताना एकांत पक्षनोज आधार राखीने स्याद्वादने दूषित करे छे, पण जिनेन्द्रनी वाणी तो सर्व नयमय छे. कह्युं छे के—

> बौद्धानामृजुसूत्रतो मतमभूद्वेदांतिनां संग्रहात्
> सांख्यानां तत एव नैगमनयाद्योगश्च वैशेषिकः ।
> शब्दब्रह्मविदोऽपि शब्दनयतः सर्वैर्नयैर्गुंफिता
> जैनी दृष्टिरितीह सारतरता प्रत्यक्षमुद्वीक्ष्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" बौद्धनो मत ऋजुसूत्र नयथी थयेलो छे. वेदांतिओनो मत संग्रह नयथी थयेलो छे, सांख्यनो योगरूपी मत नैगम नयथी थयेलो छे, वैशेषिक एटले नैयायिकनो मत पण ते नैगम नयथीज थयेलो छे, अने शब्द ब्रह्म ज्ञानीनो मत शब्द नयथी थयेलो छे; पण जिनेंद्रनी दृष्टि तो सर्व नयथी गुंफित थयेली छे, तेथी तेमां अत्यंत सारता प्रत्यक्षज जणाय छे."

आ प्रमाणे गुरुना मुखकमळथी आप्त वाक्यो सांभळीने कुमारपाळ राजा निःशंक थया अने जैन धर्ममां दृढ अनुरागी थया.

" सर्व तत्त्वथी भिन्न अने आत्मतत्त्वमां लीन थयेलुं एवुं गुरुए कहेलुं अध्यात्म तत्त्वनुं रहस्य सांभळीने परमार्हत् कुमारपाळ राजा संकल्पविकल्पथी रहित ज्ञानव्याप्त थइ धर्मने विषे स्थिर थया."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
पञ्चसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७५ ॥

---

१ दुष्ट पंडित.

व्याख्यान २७६ मुं.

साधर्मीवात्सल्य नामना सातमा दर्शनाचार विषे.

जिनैः समानधर्माणः, साधर्मिका उदाहृताः ।
द्विधापि तेषां वात्सल्यं, कार्यं तदिति सप्तमः ॥१॥
समानधार्मिकान् वीक्ष्य, वात्सल्यं स्नेहनिर्भरम् ।
मात्रादिस्वजनादिभ्योऽप्यधिकं क्रियते मुदा ॥२॥

भावार्थ—"श्री जिनेश्वरे समान धर्मवाळाने साधर्मिक कहेला छे. ते साधर्मिकनुं द्रव्य अने भाव ए बंने प्रकारे वात्सल्य करवुं ते वात्सल्य नामनो सातमो दर्शनाचार कहेवाय छे (१). समान धर्मवाळाने जोइने माता पिता विगेरे स्वजनो करतां पण अधिक, गाढ स्नेह पूर्वक हर्षथी तेमनुं वात्सल्य करवुं (२).

आ बे श्लोकनुं तात्पर्य एवुं छे के समान धर्मवाळा ते साधर्मिक कहेवाय छे. तेमां प्रवचन अने लिंग ए बन्नेवडे साधु साध्वी तथा केवळ प्रवचनवडे श्रावक श्राविका साधर्मिक कहेवाय छे. तेमां साधु साध्वीए आचार्य, ग्लान, प्राघुर्णिक (प्राहुणामुनि), तपस्वी, बाल, वृद्ध, नवदीक्षित शिष्य विगेरेनुं विशेष करीने वात्सल्य करवुं, तेमज पुष्टालंबनादि अपेक्षाए श्रावक श्राविकानुं पण सर्व शक्तिवडे द्रव्य भाव बंने प्रकारनुं वात्सल्य तेनो उपकारादि करवावडे करवुं, अने श्रावके श्रावक श्राविकानुं कुमारपाळ राजानी जेम योग्य वात्सल्य करवुं.

कुमारपाळ राजानुं दृष्टान्त.

श्री पाटणमां परमश्राद्ध श्री कुमारपाळ राजा ज्यारे स्नात्रपूजा तथा पोषध विगेरे धर्मकार्य करता हता त्यारे एक हजार ने आठसो श्रेष्ठीओ तेनी सहायमां रहेता हता. तेओने राजाए सुखी करेला हता. श्रावक पासेथी दर वर्षे आवतो बोंतेर लाख रुपीयानो कर माफ करेलो हतो, तेमज नबळी स्थितिमां आवी पडेलो कोइ पण साधर्मिक राजाने घेर जतो तो तेने राजा एक हजार दीनार आपता हता. ए प्रमाणे करवामां कुल मळीने एक वर्षे एक करोड रुपीयानो व्यय थतो हतो, तेवी रीते चौद वर्षमां चौद करोड द्रव्यनो व्यय कर्यो. एकदा कोइ महेश्वरी (मेसरी) वाणीयाए दाणचोरी करी, ते दाण लेनार अधिकारीना जाणवामां आव्युं, तेथी ते

वणिक्ने दोरडायी बांधीने मार मारतां राजानी पासे लइ गया. ते वणिक्ने बीजो कोइ जीवितनो उपाय नहीं सूझवाथी अवसर जाणीने तेणे, श्रावको जिनेश्वरनी पूजा समये उदर, उरस्थळ, कंठ अने कपाळ ए चार स्थाने जेवां तिलको करे छे तेवां केसरमिश्रित चंदननां चार तिलको राजा पासे जती वखत करी लीधां. पछी राजसेवकोए राजा प्रत्ये कह्युं के "हे पृथ्वीपति! आ वणिके आपनी आज्ञानुं उल्लंघन करीने दाणचोरी करी छे, तेने शो दंड करवो?" ते सांभळीने राजाए भयथी कंपता एवा ते वणिक्नी सामुं जोयुं, तो तेना कपाळमां तिलक जोइने राजाए विचार्युं के "खरेखर आ तो श्री वीतरागनी भक्ति करनारो श्राद्ध जणाय छे, अने श्राद्धनो कर लेवानुं तो मारे प्रत्याख्यान छे, माटे आ निरपराधी छे." एम विचारीने राजाए तेने बंधनथी मुक्त कराव्यो. ते जोइने राजसेवको बोल्या के "हे स्वामी! आ श्रावक नथी, आ तो अभक्ष्यादिकनुं भक्षण करनार महेश्वरी धर्ममां आसक्त छे, पण आजे कपटथी उत्तरासण तथा कपाळमां तिलक विगेरे करीने खोटो श्रावकनो वेष धारीने अहीं आवेलो छे." राजाए कह्युं के "ए वणिक् तर्जना करवा योग्य नथी. ते धन्य अने कृतपुण्य छे, नहीं तो तेना भालमां तिलक जोइने मारा मनमां 'आ श्री जिनेश्वरनो भक्त छे' एम केम आवत? माटे में तेने मुक्त कर्यो छे, सुखेथी तेने पोताने घेर जवा द्यो." पछी ते महेश्वरी वाणीयो पण श्रावकना वेषनी प्रशंसा करतो जैन राजाने नमीने पोताने घेर गयो. आ हकीकत उपर कह्युं छे के—

साधर्मिकस्वरूपं यत्, व्यलीकमपि भूभृता ।
सन्मानितं सभायां तत्, तर्हि सत्यस्य का कथा ॥१॥

भावार्थ—"असत्य एवा साधर्मिकना स्वरूपने पण राजाए सभामां मान आप्युं, तो साधर्मिकना सत्य स्वरूपने मान आपे तेमां तो शुं कहेवुं!"

आ दृष्टांत सांभळीने सर्व शक्तिथी अवश्य साधर्मिकनुं वात्सल्य करवुं.

पूर्वे उदायि राजाए पण चंडप्रद्योत राजाने तेना कपाळमां "आ दासीनो पति छे" एवा अक्षरो लखीने कारागृहमां नांख्यो हतो. परंतु पछी सेवकना मुखथी तेने साधर्मिक जाणीने तरत ज तेनुं बहुमान कर्युं हतुं. तेथी साधर्मिकनुं स्वजनथी पण अधिक सन्मान करवुं. कह्युं छे के—

सुहि सयणमाइआणं, उवयरणं भवपबंधवुड्ढिकरं ।

जिनधम्मपवन्नाणं, तं चिय जवभंगमुवणेइ ॥ १ ॥

जावार्थ--" मित्र स्वजनादिकनुं वहुमानादि करवाथी जवपरंपरा वृध्धि पामे बे, अने जिन धर्ममां प्रवर्तता साधर्मिकनुं सेवन करवाथी ते जवपरंपरानो नाश थाय छे."

अहीं साधुए साधर्मिकनुं वात्सल्य करवाना संबंधमां श्री वज्रस्वामीनुं दृष्टांत एवुं बे के—महा उग्र दुष्काळने लीधे सर्व देशना मार्गो ज्यारे बंध पमी गया हता त्यारे श्रीवज्रस्वामी पटविद्याए करीने सकळ संघने सुकाळवाळी सुजिक्षापुरीमां लइ गया हता. तेवीज रीते विष्णुकुमार विगेरेनां दृष्टान्तो पण वांचनारे अन्य स्थळथी जाणी लेवां.

कोइ पतिव्रता श्राविका पण पोताना पतिनुं लोकोत्तर वात्सल्य करी शके छे तेनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

पतिव्रता स्त्रीए करेलुं पतिवात्सल्य.

पृथ्वीपुर नामना नगरमां एक सुजड नामे वार व्रतधारी श्रावक रहेतो हतो. ते एकदा वेपारने माटे राजपुर नगरे गयो. ते नगरमां एक जिनदास नामे श्रावक रहेतो हतो. तेणे पोतानी कन्याने साधर्मिक विना बीजा कोइने नहीं आपवानो नियम ग्रहण करेलो हतो. अन्यदा ते सुजडने जोजन, शयन, आसन, [1]जल्पन, [2]चंक्रमण, वार्तालाप विगेरे चेष्टाओवमे साधर्मिक जाणीने तेणे पोतानी पुत्री मोटा उत्सवथी परणावी. ते सुशिळ पुत्री घरनुं कामकाज करवा उपरांत प्रजुना मार्गने जाणनारी तेमज निर्मळ अन्तःकरणवाळी होवाथी निरंतर पतिनी जक्ति पण करती हती. एकदा तेना पति सुजडे अति स्वरूपवती अने उद्भट शृंगार धारण करेली पोतानी स्त्रीनी सखीने जोइ. तेने जोवाथी सुजडने तेणीना उपर गाढ राग उत्पन्न थयो; परंतु लज्जादिकथी कांइ पण बोली शक्यो नहीं. ते स्त्रीने मेळववानी चिन्ताथी तेने प्रतिदिन दुर्बळ थतो जोइने तेनी पत्नीए तेने आग्रह पूर्वक दुर्बळ थवानुं कारण पूछ्युं, एटले महा कष्टे सुजद्रे ते कारण जणाव्युं. ते स्त्री अति चतुर होवाथी तेणे तेने प्रतिबोध करवानो बीजो कोइ उपाय नहीं जाणीने कह्युं के " हे स्वामी ! आवा कार्यने माटे तमे आटलो बधो खेद केम पाम्या ? मने प्रथमथीज केम कह्युं नहीं ? केमके ते मारी सखी मारे आधीन ज बे, तेने हुं जलदी लावी आपीश." पछी अन्य दिवसे तेणे पोताना पतिने

१ बोलवुं. २ चालवुं.

कह्युं के " ते मारी सखीए तमारी इच्छा पूर्ण करवानुं हर्षथी अंगीकार कर्युं छे, तेथी ते आज सांजे अहीं आवशे. परंतु ते अति लज्जाळु होवाथी शयनगृहमां प्रवेश करशे के तरतज दीवो बुझवी नाखशे." सुभद्र बोल्यो के " भले तेम करे, तेमां शी हरकत छे ?" पछी ते सुभद्रनी स्त्रीए विचार्युं के " खरेखर विषयरूपी महा प्रेतना आवेशवाळो जीव दीनपणुं धारण करवुं, बगासां खावां, निःश्वास मूकवो, तथा परस्त्री संबंधी विचारमांज तल्लिन थवुं विगेरे शुं शुं चापल्य करतो नथी ? अर्थात् सर्व चापल्य करे छे. अहो ! अनंत सुखने आपनार एवा व्रतनी पण उपेक्षा करे छे. ज्यारे आवो शुद्ध अने सुशीळ माणस पण विषयमांज पराधीन थइ गयो तो बीजानी शी वात ? माटे विषयदशाने अने अन्यनी आशाने धिक्कार छे; परंतु आ मारो स्वामी ग्रहण करेला व्रतनो भंग करवाथी नरकादिक दुःखनुं भाजन थशे माटे हुंज मारी सखीनुं रूप धारण करीने तेनुं वांछित पूर्ण करुं. जो के तेम करवाथी भावथी तो तेना व्रतनो भंग थशे, पण द्रव्यथी भंग नहीं थाय. तो एक पक्षनुं पालन करवाथी पण कोइ वखत लज्जावान पुरुषने गुणकारी थइ शके छे." आ प्रमाणे भविष्यमां विविध प्रकारना लाभ थवानो विचार करीने तेणे पोतानी सखी पासेथी कांइ मिष करीने पोताना पतिए जोयेलां तेनां उत्तम वस्त्रो तथा अलंकारो मागी लीधां. पछी गुटिकाना प्रयोगथी सखीना जेवोज स्वर तथा स्वरूपादि करीने तेज प्रमाणे वस्त्र तथा आभूषणो धारण करी ते सखीनी जेवाज सुंदर विलास (हाव भाव विगेरे) करती ते सुभद्रनी ज पत्नीए (पोतेज) उत्तम सुगंधी पुष्प, तांबूल, चंदन, अगरु, कर्पूर, कस्तुरी विगेरे समग्र भोगनी सामग्रीवडे तथा निर्मळ दीपकवडे अलंकृत करेला सुंदर शयनगृहमां हर्षथी प्रवेश कर्यो. ते वखते गंगा नदीना पुलिननी स्पर्धा करनारा पलंगपर उत्कंठाथी विकस्वर दृष्टि धारण करीने बेठेला सुभद्रे नेत्र अने मननी जाणे अमृतमय दृष्टिने धारण करती होय तेवी तेने जोइ. तरतज तेणे दीपकने बुझवी दीधो. पछी ते पलंग उपर गइ, अने विविध प्रकारनी गोष्ठी करवा पूर्वक आनंदथी ते सुभद्रे तेनी साथे क्रीडा करी. प्रातःकाळे तेना गया पछी सुभद्रने विचार थयो के—

सयलसुरासुरपणमिय, चलणेहिं जिणेहिं जं हियं भणियं ।
तं परभवसंबलयं, अहह मए हारियं सीलं ॥ १ ॥

भावार्थ—" सकल सुर अने असुरोए जेना चरणकमळने प्रणाम कर्यो छे

एवा जिनेश्वरोए जे हितकारी कह्युं छे ते परजवमां पाथेय समान शील में आजे गुमाव्युं. "

मनस्यन्यद्वचस्यन्यत्, क्रियायामन्यदेव च ।

यस्यास्तामपि लोलाक्षीं, साध्वीं वेत्ति ममत्ववान् ॥१॥

जावार्थ—" जे स्त्रीना मनमां कांइक होय छे, वचनमां कांइक होय छे, अने क्रियामां तेथी पण कांइ बीजुंज होय छे एवी चपल नेत्रवाळी स्त्रीने ममतावाळो पुरुष श्रेष्ठ माने छे."

चर्माच्छादितमांसास्थि, विण्मूत्रपिठरीष्वपि ।

वनितासु प्रियत्वं यत्, तन्ममत्वविजृंभितम् ॥ २ ॥

जावार्थ—" जेनां मांस तथा अस्थि चर्मथी आच्छादन करेलां छे एवी विष्टा अने मूत्रनी हांमी समान स्त्रीओमां जे प्रियत्व छे ते मात्र ममताथीज उत्पन्न थयेलुं छे. "

गणयन्ति जनुः समर्थवत्, सुरतोल्लाससुखेन जोगिनः ॥

मदनाहिविषोग्रमूर्छनामयतुल्यं तु तदेव योगिनः ॥ ३ ॥

जावार्थ—" कामी पुरुषो जे जोगविलासना सुखथी पोतानो जन्म सफळ माने छे तेज सुखने योगी पुरुषो कामदेवरूपी सर्पना विषथी थयेली उग्र मूर्छारूप महा व्याधि समान माने छे. "

दरेक पदार्थमां प्रिय अने अप्रियपणुं स्वमनोकल्पितज होय छे. खरेखरी रीते तो कोइपण वस्तु इष्ट अनिष्ट छेज नहीं. केमके समग्र विकल्पनो उपरम थवाथी मतिनो जेद रहेतोज नथी. कह्युं छे के—

समतापरिपाके स्याद्विषयग्रहशून्यता ।

यया विशदयोगानां, वासीचन्दनतुल्यता ॥ १ ॥

जावार्थ—" समता गुण परिपक्व थाय, त्यारे विषयग्रह शून्य थइ जाय छे (विषयेच्छा नाश पामे छे); अने तेथी निर्मळ योगवाळा ते आत्माने वासी (फरसी) अने चंदनमां तुल्यता थइ जाय छे, अर्थात् ते बन्नेमां जेद जणातो नथी. "

कह्युं के " ते मारी सखीए तमारी इच्छा पूर्ण करवानुं हर्षथी अंगीकार कर्युं छे, तेथी ते आज सांजे अहीं आवशे. परंतु ते अति लज्जाळु होवाथी शयनगृहमां प्रवेश करशे के तरतज दीवो बुझवी नाखशे." सुभद्र बोल्यो के " भले तेम करे, तेमां शी हरकत छे ? " पछी ते सुभद्रनी स्त्रीए विचार्युं के " खरेखर विषयरूपी महा प्रेतना आवेशवाळो जीव दीनपणुं धारण करवुं, बगासां खावां, निःश्वास मूकवो, तथा परस्त्री संबंधी विचारमांज तल्लिन थवुं विगेरे शुं शुं चापल्य करतो नथी ? अर्थात् सर्व चापल्य करे छे. अहो ! अनंत सुखने आपनार एवा व्रतनी पण उपेक्षा करे छे. ज्यारे आवो सुज्ञ अने सुशीळ माणस पण विषयमांज पराधीन थइ गयो तो बीजानी शी वात ? माटे विषयदशाने अने अन्यनी आशाने धिक्कार छे; परंतु आ मारो स्वामी ग्रहण करेला व्रतनो भंग करवाथी नरकादिक दुःखनुं भाजन थशे माटे हुंज मारी सखीनुं रूप धारण करीने तेनुं वांछित पूर्ण करुं. जो के तेम करवाथी भावथी तो तेना व्रतनो भंग थशे, पण द्रव्यथी भंग नहीं थाय. तो एक पक्षनुं पालन करवाथी पण कोइ वखत लज्जावान पुरुषने गुणकारी थइ शके छे." आ प्रमाणे भविष्यमां विविध प्रकारना लाभ थवानो विचार करीने तेणे पोतानी सखी पासेथी कांइ मिष करीने पोताना पतिए जोयेलां तेनां उत्तम वस्त्रो तथा अलंकारो मागी लीधां. पछी गुटिकाना प्रयोगथी सखीना जेवोज स्वर तथा स्वरूपादि करीने तेज प्रमाणे वस्त्र तथा आभूषणो धारण करी ते सखीनी जेवाज सुंदर विलास (हाव भाव विगेरे) करती ते सुभद्रनीज पत्नीए (पोतेज) उत्तम सुगंधी पुष्प, तांबूल, चंदन, अगरु, कर्पूर, कस्तुरी विगेरे समग्र भोगनी सामग्रीवडे तथा निर्मळ दीपकवडे अलंकृत करेला सुंदर शयनगृहमां हर्षथी प्रवेश कर्यो. ते वखते गंगा नदीना पुलिननी स्पर्धा करनारा पलंगपर उत्कंठाथी विकस्वर दृष्टि धारण करीने बेठेला सुभद्रे नेत्र अने मननी जाणे अमृतमय दृष्टिने धारण करती होय तेवी तेने जोइ. तरतज तेणे दीपकने बुझवी दीधो. पछी ते पलंग उपर गइ, अने विविध प्रकारनी गोष्ठी करवा पूर्वक आनंदथी ते सुभद्रे तेनी साथे क्रीडा करी. प्रातःकाळे तेना गया पछी सुभद्रने विचार थयो के—

सयलसुरासुरपणमिय, चलणेहिं जिणेहिं जं हियं भणियं ।
तं परभवसंबलयं, अहह मए हारियं सीलं ॥ १ ॥

भावार्थ—" सकल सुर अने असुरोए जेना चरणकमळने प्रणाम कर्यो छे

एवा जिनेश्वरोए जे हितकारी कहुं छे ते परजवमां पाथेय समान शील में आजे गुमाव्युं."

मनस्यन्यद्वचस्यन्यत्, क्रियायामन्यदेव च ।

यस्यास्तामपि लोलाक्षीं, साध्वीं वेत्ति ममत्ववान् ॥१॥

जावार्थ—"जे स्त्रीना मनमां कांइक होय छे, वचनमां कांइक होय छे, अने क्रियामां तेथी पण कांइ वीजुंज होय छे एवी चपल नेत्रवाळी स्त्रीने ममतावाळो पुरुष श्रेष्ठ माने छे."

चर्माच्छादितमांसास्थि, विण्मूत्रपिठरीष्वपि ।

वनितासु प्रियत्वं यत्, तन्ममत्वविजृंम्भितम् ॥ २ ॥

जावार्थ—"जेनां मांस तथा अस्थि चर्मथी आच्छादन करेलां छे एवी विष्टा अने मूत्रनी हांमी समान स्त्रीओमां जे प्रियत्व छे ते मात्र ममताथीज उत्पन्न थयेलुं छे."

गणयन्ति जनुः समर्थवत्, सुरतोल्लाससुखेन जोगिनः ॥

मदनाहिविषोग्रमूर्छनामयतुल्यं तु तदेव योगिनः ॥ ३ ॥

जावार्थ—"कामी पुरुषो जे जोगविलासना सुखथी पोतानो जन्म सफळ माने छे तेज सुखने योगी पुरुषो कामदेवरूपी सर्पना विषथी थयेली उग्र मूर्छारूप महाव्याधि समान माने छे."

दरेक पदार्थमां प्रिय अने अप्रियपणुं स्वमनोकल्पितज होय छे. खरेखरी रीते तो कोइपण वस्तु इष्ट अनिष्ट छेज नहीं. केमके समग्र विकल्पनो उपरम थवाथी मतिनो जेद रहेतोज नथी. कहुं छे के—

समतापरिपाके स्याद्विषयग्रहशून्यता ।

यया विशदयोगानां, वासीचन्दनतुल्यता ॥ १ ॥

जावार्थ—"समता गुण परिपक्व थाय, त्यारे विषयग्रह शून्य थइ जाय छे (विषयेच्छा नाश पामे छे); अने तेथी निर्मळ योगवाळा ते आत्माने वासी (फरसी) अने चंदनमां तुल्यता थइ जाय छे, अर्थात् ते बन्नेमां जेद जणातो नथी."

आ प्रमाणे संवेगना वशथी उत्पन्न थयेला पश्चात्ताप रूपी अग्निथी तेनुं अंतःकरण बळवा लाग्युं, अने हमेशां पोतानी पत्नीने जोतांज ते पोतानुं मुख नीचुं करवा लाग्यो. ते जोइने तेनी भार्याए विचार्युं के " आ मारा पति हजु सुधी लज्जा छोडता नथी, तेथी ते जलदीथी धर्म पामशे; सर्वथा निर्लज्ज अने वाचाळ माणस धर्मने अयोग्य होय छे, पण आ मारा स्वामी तेवा नथी. " पछी ते स्त्री हमेशां सामायिकने वखते तथा पठन पाठनने वखते सर्व स्थाने व्रत भंग करवानुं फळ वारंवार कहेवा लागी. " व्रत ग्रहण करवुं सहेलुं छे, पण तेनुं पालन करवुं दुष्कर छे. तेना चार[१] भांगा थाय छे. " इत्यादि वचनो सांभळीने सुभद्र पोतानी स्त्रीना स्वभावनी स्तुति करवा लाग्यो, पण तेना मनमां व्रतभंगनुं दुःख शल्यनी जेम निरंतर खटकतुं हतुं; तेथी ते प्रतिदिन अधिक अधिक दुर्बळ थवा लाग्यो. ते जोइने तेनी पत्नीए आग्रहथी दुर्बळ थवानुं कारण पूछ्युं, त्यारे ते निःश्वास नांखीने खेद पूर्वक बोल्यो के "हे प्रिया ! जे मोक्षसुखना हेतुभूत व्रत में चिरकाळथी पालन कर्युं हतुं ते व्रतनो क्षणिक स्थितिवाळा मनकल्पित सुखने माटे भंग करीने मूर्ख पण न करे तेवुं अकार्य में कर्युं छे तेनी चिंताथी हुं दुर्बळ थाउं छुं. हवे मने भ्रष्ट थयेलाने एवुं प्रायश्चित्त कोण आपशे ? मारी भावनानो वृत्तांत तो कुंभारने घेर जइने मिथ्या दुष्कृत आपनार क्षुल्लक मुनिना जेवो थयो छे. जीवोने हणीने पछी ' में मोटुं दुष्कृत कर्युं, में मोटुं दुष्कृत कर्युं ' एम कहेवुं ने ध्यान वैराग्य धारण करवा ते व्यर्थ अने वंध्य छे. " आ प्रमाणे शुभ परिणामथी बोलता तेने अंतःकरणथी शुद्ध जाणीने तथा " स्त्रीनी सन्मुख मात्र दाक्षिण्यता साचववा माटे आ बहारनो देखाव नथी " एवी संपूर्ण परीक्षा करीने तेमज ' संवेगने वश थयेलुं तेनुं चित्त इन्द्रनी अप्सराओथी पण पराभव पामे तेवुं नथी ' एवो निश्चय करीने तेणे निशानी सहित सर्व हेवाल सत्य रीते कही आप्यो. तेथी विश्वास पामीने ते सुभद्र शांत थइ विचारवा लाग्यो के "लोकोत्तर धर्ममां कुशळ एवी आ मारी भार्याने धन्य छे के ' जेणे मारो स्वामी परस्त्रीना संगथी नरक रूपी सागरमां न पडो ' एम धारीने मने तेमांथी उगार्यो. मने अन्तःकरणथी मारी चिंता धरावनारी सुशील स्त्री मळी छे. तेनी स्थिरता अने गांभीर्य वा-

---

१ व्रत ग्रहण करवुं सहेलुं ने पाळवुं दुष्कर, ग्रहण करवुं मुश्केल पण पाळवुं सुकर, ग्रहण करवुं पण सहेलुं अने पाळवुं पण सहेलुं अने ग्रहण करवुं पण मुश्केल ने पाळवुं पण मुश्केल, आ प्रमाणे चोभंगी थाय छे. तेमां त्रीजो भांगो श्रेष्ठ छे, चोथो कनिष्ट छे.

णीना विषयनी बहार छे. अर्थात् वाणीथी कही शकाय तेवुं नथी." इत्यादि स्त्री-नी प्रशंसा करीने तेनीज आज्ञाथी गुरु पासे जइ परस्त्रीगमननुं सर्वथा प्रत्याख्यान करीने करेला पापनी आलोचना करी. पछी अनुक्रमे पोताना पुत्रने घरनो कार्यभार सोंपीने चारित्र तपादिवडे ते स्त्रीपुरुष अल्पकाळेज इच्छित कार्य साधी मोक्षसुखने पाम्या.

"आ प्रमाणे साधर्मिक वात्सल्यना घणा भेद छे, माटे डाह्या पुरुषो लाभ देखीने तेमां प्रवर्ते छे. आ सातमा दर्शनाचारने पालन करनार पुरुषोए पोतानी सर्व शक्तिथी साधर्मिकनी निरंतर अर्चा करवी, तथा तेनुं बहु मान करवुं."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य षट्सप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७६ ॥

व्याख्यान २७७ मुं.

प्रभावना नामे आठमा दर्शनाचार विषे.

अष्टौ प्रोक्ता निशीथादौ, शासनस्य प्रभावकाः ।
मार्गानुसारिण्या शक्त्या, त एवोद्भासयंति तत् ॥१॥

भावार्थ—"निशीथादिक सूत्रमां शासनना आठ प्रभावक कहेला छे, तेओज मार्गानुसारी शक्तिए करीने शासनने शोभावे छे.

सूत्रमां जे आठ प्रभावक कहेला छे, ते निशीथ सूत्रनी गाथावडे बतावे छे.

अइसेसीड्ढि १ धम्मकहि, २ वाइ ३ आयरिय ४ खवग ५ नेमित्ती ६ ।
विज्जा ७ रायगणसम्मउ अ ८ तित्थपभाविंति ॥ १ ॥

शब्दार्थ—"अतिशयित ऋद्धिवान् १, धर्मकथी २, वादी ३, आचार्य ४, तपस्वी ५, नैमित्तिक ६, विद्यावान् ७ अने राजसमूहमां संमत ८ ए आठ तीर्थ-

ना प्रभावक होय छे."

विस्तरार्थ—जेने "अतिशय" एटले बीजाओथी परम उत्कृष्ट "ऋद्धि" एटले तेजोलेश्या विगेरे लब्धिओ छे, ते अतिशयित ऋद्धि कहेवाय छे. तेने माटे कुंचिक नामना श्रेष्ठीने शिक्षा आपनार मुनिपति मुनिनुं अथवा भावी काळे थनारा सुमंगल मुनिनुं दृष्टांत जाणवुं. ते श्री भगवति सूत्रना पंदरमा शतकमां कहेलुं छे, त्यांथी स्वयमेव जाणी लेवुं.

"धर्मकथी" एटले व्याख्याननी लब्धि जेने होय ते. श्रीनंदिषेण मुनि वेश्याने घेर रह्या हता, तोपण हंमेशां दश दश जीवोने प्रतिबोध पमाडता हता, तेवी रीते बार वर्ष व्यतीत थयां, जेमां त्रेंताळीश हजार ने बसो जार पुरुषो के जेओ कामातुर थइने वेश्याने घेर आवता हता, तेओने धर्मकथावडे प्रतिबोध पमाडीने श्री महावीर स्वामी पासे दीक्षा लेवा माटे मोकल्या हता. हुं तो कर्मना वशथी पतित थयो छुं पण बीजा दश माणसेने दररोज प्रतिबोध पमाड्या विना हुं आहार करीश नहीं." एवो पोते लीधेलो अभिग्रह तेमणे संपूर्ण पाळ्यो हतो. ते प्रतिबोध पामनार मनुष्योमां कोइए पण तेनो प्रत्यक्ष एवो दोष पण ग्रहण कर्यो नहोतो. परंतु उलटा तेओ एवुं विचारता के "अहो ! आ धर्मकथा कहेनार कोइ महा पुरुष लागे छे, के जेणे मोहजाळमां पड्यां छतां पण पोताना गुणोने भस्मीभूत करी नाख्या नथी. काजळनी कोटडीमां रह्या छतां पण पोताना आत्म स्वभावने मलिन थवा देता नथी. तेना आत्माने धन्यवाद घटे छे ! आ जोके कोइ पण कारणे पतित थयेल छे, पण अवश्य अल्प काळमांज आ कार्यथी पाछा ओसरशे. आणे अमारा ज्ञाननेत्रो उघाड्यां, ते बहुज सारुं थयुं. आ महात्मा मोहसागरमां बूड्या छतां न बूड्या जेवाज छे, आवो महात्मा कोइ पण नथी के जेनी आने उपमा आपीए. अथवा तो खरेखर अमारी जेवा पापीओने तारवा माटेज आ वेश्याना घरमां नाव रूप थइने रह्या जणाय छे. बीजो कोइ पण हेतु कल्पनामां आवी शकतो नथी." इत्यादिक विविध प्रकारनां उत्तम वाक्योथी ते धर्मकथा कहेनारनी स्तुति करता हता २.

"वादी" एटले परवादीनो पराजय करनार. तेना पर वृद्धवादी, मल्लवादी, देवसूरि, सिद्धसेन दीवाकर, वादीवेताल श्रीशांतिसूरी विगेरेनां दृष्टांतो प्रभावक पुरुष चरित्रमांथी जाणी लेवां. ३

" आचार्य " एटले गच्छना स्तंभभूत एक हजार वसो ने छत्रु गुणोथी अलंकृत होय ते. तेना पर प्रभव स्वामी, शय्यंभवसूरि विगेरेनां दृष्टांतो जाणवां ४.

" क्षपक " एटले प्रकृष्ट तपस्वी. तेना पर छ हजार वर्ष सुधी छट्ट तप करनार श्री विष्णुकुमार, छ मासी तप करनार ढंढणकुमार, साठ हजार वर्ष सुधी आचाम्ल तप करनार सुंदरी, वर्ष पर्यंत कायोत्सर्गे रहेनार बाहुबली, विषम अभिग्रह धारण करनार बहुदा मुनि,[१] अगियार लाख अेंसी हजार ने पांचसो मास क्षपण करनार नंदन मुनि, सोळ वर्ष सुधी आचाम्ल तप करनार श्री जगचंद्र सूरि तथा गुणरत्न संवत्सर तप करनार स्कंधक ऋषि विगेरेनां दृष्टांतो तपस्वीओना चरित्रवाळा ग्रंथमांथी जाणी लेवां. ५.

" नैमित्तिक " एटले त्रिकाळज्ञानी. आ विषय उपर वराहमेहरने जीतवा माटे निमित्तशास्त्रनी प्ररुपणा करनार श्री भद्रबाहु स्वामीनुं दृष्टांत जाणवुं अथवा दत्तमातुल (मामा) ने सातमे दिवसे मृत्यु कहेनार कालिकाचार्यनुं दृष्टांत जाणवुं. ६

" विद्यावान् " एटले सिद्ध करेल विद्या, मंत्र, यंत्र, बुद्धि, सिद्धि, चूर्ण, अंजन, योग, औषध अने पादलेप विगेरे प्रयोगवाळा जाणवा. तेमां पाडानो वध कराववामां प्रीतिवाळी कंटकेश्वरी देवीने वश करनार श्री हेमचंद्रसूरि मंत्रविद्यावाळा जाणवा, अने श्रीपाळ राजाने श्री सिद्धचक्रनो यंत्र आपनार गुरु मंत्रविद्यावाळा जाणवा. वळी ते उपर त्रीजुं दृष्टांत कहे छे के—कोइ एक नगरमां एक अति रुपवती साध्वीने कोइ राजा पकडीने पोताना महेलमां लइ गयो हतो. तेने छोडी देवा माटे श्री संघे राजाने घणो समजाव्यो, पण तेणे छोडी नहीं. पछी एक मंत्रसिद्ध मुनिए राजाना आंगणामां जइ छुटा पडेला थांभलाओ मंत्रीने आकाशमां उडाड्या, तेना खडखडाटथी राजमहेलना स्तंभो पण कंपवा लाग्या. तेथी भय पामीने राजाए ते साध्वीने छोडी दीधी.

पाक्षिक सूत्रमां चोथा महा व्रतना आलावामां " रागवडे अथवा द्वेषवडे मैथुन सेववुं नहीं " एम कह्युं छे, ते उपर शिष्ये शंका करी के " हे गुरु ! सर्व पुरुषो रागयुक्त थइनेज विषयो भोगवे छे, पण कोइ द्वेषथी विषय सेवता नथी; तो द्वेष शब्द शामाटे मूक्यो छे ? " तेना जवाबमां गुरु बोल्या के " पाक्षिक सूत्रनी वृत्तिमां तेने

---

१ आ नाम अज्ञात छे.

माटे एक दृष्टांत आप्युं छे के "कोइ एक नगरमां एक तापसी परिव्राजिका रहेती हती. तेणे मंत्रविद्याना बळथी अनेक चमत्कारो बतावीने राजा विगेरे सर्व जनने पोताने वश करी लीधा हता, अने ते सर्व लोको जैन साधुओनी निरंतर निंदा करता हता. एकदा राजाए पोतानी राणी पासे ते तापसीना शीलादिकनी वारंवार प्रशंसा करी; पण राणी जैन साधुना गुणोमां रक्त होवाथी तेणे राजानुं कहेवुं कांइ पण सत्य मान्युं नहीं. अन्यदा राणीए नगरना उद्यानमां पधारेला गुरु पासे जइने तेने कह्युं के "हे पूज्य ! आ गाममां एक तापसी रहे छे तेणे पोताना शीलादिक गुणोए करीने राजा सहित समस्त पौरजनोने पोताने वश करी लीधा छे, तेथी तेओ निरंतर जैन साधुओनी निंदा करे छे, अने जैन साधुओ नगरमां आवे छे तेमने कोइ आहारादिक पण आपतुं नथी. आवी रीते आखुं शहेर मिथ्यात्वथी व्याप्त थइ गयेलुं छे, तेनो जो आप उद्धार करो तो बहु सारुं." ते सांभळीने एक मंत्रविद्याथी सिद्ध थयेला मुनिए कोप करीने ते तापसीनुं शील भंग करवा माटे आकर्षण विद्याथी तेनुं आकर्षण कर्युं. एटले ते तापसी त्यां आवी, अने एकांतमां रहेला ते साधुने जोइने कामदेवनी विह्वळताथी तेनुं शरीर कंपवा लाग्युं, तेथी "मारा कामज्वरनुं औषध करो" ए प्रमाणे दीन वाणी बोलती ते तापसीए पोतेज ते साधुने आलिंगन कर्युं. मुनिए पण तेना महत्वनो भंग करवा माटे ते जैननिंदक परिव्राजिकानी साथे द्वेषथी भोगविलास कर्यो. त्यार पछी ते तापसी त्यांथी नासी गइ. अनुक्रमे तेनुं उदर जलोदरनी जेवुं गर्भथी वृद्धि पाम्युं. तेथी लोकमां तेनी प्रथम जेवी गुणस्तुति थती हती, तेवीज दोषनिंदा थवा लागी. पछी राणीए राजाने कह्युं के "हे प्राणनाथ ! तमारी परिव्राजिकानुं ब्रह्मचर्य जुओ. पापरूपी दंभनो समूह प्रगट थयो. शीलरूप वख्तर धारण करवामां तो जैन मुनिओज समर्थ छे, बीजा नथी." ते सांभळीने राजाए कह्युं के "हे प्रिया ! तुं उतावळी न था. कोइ वखत ते जैन मुनिनुं स्वरूप पण देखाडीश." पछी राजाए पोताना एक सेवकने शीखव्युं के "तुं लावण्यादि गुणयुक्त एवी रूपवती सूर्यकांता नामनी वेश्याने लइने उपवनमां रहेला कामदेवना चैत्यमां रात्रिना आरंभसमये जजे. पछी ते चैत्यमां कांइक धर्मना मिषथी पेला मुनिने लोभ बतावीने लावजे. पछी ते बंनेने तेमां राखी तुं बहार नीकळी जइने बारणा बंध करी मजबूत ताळुं मारजे, अने अंदर एक पल्यंक तथा चुआ चंदन विगेरे अनेक प्रकारनी भोगसामग्री मूकी राखजे." ते सेवके राजाना कह्या प्रमाणे सर्व कर्युं.

पेठा दंभरहित मुनि पण ते चैत्यमां पेठा. पछी बहार नीकळवानो मार्ग नहीं मळवाथी तेमणे विचार्युं के " अहो ! अनाभोग करीने हुं आजे मोहजाळमां सपडायो छुं.-मने आ वेश्याना हावभावनो तो तिल मात्र पण भय नथी. परंतु प्रातःकाळे जैन शासननी अपभ्राजना थशे तेज मात्र मनमां खुंचे छे. " पछी ते वेश्याए तेनी अनेक प्रकारे विडंबना करी, तोपण तेणे पोतानुं धैर्य मूक्युं नहीं. ते मुनिए विचार्युं के " पूर्वे में कारणसर द्वेषथी अकार्य कर्युं हतुं, पण आजे जो रागथी हुं ते अकार्य करुं तो जरुर मारा महाव्रत रूपी गुणनी हानि थाय, माटे यावज्जीव देव गुरु साक्षीए अंगीकार करेला पंच महाव्रतोनुं पालन करवुं तेज योग्य छे. " एम विचारीने तेणे रजोहरण विगेरे सर्व साधुना वेषने दीवाथी सळगावीने भस्मीभूत करी नांख्या अने अध्यात्म रूप अमृतवडे भावलिंग धारण कर्युं. परिणामे लाभ जोइने ते भस्म आखे शरीरे चोपडी. आवी रीते अवधूतनो वेष धारण करी काचवानी जेम इंद्रियो गोपवीने आखी रात्रि ध्यानतत्परपणे निर्गमन करी. पेली वेश्या पोतानुं समग्र पराक्रम बतावीने छेवट थाकी गइ, अने बीजो कोइ उपाय नहीं सूझवाथी ते निद्रावश थइ गइ. प्रातःकाळ थतां राजा पोतानी राणीओ अने अनेक पौरलोको सहित ते उद्यानमां आव्या. सेवके तालुं उघाड्युं, तो अंदरथी " अलख निरंजन जगन्नाथने नमस्कार " ए शब्दने मोटा स्वरथी बोलतो अने शरीरे नग्न, योगधारी, अविकारी, अलमस्त जेवो एक अवधूत योगी के जेना आखा शरीरे भस्म चोळेली हती तेवो बहार नीकळ्यो. तेने जोइने सर्व लोक चमत्कार पाम्या. ते वखते राणीए राजाने कह्युं के " हे स्वामी ! तमारुं कहेवुं असत्य थयुं. आ तो कोइ योगी नीकळ्यो पण जैन साधु तो नथी. " पछी राजाए पोताना सेवकने पूछ्युं के " तें आवुं अवळुं केम कर्युं ? " सेवक बोल्यो—" हे स्वामी ! में तो आपनी आज्ञा प्रमाणेज सर्व कर्युं हतुं, त्यार पछी शुं थयुं ते हुं जाणतो नथी. " त्यारे राजाए वेश्याने रात्रिनुं वृत्तांत पूछ्युं. वेश्या बोली के " हे स्वामी ! हुं शुं कहुं ? हुं तो भोगनिमित्ते मारुं सर्व सामर्थ्य बतावी बतावीने थाकी गइ, पण तेणे तो इंद्रनी अप्सराओथी पण स्खलित न थाय तेवी महा योगशक्ति बतावी. त्रण जगत्मां तेना जेवो कोइ मुनि नथी. " आ प्रमाणे सर्व वृत्तांत जाणीने राजा प्रतिबोध पाम्यो, अने तेणे पोताना चित्तने, वित्तने अने समग्र पुरजनोने जैन धर्ममय कर्या. तेथी जैन साधुओना ज्ञान, ध्यान, निःस्पृहता, त्याग विगेरे गुणो नगरमां माया नहीं, अर्थात् ते ते गुणोनी अत्यंत प्रशंसा थवा लागी. आ

माटे एक दृष्टांत आप्युं छे के " कोइ एक नगरमां एक तापसी परिव्राजिका रहेती हती. तेणे मंत्रविद्याना वळथी अनेक चमत्कारो वतावीने राजा विगेरे सर्व जनने पोताने वश करी लीधा हता, अने ते सर्वे लोको जैन साधुओनी निरंतर निंदा करता हता. एकदा राजाए पोतानी राणी पासे ते तापसीना शीलादिकनी वारंवार प्रशंसा करी; पण राणी जैन साधुना गुणोमां रक्त होवाथी तेणे राजानुं कहेवुं कांइ पण सत्य मान्युं नहीं. अन्यदा राणीए नगरना उद्यानमां पधारेला गुरु पासे जइने तेने कह्युं के " हे पूज्य ! आ गाममां एक तापसी रहे छे तेणे पोताना शीलादिक गुणोए करीने राजा सहित समस्त पौरजनोने पोताने वश करी लीधा छे, तेथी तेओ निरंतर जैन साधुओनी निंदा करे छे, अने जैन साधुओ नगरमां आवे छे तेमने कोइ आहारादिक पण आपतुं नथी. आवी रीते आखुं शहेर मिथ्यात्वथी व्याप्त थइ गयेलुं छे, तेनो जो आप उद्धार करो तो वहु सारुं. " ते सांभळीने एक मंत्रविद्याथी सिद्ध थयेला मुनिए कोप करीने ते तापसीनुं शील भंग करवा माटे आकर्षण विद्याथी तेनुं आकर्षण कर्युं. एटले ते तापसी त्यां आवी, अने एकांतमां रहेला ते साधुने जोइने कामदेवनी विह्वळताथी तेनुं शरीर कंपवा लाग्युं, तेथी " मारा कामज्वरनुं औषध करो " ए प्रमाणे दीन वाणी वोलती ते तापसीए पोतेज ते साधुने आलिंगन कर्युं. मुनिए पण तेना महत्वनो भंग करवा माटे ते जैननिंदक परिव्राजिकानी साथे द्वेषथी भोगविलास कर्यो. त्यार पछी ते तापसी त्यांथी नासी गइ. अनुक्रमे तेनुं उदर जळोदरनी जेवुं गर्भथी वृद्धि पाम्युं. तेथी लोकमां तेनी प्रथम जेवी गुणस्तुति थती हती, तेवीज दोषनिंदा थवा लागी. पछी राणीए राजाने कह्युं के " हे प्राणनाथ ! तमारी परिव्राजिकानुं ब्रह्मचर्य जुओ. पापरूपी दंभनो समूह प्रगट थयो. शीलरूप वख्तर धारण करवामां तो जैन मुनिओज समर्थ छे, वीजा नथी. " ते सांभळीने राजाए कह्युं के " हे प्रिया ! तुं उतावळी न था. कोइ वखत ते जैन मुनिनुं स्वरूप पण देखाडीश. " पछी राजाए पोताना एक सेवकने शीखव्युं के " तुं लावण्यादि गुणयुक्त एवी रूपवती सूर्यकांता नामनी वेश्याने लइने उपवनमां रहेला कामदेवना चैत्यमां रात्रिना आरंभसमये जजे. पछी ते चैत्यमां कांइक धर्मना मिषथी पेला मुनिने लोभ वतावीने लावजे. पछी ते वंनेने तेमां राखी तुं वहार नीकळी जइने वारणा वंध करी मजवूत ताळुं मारजे, अने अंदर एक पल्यंक तथा चुआ चंदन विगेरे अनेक प्रकारनी भोगसामग्री मूकी राखजे. " ते सेवके राजाना कह्या प्रमाणे वधुं कर्युं.

पेठा दंभरहित मुनि पण ते चैत्यमां पेठा. पछी बहार नीकळवानो मार्ग नहीं मळवाथी तेमणे विचार्युं के " अहो! अनाभोगे करीने हुं आजे मोहजाळमां सपडायो छुं.-मने आ वेश्याना हावभावनो तो तिल मात्र पण भय नथी. परंतु प्रातःकाळे जैन शासननी अपभ्राजना थशे तेज मात्र मनमां खुंचे छे." पछी ते वेश्याए तेनी अनेक प्रकारे विडंबना करी, तोपण तेणे पोतानुं धैर्य मूक्युं नहीं. ते मुनिए विचार्युं के " पूर्वे में कारणसर द्वेषथी अकार्य कर्युं हतुं, पण आजे जो रागथी हुं ते अकार्य करुं तो जरुर मारा महाव्रत रूपी गुणनी हानि थाय, माटे यावज्जीव देव गुरु साक्षीए अंगीकार करेला पंच महाव्रतोनुं पालन करवुं तेज योग्य छे." एम विचारीने तेणे रजोहरण विगेरे सर्व साधुना वेषने दीवाथी सळगावीने भस्मीभूत करी नांख्या अने अध्यात्म रूप अमृतवडे भावलिंग धारण कर्युं. परिणामे लाभ जोइने ते भस्म आखे शरीरे चोपडी. आवी रीते अवधूतनो वेष धारण करी कायवानी जेम इंद्रियो गोपवीने आखी रात्रि ध्यानतत्परपणे निर्गमन करी. पेली वेश्या पोतानुं समग्र पराक्रम बतावीने छेवट थाकी गइ, अने बीजो कोइ उपाय नहीं सूझवाथी ते निद्रावश थइ गइ. प्रातःकाळ थतां राजा पोतानी राणीओ अने अनेक पौरलोको सहित ते उद्यानमां आव्या. सेवके ताळुं उघाडयुं, तो अंदरथी " अलख निरंजन जगन्नाथने नमस्कार " ए शब्दने मोटा स्वरथी बोलतो अने शरीरे नग्न, योगधारी, अविकारी, अलमस्त जेवो एक अवधूत योगी के जेना आखा शरीरे भस्म चोळेली हती तेवो बहार नीकळ्यो. तेने जोइने सर्व लोक चमत्कार पाम्या. ते वखते राणीए राजाने कह्युं के " हे स्वामी! तमारुं कहेवुं असत्य थयुं. आ तो कोइ योगी नीकळ्यो पण जैन साधु तो नथी." पछी राजाए पोताना सेवकने पूछ्युं के " तें आवुं अवळुं केम कर्युं?" सेवक बोल्यो—" हे स्वामी! में तो आपनी आज्ञा प्रमाणेज सर्व कर्युं हतुं, त्यार पछी शुं थयुं ते हुं जाणतो नथी." त्यारे राजाए वेश्याने रात्रिनुं वृत्तांत पूछ्युं. वेश्या बोली के " हे स्वामी! हुं शुं कहुं? हुं तो भोगनिमित्ते मारुं सर्व सामर्थ्य बतावी बतावीने थाकी गइ, पण तेणे तो इंद्रनी अप्सराओथी पण स्खलित न थाय तेवी महा योगशक्ति बतावी. त्रण जगत्मां तेना जेवो कोइ मुनि नथी." आ प्रमाणे सर्व वृत्तांत जाणीने राजा प्रतिबोध पाम्यो, अने तेणे पोताना चित्तने, वित्तने अने समग्र पुरजनोने जैन धर्ममय कर्या. तेथी जैन साधुओना ज्ञान, ध्यान, निःस्पृहता, त्याग विगेरे गुणो नगरमां माया नहीं, अर्थात् ते ते गुणोनी अत्यंत प्रशंसा थवा लागी. आ

प्रमाणे ते साधुए जैन शासननी प्रभावना करीने फरीथी मुनिवेष अंगीकार कर्यो, अने अल्प समयमांज तेणे पोतानो आत्मधर्म प्रगट कर्यो. आ विद्यासिद्धनुं दृष्टांत जाणवुं. बुद्धिसिद्ध उपर अभयकुमार विगेरेना दृष्टांतो जाणवा. योगसिद्ध उपर सुवर्णसिद्धि विगेरेना जाणवावाळा श्री कालिकाचार्य विगेरेनां दृष्टांतो जाणवां. आ सर्वे विद्या प्रभावकमां गणवा. ७. आठमा " राजसमूहर्णा संमत " एटले राजा विगेरे समग्र लोके मान्य करेला जाणवा. ८.

आ आठे जैन धर्मना उद्योतक छे. तेओना अभावे जैन मतनो महिमा अधिकतर थतो नथी, माटे तेओने जैन शासन रूप प्रासादना स्तंभ समान गणवा.

" दर्शनाचारना विचारने जाणनारा अने शासनना मेढीभूत प्रभावकोए शासनना कार्यमां पोतानी समग्र शक्तिने गोपववी नहीं, पण समग्र शक्तिथी शासननो उद्योत करवामां प्रयास करवो. "

व्याख्यान २७८ मुं.

आठ प्रकारना चारित्राचार कहे छे.

याश्च चारित्रपुत्रस्य, मातरोऽष्टौ प्रकीर्तिताः ।
ता एव चरणाचाराः, समुपास्या मुमुक्षुभिः ॥ १ ॥

भावार्थ—" चारित्ररूप पुत्रनी जे आठ माताओ कहेली छे, ते आठे प्रकारना चारित्राचार छे, तेने मुमुक्षु पुरुषोए सेववा. "

चरण (व्रत) नुं आचरण करवुं, ते चारित्राचार कहेवाय छे. ते चारित्राचार पांच प्रकारनी समिति अने त्रण प्रकारनी गुप्तिए करीने आठ प्रकारनो छे. कह्युं छे के

पणिहाणजोगजुत्तो, पंचहिं समिईहिं तिहिं गुत्तिहिं ।
एस चरित्तायारो, अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ १ ॥

भावार्थ—"पांच समिति अने त्रण गुप्तिए करीने प्रणिधान योगथी युक्त थयेलो आ चारित्राचार आठ प्रकारनो छे, एम जाणवुं."

प्रथम समितिरूप पांच प्रकारना चारित्राचारमांथी इर्यासमिति नामना पहेला प्रकारनुं वर्णन नीचे प्रमाणे छे—

युगमात्रावलोकिन्या, दृष्ट्या सूर्यांशुभासिते ।
पथि यत्नेन गन्तव्यमितीर्यासमितिर्भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—"गाडानी धुंसरी प्रमाण आगळना भागमां जोनारी दृष्टिथी सूर्येनां किरणोथी प्रकाशमान एवा रस्ता उपर यत्नपूर्वक जे चालवुं ते इर्यासमिति कहेवाय छे."

आ श्लोकमां 'यतनापूर्वक चालवुं' एम कहुं छे तेमां एम समजवुं के 'मुख्य वृत्तिए तो साधुए निरवद्य स्थानमां रहीने स्वाध्याय विगेरे धर्मकृत्यज करवां.' अहीं कोइने शंका थाय के "मुनिने ज्यारे निरवद्य स्थानमां रहीने धर्मकृत्यज करवानुं छे, त्यारे साधुओने निरंतर नवकल्पी विहार करवानो भगवाने शामाटे उपदेश कर्यो छे?" तेनो जवाब आपे छे के "नवकल्प विहार करवानुं जे भगवाने कहुं छे ते पण घणा गुणनो हेतु होवाथी धर्मनी वृद्धिने माटेज कहुं छे; तेमां पण रात्रे चक्षुनो विषय नहीं होवाथी अति पुष्ट आलंबन (कारण) विना चालवा हालवानी आज्ञा आपी नथी. दिवसे पण छ जीव निकायनी विराधना टाळवाने माटे घणा लोकोवडे चालेला मार्गे विहार करवो, पण आडे मार्गे चालवुं नहीं; तेमां पण पोताना पगथी आरंभीने आगळ चार हाथ सुधी (युग प्रमाण) क्षेत्र (पृथ्वी) ने जोइने काची माटी, जळ, वनस्पति अने बीज विगेरे स्थावर अने कुंथुवा, कीडी विगेरे त्रस जंतुनी रक्षा माटे पगले पगले सारी रीते जोइने चालवुं. "इरणंइर्या" एटले गति, तेनी जे "समिति" एटले सम्यक् प्रकारे जिन प्रवचनने अनुसारे इतयः आत्मानी प्रवृत्तिरूप चेष्टा करवी ते "इर्या समिति" शब्दनो अर्थ छे.

आगळ जे त्रण गुप्ति कहेवामां आवशे, ते प्रवृत्तिनी निवृत्तिरूप होवाथी तेमां अने समितिमां कांइक भेद छे एम जाणवुं. हवे गति करवी, ते पण आलंबन, काळ, मार्ग अने यतना ए चार कारणे करीने नियमित रीते करवी. तेमां "आलंबन" ते ज्ञानादिक जाणवुं. 'ज्ञान' एटले सूत्र अने तेनो अर्थ ए बन्ने रूप आगम, दर्शन अने

चारित्र. ते प्रत्येक ज्ञानादिकने आश्रय करीने अथवा बे बेना संयोगे करीने[1] गमन करवानी अनुज्ञा आपी छे; परंतु ज्ञानादिकना आलंबन विना गति (विहार–जवुं आववुं) थइ शके नहीं १. " काळ " एटले गमननुं प्रकरण होवाथी गमनना विषय माटे दिवसज जिनेश्वरे कहेलो छे २. " मार्ग " एटले उन्मार्गनो त्याग करीने लोको पुष्कळ चालता होय तेवो मार्ग कह्यो छे ३. अने "यत्ना" ए द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावना भेदे करीने चार प्रकारनी छे. तेमां 'द्रव्यने आश्रयीने यतना करवी' एटले युग प्रमाण पृथ्वीमां रहेला जीवादिक द्रव्यने नेत्रवडे जोवां ते. 'क्षेत्रथी यतना करवी' एटले युग प्रमाण पृथ्वीने जोइने चालवुं ते. 'काळथी यतना करवी' एटले जेटलो काळ गति करवी तेटला काळ सुधी उपयोग राखवो ते. अने 'भावथी यतना करवी' एटले उपयोगपूर्वक चालवुं ते. अर्थात् शब्दादिक इंद्रियोना विषयने तथा पांच प्रकारना स्वाध्यायने पण तजी दइने चालवुं ते. केमके तेमनो त्याग नहीं करवाथी गतिना उपयोगनो घात थाय छे. गति वखते बीजो कोइ पण व्यापार योग्य नथी. पाछळ तथा पडखे उपयोग राखवाथी अथवा अति दूर जोवाथी मार्गमां विद्यमान जंतुओ पण जोइ शकाता नथी. तेमज अति समीप जोवाथी सन्मुख आवता पशु अथवा भींत विगेरेनुं आस्फालन थवा संभव छे, माटे उपयोग पूर्वक गमन करवुं तेज योग्य छे. आवा प्रकारनी समिति पूर्वक गति करनार मुनिने कथंचित् प्राणीनो वध थइ जाय तोपण पाप लागतुं नथी. अहीं केवळ गति वखतेज इर्यासमिति राखवी एम नहीं, पण बेठां बेठां पण घणा भांगावाळा शास्त्रनी आवृत्ति करती वखते भांगानी रचना करतां जे हाथ विगेरेनी चेष्टा थाय छे ते पण परिस्पंदरूप होवाथी तेमां पण इर्यासमितिनी जरुर छे. आ समिति वरदत्त मुनिनी जेम पाळवी. तेनुं दृष्टांत कहे छे–

इर्यासमिति उपर वरदत्त ऋषिनुं दृष्टांत.

कोइ गच्छमां वरदत्त नामना ऋषि निरंतर इर्यासमितिमां तत्पर हता. एकदा शक्रेन्द्रे पोतानी सभामां तेनी इर्यासमितिनी प्रशंसा करी. ते सांभळीने एक मिथ्यात्वी देवे ते सत्य नहीं मानतां इन्द्रने कह्युं के " जीववानी इच्छावाळो ते मुनि शी रीते इर्यासमितिमां तत्पर रहेशे ? हुं तेने समितिथी भ्रष्ट करीश. " एम कहीने ते देव मृत्युलोकमां आव्यो, त्यां ते मुनिना चालवाना रस्तापर तेणे माखी जेवडी देडकीओ

---

१ ज्ञान ने दर्शन अथवा ज्ञान ने चारित्र अथवा दर्शन ने चारित्रना अवलंबनवडे.

विकुर्वी. मार्गमां पग मूकवानी पण जग्या न मळे तेटली बधी देडकीओ जोइने ते मुनि इर्यासमितिमां अति सावधान थइ उभा रही गया. तेवामां ते देवताए मायाथी हाथीना उपद्रववाळुं तुमुल चारे बाजुए विकुर्व्युं. तेथी पण ते साधु विह्वळ थया नहीं, तेमज उतावळी गति के कुदीने चालवानी गति पण स्वीकारी नहीं. त्यारे ते देवना विकुर्वेला माणसो दूरथी साधुने कहेवा लाग्या के "हे ऋषि! हाथीना रस्तामांथी एकदम दूर जता रहो, दूर जता रहो." पण ते मुनि तो पोताना स्वभावमांज स्थित रह्या. तेवामां हाथीए आवीने ते मुनिने पकडी आकाशमां उछाळ्या, नीचे पृथ्वीपर पडतां साधुए विचार्युं के "मारो देह प्रमार्जन कर्या विनानी देडकीओथी व्याप्त पृथ्वीपर पडशे, तेथी घणी देडकीओनो विनाश थइ जशे." आ प्रमाणे देवताए पोतानी सर्व प्रकारनी शक्ति बतावी पण मुनि इर्यासमितिथी भ्रष्ट थया नहीं, एटले पोताना ज्ञानथी तेमज इन्द्रना वाक्यथी मुनिना भावनी निश्चळता जाणीने ते देवता प्रगट थयो, अने पोते करेलो अपराध खमाव्यो. पछी सर्व वृत्तांत कही बतावीने ते देव समकितरूपी रत्न प्राप्त करी स्वर्गे गयो.

"आ प्रमाणे वरदत्त ऋषिनी जेम इर्यासमिति नामनो पहेलो चारित्राचार सर्वे मुनिए पाळवो. जुओ, तेनुं शील जोइने देवता पण मिथ्यादृष्टिपणानो त्याग करी सम्यग्दृष्टि थयो."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
अष्टसप्तत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७८ ॥
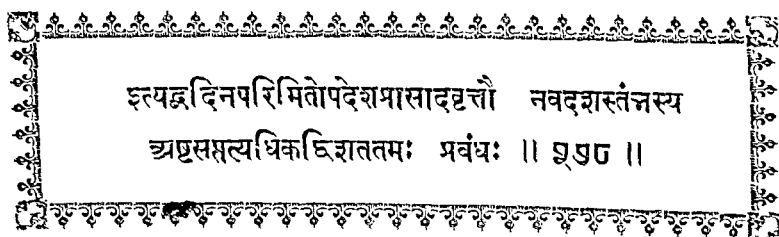
व्याख्यान २७९ मुं.

भाषासमिति नामना बीजा चारित्राचार विषे.

हितं यत्सर्वजीवानां, त्यक्तदोषं मितं वचः ।
तद्धर्महेतोर्वक्तव्यं, भाषासमितिरित्यसौ ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे सर्व जीवोने हितकारी अने दोषरहित तेमज मित (मानवाळुं–अल्प) वचन होय ते धर्मने माटे बोलवुं, तेनुं नाम भाषासमिति कहेवाय छे."

अहीं दोषरहित जे वचन कह्युं छे, ते दोष क्रोधादिक आठ छे. ते विषे उत्तराध्ययनना चोवीशमा अध्ययनमां कह्युं छे के—

कोहे माणे अ मायाइ, लोभे अ उवउत्तया ।
हासे भये मोहरीए, विगहासु तहेव य ॥ १ ॥
एआइ अट्ठ ठाणाइं, परिवज्जित्तु संजए ॥
असावज्जंमिअ काले, भासं भासिज्ज पन्नवं ॥ २ ॥

भावार्थ—" क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, मुखरता अने विकथा ए आठ स्थान वर्जीने असावद्य एवा कार्यमां यथायोग्य काळे भाषा बोलवानुं साधुने माटे कहेलुं छे. " १–२.

विस्तरार्थ—कोइ पिता पोताना पुत्र उपर अति क्रोध करीने तेने कहे के 'तुं मारो पुत्र नथी ' अथवा पासे रहेनार बीजा माणसोने कहे के ' आने बांधो, बांधो' ते क्रोध दोष जाणवो, तेना पर अमरदत्त मित्रानंद विगेरेनां दृष्टांतो छे (१). कोइ माणस मरिचिनी जेम अहंकारथी " जाति विगेरेथी मारा जेवो उच्च कोइ नथी " इत्यादि बोले ते मान दोष जाणवो (२). मल्लिनाथ प्रभुना पूर्व भवनी जेम अथवा अभयकुमारने पकडी लाववा माटे चंडप्रद्योत राजाए मोकलेली वेश्यानी जेम जे अन्यने छेतरवा माटे कपटथी बोले ते माया दोष जाणवो (३). धर्मबुद्धि अने पापबुद्धि विगेरेनी जेम अन्यना भांडादिकने पोताना कहेवा ते लोभ दोष जाणवो (४). " जो महा विदेहक्षेत्रमां विहरमान तिर्थंकरो विचरे छे, तो ते उपकारने माटे आ भरतक्षेत्रमां केम आवता नथी ? अहीं क्षणवार रहीने लोकना मनना संदेहो

दूर करीने पछी चाल्या जाय, तो बहु सारुं " एम जे बोलवुं ते हास्य दोष जाणवो (५). कांइ पण अकार्य करीने कोइना पूछवाथी नयने लीधे " में आ कार्य कर्युं नथी, कोइ बीजाए कर्युं हशे " एम जे बोलवुं ते नय दोष जाणवो (६). जेनुं दृष्टांत आगळ कहेवामां आवशे एवी रज्जा साध्वीनी जेम मुखरताथी (वाचाळपणाथी) विचार विना परना अवर्णवाद बोलवा ते मुखरता दोष जाणवो (७). स्त्रीयादिकनी कथामां 'अहो ! आ स्त्रीनां कटाक्ष विक्षेप तथा लावण्यादिक केवां सुंदर छे ? ' इत्यादि बोलवुं अथवा नुवननानु केवळीना जीव रोहिणी स्त्रीनी जेम बोलवुं ते विकथा दोष जाणवो (८).

अहीं मुखरता दोष उपर संप्रदायागत रज्जा साध्वीनुं दृष्टांत कहे छे—

रज्जा साध्वीनुं दृष्टांत.

श्री महानिशीथ सूत्रमां कह्युं छे के श्री महावीर स्वामी एकदा देशनामां बोल्या के " एकज मात्र कुवाक्य बोलवाथी रज्जा नामनी आर्या महा दुःख पामी. " ते सांनळीने गौतम गणधरे विनंति पूर्वक पूछ्युं के "हे नगवन् ! ते रज्जा साध्वी कोण ? अने तेणे वाणीमात्रथी शुं पाप उपार्जन कर्युं ? के जेनो आ प्रमाणेनो दारुण विपाक आप वर्णन करो छो ? " नगवान बोल्या के " हे गौतम ! आ नरतक्षेत्रमां पूर्वे नड नामे एक आचार्य हता. तेना गच्छमां पांचसो साधुओ अने बारसो साध्वीओ हती. तेना गच्छमां त्रण उकाळा आवेलुं, आयाम (ओसामण) अने सौवीर (कांजी) ए त्रण जातनुंज जळ वपरातुं हतुं. चोथी जातनुं पाणी पीवातुं नहोतुं. एकदा रज्जा आर्याना शरीरमां पूर्व कर्मना अनुनावथी कुष्ट व्याधि उत्पन्न थयो, ते जोइने बीजी साध्वीओए तेने पूछ्युं के " हे दुष्कर संयम पाळनारी ! आ तने शुं थयुं ? " ते सांनळीने पापकर्मथी घेरायेली रज्जा बोली के " आ प्रासुक जळ पीवाथी मारुं शरीर नष्ट थयुं. " ते सांनळीने " आपणे पण आ प्रासुक जळ वरजीए " एम सर्व साध्वीओनां हृदयमां विचार थइ गयो. तेमांना एक साध्वीए विचार्युं के " जो कदापि मारुं शरीर हमणांज आ महा व्याधिथी नाश पामे, तोपण हुं तो प्रासुक जळ तजीश नहीं. उकाळेलुं जळ वापरवानो अनादि अनंत धर्म कृपाळु जिनेश्वरोए कहेलो छे ते मिथ्या नथी. आनुं शरीर तो पूर्वे उपार्जन करेलां कर्मथी विनष्ट थयुं छे. अहो ! ते नहीं विचारतां आ रज्जा अनंत तीर्थंकरोनी आज्ञानो लोप करनारुं अने महा घोर दुःख आपनारुं केवुं दुष्ट वचन बोली ? " इत्यादि शुन्न ध्यान करतां

विशेष शुद्धिना वशथी ते साध्वीने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयुं. तरतज देवोए केवलीनो महिमा कर्यो. पछी धर्मदेशनाने अंते रज्जाए केवलीने प्रणाम करीने पूछ्युं के "हे भगवन्! कया कर्मथी हुं कुष्टादिक व्याधिनुं पात्र थइ?" केवलीए कह्युं के "सांभळ. तने रक्तपीत्तनो दोष छतां तें स्निग्ध आहार कंठ सुधी खाधो. ते आहार करोळीआनी लाळथी मिश्र थयेलो हतो. वळी तें आजे एक श्रावकना छोकराना मुख उपर वळगेली नाकनी लींट मोहना वशथी सचित्त जळथी धोइ हती. ते शासनदेवीथी सहन थयुं नहीं; तेथी तारी जेम बीजाओ पण तेवुं अकार्य न करे तेवा हेतुथी शासनदेवीए तने ते कर्मनुं फळ तत्काळ बताव्युं, तेमां प्रासुक जळनो दोष किंचित् पण नथी." ते सांभळीने रज्जाए पूछ्युं के "हे भगवन्! जो हुं यथाविधि तेनुं प्रायश्चित्त लउं, तो मारुं शरीर सारुं थाय के नहीं?" केवलीए कह्युं के "जो कोइ प्रायश्चित्त आपे तो सारुं थाय." रज्जा बोली के "तमेज आपो. तमारा जेवो बीजो कोण महात्मा छे?" केवळीए कह्युं के "तुं बाह्य रोगनी शांति माटे इच्छा करे छे, पण तारा आत्माना भावरोग वृद्धि पाम्या छे, ते शी रीते जशे? तोपण हुं तो तने प्रायश्चित्त आपुं. परंतु तेवुं कोइ प्रायश्चित्तज नथी के जेथी तारी शुद्धि थाय. केमके तें पूर्वे सर्व साध्वीओने कह्युं छे के 'प्रासुक जळ पीवाथी मारुं शरीर बगड्युं.' आवुं महा पापी वाक्य बोलीने तें सर्व साध्वीओना मनने क्षोभ पमाड्यो छे, तेवा वचनथी तें मोटुं पाप उपार्जन कर्युं छे, तेथी तारे कुष्ट, भगंदर, जळोदर, वायु, गुल्म, श्वासनिरोध, अर्श, गंडमाळ विगेरे अनेक व्याधिवाळा देहवडे अनंता भवोमां दीर्घ काळ सुधी निरंतर दारिद्र्य, दुःख, दौर्गत्य, अपयश, अभ्याख्यान, संताप अने उद्वेगनुं भाजन थवानुं छे." आ प्रमाणे केवळीनुं वचन सांभळीने बीजी सर्वे साध्वीओए मिथ्या दुष्कृत आपीने पोतानुं पाप तजी दीधुं. माटे हे गौतम! जेओ भाषासमितिथी शुद्ध एवुं वाक्य बोले छे ते ज्ञान पामे छे, अने जे भाषासमिति जाळव्या शिवाय जेम तेम बोल्यो जाय छे ते आचारथी भ्रष्ट थयेली रज्जा आर्या जेम कुगतिओमां अनेक प्रकारनां दुःखसमूह पामी तेम दुःख पामे छे.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य एकोनाशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७९ ॥

व्याख्यान २८० मुं.

एषणा समिति नामना त्रीजा चारित्राचार विषे.

सप्तचत्वारिंशता यद्दोषैरशनमुज्झितम् ।
भोक्तव्यं धर्मयात्रायै, सैषणासमितिर्भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे सुडताळीश दोषरहित अशन (आहार) धर्मयात्राने माटे वापरवुं ते एषणा समिति कहेवाय छे. " तेनो भावार्थ दृष्टांतथी जाणी लेवो.

धनशर्मा साधुनुं दृष्टांत.

अवंति नगरीमां धनमित्र नामे वणिक् रहेतो हतो. ते एकदा गुरु पासे धर्मोपदेश सांभळीने अति वैराग्यमग्न थयो, तेथी धनशर्मा नामना पोताना पुत्र सहित तेणे दीक्षा लीधी. अनुक्रमे ते बन्ने शास्त्रमां निपुण थया. एक दिवस बीजा साधुओनी साथे ते बन्ने मध्यान्ह समये एलगपुरना मार्गे चाल्या. ते वखते भयंकर ग्रीष्म ऋतुना सूर्यनां किरणो पडवाथी ताप पामेलो ते बाळ साधु तृषाथी पीडाइने धीरे धीरे चालवा लाग्यो, तेथी बीजा साधुओ तो आगळ चालवा मांड्या, पण धनमित्र साधु तो पुत्रना प्रेम रूपी पाशथी नियंत्रित होवाथी पाछळ रह्या; तेवामां मार्गे एक नदी आवी. ते जोइने पिताए पुत्रने कह्युं के " हे वत्स ! तारी चेष्टाथी हुं धारुं छुं के तुं तृषाथी पराभव पाम्यो छे. पण मारी पासे प्रासुक जळ नथी तेथी शुं करुं ? योग्य क्षेत्र अने योग्य काळ विनानुं जळ मुनिओने तो कल्पतुं नथी. तो हवे आ नदीनुं जळ पीने तुं तारी तृषानुं निवारण कर. केमके बुद्धिमान पुरुषोए निषेध करेलुं अकार्य पण आपत्तिमां करवुं पडे छे. ते विषे कह्युं छे के—

निषिद्धमप्याचरणीयमापदि
क्रिया सती नावति यत्र सर्वथा ।
घनाम्बुना राजपथेऽतिपिच्छले
क्वचिद्बुधैरप्यपथेन गम्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" निषिद्ध कार्य पण आपत्तिमां करवुं जोइए. केमके सत् क्रिया सर्व प्रकारे सर्वत्र रक्षण करती नथी. कोइ वखत मेघना जळथी राजमार्ग अति कादव-

विशेष शुद्धिना वशथी ते साध्वीने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयुं. तरतज देवोए केवलीनो महिमा कर्यो. पछी धर्मदेशनाने अंते रज्जाए केवलीने प्रणाम करीने पूछ्युं के "हे भगवन्! कया कर्मथी हुं कुष्ठादिक व्याधिनुं पात्र थइ?" केवलीए कह्युं के "सांभळ. तने रक्तपीत्तनो दोष छतां तें स्निग्ध आहार कंठ सुधी खाधो. ते आहार करोळीआनी लाळथी मिश्र थयेलो हतो. वळी तें आजे एक श्रावकना छोकराना मुख उपर वळगेली नाकनी लींट मोहना वशथी सचित्त जळथी धोइ हती. ते शासनदेवीथी सहन थयुं नहीं; तेथी तारी जेम बीजाओ पण तेवुं अकार्य न करे तेवा हेतुथी शासनदेवीए तने ते कर्मनुं फळ तत्काळ बताव्युं, तेमां प्रासुक जळनो दोष किंचित् पण नथी." ते सांभळीने रज्जाए पूछ्युं के "हे भगवन्! जो हुं यथाविधि तेनुं प्रायश्चित्त लउं, तो मारुं शरीर सारुं थाय के नहीं?" केवलीए कह्युं के "जो कोइ प्रायश्चित्त आपे तो सारुं थाय." रज्जा बोली के "तमेज आपो. तमारा जेवो बीजो कोण महात्मा छे?" केवळीए कह्युं के "तुं बाह्य रोगनी शांति माटे इच्छा करे छे, पण तारा आत्माना भावरोग वृद्धि पाम्या छे, ते शी रीते जशे? तोपण हुं तो तने प्रायश्चित्त आपुं. परंतु तेवुं कोइ प्रायश्चित्तज नथी के जेथी तारी शुद्धि थाय. केमके तें पूर्वे सर्व साध्वीओने कह्युं छे के 'प्रासुक जळ पीवाथी मारुं शरीर वगड्युं.' आवुं महा पापी वाक्य बोलीने तें सर्व साध्वीओना मनने क्षोभ पमाड्यो छे, तेवा वचनथी तें मोटुं पाप उपार्जन कर्युं छे, तेथी तारे कुष्ठ, भगंदर, जळोदर, वायु, गुल्म, श्वासनिरोध, अर्श, गंडमाळ विगेरे अनेक व्याधिवाळा देहवडे अनंता भवोमां दीर्घ काळ सुधी निरंतर दारिद्र्य, दुःख, दौर्गत्य, अपयश, अभ्याख्यान, संताप अने उद्वेगनुं भाजन थवानुं छे." आ प्रमाणे केवळीनुं वचन सांभळीने बीजी सर्वे साध्वीओए मिथ्या दुष्कृत आपीने पोतानुं पाप तजी दीधुं. माटे हे गौतम! जेओ भाषासमितिथी शुद्ध एवुं वाक्य बोले छे ते ज्ञान पामे छे, अने जे भाषासमिति जाळव्य शिवाय जेम तेम बोली जाय छे ते आचारथी भ्रष्ट थयेली रज्जा आर्या जेम कुगतिओमां अनेक प्रकारनां दुःखसमूह पामी तेम दुःख पामे छे.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
एकोनाशित्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७९ ॥

व्याख्यान २८० मुं.

एषणा समिति नामना त्रीजा चारित्राचार विषे.

सप्तचत्वारिंशता यद्दोषैरशनमुज्झितम् ।
भोक्तव्यं धर्मयात्रायै, सैषणासमितिर्भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे सुडताळीश दोषरहित अशन (आहार) धर्मयात्राने माटे वापरवुं ते एषणा समिति कहेवाय छे. " तेनो भावार्थ दृष्टांतथी जाणी लेवो.

धनशर्मा साधुनुं दृष्टांत.

अवंति नगरीमां धनमित्र नामे वणिक् रहेतो हतो. ते एकदा गुरु पासे धर्मोपदेश सांभळीने अति वैराग्यमग्न थयो, तेथी धनशर्मा नामना पोताना पुत्र सहित तेणे दीक्षा लीधी. अनुक्रमे ते बन्ने शास्त्रमां निपुण थया. एक दिवस बीजा साधुओनी साथे ते बन्ने मध्यान्ह समये एलगपुरना मार्गे चाल्या. ते वखते भयंकर ग्रीष्म ऋतुना सूर्यनां किरणो पमवाथी ताप पामेलो ते बाळ साधु तृषाथी पीमाइने धीरे धीरे चालवा लाग्यो, तेथी बीजा साधुओ तो आगळ चालवा मांड्या, पण धनमित्र साधु तो पुत्रना प्रेम रूपी पाशथी नियंत्रित होवाथी पाछळ रह्या; तेवामां मार्गे एक नदी आवी. ते जोइने पिताए पुत्रने कह्युं के " हे वत्स ! तारी चेष्टाथी हुं धारुं छुं के तुं तृषाथी पराभव पाम्यो छे. पण मारी पासे प्रासुक जळ नथी तेथी शुं करुं ? योग्य क्षेत्र अने योग्य काळ विनानुं जळ मुनिओने तो कल्पतुं नथी. तो हवे आ नदीनुं जळ पीने तुं तारी तृषानुं निवारण कर. केमके बुद्धिमान पुरुषोए निषेध करेलुं अकार्य पण आपत्तिमां करवुं पमे छे. ते विषे कह्युं छे के—

निषिद्धमप्याचरणीयमापदि
क्रिया सती नावति यत्र सर्वथा ।
घनाम्बुना राजपथेऽतिपिच्छले
क्वचिद्बुधैरप्यपथेन गम्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" निषिद्ध कार्य पण आपत्तिमां करवुं जोइए. केमके सत् क्रिया सर्व प्रकारे सर्वत्र रक्षण करती नथी. कोइ वखत मेघना जळथी राजमार्ग अति कादव-

विशेष शुद्धिना वशथी ते साध्वीने केवळ ज्ञान उत्पन्न थयुं. तरतज देवोए केवलीनो महिमा कर्यो. पछी धर्मदेशनाने अंते रज्जाए केवलीने प्रणाम करीने पूछ्युं के "हे भगवन्! कया कर्मथी हुं कुष्ठादिक व्याधिनुं पात्र थइ ?" केवलीए कह्युं के "सांभळ. तने रक्तपीत्तनो दोष छतां तें स्निग्ध आहार कंठ सुधी खाधो. ते आहार करोळीआनी लाळथी मिश्र थयेलो हतो. वळी तें आजे एक श्रावकना छोकराना मुख उपर वळगेली नाकनी लींट मोहना वशथी सचित्त जळथी धोइ हती. ते शासनदेवीथी सहन थयुं नहीं; तेथी तारी जेम बीजाओ पण तेवुं अकार्य न करे तेवा हेतुथी शासनदेवीए तने ते कर्मनुं फळ तत्काळ बताव्युं, तेमां प्रासुक जळनो दोष किंचित् पण नथी." ते सांभळीने रज्जाए पूछ्युं के "हे भगवन्! जो हुं यथाविधि तेनुं प्रायश्चित्त लउं, तो मारुं शरीर सारुं थाय के नहीं ?" केवलीए कह्युं के "जो कोइ प्रायश्चित्त आपे तो सारुं थाय." रज्जा बोली के "तमेज आपो. तमारा जेवो बीजो कोण महात्मा छे ?" केवळीए कह्युं के "तुं बाह्य रोगनी शांति माटे इच्छा करे छे, पण तारा आत्माना भावरोग वृद्धि पाम्या छे, ते शी रीते जशे ? तोपण हुं तो तने प्रायश्चित्त आपुं. परंतु तेवुं कोइ प्रायश्चित्तज नथी के जेथी तारी शुद्धि थाय. केमके तें पूर्वे सर्व साध्वीओने कह्युं छे के 'प्रासुक जळ पीवाथी मारुं शरीर बगड्युं.' आवुं महा पापी वाक्य बोलीने तें सर्व साध्वीओना मनने क्षोभ पमाड्यो छे, तेवा वचनथी तें मोटुं पाप उपार्जन कर्युं छे, तेथी तारे कुष्ट, भगंदर, जळोदर, वायु, गुल्म, श्वासनिरोध, अर्श, गंडमाळ विगेरे अनेक व्याधिवाळा देहवडे अनंता भवोमां दीर्घ काळ सुधी निरंतर दारिद्र्य, दुःख, दौर्गत्य, अपयश, अभ्याख्यान, संताप अने उद्वेगनुं भाजन थवानुं छे." आ प्रमाणे केवळीनुं वचन सांभळीने बीजी सर्वे साध्वीओए मिथ्या दुष्कृत आपीने पोतानुं पाप तजी दीधुं. माटे हे गौतम! जेओ भाषासमितिथी शुद्ध एवुं वाक्य बोले छे ते ज्ञान पामे छे, अने जे भाषासमिति जाळव्या शिवाय जेम तेम बोली जाय छे ते आचारथी भ्रष्ट थयेली रज्जा आर्या जेम कुगतिओमां अनेक प्रकारनां दुःखसमूह पामी तेम दुःख पामे छे.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
एकोनाशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २७९ ॥

व्याख्यान २८० मुं.

एषणा समिति नामना त्रीजा चारित्राचार विषे.

सप्तचत्वारिंशता यद्दोषैरशनमुज्झितम् ।
भोक्तव्यं धर्मयात्रार्थं, सैषणासमितिर्भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे सुडतालीश दोषरहित अशन (आहार) धर्मयात्राने माटे वापरवुं ते एषणा समिति कहेवाय छे. " तेनो भावार्थ दृष्टांतथी जाणी लेवो.

धनशर्मा साधुनुं दृष्टांत.

अवंति नगरीमां धनमित्र नामे वणिक् रहेतो हतो. ते एकदा गुरु पासे धर्मोपदेश सांभळीने अति वैराग्यमग्न थयो, तेथी धनशर्मा नामना पोताना पुत्र सहित तेणे दीक्षा लीधी. अनुक्रमे ते बन्ने शास्त्रमां निपुण थया. एक दिवस बीजा साधुओनी साथे ते बन्ने मध्यान्ह समये एलगपुरना मार्गे चाल्या. ते वखते भयंकर ग्रीष्म ऋतुना सूर्यनां किरणो पडवाथी ताप पामेलो ते बाळ साधु तृषाथी पीडाइने धीरे धीरे चालवा लाग्यो, तेथी बीजा साधुओ तो आगळ चालवा मांड्या, पण धनमित्र साधु तो पुत्रना प्रेम रूपी पाशथी नियंत्रित होवाथी पाछळ रह्या; तेवामां मार्गे एक नदी आवी. ते जोइने पिताए पुत्रने कह्युं के " हे वत्स ! तारी चेष्टाथी हुं धारुं छुं के तुं तृषाथी पराभव पाम्यो छे. पण मारी पासे प्रासुक जळ नथी तेथी शुं करुं ? योग्य क्षेत्र अने योग्य काळ विनानुं जळ मुनिओने तो कल्पतुं नथी. तो हवे आ नदीनुं जळ पीने तुं तारी तृषानुं निवारण कर. केमके बुद्धिमान पुरुषोए निषेध करेलुं अकार्य पण आपत्तिमां करवुं पडे छे. ते विषे कह्युं छे के—

निषिद्धमप्याचरणीयमापदि
क्रिया सती नावति यत्र सर्वथा ।
घनाम्बुना राजपथेऽतिपिच्छले
क्वचिद्बुधैरप्यपथेन गम्यते ॥ १ ॥

भावार्थ—" निषिद्ध कार्य पण आपत्तिमां करवुं जोइए. केमके सत् क्रिया सर्व प्रकारे सर्वत्र रक्षण करती नथी. कोइ वखत मेघना जळथी राजमार्ग अति कादव-

वाळो थयो होय, त्यारे साचा पुरुषो पण आमे रस्ते चाले छे. ".

तो हे वत्स ! आ मृत्यु आपनारी आपत्तिनुं कोइ पण प्रकारे उल्लंघन कर. पछी तेनुं निवारण करवा माटे गुरु पासे जइने आलोयजे." एम कहीने धनमित्र मुनि नदी उतर्या. वळी तेने विचार थयो के " आ पुत्र मारी शरमथी नदीनुं जळ पीशे नहीं. केमके लाजवान पुरुषो अकार्य करतां पोताना पडछायाथी पण शंका पामे छे. तेथी हुं तेना दृष्टिमार्गथी जरा दूर जाउं. " एम विचारीने ते आगळ चाल्यो. पेला बाळ साधु पण नदीने कांठे आव्या एटले अत्यंत तृषातुर सता विचार करवा लाग्या के " परमात्माए अनेषणीय भक्त पान लेवानुं निषिद्ध कर्युं छे. एषणा त्रण प्रकारनी कही छे—गवेषणा, ग्रहणेषणा अने परिभोगेषणा. आ त्रणे एषणा आहार, उपधि अने शय्यादि सर्व विषयमां शोधवी जोइए. तेमां प्रथम आधाकर्मादि सोळ उत्पादन दोष कहेला छे, अने धात्र्यादि सोळ उद्गम दोष कहेला छे. ते बत्रीश दोष पहेली गवेषणामां शोधवाना छे, बीजी ग्रहणेषणामां शंकितादि दश दोष शोधवाना छे, अने त्रीजी परिभोगेषणामां अंगारादि पांच दोष शोधवाना छे. ए रीते यतनावाळो मुनि सुडताळीश दोषरहित नव कोटी विशुद्ध एवा भक्त पानादिक आहारने, औधिक अने उपग्रहिक एवा बे प्रकारना उपधिने अने वसतिने ग्रहण करे छे, ते एषणा समिति कहेवाय छे. तेवी शुद्धिथी रहित अग्राह्य एवुं आ जळ हमणां महा कष्टथी हुं पीउं छुं. पछी गुरु पासे तेनी आलोचना लइश. " एम विचारीने अंजळीमां जळ लइ ते पीवा माटे मुख पासे हाथ लावे छे, तेवामां तेने बीजो विचार थयो के " हुं हमणां जलादिकना जीवोने अभयदान आपुं ? के तृषा निवारण करवा माटे मारा जीवने सुखी करुं ? जो मारा जीवने आ लोक संबंधी सुख आपुं छुं, तो त्रीजा जीवोने मोटुं दुःख थाय छे. वळी तेथी मारुं चतुर्गति रूप संसारपरावर्तन वृद्धि पामशे, तेमज अनंत तिर्थंकरोनी आज्ञानो लोप थशे. वळी आ जीवो सर्वे मारा आत्माना संबंधी छे. केमके मारो आत्मा आ जीवोना कुळमां अनेकवार रहेलो छे. श्रीमान् तिर्थंकरोए तो छकाय जीवोनी दया संयमधारी साधुओना उत्संगमां मूकी छे. वळी हे जीव ! तें नरकमां रहीने आनाथी पण अनंतगणी तृषानुं दुःख पराधीनपणाए अनंतीवार सहन कर्युं छे. हमणां तुं स्वतंत्र थयो छे, तेथी आवा अकार्यमां प्रवर्ते छे, पण हे जीव ! शामाटे आत्म गुणने भ्रष्ट करे छे ? अथवा हे जीव ! तारा एक जीवने माटे अनेक जीवनो वध करताना भयथी तुं जरा पण डरतो केम नथी ? अरे मारा चित्तनी मूढ-

ताने धिक्कार छे! प्रत्यक्ष रीते मात्र एक क्षण सुखने आपनार तृषाच्छेद रूप आ निर्मळ अने शीतळ जळने तुं अमृत तुल्य माने छे. पण ते अमृतमय नथी, ते तो निश्चे विषनी धाराना पान समान छे, एम तारे जाणवुं. केमके "एक जळना बिंदुमां जिनेश्वरे असंख्य जीवो कहेला छे. अने ते बिंदु पण जो सेवाळना लवथी पण मिश्रित होय तो ते अनंत जीव रूप थाय छे." कह्युं छे के—

त्रसाः पूतरमत्स्याद्याः, स्थावराः पनकादयः ।
नीरे स्युरिति तत्पाता, सर्वेषां हिंसको भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ—"पूरा, मत्स्य विगेरे त्रस अने पनक विगेरे स्थावर जंतुओ जळमां होय छे, माटे ते जळनो पीनार ते सर्व जीवोनो हिंसक थाय छे."

तत्क्रियद्भिर्दिनैर्याति, रक्षिता अपि ये ध्रुवम् ।
तान् प्राणान् रक्षितुं दक्षः, परप्राणान्निहन्ति कः ॥२॥

भावार्थ—"तेथी करीने जे प्राणो रक्षण कर्या छतां पण केटलाक दिवस पछी तो अवश्य जवानाज छे, तो तेवा प्राणोना रक्षणने माटे कयो डाह्यो माणस परना प्राणने हणे?"

तेथी आ सचित्त जळ सर्वथा हुं पीश नहीं." एम निश्चय करीने दृढ धैर्यवाळा ते बाळके विवेक पूर्वक घणा जळ जंतुओने बाधा न थाय तेवी रीते धीमे धीमे अंजळीमां रहेलुं जळ नदीमां पाछुं मुकी दीधुं. पछी ते नदी उतर्यो, पण तृषाथी चालवानी शक्ति नहीं रहेवाथी ते तेना कांठापरज पडी गयो. ते वखते तेणे विचार कर्यो के "हमणां आ तृषा वेदनीय कर्म कंठ, तालु विगेरेनुं शोषण करीने मारा आत्मामां रहेला रत्नत्रयी रूप अमृतनुं शोषण करवा इच्छे छे, पण हे कर्म! हवे त्यां तारो तलमात्र पण प्रवेश नहीं थाय. केमके समाधि अने संतोषथी आत्मस्वरूपना ध्यानमां हुं मग्न थयो छुं, तेथी त्यां तारो प्रचार थइ शके तेम नथी. अहो! पूर्वे थइ गयेला पूज्य पुरुषोए मोटुं अवलंबन करी राख्युं छे." इत्यादि शुभ ध्यानमां तत्पर थयेलो ते बाळ साधु मृत्यु पामीने स्वर्गे गयो. स्वर्गमां उत्पन्न थतांज तेणे अवधि ज्ञाननो उपयोग दीधो, एटले पोताना पिताने नदीथी थोडे दूर जइने उभेला दीठा. एटले ते देव पोताना शरीरमां प्रवेश करीने धनमित्र मुनिनी पाछळ गयो. पुत्रने आव-

तो जोइने धनमित्र पण हर्ष पाम्यो अने आगळ चाल्यो. पछी बीजा साधुओ पण तृषाथी पीडावा लाग्या, तेमने माटे ते देवताए नक्तिथी मार्गमां गोकुल विकुर्व्यो. त्यांथी तक्र विगेरे लइने साधुओ स्वस्थ थया. त्यांथी आगळ चालतां ते साधुओमांथी एकनी वींटिका ते देवताएज पोतानी ओळखाण कराववा माटे नूलावी दीधी. दूर जइने ते साधुने पोतानी वींटिका याद आवी, एटले ते साधु उनो रह्यो, अने पाछा फरीने ते स्थाने गया तो त्यां पोतानी उपधिनी वींटिका जोइ, पण त्यां जे गोकुळ हतुं ते जोयुं नहीं. पछी ते उपधि लइने सर्व साधुनी नेगा थइ तेणे " उपधि मळी पण त्यां गोकुळ तो नथी " ते वात सर्वने जणावी. ते सांनळी सर्व आश्चर्य पामी विचारवा लाग्या के " खरेखर कोइ देवताना अनुनावथी आ वनमां गोकुळ थयुं हतुं. " तेवामां ते देव प्रगट थइने पोताना पिता सिवाय बीजा सर्व मुनिओने नम्यो. ते वखते " आने केम नम्यो नहीं ? " ए प्रमाणे साधुओना पूछवाथी ते देवे पोतानो सर्व वृत्तांत जणावीने कह्युं के " सचित्त जळ पीवा माटे मने ते वखते तेणे संमति आपी हती, तेथी तेने पूर्व नवनो पिता उतां पण में प्रणाम कर्यो नहीं. तेणे स्नेहने लीधे शत्रुनी जेवुं कार्य कर्युं हतुं. तेना वचनथी जो में सचित्त जळनुं पान कर्युं होत, तो मने अनंत नवभ्रमण प्राप्त थात. कह्युं छे के—

स एव हि बुधैः पूज्यो, गुरुश्च जनकोऽपि च ।
शिष्यं सुतं च यः क्वापि, नैवोन्मार्गे प्रवर्तयेत ॥ १ ॥

नावार्थ—" जे शिष्यने तथा पुत्रने कदापि उन्मार्गे प्रवर्तावे नहीं, तेज गुरु अने तेज पिता डाह्या माणसने पूजवा योग्य छे. "

ए प्रमाणे कहीने ते देव स्वर्गे गयो, अने साधुओए पण तेनी प्रशंसा करतां आगळ विहार कर्यो.

" जेम धनशर्मा नामना बाल साधुए ते वखते अनेषणीय जळनुं पान कर्युं नहीं, तेम सर्व साधुओए पापरहित थइने आ चारित्राचारनुं पालन करवुं. "

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंनस्य

अशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २८० ॥

व्याख्यान २८१ मुं.

चोथा तथा पांचमा चारित्राचार विषे.

ग्राह्यं मोच्यं च धर्मोपकरणं प्रत्युपेक्ष्य यत् ।
प्रमार्ज्य चेयमादाननिक्षेपसमितिः स्मृता ॥ १ ॥

भावार्थ—" धर्मनां उपगरणो जोइने तथा प्रमार्जीने लेवां अथवा मूकवां, ते आदाननिक्षेप नामनी चोथी समिति कही छे. "

औघिक ते रजोहरण, मुखवस्त्रिका विगेरे अने औपग्रहिक ते संथारो, दांडो विगेरे अने बीजुं पण कोइ प्रयोजन माटे धूळनुं ढेफुं तथा काष्ठादिक जे लेवुं पडे ते जोइने तथा पडिलेहीने हस्तादिकमां ग्रहण करवां, अने तेवीज रीते पृथ्वी विगेरे उपर मूकवां. ते सर्व वस्तु प्रथम नेत्रवडे जोइने अने रजोहरण विगेरेथी प्रमार्जीनेज लेवी मूकवी, ते विना नहीं. केमके जोया प्रमार्ज्या विना लेवा मूकवाथी सूक्ष्म पनक (लील फुल) तथा कुंथुवा, कीडी विगेरे जीवोनी हिंसा थाय, अने तेथी चारित्रनी विराधना थाय. कदाचित् वींछी विगेरे डसे तो आत्मानी विराधनादिकनो पण संभव थाय. वस्त्रादिकनी पडिलेहणा पण तेवा प्रकारे करवी के जेथी वायुकाय विगेरेनी जरा पण विराधना न थाय. केमके प्रमार्जना अने पडिलेहणा जीवनी दयाने माटेज करवामां आवे छे; तेथी ते बन्ने क्रियामां साधुए अत्यंत प्रमादरहित थवुं. कह्युं छे के—

पडिलेहणाकुणंतो, मिहो कहं कुणइ जणवयकहं वा ।
देइ च पच्चख्खाणं, वाएइ सयं पडिच्छइ वा ॥ १ ॥
पुढवि आउक्काए, तेउवाउवणस्सइतसाणं ।
पडिलेहणपमत्तो, छन्नं पि विराहणो होइ ॥ २ ॥

भावार्थ—" पडिलेहण करतां करतां परस्पर वातो करे अथवा देशकथा करे, पच्चख्खाण आपे, कोइने वंचावे अथवा पोते वांचना ग्रहण करे तो तेम करतां पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय अने वनस्पतिकाय तथा त्रसकायनी पडिलेहणमां प्रमादी साधु विराधना करे छे. " १-२.

ते प्रमाणे शरीरनी प्रमार्जना करवामां पण प्रमादरहित थवुं. प्रसन्नचंद्र राजाना

भाइ वल्कलचिरि धूळथी भराएलां वस्त्रोनी प्रमार्जना करतां केवळज्ञान पाम्या हता. तथा कोइ सोमिल नामना ब्राह्मणे दीक्षा लीधी हती. तेने एकदा गुरुए ग्रामांतर जवाना विचारथी कह्युं के 'पात्रादिकनी पडिलेहणा कर.' एटले ते सोमिले पडिलेहणा करी. पछी कांइ कारण बनवाथी गुरुए विहार कर्यो नहीं, एटले फरीने गुरुए तेने कह्युं के "पात्रादिक प्रमार्जना करीने तेने स्थाने पाछा मूक." त्यारे सोमिल शिष्य बोल्यो के "हमणांज पडिलेहण करी छे, शुं पात्रादिकमां सर्प पेसी गयो छे के वारंवार पडिलेहण करवानुं कहो छो?" आ प्रमाणे तेनुं अयोग्य वचन सांभळीने शासनदेवताए क्रोधथी पात्रमां सर्प विकुर्व्यो. ते जोइने सोमिल भय पाम्यो, अने गुरु पासे क्षमा मागी. त्यारे गुरु बोल्या के "ते कांइ मारुं कार्य नथी." पछी देव बोल्यो के "ते साधुने बोध करवा माटे में सर्प विकुर्व्यो छे, केमके सर्व कार्यो मुनिए प्रमार्जना पूर्वकज करवानां छे." ते सांभळीने सोमिले आदान निक्षेप समिति धारण करी. अनुक्रमे ते केवळज्ञान पामीने मोक्षे गयो.

हवे परिष्ठापनिका समिति नामनो पांचमो आचार कहे छे.

निर्जीवेऽशुषिरे देशे, प्रत्युपेक्ष्य प्रमार्ज्य च ।
यत्त्यागो मलमूत्रादेः, सोत्सर्गसमितिः स्मृता ॥ १ ॥

भावार्थ—"निर्जीव अने पोलाण विनाना प्रदेशमां जोइने तथा पुंजीने मल, मूत्रादिकनो त्याग करवो ते उत्सर्ग समिति (परिष्ठापनिका समिति) कहेवाय छे."

मुनिए मूत्र, पुरीष, श्लेष्म, थुंक, कर्ण तथा नेत्रनो मेल विगेरे, आहार, जळ, वस्त्र, पात्र विगेरे जे कोइ वस्तु परठववा योग्य होय ते सर्व वस्तु; लीलुं घास, बीज, अंकुरा, सूक्ष्म कुंथुवा, कीडी, मंकोडी विगेरे न होय तेवा अचित्त स्थानके यतना पूर्वक परठववी. 'यतना' एटले मूत्र, जळ विगेरे प्रवाही वस्तु थोडी थोडी पृथक् पृथक् प्रदेशमां परठववी के जेथी तेनो रेलो चाले नहीं, अने तरतज सुकाइ जाय. अशन विगेरेने चोळीने परठववुं के जेथी कीडी, मंकोडी विगेरे तेमां पडे नहीं. वस्त्रपात्रादिकना अति सूक्ष्म ककडा करवा के जेथी गृहस्थोना उपयोग रूप दोष न लागे.

स्थंडिल (स्थान) ना गुणो उत्तराध्ययनमां "अणावायमसंलोय" विगेरे पाठमां बताव्या छे ते आ प्रमाणे—'अनापातं' एटले पोताने अथवा बीजा कोइने

ज्यां वारंवार जवुं आववुं नथी एवुं जे स्थान ते अनापात स्थंडिल कहेवाय छे. 'अ-संलोकं' एटले पोते दूर छतां पण वृक्षादिकना व्यवधानने लीधे ज्यां पोताना पक्षना साधुओ विगेरे पण जोइ शके नहीं तेवुं स्थान ते असंलोक कहेवाय छे. अहीं अ-नापात अने असंलोक ए बन्नेना चार[1] भांगा करवा, तेमां प्रथम भांगो शुद्ध छे, जेमां बंनेमांथी एके दोष लागतो नथी. तेवा स्थानके परठववा जवुं (१). 'अनुप-घातिकं' एटले ज्यां कोइ ताडनादिक करे तो तेथी शासननो उड्डाह थाय तेवुं न होय ते स्थान अनुपघातिक कहेवाय छे. तेमां उपघात त्रण प्रकारनो छे. संयम (चा-रित्र) नो, प्रवचननो अने पोतानो (२). 'समस्थंडिलं' एटले जे स्थान ऊंचुं नीचुं न होय, सरखुं होय ते समस्थंडिल कहेवाय छे. ऊंचुं नीचुं स्थंडिल होय तो त्यां मूत्र पुरीष करता विशीर्ण थाय, तेथी छ कायनी हिंसा थाय, अने चारित्रनी विराधना थाय (३). 'अशुषिरं' एटले तृण, पर्ण विगेरे ज्यां न होय ते अशुषिर स्थान कहेवाय छे. शुषिर स्थानमां परठववाथी वींछी विगेरे होय तो ते डसे छे (४). 'अचिरकालकृतं' एटले जे स्थानो जे ऋतुमां अग्नि विगेरे लगाडवाना कारणथी निर्जीव करेलां होय, तेज ऋतुमां ते स्थानो अचिरकालकृत कहेवाय छे. माटे बे मा-सना प्रमाणवाळी ते ऋतुमां ते स्थानो शुध्ध जाणवां. त्यार पछी बीजी ऋतुमां ते स्थानो मिश्र जाणवां; तेमज जे स्थाने एक वर्षाकाल सुधी गृहस्थो सहित गाम वसेलुं होय ते स्थान बार वर्ष सुधी स्थंडिल एटले शुद्ध स्थान जाणवुं, त्यार पछी अशुध्ध जाणवुं (५). 'विस्तीर्णं' एटले जघन्यथी आयाम तथा विष्कंभ एक हाथनो हो-य, अने उत्कृष्टथी बार योजननो होय ते स्थान विस्तीर्ण कहेवाय छे. तेमां उत्कृष्ट प्रमाण तो चक्रवर्तिनी सेनाना निवेशमां जाणवुं. अन्यत्र मध्यम प्रमाण जाणवुं (६). 'दूरवगाढं' एटले जे गंभीर (ऊंडुं) स्थान होय ते दूरवगाढ कहेवाय छे. तेमां नी-चे चार आंगळ सुधी अग्नि तथा सूर्यना तापथी अचित्त भूमि थयेल होय ते जघन्य जाणवुं, अने पांच आंगळथी आरंभीने विशेष होय ते उत्कृष्ट जाणवुं (७). 'अ-नासन्नं' एटले उपवनादिकनी अति समीपे न होय ते अनासन्न स्थंडिल कहेवाय छे. आसन्न (समीप) ना बे भेद छे, द्रव्यासन्न अने भावासन्न. तेमां द्रव्यासन्न एटले देवालय, हवेली, गाम, उद्यान, खेतर, मार्ग विगेरेनो समीपनुं स्थान. ते स्थानमां पर-ठववाथी संयमनो अने पोतानो घात थवा रूप बे प्रकारना दोषनो संभव छे. केमके ते

---

[1] अनापात असंलोक; अनापात सलोक, आपात असंलोक अने आपात संलोक ए चार भांगा.

देवालयादिकनो अधिपति साधुए समीपमां त्याग करेला पुरीषादिकने कोइ चाकर पासे बीजे ठेकाणे नंखावीने ते स्थान साफ करावे, तथा ते चाकरना हाथ धोवरावे, तेथी संयमनो उपघात थाय, अथवा ते स्थानना अधिपतिने क्रोध आववाथी द्वेषने लीधे कदाचित् ताडनादिक करे, तो तेथी आत्मानो (पोतानो) उपघात थाय. तथा 'नासन्न' एटले उतावळना कारणथी नजीकमांज परठवे ते (८). 'बिलवर्जितं' एटले जे पृथ्वीमां दर विगेरे कांइ छिद्र न होय ते बिलवर्जित स्थंडिल कहेवाय छे (९). तथा 'त्रसप्राणबीज रहितं' एटले स्थावर अने जंगम समग्र जंतुजातिथी रहित जे स्थान होय ते त्रसप्राणबीजरहित स्थंडिल कहेवाय छे (१०). आ दश पदोना एकसंयोगी बेसंयोगी एम भंग करतां एक हजार ने चोवीश भांगा थाय छे. तेमां छेल्लो दश पदनो थयेलो भांगो मुख्यताए शुद्ध छे. तेवा स्थंडिलमां पुरीषादिक परठववुं.

आ प्रमाणे परिष्ठापनिका समिति श्री ज्ञातासूत्र नामना छठ्ठा अंगमां वर्णवेला श्री धर्मरुचि साधुनी जेम पाळवी.

श्री धर्मरुचिनुं दृष्टांत.

एकदा श्री धर्मघोष सूरिना शिष्य श्री धर्मरुचि मुनि गोचरी माटे गया हता. तेमां एक नागश्री नामनी ब्राह्मणीए कडवी तुंबडीनुं शाक वहोराव्युं, ते तेणे गुरुने बताव्युं. गुरुए ते शाक अयोग्य अने प्राणनाशक जाणीने शिष्यने कह्युं के " आ शाकने शुद्ध स्थंडिले परठवी आवो. " एटले शिष्ये उपर कही तेवा प्रकारनी स्थंडिल भूमिए जइने विचार्युं के " आ शाकमां एवो शो दोष हशे के तेने परठवा माटे गुरुए आज्ञा आपी ? " पछी तेना दोषनी परीक्षा करवा माटे शिष्ये ते शाकमांथी एक बिंदु पृथ्वी पर मूक्युं, तेना गंधथी लुब्ध थइने अनेक कीडीओ त्यां आवी, अने तेनो रस लेतांज तत्काळ मृत्यु पामी. ते जोइने ते साधुने दया आववाथी तेणे विचार्युं के " निर्दोष भूमिमां पण कीडीओ विगेरे दूरथी आवे छे, तो तेवुं शुद्ध स्थंडिल तो कोइ पण ठेकाणे जणातुं नथी, अने गुरुए तो शुद्ध स्थंडिलमां जइने परठववानी आज्ञा आपी छे. तेथी मारा शरीर जेवुं बीजुं कोइ स्थंडिल हुं शुद्ध जोतो नथी, माटे आ शाक तेमांज परठववुं योग्य छे. " एम विचारीने ते शाक तेणे पोतेज वापर्युं, अने तेज वखते अनशन लइने सर्वार्थसिद्ध विमानमां देवता थया.

आ समिति उपर बीजुं पण विशेष समजवा जेवुं छे ते छट्ठा अंगथी जाणी लेवुं. तेमां आ समिति उपर ढंढण ऋषि तथा सिंहकेसर ऋषिनुं पण दृष्टांत छे, के जेमां मोदकने परठववानी हकीकत छे. आ विषय उपर पुष्पमाळा प्रकरणमां कहेलुं धर्मरुचिनुं दृष्टांत पण जाणवुं. ते आ प्रमाणे—कोइ गच्छमां धर्मरुचि नामना साधु हता. ते एकदा परोपकारना कार्यमां व्यग्र रहेवाथी स्थंडिलनी प्रतिलेखना करवी चूकी गया. रात्रे पेशाब करवानी शंका थवाथी व्यथा थवा लागी. ते व्यथाथी प्राण जवानी तैयारी हती; तेवामां कोइ देवताए प्रकाश देखाड्यो, तेथी तेमणे शुद्ध स्थंडिल जोइ लीधी अने लघुशंका टाळी. त्यार पछी फरी अंधकार थयो. ते जोइने "आ प्रकाश देवताए कर्यो हशे" एम जाणी तेनुं मिथ्या दुष्कृत आप्युं. इत्यादि अनेक दृष्टांतो विविध शास्त्रथी जाणवां.

"अहीं जे दश विशेषणो आपीने शुद्ध स्थंडिलनुं स्वरूप बताव्युं छे तेवुं स्थंडिल धर्मरुचि साधुनी जेम शोधीने मुमुक्षु मुनिओए आ पांचमी समितिनुं पालन करवुं, पण तेमां किंचित् मात्र आळसु एटले प्रमादी थवुं नहीं."
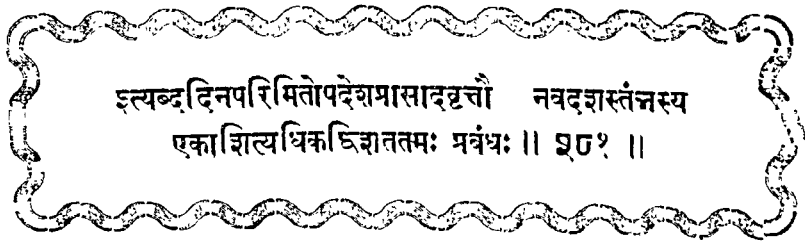
व्याख्यान २८२ मुं.

त्रण गुप्ति विषे.

प्रथम मनोगुप्ति नामना छट्ठा चारित्राचार विषे.

कल्पनाजालनिर्मुक्तं, सद्भूतवस्तुचिन्तनम् ।
विधेयं यन्मनःस्थैर्यं, मनोगुप्तिर्भवेत्त्रिधा ॥ १ ॥

भावार्थ—"कल्पनाना समूह रहित सत्य वस्तुनुं चिंतवन करीने जे मननी स्थिरता करवी ते मनोगुप्ति कहेवाय छे. तेना त्रण भेद छे."

मनोगुप्तिना त्रण भेद आ प्रमाणे—आर्त अने रौद्र ध्यानना अनुबंधवाळी कल्पनाना समूहथी रहित ते पहेली मनोगुप्ति छे; आगमने अनुसरनारी, समस्त लोकने हितकारी, धर्मध्यानना अनुबंधवाळी अने मध्यस्थ बुद्धिना परिणामवाळी जे मनोगुप्ति ते बीजी छे; अने शुभ तथा अशुभ समग्र मननी वृत्तिओनो निरोध करीने योगनिरोध अवस्थामां प्राप्त थनारी आत्मामांज रमण करवा रूप जे मनोगुप्ति ते त्रीजी छे. आ मनोगुप्ति जिनदास श्रेष्ठिनी जेम पाळवी–तेनुं दृष्टांत आ प्रमाणे—

मनोगुप्ति पर जिनदास श्रेष्ठिनुं दृष्टांत.

चंपापुरीमां जिनदास नामे एक श्रेष्ठि रहेतो हतो. ते एकदा पौषध व्रत होवाथी रात्रिए कायोत्सर्ग करीने पोताना शून्य घरमां रह्यो हतो. ते तेनी कुलटा स्त्रीना जाणवामां न होवाथी ते स्त्री तेज घरमां लोढाना खीला वाळा जेना पाया हता एवो पलंग लावी. तेनो एक पायो श्रेष्ठिनाज पग उपर मूकीने पोताना जारनी साथे क्रीडा करवा लागी. तेमना भारनी पीडा पामतो सतो ते श्रेष्ठि मनोगुप्ति पाळी मरण पामीने स्वर्गे गयो.

हवे वाग्गुप्ति नामनो सातमो चारित्राचार कहे छे.

> मौनावलंबनं साधोः, संज्ञादिपरिहारतः ।
> वाग्वृत्तेर्वा निरोधो यः, सा वाग्गुप्तिरिहोदिता ॥१॥

भावार्थ—" संज्ञादिकनो पण त्याग करीने साधु जे मौन धारण करे अथवा वाणीनी वृत्तिनो निरोध करे ते वाग्गुप्ति कहेवाय छे. "

आ वाग्गुप्तिना बे प्रकार छे. ते आ प्रमाणे—मुख, नेत्र अने भृकुटिनो विकार, आंगळीथी इसारो करवो, ऊंचेथी खोंखारो मारवो, हुंकार करवो, कांकरो विगेरे फेंकवुं, इत्यादि कार्यनुं सूचवन करनारी सर्व संज्ञा (इसारा) नो त्याग करीने 'आजे मारे कांइ पण बोलवुं नहीं ' एवो अभिग्रह धारण करे ते पहेली वाग्गुप्ति कहेवाय छे; परंतु चेष्टा विगेरे करीने पोताना कार्यनुं सूचन करवुं, अने मौननो अभिग्रह करवो ते तो निष्फळज छे. तथा वाचना, पृच्छना अने बीजाना प्रश्नना जवाबमां लौकिक आगमना विरोध रहित मुखवस्त्रिकाथी मुखकमळनुं आच्छादन करीने बोलता सता वाग्वृत्तिने जे नियममां राखवी ते बीजी वाग्गुप्ति कहेवाय छे. आ बे भेदथी एवुं सिद्ध थाय छे के सर्वथा वाणीनो निरोध करवो, अथवा यथार्थ सम्यक्

भाषण करवुं ते वचनगुप्ति छे; अने भाषासमितिमां तो मात्र सम्यक् वाणीनी प्रवृत्ति करवी एम छे, एटलो वाग्गुप्तिमां अने भाषा समितिमां तफावत छे. कह्युं छे के-

समियो नियमा गुत्तो, गुत्तो समियत्तणंमि भयणिज्जा ।
कुशलवयमुदीरंतो, जं वइगुत्तो वि समियो वि ॥१॥

भावार्थ—" जे समितिवान होय ते अवश्य गुप्तिवाळो होय छे, अने जे गुप्तिवाळो होय तेने समितिनी भजना होय छे; तेथी जे यथार्थ वचन बोलनार होय तेने समिति अने गुप्ति बन्ने होय छे.

आ वाग्गुप्तिना समर्थन माटे अन्य शास्त्रनुं दृष्टांत कहे छे—

विष्णुपुरना उद्यानमां शिवशर्मा, देवशर्मा अने हरिशर्मा नामना त्रण तापसो महा उग्र तप करता हता. ते त्रणेना तपना प्रभावथी पहेरवानां धोतीयां आकाशमां निराधार सुकातां हतां, एवी सर्वत्र प्रसिद्धि हती. एकदा ते त्रणे तापसो सरोवरमां स्नान करवा गया, त्यां तेमनां धोतीयां आकाशमां तमके सुकातां हतां, तेवामां ते सरोवरमां कोइ बगलाए आवीने एक मत्स्यने पकड्यो. ते जोइने " अरे! आ बहु खोटुं थयुं, आ पापीए निरपराधी मत्स्यने पकड्यो. अरे! मूकी दे, मूकी दे." एम बोलीने मत्स्यपर दया अने बगलापर निर्दयता बतावनार शिवशर्मानुं धोतीयुं आकाशमांथी नीचे पड्युं. ते जोइने बगला उपर दया लावीने " अरे! मूकीश नहीं, मूकीश नहीं. आ विचारो बगलो क्षुधाथी मरी जशे." एम बोलता बगलापर दया ने मत्स्यपर निर्दयता बतावनार देवशर्मानो पट पण नीचे पड्यो. ते बन्नेना पट नीचे पडेला जोइने बगला अने मत्स्य ए बन्नेपर समभाव राखीने हरिशर्मा बोल्यो के-

मुंच मुंच पतत्येको, मा मुंच पतितो यदि ।
उभौ तौ पतितौ दृष्ट्वा, मौनं सर्वार्थसाधकम् ॥१॥

भावार्थ—" मूक, मूक " एम कहेवाथी एकनुं वस्त्र पड्युं, अने " मूकीश नहीं, मूकीश नहीं " एम कहेवाथी बीजानुं वस्त्र पण पड्युं, ते बन्नेने पडेला जोइने हुं धारुं छुं के मौन राखवुं तेज सर्व अर्थनुं साधक छे."

आ प्रमाणे पंडितना विषयमां जेम मौन कल्याणकारी कह्युं, तेम केटलीक वखत अपंडितने पण मौन हितकारी थाय छे. कह्युं छे के—

स्वायत्तमेकान्तगुणं विधात्रा
विनिर्मितं छादनमज्ञतायाः ।
विशेषतः सर्वविदां समाजे
विभूषणं मौनमपंडितानाम् ॥१॥

भावार्थ—" पोताने आधीन अने एकांत गुणकारी एवुं मूर्खतानुं आछादन (ढांकण) विधाताए निर्माण करेलुं छे. ते ए छे के पंडितोनी सभामां मूर्खनुं विशेषे करीने मौनज उत्तम भूषण छे."

" रागद्वेष सहित एवुं ते वन्ने तापसोनुं वचन वस्त्र पडवानुं कारण थयुं." एम विचारी समभावथी मौन रहेला त्रीजा हरिशर्मानुं वस्त्र आकाशमांज रह्युं.

आ दृष्टांतथी स्याद्वाद धर्मने जाणनारा मुनिए तो लाभालाभनो विचार करीने अवश्य वाग्गुप्ति अने वाक्समितिनी योजना करवी.

हवे कायगुप्ति नामनो आठमो चारित्राचार कहे छे.

कायगुप्तिर्द्विधा प्रोक्ता, चेष्टानिवृत्तिलक्षणा ।
यथागमं द्वितीया च, चेष्टानियमलक्षणा ॥ १ ॥

भावार्थ—" आगमने अनुसारे कायगुप्ति वे प्रकारनी कहेली छे. पहेली सर्वथा चेष्टानी निवृत्ति लक्षणवाळी अने बीजी चेष्टाना नियम लक्षणवाळी जाणवी."

अहीं एम समजवानुं छे के देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंचकृत अने स्वकृत आस्फालन पतन विगेरे एम चार प्रकारना उपसर्गनो तथा क्षुधा तृषा विगेरे परीसहोनो संभव छतां पण कायोत्सर्ग करवा विगेरेथी देहने निश्चळ राखवो ते, तथा सर्व योगनो निरोध करवानी अवस्थाए सर्वथा चेष्टानो निरोध करवो ते पहेली कायगुप्ति छे ; अने शयन, आसन, निक्षेप,[1] आदान[2] विगेरेमां स्वच्छंदपणानो परिहार करीने शास्त्रोक्त क्रिया करवा पूर्वक कायचेष्टाने नियममां राखवी ते बीजी कायगुप्ति छे. तेमां शयन ते रात्रिने विषेज करवुं, पण दिवसे नहीं. रात्रिए पण प्रथम प्रहर व्यतीत थया पछी,

१ मूकवुं ते. २ लेवुं ते.

गुरुनी आज्ञा लइने, पृथ्वीनुं प्रेक्षण तथा मार्जन करीने, संथारानां वे पड भेळां करीने, मस्तक, शरीर अने पग विगेरे मुखवस्त्रिका तथा रजोहरणवडे पूंजीने, पछी आज्ञा आपेला संथारापर बेसी पोरसी भणवी. पछी बाहुनुं उपधान (ओसीकुं) करीने बन्ने पगने संकोचीने सुवुं, अथवा बन्ने जंघाओ कुकडीनी जेम अधर आकाशमां राखवी, अने पूंजेली भूमिपर पग राखवा. पछी हाथपगनो संकोच करतां फरीने पण तेने प्रमार्जवा. श्वास विगेरे उभावतां तेमज उद्वर्तन (खरज) करतां पण मुखवस्त्रिकावडे शरीरने पूंजवुं. ए रीते पोताना देह प्रमाण एटले त्रण हाथ जेटला भूमिप्रदेशमां सुइने अल्प निद्रा करवी. तथा जे स्थाने बेसवानी इच्छा होय ते स्थान प्रथम चक्षुथी जोइ, पछी तेने पूंजीने बेसवानुं वस्त्र पाथरीने बेसवुं. अशुद्ध स्थंडिल होय तो कायगुप्ति विशेषे करवी. ते उपर दृष्टांत कहे छे के—कोइ एक साधुए सार्थ साथे विहार कर्यो. एक दिवस अरण्यमां मुकाम थयो. ते अरण्यमां भूमि बहु जीवव्याकुळ होवाथी शुद्ध स्थंडिल मळ्युं नहीं, तेथी ते साधु रात्रिए एक पग मात्र पृथ्वीपर राखीने उभा रह्या. ते जोइने इंद्रे सभामां ते साधुनी प्रशंसा करी. ते सांभळीने कोइ मिथ्यादृष्टि देवताए परीक्षा करवा माटे त्यां आवीने सिंह रूपे ते साधुने चपेटाथी प्रहार कर्यो. ते प्रहारथी पडी जतां साधुए वारंवार प्राणीनी विराधनानो संभव जाणीने मिथ्या दुष्कृत आप्युं. छेवट थाकीने ते देवता प्रगट थयो. अने सर्व वृत्तांत कही तथा तेमने खमावीने स्वर्गे गयो. बीजा साधुओए पण ते साधुनी प्रशंसा करी. आ दृष्टांत सांभळीने मुनिए कायगुप्ति अवश्य धारण करवी.

उपर कहेली युक्तिथी त्रणे गुप्तिनुं मुनिए पालन करवुं. ते विषे दृष्टांत नीचे प्रमाणे—

कोइ एक नगरमां एक साधु कोइ श्रावकने घेर भिक्षा लेवा माटे गया. तेने ते श्रावके नमन करीने पूछ्युं के " हे पूज्य ! तमे त्रण गुप्तिए गुप्त छो ? " तेना जवाबमां मुनिए कह्युं के ' हुं त्रण गुप्तिए गुप्त नथी. ' श्रावके तेनुं कारण पूछ्युं, एटले मुनिए कह्युं के " हुं एक दिवस कोइने घेर भिक्षा माटे गयो हतो, त्यां तेनी स्त्रीनी वेणी जोइ, तेथी मने मारी स्त्रीनुं स्मरण थयुं, माटे मारे मनोगुप्ति नथी. एकदा भिक्षा माटे श्रीदत्त नामना गृहस्थने घेर गयो हतो. तेणे मने केळां योग्य जाणी आप्यां. त्यांथी हुं बीजे घेर गयो. ते बीजा घरवाळा श्रावके मने ' आ केळां कोणे आप्यां ? ' एम पूछ्युं, एटले में सत्य वात जणावी. ते श्रावक पेलां केळां आपनारनो

द्वेषी हतो, तेथी तेणे जइने राजाने कह्युं के " हे स्वामी ! आपनी वाडीनां केळां दररोज श्रीदत्तने घेर जाय छे." राजाए पूछ्युं के 'तें शी रीते जाण्युं ? ' ते बोल्यो के " तेणे मुनिने आप्यां, अने में ते मुनिना मुखथी सांभळ्युं. तेवां केळां आपनी वाडी शिवाय बीजे कोइ ठेकाणे थतां नथी. " ते सांभळीने राजाए श्रीदत्तने शिक्षा करी, तेथी मारे वाग्गुप्ति पण नथी. केमके ते श्रेष्ठीने दंड कराववामां हुं कारणभूत थयो. एकदा विहार करतां हुं एक अरण्यमां गयो. त्यां थाकी जवाथी निद्रा पाम्यो. ते ठेकाणे एक सार्थ आवीने रह्यो. रात्रिए सार्थपतिए सौने कह्युं के "हे माणसो! प्रातःकाले अहींथी वहेलां चालवुं छे, माटे वेळासर भोजनसामग्री तैयार करी ल्यो." ते सांभळीने सर्व जनो रसोइ करवा लाग्या. ते वखते अंधकार होवाथी एक माणसे मारा मस्तक पासे एक बीजो पथ्थर मूकीने चूलो कर्यो. पछी तेमां अग्नि सळगाव्यो. ते अग्नि लागवाथी में मारुं मस्तक लइ लीधुं. तेथी मारे कायगुप्ति पण नथी. माटे हुं भिक्षा योग्य मुनि नथी. " आ प्रमाणेना ते मुनिना सत्य भाषणथी ते श्रेष्ठी बहु हर्ष पाम्यो अने मुनिने प्रतिलाभित कर्या. मुनिनी अत्यंत प्रशंसा करवाथी ते श्रेष्ठीए अनुत्तर विमाननुं सुख उपार्जन कर्युं. मुनि पण पोताना आत्माने निंदता चिरकाल पर्यंत चारित्र पाळीने अनुक्रमे स्वर्गे गया.

॥ इति त्रिगुप्ति स्वरूपं ॥

पूर्वे कहेली पांच समितिओ प्रतिचार (प्रवृत्ति) रूप छे, अने त्रण गुप्तिओ तो प्रतिचार (प्रवृत्ति) तथा अप्रतिचार (अप्रवृत्ति) ए बन्ने रूप छे. प्रतिचार एटले कायानो अथवा वाणीनो व्यापार. तेथी गुप्तिओमां समितिओनो अन्तर्भाव पण थइ जाय छे. ते एवी रीते के बीजी भाषासमितिनो वाग्गुप्तिमां अंतर्भाव थाय छे. एषणा समिति मनना उपयोगथी उत्पन्न थाय छे. केमके ज्यारे साधु एषणा समितिमां उपयोगवाळा होय त्यारे श्रोत्रादिक इंद्रियोवडे वहोरावनार हाथ के पात्रादिक धोवे छे के ले मूके छे इत्यादिथी थता शब्दादिकमां उपयोग राखे छे. माटे तेनो मनोगुप्तिमां समावेश थाय छे. बाकीनी त्रण समितिओ कायानी चेष्टाथी उत्पन्न थाय छे, तेथी तेमनुं कायगुप्तिसाथे ऐक्यपणुं छे, अथवा एक मनोगुप्तिज पांचे समितिओमां अविरुद्ध छे. ते आठ प्रवचननी माताओ कहेवाय छे; ते समग्र द्वादशांगीने उत्पन्न करनार छे. केमके ते आठेमां समस्त प्रवचन अंतर्भाव पामे छे; ते ए रीते के पहेली समितिमां पहेला व्रतनो समावेश थाय छे अने ते व्रतनी वाड समान बा-

कीनां व्रतो होवाथी ते पण तेमांज अन्तर्भाव पामे छे. भाषा समिति तो सावद्य वाणीनो परिहार करीने निरवद्य वाणी बोलवा रूप छे, तेथी ते समितिमां समग्र वचनना पर्याय आवी गया; केमके द्वादशांग कांइ वचन पर्यायथी भिन्न नथी. ए प्रमाणे एषणा समिति विगेरेमां पण स्वबुद्धिथी भावना करवी, अथवा आ आठे प्रकार चारित्र रूपज छे. कह्युं छे के—

> अथवा पंचसमितिगुप्तित्रयपवित्रितम् ॥
> चरित्रं सम्यक् चारित्रमित्याहुर्मुनिपुंगवाः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अथवा पांच समिति अने त्रण गुप्तिथी पवित्र एवुं जे चरित्र तेज सम्यक् चारित्र छे, एम श्रेष्ठ मुनिओ कहे छे. "

ज्ञान दर्शन विना चारित्र होयज नहीं; अने अर्थथी ज्ञान, दर्शन, चारित्रथी भिन्न द्वादशांग छेज नहीं. तेथी आ आठे प्रकारमां सर्व प्रवचननो समावेश थाय छे. " माटे चारित्रधारी मुनिओए प्रमादनो त्याग करीने आ आठे प्रवचन मातानी उपासना करवी. केमके ए आठेमां प्रशस्य एवुं सर्व प्रवचननुं रहस्य समायेलुं छे. "

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
द्व्यशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २८२ ॥

व्याख्यान २८३ मुं.

तपाचार विषे.

> अनादिसिद्धदुष्कर्मद्वेषिसंघातघातकम् ।
> इदमाद्रियते वीरैः, खड्गधारोपमं तपः ॥ १ ॥

भावार्थ—" अनादि सिद्ध एवा दुष्कर्म रूपी शत्रुसमूहनो नाश करनारुं आ खड्गनी धारा जेवुं तप वीर पुरुषो आदरे छे. "

तत्तपः सेव्यतां दक्षा, दुष्कर्मक्षालनोदकम् ।
यत्सेवनादभूद्देवसेव्यः क्षेमर्षिसंयमिः ॥ २ ॥

भावार्थ—" हे माह्या पुरुषो ! दुष्कर्म रूप मळने क्षालन करवामां जळ समान एवा ते तपनुं तमे पण सेवन करो के जेना सेवनथी क्षेमर्षि मुनि देवताओने पण सेव्य (पूज्य) थया छे. "

क्षेमर्षि मुनिनुं दृष्टांत.

चितोम गढनी पासेना एक गाममां एक बोह नामनो निर्धन श्रावक रहेतो हतो. ते एकदा पांचसे डाम (पांच रुपीया) नुं तेल एक कुमलामां भरीने वेचवा माटे चितोमगढ तरफ चाल्यो. मार्गमां पग स्खलन थवाथी ते पमी गयो, अने कुमलुं पण भांगी गयुं. तेथी खिन्न थइने पाछो पोताना गाममां आव्यो. तेनुं वृत्तांत सांभळवाथी लोकोने तेनापर करुणा उत्पन्न थइ, तेथी तेने पांच रुपीया उधराणुं करीने आप्या. तेथी फरीने तेलनुं कुमलुं भरीने जतां तेज रीते पड्यो अने कुमलुं भांगी गयुं. पछी वैराग्य पामीने श्री यशोभद्र गुरु पासे जइ वैराग्यमय देशना सांभळीने तेणे दीक्षा लीधी. गुरुए बे प्रकारनी शिक्षा शिखवी. अनुक्रमे ते गीतार्थ थया. पछी तेणे गुरुने विज्ञप्ति करी के " हे प्रभु ! में जो वैराग्यथी दीक्षा लीधी छे, तो हुं मन, वचन, कायानी शुद्धिथी तेनी प्रतिपालना करवा इच्छुं छुं, तेथी जो आपनी आज्ञा होय तो जे स्थाने घणा उपद्रव थवानो संभव होय तेवा स्थाने जइने हुं कायोत्सर्गे रहुं. " गुरुए लाभ जोइने मालव देशमां जवानुं कह्युं. एटले ते सर्व गच्छने तथा संघने खमावीने माळवा देशमां गया; त्यां थामणोद गामनी पासे सरोवरनी पाळ उपर कायोत्सर्ग करीने उभा रह्या. तेवामां ते गामना ब्राह्मणपुत्रो क्रीमा करवा माटे त्यां आव्या. तेओए साधुने जोइने विचार्युं के " आ आपणा गाममां अरिष्ट (उपद्रव) आव्युं. " एम विचारीने यष्टि मुष्टि विगेरेना प्रहारथी तेमने उपद्रव करवा लाग्या. मुनिए सर्व उपसर्ग सहन कर्या. पण ते सरोवरना अधिष्ठायक देवताए ध्यानस्थ मुनिने निश्चल जोइने सर्व ब्राह्मणपुत्रोने मयूरबंधने बांधी लीधा. तेथी ते सर्वे मुखथी रुधिर वमन करता पृथ्वीपर पड्या. तेमना मातपिताओ ते वात सांभळी दुःखित थइने साधु पासे आवी बोल्या के " हे भगवन्! तमे तो कृपाळु मुनि छो, माटे आ बाळकोने बंधनथी मुक्त करो. " तोपण मुनिए ध्यान मूक्युं नहीं. त्यारे ते

देवता एक बाळकना शरीरमां प्रवेश करीने तेमना मातपिता प्रत्ये बोल्यो के " आ मुनिए कांइ पण कर्युं नथी, परंतु जे कर्युं छे ते मंज कर्युं छे, तेथी जो आ मुनिना चरणोदकथी आ बाळकोने छांटशो तो तेओ बंधनमुक्त थशे, बीजी रीते थशे नहीं. " ते सांभळीने तेओए तेम कर्युं, एटले ते बाळको सज्ज थया. पछी ते मातपिताओए पोतपोताने घेरथी द्रव्य लावीने साधुने भेट कर्युं, अने 'आ ग्रहण करो, आ ग्रहण करो' एम बोलवा लाग्या. साधुए कह्युं के " हे लोको! मारे द्रव्यनुं कांइ पण प्रयोजन नथी. तेथी आ द्रव्य तमे जीर्णोध्धारमां वापरो." तेथी सर्व माणसोए ते मुनिनी निःस्पृहता जोइने तेनुं क्षमार्षि एवुं नाम प्रसिद्ध कर्युं. त्यां सर्व लोकोने अति भक्त थयेला जाणीने मुनि गिरिकंबल नामना पर्वतपर जइने विविध प्रकारनां तप करवा लाग्या.

ते वखते मालव देशमां धारानगरीमां सिंधुल नामे राजा राज्य करतो हतो. क्षमार्षि मुनिए विविध प्रकारनां तप करतां पारणाने माटे एवा अभिग्रहो कर्या के ककारवाळी सात चीज जेवी के कूर, कंसार, कांग, कोद्रव, करंब, केर अने कर्पट ते मळे तो पारणुं करवुं. वळी कोइ वखत पांच खकारवाळी चीज जेवी के खारेक, खुरमी, खजुर, खाजां अने खांड. वळी कोइ वखत गकारवाळी सात चीज जेवी के गहुं (घउं), गोळ, गुंद, गुंदवडां, गुणा, गोळ अने गोरस. तेवीज रीते बीजा वर्णवाळी वस्तुवडे करीने पारणाना अभिग्रहो लेता हवा. ते सर्व अभिग्रहो तपना प्रभावथी पूर्ण थया. पछी "आ अभिग्रहो तो कांइ पण दुष्कर नथी" एम जाणीने उग्र अभिग्रहो लेवा मांड्या. ते आ प्रमाणे—" जो कोइ मिथ्यात्वी राजा राज्यथी भ्रष्ट थयेलो, मध्याह्न समये, कंदोइनी दुकाने, पलांठी वाळीने बेठेलो, राजाना पत्तिपणाने पामेलो, पोताना काळा केशने विखेरतो, तीक्ष्ण भालाना अग्र भागवडे एकवीश मांडा लइने मने आपशे त्यारे हुं पारणुं करीश, अन्यथा नहीं करुं. " ते विषे एक कवित छे—

न्हाणठिय रावल कन्हडो, केशि गलंतइ मण दुम्मणो;
भल्लइं इगवीश मंडा देइ, तओ खिम ऋषि पारणां करेइ. ॥ १ ॥

---

१ आ कवितामां ने उपली हकीकतमां अभिग्रहमां फेर छे. आमां तो एम कह्युं छे के "न्हावा बेठेलो राजानो सेवक केश गळने (पाणी झमने) दुर्मनवाळा मनथी भालावडे एकवीश मांडा आपे तो क्षमार्षि पारणुं करे. "

आ अभिग्रहमां ते मुनिए त्रण मासने आठ दिवस अतिक्रमण कर्या. अन्यदा मध्याह्नकाळे कृष्ण नामनो पत्ति तेवीज रीते कंदोइनी दुकाने बेठेलो, तेणे भिक्षा माटे नीकळेला मुनिने बोलावीने कह्युं के "हे भिक्षु! अहीं आवो, तमारी आशा पूर्ण करुं." ते सांभळीने मुनि तेनी पासे गया, एटले कृष्णे भालाना अग्र भागे मांडा लइने मुनिने आपवा मांड्या. मुनिए तेने ते मांडा गणवानुं कह्युं, त्यारे कृष्ण बोल्यो के "एमां शुं गणवुं छे? तमारा भाग्यमां हशे तेटला हशे." मुनिए कह्युं के "मारे एकवीश मांडानो अभिग्रह छे, माटे गणो." ते सांभळी कृष्णे गण्या तो एकवीश थया." तेथी अत्यंत आश्चर्य पामीने तेणे मुनिने कह्युं के "हे मुनि! तमे तो ज्ञानी जणाओ छो, माटे मारुं आयुष्य केटलुं छे ते कहो. मने मारा पित्राइओए मारा मोटा राज्यथी भ्रष्ट कर्यो छे, तेमने जीतवा माटे अहीं सिंधुल राजानी सेवा करुं छुं." ते सांभळीने मुनि बोल्या के "तारुं आयुष्य मात्र छ मासनुं बाकीमां छे." ते सांभळीने कृष्णे तत्काळ वैराग्य उत्पन्न थवाथी दीक्षा लीधी, अने छ मास तप करीने ते कृष्णर्षि स्वर्गे गया.

वळी क्षेमर्षि मुनिए बीजो अभिग्रह लीधो के—

खंभ उम्मूलिय गयवर धाइ, मुनिवर देखी प्रसन्नो थाइ;
मोदक पंचक सुंडीहिं देउ, तओ खिम ऋषि पारणं करेइ ॥२॥

"आलान स्थंभनुं उन्मूलन करीने दोडेलो हाथी मुनिवरने देखीने प्रसन्न थाय अने पोतानी सुंढवडे पांच लाडवा आपे तो क्षमर्षि पारणुं करे."

आवो अभिग्रह लइने पांच मास ने अढार दिवस निर्गमन कर्या, त्यारे एक दिवसे कोइ मत्त थयेलो पट्टहस्ती घरोने पाडतो कंदोइनी दुकान पासे आव्यो. त्यांथी सुंढवडे पांच मोदक लइ ऋषिने आपीने तेणे पारणुं कराव्युं. मुनिना प्रभावथी हस्ती शांत थयो, एटले तेने महावतोए लइ जइने आलानस्तंभे बांध्यो.

वळी मुनिए अभिग्रह लीधो के "सासुथी पीडा पामेली वृद्ध (मोटी) वहु रोती रोती, त्रण उपवासवाळी, काष्ठ लेवा आवेला दरिद्री माणसे घी गोळ मिश्रित मांडा जेने आप्या छे एवी ते मांडा मने आपशे त्यारे पारणुं करीश."

रांडी गारी बंभण रंडी, सासुसिउं कली करे पयंडि;
बिहु गाम बिचे गुलसि पोली देइ, तो खिमऋषि पारणं करेइ ॥३॥

पछी मुनि पारणा माटे गिरिपरथी उतरता हता, तेवामां कोइ गाममांथी सासुवडे पीडा पामेली कोइ ब्राह्मणी पिताना घर तरफ जती हती. ते मार्गथी अजाणी हती. तेथी आडे रस्ते ते वनमां आवी. त्यां कोइ दरिद्र पुरुष पासेथी घी गोळ मिश्र मांडा तेने मळ्या. तेवामां ते मुनिने जोइने 'आठगणुं पुण्य थशे' एम विचारीने ते मुनिने तेणे मांडाथी प्रतिलाभित कर्या. पछी ते दाननी प्रशंसा करती ते ब्राह्मणी पिताने घेर गइ.

वळी मुनिए अभिग्रह कर्यो के "काळी खांधवाळो, नाक पुंछ विनानो (नाक तुटेलो ने बांडो) वळद शींगडावडे गोळ आपे तो पारणुं करवुं, नहींतो न करवुं."

कालो कंबल धवलो संढ, नाकिं तुट पुछिहि बंड;
सिंग करी गुड जेलो देइ, तो खिम ऋषि पारणं करेइ ॥४॥

अन्यदा मुनि पारणा माटे धारा नगरीमां गया. त्यां उपर कह्या तेवाज वळदे कोइ वणिकनी दुकानमांथी शींगडावडे गोळ लइने मुनिने पारणुं कराव्युं. ते चमत्कार जोइने ते वणिके विचार्युं के "अहो! आ पशु सामान्य नथी के जेणे आवा मुनिने पारणुं कराव्युं. में मूर्खाए तो मनुष्यजन्म वृथा गुमाव्यो." पछी तेणे श्रावक थइने बचेलो गोळ वेची श्री पार्श्वनाथ स्वामीनुं चैत्य कराव्युं, अने यशोभद्र गुरु पासे जइ चारित्र लइने स्वर्गे गयो. त्यारथी ते चैत्य गुडपिंड नामनुं तीर्थ थयुं.

वळी वसंत ऋतुमां मुनिए अभिग्रह कर्यो के "जो सांकळथी बांधेलो कोइ वांदर नगरमां आवीने केरीनो रस आपे तो पारणुं करीश."

हासहछेहकि जइ विमासी, कोटि संकल बद्धओ पासि;
जइ अंबरस मंड देइ, तओ खिम ऋषि पारणं करेइ ॥५॥

अन्यदा कोइ वखत उष्ण ऋतुमां कोइ श्रेष्ठीए घृतना कुंभमां आम्र रस नांख्यो हतो, ते लइने कोइ कपि नाठो. रस्तामां ते मुनिने जता जोइने तेणे ते रस मुनिने आप्यो. ते जोइने 'अहो मोटुं आश्चर्य' एम परस्पर बोलता घणा लोको जैन धर्मी थया.

अन्यदा अवधिज्ञानवडे जोइने कृष्णर्षिदेव स्वर्गमांथी ते मुनि पासे आवी

नमस्कार करीने बोल्यो "के हे प्रभु ! शासननी उन्नतिने माटे संधिन्न राजाना हाथीओनी रोगशांति माटे तमे तमारुं चरणोदक आपजो." एम कहीने ते अदृश्य थयो. ते वखते संधिन्न राजाना चौदसो हस्तीओ व्याधिग्रस्त थया हता. वैद्योए अनेक उपाय कर्या, तोपण ते निरोगी थया नहीं. तेथी तेओए उपचार करवो बंध कर्यो. राजा अति शोकातुर थयो. पछी मंत्रीना कहेवाथी राजाए उद्घोषणा करावी के "जे कोइ आ हस्तीओना रोगनी शांति करशे तेने राजा अर्धुं राज्य आपशे." ते वखते आकाशवाणी थइ के "गिरिकंदरा पर्वत उपर क्रमर्षि तप करे छे. तेना पादशौचना जळथी हस्तीओ नीरोगी थशे." ते सांभळीने राजसेवकोए मुनि पासे जइने पादशौचनुं जळ माग्युं. एटले मुनिए कह्युं के "हे माणसो ! एक पट्टहस्ती सिवाय बीजा सर्व हस्तीओने आ जळ पावुं, एटले तेओ नीरोगी थशे, अने पट्टहस्तीने जैन धर्मी सिवाय कोइ बीजाना पादोदकथी नीरोगी करजो." पछी ते राजसेवकोए आवीने ते प्रमाणे बीजा सर्व हस्तीओने नीरोगी कर्या. पट्टहस्तीने अन्यदर्शनीनुं पादोदक लावीने पायुं, तेथी ते पट्टहस्ती मृत्यु पाम्यो. पछी राजाए मुनि पासे जइने अर्धुं राज्य ग्रहण करवा प्रार्थना करी. मुनि बोल्या के "हे राजा ! राज्य तो छेवट नरकगति आपे छे, तेथी ते मुनिओने सर्वथा त्याज्य छे. मुनिने चारित्र शिवाय बीजा कोइ राज्यनो खप नथी." ते सांभळीने राजा हर्ष पाम्यो. पछी मुनिने नमीने ते पोताने स्थाने गयो, अने एक प्रासाद करावीने तेमां सिंहासन उपर मुनिनी पादुका स्थापन करी.

अन्यदा मुनिए मार्गमां सन्मुख आवता शबने जोइने कोइ माणसने पूछ्युं के 'अरे आ शुं छे ?' ते माणस बोल्यो के "धन नामना श्रेष्ठीना पुत्रने सर्प डस्यो हतो ते आज छ मासे मृत्यु पाम्यो छे." ते सांभळीने मुनि बोल्या के "अहो ! आ जीवता माणसने केम बाळवा लइ जाओ छो ?" ते मुनिना वचनने कोइए श्रेष्ठी पासे जइने कह्युं, एटले धन श्रेष्ठी मुनि पासे आवी नमस्कार करीने बोल्यो के "हे मुनि ! मारा पुत्रने जीवितदान आपवा वडे कृपा करो." मुनिए ते शब उपर परमेष्ठि मंत्रनुं स्मरण करीने प्रासुक जळ छांट्युं, तेथी ते बेठो थयो.

वळी एकदा ते मुनिए एवो अभिग्रह लीधो के "जो वनमां प्रसवेली वाघण गाममां आवीने मने वीश वर्षां आपे तो मारे पारणुं करवुं."

नव प्रसुत वाघिणि विकराल, नयर मांही वीहावे बाळ;

वस्त्रां वीस जो पणमी दीये, तो खिम ऋषि पारणुं करे. ६

आ अभिग्रहने घणा दिवस व्यतीत थया पछी एकदा ऋषिना तपना प्रभावथी तरतनी प्रसवेली कोइ वाघण नगरमां पेठी. तेने जोइने वस्त्रांना वेपारीओ वस्त्रां मूकीने नाठा. एटले वाघणे तेमांथी वीश वस्त्रां लइने मुनिने आप्यां.

पछी यशोभद्र गुरुने वांदवा माटे उत्सुक थयेला मुनिए अभिग्रह कर्यो के—" पाटण पहोंची गुरुने वांद्या पहेलां मारे अन्न के जळ कांइ पण लेवुं नहीं. " एवो अभिग्रह करीने ते मुनि पाटण आव्या अने गुरुने वंदना करी.

फरीने मुनिए अभिग्रह लीधो के " वृद्ध स्त्रीए वश करेलो राजानो मदोन्मत्त हाथी जो खीचडी, खारेक, खडहडी, खाजा ने खांड ए पांच खकारवाळी चीज आपे तो मारे पारणुं करवुं. " पछी एक मास गयो, त्यारे शासनदेवताए वृद्ध स्त्रीनुं स्वरूप धारण करीने राजानो हस्ती वश कर्यो, अने मुनिने पारणुं कराव्युं.

इत्यादि प्रकारे ते मुनिए जुदा जुदा अभिग्रहोवडे चोराशी पारणां पूर्ण कर्यां. पछी अनशन करीने ते मुनि स्वर्ग गया.

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य त्र्यशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २८३ ॥
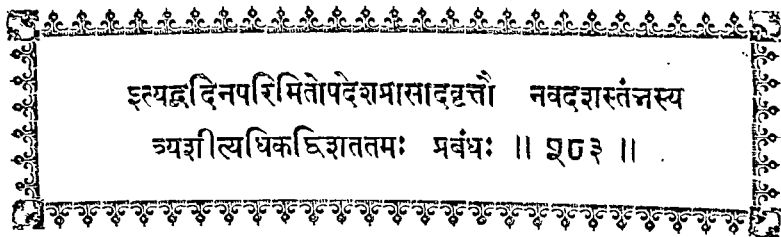
व्याख्यान २८४ मुं.

तपस्या करवाना हेतुओ कहे छे.

निर्दोषं निर्निदानाढ्यं, तन्निर्जराप्रयोजनम् ।
चित्तोत्साहेन सद्बुद्ध्या, तपनीयं तपः शुभम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" निर्दोष, नियाणा विनानुं, अने मात्र निर्जरानाज कारणभूत एवुं शुभ तप सारी बुद्धिवडे मनना उत्साह पूर्वक करवुं. "

जेनाथी शरीर अने कर्म विगेरे तपे ते तप कहेवाय छे. कह्युं छे के—

रसरुधिरमांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राण्यनेन तप्यन्ते ।
कर्माणि चाशुभानीत्यतस्तपो नाम नैरुक्तम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा अने शुक्र तेमज अशुभ कर्मो तेनाथी ताप पामे छे, तेथी तेनुं नाम ' तप ' कहेलुं छे."

ते तप निर्दोष करवो एटले आलोक तथा परलोकना सुखनी इच्छा रहित करवो. वळी ते निदान रहित करवो. कह्युं छे के—

यः पालयित्वा चरणं विशुद्धं, करोति भोगादिनिदानमज्ञः ।
स वर्धयित्वा फलदानदक्षं, कल्पद्रुमं भस्मयतीह मूढः ॥१॥

भावार्थ—" जे अज्ञानी माणस शुद्ध चारित्रनुं पालन करीने भोगादिक प्राप्त थवानुं निदान करे छे ते मूढ माणस फळ आपवामां दक्ष एवा कल्पवृक्षने वधारीने पछी भस्मसात् करे छे, एम जाणवुं. "

निदान नव प्रकारना छे. तेनुं वर्णन आज ग्रंथमां प्रथम कर्युं छे, तेथी अहीं फरीथी लखता नथी. वळी ते तप चित्तना उल्लास पूर्वक करवुं. पण राजानी वेठनी जेम अणगमाथी करवुं नहीं, अथवा जेटली शक्ति होय तेटलुं करवुं. कह्युं छे के—

सो अ तवो कायव्वो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेइ ।
जेण न इंदियहाणी, जेण जोगा न हायंति ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे तप करवाथी मन दुष्ट (माठा विचार करनारुं) न थाय, इंद्रियोनी हानि न थाय अने योग पण न हणाय, तेवुं तप करवुं. "

वळी ते तप सारी बुद्धिथी करवुं, अर्थात् पराधीन बुद्धिथी दीनपणे अन्नादिनी प्राप्तिने अभावे आहारत्याग रूप अज्ञान तप करे, तो ते आश्रवनुं कारण होवाथी तथा क्रोधादिक कषायना उदयनुं आश्रित होवाथी ते तप नथी, पण पूर्वे बांधेला अन्तराय कर्मना उदयथी असाता वेदनीयनो मात्र ते विपाकज छे. केमके आहारनो त्याग करवो ते द्रव्य तप छे, अने आत्मस्वरूपनी एकाग्रता करवी ते भाव तप छे. ते भाव तप तो अहर्निश होइ शके छे, परंतु द्रव्य तप पूर्वक भाव तपनुं ग्रहण करवुं. एवुं शासननुं चातुर्य तजवुं नहीं. कह्युं छे के—

धनार्थिनां यथा नास्ति, शीततापादि दुःसहम् ।
तथा भवविरक्तानां, तत्त्वज्ञानार्थिनामपि ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेम धनना अर्थी पुरुषोने शीत तापादिक दुःसह नथी, तेम संसारथी विरक्त थयेलाने तेमज तत्त्वज्ञानना अर्थी पुरुषोने पण ते दुःसह नथी. "

तपाचारना बार भेद कहेला छे. ते आ प्रमाणे—

द्वादशधास्तपाचारास्तपोवद्भिर्निरूपिताः ।
अशनाद्याः षड् बाह्याः षट्, प्रायश्चित्तादयोऽन्तगाः ॥ १ ॥

भावार्थ— " तपस्वी परमात्माए बार प्रकारे तपाचार कहेलो छे. तेमां अशन (त्याग) विगेरे छ प्रकारनो बाह्य तप छे अने प्रायश्चित्त विगेरे छ प्रकारनो अंतरंग तप छे. "

बाह्य तपना छ भेद सूत्रमां कह्या छे, ते आ प्रमाणे—

अणसण १ मुणोअरीया २, वित्तीसंखेवणं ३ रसच्चाउ ४ ।
कायकिलेसो ५ संलीणयाय ६, बज्झो तवो होइ ॥ १ ॥

भावार्थ—" अनशन, उनोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रसत्याग, कायक्लेश अने संलिनता—ए छ प्रकारनो बाह्य तप छे. "

अभ्यंतर तपना छ भेद आ प्रमाणे छे—

पायच्छित्तं १ विणउ २, वेयावच्चं ३ तहेव सज्झाउ ४ ।
झाणं ५ उसग्गो वि अ ६, अब्भंतरउ तवो होइ ॥ २ ॥

भावार्थ—" प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, तेमज स्वाध्याय, ध्यान अने कायोत्सर्ग—ए छ प्रकारनो आभ्यंतर तप छे. "

आ सर्वनो कांइक विस्तार आगळ युक्तिथी आचारप्रदीपादिक ग्रंथने आधारे कहेवामां आवशे.

पहेलो तपाचार कहे छे.

तत्राशनं द्विधा प्रोक्तं, यावज्जीविकमित्वरम् ।

द्विघटिकादिकं स्वल्पं, चोत्कृष्टं यावदात्मिकम् ॥ १ ॥

भावार्थ—" यावज्जीव अने इत्वर ए बे प्रकारे अनशन तप कहेलो छे, तेमां बे घटिका विगेरे वाळो ते स्वल्प अनशन तप छे, अने जावजीव पर्यन्तनो ते उत्कृष्ट अनशन तप छे. "

इत्वर एटले नमस्कार (नवकार) सहित बे घमीनुं पच्चखाण करवुं ते. तेनाथी नानुं पच्चख्खाण शास्त्रमां कहेलुं नथी. त्यार पछी वधतां वधतां उत्कृष्ट तप थाय छे. श्री वीरस्वामीना तीर्थमां छ मास पर्यन्त, श्री ऋषभदेवना तीर्थमां बार मास पर्यंत अने बीजाथी त्रेवीशमा तीर्थंकरना समयमां आठ मास सुधीनो उत्कृष्ट अनशन तप कहेलो छे. अहीं इंद्रियजय तप, कषायजय तप, रत्नत्रयी तप, समवसरण तप, अशोक वृक्ष तप, जिनकल्याणक तप, इत्यादि तपना अनेक भेद छे, ते आचारदिनकर ग्रंथना बीजा खंमथी जाणी लेवा; तथा आचाम्ल वर्धमान तप चौद वर्ष त्रण मास अने वीश दिवसे पूर्ण थाय छे, ते श्रीचंद्र केवळीनी जेम करवो. इत्यादि विविध प्रकारनां तपनो इत्वर काळना भेदमां समावेश थाय छे.

जावजीव अनशन तप पादपोपगम, इंगिनी अने भक्त परिज्ञा, एम त्रण प्रकारनो छे. ते त्रणेनुं स्वरूप सत्तर प्रकारना मृत्युनुं स्वरूप जाण्या विना सुखेथी समजी शकाय तेवुं नथी, माटे प्रथम सत्तर प्रकारना मरणनुं स्वरूप कहे छे–'आवीचिमरणं' वीचि एटले विच्छेद (अंतर) तेनो अभाव ते अवीचि. अर्थात् नारकी, तिर्यंच, मनुष्य अने देवतानी गतिमां उत्पत्ति समयथी आरंभीने पोतपोताना आयुकर्मना दळियां प्रतिसमय वेदीने घटामवां, तेवा प्रकारना मरणने आवीचि मरण कहेलुं छे (१). ' अवधिमरणं ' अवधि एटले मर्यादा, नारकादिक भव संबंधी आयुकर्मनां दळियांनो अनुभव करीने मरे, अने मरण पाम्या पछी पाछो फरीने ज्यारे तेज दळियांनो अनुभव करीने मरे, त्यारे ते द्रव्यथी अवधिमरण कहेवाय छे. केमके परिणामनी विचित्रता छे, तेथी ग्रहण करीने त्याग करेलां कर्मदळियांनुं पण फरीथी ग्रहण संभवे छे. ए प्रमाणे क्षेत्रादिकमां पण भावना करवी (२). ' अंतिकमरणं ' अंतिक एटले छेल्लुं थयेलुं, अर्थात् नारकादिक गतिना आयुकर्मना दळियांने अनुभवीने मरण पामे, अने मरण पाम्या पछी फरीथी कोइ पण वखते ते दळियांने अनुभवीने मरेज नहीं, ते द्रव्यथी अंतिकमरण कहेवाय छे. ए प्रमाणे क्षेत्रादिकथी पण जाणवुं (३).

'वलन्मरणं' वलत् एटले चारित्रथकी पाछा वळतां मरण थाय ते. अर्थात् मुनि संबंधी दुष्कर तप तथा चारित्रनुं सेवन करवुं, अथवा ग्रहण करेलुं चारित्र मूकी देवुं, ते बन्नेमां असमर्थ थइने "हवे तो आमांथी जलदी छूटाय तो ठीक" एम विचारतां जे मरण थाय ते वलन्मरण कहेवाय छे. आ मरण व्रतना परिणामथी भ्रष्ट थयेला मुनिओनेज संभवे छे (४). 'वशार्तमरणं' वशार्त एटले इंद्रियोना विषयने आधीन थवाथी पीडातां, दीवानी शिखा जोइने आकुळव्याकुळ थयेला पतंगनी जेम आकुळव्याकुळ थइने मरण पामे ते वशार्तमरण कहेवाय छे (५). 'अन्तःशल्यमरणं' लज्जादिकना कारणथी, थइ गयेला दुराचरणनी आलोचना न करवी ते अन्तःशल्य कहेवाय छे. तेवा शल्यवाळानुं जे मरण ते अन्तःशल्य मरण कहेवाय छे. आ मरण अति दुष्ट छे (६). 'तद्भवमरणं' हाल जे भवमां प्राणी वर्ते छे, ते ने तेज भवने योग्य एवुं आयुष्य बांधीने ते भवनुं आयुष्य क्षय करीने मरे ते तद्भव मरण कहेवाय छे. आ मरण संख्याता वर्षना आयुष्यवाळा मनुष्य अने तिर्यंचनेज होय छे; पण असंख्याता वर्षना आयुष्यवाळा मनुष्य अने तिर्यंचने (जुगळियाने) तेमज देव तथा नारकीने फरीने अनंतर तद्भवनो अभाव होवाथी आ मरण होतुं नथी (७). 'बालमरणं' बाल एटले मिथ्यादृष्टिनुं अथवा अविरत सम्यग्दृष्टिनुं जे मरण ते बालमरण कहेवाय छे (८). 'पंडितमरणं' सर्व विरति पामेलानुं जे मरण ते पंडितमरण कहेवाय छे (९). 'मिश्रमरणं' बालपंडित एवा देशविरति श्रावकनुं जे मरण ते मिश्रमरण कहेवायछे (१०). 'छद्मस्थमरणं' मति, श्रुत, अवधि अने मनःपर्याय ए चार ज्ञानवाळा मुनिनुं जे मरण ते छद्मस्थमरण कहेवाय छे (११). 'केवलिमरणं' जेमणे समग्र भवप्रपंचनो अपुनर्भवपणे नाश कर्यो छे एवा केवलिनुं मरण ते केवलिमरण कहेवाय छे (१२). 'वैहायसमरणं' आकाशमां थयेलुं जे मरण ते वैहायसमरण कहेवाय छे, अर्थात् ऊंचा वृक्षनी शाखादिके पोताना शरीरने बांधीने गळाफांसो खावावडे, पर्वतथी पडतुं मूकीने, कूवामां पडतुं मूकीने, अथवा शस्त्रादिकना घाते करीने जे मरण पामवुं ते वैहायसमरण कहेवाय छे (१३). 'गृध्रस्पृष्टमरणं' गृध्र एटले गीध अने उपलक्षणथी समळी, शियाळ विगेरेए जेमां स्पर्श करेलो छे एवुं जे मरण ते गृध्रस्पृष्ट मरण कहेवाय छे. आ मरण हस्ती विगेरेना शबमां पेसीने गृध्रादिकवडे जेनुं भक्षण कराय तेनेज संभवे छे (१४). 'भक्तपरिज्ञामरणं' भक्त एटले भोजन अने उपलक्षणथी पानादिक जाणवां, एटले के "आ अशनपानादि में घणीवार

तापर्यो छे, ते अवद्य जे पाप तेनाज हेतुभूत छे, तेथी तेनो त्याग करवो जोइए." एम ज्ञपरिज्ञावडे जाणीने प्रत्याख्यान परिज्ञावडे (भक्त पानादिकनो) त्याग करीने जे मरण पामवुं ते भक्तपरिज्ञामरण कहेवाय छे (१५). 'इंगिनीमरणं' नियमित करेला प्रदेशमांज चेष्टा करतां जे मरण पामवुं ते इंगिनीमरण कहेवाय छे. आ मरण चतुर्विध आहारनुं प्रत्याख्यान करीने नियमित प्रदेशमांज पोतानी मेळे उद्वर्तनादिक करता एवा मुनिने होय छे (१६). 'पादपोपगममरणं' पादप एटले वृक्ष, उप एटले सदृशपणुं अने गम एटले पामवुं, अर्थात् जेम पडेलुं वृक्ष सम विषम स्थानना विचार कर्या विना ज्यां जेम पडयुं होय छे तेमज निश्चळ रहे छे, अने बीजाना कंपाव्याथीज मात्र कंपे छे, तेम आ प्रकारना अनशनने अंगीकार करेला पूज्य मुनि पण पोतानुं निर्निमेष अंग प्रथमथीज सम अथवा विषम, जेवा स्थानमां पडयुं होय तेमनुं तेमज रहेवा दे, पोते किंचित् पण हलावे नहीं, तेवा प्रकारे जे मरण पामे ते पादपोपगम मरण कहेवाय छे (१७).

जोके आ छेल्लां त्रण मरणनुं फळ वैमानिकपणुं अथवा मुक्ति ए बे प्रकारनुं त्रणेमां सरखुं छे, तोपण विशिष्ट, विशिष्टतर अने विशिष्टतम धैर्यवाळाने ते उत्तरोत्तर संभवे छे, तेवो विशेष भाव होवाथी पहेलुं मरण कनीयस (नानुं), बीजुं मध्यम अने त्रीजुं ज्येष्ठ कहेवाय छे. साध्वीओने ते त्रण मरण पैकी पहेलुं एकज मरण होय छे. कह्युं छे के—

सव्वा वि अ अज्जाउ, सव्वे वि य पढमसंघयणवज्जा ।
सव्वे वि देसविरया, पच्चक्खाणेणउ मरंति ॥ १ ॥

भावार्थ—"सर्वे साध्वीओ, सर्वे प्रथम संहनन विनाना जीवो, अने सर्वे देश-विरतिवाळा जीवो प्रत्याख्याने करीनेज मरण पामे छे."

अहीं प्रत्याख्यान शब्दे करीने भक्त परिज्ञाज जाणवी. इंगिनी नामनुं अनशन अति विशिष्ट धैर्यवाळानेज होय छे, एम साध्वीना निषेधथी निश्चय थाय छे, अने पादपोपगम तो वय परिपक्क थाय त्यारे देवगुरुने नमस्कार करीने तेमनी पासे अनशन ग्रहण करीने, पर्वतनी गुफा विगेरे त्रसस्थावर जंतु रहित स्थंडिले, वृक्षनी जेम निमेषादिक* करवामां पण चेष्टा रहित थइने, प्रथम संहननवाळाने, कोइ पण प्रका-

* आंखनुं मटकुं मारवुं ते.

रनी शरीरनी संभाळ विना, जेवा तेवा संस्थानवडे स्थित थइने प्रशस्तध्यान करतां प्राणांत सुधी निश्चळ रहेवुं ते कहेवाय छे. ते विषे कहुं छे के—

पढमंमि अ संघयणे, वट्टंता सेलकुट्टसमाणा ।
तेसिं पि अ वुच्छेओ, चउदसपुव्वीण वुच्छेए ॥ १ ॥

भावार्थ—"जे प्रथम संहननमां वर्तता होय, अने जे पर्वतना शिखरनी जेवा निश्चळ होय तेमने पादपोपगम अनशन होय छे. तेनो पण चौद पूर्वीनो उच्छेद थाय त्यारे विच्छेद थाय छे."

आ त्रणे प्रकारना अनशन निर्व्याघातपणामां संलेखना पूर्वकज करवामां आवे छे, नहीं तो आर्तध्याननो संभव थाय. पण व्याधि वीजळी, पर्वत, भींत विगेरेनुं पडवुं अथवा सर्पादिकनुं करडवुं विगेरे व्याघात प्राप्त थयेल होय त्यारे तो संलेखना विना पण ते अनशन लइ शकाय छे.

आ इत्वर अने यावज्जीव ए बन्ने प्रकारनो अनशन तप समग्र कर्मनो क्षय करनार छे. ते उपर दृष्टांत कहे छे—

अनशन तप उपर धन्य मुनिनुं दृष्टांत.

काकंदीपुरीमां धना नामे एक सार्थवाह रहेतो हतो. तेने धन्य नामे पुत्र हतो. ते भोगने समर्थ एवी युवावस्थाने पाम्यो, त्यारे तेनी माता भद्राए बत्रीश प्रासाद करावीने बत्रीश श्रेष्ठीनी कन्याओ साथे एकज दिवसे तेने परणाव्यो. ते धन्य ते स्त्रीओ साथे दोगुंदिकदेवनी जेम सुख भोगववा लाग्यो. ते स्त्रीओ साथे भोग भोगवतां तेणे केटलांक वर्षो व्यतीत कर्यां. एकदा चोत्रीश अतिशयोथी विराजमान श्री महावीर स्वामी ते पुरीमां समवसर्या, ते वखते धन्य पण भगवानना दर्शनमां उत्कंठित थइने पगे चालतो प्रभु समीपे गयो, अने विश्वबंधु प्रभुने वांदीने तेमनी पासे भवना क्लेशने नाश करनारी देशना सांभळी. त्रिकाळज्ञानी प्रभुनी देशना मनमां विचारतां धन्य वैराग्य पाम्यो; एटले तेणे तेनी माता पासे जइने कह्युं के "हे माता! भगवाननी देशना सांभळीने मने विषयोमां उद्वेग थयो छे, माटे तमारी आज्ञाथी हुं दीक्षा ग्रहण करीश." ते सांभळीने माताए मुनिनां व्रत पाळन करवामां अनुकूळ प्रतिकूळ उपसर्गो सहन करवा तथा रस विनाना विरस आहार करवा इत्यादि अनेक प्रकारनां अति दुःख छे एम जणाव्युं, तोपण ते धन्ये पुरीषनी जेम विषयभोगनी इच्छा करी

नहीं ; त्यारे जजाए खुशीथी तेनो निष्क्रमणोत्सव कर्यो. जगवाने पोतेज तेने दीक्षा आपी, तेज दिवसे धन्य मुनिए स्वामी पासे अजिग्रह कर्यो के " हे जगवन् ! आपनी आज्ञाथी हुं निरंतर छठ तप करीश, अने पारणे गृहस्थे तजी दीधेली जिक्षाथी आंबिल करीश. " जगवान बोल्या के " हे धन्य ! जेम सुख उपजे तेम तप धर्ममां प्रवृत्ति कर. " एवी जिनेश्वरनी आज्ञाथी हृष्ट–तुष्ट थइने धन्य मुनि तपस्यामां प्रवर्त्या.

पहेला छठना पारणाने दिवसे पहेली पोरसीमां तेमणे स्वाध्याय करी, बीजी पोरसीमां ध्यान कर्युं, अने त्रीजी पोरसीमां जिनेश्वरनी आज्ञा लइने जिक्षा माटे अटन करी आंबिलने माटे अन्न ग्रहण कर्युं, बीजी कांइ इच्छा करी नहीं. तेज प्रमाणे दरेक पारणाने दिवसे जिक्षाटन करतां कोइ वखत अन्न मळे, कोइ वखत मात्र जळ मळे, तोपण ते खेद करता नहीं. जो कोइ पण दिवसे जिक्षा मळे तो ते प्रजुने बतावता, अने पछी प्रजुनी आज्ञाथी मात्र देहने धारण करवा माटेज आहार करता. ए प्रमाणे तप करतां ते मुनिनुं शरीर अति कृश थइ गयुं. मांस रहित अने मात्र सुकां हाडकांथी जरेलुं तेमनुं शरीर कोयलाना गाडांनी जेम रस्तामां चालती वखते ' खड खड ' शब्द करतुं हतुं.

एकदा विहार करतां जगवान राजगृही नगरीना गुणशिल वनमां समवसर्या. तेमने वांदवा माटे श्रेणिक राजा त्यां आव्या. स्वामीने वांदीने देशना सांजळी. पछी तेमणे पूछयुं के " हे जगवन् ! आ सघळा मुनिओमां कया मुनि दुष्करकारक छे ?" प्रजु बोल्या के " आ गौतम विगेरे चौद हजार मुनिओमां धन्यमुनि मोटी निर्जरा करनार महा दुष्करकारक छे. ते जजापुत्र निरंतर छठ तप करीने आंबिलथी पारणुं करे छे. " इत्यादि सर्व वृत्तांत सांजळीने श्रेणिक राजा हर्ष पामी धन्य ऋषि पासे गया, अने ते मुनिने नमीने तेमणे कह्युं के " हे ऋषि ! तमने धन्य छे, तमे कृतपुण्य छो. " इत्यादि स्तुति करीने राजा पोताना नगरमां गयो.

एकदा धन्य ऋषि रात्रे धर्म जागरिकाए जागतां एम विचार करवा लाग्या के "तपस्याथी शुष्क देह थयेलो हुं प्रजाते स्वामीनी आज्ञा लइ विपुलगिरिपर जइने एक मासनी संलेखनावडे शरीरनुं शोषण करी जीवित तथा मरणमां समजाव राखतो सतो विचरीश. " पछी तेणे तेज प्रमाणे कर्युं. प्रांते शुज ध्यानवडे काळ करीने सर्वार्थसिद्ध नामना महा विमानमां देवपणे उत्पन्न थया.

पछी गौतम गणधरे भगवानने पूछ्युं के "हे भगवंत ! आपना शिष्य धन्य मुनि कइ गतिमां गया ?" भगवन् बोल्या के "हे गौतम ! अहींथी काळधर्म पामीने मारो शिष्य धन्य मुनि सर्वार्थसिद्ध विमानमां उत्पन्न थयो छे, त्यां तेत्रीश सागरोपमनी स्थिति भोगवीने महाविदेहक्षेत्रमां उंच कुळने विषे उत्पन्न थशे, त्यां दीक्षा लइ केवळज्ञान पामीने मोक्षे जशे."

"आ प्रमाणे धन्य ऋषिए समतापूर्वक पापकर्मनी निर्जरा करवा माटे बंने प्रकारना अनशन तपनुं सेवन कर्युं, तेमज जे क्षणे दीक्षा लीधी तेज क्षणे पुद्गलिक सुखनी तमाम आशाओ तजी दीधी."

इत्यब्ददिनपरिमितोपदेशप्रासादवृत्तौ नवदशस्तंभस्य
चतुरशीत्यधिकद्विशततमः प्रबंधः ॥ २८४ ॥

व्याख्यान २८५ मुं.

ऊनोदरि नामना बीजा तपाचार विषे.

ऊनोदरितपोऽद्रव्यभावभेदात्मकं परैः ॥
विशिष्यज्ञायमानत्वात्महत्फलं निरन्तरम् ॥ १ ॥

भावार्थ—"ऊनोदरि तप द्रव्यथी अने भावथी एम बे प्रकारनुं छे. तेनुं विशेषपणुं जाणवाथी ते निरंतर महत्फळने आपनारुं छे."

आ अर्थनुं समर्थन करवा माटे आ प्रमाणे भावना करवी के 'हमेशां आहार करतां छतां पण साधु श्रावक विगेरेने ऊनोदरि तपथी मोटुं फळ प्राप्त थाय छे.' तेमां उपकरण तथा भक्तपानादिक संबंधी ऊनोदरि ते द्रव्यथी ऊनोदरि जाणवुं, अने क्रोधादिकनो जे त्याग करवो ते भावथी ऊनोदरि जाणवुं. "साधु श्रावक विगेरेए कदाचित् पण यथेच्छपणे कंठ सुधी ठांसीने ठरैया ओडकार आवे तेटलुं तो जमवुंज नहीं." नव प्रकारनी ब्रह्मचर्यगुप्तिमां पण एवो निषेध करेलो छे. जोके उपवास,

छठ्ठ, अठ्ठम, मासक्षपण विगेरे अनेक प्रकारनां तपमां द्रव्यथी तो अशनादिकनो निषेध कर्यो छे, पण ते तप करनारे भावथी क्रोधादिकना त्याग रूप ऊनोदरि अवश्य करवुं जोइए. नहींतो ते उपवासादिक केवळ लांघण रूपज गणाय. कह्युं छे के—

कषायविषयाहारत्यागो यत्र विधीयते ।
उपवासः स विज्ञेयः शेषं लंघनकं विदुः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जे उपवासादिकमां कषाय, विषय अने आहारनो त्याग करवामां आवे तेनेज उपवास जाणवो, ते शिवाय बीजाने तो लांघण कहेली छे. "

द्रव्यथी ऊनोदरि तपनो विधि आ प्रमाणे छे—एक कवळथी आरंभीने आठ कवळ सुधी खावुं, ते पूर्ण ऊनोदरि कहेवाय छे. तेमां एक कवळनुं मान जघन्य, आठ कवळनुं मान उत्कृष्ट अने बेथी सात कवळनुं मान मध्यम छे (१). नव कवळथी आरंभीने बार कवळ सुधी खावुं ते अपार्ध ऊनोदरि कहेवाय छे (२). तेर कवळथी आरंभीने सोळ कवळ सुधी विभाग ऊनोदरि कहेवाय छे (३). सत्तरथी आरंभीने चोवीश कवळ सुधी प्राप्त ऊनोदरि कहेवाय छे (४). अने पचीशथी आरंभीने एकत्रीश कवळ सुधी किंचित् ऊनोदरि कहेवाय छे (५). अहीं सर्वत्र जघन्य विगेरे त्रण भेद पहेला पूर्ण ऊनोदरिनी जेम जाणवा. आज प्रमाणे जळ संबंधी पण ऊनोदरिनी भावना करवी.

अहीं कवळनुं मान आ प्रमाणे कह्युं छे—

बत्तीसं कीर कवला, आहारो कुच्छिपूरउ भणिउ ।
पुरिसस्स महिलियाए, अठ्ठावीसं भवे कवला ॥ १ ॥
कवलस्स य परिमाणं, कुक्कुडिअंडगपमाणमित्तं तु ।
जं वा अविगिअवयणो, वयणंमि छुभिज्ज विसंतो ॥ २ ॥

भावार्थ—पुरुषोने कुक्षि पूर्ण थाय तेटलो आहार बत्रीश कवळ प्रमाण कहेलो छे, अने स्त्रीओने अठावीश कवळ प्रमाण कहेलो छे (१). कवळनुं मान कुकडीना इंडा जेवडुं जाणवुं, अथवा सहेजे मुख फाडीने क्षुधित मनुष्य मोढामां कोळीओ मूकी शके तेवडुं जाणवुं. "

वळी छठ अठम विगेरे विशेष तपना पारणाने दिवसे पण ऊनोदरि कर-

वाथीज विशेष लब्धिओ प्राप्त थाय छे. जेम नख सुधीनी एक मुठी जेटला अडद तथा एक चलु जळ नित्य छठने पारणे लेवाथी छ मासे तेजोलेश्या उत्पन्न थाय छे, एम पांचमा अंगमां कहेलुं छे. ते प्रमाणे श्रीमहावीर स्वामीना मुखथी सांभळीने मंखलीपुत्रे तेम करवाथी तेने ते लब्धि उत्पन्न थइ हती. आ प्रमाणे उनोदरि तप आहार तथा अनाहारने दिवसे द्रव्यथी अने भावथी निरंतर सेववुं.

हवे वृत्तिसंक्षेप नामनो त्रीजो तपाचार कहे छे.

वर्तते ह्यनया वृत्तिर्भिक्षाशनजलादिका ।
तस्याः संक्षेपणं कार्यं, द्रव्याद्यभिग्रहांचितैः ॥ १ ॥

भावार्थ—" जेनाथी जीववुं रहेवाय ते वृत्ति कहेवाय छे. तेमां भिक्षाथी मळता अशन जळ विगेरेनो समावेश थाय छे. ते वृत्तिनो द्रव्य, क्षेत्र, काळ अने भावथी अभिग्रह लेवावडे संक्षेप करवो, ते वृत्ति संक्षेप तप कहेवाय छे. "

द्रव्यादिक अभिग्रह आ प्रमाणे समजवा—मुनि गोचरी जती वखते चार प्रकारना अभिग्रह करे, तेमां द्रव्यथी एवो अभिग्रह करे के आजे मारे पात्रमां लेप न लागे तेवी निर्लेप भिक्षा ग्रहण करवी, अथवा भालाना अग्र भागवडे आपेल एक मांडो के मोदक विगेरे लेवुं, इत्यादि. ते उपर क्षेमर्षि विगेरे मुनिनां दृष्टांत जाणवां (१). क्षेत्रथी एवो अभिग्रह करे के एक घेरथी अथवा बे घेरथी अथवा पोताना गाममांथीज जे मळे ते लेवुं, अथवा घरनी डेलीमां बे पग वचे उंबरो राखीने बेठेलो भिक्षा आपे तो लेवी, इत्यादि (२). काळथी एवो अभिग्रह करे के दिवसना पहेला भागमां अथवा सर्व भिक्षुक भिक्षा लइने निवर्तीं गया पछी हुं आहार लेवा नीकळीश अने पर्यटन करीश, इत्यादि (३). भावथी एवो अभिग्रह करे के कोइ हसतां, गातां के रोतां आहार आपे तो लेवो, अथवा कोइ बंधनादि वडे बंधायेलो भिक्षा आपे तो लेवी, नहीं तो न लेवी, इत्यादि (४). आ रीते साधु हमेशां अभिग्रह न करे तो तेने प्रायश्चित्त लागे छे. श्रावको पण सचित्तादिकनो अभिग्रह करे छे.

आ तप छठ, अठम विगेरे तप करतां अति दुःसाध्य छे, अने अधिक फळदायी छे. केमके छठ, अठम विगेरे नियत तप छे, एटले के प्रत्याख्यान काळ पूर्ण थतां आहार थइ शके छे, अने आ तो क्यारे द्रव्यादिक अभिग्रह पूर्ण थशे ? ते

कोइ जाणतुं नथी, माटे आ तप अनियत छे. वळी भिक्षाटन करती वखते मनमां एवुं ध्यान करवुं के मननी धारणा प्रमाणे अभिग्रह पूर्ण थाओ के न थाओ, एवी बुद्धिथी अटन करवुं, पण आहार ग्रहण करवामां अति प्रीति राखवी नहीं. आ तप उपर श्री महावीर स्वामी, ढंढण मुनि, दृढप्रहारी, शालिभद्र, पांडव विगेरेनां दृष्टांतो छे. भीमसेने पण दीक्षा लीधा पछी "भालाने अग्र भागे आपेली भिक्षा हुं ग्रहण करीश, बीजी ग्रहण नहीं करुं" एवो अभिग्रह लीधो हतो. ते पुण्यशाळीने ते अभिग्रह पण छ मासे पूर्ण थयो हतो. धैर्यवानने कांइ पण दुर्लभ नथी. आ विषय उपर दृढप्रहारीनुं दृष्टांत कहे छे—

दृढप्रहारीनुं दृष्टांत.

श्री वसंतपुरमां एक साते व्यसनवाळो दुर्धर ब्राह्मण रहेतो हतो. तेणे पोतानुं सर्व धन विषयादिकमां गुमावी दीधुं. पछी ते चोरी करवा लाग्यो. लोकोए तेने घणी शीखामण आपी, पण ते पाप कर्मथी पाछो ओसर्यो नहीं, एटले राजाए तेने गाम बहार काढी मूक्यो. तेथी ते चोरनी पल्लीमां गयो. त्यां पल्लीपतिने पुत्र नहीं होवाथी तेणे तेने पुत्र तरीके राख्यो. ते ब्राह्मण जेने प्रहार करतो ते अवश्य मरी जतो. एवो बळवान होवाथी लोकमां तेनुं दृढप्रहारी एवुं नाम प्रसिद्ध थयुं.

ते एकदा लुंटाराना सैन्य सहित कुशस्थळ नामना गामने लुंटवा माटे गयो. ते गाममां कोइ एक दरिद्र ब्राह्मण रहेतो हतो. ते दरिद्री होवाथी तेने घणां छोकरां हतां. तेओए एक वखत ते ब्राह्मण पासे खीर खावा मागी, त्यारे ते ब्राह्मण कोइ गृहस्थने घेरथी चोखा दूध विगेरे मागी लाव्यो, अने ते स्त्रीने आपी तेनी खीर करावी. पछी "आजे उत्सवनो दिवस छे, कारण के आजे खीर खाशुं" एम विचारीने ते मध्याह्न वखते स्नान करवा माटे गाम बहार नदीए गयो, तेवामां पेला लुंटाराओ गाममां पेठा. तेमांना केटलाएक चोरो तेज ब्राह्मणना घरमां पेठा, पण कांइ हाथ लाग्युं नहीं. शोध करतां खुणामां पडेलुं खीरनुं वासण दीठुं, ते तेमणे लइ लीधुं, एटले छोकरांओ उंचे स्वरे रुदन करतां तेमनी पाछळ दोड्यां. तेवामां पेलो ब्राह्मण स्नान करीने आव्यो. ते सर्व स्वरूप जोइने कोपायमान थयो, एटले घरनी अर्गला लइने ते राक्षसनी जेम चोरोनी पाछळ दोड्यो. तेना प्रहारथी तेणे केटलाक चोरोने मारी नाख्या. ते वातनी खबर पडतां दृढप्रहारी तरतज त्यां आव्यो, अने पोताना चोरोने आ मारी नाखे छे एम जाणी क्रोधथी तेणे खड्गवडे तेनुं मस्तक कापी नाख्युं. पछी ब्राह्मणना घरमां पेसतां गाये तेने रोक्यो,

एटले गायने पण मारी नाखी, ते जोइने ते ब्राह्मणनी स्त्री पोकार करती सती तेने गाळो देवा लागी के " अरे क्रूर ! पापी ! शुं करे छे ? " तेनी गाळोथी अत्यंत कोपायमान थइने दृढप्रहारीए तेज खड्गथी तेनुं पेट चीरी नाख्युं, तेथी तेना गर्भमां रहेलुं बाळक पण तरफडतुं बे ककडा थइने पृथ्वीपर पड्युं.

आ प्रमाणे ब्राह्मण, गाय, स्त्री तथा बाळक, चारेने पोते तत्काळ मारी नाखेलां जोइने तथा " हे पिता ! हे माता ! " एम बोलतां छोकरांओने जोइने दृढप्रहारी विचार करवा लाग्यो के " आ प्रमाणेनुं दुष्कर्म करनारा एवा मने धिक्कार छे! आवां पापथी मने नरकमां पण स्थान मळवानुं नथी. हवे आ बाळकोनुं कोण रक्षण करशे ? हवे हुं अग्निमां पेसुं के भृगुपात करुं ? शाथी मारी शुद्धि थाय ? अहो ! हुं सदाचारनो त्याग करीने दुष्कर्मरूपी पाथेयवाळो पांथ थयो छुं. " ए रीते महा वैराग्यथी शुभ ध्यान करतो ते गाम बहार नीकळ्यो. गामनी बहार उद्यानमां कोइ महा मुनिने जोइ तेमने नमीने बोल्यो के "हे भगवन्! आवा पापथी हुं शी रीते मूकाइश ? " मुनि बोल्या के " चारित्र ग्रहण कर. " कह्युं छे के—

एगदिवसं पि जीवो, पव्वज्जमुवागओ अणूणमणो ।
जइवि न पावए मुक्खं, अवस्स वेमाणिओ होइ ॥१॥

भावार्थ—" जो कोइ जीव शुद्ध मनथी एक दिवस पण प्रव्रज्या अंगीकार करे तो ते कदि मुक्ति न पामे पण वैमानिक तो अवश्य थाय छे. "

आ प्रमाणे ते दृढप्रहारीए मुनि पासेथी पापनो प्रतीकार सांभळीने तरतज दीक्षा लीधी. पछी तेणे एक मोटो अभिग्रह लीधो के " आक्रोश परीषहने सहन करवा माटे मारे आ गाममांज रहेवुं, अने ज्यां सुधी मारा पापनुं बीजाओ स्मरण करे त्यां सुधी मारे आहार लेवो नहीं. " एवो दृढ अभिग्रह लइने ते दृढप्रहारी मुनि तेज गाममां कर्मनो क्षय करवा माटे विचरवा लाग्या. लोको तेने जोइने आक्रोश करवा लाग्या के " आ पापात्मा स्त्री, ब्राह्मण, गाय अने बाळ ए चार हत्या करनारो छे, तथा गामने लुंटनारो छे " एम बोलीने तेओ ते मुनिनी तर्जना करवा लाग्या; अने लाकडी तथा पाषाणादिकथी तेने निरंतर मारवा लाग्या. ते सर्व मुनिए पृथ्वीनी जेम सहन कर्युं, अने अत्यंत शांतरस धारण करी पोतानुं पाप संभारीने भोजन लीधुं नहीं. ए प्रमाणे छ मास व्यतीत थया त्यारे शमता रूपी सूर्यनो उदय थवाथी तेमना

पाप रूपी अंधकारसमूहनो नाश थयो, ते वखते ए मुनि भावना भाववा लाग्या के "हे आत्मा! जेवुं बीज वावीए तेवुंज फळ पामीए. तेमां पौरलोकोनो कांइ पण दोष नथी. आ लोको तो मारां दुष्कर्म रूपी ग्रंथीने तोडवा माटे कठोर भाषणादि रूप क्षारवडे तेनी चिकित्सा करे छे, माटे एओ तो मारा खरा मित्रो छे. तेओ मने जे ताडन विगेरे करे छे, तेथी तो अग्निना योगथी सुवर्णनी जेम मारुं मलिनपणुं दूर थाय छे. वळी आ लोको तो मने दुर्गति रूपी कारागृहमांथी खेंचीने पोतानेज तेमां नांखे छे, माटे तेवा परोपकारी उपर हुं शामाटे कोप करुं? वळी तेओ पोतानां पुण्ये करीने मारां पाप धोइ नांखे छे, तेथी ते परम बांधवोने मारे दोष आपवो न जोइए. वळी तेओए मने करेलां वध बंधन विगेरे मने संसारथी मुक्त करावनार होवाथी हर्ष आपनारां छे. मात्र ते कर्म तेओनेज अनंत संसारना हेतुभूत थवानां छे, तेथी मने दुःख थाय छे. वळी आ पौरजनोए मारी तर्जना करी, पण मने मार्यो नहीं; कदाच मार्यो, पण मारुं जीवित नाश कर्युं नहीं. कदाच ते पण नाश कर्युं, पण बांधवनी जेम तेओए मारा धर्मनो नाश कर्यो नथी. उलटा तेओ तो मारा आत्मारूप घरमां पेठेला अने अनादि काळथी रहेला भावचोरोने काढवा माटे मने सहायभूत थया छे." इत्यादि शुभ ध्यानमां तत्पर थइने ते मुनिए क्षपकश्रेणी उपर आरूढ थइ केवळज्ञानरूपी सूर्यनी कांतिथी आत्मानो प्रकाश कर्यो.

अहो लोकोत्तरः कोऽपि, तपःकुंभोद्भवः प्रभुः।
नाविर्भवेत्पुनर्येन, शोषितः कर्मवारिधिः ॥१॥

"भावार्थ—"अहो! तपरूप अगस्त्य ऋषि कोइ अलौकिकज छे के जेणे शोषण करेलो कर्मरूप समुद्र फरीथी प्रगटज थतो नथी."

मृत्तिका यस्य तत्रैव, पततीत्यन्यथा न हि।
येन यत्रार्जितं कर्म, स्थाने तत्रैव निष्टितम् ॥२॥

भावार्थ—"माटी ज्यांनी त्यांज पडे छे' ए उक्ति खोटी नथी, केमके जेणे ज्यां कर्म उपार्जन कर्युं ते कर्म त्यांज नाश पमाड्युं, अर्थात् ज्यां कर्म बांध्युं त्यां रहीनेज खपाव्युं.